RNI-UPBIL/2011/38102 ISSN-2231-5837

Indian Journal of Social Concerns

इण्डियन जर्नल ऑफ सोशल कन्सर्न्स

(कला–मानविकी–समाजविज्ञान–जनसंचार–विधि–वाणिज्य–विज्ञान, वैचारिकी की अन्तर्राष्ट्रीय द्विमासिक शोध पत्रिका)

Volume -12: Issue - 51 Jan. - Feb. 2023 Ghaziabad

A RESEARCH JOURNAL OF HUMANITIES AND SOCIAL SCIENCES

(An International Peer-Reviewed & Refereed Journal)

Journal Impact Factor No. : 7.01

Editor
Dr. RAJ NARAYAN SHUKHLA

Asstt. Editor
Dr. MUKTA SONI

Art Editor
(MS) MANISHA VERMA

Legal Advisor
Dr. JASWANT SAINI
SHRI BHAGWAN VERMA

Office Assistant
JITENDER GIRDHAR

Editor in Chief
Dr. HARI SHARAN VERMA

Sub Editor
Dr. PUSHPA
Dr. BEENA PANDEY (SHUKLA)

Managing Editor
Dr. SANGEETA VERMA

Joint Editor
Dr. PRIYANKA SINGH
Dr. SUBHASH SAINI

Computer Operator
MS. NEHA VERMA

- The responsibility of the originality of the articles/papers shall be of the author.
- The editor does not owe any kind of responsibility in this regard

Dr. Rajpal
Guest Editor

Dr. Hari Sharan Verma
D.Litt
Editor in Chief

Dr. Raj Narayan Shukhla
Editor

Dr. Sangeeta Verma
Managing Editor

मानविकी शोध पीठ प्रारम्भ सोसायटी,
गाज़ियाबाद द्वारा संचालित

LIFE MEMBERS OF INDIAN JOURNAL OF SOCIAL CONCERNS

1. **Dr. Praveen Kumar Verma**
   Associate Professor, Hindi Department, GGD Sanatan Dharam Post Graduate College, Palwal.

2. **Dr. Suman**
   H.No. 1001, Radha Swami Colony, Rohtak Road, Bhiwani (Haryana)

3. **Principal**
   Sat Jinda Kalyana College, Kalanaur (Rohtak, Haryana) 124113

4. **Dr. Subhash Chand Saini** (Hindi Department, Dyal Singh College, Karnal, Haryana

5. **Dr. Vimla Devi,** Associat Professor (History), Swami Vivekanand Govt. (PG) College, Lohaghat, Champawat (Uttrakhand)

6. **Dr. Dinesh Mani Tirpathi (Principal)** L-P=-K Inter College sardar Nagar, Basdila Gorkhpur

7. **Dr. Govind Prakash Acharya** F--63, Chandra Vardai Nagar, UIT, Colony, Shaheed Bhagat Singh Marg, OppositeRamganj Thana, Taragarh Road, Ajmer (Rajasthan) Pincode--305003.

प्रकाशक : डॉ० राजनारायण शुक्ला, सम्पादक
SH, A-5, कविनगर, गाजियाबाद (उ० प्र०)
दूरभाष : 9910777969
***E-mail :** harisharanverma1@gmail.com*
WWW.IJSCJOURNAL.COM

सहयोग राशि (भारत में)
(व्यक्तिगत) (आजीवन 5100 रुपये)
(संस्थागत) (आजीवन 7100 रुपये)

कृपया सहयोग राशि बैंक ड्राफ्ट से ही भेजें।
बैंक ड्राफ्ट, संपादक "इण्डियन जर्नल ऑफ सोशन कन्सर्न्स" के पक्ष में देय होगा। आजीवन सदस्यता केवल दस वर्षों के लिए मान्य होगी। यदि किसी कारणवश पत्रिका का प्रकाशन बन्द हो जाता है तो आजीवन सदस्यता स्वतः ही समाप्त हो जायेगी।

संपादकीय कार्यालय :

1. **डॉ० हरिशरण वर्मा, प्रधान सम्पादक**
F-120, सेक्टर–10, DLF, फरीदाबाद (हरियाणा)
harisharanverma1@gmail.com 09355676460
WWW.IJSCJOURNAL.COM

2. **डॉ० राजनारायण शुक्ला, सम्पादक**
SH, A-5, कविनगर, गाजियाबाद (उ०प्र०)

क्षेत्रीय सम्पादक

1. डॉ० वाई.आर. शर्मा, A-24, रेजिडेंसल कैम्पस, न्यू कैम्पस, जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू–180001, फोन : 09419145967
2. डॉ0 सलमा असलम, ओल्ड टाउन बारामुला, कश्मीर पिन – 193101, मौ0 9682162934
3. डॉ0 आरती लोकेश P.o.Box 99846, Dubai, UAE 97150-4270752
4. श्री मोहनलाल, 11 अशोक विहार, संजय नगर, पो. इज्जत नगर बरेली (उ०प्र०) फोन : 09456045552
5. श्री जितेन्द्र गिरधर, कार्यालय सहायक 105/26 जवाहर नगर, कॉपरेटिव बैंक के पीछे, रोहतक 09896126686
6. डॉ0 विमला देवी, सहायक प्रोफेसर (इतिहास) स्वामी विवेकानन्द राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय लोहाघाट चंपावत (उत्तराखण्ड)–262524 – 9411900411
7. डॉ0 प्रिया कपूर, सहायक प्रोफेसर, डी0 ए0 वी शताब्दी कालेज, फरीदाबाद मौ0 9711196954
8. डॉ0 किरण मिश्रा, सहायक प्रोफेसर, हिन्दी, राम गुलाम राय पी0 जी0 कालेज, देवरिया गोरखपुर–273001 मौ0 :7007018819
9. डॉ0 ऊषा रानी, हिन्दी–विभाग हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, शिमला–5
10. विमला टोप्पो, एस0 आर0 इंटरप्राइसेस म्युनिसिपल काम्पलेक्स सोप न0 4, डेरी फार्म, पोर्ट बलेयर, पी0 ओ0 जंगली घाट–744103 साउथ अंडमान
11. डॉ0 राजपाल, सहायक प्रो0 राजकिय स्थानकोत्तर महाविद्यालय, हिसार

संरक्षक मण्डल :

1. **प्रो0 डॉ0 चकधार त्रिपाठी कुलपति,** उड़ीसा केन्द्रीय विश्वविद्यालय, कोरोपुट, 763004, चलभाषा: 9437568809
2. **डॉ0 दिनेश मणी त्रिपाठी**, प्रधानाचार्य एन0 पी0 के0 आई कालेज, सरदार नगर बसडीला (गोरखपुर) उ0प्र0
3. **डॉ० राजेन्द्र सिंह,** (पूर्व प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, रक्षा एवं स्त्रातजिक अध्ययन विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय राहतक
4. **डॉ० रमेशचन्द लवानिया,** (पूर्व अध्यक्ष हिन्दी विभाग, शम्भु दयाल स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गाजियाबाद
5. **डॉ० वाई.आर.शर्मा,** (राजनीति शास्त्र विभाग, जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू)
6. **डॉ0 सुंधांशु कुमार शुक्ल** चेयर हिन्दी, आई. सी. सी. वार्सा विश्वविद्यालय, वार्सा (पोलेन्ड) मौ0 48579125129
7. **डॉ0 तपन कुमार शण्डिल्य, कुलपति,** डॉ0 श्याम प्रसाद मुखर्जी विश्वविद्यालय राँची, (झारखण्ड) 9431049871
8. **डॉ0 जंगबहादुर पाण्डेय** (पूर्व प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग) रांची विश्वविद्यालय, रांची – 834008 फोन : 09431595318
9. **सुदेश रावत** प्रांचार्या एस. एन. आर. जयराम महिला कॉलेज, लोहार माजरा, कुरूक्षेत्र हरियाणा 36119 (सेठ नारंग राय लोहिया जय राम महिला कॉलेज)

परामर्शदात्री समिति :

1. **डॉ० नरेश मिश्रा** (पूर्व आचार्य, हिन्दी विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक)
2. **डॉ० सुधेश** (पूर्व आचार्य, हिन्दी विभाग, जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली)
3. **डॉ० गिरिराजशरण अग्रवाल** (पूर्व रीडर एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, वर्धमान कॉलेज, बिजनौर)
4. **डॉ० राजकुमारी सिंह,** प्रोफेसर एफ.टी.एम. विश्वविद्यालय लोधीपुर राजपूत मुरादाबाद, उत्तर प्रदेश 9760187147
5. **डॉ० माया मलिक,** पूर्व प्रोफेसर हिन्दी विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक
6. **डॉ० ममता सिहल,** (एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्षा अंग्रेजी विभाग) जे०वी० जैन कॉलेज सहारनपुर
7. **डॉ० विनीत बाला,** सहायक प्रो. भूगोल विभाग, वैश्य पी.जी. कॉलेज, रोहतक

संपादकीय विशेषज्ञ समिति :
हिन्दी विभाग:

1. **डॉ० राजेश पाण्डे** (डी.वी. कॉलेज, उरई, जिला जालौन, उ०प्र०)
2. **डॉ0 अनिता, सहायक प्रोफेसर,** (हिन्दी), श्री अरबिन्दो कालिज दिल्ली (सांध्य) मौ0 :8595718895
3. **डॉ० सुशील कुमार शर्मा** (अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, पूर्वोत्तर पर्वतीय विश्वविद्यालय शिलांग, मेघालय)
4. **डॉ० शशि मंगला,** पूर्व एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्षा, हिन्दी विभाग, गोस्वामी गणेशदत्त सनातन धर्म स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पलवल
5. **डॉ० के०डी० शर्मा,** एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, गोस्वामी गणेशदत्त सनातन धर्म स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पलवल
7. **मुकेश चन्द्र गुप्ता** (हिन्दी विभाग, एम.एच.पी.जी. कॉलेज, मुरादाबाद)
8. **डॉ० गीता पाण्डेय** (रीडर एवं अध्यक्षा, हिन्दी विभाग, एस.डी.

9. **डॉ0 प्रवीण कुमार वर्मा** (सह प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग) गोस्वामी गणेशदत्त सनातन धर्म महाविद्यालय, पलवल
10. **डॉ0 सुधा चौहान,** अध्यक्षा हिन्दी विभाग, वैश्य कालिज, भिवानी
11. **डॉ० रूबी,** (सीनियर सहायक प्रोफेसर हिन्दी विभाग कश्मीर
12. **डॉ0 सुमन राठी,** सहायक प्रो0 हिन्दी विभाग, मस्तनाथ विश्वविद्यालय, अस्थल बोहर रोहतक
13. **डॉ० अनिल कुमार विश्वकर्मा** (जनता महाविद्यालय अजीतमल, औरेया, उ०प्र०)
14. **डॉ० एम. के. कलशेट्टी,** हिन्दी विभाग, श्री माधवराव पाटिल महाविद्यालय, मुरूम तह० अमरगा, जिला उस्मानाबाद (महाराष्ट्र)–413605
15. **डॉ० मनोज पंड्या,** व्याख्याता हिन्दी विभाग, श्री गोविन्द गुरु, राजस्थान महाविद्यालय, बांसवाड़ा–327001, मो० 09414308404
16. **डॉ. कृष्णा जून,** प्रो० हिन्दी विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक
17. **डॉ. विपिन गुप्ता,** सहायक प्रोफेसर, वैश्य कॉलेज भिवानी
18. **डॉ० सीता लक्ष्मी,** पूर्व प्रो० एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, आन्ध्र विश्वविद्यालय, विशाखापट्टनम, आन्ध्रप्रदेश
19. **डॉ० जाहिदा जबीन,** (प्रो0 एवं अध्यक्षा, हिन्दी विभाग कश्मीर विश्वविद्यालय, श्रीनगर–६)
20. **डॉ० टी०डी० दिनकर,** (एसो० प्रो० एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, अग्रवाल कॉलेज, बल्लभगढ़)
21. **डॉ० सुभाष सैनी,** (सहायक प्रोफेसर हिन्दी विभाग दयालसिंह कॉलेज, करनाल, हरियाणा
22. **डॉ० उर्विजा शर्मा,** (सहायक प्रोफेसर हिन्दी विभाग शम्भु दयाल स्नातकोत्तर, महाविद्यालय, गाजियाबाद
23. **डॉ० कामना कौशिक,** (सहायक प्रोफेसर हिन्दी विभाग एम.के. स्नातकोत्तर, महाविद्यालय, सिरसा 09896796006
24. **डॉ० मधुकान्त,** (वरिष्ठ साहित्यकार) 211- L मॉडल टाऊन, रोहतक
25. **डॉ0 कंचन पुरी, विभागध्यक्ष,** रघुनाथ गर्ल्स पी0 जी0 कालेज मेरठ
26. **डॉ0 प्रवेश कुमारी**, सहायक प्रो0 हिन्दी बाबा मस्तराथ विश्वविद्यालय, अस्थल बोहर रोहतक
27. **डॉ0 राजपाल**, सहायक प्रो0 राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, हिसार
28. **डॉ0 प्रवेश कुमारी**, सहायक प्रो0 टिकाराम कन्या कॉलेज, सोनीपत, हरियाणा

अंग्रेजी विभागः

1. **डॉ. ममता सिहल, अध्यक्षा,** अंग्रेजी विभाग, जे.वी. जैन कॉलिज, सहारनपुर, उ.प्र.
2. **डॉ. रणदीप राणा, प्रोफेसर,** अंग्रेजी विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक
3. **डॉ. जयबीर सिंह हुड्डा, प्रोफेसर,** अंग्रेजी विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक
4. **डॉ० रविन्द्र कुमार,** एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष अंग्रेजी विभाग, चौ० चरणसिंह विश्वविद्यालय, मेरठ
5. **डॉ. अनिल वर्मा** (पूर्व रीडर, अंग्रेजी विभाग, जे.वी. जैन स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सहारनपुर)
6. **डॉ0 जे. के. शर्मा,** प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय, अस्थल बोहर, रोहतक
8. **डॉ. पी.के. शर्मा,** (प्रो., अंग्रेजी–विभाग, राजकीय के.आर.जी. स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर)
9. **डॉ. गीता रानी शर्मा,** (सहायक प्रोफेसर) गो.ग.दत्त सनातन धर्म कॉलेज, पलवल
10. **डॉ. किरण शर्मा,** (एसोसिएट प्रोफेसर) राजकीय स्नातकोत्तर महिला महाविद्यालय रोहतक

वाणिज्य विभागः

1. **डॉ० नवीन कुमार गर्ग** (वाणिज्य विभाग, शम्भुदयाल स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गाजियाबाद)
2. **डॉ० ए.के. जैन,** पूर्व रीडर (वाणिज्य विभाग, जे.वी. जैन कॉलेज, सहारनपुर)
3. **डॉ० दिनेश जून,** एसोसिएट प्रोफेसर, वाणिज्य विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, फरीदाबाद
4. **डॉ० एम.एल. गुप्ता,** (पूर्व एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, वाणिज्य एवं व्यवसायिक प्रशासन संकाय, एस.एस.वी. स्नातकोत्तर महाविद्यालय, हापुड़ एवं संयोजक–शोध उपाधि समिति एवं संयोजक बोर्ड ऑफ स्टीडिज चौधरी चरणसिंह विश्वविद्यालय, मेरठ)
5. **डॉ० वजीर सिंह नेहरा,** प्रोफेसर वाणिज्य विभाग, म.द.वि. रोहतक
6. **डॉ० संजीव कुमार,** प्रोफेसर वाणिज्य विभाग, म.द.वि. रोहतक
7. **डॉ. गीता गुप्ता,** (सहायक प्रोफेसर) वाणिज्य विभाग, वैश्य महिला महाविद्यालय, रोहतक)
7. **डॉ. नरेन्द्रपाल सिंह,** (एसोसिएट प्रोफेसर) वाणिज्य विभाग, साहू जैन कॉलेज, नजीबाबाद, उ.प्र.)

राजनीति शास्त्र विभागः

1. **साकेत सिसोदिया,** (राजनीति शास्त्र विभाग, एस.डी. कॉलेज, गाजियाबाद)
2. **डॉ० रोचना मित्तल** (रीडर एवं अध्यक्षा, राजनीति शास्त्र–विभाग, शम्भु दयाल स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गाजियाबाद)
3. **डॉ० कौशल गुप्ता,** एसोसिएट प्रोफेसर, राजनीति शास्त्र विभाग, देशबन्धु महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली **Mob.: 09810938437**
4. **डॉ०पी.के. वार्ष्णेय,** पूर्व एसोसिएट प्रोफेसर, राजनीति शास्त्र विभाग, जे.वी.जैन कॉलेज, सहारनुपर
5. **डॉ० सुदीप कुमार,** सहायक प्रोफेसर, राजनीति शास्त्र विभाग, डी.ए.वी. कॉलेज, पेहवा (कुरुक्षेत्र) **Mob.: 9416293686**
6. **डॉ० वाई०आर० शर्मा,** एसो० प्रो०, राजनीति शास्त्र विभाग, जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू (कश्मीर)
7. **डॉ. रेनू राणा,** (सहायक प्रोफेसर, राजनीति शास्त्र विभाग, पं. नेकीराम शर्मा राजकीय महाविद्यालय रोहतक 124001
8. **डॉ. ममता देवी,** (सहायक प्रोफेसर, राजनीतिक शास्त्र विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक

इतिहास विभागः

1. **डॉ० भूकन सिंह** (प्रवक्ता, इतिहास विभाग, शम्भुदयाल स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गाजियाबाद)
2. **डॉ० मनीष सिन्हा,** पी.जी. विभाग, इतिहास, मगध विश्वविद्यालय, बोधगया, बिहार–824231
3. **डॉ० राजीव जून,** सहायक प्रो० इतिहास, सी.आर इन्स्टीट्यूट ऑफ ला, रोहतक
4. **डॉ० मीनाक्षी** (सहायक प्रोफेसर इतिहास विभाग) सी.आर. किसान कॉलेज, जीन्द

भूगोल विभागः

1. **डॉ० पी.के शर्मा,** पूर्व रीडर एवं अध्यक्ष, भूगोल विभाग, जे.वी. जैन स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सहारनपुर
2. **रश्मि गोयल** (भूगोल विभाग, एस.डी. कॉलेज, गाजियाबाद)
3. **डॉ० भूपेन्द्र सिंह,** एसोसिएट प्रोफेसर, भूगोल विभाग, राजकीय पी.जी. कॉलेज, हिसार
4. **डॉ० विनीत बाला,** सहायक प्रो. भूगोल विभाग, वैश्य पी.जी. कॉलेज, रोहतक
5. **डॉ0 प्रदीप कुमार शर्मा**, एसोसिएट प्रोफेसर, बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय, अस्थल बोहर, रोहतक

शिक्षा विभागः

1. **डॉ० उमेन्द्र मलिक,** एसिस्टेंट प्रोफेसर, शिक्षा विभाग, म.द.वि. , रोहतक
2. **डॉ० संदीप कुमार,** सहायक प्रो० शिक्षा विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्लीएसोसिएट
3. **डॉ० तपन कुमार बसन्तिया,** एसोसिएट प्रोफेस, सैंटर फॉर एजुकेशन, सैट्रल यूनिवर्सिटी ऑफ साउथ विहार, गया कैम्या, विनोभा नगर, वार्ड नं. **29, Behind ANMCH** मगध कालोनी, गया–**823001** बिहार**Mob.: 09435724964**
4. **डॉ० (प्रो०) अनामिका शर्मा,** प्राचार्या, एम.आर. कॉलिज ऑफ एजुकेशन, फरीदाबाद
5. **डॉ० मनोज रानी,** सहायक प्रोफेसर (अंग्रेजी) एम.एल.आर.एस. कॉलिज ऑफ एजुकेशन, चरखी दादरी (भिवानी)
6. **डॉ० अनीता ढाका,** (प्राचार्या, आर.जी.सी.ई. कॉलेज, ग्रेटर, नोएडा।)
7. **डॉ० ममता देवी,** (सहा. प्रो. बी.आई.एम.टी. कॉलेज कमालपुर गढ़ रोड़, मेरठ)

गृह विज्ञान

1. **डॉ0 श्रीमती पंकज शर्मा,** (सहायक प्राफेसर), गृह विज्ञान (प्रसार शिक्षा) राजकिय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रोहतक

शारीरिक शिक्षा विभागः

1. **डॉ० सरिता चौधरी,** सहायक प्रोफेसर, शारीरिक शिक्षा विभाग, आर्य गर्ल्ज कॉलेज, अम्बाला कैंट, हरियाणा
2. **डॉ० वरुण मलिक,** सहायक प्रोफेसर, म.द.वि., रोहतक
3. **डॉ० सुनील डबास,** (पद्मश्री व द्रोणाचार्य अवार्ड) HOD in physical education"DGC Gurugram

समाज शास्त्र विभागः

1. **प्रवीण कुमार** (समाजशास्त्र विभाग, शम्भुदयाल स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गाजियाबाद)
2. **डॉ० कमलेश भारद्वाज,** समाज शास्त्र विभाग, एस.डी. कॉलेज, गाजियाबाद

मनोविज्ञान विभागः

1. **डॉ० चन्द्रशेखर,** सहायक प्रोफेसर साईक्लोजी विभाग, जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू
2. **डॉ. रश्मि रावत,** (मनोविज्ञान विभाग, डी.ए.वी. कॉलेज, देहरादून)
3. **अनिल कुमार लाल** (प्रवक्ता, मनोविज्ञान विभाग, शम्भुदयाल स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गाजियाबाद)

अर्थशास्त्र विभागः

1. **डॉ० जसवीर सिंह** (पूर्व रीडर अर्थशास्त्र विभाग, किसान स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मवाना)
2. **डॉ० सुशील कुमार** (एस.डी. कॉलेज, गाजियाबाद, उ०प्र०)
3. **डॉ० अखिलेश मिश्रा** (प्राध्यापक, अर्थशास्त्र–विभाग, एस.डी.पी. जी. कॉलेज, गाजियाबाद)
4. **डॉ० सत्यवीर सिंह सैनी,** एसो०प्रो० (अर्थ०वि०, गो०ग० सनातन धर्म पी०जी० कॉलेज, पलवल)
5. **डॉ० सारिका चौधरी,** अध्यक्ष अर्थशास्त्र विभाग, दयाल सिंह कॉलेज करनाल

विधि विभागः

1. **डॉ० नरेश कुमार,** (प्रोफेसर, विधि–विभाग महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक
2. **डॉ० विमल जोशी,** (प्रोफेसर, विधि–विभाग भगत फूलसिंह महिला विश्वविद्यालय खानपुर, सोनीपत)
3. **डॉ० जसवन्त सैनी,** (सहायक प्रोफेसर, विधि–विभाग महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक)
4. **डॉ० वेदपाल देशवाल,** (सहायक प्रोफेसर, विधि–विभाग महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक)
5. **डॉ. अशोक कुमार शर्मा,** एसो. प्रोफेसर, विधि विभाग, जे.वी. जैन कॉलेज, सहारनपुर
6. **डॉ. राजेश हुड्डा,** सहायक प्रो०, विधि विभाग, बी.पी.एस. महिला विश्वविद्यालय, खानपुर कलां, सोनीपत
7. **डॉ० सत्यपाल सिंह,** (सहायक प्रोफेसर, विधि–विभाग महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक)
8. **डॉ० सोनू,** (सहायक प्रोफेसर, विधि–विभाग महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक)
9. **डॉ० अर्चना वशिष्ठ,** (सहायक प्रोफेसर, के०आर० मंगलम विश्वविद्यालय, सोहना रोड, गुरुग्राम)
10. **डॉ० आनन्द सिंह देशवाल,** (सहायक प्रोफेसर, सी०आर० कॉलेज ऑफ लॉ रोहतक)
11. **अनसुईया यादव,** (सहायक प्रोफेसर, विधि विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक, हरियाणा)

गणित विभागः

1 **डॉ० विनोद कुमार,** रीडर एवं अध्यक्ष गणित विभाग, जे.वी. जैन कॉलेज, सहारनपुर

2. **डॉ० विरेश शर्मा,** लेक्चर्रार गणित विभाग, एन.ए.एस. कॉलेज, मेरठ

3. **डॉ0 सलौनी श्रीवास्तव** सहायक प्रो0, गणित विभाग आर0 बी0 एस0 कालेज आगरा

कम्प्यूटर विभागः

1. **प्रो० एस.एस. भाटिया** (अध्यक्ष, स्कूल ऑफ मैथमेटिक्स एण्ड कम्प्यूटर एप्लीकेशन, थापर विवि, पटियाला)

2. **सर्वजीत सिंह भाटिया** (प्रवक्ता, कम्प्यूटर साईस, खालसा कॉलेज, पटियाला)

3. **डॉ० बालकिशन सिंहल,** सहायक प्रोफेसर, कम्पयूटर विभाग, म०द०विश्वविद्यालय, रोहतक

संस्कृत विभागः

1. **डॉ० रामकरण भारद्वाज** पूर्व रीडर एवं अध्यक्ष, संस्कृत विभाग, लाजपत राय कॉलेज, साहिबाबाद (गाजियाबाद)

2. **डॉ० सुनीता सैनी,** एसो0 प्रोफेसर संस्कृत विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक

3. **डॉ० सुमन,** (सहायक प्रोफेसर, संस्कृत–विभाग, आदर्श महिला महाविद्यालय, भिवानी ।)

4. **डॉ0 दिनेश मणि त्रिपाठी {प्रधानाचार्य}** एल०पी०के०इंटर कॉलेज सरदार नगर बसडिला {गोरखपुर}

5. **डॉ0 दानपति तिवारी,** प्रोफेसर, एवं अध्यक्ष, महात्मा गांधी काशी विद्यापिठ, वाराणसी, उत्तर–प्रदेश

6. **डॉ0 दिनेशचन्द्र शुक्ल,** सहायक प्रोफेसर, महात्मा गांधी काशी विद्यापिठ, वाराणसी, उत्तर–प्रदेश

रक्षा एवं स्त्रातजिक अध्ययन विभागः

1. **डॉ० आर०एस० सिवाच,** प्रो० एवं अध्यक्ष, रक्षा एवं स्त्रातजिक अध्ययन विभाग, म०द०वि०, रोहतक

दृश्यकला विभागः

1. **डॉ० सुषमा सिंह,** एसोसिएट प्रोफेसर, दृश्यकला विभाग, म०द० विश्वविद्यालय, रोहतक

पंजाबी विभागः

1. **डॉ० सिमरजीत कौर,** सहायक प्रो० (पंजाबी), ईश्वरजोत डिग्री कालेज, पेहवा (कुरूक्षेत्र)

संगीत विभागः

1. **डॉ० संध्या रानी,** अध्यक्षा, संगीत विभाग, यूआरएलए, राजकीय पीजी कॉलेज, बरेली

2. **डॉ० हुकमचन्द,** एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष तथा डीन, संगीत विभाग महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक, हरियाणा

3. **डॉ. अनीता शर्मा,** (संगीत–गायन प्राध्यापिका, जयराम महिला महाविद्यालय लोहारमाजरा (कुरुक्षेत्र)

4. **डॉ. वन्दना जोशी,** (सहायक प्राध्यापक, विभागाध्यक्ष, संगीत विभाग, एस.एस.जे. परिसर, अल्मोड़ा)

पत्रकारिता एवं जन संचार विभागः

1. **डॉ० सरोजनी नंदल,** प्रोफेसर (पत्रकारिता एवं जन संचार विभाग) महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक

उर्दू विभागः

1. **डॉ० मो. नूरूल हक,** (एसोसिएट प्रोफेसर, विभागाध्यक्ष, उर्दू, बरेली कॉलेज, बरेली)

कृषि विभाग

1. **डॉ0 गोविन्द प्रकाश आचार्य** सह–आचार्य (कृषि–प्रसार) श्री गोविन्द गुरू राजकीय महाविद्यालय, बांसवाड़ा राजस्थान मो. 9460545836

An update on UGC - List Journals

The UGC List of Journals is a dynamic list which is revised periodically. Initially the list contained only journals included in Scopus, Web of Science and Indian Citation Index. The list was expanded to include recommendations from the academic community. The UGC portal wasa opended twice in 2017 to universities to upload their recommendations based on filtering criteria available at https://www.ugc.ac.in/journallist/methodology.pdf. The UGC approved list of Journals is considered for recruitment, promotion and career advancement not only in universities and colloges but also other institutions of higher education in India. As such, it is the responsibillity of UGC to curate its list of approved journals and to ensure the it contains only high-quality journals.

To this end, the Standing Committee on Notification on Journals removed many poor quality/predatory/questionable journals from the list between 25th May 2017 and 19th Septemeber 2017. This is an ongoing process and since then the Committee has screened all the journals recommended by universities and also those listed in the ICI, which were re-evaluated and rescored on filtering criteria defined by the Standing Committee. Based on careful and analysis, 4,305 journals were removed from the current UGC-Approved list of Journals on 2nd May, 2018 because of poor quality/incorrect or insufficient information/false claims.

The Standing Committee reiterates that removal/non-inciusion of a journal does not necessarily indicate that it is of poor quality, but it may also be due to non-availability of information such as details of editorial board, indexing information, year of its commencement, frequency and regularity of its publication schedule, etc. It may be noted that a dedicated web site for journals is once of the primary criteria for inclusion of journals. The websites should provide full postal addresses, e-mail addresses of chief editor and editors, and at least some of these addresses ought to be verifiable official addresses. Some of the established journals recommended by universities that did not have didicated websites, or websites that have not been updated, might have bee dropped from the approved list as of now. However, they may be considered for re-inclusion once they fulfil these basic criteria and are re-recommended by universities.

The UGC's Standing Committee on Notification on Journals has also decided that the recommendation portal will be opened once every year for universites to recommend journals. However, from this year onwards, every recommendation submitted by the universities will be reviewed under the supervision of Standing Committee on Notification of Journals to ascertain that only good-quality journals, with correct publication details, are included in the UGC approved list.

The UGC would also like to clarity that 4,305 journals which have been removed on 2nd May, 2018 were UGC-approved journals till that date and, as such, articles published/accepted in them prior to 2nd May 2018 by applicants for recruitment/promotion may be considered and given points accordingly by universities.

The academic community will appreciate that in its endeavour to curate its list of approved journals, UGC will enrich it with high-quality, peer-reviewed journals. Such a dynamic list is to the benefit of all.

अनुक्रमणिका

क्र.	विषय / लेखक	पृष्ठ स.
1.	19वीं शताब्दी और महिलाएं प्रीती	14–16
2.	Dialectics Resolved in *Thereafter* Dr. Anu Rathee, Dr. Naresh Rathee	17–19
3.	स्वामी विवेकानन्द के सामाजिक विचार राजकुमार सिवाच	20–22
4.	मन्नू भंडारी की कहानियों में नारी का द्वंद्वात्मक रूप अनीता रानी, धर्मपत्नी श्री सज्जन सिहँ	23–25
5.	हिन्दी साहित्य और बुजुर्ग विमर्शी रचनाएँ नेहा सिंह	26–29
6.	डॉ0 रामनिवास 'मानव' के दोहो का राजनीतिक मूल्याकंन अनीता रानी, धर्मपत्नी श्री सज्जन सिहँ	30–33
7.	प्लेटो की शिक्षा Dr. Rajkumar Siwach	34–36
8.	भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के साहित्य में जन जागरण डॉ० किरण कुमारी	37–40
9.	डॉ0 जोगेन्द्र कुमार के काव्य में नारी विमर्श डॉ. सुखवीर सिंह	41–43
10.	डॉ0 गिरिराज शरण अग्रवाल के काव्य में नारी शोषण डॉ0 प्रवीण कुमार वर्मा	44–45
11.	Challenges To Micro, Small And Medium Enterprises In India Dr. Joginder Singh	46–48
12.	NEP-2020: Road Map for Revival of Indigenous Knowledge System Nisha Jain, Nitu Jain	49–51
13.	Literature: A Vehicle Of Social Change Dr. Kiran Sharma	52–53
14.	Soft Skills Based Higher Education And Employbility Dr. Joginder Singh	54–56
15.	महादेवी हिन्दी की सर्वश्रेष्ठ रेखाचित्रकार हैं डॉ0 सुधा रानी	57–59
16.	हिंदी साहित्य में जीवन मूल्य भावना	60–61
17.	"प्रवासी साहित्यकारों की विश्व पटल पर हिन्दी की स्थापना में भूमिका" डॉ0 सुधा रानी	62–64
18.	राजभाषा हिन्दी : कल, आज और कल डॉ0 अनिता गोयल	65–69
19.	किसान जीवन का जीवन्त दस्तावेज 'अकाल में उत्सव' पवित्रा देवी	70–72
20.	भ्रष्टाचार उन्मूलन में मनुस्मृति की उपादेयता– आधुनिक परिप्रेक्ष्य में डॉ0 जोगेन्द्र कुमार	73–74
21.	जम्मू–कश्मीर एवं आतंकवाद : एक विश्लेषण सुरेन्द्र सिंह	75–77
22.	आधुनिक दाम्पत्य–जीवन की अपनी–अपनी राहें: भुवनेश्वर का 'स्ट्राइक' एकांकी डॉ0 नियतिकल्प	78–80
23.	मधुकर सिंह की कहानियों में दलित विमर्श पंकज कुमार	81–83
24.	दक्षिण एशिया का सामरिक वातावरण एवं सुरक्षा सम्भाव्यताएं डॉ0 स्नेह लता	84–86
25.	हरियाणा का लोक रंगमंच 'सांग'परं परा उद्‌भव, विकास और परंपरा– एक अध्ययन। डॉ0 हनीफ भाटी	87–89

अनुक्रमणिका

क्र.	विषय / लेखक	पृष्ठ स.
26.	शिवमहापुराण गत मोक्ष डॉ. नवीन गहलावत	90–92
27.	मन्नू भण्डारी कृत महाभोज उपन्यास में चित्रित दलितों की दयनीय स्थिति डॉ0 प्रवीण कुमार वर्मा	93–94
28.	भारत में दल–बदल विरोधी कानून 1985 : एक मूल्यांकन डॉ. ममता शर्मा, युधिष्ठर सिंह सोलंकी	95–97
29.	कबीर की मानवतावादी चेतना पुनीत शर्मा	98–99
30.	वर्तमान भारतीय समाज और संस्कृति नेहा सिंह	100–101
31.	समकालीन हिंदी कविता में नारी का स्थान पुनीत शर्मा	102–104
32.	ममता कालिया के कथा–साहित्य में पारिवारिक विघटन श्वेता कुमारी	105–107
33.	संगीत व योग में सम्बन्ध डॉ. अंजना बंसल	108–109
34.	वर्तमान शैक्षिक स्थिति का अध्ययनः भारतीय प्राथमिक शिक्षा के संदर्भ में डॉ0 प्रताप सिंह राना, नसरीन फातिमा	110–113
35.	सोशल मीडिया की खबरों की प्रमाणिकता जांचना Dr. Annu	113–116
36.	महिला सशक्तिकरण एवं शिक्षा : सावित्री बाई फुले के योगदान के संदर्भ में डॉ० ममता रानी	117–119
37.	पाश्चात्य वाद्यों का भारतीय संगीत में समावेश डॉ0 अंजना बंसल	120–121
38.	संताली भाषा का कल और आज दयाल चन्द्र मंडल	122–124
39.	भक्तिकलीन परिस्थितियाँ : व दर्शनों का परिचय काजल	125–129
40.	संत नितानन्द : वाणी में चित्रित मानवतावाद डॉ0 कृष्णा मल्हान	130–133
41.	तुलसीदास के उत्तरकांड की प्रासंगिकता काजल	134–137
42.	कर्मयोगी सन्त महाराज श्री दूलमदास (भीष्म) जी डॉ0 कृष्णा मल्हान	138–139
43.	भारत में जनसंख्या वृद्धि एवं नगरीकरण की समस्यायें डॉ0 जिलेदार, डॉ0 बुद्धिप्रिय सिद्धार्थ	140–141
44.	संथाली भाषा साहित्य का सामान्य परिचय शकुन्तला बेसरा	142–143
45.	वेदव्यासविरचिते महाभारते अश्टांगयोगस्य विवेचनम् भूपेंद्र सिंह	144–146
46.	डॉ० केशवदेव शर्मा की रचनाओं में अभिव्यक्त सामाजिक संवेदना प्रो० विष्णु कुमार अग्रवाल, प्रताप सिंह शाक्य	147–150
47.	देवनागरी लिपि : वैज्ञानिकता और मानकीकरण विजय कुमार संदेश	151–153
48.	ईश्वर की मौत – असंगघोष डॉ0 बाबू जोसफ	154–155
49.	साहित्य, समाज और मीडिया काजल	156–158
50.	साहित्यिक पत्रकारिता के शिखर पुरूष– प्रवीण भारद्वाज	159–161
51.	शोध अध्ययन में परिकल्पना एवं उसकी प्रासंगिकता डॉ0 हनुमान प्रसाद मिश्र	162–165

अनुक्रमणिका

क्र. विषय	लेखक	पृष्ठ स.
52. भारतीय अर्थव्यवस्था और शिक्षा पर भूमंडलीकरण के प्रभावों का अध्ययन	डॉ0 संजय गौतम, अमित कुमार	166—169
53. गिजुभाई बधेका का जीवनवृत्त एवं उनके कर्तृत्व पर एक विहंगावलोकन	डॉ0 गायत्री प्रसाद सिंह, सुभाष	170—172
54. पर्यावरण संरक्षण हेतु भारत में उठाये गये कदम	डॉ0 पूजा	173—175
55. विदापत नाच में लोक जीवन	रागनी कुमारी	176—178
56. नासिरा शर्मा के कथा साहित्य में व्यक्त सामासिक संस्कृति	डॉ0 पूजा	179—180
57. नासिरा शर्मा के कथा साहित्य में व्यक्त सामासिक संस्कृति	सलिता	181—182
58. खगोल विज्ञान और ज्योतिष	सौरभ कुमार	183—184
59. जनपद बलिया के नगरीय विकास एवं विस्तार पर परिवहन मार्गों का प्रभाव तथा वर्तमान समस्याएं ।	जागृति विश्वकर्मा, डॉ रत्न प्रकाश द्विवेदी	185—187
60.पण्डितराज जगन्नाथ के अनुसार रस विरोध एवं परिहार	Anju Bala	188—190
61.भीष्म साहनी के उपन्यासों में स्त्री चेतना	डॉ० सुनीता कुमारी	191—192
62.भारती के उपन्यासों में विवाह—सम्बन्ध : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन	डॉ० कृष्ण हुडडा	193—194
63. अरुणोदय महाकाव्य में शिल्प—विधान	डॉ० कमलेश कुमारी	195—196
64. गढ़वाल हिमालय में अप्सराओं सम्बन्धी लोक विश्वास और लोकगीत	डॉ0 डी0 एस0 भण्डारी	197—198
65. डॉ0 हरिशरण वर्मा के नाटकों में संस्कृति का नैतिक पक्ष	डॉ0 संगीता वर्मा	199—201
66. महाकवि कालिदास कृत अभिज्ञानशाकुन्तलम् में सौंदर्य वर्णन	बलजीत सिंह	202—204
67. वर्तमान शैक्षिक स्थिति का अध्ययनः भारतीय प्राथमिक शिक्षा के संदर्भ में	डॉ0 प्रताप सिंह राना, नसरीन फातिमा	205—208
68. भारतीय अर्थव्यवस्था और शिक्षा पर भूमंडलीकरण के प्रभावों का अध्ययन	डॉ0 संजय गौतम, अमित कुमार	209—212
69. प्राचीन एवं आधुनिक काव्य शास्त्रियों के ''काव्य—लक्षण''	दीपमाला	213—216
70. वास्तु शास्त्र में शिलान्यास	डॉ0 दिनेश चन्द्र शुक्ल	217—218
71. The Philosophy of the Indian Constitution: Respect for Human Values	Dr. Mamta Rani	219—220
72. Patriarchal System and Rural Women Empowerment	Dr. Kiran Sharma	221—222
73. Role of ICT in Higher Education in India	Dr. Govind Prakash Acharya	223—228

अनुक्रमणिका

क्र. विषय	लेखक	पृष्ठ स.
74. Socio-economic Characteristics Of Universities And Colleges Sports Persons Of Hisar	Dr. Satbir Singh Sanga	229—232
75. "Raja Ram Mohan Roy And The Abolition Of Sati System In India"	Dr. Santosh Kumar Sharma	233—236
76. Secularism: The Soul of the Indian Constitution	Dr. Sudeep Kumar	237—240
77. Artificialintelligence In Education	Dr. Swaty	241—248
78. Major Themes in the Poetry of Philip Larkin	Dr. Roshan Lal	249—251
79. Smart Water Governance : The Need Of Hour	Dr. Bindu	252—255
80. A Bend In The Ganges: Partition To Communalism As Cultural Aberration	Dr. Dinesh Kumar	256—258
81. Water Management And Sustainable Development In India	Dr. Vineet Bala	259—262
82. Breaking The Silence Of Suffering: The Dark Holds No Terror	Dr. Dinesh Kumar	263—265
83. Educational progression and Sustainable Development in India	Dr. Vineet Bala	266—269
84. Search For Self Identity In Shobha De's Second Thoughts	Dr. Dinesh Kumar	270—272
85. Psychosocial Impact of Covid-19 Pandemic on Women's Mental State	Ankita	273—275
86. The Impact Of Communalism Upon At Tiahosian's *sun Light On A Broken Column*	Dr. Dinesh Kumar	276—278
87. E-commerce: Emerging Trends And Challenges In India Authors	Dr. Geeta Gupta, Dr. Santosh Mittal	279—282
88. Impact of Gst On Indian Economy	Dr. Kanwaljeet	283—284
89. Workplace Happiness : Is it Attainable ?	Dr. Vaishali Gupta, Dr. Nisha Jain	285—288
90. Over the Counter: A Study of Factors Influencing Purchase Behaviour Of Consumers in Haryana	Dr.Santosh Mittal, ShuchiGoel, Kajal Mittal	289—293
91. Value Education And National Education Policy 2020	Mrs. Kavita Jain	294—297
92. Sustainable Development, in the Indian Social Context	Dr Renu Rana	298—301
93. Graham Greene's symbolic Presentation of violence and Gangwars in his Major Works	Dr. Sudhir Kumar Yadav	302—303
94. Human Sensibility and its Distortion in Bernard Malamud's Novel 'The Fixer'	Chitralekha	304—306

अनुक्रमणिका

क्र. विषय	लेखक	पृष्ठ स.

95. An Analysis Of Impact Of Capital Budgeting On Financial Performance Of Banksinharyana — 307—308
Reena Devi
96. Impact of COVID-19 on the Indian Supply Chain Financial Performance Of Banksinharyana — 309—311
Shaveta Kakkar
97. Protection Against Ex-post Facto Laws Under Indian Constitution — 312—315
Chander Mohan
98. Conflict between Culture and Psychology: A Study of Bharati Mukherjee's Women Protagonists — 316—319
Dr. Devina Badhwar
99. Artificial Intelligenceand Intellectual Property Rights — 320—322
Gaurav Badhwar
100. Victim Compensation Scheme in India: An approach towards Rehabilitation and Restitution of Victims Rights — 323—325
Ms. Jagriti
101. The Origin Of Terror In Salman Rushdie's Shalimar The Clown — 326—328
Dr. Raj Pal Yadav
102. Political Issues In Kongi's Harvest OR Wole Soyinka's kongi's Harvest As A Political Satire — 329—330
Ms. Sangeeta Das
103. Challenges of Indian Higher Education System in Present Times — 331—333
Madhusudan
104. Tagore as Poet of Man : Spiritual Humanism — 334—335
Dr. Raj Pal Yadav
105. Cyber Security Threats: Tools and Suggestions — 336—340
Ms. Sanju Chaudhary
106. Role of Information Technology in National Security — 341—343
Dr. Kuldeep Singh Jaglan
107. Study Of Relationship Between Spouse Health And Marriage Problem — 344—346
Dr. Manju Chaudhary
108. Issues And Challenges Faced During Crime Investigation In India: A Critical Study — 347—350
Yogender Dhillon, Dr. Rakesh Kumari Malik
109. An over view on Narco Analysis, Polygraph and Brain Mapping in Criminal Investigation and Trials — 351—357
Anju
110. Issue And Challengesregarding Environmental Problums In India — 358—360
Sunita
111. A Study Of National Human Right Commission And Safeguard Under The Constitution Of India — 361—363
Karamdeep
112. An Overall Study Of Unfair Trade Practices In India — 364—366
Ishant Sharma
113. An Overview Of Law Relating To Bail In India: Judicial And Legislative Trends — 367—369
Dimpal
114. Redefining Self through Autobiography — 370—372
Dr. Shalini Sharma

अनुक्रमणिका

क्र. विषय	लेखक	पृष्ठ स.

115. Technological Approach Towards Physical Education And Sports Sciences: Advancement And Trends — 373—375
Dr. Surjit Kaur Neema
116. Issuesand challenges in Inclusive Education — 376—377
Dr. Manoj Rani
117. Rights and Protection of Women under family laws — 378—380
Aayush
118. A Study Of Terrorism And Human Rights — 381—383
Sandeep
119. Ruskin Bond's Philosophical Perspective Towards Life — 384—385
Mamta Gupta
120. Impact of Environmental Problem on Tribal Communities of India — 386—388
Swetaswini Nayak

अतिथि सम्पादक परिचय

डॉ० राजपाल

जन्म स्थान : ग्राम पोस्ट कल्लरभैणी, जिला हिसार (हिसार) श्रीमान् रामस्वरुप खटोड़ और श्रीमती कलावती के घर।

शिक्षा : बी०ए० ऑनर्स, बी०एड०, एम०ए० (हिन्दी), एम०एड०, पी–एच०डी० (हिन्दी), डी०लिट्० मानद उपाधि (अमेरिका)।

व्यवसाय : शिक्षक, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, हिसार।

सम्प्राप्ति : राष्ट्रीय संगोष्ठी में शोध–पत्र प्रस्तुत, विभिन्न राष्ट्रीय स्तर की पत्रिकाओं में अनेक शोध–पत्र प्रकाशित। दर्जनों पुस्तकों की भूमिका, दर्जनों लघु शोध प्रबंध (एम०फिल०) शोध प्रबंध (पी०एच०डी०) शोधार्थियों का मार्गदर्शन, दर्जनों लघु पुस्तिका, पाँच पुस्तक प्रकाशित एवं सम्पादन आदि, विभिन्न विषयों में हिन्दी, अंग्रेजी, शिक्षा स्वास्थय, शिक्षा शास्त्र, कंप्यूटर, गणित, कंप्यूटर साईंस, इतिहास, विज्ञान, समाजशास्त्र, मनोविज्ञान, भूगोल, अन्य एक दर्जन पुस्तकों में अध्याय शामिल।

सम्मान : महात्मा ज्योतिबाफुले राष्ट्रीय फैलोशिप अवार्ड 2015, भगवान बुद्ध राष्ट्रीय फैलोशिप अवार्ड 2016, जनश्री महाराणा प्रताप फैलोशिप अवार्ड 2017, मान्यवर कांशी राम राष्ट्रीय साहित्य अवार्ड 2018, शिक्षक गौरव सम्मान 2020, इंडियन एक्सीलेंस अवार्ड 2021, अवगत अवार्ड 2021, अक्षरवार्ता एवं शोध संस्थान उज्जैन (म०प्र०), इण्डियन यूथ अवार्ड 2021 इंटरनेशल काउंसिल फॉर एजुकेशन, रिसर्च एण्ड ट्रेनिंग– नई दिल्ली, एकलव्य अवार्ड 2022 इंटरनेशल काउंसिल फॉर एजुकेशन, रिसर्च एण्ड ट्रेनिंग, आचार्य रवीन्द्रनाथ टैगोर साहित्य सम्मान 2022, सृजन वाङ्मय परिषद भोपाल (म०प्र०), गीना देवी हिन्दी गौरव सम्मान 2023 भारतेन्दु हरिश्चन्द्र राष्ट्र भाषा हिन्दी गौरव सम्मान–2022।

अनुवाद कार्य : स्वास्थ्य दर्शन (Health is wealth),
अच्छे अभिभावक कैसे बने। (Successful Parenting)

विस्तार व्याख्यान : भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के राष्ट्रीय अश्व अनुसंधान केन्द्र हिसार, राष्ट्रीय सांख्यिकीय कार्यालय, क्षेत्र संकार्य प्रभाग, उप क्षेत्रीय कार्यालय ओम कम्पलेक्स, द्वितीय तल, 5 कि०मी० स्टोन, सैक्टर 9–11 चौक, तोशाम रोड़, हिसार। गोरखपुर हरियाणा अणु विद्युत परियोजना, गोरखपुर, फतेहाबाद।

सम्पर्क सूत्र : ग्राम पोस्ट कल्लर भैणी, जिला हिसार (हरियाणा)
मोबाइल : 9466370922
ई–मेल : dr.raj-hisari@gmail.com

'शोधार्थी, शोधकार्य व उसका उत्तरदायित्व'

किसी भी देश के सतत् विकास के लिए वहां का शोध उतना ही महत्वपूर्ण होता है जितना की प्राकृतिक एवं अन्य संसाधन निःसंदेह राश्ट्र के सतत् विकास में प्राकृतिक मानवीय एवं अन्य संसाधनों का समुचित–प्रयोग एवं प्रबंधन आवश्यक है। शोध जहां एक ओर सतत् विकास हेतु नवीन योजनाओं, क्रिया विधि एवं विभिन्न प्रकार के नवाचारों का आधार होता है; वहीं दूसरी ओर चल रही योजनाओं को प्रभावशीलता का अध्ययन एवं मूल्यांकन करके सुधार हेतु बहुमूल्य सुझाव भी प्रस्तुत करता है। विचारणीय है कि शोध राश्ट्र के बौद्धिक सम्पदा के विकास में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसका सबसे महत्वपूर्ण करण शोध के दौरान शोधार्थियों का उतरदायित्व है।

आधुनिक लेखकों से तात्पर्य उन सभी अनुसंधित्सुओं से है जो ज्ञान–विज्ञान की विविध शाखाओं एवं प्रकारों पर लिखते हैं और जिनके लिखित विचारों को छापे की मशीनों के भीतर से गुजर कर जन–साधारण तक पहुँचने का अवसर मिलता है। लेखक तो वो भी कहलाते है जिनका लेखन उनके घर तक या मित्रों तक ही रह जाता है परन्तु आधुनिक लेखक से मतलब केवल उन्हीं लेखकों से है जिनका लिखा सर्वसाधारण तक पहुँच जाता है।

शोध और लेखन का कार्य सामाजिक उत्तरदायित्व का कार्य है। लेखक के विचारों की अच्छाई या बुराई समाज की जीवन धारा को प्रभावित करनी है। जनचित को प्रभावित आंदोलित और चालित करने वाली जितनी भी संस्थाएँ आधुनिक समाज को ज्ञात है, जैसे–शोध–पत्रिकाएँ, समाचार पत्र, सिनेमा, विश्वविद्यालय, अदालतें, व्यवसायिक संस्थान आदि सब ने लेखक के क्रियात्मक सहयोग की जरूरत है, सबको लेखक कार्य से वो सब मिलता है। वस्तुतः संसार आत्मसात करता है, सबका मुख्य कारक शोध ही होता है। प्रत्येक लेखक से संसार की नीतियां के प्रभावित होने की संभावना भी समान नहीं होती है। कोई कम प्रभावित करता है तो कोई अधिक, किन्तु यह सर्वमान्य सत्य है कि प्रभावित सभी करते है। यह समझना भूल है कि जिसकी रचना कम लोग पढ़ते है, उससे उत्तरदायित्व का निर्वाह ठीक से नहीं होता है।

इस गतिमान जगत में एक आदमी को भी गुमराह करने से कभी–कभी भयंकर हानि की संभावना होती है। इस तरह एक आदमी को भी अगर ठीक से सही रास्ते पर लगा दिया जाए तो संसार का असीम उपकार भी हो जाता है। यह समझना कि हमारा प्रभाव क्षेत्र कम है या छोटा है इसलिए हमारा उत्तरदायित्व भी कम है या छोटा है, तो गलत समझना है। लेखक कोई भी हो समाज के प्रति उत्तरदायित्व सभी का निश्चित होता है। उसे संसार की वर्तमान समस्याओं को ठीक–ठीक समझना चाहिए और शांत चित से सोचना चाहिए कि मनुश्य को मनुश्यत्व के लक्ष्य तक ले जाने में कौन–कौन सी शक्तियां सहायक है और कौन सी बाधक। फिर उसे सहायक शक्तियों के प्रति सहानुभूति उत्पन्न करनी चाहिए और बाधक तत्वों के प्रति विरक्ति।

हमारे देश का इतिहास एवं संस्कति बहुत विशाल एवं प्राचीन है। इसका सांस्कृतिक दायरा अपने में अनेक विभिन्नताएं समेटे हुए है। हमने पराधीनता का अभिशाप भी झेला है। हमें राजनीति एवं सामाजिक पराभव का दुःख मालूम है। हमें आर्थिक–धार्मिक शोशण के कश्ट पता है। हमने सामाजिक वैशम्य की विहूयता भी झेली है। हम इसके विरुद्ध खड़े होने के उत्तम अधिकारी है। सौभाग्यवश हम ऐसे पूर्वजों की संतान है जो धीरभाव से सोचने, शांत भाव से देखने व समान भाव से सोचने में प्रसिद्ध है। इसलिए हमारे ऊपर उत्तरदायित्व बढ़ जाता है। जब संसार संदेह और अविश्वास दौर से गुजर रहा हो तब हमारा कर्तव्य समाधान की तरफ जाना हो जाता है। हम सब प्रकार के मनुकत्व अर्थात् समता स्वाधीनता और बंधुत्व आदि का प्रकाश फैलाने के अधिकारी है। हम मनुश्य को नई संस्कृति व सभ्यता देने के संकल्प के उचित पुरुशकार कर्ता है। आज वर्तमान परिप्रेक्ष्य में संसार को इसी की आवश्यकता है। कहने की आवश्यकता नहीं है कि शोधकर्ता के लिए साहित्यिक ईमानदारी प्रथम शर्त है। वह जो कुछ भी लिखता है उससे पाठकों को सही–सही जानकारी मिलनी चाहिए। पाठक को रति मात्र भी गुमराह करने का प्रयास केवल अपराध ही नहीं अपितु पाप है। शोधकों को हिंदी, संस्कृत, अंग्रेजी व अन्य भाशाओं से मूल वाक्यों एवं वक्तव्यों को उद्धृत करने का अधिकार है परन्तु यह अधिकार सशर्त है। शोधकर्ता जब भी किसी अन्य लेखक के वक्तव्य या पंक्ति को उद्धृत करे तब वह मूल लेखक की समुचित जानकारी भी उद्धृत करे। किसी अन्य के लेखन को अपना बनाकर लिखा जाना बेहद गलत व गैर संवैधनिक होता है। उद्धरणों को शुद्ध रूप में देना शोधकर्ता का विशेश उत्तरदायित्व है। कुछ तो इसलिए कि उद्धरण मूल सुसम्पादित पुस्तकों से लिए ही नहीं जाते और कुछ शोधकर्त्ता इनको बहुत महत्व नहीं देते। उद्धरणों में अशुद्धियों की भरमार होती है। यह अत्यंत सोचनीय है। कई बार टंकण की अशुद्धि बताकर पीछा छुड़ाने का

प्रयत्न किया जाता है, पर टंकित प्रति को हाथ से सुधारने का दायित्व भी शोधकर्ता का ही होता है। शोधार्थी द्वारा यह मानकर चलना चाहिए गलत संदर्भ बताना और अशुद्ध उद्धरणों को अपने प्रबंध में स्थान देना न केवल लज्जाजनक है अपितु शोध की गरिमा गिराने का कारक भी है। शोधकर्ता का यह कर्तव्य बनता है कि वह संदर्भ सूची को इस प्रकार से बनाए कि पाठक यदि चाहे तो संदर्भग्रंथ से मिलाप कर इसकी सत्यता जांच सके। इन सारी बातों को एक वाक्य में साहित्यिक ईमानदारी कह सकते है। आज बड़े खेद की बात है कि शोध–प्रबंधों में इसकी कश्टप्रद उपेक्षा हो रही है। संदर्भ ग्रंथों का औचित्यबाधिक होता है। कई शोध प्रबंधों में अनावश्यक रूप से ऐसे लेखकों को प्रमाण रूप में उद्धृत किया जाता है जो अप्रामाणिक है। यह उचित नहीं है। असल में वही व्यक्ति या लेखक प्रमाण रूप में उद्धृत किया जाना चाहिए जो अपने क्षेत्र का मूर्धन्य एवं सुपरिचित–प्रामाणिक हो। हमारे चरित के प्रति हमारी मनोवृति अतिशय भावात्मक हो जाती है। वस्तुतः हमारे साहित्य में एक दृढ़ प्रवृति यह रही है कि जिस लेखक, कवि या नाटककार के बारे में लिखा हो उसे चरित नायक मानकर उसे एक प्रकार से बड़ा और निर्दोश सिद्ध किया जाता है।

मैक्समूलर ने इस वृति को एकैक देववाद कहा था। अपासना के क्षेत्र में यह बात ठीक हो सकती है पर साहित्यिक मूल्यांकन के क्षेत्र में नहीं। अनपेक्षित विस्तार की भी प्रवृति से बचना चाहिए। शोधकों को प्रंबध को येनकेन प्रकरेण भर कर पुलिन्दा बनाने की प्रवृति है। ऐसा जान पड़ता है कि यह भ्रम व्यापक रूप से फैला हुआ है कि शोध–प्रबन्ध वृहवकार होना चाहिए। यह सोच ठीक नहीं है। शोधक कुछ खास बात सिद्ध करना चाहता है या कुछ विशिष्ट मान्यता की स्थापना करना चाहता है या कोई अब तक न जानी हुई महत्वपूर्ण तथ्यावली को प्रकाशन में लाना चाहता है जो सबसे खतरनाक है। वह है लिप्यन्तरीकरण। शोधार्थी को इसकी भी जानकारी होनी चाहिए।

शोथार्थी के गुण–शोध एक दायित्वपूर्ण कार्य है। अतः उसे करने के लिए किसी भी शोधार्थि में विभिन्न गुणों की अपेक्षा की जाती है। अच्छे शोधार्थी के अभाव में एक अच्छा शोध–प्रबंध निर्मित नहीं हो सकता है। शोधकर्ता में अपेक्षित गुणों की आवश्यकता पर बल दिया गया है। आचार्च विनयमोहन शर्मा ने अपने लेख ''शोध का अधिकारी कौन है'' में उन गुणों का विस्तार से विश्लेशण करते है जैसे– जिज्ञासा, ग्रहीत विशय का ज्ञान, क्षमता, कार्य–संलग्नता, कृतज्ञता, लेखन–क्षमता, वैचारिक दृश्टिकोण और तटस्था, रूकावतकता, सहनशीलता, सत्य आत्मय होना, सैद्धान्तिक होना और योजनात्मक आदि।

उपर्युक्त माध्यम से हम देखते है कि शोध एक जीवित यात्रा है। शोध, शोधार्थी का एक अनिश्चितकालीन यात्रा है। जिसे शोधार्थी एक संजीदा यात्री की तरह होता है। शोध–निदेशक उस शोध रूपी यात्रा का मार्ग दर्शक होता है। जो हर कदम पर आने वाले खतरे से शोधार्थी को न केवल अवगत कराता है बल्कि उससे निपटने हेतु रणनीति बनाने में सहयोग भी करता है। पुस्तकालय, संग्रहालय और वेबसाइटस शोध में सहायता करने वाले करक होते है। उन सभी में सामंज्स बनाकर शोधार्थी अपनी शोध यात्रा पूरी करता है। सृजनात्मक सोच के अभाव में उच्च कोटि का शोध संभव नहीं है। जब तक शोध उच्चकोटि का नहीं होगा तब तक उस शोध को पेटेंट नहीं किया जा सकेगा। देश और समाज को भी उसका कोई फायदा नहीं होगा। उच्च कोटि का शोध तभी सम्भव है जब शोधार्थी/शोधकर्ता को पर्याप्त सुविधा संरक्षण मिले। शोधकर्ताओं को उच्च स्तर की सुविधाएं उपलब्ध करवाना शैक्षणिक संस्थाओं का नैतिक दायित्व बनता है। उद्योगों एवं शैक्षणिक संस्थाओं में समन्वय स्थापित कर नई तकनीकों के शोध किए जा सकते है। शोधार्थी को शोध पेटेंट करवाने के लिए प्रोत्साहित करना होगा, ताकि संबंधित शोध पर हमेशा के लिए उनका अधिकार स्थापित हो सके।

सम्पादकीय

डॉ0 राजपाल

हिंदी विभाग

राजकीय महाविद्यालय

हिसार, हरियाणा।

1

19वीं शताब्दी और महिलाएं

प्रीती

सारांश

प्लासी तथा बक्सर के युद्ध के पश्चात भारत में ईस्ट इंडिया कम्पनी के माध्यम से अंग्रेजी हुकूमत की स्थापना हुई। प्रारम्भ में कम्पनी ने बंगाल में अपने पैर जमाए और थोड़े समय में ही उसने शेष भारत पर अपना अधिकार कायम कर लिया। वैसे तो कम्पनी के भारत में उत्कर्श और सत्ता में आने के साथ ही देश में परिवर्तन की पृष्ठभूमि तैयार होने लगी थी, परन्तु भारतीय चिन्तन में ठोस परिवर्तन का सूत्रपात भारत में ब्रिटिश साम्राज्य की स्थापना के पश्चात् ही शुरू हुआ। भारत में अंग्रेजी राज्य की स्थापना के साथ भारत का समाज पश्चिम के समाज और सस्कृति के प्रत्यक्ष सम्पर्क में आया। समय के साथ–साथ वह सम्पर्क बढ़ता गया और घनिश्ठ होता गया। यह वह समय था जब पश्चिम का समाज प्राचीन परम्पराओं के बन्धन से मुक्त होकर आधुनिक युग की आधुनिकता में प्रविष्ट हो चुका था। तर्क, युक्ति–संगतता एवं प्रत्यक्ष अनुभव पश्चिम के चिन्तन तथा आचरण में मौलिक तत्व के रूप में प्रतिष्ठित हो चुके थे।भारतीय संस्कृति के मूल्यों के अवमूल्यन से नारी को अनेक अधिकारों से वंचित कर दिया गया। वह सर्वत्र बन्धनों में जकड़ती चली गई। नारी के सम्मान और समाज में उसकी स्थिति में निरन्तर गिरावट आती चली गई।

नारी के स्वाभिमान और सशक्तिकरण में यह गिरावट उन्नीसवीं शताब्दी में स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है।[1] भारतीय समाज का भौतिक, आध्यात्मिक और नैतिक पतन हो रहा था। इस कारण इस अवधि में नारी के अधिकारों पर प्रतिबन्ध कठोर होते चले गये। अब वह घर की चार–दिवारी के अन्दर कैद हो कर रह गई थी। उसे किसी प्रकार के कोई अधिकार नहीं थे। उपर्युक्त विवेचन से यह स्पश्ट होता है अंग्रेजों के आगमन तक भारत में स्त्रियों की स्थिति अपने निचले पायदान तक पहुँच चुकी थी।[2] भारत में हिन्दू स्त्रियाँ इस युग में सामाजिक एवं धार्मिक संकीर्ण विचारधारा का शिकार बनी। वैदिक काल की 'गृह लक्ष्मी', 'माता' एवं 'शक्ति प्रदायनी देवी' अब याचिका, सेविका तथा अबला के रूप में दिखाई देने लगी। वैदिक काल की वह स्त्री जो अपने प्रबल व्यक्तित्व के कारण देश के साहित्य और समाज के आदर्शों को प्रभावित करती थी, अब परतंत्र, पराधीन, निसहाय और निर्बल बन चुकी थी।[3]इस प्रकार उन्नीसवीं शताब्दी में भारतीय स्त्रियों की दशा बहुत ही खराब थी। समाज में धार्मिक अंधविश्वासों एवं आडम्बरों के कारण अनेक क्रूर कुरीतियाँ प्रचलित थी, जो भारतीय स्त्रियों की स्थिति का लगातर क्षरण किये जा रही थी।

इस काल में भारतीय स्त्री पर लादी गई कुछ प्रमुख निर्योग्यताएं निम्न प्रकार से हैं:–

सामाजिक निर्योग्यताएँ

उन्नीसवीं शताब्दी में जब हम महिलाओं कि स्थिति के बारे में अध्ययन करते हैं तो पातें हैं कि स्त्रियों को शिक्षा के सम्बन्ध में कोई अधिकार प्राप्त नहीं थे। शिक्षा प्राप्त करने का अर्थ किसी व्यवसाय या कार्य में दक्षता से जोड़ा जाता था, तथा किसी कार्य या व्यवसाय को करना स्त्रियों के लिए उचित नहीं माना जाता था।[4] महिलाओं के पतन के इस काल में स्वतंत्र रूप से स्त्रियों को अपने अधिकारों को माँगने तथा व्यवहारिक नियमों में किसी प्रकार के परिवर्तन करने का अधिकार नहीं था। स्त्रियों में बाल विवाह, पर्दा प्रथा व अन्य कुरीतियाँ उनकी शिक्षा प्राप्ति में मुख्य बाधाएं थी। बाल विवाह तथा पर्दा प्रथा का विरोध करना स्त्रियों को उनके चरित्र के लिए कलंक समझा जाता था। इस युग में पारम्परिक दृष्टि से स्त्रियों का कार्य क्षेत्र केवल मात्र घर था। घर से बाहर का क्षेत्र सामान्तयाः उनके लिए वर्जित था। वे माताएं पहले थी और उपार्जिका बाद में। स्त्रियों का घर से बाहर कार्य करना परिवार के सम्मान के विरूद्ध समझा जाता था। परम्परागत धार्मिक उत्तरदायित्वों का वहन करना ही उनका कार्य एवं मनोरंजन माना जाता था।[5]

पारिवारिक निर्योग्यताएँ

इस युग में स्त्रियों के, परिवार के क्षेत्र में समस्त अधिकार समाप्त हो गये थे। प्रारम्भ में स्त्री परिवार का संचालन करती थी, किन्तु बाद में व्यवहारिक रूप से यह अधिकार पुरूश 'कर्त्ता' को दे दिया गया। कम आयु में विवाह हो जाने के कारण परम्परागत रूढ़ियों एवं निशेधों से मुक्त वैदिक काल की परिवार की 'साम्राज्ञी' नारी, अपने परिवार की सेविका बन गई। परिवार में बच्चे पैदा करना तथा अपने पति व उसके सम्बन्धियों की सेवा करना ही उसका मुख्य कार्य एवं दायित्व मान लिया गया। उत्तरवैदिक युग तथा मध्य युग से चली आ रही बहू–पत्नी प्रथा, अन्तर्जातिय विवाह, विवाह विच्छेद का अधिकार न होना आदि कुरीतियाँ प्रचलित रही।[6]

पारिवारिक और सामाजिक समस्त प्रथा और परम्पराएं, नियम तथा कानून सबसे पहले महिलाओं पर ही लादे जाते थे। परिवार में दहेज की मात्रा, सदस्यों की सेवा तथा अन्य धार्मिक कार्यों को लेकर के स्त्रियों का शोशण करना एक सामान्य बात हो गई थी। दूसरी ओर स्त्रियाँ भी इन सब ज्यादतियों को पूर्व जन्म के कार्यों का फल मानकर इन कश्टों को सहन कर लेती थी। पुरूश प्रधान समाज द्वारा इसे धार्मिक तथा नैतिक आचरण का लबादा उढ़ा दिया गया था, जिस कारण स्त्रियों ने इसे नियति का विधान मान लिया तथा इन बंधनों का विरोध नहीं करती थी। इसी कारण इनकी स्थिति में निरन्तर गिरावट आती गई। डॉ0 डी0एन0 मजूमदार के अनुसार, "हिन्दू परिवार में सबसे अधिक रूढिव् ादी तत्व स्त्री है और परम्परागत रूढ़ियों का पालन इनके द्वारा ही करवाया जाता है।"[7]

आर्थिक निर्योग्यताएँ

उन्नीसवीं शताब्दी में जब हम महिलाओं की आर्थिक स्थिति को देखते हैं तो पता चलता है कि स्त्रियों पर आर्थिक निर्योग्यताएं सबसे ज्यादा थी। भारतीय महिलाओं को न केवल परिवार की सम्पत्ति में से हिस्सा देने से वंचित किया गया, अपितु उनको अपने पिता की सम्पत्ति

में भी कोई हक नहीं दिया जाता था तथा न ही किसी प्रकार की निजी सम्पति रखने का अधिकार था। समाज में स्त्रियों को किसी प्रकार की आर्थिक सुरक्षा व अधिकार प्राप्त नहीं थे। जिस युग में जब स्त्री स्वयं एक 'सम्पत्ति' मानी जाती थी, तो उसे सम्पत्ति सम्बन्धी अधिकार कैसे दिये जा सकते थे। प्रसिद्व इतिहासकार डा0 के0एम0 पन्निकर के अनुसार, "हिन्दू समाज में पुत्री के अस्तित्व को कानून द्वारा दूर हटा दिया गया, पत्नी, पति के परिवार का अंग हो गई और विधवाओं को मृत तुल्य मान लिया गया।"[8] भारतीय समाज में एक नारी भूख और प्यास से चाहे कितनी भी पीड़ित और परेशान क्यों न हो, परन्तु कोई आर्थिक क्रिया करना उनके स्त्रीत्व और कुलीनता के विरूद्ध माना जाता था। स्त्रियों द्वारा आर्थिक क्रियाकलाप करना परिवार की शान और सम्मान के विरूद्ध समझा गया। इस कारण स्त्रियों के आर्थिक गतिविधियों में सम्मलित होने पर पूर्ण प्रतिबंध लगा दिये गये तथा उन्हें घर की चारदिवारी के अन्दर कैद कर दिया गया। इन सबका परिणाम यह निकला कि पुरूषों द्वारा स्त्रियों पर बड़े से बड़े गम्भीर अमानवीय व्यवहार के बाद में भी उन्हें उन्हीं पुरूषों के सरंक्षण तथा दया पर ही आश्रित रहना पड़ा।[9]

राजनीतिक निर्योग्यताएँ

महिला अधिकारों पर चोट करने वाले इस युग में स्त्रियों का राजनीतिक क्षेत्र में हिस्सा लेना कल्पना से बाहर की बात थी। ऐसे समय में जब एक स्त्री का घर में शोषण होता हो, शोशण करने वाला पुरूष स्वयं अंग्रजों का गुलाम हो, तो वह किस प्रकार स्वयं राजनीति में भाग ले सकती थी। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि वैदिक काल के बाद महिलाओं का सामाजिक स्तर लगातार गिरता चला गया। इस युग में महिला का केवल एक ही कार्य क्षेत्र घर गृहस्थी तथा मजदरूी करना ही रह गया था। वैदिक काल की स्त्री 'साम्राज्ञी' के स्तर से गिरकर 'दासी' के स्तर पर आ गई थी।[10]इस प्रकार हम देखते हैं कि भारतीय स्त्रियों की समाज में स्थिति निम्नतम स्तर तक पहुँच चुकी थी। वे अपने गौरवशाली इतिहास को पीछे छोड़कर पशुओं के समान अपना जीवन ढो रही थी, जहाँ उनका कार्य केवल अपना पेट भरना तथा पुरूश प्रधान समाज द्वारा तय कार्यों को करना था। उन्नीसवीं शताब्दी में महिलाओं की स्थिति में जो गिरावट आई उसके अनेकों कारण हैं। उनमें से कुछ प्रमुख कारण जो लगभग समस्त भारत की महिलाओं की दयनीय दशा के लिए जिम्मेंदार थे वे नीचे दिये जा रहे हैं।बंगाल और उसके आस—पास के क्षेत्र में सती प्रथा जैसी क्रुर प्रथा प्रचलित थी। इस प्रथा के तहत विधवा स्त्री को अपने पति की चिता में बैठ कर अपने आप को जीवित जलाना होता था। बंगाल में 1815—17 के मध्य सती होने की आठ सौ चौसठ घटना घटी, जो अपने आप में इस क्ररू प्रथा की भयानकता को दर्शाता है।[11]

ब्रिटिश शासन धार्मिक मामलों में बंगाल, मद्रास और बम्बई में अहस्तक्षेप की नीति पर चल रहा था। इसी कारण सती प्रथा के मामलों में भी उसने किसी प्रकार का हस्तेक्षप करना उचित नहीं समझा। वहीं दूसरी ओर फ्रांसीसी और डचों ने इस प्रथा पर कठोर रूख अपनाया तथा इस पर रोक लगाने का प्रयास किया। हालांकि ब्रिटिश सरकार भी इस बर्बर प्रथा से दुखी थी और इसको समाप्त करने के पक्ष में थी। सन् 1798 ईस्वी में कम्पनी शासित विभिन्न जिलों में कार्य करने वाले अधिकारियों ने ईस्ट इण्ड़िया कम्पनी से सती प्रथा पर प्रतिबंद्ध लगाने की अनुमति मांगी। लेकिन कम्पनी सरकार को लगा की इस मामले में सीधा हस्तक्षेप करना लोगों की धार्मिक भावनाओं को भड़का देगा।[12]इसलिए कम्पनी सरकार ने आदेश दिया कि लोगों को समझा कर, तथा इस बारे में जागरूकता फैला कर इस पर नियन्त्रण किया जाये। कम्पनी सरकार ने इस बारे में स्पष्ट आदेश दिया कि इस पर नियन्त्रण हेतु बल का प्रयोग न किया जाये। 05 फरवरी 1805 को लार्ड वेलजली ने सती प्रथा के बारे में निजामत अदालत से सलाह मांगी। निजामत अदालत ने अदालतों में हिन्दू मामलों में न्यायधिशों की सहायता के लिए नियुक्त हिन्दू पण्डितों से विचार विमर्श के पश्चात अपने सुझाव में कहा कि जिन क्षेत्रों में सती प्रथा का प्रचलन कम है वहाँ इसे बन्द किया जा सकता है तथा अन्य क्षेत्रों में ऐसी विधवाएँ जिनकी आयु बहुत कम है, गर्भवती हैं या जिनके बच्चे छोटे हैं और उनका पालन पोशण करने वाला परिवार में कोई अन्य न हो, को सती नहीं होना चाहिए। इसके साथ ही निजामत अदालत ने स्पष्ट किया कि किसी स्त्री को नशा करवा कर सती होने के लिए बाध्य करना या प्रोत्साहित करना शास्त्रों के विरूद्ध है।[13]

इसी प्रकार उन्नीसवीं शताब्दी के भारतीय समाज में हिन्दू विवाह से सम्बन्धित एक विकराल समस्या विधवा पुनर्विवाह की थी। विधवाओं के पुनर्विवाह पर प्रतिबन्ध था, जबकि पुरूषों के लिए ऐसा कोई नियम नहीं था। स्मृति काल के बाद विधवाओं को पुनर्विवाह की अनुमति नहीं थी। मनु के अनुसार यदि एक विधवा पुनर्विवाह करती है तो स्वयं को अपमानित करती है। अतः उसे अपने स्वामी के घर से निकाल देना चाहिए। इसी प्रकार बहू—विवाह स्त्रियों के अधिकारों पर चोट करती हुई एक अन्य प्रथा थी जो उन्नीसवीं शताब्दी में प्रचलित थी। बहू—विवाह के प्रचलन से स्त्रियों का उत्पीड़न तथा समाज में अनेक बुराइयाँ फैल रही थी। जब कम्पनी सरकार ने इस पर प्रतिबंध लगाने के लिए कदम उठाने शुरू किये तो बाबू किशोर चन्द ने तत्कालीन व्यवस्थापिका सभा के समक्ष बहू विवाह के पक्ष में एक रिपोर्ट प्रस्तुत करते हुए कहा कि बहू—विवाह शास्त्र सम्मत प्रथा है। इसके वजिर्त होने पर हिन्दुओं की धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुँचेगी। अतः इस मामले में सरकार का हस्तक्षेप उचित नहीं है।[14]बाल—विवाह प्रथा का अत्यधिक प्रचलन स्त्रियों के पतन का एक अन्य महत्वपूर्ण कारण रहा है। छोटी आयु में विवाह हो जाने के फलस्वरूप स्त्रियों की शिक्षा का स्तर गिरा तथा उनमें अज्ञानता बढ़ी। अज्ञानता के कारण स्त्रियाँ अपनी मूल स्थिति को नहीं समझ सकीं और अपने अधिकारों को न माँग सकी। विवाह संस्कार को ही स्त्री का उपनयन सस्ं कार मान लिया गया। कम आयु में विवाह हो जाने के कारण अल्प आयु की वधुएँ पुरूश के प्रभाव में आसानी से आ जाती थी। कम आयु में विवाह होने के कारण उनको छोटी आयु में ही घर—गृहस्थी की समस्याओं से जूझना पड़ा । छोटी आयु में ही माँ बन जाने के कारण उनको अपने व्यक्तित्व के विकास का अवसर नहीं मिल सका। इस प्रकार से बाल—विवाह की प्रथा भी भारतीय स्त्रियों के पतन का मुख्य कारण रही।[15]

भारत वर्ष में उन्नीसवीं शताब्दी में 'डाकिनी' प्रथा जोरों पर थी। ऐसा माना जाता था कि अछूत जाति की स्त्रियों में जो कुरूप और वृद्धा होती थी, वे डाकिनी होती थी। लोगों का ऐसा विश्वास था कि जिस

बच्चे या स्त्री को डाकिनी लग जाती थी, वह बीमार होकर धीरे–धीरे मृत्यु को प्राप्त हो जाता था। बच्चों के विशय में कहा जाता था कि उनके कलेजे को डाकिनी खा जाती थी। डाकिनी को गाँव वाले जीवित जला देते थे या पीटकर आह्त कर देते थे। इस प्रकार सैकड़ों निरापराध गरीब औरतों को घोर यातनाएँ तथा वेदना ही नहीं सहनी पड़ती थी बल्कि उन्हें अपने प्राणों से हाथ धोना पडता था।उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य तक कन्या वध की प्रथा विशेषकर राजस्थान में जोरों पर प्रचलित थी। इस प्रथा के प्रचलन के अनेक कारण थे। प्रथम तो लड़की के विवाह की समस्या थी। एक राजपूत अपनी सन्तान का विवाह अपने ही कुल में नहीं कर सकता था। जैसे एक सिसोदिया राजपूत अपना विवाह सिसोदिया राजपूतों में नहीं कर सकता था, क्योंकि कुलीय भावना के आधार पर सभी सिसोदिया स्त्री–पुरूष अपने को भाई–बहन समझते थे। इससे वैवाहिक सम्बन्धों का क्षेत्र काफी सीमित हो गया था। दूसरी बात यह थी कि राजपूतों में उच्चोच्च वंश विवाह की परम्परा थी अर्थात प्रत्येक राजपूत अपनी पुत्री का विवाह अपने से उच्च घराने में करने की लालसा रखता था। विवाह योग्य दहेज और त्याग न जुटा पाने की स्थिति में उनके लिए कन्या वध का विकल्प चुनना आसान होता था।[16]

यह सत्य है कि हिन्दू वर्ण व्यवस्था, कर्मकाण्डों की जटीलता तथा ब्रह्यणवाद स्त्रियों की दयनीय दशा और पतन का मुख्य कारण था। परन्तु इनके अलावा एक मुख्य कारण जो स्त्रियों के पतन के लिए जिम्मेंदार था, वह उनकी अशिक्षा थी। अशिक्षा के कारण स्त्रियों ने बिना किसी तर्क के इन पक्षपातपूर्ण धार्मिक विधानों एवं आडम्बरों को स्वीकार किया, जिसके कारण वे अपने अधिकारों से वंचित हो गई। पति तथा परिवार द्वारा दिए गए धार्मिक उपदेश ही उनकी एकमात्र शिक्षा थी। इस प्रकार वे इन रूढ़िवादी उपदेशों के प्रभाव के कारण स्त्री जाति अपना स्वयं का अस्तित्व भूलती गई तथा पति एवं परिवार की सेवा ही उसका एक मात्र धर्म निर्धारित हो गया। परिणामस्वरूप सामाजिक व्यवस्था एक पक्षीय हो गई।[17]

निष्कर्ष:-

उन्नीसवीं सदी के मध्य तक विश्व में समाज सुधारकों के लिए 'महिला प्रश्न' एक केन्द्रीय मुद्दा बन गया था। इसी समय भारत में खासतौर से बंगाल और महाराष्ट्रं में समाज सुधारकों ने स्त्रियों में फैली बुराइयों पर आवाज उठाना शुरू किया। इन दोनों राज्यों से ब्रितानियों का सम्बन्ध भारत के अन्य भागों की अपेक्षा पहले बना, जिस कारण यहाँ देश के अन्य भागों की अपेक्षा जागरूकता पहले आई। बंगाल में आई ईस्ट इण्डिया कम्पनी के जरिए लोगों ने ब्रितानियों के बारे में जाना। यह एक ऐसा समय था जब लोग पुरानी मुगलकालीन शासन व्यवस्था पतन हो रहा था और स्थानीय क्षत्रप अपना प्रभाव दिखा रहे थे। इस समय नये आन्दोलनों की पृष्ठभूमि तैयार हो रही थी। व्यापारिक रिश्ते बढ़ते–बढते प्रभुत्व और शासन में तब्दील हो गए तथा ब्रितानियों और भारतीयों के बीच पनपे मतभेद स्पष्ट दिखाई देने लगे।[18]

संदर्भ सूची : –

1 पूर्णमल,(2002) : 'दलित संघर्ष और सामाजिक न्याय', आविष्कार पब्लिशर्स, जयपुर, पृष्ठ 01

2 पूर्णमल (2002): 'दलित संघर्श और सामाजिक न्याय', आविष्कार पब्लिशर्स, जयपुर, पृष्ठ 01

3 गंगवार डॉ0 ममता, (2009): 'इतिहास के आइने में महिला सशक्तिकरण', सरस्वती प्रकाशन, कानपुर, पृष्ठ 103

4 चन्द्रावती लखनपाल, स्त्रियों की स्थिति, पृष्ठ 25

5 शर्मा प्रज्ञा, (2001): 'महिला विकास और सशक्तिकरण', आविष्कार पब्लिशर्स, जयपरु , पृष्ठ 5

6 शर्मा प्रज्ञा, (2001): 'महिला विकास और सशक्तिकरण', आविष्कार पब्लिशर्स, जयपरु , पृष्ठ 06

7 डॉ0 डी0एन0 मजूमदार, रेशिज एण्ड कल्चन इन इण्डिया, पृष्ठ 151

8 पन्निकर के0एम0, 1955): 'हिन्दू सोसायटी एट क्रास रोड्स', एशिया पब्लिशिंग हाउस, न्युयार्क, पृष्ठ 369 शर्मा प्रज्ञा, (001): 'महिला विकास और सशक्तिकरण', आविश्कार पब्लिशर्स, जयपुर, पृष्ठ 6–7

10 शर्मा प्रज्ञा, (2001): 'महिला विकास और सशक्तिकरण', आविष्कार पब्लिशर्स, जयपरु , पृष्ठ 07

11 ग्ंगवार, ममता, 2009 : 'इतिहास के आइने में महिला सशक्तिकरण', सरस्वती प्रकाशन, कानपुर, पृष्ठ 79

12 ग्ंगवार, ममता, (2009): 'इतिहास के आइने में महिला सशक्तिकरण', सरस्वती प्रकाशन, कानपुर, पृष्ठ 77

13 ग्ंगवार, ममता, (2009): 'इतिहास के आइने में महिला सशक्तिकरण', सरस्वती प्रकाशन, कानपुर, पृष्ठ 77–,79

14 ग्ंगवार, ममता,(2009): 'इतिहास के आइने में महिला सशक्तिकरण', सरस्वती प्रकाशन, कानपुर, पृष्ठ 98

15 शर्मा प्रज्ञा, 2001: 'महिला विकास और सशक्तिकरण', आविष्कार पब्लिशर्स, जयपरु , पष्ठ 09

16 नैमिशराय मोहनदास, (2013): 'भारतीय दलित आन्दोलन का इतिहास–3', राधाकृष्णन प्रकाशन नई दिल्ली, पृष्ठ 133

17 शर्मा प्रज्ञा, (2001): 'महिला विकास और सशक्तिकरण', आविष्कार पब्लिशर्स, जयपुर, पृष्ठ 07

18 रिचर्ड टक्कर, "रानाडे एंड रूटस ऑफ इंडियन नेशनलिज्म", पृष्ठ 13

प्रीती

नेट जे. आर. एफ

गॉव– गढ़ शाह जानपुर

सोनीपत

फोन नॅ0– 8570070001

Dialectics Resolved in *Thereafter*

2

Dr. Anu Rathee, Dr. Naresh Rathee

Abstract

Saniya's Tyanantar (2002) in Marathi is the most unnerving and perhaps the best of the anthology of *Five Novellas* by Women writers. This anthology contains the dramatic writings of five Indian women novelists, writing in five different regional languages, the anthology represents a dichotomous state of the affair by depicting what it is to be a womanand what she can be. These novellas represent the experiences of womenfrom different backgrounds and under different circumstances. All the phasesof a woman's life from childhood to death have been portrayed poignantly.Vaidehi's*Temple-Fair* depicts the vigour of childhood through a girl-child's lifein a large jointfamily. *Moonlight*written by B.M. Zuhara is about a Muslim girl and her lost childhood. *Defying Winter*written by Nabaneeta Dev Sen is a representationof the twilight phase in a woman's life in an old-age home. Mrinal Pande's*A Woman's Farewell Song* is the story of Savitri, a widowedmother-in-law who gets freedom from the bondage of family relationships onlyafter her death. *Thereafter* by Saniya deals with a distinctive phase of a middle-class woman named Radhika whose husband suddenly deserts her.

Saniya along with other women writers in recent Marathi Literature has raisedwomen's issues in a new perspective, To quote Judith Walkowitz, women are“makers as well as users of culture” (20), trying persistently to free themselves of the constraints that they internalize as consumers of culture. In *Thereafter*,Saniya's realistic portrayal of women's social reality and intense portrayal oftheirinner landscape illustrate the point. Sonia'snovella hasproved a milestone in her literary crusade, establishing her as the leading writernot only in Marathi Literature but also in the literature of translation. She createsa new environment where a woman is not 'other' but a complete human being inher own self. She demands equal reciprocity from her counterpart called'man'. Saniya attempts to bring a revolutionary change in the Indian-middle-classmentality by shattering the straightjacketed roles of women in the family. Themost striking feature of the novella is the complete transformation of familydynamics and personal relationships. There is no place for genderdiscrimination or exploitation in its traditional sense The outer reality issignificant only to the point, it shapes her inner self, thus shifting focus from theaction to introspection. Shetries to enrich the woman's awareness and herinner-self simultaneously. Saniya excels in creating a world where sentimentsand emotions flow consistently till the end of the story. She analyses how therigidity of middle-class Indian families and the institution of marriage have affected a woman's psyche.

Thereafter deals with a middle-class woman named Radhika, who isnearing her forties. Radhika's husband Lalit deserts her suddenly to find himself and hisplace in the vicious circle of society. Hysterical at first and then reflective,Radhika goes through this painful experience: "The entire world around waslying in wait like an enemy beyond the lines; ready to pounce, and attack"(246). After Lalit's departure, a distant relationship is formed between heradolescent son, Amol, and her. A frustrated Radhika comes into contact withtwo men named Dalvi and Partha, creating further complications in her life.She confronts her friends and relatives and ultimately realizes thehollowness of relations. Then, one day, her husband returns, and thenarrative takes aU-turn.All her trials and tribulations teach Radhika to imbue herlife with new meanings, and ultimatelyshe learns the meaningof her existence.Maya Pandit says, in her translator's note, the novella contains, "subtle tones and delicate syntactic rhythms that carry deep psychological tensions” (311).

The relationship between man and woman is alwaysintense criticism. In *A History of Civilizations*, Fernand Braudel, observes " that a civilization (or a culture) is the sum total of its cultural assets, that its geographical area is its cultural domain, that its history is cultural history, and that what one civilization transmits to another is a cultural legacy or a case of cultural borrowing, whether material or intellectual” (6) and assigns a name as 'cultural area' which contains a kernel as well as frontiers orborders. This Braudelian concept raises a cardinal question: what is awoman's position in this cultural space? Does she hold the kernel or is she on theborders? This dichotomy becomes more intense, particularly in the context ofconjugal relationships. In general, women have been depicted as living under the protection and subjugation of men, thus proving the Brraudelian concept of border. But the woman of the novella defying this ideological framework comes out with a completely new identity. Radhika does not subsist on the periphery or the border; she claims the Braudelian kernel. With the realisation of her self, the institution ofthe family seems to loosen its firm foundation based on marriage for her. But towards the end of the story, the same institution gains new poignancy and meaning of its own. The first person narration of the story from the perspective of Radhika her self makes it more honest and intensely revelatory.

The story starts when after easily rejecting the last sixteen years of married life, Radhika's husband one day announces, "I am leaving you, never to return"(227). He bids farewell to his wife proclaiming that he is leaving the home,furniture, and everything for her convenience. He makes some allowance forhis absence too. He seems to be a little concerned husband as he leaves hisbetter position. But his concern seems to becompensatory as a result of his guilty

conscience or his arrogance. He isleast bothered about the troubles that Radhika will have to face during hisabsence. Both husband and wife know the futility of further conversation.SoRadhika just asks 'why?, and Lalit ends by saying "Nothing. It's simplyimpossible to make you understand. Maybe after some years..." (228). Radhika who had been suffering the trauma of uncertainty till nowbreathes a sigh of relief because finally, the uncertaintywas over. This sigh of relief brings out one of the significant facts of a woman'slife where uncertainty prevails everywhere. But the certainty of Lalit'sdeparture creates a complete sense of unfamiliarity with her family, friends,and her ownself.

With the sudden departure of Lalit, Radhika's journey begins on two differentlevels: her inner journey and the outer one through social forces. A woman whohas been leading a cosy and normal upper-middle-class life has to confrontthe bitter reality of human existence: “How everybody is hidden in their owncell!" (229). Radhika, who has been enjoying the comforts and security ofthe middle class, suddenly finds: "How flimsy our belief in our security! Just a line,so faint and lightly drawn, but the whole world beyond it so alien!" (229).Unfortunately, it is her own son who first becomes alien to her with hispersistent enquiries about his father. The chasm between mother and songrows wide apart and Amol too departs making her aware that a grown-up child no longer needs his/her mother. Once againshe has no option but to accept: "One more junior Lalit separated from me ina civilized manner" (256). Now she is all alone to face the prying eyes ofsociety, including her family, friends and Lalit's office friends. Firstly, she opts foran escape route and separates herself from outer world by shutting the doorand surrendering the phone: "Alternatives always attract us. Not because theyare really dazzling, but because our subconscious desire for alternatives cancover up our lack of strength. They can provide escape routes" (287). Afterspending a few days in isolation she realises that alternatives seldom work.so, she finally opens the closed doors to confront the queries without answersand explanations.

Radhika realises how a woman is answerable for those offenses which shehas not committed. Ironically the family and society have set norms to be followed by a deserted wife. They expect herto follow the 'ritual' by reacting severely. The fact that Radhika doesn't make afuss brings a big disappointment for them. They come with full sympathies butprovoke her to protest her husband's decision, Radhika's mature acceptanceof Lalit's decision is something unexpected that is seen as a great crime on her part by society. Vijay, a good friend of Lalit with whom Radhika shares her grief never permitsher to accept this situation so calmly. After realising that it is she only who hasto shoulder responsibilities all alone, she bursts out, "So, you want me to cry,weep, beat my breast? Why? Why should I Proclaim to the whole world thatmy husband has left me? What is to be gained from it? (234). EvenRadhika's Aai (mother) is not ready to accept her cool reaction: "You write asif it's someone else you'reabout! Now, tell me what is wrong? Didn'tyou get along well? (240). Radhika's mother is unable to understand her traumaand starts to blame herhysterically, "You are quite capable of driving him out" (240). Its not that Aai is not concerned.She is very much worried about her daughter's survival andthe way she would raise her son. But she is scared to take responsibilitydaughter as her widowed younger daughter is also staying withher. Radhika's Aai is not brave enough to bear the burden of another daughter whosehusband is still alive. She is fully aware that people may be sympathetictoward a widow but not toward a deserted woman.Aai left Radhika only with a pathetic smile. In fact, everyone demands astrong justification from Radhika for her husband's departure. Without anytrial she is found guilty of being a failed wife who could not keep her husbandwithin four boundaries.

Radhika's real journey starts when two men named Dalvi and Parthacome in her life. Dalvi offers her a job but she is not ready to be the part of"A world of mundane routine, a world with a face devoid of all expressions!(249-50). The familiarity with Dalvi proves to be amomentary change but assoon as Partha comes in her life, the closed horizon begins to emerge. Surelyonce again she faces the trial to define her relationship with him. Notashamed of her relationship with Partha, she claims, "I am completelyindependent and free. Happy. Otherwise I think am worth a little more than Therethis I mean, life owes me much more. So I try to grab as much as I can."(270).Definitely life e owes her much more and with this newly gained independenceshe starts to look back onspect her married life with Lalit. Though she comes close to Partha, she is incapable to get rid of her ties with Lalit. She starts to dwindlebetween past and present. She honestly confesses, "At that time, I was young,immature, dreamy, simple, and a little silly. Thrown my arms around a manand just dissolved when he kissed me! (262). She was not mature enough toanalyze her space in the entity called 'home'!: "I was happy, contended, as ifbehind a curtain. It wasn't as if there was nothing to complain about; but Ihadn't truly understood my position" (263). Radhika finds it impossible to understand her husband and his needs. Lalit's complete failure to adapt to societal norms gave her a chance to understand the vacuum of their relationship. When angry and helpless Lalit gave vent to his frustration, shebecame his sole audience but soon she realized that she was just a site.Things worsen and "Making love also become mechanical; an occasionalritual" (272).

Once faced with the complete failure of her relation with Lalit, Radhika probesher relationship with Partha too. She genuinely admits that she came close toPartha for the need of money but it was more of the acute need "to feel thetouch of a live, living human being after ages" (261) that brings her to him.Radhika finds herself completely in love with Partha and accepts that “touchacquires a power of its own when it happens" (290). Her relationship withPartha seems to be a fulfilling experience of a 'home': "Home, home, home!Home came flooding back, with redoubled force" (280). But at the same time, Radhika is not blind in her relationship with Partha. As a mature woman she is fully aware of its consequences: "I

had nothing of the innocence of that age! On the contrary, I now knew all the paths the journey would lead to andbargained for suffering in advance" (274). Soon Partha's casual attitude startles Radhika utterly and the mesmerizing word 'love' begins to lose its charisma: "Ownership follows love. Possession. There are expectations. And when they are not fulfilled (theynever get fulfilled, that is a basic impossibility), you feelfrustrated. Despondent! Isolation, loneliness, suffering, agony, and the terriblepunishments that you inflict on yourself-all follow in its wake" (274). Sherealizes that this simple word 'love' that has been eulogized as something ofmutual dependency or sacrificial affair is completelyegoistic, ever demandingaffair: "But even in love, one thinks about oneself, one wants to escape; selfprotection becomes important. To say that love means sacrifice is an idioticmyth. Love means constant expectations; of comfort, protection; love neverreaches beyond oneself and ego (293).

Confronted withlove in its naked reality, Radhika finds both the men, Lalitand Partha, mysterious: "If I hadn't understood Lalit in sixteen years, how couldI understand Partha in a few months?" (289). She tries to weigh herrelationship with them just within the limits of 'authentic sleeping' and 'theacrobatics of making love for half an hour or so' with someone; "We formphysical relationships out of crass, professionalism or intense loneliness; thatprobably is the closest possible way in which a man and woman cometogether, without forming any binding ties! But can we possibly sleep justsleep the whole night with some one? Even without any felt need fortouching? That requires a trust, and inexorable trust? Have I ever held suchtrust in my hand? Have I ever felt it? With Partha?" (289). Without statinganything overtly, she probably recognizes the legitimacy and intensity of both relationships and finds the scale tilted towards Lalit. Fully aware of theauthenticity of her bond with both the men, Radhika starts to get the true meaning of life in its wholeness. She realizes, "Life is nothing but habits. We arescared of things, terrified even, before we get used to them. Because of ourimagination. But then things become habits and habits turn into routine. Thisthen is life" (294).

Unfortunately, for Radhika life has never been as simple; it has been full ofstartlingexperiences. As soon 'things become habits and habits turn intoroutine', all of a sudden something new happens in her life. So Lalit comesback as casually as he had left her. But by this time Radhika has matured enoughto assert, "The real place for both of them was certainly not this house. Both had to leave" (297). The physical intimacy with Partha and the emotional feelings for Lalit suddenly vanish and she gets an extraordinary, electrifying momentsof self-awareness. She felt as if in the moment of self-recognition, allstrangeness with her self melted away. This is for the first time that she claimswith full conviction, "I became aware of my own place for the first time in mylife, I was an average, ordinary woman, a nobody, really!" (296). Radhika'sjourney of self-realization seems to be near its destination but it can't becompleted all alone. Lalit, who has attained 'wisdom' with the lived experiences oflife at the cost of his counterpart comes out with absolutely new perceptions toresolve all the dialectics surrounding the couple till now. “One after another heunravels all the riddles of human existence. Just few changes of syllablesand the chasm between two entities is over; "I" is an absolutely ordinaryindividual who is not anybody" (299). How conveniently he resolves theenigma called love: "Living together is different from love. But then isn't thislove too? Does love mean, simply binding each other? Does it meanexpecting and restricting?"(299) All the human faiths, expectations andfrustrations become vain when he claims, "I've learnt one thing from life thatthere is nothing that inherently belongs to you...."(299) It is this conviction thatenables him to accept Radhika's relation with Partha only as a compromise.After analyzing the losses and gains in the process of searching the realmeaning of life, he convinces her: "What is more important in life? The end orthe means? For me it is the end" (301). Having reached a certain level ofmutual understanding, he assures her, "So then there is no question ofbehaving in set patterns. All of that is insignificant, far below the line(301). In front of this new Lalit Radhika surrenders and passionately urges,"Let's liveonce again” (301). Finally, Lalitspread his armsand Radhika embraces him with her revered faith, "I thought we were a unique couple inthe world (*atleast I felt so*); so strange and different! Such mutualunderstanding and yet such an obviously huge chasm between us!" (301).

Whilemaintaining the chasm, husband and wife mutually share a space with aunique sense of understanding. They achieve a different level of compromise despitebeing separate entities. The couple sets a new perspective to approach themarital relationship in the context of the present scenario. It is the bond of marriagethat dissolves all the differences of gender domination and subjugation andaccepts both with their individual identities. The narrative successfullyportrays a faint and distant possibility of a conjugal relationship in whichhusband and wife are complementary to each other in the real sense of the word: "There was an inner conviction. Also, the conviction that the other person wasalso completely convinced of this inner conviction in the other's heart, nowords or gestures were needed! Then there was a pause and extraordinarysilence, which lay beyond the words!" (307).

Work Cited:

Pandit, Uma, Translator's Note, “Thereafter” by Saniya. *Five Novellas.* New Delhi: OUP, 2008.

Ramnarayan, Gouri. "A Rich Tapestry of Women's Stories." *The Hindu Weekend Magazine*. 6 Nov. 2005. Web. 25 Aug 2015.

Saniya. “Thereafter.” *Five Novellas by Women Writers.* Trans & Introduction by Uma Chakrawarti. New Delhi: OUP, 2008. Print.

Singer, Peter. "Equality and its Implications." *Practical Ethics*. Cambridge University Press, 2011. 16-47.

Tendulkar, Vijay. *Kanyadaan,* trans. by Gowri Ramnarayan, OUP, 2002.

Walkowitz, Judith." Patrolling the Borders: Feminist Historiography and the New Historicism” *Radical History Review*, vol. 1989. issue 43, pp. 23-42.

Dr. Anu Rathee
Associate Professor
Chhotu Ram Arya College,
Sonipat

Dr. Naresh Rathee
Chhotu Ram Arya College,
Sonipat

3

स्वामी विवेकानन्द के सामाजिक विचार

राजकुमार सिवाच

सारांश

भारत भूमि पर अनेकों धर्मों का उदय, प्रचार व प्रसार हुआ है जोकि इसकी समृद्ध अध्यात्मवादी प्रवृत्ति को प्रस्तुत करता है । विश्व के सबसे प्राचीन देशों में शामिल भारत में जब भी पाप , आडम्बर , कुरीतिया आदि बढ़े हैं तो उनका नाश करने और समाज को नई दिशा देने के लिए अनेकों सन्तों , फकीरों , ऋषि–मुनियों आदि ने जन्म लिया और अपने तपोबल और अलौकिक ज्ञान से भारत भूमि पर प्रकाश के स्तम्भ को जीवित या प्रदीप्त रखा था । ऐसे सन्तों, महात्माओं में हम शंकराचार्य, गुरु नानक देव, सन्त कबीर, गुरु रविदास, सन्त शिव नारायण स्वामी, स्वामी राम कृष्ण परमहंस, स्वामी दयानंद सरस्वती तथा स्वामी विवेकानन्द को भी इसमें शामिल करते हैं । स्वामी विवेकानन्द का दर्जा भारत के अग्रणी पीढ़ी के सन्तों, समाज सुधारकों आदि में शामिल किया जाता है जिनके प्रति हमारी पिछली पीढ़ी,वर्तमान पीढ़ी और भावी पीढ़ी सदैव ऋणी रहेगी। भारतीय सामाजिक जड़ता और धार्मिक मूढ़ता को दूर करने का उन्होंने उस तरह से प्रयास किया जैसे कि किसी तालाब के सड़े हुए पानी को साफ करने के लिए किया जाता है। स्वामी विवेकानन्द का जीवन व चरित्र एक ऐसे सूर्य के समान था जिससे तिलक, गान्धी, विपिन चन्द्र पाल, लाला लाजपत राय, अरविन्द घोष, पं० नेहरु आदि ने न केवल प्रकाश लिया अपितु भारत के विकास, आध्यामिकतावाद के प्रसार को भी एक नवीन दिशा प्रदान की थी। भारतीय संस्कृति का वर्णन देश–विदेश में जितने स्पष्ट और तार्किक रुप में स्वामी विवेकानन्द जी ने रखा वैसा उनके पूर्व न किसी भारतीय ने किया था और न ही उनके बाद वर्तमान समय तक कोई भारतीय कर सका है। उन्होंने अध्यात्मवाद और जन–कल्याण का जो सन्देश दिया व युगों–युगों तक अपनी अमिट छाप छोड़ता रहेगा । स्वामी विवेकानन्द को भारत के बड़े समाज सुधारक होने का गौरव प्राप्त है । किसी भी व्यक्ति की महानता उसके समाज के प्रति किए जाने वाले उसके कार्यों से निर्धारित होती है कि उस व्यक्ति के द्वारा सामाजिक गतिविधियों को कितना समय प्रदान किया है । स्वामी जी के सामाजिक विचारों में उनके जाति प्रथा विरोधी विचारों को प्रमुखता प्राप्त है । उनका जन्म एक हिन्दू कायस्थ परिवार में हुआ था । बाल्यकाल से ही उन्होंने जाति व धर्म के आधार पर किए जाने वाले भेदभाव को अनुभव किया था कि समाज में निम्न वर्ग के लोगों के साथ किस तरह उच्च वर्ग के द्वारा भेदभावपूर्ण व्यवहार किया जाता है । प्रारम्भ में भारतीय समाज में निम्न वर्ग के लोगों आधार पर वर्ण व्यवस्था में बांटा गया था, परन्तु धीरे–धीरे यह वर्ण व्यवस्था जाति प्रथा में बदल गई। वह जाति प्रथा को समाप्त करके मानव की श्रेष्ठता और क्षमता में विश्वास रखते थे। वह इसे विष के सामान खतरनाक मानते थे जोकि देश और समाज दोनों के लिए घातक है । ब्राह्मणों द्वारा समाज के शाषण और धर्म के नाम पर कठोरता ने हमें जातियों में बांट दिया । अतः समाज को जोड़ने के लिए जाति प्रथा के बन्धनों को तोड़ना होगा । जाति प्रथा केवल एक सामाजिक नियम है जिसकी भूतकाल में चाहे उपयोगिता रही हो, परन्तु आधुनिक युग में वह भारतीय समाज को दूषित करने के अतिरिक्त कुछ नहीं करते हैं । जाति प्रथा के भेदभाव को दुर करने का मुख्य उपाए सभ्यता और शिक्षा का प्रसार है । निम्न वर्ग को शिक्षित करके हम न केवल उनका उद्धार करेंगे बल्कि यह सच्ची राष्ट्र सेवा भी होगी । स्वामी विवेकानन्द ने अपने विचारों में मूर्ति पूजा का समर्थन किया है। स्वामी जी प्रारम्भ में चाहे नास्तिक थे, परन्तु स्वामी राम कृष्ण परमहंस का शिष्य बनने के पश्चात् वह आस्तिक हो गए थे । वह तत्कालीन समाज सुधारकों द्वारा मूर्ति पूजा का विरोध किए जाने की आलोचना करते थे । स्वामी जी का विचार था कि हृदय में ईश्वर की एक स्पष्ट मूर्ति स्थापित होने पर ईश्वर की पूर्ण अराधना सम्भव है, इसके बिना नहीं। वह मूर्ति पूजा को आध्यात्मिक विकास की प्रक्रिया में एक प्रारम्भिक अवस्था मानते हैं। आध्यात्मिक विकास असत्य से सत्य की ओर जाना नहीं, बल्कि एक निम्नतर अथवा हीन सत्य से एक उच्चतर अथवा श्रेष्ठतर सत्य की ओर प्रगति करना है । स्वामी जी का विचार था कि, ''ईश्वर की अनुभूति के लिए प्रतिमा पूजा वैसी ही है जैसा कि शैशवावस्था तथा बाल्यावस्था, वृद्धावस्था की परिपक्व बुद्धि के लिए है।'' मुसलमानों द्वारा मूर्ति पूजा की आलोचना के सम्बन्ध में ढाका में एक सभा में विवेकानन्द जी ने कहा था कि,''भाइयो, यदि आप किसी बाह्य सहायता के बिना ही निराकार परमात्मा की उपासना करने में सक्षम हैं तो ऐसा ही करें परन्तु आप उन अन्य लोगों की निन्दा क्यों करतें हैं जोकि ऐसा नहीं करते।'' हमें ईश्वर की पूजा करनी चाहिए उसके लिए चाहे मूर्ति की आवश्यकता हो अथवा निराकार ईश्वर की। स्वामी विवेकानन्द प्रत्येक मनुष्य में ईश्वर का अंश मानते थे और इसी आधार पर धार्मिक भेदभाव का कड़ा विरोध करते थे। 19वीं सदी में भारत में धार्मिक भेदभाव का काफी प्रचलन था। हिन्दू धर्म को मानने वाले, मुस्लिमों, ईसाइयों आदि से किसी भी तरह का मेल–जोल नहीं रखते थे तथा उनके रीति–रिवाजों, त्योहारों आदि में शामिल होने से बचते थे। धर्म के आधार पर संस्कृति विभाजित थी। स्वामी जी ने इसे आडम्बरपूर्ण मानते हुए इसका विरोध किया। उनका मत था कि प्रत्येक धर्म के तीन भाग होते हैं–उसका दर्शन व आदर्श, उसका पुराण और उसके कर्मकांड। अन्तिम में दो बातों में भेदता हो सकती है परन्तु पहली बात में सभी धर्मों में मौलिक एकरूपता होती है।'' स्वामी विवेकानन्द ने वैश्विक धर्म का विचार विश्व के सम्मुख रखा था । वह ऐसे पहले व्यक्ति थे जिन्होंने पश्चिम की भौतिकवादी जनता के सम्मुख भारत के अध्याम्मवाद का महान् और प्राचीन आदर्श प्रस्तुत करके अपने देश के वास्तविक स्वरुप का चित्र दुनिया के सामने प्रस्तुत किया था। शिकागो में हुए धर्म सम्मेलन को सम्बोधित करते हुए स्वामी जी ने कहा कि,''मुझे इस बात का गर्व है कि मैं एक ऐसे धर्म का अनुयायी हूँ जिसने कि संसार को सहिष्णुता व वैश्विक स्वीकृति का सन्देश दिया। हिन्दू लोग न केवल वैश्विक सहिष्णुता में विश्वास करते हैं, अपितु समस्त धर्मों को पवित्र भी मानते

हैं।'' उन्होंने वैश्विक प्रेम, प्यार और सेवा की भावना में प्रवाहित होते हुए स्पष्ट शब्दों में कहा कि धर्म विध्वंसकारी नहीं निर्माणकारी है। स्वामी जी किसी भी रुप में साम्प्रदायिकता और धार्मिक विद्वेश के पक्ष में नहीं थे । स्वामी जी के अनुसार ,''हमें सतर्क रहकर चेष्टा करनी चाहिए कि धर्म से किसी संकीर्ण सम्प्रदाय की सृष्टि न हो पाए। इससे बचने के लिए हम अपने को एक असाम्प्रदायिक सम्प्रदाय बनाना चाहेंगे । सम्प्रदाय से जो लाभ होते हैं वह भी उसमें मिलेंगे और साथ ही सार्वभौमिक धर्म का उदार भाव भी उसमें होगा । स्वामी जी ने धर्म सम्मेलन में 10–11 भाषण दिए थे जिसमें उन्होंने विश्व धर्म के विचार पर बल दिया था जिसमें कि देश और काल की सीमाओं को तोड़कर सभी मनुष्य एकत्र हो सकते हैं। संसार के सभी धर्म परस्पर विरोधी नहीं हैं वह एक शाश्वत धर्म की विभिन्न अवस्थाएं मात्र हैं । अतः हमें सभी धर्मों को स्वीकार करना चाहिए, उसका आदर करना चाहिए । स्वामी विवेकानन्द जी ने शिक्षा को किसी भी राष्ट्र के निर्माण का आधार बताया है। वह तत्कालीन शिक्षा प्रणाली को उचित नहीं मानते थे क्योंकि यह मनुष्य के चरित्र का निर्माण नहीं करती थी जबकि शिक्षा का लक्ष्य जीवन व चरित्र का निर्माण होना चाहिए । स्वामी जी के विचारानुसार वर्तमान शिक्षा प्रणाली निशेधात्मक प्रवृति की है जहां विद्यार्थियों को अपनी सभ्यता और संस्कृति के बारे में कुछ नहीं सिखाया जाता है। शिक्षा का अर्थ केवल इतना ही नहीं होता कि अपने दिमाग में सभी तरह की जानकारी भरकर उसे वाटरलू का युद्ध क्षेत्र बना दिया जाए। स्वामी जी ने प्रचलित शिक्षा प्रणाली के स्थान पर गुरुकुल पद्धति पर आधारित शिक्षा प्रणाली का समर्थन किया जहां गुरु शिष्य परम्परा का पवित्रता, धैर्य, विनम्रता, विश्वास, आदर की भावना के साथ पालन किया जाता है।

वास्तव में शिक्षित होने का तात्पर्य केवल डिग्रियां हासिल करने से नहीं था बल्कि आत्मा के सकारात्मक परिवर्तन से भी था। कहने का अभिप्राय यह है कि यदि आप शिक्षित हैं तो आप में किसी भी बुराई के प्रति विरोध करने की क्षमता विकसित होनी चाहिए। आप ईर्श्या–द्वेश से ऊपर उठकर परोपकार के कार्यों में संलग्न हों। स्वामी जी ने जहां पश्चिमी संस्कृति और पश्चिम के अन्धानुकरण की कड़ी आलोचना की है वहीं उन्होंने पाश्चात्य शिक्षा का समर्थन भी किया है। स्वामी जी ने अपने अमेरिका और यूरोपीय प्रवास के दौरान यह अनुभव किया था कि पश्चिम की उन्नति का राज उनकी शिक्षा प्रणाली है जो कि वैज्ञानिकता व तर्कशीलता पर आधारित है। वैज्ञानिक शिक्षा प्रणाली ने वहां के समाज के लोगों की सोच बदल दी थी । यद्यपि यह शिक्षा आध्यात्मिकता से दूर रही है, परन्तु इसमें वैज्ञानिक दृष्टिकोण को अपनाने की स्वामी जी द्वारा प्रशंसा की गई थी । अमेरिका के प्रवास के दौरान स्वामी जी ने ऐसी व्यवस्था की थी कि पश्चिम के उनके शिष्य आध्यात्मिक शिक्षा ग्रहण करने के लिए भारत आ सके और भारत के उनके शिष्य वैज्ञानिक दृष्टिकोण को समझने के लिए अमेरिका व यूरोप आ सके ।स्वामी जी एक यथार्थवादी व्यक्तित्व थे । अतः उन्होंने अनुभव किया कि वेदान्त के साथ–साथ वैज्ञानिक शिक्षा भी लोगों को दी जानी चाहिए। उन्होंने अंग्रेजी भाषा को सम्पर्क साधने का एक श्रेष्ठ माध्यम मानते हुए उसे अपनाने व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर दिए जाने की वकालत भी की थी। स्वामी जी ने लोगों को अन्धविश्वास छोड़कर खुली आँखों से दुनिया को देखने के लिए कहा। उनका सन्देश था कि जीवन प्रगतिशील है और मानव को उसके अनुसार ही चलना चाहिए। उन्हें प्रत्येक बात को तर्क और विज्ञान के तराजू पर तोलकर अपनाना चाहिए। स्वामी जी भारत में विद्यमान अस्पृष्यता या छुआछूत की प्रथा के बड़े कट्टर विरोधी थे। वह समाज में सामाजिक समानता की स्थापना करना चाहते थे। अस्पृष्यता उनके इस मार्ग में एक बड़ी बाधा थी। सामाजिक व्यवस्था को संचालित करने वाली वर्ण व्यवस्था के नियम धीरे–धीरे इतने जटिल हो गए कि कथित उच्च वर्ग के लोग निम्न वर्ग के लोगों के साथ किसी भी तरह का तालमेल व सम्पर्क नहीं रखना चाहते थे और उनके स्पर्श को भी अपवित्र माना जाने लगा था सभी वर्ग यदि एक समान ऊपर उठ जाएंगे तो उनमें किसी भी तरह का भेद नहीं रह जाएगा। यद्यपि उनसे पूर्व भी अनेकों सन्तों व महात्माओं ने अस्पष्यता उन्मूलन सम्बन्धी विचार पेश किए परन्तु उन्हें अधिक सफलता नहीं मिली क्योंकि इन वर्गों के मध्य संस्कृति का प्रसार करने के लिए इन विद्वानों ने कुछ नहीं किया था। अतः संस्कृति का प्रसार करने से अस्पृष्यता का उन्मूलन किया जा सकता है।'' स्वामी जी ने अपने सामाजिक विचारों में नारी जाति की महता को काफी प्राथमिकता दी है। स्वामी जी का विचार था कि राष्ट्र में स्त्री जाति का सम्मान उचित एवं आवश्यक है तभी राष्ट्र उन्नति के मार्ग पर जा सकता है। नारी को घर की चार दीवारी में कैद करके आप राष्ट्र के विकास में अपनी आधी क्षमताओं का ही प्रयोग कर रहे होते हैं । जिन देशों में स्त्री जाति का सम्मान नहीं होता वह राष्ट्र तीव्र गति से विकास की सीढ़ियां नहीं चढ़ पाता है। तरह–तरह के सामाजिक प्रतिबन्ध लगाकर नारी को केवल मूर्ति बना देना अथवा सजावट का सामान बना देना उचित नहीं हैं। उनका विश्वास था कि नारियों को शिक्षित करके हम पुरुषों के समान ही राष्ट्र निर्माण में उनकी क्षमताओं का प्रयोग करके राष्ट्र का विकास कर सकते हैं। वह स्त्री जाति की शिक्षा पर काफी बल देते हैं। शिक्षित नारी न केवल अपने परिवार का अपितु आने वाली नसलों का भी उद्धार कर सकती है। स्वामी जी ने अंग्रेजों द्वारा शक्ति की प्रतीक मां काली के रुप का उपहास उड़ाने की कड़ी आलोचना की है, उनका विचार था कि ईसाइयों को यह समझ लेना चाहिए कि मां काली सत्य और धर्म की प्रतीक है। ईसाई धर्म में भी यीशु मसीह की माता 'मेरी' शक्ति के रूप में ही पूजनीय है । स्वामी जी ने इसके साथ–साथ बहु–विवाह प्रथा , बाल विवाह, दहेज प्रथा, पर्दा प्रथा का जहां कड़ा विरोध किया वहां उन्होंने विधवाओं के पुनर्विवाह को उतम माना था और उसका समर्थन किया था। स्वामी जी ने स्त्रियों व बालिकाओं के उद्धार हेतु बाल विवाह का कड़ा विरोध किया था। उनका मत था कि हमें ऐसी प्रथा पर तुरन्त रोक लगा देनी चाहिए जो कि अबोध बालिकाओं को पतन के गर्त की ओर धकेलती है। बाल विवाह के कारण बालिकाओं का शारीरिक और मानसिक विकास नहीं हो पाता है । छोटी आयु में ही उनके मां बनने से उन्हें दुर्बल और रोगी सन्तान उत्पन्न होती है जो कि कमजोर राष्ट्र का कारण बनती है। 19वीं सदी में विधवाओं की दयनीय स्थिति का मूल कारण उन्होंने बाल विवाह को माना था अतः यदि बाल विवाह पर रोक लग जाए तो विधवाओं की संख्या में भी काफी कमी आ सकती है । वह बाल विवाह को देश में भिखारियों की फौज बढ़ाने वाली और स्त्रियों की दुर्बल स्थिति के लिए सहायक मानते थे । स्वामी जी उन

विचारकों से सहमत नहीं थे जो यह मानते थे कि सामाजिक प्रगति के साधन के रूप में धर्म की उपयोगिता समाप्त हो चुकी है । स्वामी जी के दर्शन का महत्वपूर्ण स्त्रोत वैदिक परम्परा एवं वेदान्त ही थे । वह वेदों के पक्के भक्त और वेदानुगामी थे । स्वामी जी से पूर्व के सन्तों एवं महात्माओं ने केवल त्याग का ही महिमा मंडन किया था। सेवा के विषय में कोई अधिक बल नहीं दिया था, परन्तु स्वामी जी ने त्याग के साथ–साथ सेवा पर भी काफी बल दिया। विवेकानन्द जी ने अपने बारानगर के मठ की स्थापना के पश्चात् समस्त भारत का भ्रमण किया और भारतीयों के दुःखों, दरिद्रता आदि को काफी नजदीक से देखा था । उन्होंने इस विषय में स्वयं से प्रश्न किया कि हम संन्यासियों ने ईश्वर के प्राणियों अर्थात् जन साधारण के लिए क्या किया है ? वह अपने प्रश्न का उतर स्वयं देते हैं कि धर्म का प्रथम उद्देश्य दरिद्र, दीन–दुःखी की सेवा करना और उसके कष्टों का निवारण करना होता है । उन्होंने अपने अनुयायियों को वेदों के अध्ययन और योग की साधना को छोड़कर ऐसे लोगों की सेवा में लग जाना चाहिए जो कि असहाय हैं, शोषित हैं, दरिद्र हैं। उन्हें अपना तन–मन ऐसे लोगों की सेवा में अर्पित कर देना चाहिए । रामकृश्ण मिशन की स्थापना के पीछे उनका मुख्य उद्देश्य ऐसे वंचित लोगों की सेवा करना था । स्वामी जी का विचार था कि ऐसे लोगों की सेवा से हम ईश्वर की प्राप्ति कर सकते हैं । स्वामी जी अपने देशवासियों को जिस तरह की शक्ति प्रदान करना चाहते थे वह केवल शारीरिक शक्ति ही नहीं थी, अपितु वह यथार्थ चारित्रिक शक्ति थी जोकि पवित्रता, निर्भीकता और त्याग से उत्पन्न होती है । स्वामी जी ऐसी शिक्षा प्रणाली का समर्थन करते हैं जोकि मानव के चरित्र निर्माण पर बल देती हो । शिक्षा का लक्ष्य जीवन के निर्माण के साथ–साथ चरित्र के निर्माण का भी होना चाहिए । इसीलिए उन्होंने चरित्र निर्माण के लिए शिक्षा पर अधिक बल दिया था। उनका विचार था कि सच्ची शिक्षा द्वारा ही एक राष्ट्र अपने वास्तविक अर्थों में विकास कर सकता है । समुचित शिक्षा के माध्यम से आत्मा में जब बल पैदा होता है तो उसके समक्ष किसी प्रकार अत्याचार या दबाव नहीं टिक सकता है। उन्होंने चरित्र निर्माण के लिए पश्चिमी शिक्षा प्रणाली के स्थान पर गुरुकुल पद्धति पर आधारित शिक्षा प्रणाली को उपयोगी माना था जो कि धार्मिक सहिष्णुता के साथ–साथ चरित्र निर्माण पर भी बल देती है। स्वामी जी ने अपने भाषणों व लेखों में अन्तर्राष्ट्रीय मानवतावाद पर काफी बल दिया था । स्वामी जी ने शिकागो के धर्म सम्मेलन में जब वहां उपस्थित जन समूह को बहनों व भाइयों कहकर सम्बोधित किया था तो उसके पीछे उनका उद्देश्य अन्तर्राष्ट्रीय मानवता का ही था। उन्होंने धर्म अथवा आध्यात्मिकता का मूल तत्व प्रेम, सेवा और मानववाद में ही पाया था । यद्यपि स्वामी जी ने राष्ट्रवाद सम्बन्धी अपने विचार प्रस्तुत किए थे परन्तु जब उन्होंने महसूस किया कि राष्ट्रवाद विचार मानव जाति के लिए खतरा है तो उन्होंने अन्तर्राष्ट्रीयवाद का भी समर्थन किया । वह सम्पूर्ण मानव जाति की सेवा के लिए भारत को महान् तथा शक्तिशाली बनाना चाहते थे । उन्होंने घोषणा की कि सम्पूर्ण विश्व को सत्य और न्याय के ऊपर आधारित किए बिना कोई प्रगति नहीं हो सकती । उन्होंने आगे लिखा कि शिकागो सम्मेलन में रवाना होने से पूर्व मैं ब्रिटेन से उतनी ही घृणा करता था जितनी एक सच्चा देशभक्त करता हैं । परन्तु जैसे ही वह अंग्रेजों के संम्पर्क में आए तो उनके विचार बदल गए । यह सभी उनके मानवतावादी विचारों के कारण हि सम्भव हो सका । उन्होंने सभी मानवों को एक जाति बन्धन तोड़कर एकता के सुत्र में बन्धने का आह्वान किया था । स्वामी जी प्रारम्भ में एक आम बंगाली की तरह ब्रह्मसमाजी थे और उनकी राजा राजा राम मोहन राय के विचारों में गहरी आस्था थी परन्तु कुछ समय पश्चात् स्वामी जी ने अनुभव किया कि ब्रह्म समाज हिन्दुओं के महान् ऐतिहासिक धर्म का छोटा–सा अपर्याप्त प्रतिनिधि था । ब्रह्म समाज विभिन्न धर्मों के तत्वों का चयन मात्र था , उसका चरित्र हिन्दू की अपेक्षा ईसाई अधिक था। साथ ही साथ ब्रह्म समाज का बुद्धिवाद अत्यधिक निश्फल था। उन्होंने ब्रह्म समाज द्वारा प्रतिपादित मूर्ति पूजा के विरोध का खण्डन किया और ईश्वर की किसी भी रूप में उपासना को व्यक्ति का निजी मामला माना था । राम मोहन राय द्वारा वेदों व उपनिशदों की आलोचना, पश्चिमी संस्कृति के स्तुतिगान का स्वामी जी ने जोरदार शब्दों में खण्डन किया था । स्वामी जी ने वेदान्त सोसायटी के माध्यम से वेदों के अध्ययन व प्रचार–प्रसार पर अत्यधिक बल दिया था । उपरोक्त वर्णित स्वामी जी के सामाजिक विचारों का अध्ययन करने के पश्चात् हम इस निश्कर्श पर पहुंचते हैं कि निर्विवाद रूप में विवेकानन्द 19वीं सदी के अन्त और 20वीं सदी के आरम्भ में प्रकट भारतीय पुनर्जागरण के सबसे चमकदार सितारे थे । पुनर्जागरण के प्रभाव में सोया हुआ विशाल भारत जाग खड़ा हो गया, परन्तु दुर्भाग्य वश कुछ कदम सही बढ़ाने के बाद वह गलत दिशा में मुड़ गया । पतन के इस दौर में एक ओर विवेकानन्द की बेहद आवश्यकता है जो भटके हुए भारतीयों को सही मार्ग दिखाए ।

निष्कर्ष:

स्वामी जी ने जहां जाति प्रथा का कड़ा विरोध किया और मूर्ति पूजा का समर्थन किया वहीं उन्होंने शिक्षा के महत्व को समझते हुए शिक्षा के प्रचार–प्रसार पर बल दिया था । वह जाति प्रथा के जहां घोर विरोधी थे वहीं अस्पृश्यता उन्मूलन को उन्होंने अपने विचारों में प्रमुखता दी थी । उन्होंने नारी शक्ति की महता को पहचानते हुए उसके उत्थान पर बल दिया । उन्होंने समाज में नारी की दुर्दशा पर खेद भी प्रकट किया था । उन्होंने अन्तर्राष्ट्रीय मानवतावाद का जहां प्रचार किया वहीं वेदों की महता का वर्णन किया था । उनके यही विचार उन्हें एक सच्चा सुधारक मानते हैं।

सन्दर्भ सूचि :

1. विवेकानन्द की आत्मकथा लेखक : शंकर प्रभात पेपरबैक्स जनवरी 2020
2. Swami Vivekananda The Complete Biography Sri. Ananda January 2022
3. मध्यकालीन भारत लेखकः सतीश चन्द्र जवाहर पब्लिशर्स एवं डिस्ट्रीब्यूटरर्स नई दिल्ली
4. सक्षिप्त इतिहास महेश कुमार वर्णमाल Cosmos Publication – Delhi
5. भारत का प्राचीन इतिहास राम शरण शर्मा Oxford University Press New Delhi

4 मन्नू भंडारी की कहानियों में नारी का द्वंद्वात्मक रूप

अनीता रानी

सारांश

हिन्दी साहित्य की प्रत्येक विधा में नारी के किसी न किसी रूप को चित्रित किया गया है। विधा चाहे कहानी, उपन्सास, नाटक, कविता, गीत, ग़ज़ल या अन्य कोई भी क्यों न रही हो। कहानिकारों की बात करें तो हम देखते है कि प्रेमचन्द, यशपाल, जनैन्द्र की भांति मन्नू भंडारी भी श्रेश्ठ कहानी कार है। कहानी चाहे घटना प्रधान हो या चित्र प्रधान या मनुष्य मन को लेकर लिखी जाती है। मानव मन अनेक विषमताओं जटिलताओं आदि से जुड़ा हुआ होता है। वह एक क्रियाशील प्राणी होता है जो अपने अंदर तर्क वितर्क के माध्यम से भीतर ही भीतर आंदोलित होता रहता है। मन्नू भंडारी जी की कहानियों में पर्याय देखने में आता है कि उनकी नारी पात्र एक अलग ही प्रकार के द्वंद्व की परिस्थितियों से जूझते हैं । आज का व्यक्ति कुछ मूल्यों को अपने लिए निर्धारित कर चुका है। वह पुराने संस्कारों को माने या न माने के मध्य द्वन्द्वरत नहीं रहता है। उन पुराने संस्कारों को कहीं बहुत पीछे छोड़ आया है; अब समस्या यह है कि वह नये से जुड़ कैसे ! यही कुछ प्रश्न आज की नारी के सामने भी हैं जिनको मन्नू भण्डारी ने अपनी कहानियों के माध्यम से पाठक के समक्ष रखा है। मन्नू भंडारी की कहानियों में नारी के द्वंद्वात्मक रूप पर प्रकाश डालने से पहले द्वंद्वके अर्थ, परिभाषा एवं स्वरूप पर प्रकाश डाल लेते है।

द्वन्द्वका शाब्दिक अर्थ –

"हिन्दी विश्वकोष" में द्वन्द्वका शाब्दिक अर्थ कलह, झगड़ा, बखेड़ा, दो परस्पर– विरुद्ध वस्तुओं का जोड़ा जैसे : शीत–उष्ण, सुख–दुःख, भला–बुरा इत्यादि दिया हुआ है। इसी प्रकार 'बृहत् हिन्दी कोष" में दो व्यक्तियों का परस्पर युद्ध, कलह, संघर्ष, दो व्यक्तियों का परस्पर जोड़ा, स्त्री–पुरुष, नर–मादा का जोड़ा, दो परस्पर–विरुद्ध वस्तुओं या भावों का जोड़ा, जैसे – शोक–मोह, शीत–उष्ण, संदेह, अनिश्चय, दुर्ग, रहस्य आदि अर्थ दिये 'द्वन्द्व' शब्द का अंग्रेजी पर्यायवाची 'Conflict है । Conflict का अर्थ 'Dictionary and Encyclopaedia" में 'to dash togehter, to clash, to be at odds with, to be inconsistent with, to differ, a violent clashing, a trial of strength, strong disagreement' आदि दिये हुए हैं।

उपरोक्त शब्दकोश के अर्थ से प्रतीत होता है कि किन्हीं दो तत्वों में (चाहे वे मानव हों या मानवीय भावनाएं हों, या कोई पशु–पक्षी या जड़ पदार्थ हों) गुत्थमगुत्था, झगड़े, कलह, संघर्ष, दुविधा, विरोधाभास आदि को द्वन्द्वकहते हैं। मनोविज्ञान में भी विरोधी इच्छाओं, संवेदनाओं, चेतन–अचेतन के पारस्परिक संघर्ष को द्वन्द्वमाना गया है। इन अर्थो के आधार पर द्वन्द्व के पर्यायवाची शब्द भी स्पष्ट हो जाते हैं जैसे संघर्ष, कलह, संकल्प–विकल्प, असमंजस, ऊहापोह, छटपटाहट, दुविधा आदि। अगर द्वन्द्वकी सूक्ष्म व्याख्या की जाए तो यह स्पष्ट होगा कि जहाँ पीड़ा, व्यथा, संत्रास, कुण्ठा आदि अनुभूतियाँ होती हैं वहाँ जब तक वे केवल अपने मौलिक रूप में एकाकी हैं तब तक केवल भावना मात्र रहती है, परन्तु जहाँ पर इन स्थितियों से निष्कासन पाने की इच्छा है वहाँ यह स्पष्ट है कि इन भावनाओं के साथ ही साथ वे विरोधी स्थितियाँ भी होंगी जिनमें जाने की इच्छा उत्पन्न हुई है। अर्थात् जैसे पीड़ा से आनन्द की स्थिति में जाने की मनोवृत्ति या इच्छा है तो ऐसी परिस्थिति में दो विरोधी प्रवृत्तियाँ, मनोवृत्तियाँ या इच्छाएँ एक ही समय में एक स्थल पर उत्पन्न होती हैं जो द्वन्द्वकी जन्मदात्री बन जाती हैं। यह भी कहना असंगत न होगा कि पीड़ा, व्यथा, संत्रास, कुण्ठा, भय आदि भावनाएँ सदैव विरोधी भावनाओं के साथ ही आती हैं क्योंकि आनन्द, सुख, संतोष का लाभ पाना व्यक्ति का स्वाभाविक गुण है।

प्रायः देखा गया है कि मनुष्य का द्वन्द्व ही कहानी की आत्मा बन जाता है। जो द्वन्द्वपान के मन में उद्वेलित रहता है; वही कहानी का अपना हो जाता है। बिना द्वन्द्व के कहानी में चेतना जाग्रत नहीं हो पाती है। यह चेतना ही वह आत्मा है जो कहानी को कहानी बनाती है अर्थात् कहानी की रचना में द्वन्द्व ही उसकी आत्मा है जो उसे सजीव बनाता है। कहानी में कथा भी हो, पात्र भी हों, वातावरण भी हो, कथानक भी हो, लिखी भी मनमोहक भाषा में गयी हो, परन्तु यदि द्वन्द्व का समावेश न हो तो कहानी पाठक को न तो आकर्षित कर सकेगी और न ही सन्तुष्ट । पाठक अपनी प्रतिच्छाया को कहानी में पढ़कर सन्तुष्टि का अनुभव करता है तथा उसे और भी सूक्ष्मता से जानने और पहचानने के लिए जिज्ञासु रहता है। अतः यह कहना असंगत न होगा कि बिना द्वन्द्व के न तो कथानक का निर्माण हो सकता है, न ही चरित्र बन पाता है। द्वन्द्व के अभाव में कहानी अपने समस्त तत्त्वों के उपस्थित होते हुए भी कुछ ऐसी प्रतीत होगी जैसे प्राणहीन शरीर ।

मन्नू भण्डारी की कहानियों में द्वन्द्व का रूप अनेक जगह मिलता है जो मौन रहकर केवल एक दर्शक की भाँति बन जाता है। ऐसा पात्र बाह्य चित्रों से अपने अन्तर की तुलना नहीं करता है। उसका मौन रहकर नित्य के जीवन को जीना द्वन्द्व को और भी अधिक गहनता प्रदान कराता है जैसे 'एक प्लेट सैलाब' कहानी में मन्नू भण्डारी ने एक नारी पात्र के मुख से कहलवाया–

'' मैं तो किसी भी चीज को बहुत गंभीरता से लेने में विश्वास नहीं करती। ये दिन तो हँसने–खेलने के हैं, हर चीज को हल्के–फुल्के में ढंग से लेने के। गंभीरता तो बुढापे की निशानी है। बूढे लोग मच्छरों और मौसम को भी गंभीरता से लेते है। मैं बूढ़ी होना नहीं चाहती।''

मन्नू भंडारी की कहानियों में पुरानी समस्याओं पर निर्मित द्वन्द्वको नये दृष्टिकोण से देखा गया है । आज वह पत्नी नहीं है, पुत्री नहीं है, बहन नहीं है, माँ भी नहीं है; वह केवल एक नारी है और नारी ही बनी रहना चाहती है । मन्नू भण्डारी की नारी 'बाँहों के घेरे' से निकलकर 'कमरे,

कमरा रूढ़ियाँ – नारी नारी – यौन अस्तित्व – विघटन और कमरे' में चक्कर काटती है और फिर उस 'ऊँचाई' तक पहुँच जाती है जहाँ प्रेम और सेक्स की तृप्ति दो विभिन्न पुरुषों से प्राप्त करती है। इतनी स्वतंत्र प्रकृति की होते हुए भी वह कहीं भीतर से आक्रान्त रहती है, जो उसके द्वन्द्व का कारण बन जाता है । इनकी कहानी की व्याख्या घटनाओं के संकलन में ही निहित होती है। विषम परिस्थितियों, संकटपूर्ण घटनाओं में अपने साहस, पराक्रम और वीरता से पानों की विजय ही कहानी की रूपरेखा बन जाती है। पात्रों के पौरुष, धैर्य और साहस का प्रदर्शन करने के हेतु ही घटनाओं को संगृहीत किया जाता है। 'त्रिशंकु' कहानी में इसका ज्वलंत उदाहरण देखा जा सकता है। जैसे–

''शाम को मम्मी–पापा के मित्र आते तो इन लोगों में से कोई बैठा ही होता। शुरू में जिन लोगों ने 'मुक्त रहो और मुक्त रखो' की बड़ी प्रशंसा की थी, उन्होंने मुक्त रहने का जो रूप देखा तो उनकी आँखों में भी कुछ अजीब–सी शंकाएँ तैरने लगीं। मम्मी की एकाध मित्र ने दबी जबान में कहा भी–'तनु तो बड़ी फास्ट चल रही है।' मम्मी का अपना सारा उत्साह मन्द पड़ गया था और लीक से हटकर कुछ करने की थ्रिल पूरी तरह झड़ चुकी थी। अब तो उन्हें इस नंगी सच्चाई को झेलना था कि उनकी निहायत ही कच्ची और नाजुक उम्र की लड़की तीन–चार लड़कों के बीच घिरी रहती है। और मम्मी की स्थिति यह थी कि वे न इस स्थिति को पूरी तरह स्वीकारकर पा रही थीं। और न ही अपने द्वारा बड़े जोश में शुरू किए इस सिलसिले को नकार पा रही थीं।''

इस उद्धरण से स्पष्ट है कि द्वन्द्वया संघर्ष की सत्ता सामान्यतः कहानियों के नारी पात्र में देखा जा सकता है। वर्तमान में ऐसे कथानक भी हैं जो एक सीधी रेखा ही बनाते हैं या जिनकी एक ही दिशा में गति है। Conflict या द्वन्द्वया संघर्ष के लिए दो पक्ष होने चाहिए और दोनों प्रायः संतुलित होने चाहिए । मन्नू भंडारी कि कोई भी 'कहानी' द्वन्द्व या संघर्ष के बिना नहीं है। द्वन्द्वसमान शक्ति वाले दो पक्षों में होता है, ऐसी धारणा भी व्यक्त की गयी है , पर यह समान शक्ति कैसे जानी जायेगी ?यह मन्नू भंडारी से ज्यादा कौन समझ सकता है। वर्तमान कहानियों के कथानक में द्वन्द्वके तीन आयाम देखे जाते है। मनुष्य का प्रकृति से संघर्ष या द्वन्द्व, मनुष्य का अन्य मनुष्य से संघर्ष या द्वन्द्व, मनुष्य का स्वयं अपने से संघर्ष या द्वन्द्वअब इन तीनों में संघर्ष के दोनों पक्षों को मन्नू भंडारी की लेखनी में देखा जा सकता है। इस द्वन्द्व में शारीरिक शक्ति, बुद्धिबल, साधनबल आदि कितने ही बल काम में आते हैं, जो प्रायः आजकल की कहानियों में देखा जाता है। जैसे द्वन्द्व की स्थिति का अवलोकन ' अभिनेता' कहानी में होता दिखाई पड़ रहा है।

'' रंजना के लिए यह दूसरा धक्का था। उसे रह–रहकर दिलीप की प्यार–भरी बातें याद आ रही थीं, और वह किसी प्रकार अपनी आँखों पर विश्वास नहीं कर पा रही थी, पर वे पत्र थे कि कोंच–कोंचकर उसे उस भयंकर वास्तविकता का परिचय दे रहे थे। रंजना ने ड्राअर को और टटोलना शुरू किया, तो एक सफ़ेद काग़ज़ उसके हाथ पड़ा। वह पढ़ने लगी : प्रिय बेटा दिलीप, यह पत्र मेरी अन्तिम चेतावनी है।''

कभी–कभी मन्नू भंडारी की कहानी में द्वन्द्व की एक महत्त्वपूर्ण स्थिति बन जाती है। द्वन्द्व का कहानी के सभी तत्त्वों से घनिष्ठ सम्बन्ध है तथापि उसका अपना अलग स्थान भी है जो आज के साहित्य–कार स्वीकार करते हैं । वस्तुतः सीधे राह चलते व्यक्ति की कहानी कहानी नहीं हो पाती है; अन्यथा वह राह चलते या तो गिर पड़े, या किसी दुर्घटना का शिकार हो जाये या कुछ ऐसा अप्रत्याशित उसके साथ घटित हो या वह साधारण से हटकर कुछ क्रियाएँ करने लगे, तभी लोगों का ध्यान उसकी ओर आकर्षित होता है। इसी प्रकार कहानी भी जीवन की साधारण घटनाओं को ही केवल व्यक्त करती हो तो वह पाठक को सन्तुष्ट नहीं कर पाती । व्यक्ति के जीवन के दो विरोधी रूप– शान्त और अशान्त, सुख और दुःख, साधारण और असाधारण आदि होते हैं। कहानी इन्हीं विरोधी तत्त्वों में से अपना कथानक चुन लेती है। कथानक का ऊहापोह, उसकी गुत्थमगुत्था, कुछ असाधारण घटनाओं का तारतम्य ही कथानक को आकर्षक और प्रभावशाली बना देता है । चरित्र प्रधान कहानियों में जीवन में प्रतिदिन मिलने वाले व्यक्ति भी अन्तर में कितने भिन्न होते हैं, यही निरूपित रहता है। उनकी विभिन्नता उनके विचार तथा भावनाएँ ही होती हैं। एक ही भाव को भिन्न व्यक्ति भिन्न दृष्टिकोण से देखता है। उनके दृष्टिकोण की विभिन्नता का कारण क्या है ?इसी का उत्तर चरित्र का द्वन्द्व होता है, क्योंकि यह विभिन्नता किसी द्वन्द्वात्मक धरातल के कारण ही होती है। जैसे ' तीसरा आदमी' कहानी का उदाहरण दृश्ट्व्य है –

'' घर लौटना ठीक होगा?दोनों यही तो समझेंगे कि मुझे उन लोगों पर सन्देह है। अगर ऐसी कोई बात नहीं हुई तो कितना ओछा समझेंगे वे लोग?आत्मग्लानि से उसका मन भर आया । पाँच साल के विवाहित जीवन में उसे ऐसी कोई बात याद नहीं जो शकुन के प्रति उसे शंकालु बना दे। पिछले दो साल से वह खिन्न अवश्य रहती, कुछ दूर–दूर भी रहती है, उसका कारण तो वह स्वयं जानता है।''

सांसारिक परिस्थितियों का व्यक्ति के मन पर प्रभाव, इस प्रभाव में व्यक्ति की प्रकृति का योगदान और पुनः उसकी प्रतिक्रियाएँ यह सब मिलकर एक ऐसा घेरा है जिसके अन्दर ही कहानी का निर्माण होता है। इसी घेरे के संघर्ष तथा समस्याएँ कहानीकार की लेखनी का स्पर्श पाकर कहानी बन जाती हैं। इन समस्याओं के विभिन्न समय और परिस्थितियों में भिन्न–भिन्न प्रकार के रूप हो सकते हैं और इनसे जनित द्वन्द्वों के विभिन्न प्रकारों को मन्नू भंडारी की कहानियों में देखा गया है। कहानी व्यक्ति की होती है। व्यक्ति और समाज का अटूट सम्बन्ध है अतः जिस व्यक्ति की कहानी लिखी जाती है वह सामाजिक व्यक्ति होता है। पूर्व प्रेमचन्द–युग में जब चमत्कारिक, तिलस्मी और रहस्यात्मक कहानियाँ लिखी जाती थीं तब भी वे इसी सामाजिक प्राणी की कहानियाँ थीं और उत्तर–प्रेमचन्द–युग में जब व्यक्ति एकाकी, अजनबी और अपनी ही कुण्ठाओं में छिप गया, जब उसे संसार से न कुछ लेना था, न ही संसार को कुछ देना था, तब भी वह समाज से विलग न हो सका और

यही व्यक्ति कहानी का चरित्र बना । मन्नू भंडारी की कहानियों में सामाजिक द्वन्द्वका स्वरूप अत्यन्त विशद है जिसके अन्तर्गत अनेक प्रकार के द्वन्द्वसमाहित हो जाते हैं। सामाजिक द्वन्द्व का एक स्वरूप मन्नू भंडारीं की कहानियों में चित्रित किया गया है । उस काल की कहानियाँ उदाहरण स्वरूप हैं जहाँ यह अवगत कराया गया है कि सामाजिक मान्यताओं का पालन न करने से उनकी आत्मा उनको किस प्रकार धिक्कारती है और वे पात्र किस प्रकार अपने ही निर्माण किये हुए द्वन्द्व में ग्रसित रहते हैं। कहानी में यह भी दर्शाया जाता है कि इस सब का परिणाम क्या होता है। समाज कोई ईश्वर जोशी, यशपाल, जैनेन्द्र आदि की कहानियों में यही क्रान्ति है, जिसको आगे के कहानीकारों ने एक चुनौती के रूप में स्वीकार किया। इन कहानीकारों की कृतियों में धर्म, नैतिकताओं, नियमों का अर्थ ही परिवर्तित हो गया है– ईश्वर प्रायः कुछ नहीं है, एक भुलावा है। फिर भी इतना सब कुछ दृढ़ संकल्प से मान लेने के उपरान्त भी कहीं युगों से जड़ जमाये संस्कारों को व्यक्ति हृदय से निकालकर फेंक न सका। वह अब भी कहीं छिपे–छिपे ईश्वर से डरता है, झूठ और रिश्वत को पाप समझता है। उसका बाह्य स्वरूप तो चुनौती को स्वीकार करता है परन्तु अन्दर से कहीं वह बहुत असहाय, निराश्रित और अकेला है। ये दोहरी मान्यताएँ ही उसका द्वन्द्वहै। जैसे ' मैं हार गई' कहानी में एक पात्र कहता है–

''मैं जली–भुनी जो गाड़ी में बैठी तो सच मानिए, सारे रास्ते यही सोचती रही कि किस प्रकार इन कवि महाशय को करारा–सा जवाब दूँ। मेरे पापाजी के राज में ही नेता की ऐसी छीछालेदर भी कोई चुपचाप सह लेने की बात थी भला! चाहती तो यही थी कि कविता में ही उनको जवाब दूँ, पर इस ओर कभी क़दम नहीं उठाया था। सो निश्चय किया कि कविता नहीं तो कहानी ही सही। अपनी कहानी में मैंने एक ऐसे सर्वगुणसम्पन्न नेता का निर्माण करने की योजना बनाई जिससे पढ़कर कवि महाशय को अपनी हार माननी ही पड़े । भरी सभा में वह जो नहला मार गये थे, उस पर मैं दहला नहीं, सीधे इक्का ही फटकारना चाहती थी, जिससे बाज़ी हर हालत में मेरी ही रहे ।''

निष्कर्ष:

वस्तुतः कहा जा सकता है कि मन्नू भंडारी की कहानियों में द्वन्द्वात्मक रूप परिलक्षित होता है। वर्तमान समाज में पारिवारिक सम्बन्धों में जो विघटन हो रहा है; जिसके कारण समाज का प्रत्येक वर्ग प्रभावित हो रहा है। परिवार का हर सदस्य एक अजीब ताने बाने में उलझा हुआ है। परिवार की धुरी कहलाए जाने वाली नारी द्वन्द्वात्मक के चक्रव्यूह में फंसती जा रही है। मन्नू भंडारी की प्रत्येक कहानियों में परिवार के टूटने, कलह, अन्तर्द्वन्द्व, पति–पत्नी के सम्बन्धों में अजनबी और बेगाना जैसे भाव को देखा गया है। यह सच है कि सम्बन्धों को बनाये रखने के लिए मनुश्य को जहाँ मुखौटे लगाने की आवश्यकता पड़ती है, वहाँ मुखौटों के पीछे वह अन्दर ही अन्दर घुटता है, मानसिक संघर्ष से गुज़रता है।

सन्दर्भ–सूची

1. नगेन्द्र नाथ बसु, हिन्दी विश्वकोश , पृष्ठ संख्या– 758
   कालिकाप्रसाद, राजवललभ और मुकुन्दी लाल, वृहत हिन्दी कोश , पृष्ठ संख्या– 655
2. Dictionary and Encyclopaedia' General Editor J.B.Foreman
3. मन्नू भंडारी, पॉच बेहतरीन कहानियॉं, पृष्ठ संख्या–86
4. मन्नू भंडारी, पॉच बेहतरीन कहानियॉं, पृष्ठ संख्या–12
5. मन्नू भंडारी, पॉच बेहतरीन कहानियॉं, पृष्ठ संख्या–36
6. मन्नू भंडारी, पॉच बेहतरीन कहानियॉं, पृष्ठ संख्या–59
7. मन्नू भंडारी, पॉच बेहतरीन कहानियॉं, पृष्ठ संख्या–74

अनीता रानी
W/0 श्री सज्जन सिहँ
मकान न. 207 ब्लॉक न. 1
मेन चौक बाजार , धनिया ,
गॉव चौधरीवास, जिला हिसार,
125001 हरियाणा

5

हिन्दी साहित्य और बुजुर्ग विमर्शी रचनाएँ

नेहा सिंह

सारांश

हिन्दी साहित्य अत्यंत ही समृद्ध और आदर्शवादी साहित्य रहा है । वहीं हिन्दी साहित्य हमेशा से परिवर्तनशील भी रहा है और हमारे साहित्य का जो वर्तमान स्वरूप है वह युगों युगों की तपस्या के बाद यहाँ तक पहुंचा है । अतः अब हमारे रचनाकारों का दायित्व बनता है कि वे अब अपनी रचनाओं के माध्यम से हमारी संस्कृति और सभ्यता को और अधिक सुदृंढ करने का कार्य करें । उसी संस्कृति और सभ्यता को धरोहर के रूप में संजोने का कार्य हमारे बड़े बुजुर्ग करते हैं और हमारी यह संस्कृति और सभ्यता एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तांतरित करने का कार्य भी हमारे बड़े बुजुर्ग ही करते हैं । वर्तमान समय में भारतीय संस्कृति पाश्चात्य सभ्यता से बहुत अधिक प्रभावित हो रही है । जिसकी वजह से भारतीय मूल्यों का ह्रास हो रहा है । भारतीय समाज में बुजुर्गों की स्थिति प्राचीन समय में अधिक मजबूत हुआ करती थी । वृद्ध लोग घर के मुखिया के रूप में माने जाते थे । परंतु अब पश्चिमी संस्कृति के प्रभाव में पड़कर हम अपनी संयुक्त परिवार परंपरा को भूलते जा रहे हैं । अतः अब आवश्यकता है कि हमारे साहित्यकार वर्तमान पीढ़ी को हमारी संस्कृति और सभ्यता के साथ–साथ भारतीय समाज की संयुक्त परिवार परंपरा से भी सभी को अवगत करायें । जिससे समाज में बड़े बुजुर्गों की स्थिति और अधिक मजबूत हो ।

मुख्य शब्द :– संस्कृति, मनोविकार, साहित्य, जागरूकता, उपदेशात्मक, कल्पना, विमर्श, हस्तांतरण, वृद्धावस्था, एकाकीपन ।

हम सब जानते है कि साहित्य को समाज का दर्पण कहा जाता है । साहित्य समाज में घटित हो रही प्रत्येक घटना का साक्षी होता है । वहीं हम यह भी जानते हैं कि समाज में घटित हो रही प्रत्येक घटना को साहित्यकार द्वारा जब साहित्य में लिखा जाता है तो समाज में आने वाले परिवर्तनों का यह एक मुख्य कारण बन जाता है । इतिहास में घटित कोई भी घटना जो साहित्य में दर्ज हुई, उसमें हम जानते हैं कि कल्पना भी शामिल होती है, परंतु वह कोरी कल्पना नहीं होती है क्योंकि हम जानते हैं कि प्रत्येक कल्पना का कोई न कोई आधार अवश्य होता है । यही कल्पना और विषय मिलकर साहित्यकार को साहित्य रचना करने के लिए प्रेरित करते हैं । कल्पना का प्रयोग तो साहित्यकार अपने विषय को पाठकों के लिए रुचिकर बनाने के लिए करता है । कल्पना के साथ लेखक को उदेश्यपूर्ण विषय का समावेश करना चाहिए क्योंकि कल्पना किसी यथार्थ भावना को नहीं अपितु आदर्श भावना को लेकर चलती है ।[1] कल्पना का समावेश साहित्यकार जितना चाहे कर ले परंतु उसका मुख्य उद्धेश्य तो अपनी कृति के माध्यम से समाज में परिवर्तन लाना ही होना चाहिए । वहीं साहित्यकार का यह दायित्व भी होता है कि जब वह साहित्य रचना करता है तो उसकी दृष्टि से समाज में घटित हो रही कोई भी घटना और समाज में रहने वाला कोई भी वर्ग वंचित न रह जाए । क्योंकि साहित्यकार द्वारा जो भी सूचना उसकी कृति के माध्यम से दी जाती है, वह युगों– युगों तक उसके तत्कालीन समाज का प्रतिबिंब बनकर लोगों की मनोदशाओं को प्रभावित करती रहती है ।[2]

इस प्रकार जब कोई रचनाकर अपनी रचना के माध्यम से समस्या प्रधान साहित्य की रचना करके समाज में उस समस्या के मौजूद होने की जानकारी देता है तो भविष्य की पीढ़ी जागरूक होकर उस समस्या के समाधान का मार्ग प्रस्तुत करती है । अतः इस प्रकार समाज के प्रत्येक वर्ग की स्थिति की जानकारी देना साहित्यकार के साहित्य का दायित्व बन जाता है । साहित्यकार द्वारा ऐतिहासिक पक्ष को लेकर भी साहित्य रचना की जाती है अतः इस कारण साहित्य और इतिहास का संबंध भी बहुत गहरा है क्योंकि साहित्य अपने अंदर इतिहास को लेकर चलता है । इसी कारण बहुत से लोग साहित्य और इतिहास दोनों को एक समान मान लेते हैं परंतु ऐसा नहीं है क्योंकि इतिहास हमें सिर्फ बाहरी जानकारी देता है । वहीं साहित्य हमें देश के भीतर रह रहे प्रत्येक वर्ग की जानकारी देता है ।[3]

अपने प्रसिद्ध निबंध 'साहित्य का उद्देश्य में प्रेमचंद ने साहित्य के दायित्व को स्पष्ट करते हुये कहा भी है कि "मेरा अभिप्राय यह नहीं है कि जो कुछ लिख दिया जाए, वह सब का सब साहित्य है । साहित्य उसी रचना को कहेंगे जिसमें कोई सच्चाई प्रकट की गयी हो ।"[4]

जब हम हिन्दी साहित्य के बारे में चर्चा करते हैं तो हम पाते हैं कि हिन्दी साहित्य एक ऐसे विशालकाय समुन्द्र का प्रतिनिधित्व करता है, जिसमें अनेक प्रकार के विषयों की भरमार है । इन्हीं विषयों के जीवन संबंधी पहलुओं पर चर्चा करना साहित्यकार को श्रेष्ठ साहित्यकार बनाता है । हमारा साहित्यकार हमारे समाज का प्रतिनिधित्व करता है अर्थात साहित्य के विषयों की भिन्नता हमारे समाज की भिन्नता है । जो साहित्यकार इस भिन्नता को अपने साहित्य में दिखाने की कोशिश करता है वही समाज की परेशानी को समझ सकता है । समाज में अनेक प्रकार के वर्ग, जाति, धर्म, लिंग आदि के लोग रहते हैं । अतः हमारे साहित्यकारों का यह कर्तव्य बनता है कि इनमें से किसी भी वर्ग को अनदेखा न करें । साहित्य में लेखक जब सभी वर्गों को उनका सम्मान बराबरी से देता है तो समाज के किसी भी वर्ग के साथ गलत हो ही नहीं सकता । साहित्य का अध्ययन इसलिए भी महत्वपूर्ण हो जाता है क्योंकि साहित्य अपने देशकाल की विकास प्रक्रिया को लेकर चलता है और इसमें समाज के ऊंचे नीचे सभी वर्ग आ जाते हैं और हमें इस बात पर भी ध्यान देना चाहिए कि साहित्य का कोई धर्म नहीं होता है अर्थात साहित्य किसी धर्म विशेष की भावना को लेकर नही अपितु वह सभी धर्मों की भावनाओं को

समेकित रूप से साथ लेकर चलता है ।[5]

साहित्य शब्द अपने आप में एक व्यापक शब्द है और इसलिए साहित्य को किसी परिभाषा में बांधा नहीं जा सकता है । साहित्य की अनेकों विद्वानों ने अनेकों परिभाषाएँ दी हैं परंतु जीवन की आलोचनात्मक व्याख्या को ही प्रेमचंद ने साहित्य माना है।[6] यह एक ऐसा शब्द है जो अपने आप में बहुत व्यापक है। साहित्य को साहित्यकार के भावतत्व और बुद्धितत्व दोनों प्रभावित करते हैं । साहित्य का अर्थ होता है एक प्रकार की गद्यात्मक या पद्यात्मक रचना या फिर एक लिपिबद्ध विचार ।[7] अर्थात साहित्य एक प्रकार का विचार है जो साहित्यकार का व्यक्तिगत भी हो सकता है और उसके युग की सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों से प्रभावित भी हो सकता है । परंतु हमें यह समझना बहुत जरूरी है कि साहित्य रचना करना एक प्रकार की शक्ति है जिसको अगर साहित्यकार समझ ले तो वह अपनी इस शक्ति के माध्यम से किसी भी व्यक्ति का ह्रदय परिवर्तन कर सकता है । साहित्यकार की साहित्य रचना किसी भी व्यक्ति को बुरे मार्ग से उचित मार्ग पर लाने की प्रेरणा दे सकती है । इसलिए साहित्यकार को अपनी रचना करते वक्त बुद्धितत्व और भावतत्व में सामंजस्य स्थापित करने की आवश्यतकता है ।

वहीं साहित्य में एक पाठक भी अनेक प्रकार के विषय पर अध्ययन करना पसंद करता है जिनमें जाति विमर्श, बाल विमर्श, स्त्री विमर्श, धर्म विमर्श, दलित विमर्श, और यहाँ तक की पुरुष विमर्श से संबन्धित सामग्री की भरमार है परंतु वहीं अगर हम समाज के प्रमुख वर्ग जिसे हम बुजुर्ग वर्ग भी कह सकते हैं यदि इसके बारे में चर्चा करें तो यह एक ऐसा वर्ग है जिसको अन्य वर्गों की अपेक्षा कहीं न कहीं साहित्यकारों द्वारा वो महत्व नहीं दिया गया है जिसका यह वर्ग हकदार है । परंतु ऐसा नहीं है कि इस वर्ग के बारे में चर्चा नहीं हुई आधुनिक काल के अनेक लेखकों द्वारा बुजुर्ग विमर्श पर रचनाएँ की गयी हैं परंतु इसकी मात्रा इतनी नहीं जितनी अन्य विषयों पर लिखे साहित्य की है । जैसे कहानियों में प्रमुख बुजुर्ग विमर्शी कहानियाँ हैं ऊषा प्रियंवदा की 'वापसी', ज्ञानरंजन की 'पिता', प्रेमचंद की 'बूढ़ी काकी', कृष्णा अग्निहोत्री की 'अंतिम इच्छा' एवं 'अपना अपना अस्तित्व', और भीष्म साहनी की 'चीफ की दावत' आदिद्य इसी प्रकार कुछ उपन्यास भी हिन्दी साहित्यकारों द्वारा लिखे गए जिनमे ममता कालिया का 'दौड़', कृष्णा सोबती का 'समय सरगम', अमृतलाल नागर का 'बूँद और समंदर', चित्रा मुदगल का 'गिलिगडु' एवं अनामिका द्वारा रचित 'तिनका तिनके के पास' आदि हैं । परंतु इन बुजुर्ग विमर्शी रचनाओं को पढ़ने के बाद यह स्पष्ट हो जाता है कि इनकी मात्रा इतनी नहीं है जितनी अन्य विषयों पर लिखे साहित्य की है ।

जब हम वृद्ध लोगो से संबन्धित सामग्री खोजने का प्रयास करते हैं तो पाते हैं कि आधुनिक काल के शुरुआती दिनों में वृद्ध लोगो से संबन्धित जो सामग्री प्राप्त होती है वह भी न के बराबर ही है । उस सामग्री से हमें बुजुर्गों की उस समय की स्थिति की जानकारी इतनी अच्छी नहीं मिल पाती है अगर हम आधुनिक काल के शुरुआती दिनों की रचनाओं में बुजुर्ग विमर्श से संबन्धित समस्याओं को ढूंढने का प्रयास करते हैं तो पाते हैं कि उस समय की रचनाओं में इस वर्ग के लोगों को मुख्य भूमिका में नहीं रखा गया । इस वर्ग के लोगों को हमेशा सहायक भूमिका और कहानी और उपन्यासों में सलाहकार की भूमिका तक ही सीमित कर दिया गया है । बुजुर्गों को घर के बड़े बुजुर्ग कह कर उनकी भूमिका को नकार दिया गया । इनकी भूमिका सहायक पात्र तक इतनी सीमित कर दी गयी कि आधुनिक काल के शुरुआती दिनों में भी हम देखते हैं तो पाते हैं कि बुजुर्गों से संबन्धित समस्या प्रधान कहानी, उपन्यास, नाटक आदि लिखने के बारे में सोचा ही नहीं गया । बुजुर्गों की समस्याओं को अनदेखा कर उन्हें सामाजिक दृष्टि से कमजोर बना दिया गया । और इसी कारण वे घर के अन्य सदस्यों पर निर्भर रहने को भी मजबूर हुए । उनकी यह निर्भरता सिर्फ वृद्ध उम्र के कारण शारीरिक निर्भरता नही थी अपितु एक मानसिक निर्भरता भी थी अर्थात बाद में इसने वृद्धों के लिए एक प्रकार के मानसिक विकार का रूप धारण कर लिया ।[8]

बुजुर्गों की इस तरह साहित्यकारों द्वारा की गयी उपेक्षा ने साहित्यिक और सामाजिक दोनों ही दृष्टि से बुजुर्गों के वजूद को लुप्त प्राय बना दिया था । जब बुजुर्ग विषय पर हम चर्चा करते हैं तो हमें पता चलता है कि बुजुर्गों की समस्याएँ अधिक हैं । प्रेमचंद द्वारा रचित कहानी 'बूढ़ी काकी' में बुजुर्गों कि समस्याओं को प्रदर्शित किया गया है क्योंकि इस कहानी में बूढ़ी काकी के जीवन को निसहाय दिखाया गया है और वह दूसरों पर आश्रित है ।[9] अतः कुछ ही साहित्यकार ऐसे हैं जो अपनी रचनाओं के माध्यम से वृद्ध लोगो की समस्याओं को दिखाने में सफल हुए हैं । परंतु उनके विषय में समस्याप्रधान सामग्री इतनी कम है कि लोगों तक उनकी समस्याओं को हम पहुंचा ही नहीं सकते हैं क्योंकि हम यह जानते हैं कि जब लोग समस्याप्रधान कहानी, नाटक और उपन्यास आदि पढ़ते है तो उनकी उस विषय के बारे में या कहें कि उस समस्या के बारे में जागरूकता बढ़ती है और जब जागरूकता बढ़ती है तो उस समस्या का समाधान प्राप्त करने का रास्ता भी खोजा जाता है । इसलिए हमारे साहित्यकारों को चाहिए कि बुजुर्ग विषय से संबन्धित समालोचनात्मक रचनाएँ और अधिक करें । साहित्य में अनेक प्रकार के ग्रंथ शामिल होते हैं जिनमें नाटक, उपन्यास, कहानी, कविता, डायरी, संस्मरण आदि आते हैं और इन ग्रन्थों के माध्यम से पता चलता है कि साहित्य स्वभाव से ही पुरानी संस्कृति और सभ्यता को लेकर चलता है यही वजह है कि बुजुर्गों के विषय में और अधिक लिखा जाना चाहिए । क्योंकि हमारी संस्कृति और सभ्यता को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुंचाने का कार्य हमारे बड़े बुजुर्ग ही करते हैं ।[10] अतः हमें उनसे संबन्धित रचनाएँ और अधिक करनी चाहिए और उनकी समस्याओं को लोगो तक और अधिक पहुंचाया जाना चाहिए ताकि जागरूकता के साथ समस्या का समाधान भी सामने आए । यह कार्य साहित्यकार द्वारा ही संभव है क्योंकि एक अच्छा साहित्यकार भावतत्व और बुद्धितत्व दोनों में सामंजस्य स्थापित करके ही रचना करता है । अतः साहित्यकार का ह्रदय समाज के प्रत्येक वर्ग को समान मानेगा

तो समाज में परिवर्तन अवश्य ही संभव होगा।

लेखक द्वारा अपनी कृति के माध्यम से बुजुर्गों के साथ हो रहे बुरे व्यवहार और अपमान को तो सामने लाना ही चाहिए, वहीं एक साहित्यकार को अपनी रचनाओं के माध्यम से बताना चाहिए कि बड़े बूढ़ों की आवश्यकताएँ वृद्धा अवस्था में अधिक बढ़ जाती हैं उन्हें अपनों के सहारे की आवश्यकता उम्र के अन्य पड़ावों पर मौजूद वर्गों से कहीं अधिक होती है । परंतु कई बार ऐसा देखा गया है कि वर्तमान पीढ़ी अपने आप में और अपने कार्यों में इतनी व्यस्त हो गयी है कि वह वृद्ध लोगों की ओर ध्यान ही नहीं देती है । कितने ही वृद्ध माता—पिता अपने ही बच्चों के मोहवश उनके पास आते हैं परंतु बच्चे अपना अलग संसार बना कर बैठें हैं जिनमें उनके ही वृद्ध माता—पिता की जगह नहीं हो पाती है ।[11] यही नहीं मानसिक स्तर पर भी उन्हें अधिक पीड़ा मिलती है । वर्तमान समय में बच्चे अपने ही माँ—बाप के लिए एक प्रवासी की तरह हो गए हैं जो पराए देश जाकर अपने ही माता—पिता को भूल बैठे हैं ।[12] वहीं कई बार बच्चे अपने बुजुर्ग लोगों को छुपना उनकी भावनाओं की कदर न करना यहाँ तक की अपने ही माता—पिता को ही अपने अपमान का कारण समझने लगते हैं जिस कारण वे बुजुर्गों की भावनाओं को आहत कर देते हैं ।[13] उनके इस अनचाहेपन से वृद्धों कों जो पीड़ा पहुँचती है उसकी चर्चा करना अत्यंत आवश्यक है । अतः इस प्रकार का व्यवहार कहीं न कहीं मानसिक विकार का कारण भी बन जाता है । मानसिक तनाव उनकी वृद्धावस्था के लिए और अधिक घातक साबित होता है । जिसकी अधिक चर्चा नहीं मिलती है ।

साहित्यकार द्वारा वृद्धावस्था में आए इस मानसिक तनाव का वर्णन करने की और अधिक आवश्यकता है । वृद्धावस्था में वृद्ध लोगो को सिर्फ मानसिक तनाव जैसी समस्या ही नहीं होती अपितु अन्य समस्या भी होती हैं जैसे वृद्धों को एकाकीपन की समस्या और सुरक्षा की समस्या भी उसमें महत्वपूर्ण है क्योंकि वृद्धावस्था में उनका शरीर कमजोर हो चुका होता है और आर्थिक रूप से भी वे परिवार के अन्य सदस्यों पर निर्भर करते हैं । अतः ऐसे में उनके सामने एकाकीपन और सुरक्षा की समस्या उत्पन्न होना स्वाभाविक है । साहित्यकारों द्वारा बुजुर्गो की समस्याओं के विषय में लिखना वर्तमान पीढ़ी को जागरूक करना ही है। रचनाकार जब बुजुर्ग विषय से संबन्धित रचना करता है तो वह उस रचना के माध्यम से वृद्धों की स्थिति को सुदृढ़ करने का कार्य ही कर रहा होता है।

वहीं जब हम इस बारे में अध्ययन सामग्री ढूंढने जाते हैं तो वृद्धावस्था से जुड़ी अध्ययन सामग्री का अभाव है। परंतु यह विषय इतना विस्तृत है कि अगर इस पर रचना की जाए तो अनेकों संबन्धित विषय निकलकर सामने आ सकते हैं जैसे बुजुर्गों का नयी पीढ़ी के साथ सामंजस्य या फिर नयी पीढ़ी के साथ सामंजस्य का अभाव, वृद्धावस्था में सुरक्षा की समस्या अथवा मौत का भय और संतान की समस्याओं से वृद्धों को मानसिक तनाव आदि। अतः इस प्रकार की रचना करके रचनाकार बुजुर्गों के लिए सम्मान जनक समाज का निर्माण करने में मदद कर सकता है।

साहित्यकार को बुजुर्ग विमर्शी रचनाएँ इसलिए भी करनी चाहिए क्योंकि बुजुर्ग भी भारतीय समाज और भारतीय संस्कृति की संयुक्त परिवार परंपरा का एक महत्वपूर्ण भाग हैं। संयुक्त परिवार भारतीय समाज की केन्द्रीय संस्था और परिवार का मुख्य स्वरूप रहा है।[14] वे भारतीय युवाओं के पथ प्रदर्शक के रूप में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। बुजुर्गों द्वारा दी गयी सलाह या दिखाया गया मार्ग युवाओं को आने वाले समय के लिए मजबूत बना सकता है। युवा आने वाले समय में उस समस्या का सामना करने से बच सकते हैं जिसका सामना वृद्ध लोगों द्वारा पहले किया जा चुका है।

जब साहित्यकार बुजुर्ग वर्ग के लिए लेखन करता है तो वह उस वर्ग को सामाजिक रूप से सुदृढ़ कर रहा होता है। वहीं भारतीय संस्कृति संयुक्त परिवार की संस्कृति है अतः जब साहित्यकार समस्याओं को उठता है तो तब समस्त संस्कृति इस से प्रभावित होती है। संस्कृति स्वभावतः ही आदान—प्रदान से बढ़ती है और कोई भी संस्कृति बहुत लंबे समय तक तभी टिकी रह सकती है जब वह सटीक रूप में एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तांतरित की जाए।[15] और यह हस्तांतरण का कार्य हमारे बड़े बुजुर्गों द्वारा ही किया जाता है। अतः साहित्यकार को चाहिए कि वह बुजुर्ग विमर्शी रचनाएँ सिर्फ मनोरंजन के लिए न करे। क्योंकि लेखक केवल मनोरंजन के लिए नहीं लिखता है अपितु लेखक का कर्तव्य तो वर्तमान और भविष्य की पीढ़ी को जागरूक करना होता है।[16] अतः बुजुर्ग विमर्शी रचनाओं से सिर्फ वृद्ध लोगों की समस्याएँ ही नहीं सुलझती हैं अपितु इससे भविष्य की पीढ़ी भी जागरूक होती है और भारतीय संस्कृति को भी सुदृढ़ करने का मार्ग भी सामने आता है।

निष्कर्ष

किसी भी समाज और संस्कृति को एकता के सूत्र में बांधने के लिए और वहाँ के आमजन को बुजुर्ग लोगों की महत्ता समझाने के लिए जरूरी है कि साहित्यकार जागृत होकर लिखे। अगर वह जागरूक होकर लिखेगा तो समाज में परिवर्तन अवश्य आएगा। वहीं हम सब जानते हैं कि साहित्य वही है जो अपने उपदेशात्मक विषय से समाज में कोई परिवर्तन अवश्य लाये और भविष्य के लिए वर्तमान पीढ़ी का मार्ग सुगम करे। अंततः मैथिलीशरण गुप्त द्वारा रचित इन पंक्तियों से भी साहित्य का उद्देश्य स्पष्ट हो जाता है —

> ‘‘ केवल मनोरंजन न कवि का कर्म होना चाहिए
> उसमे उचित उपदेश का भी मर्म होना चाहिए ।’’

संदर्भ सूची :—

1. डॉ सत्येन्द्र, कला कल्पना और साहित्य, पृष्ठ संख्या 8, साहित्य रत्न भंडार, संस्करण— 2007
2. रामस्वरूप चतुर्वेदी, हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास, पृष्ठ संख्या 31, लोकभारती प्रकाशन, संस्करण—2021
3. डॉ सत्येन्द्र, निबंध निलय, पृष्ठ संख्या 110, वाणी प्रकाशन,

संस्करण–2021
4. निर्मला जैन, निबन्धों की दुनिया, पृष्ठ संख्या – 19, वाणी प्रकाशन, संस्करण–2012
5. वहीं, पृष्ठ संख्या 31
6. निर्मला जैन, निबंधों की दुनिया, पृष्ठ संख्या 19
7. डॉ। हरदेव बाहरी, राजपाल हिन्दी शब्दकोश, पृष्ठ संख्या 825, संस्करण–2022
8. वहीं, पृष्ठ संख्या 638
9. मुंशी प्रेमचंद, शतरंज के खिलाड़ी, पृष्ठ संख्या 145, वाग्देवी प्रकाशन, संस्करण–2014
10. रामधारी सिंह दिनकर, साहित्य और समाज, पृष्ठ संख्या 13, लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद, संस्करण –2008
11. कृष्णा अग्निहोत्री, उड़ाने ऊंची ऊंची तथा अन्य कहानियाँ, पृष्ठ संख्या 72, किताबघर प्रकाशन 4855 –5624 दरियागंज, नयी दिल्ली, संस्करण–2016
12. इंटरनेशनल जर्नल ऑफ हिन्दी रिसर्च , वॉल्यूम 6 इशू 2, 2020, पेजनंबर 47 – 49
13. राजेन्द्र यादव, एक दुनिया समानान्तर, पृष्ठ संख्या 216, राधाकृष्ण प्रकाशन, 26वां संस्करण–जनवरी 2022
14. आईजेएसआरएसटी , वॉल्यूम 3, इशू 7, पेज नंबर 1095–1098
15. रामधारी सिंह दिनकर, संस्कृति, भाषा और राष्ट्र, पृष्ठ संख्या 13, लोकभारती प्रकाशन, संस्करण–2008
16. रामधारी सिंह दिनकर, साहित्य और समाज, पृष्ठ संख्या–51

नेहा सिंह
नेट, एम.ए, बी.ए
सैक्टर 3, फरीदाबाद (हरियाणा)
मोबाइल नंबर – 8800348081

6

डॉ0 रामनिवास 'मानव' के दोहो का राजनीतिक मूल्याकंन

अनीता रानी, धर्मपत्नी श्री सज्जन सिहँ

सारांश

साहित्यकार अपने युग का प्रतिनिधि होता है। वह समाज को अपने साहित्य के माध्यम से सक्रिय बनाता है और समसामयिक परिस्थितियों से प्रभाव ग्रहण कर उन्हें रचनात्मक संगति देने का उल्लेखनीय कार्य करता है। ऐसे ही आधुनिक हिन्दी साहित्यकारों में डॉ0 रामनिवास 'मानव' का नाम आता है। उनका सम्पूर्ण साहित्य समाज की ज्वलंत समस्याओं की सशक्त अभिव्यक्ति है। किसी भी साहित्यकार के लिए समकालीन व्यवस्था और प्रशासन के बारे में साहित्य के माध्यम से तेज तर्रार बात कहना चूंकि असम्भव क्या कल्पनातीत लगता है और डॉ0 मानव ने वह कल्पनातीत–सा काम कर दिखाया। इनका व्यक्तित्व गहन चिन्तण, विनम्र सौजन्य और कर्म–साधना से परिपूर्ण है। विपत्ति, संघर्ष, निराशा से नष्ट परिचय के कारण आवश्यकता पड़ने पर खरी बात कहने में यह सबसे आगे रहे है।

आधुनिक युग को राजनीति में विश्व–व्यापक गतिविधि के रूप में जाना जाता है। मानव इतिहास के प्रत्येक युग में व्यक्ति किसी न किसी रूप में राजनीति से जुड़ा रहा है। प्राचीन समय में राजनीति शाहोंमहलों तक ही सीमित रहती थी मगर आज राजनीति का स्वरूप बदल गया है। आज के युग में शायद ही कोई व्यक्ति हो जो राजनीति से अछूता हो। राजनीति में रूचि न रखने वालों से भी राजनीति जुड़ी हुई है। राजनीति का क्षेत्र बहुत ही व्यापक होने के कारण सताधारी अपनी राजनीति के सहारे समाज का मनचाहा शोषण करते है। कवि ने अपने दोहो के माध्यम से राजनीतिक व्यवस्था को चरितार्थ किया है। डॉ0 रामनिवास 'मानव' के दोहो का राजनीतिक मूल्याकंन करने से पूर्व हम राजनीति की संक्षिप्त परिभाशाओं पर प्रकाश डाल लेते है–

राजनीति के बारे में पीटर एच. मर्कल ने लिखा है कि –

''राजनीति का सारांश समाज में मनुष्य की भौतिक स्वतन्त्रता से है जिसके आधार पर राजनीतिक साधनों द्वारा वह अपने भाग्य का स्वयं निर्माण कर सकता है।''

प्रसिद्व विद्वान कैटलिन के अनुसार ने कहा है कि –

''राजनीति संगठित मानव समाज का अध्ययन है और मुख्यतः सामाजिक जीवन के राजनीतिक पक्षों से सम्बन्धित है।''

वस्तुत : कह सकते है कि समाज को संगठित करने और उसे अपनी स्वतन्त्रत सता बनाने में राजनीति का अहम स्थान है। समय–समय पर परिस्थितियों के अनुसार रातनीति की परिभाशाओं में भी बदलाव आया है। डॉ0 'मानव' ने अपने दोहों में अनेक नेताओं के दुष्ट, नीच, दम्भी, अवगुणी और सता में चूर का यर्थात चित्रण किया है, जो मनमानी ढंग से समाज का शोषण करते है। जिन लोगों ने उन्हें सता पे बैठाया, उन्हीं लोगों का शोषण करते है। कवि ने इन्हें थाली में छेद करने वाले दुष्ट बताया है। ये राजनीति के नाम पे धमाल करते है। सर्वप्रथम देश की राजधानी को माध्यम बनाते हुए राजनीति स्थिति का अवलोकन किया है। वहां की संसद, संसद में हुए कारनामे, पैसे और गाड़ियों के बलबूते पर नेताओं की खरीद–फरौद, संसद में नोटों का उछलना और विविध घोटालों में शामिल नेताओं आदि पर अपने व्यंग्य बाण मारते हुए अपने भाव को प्रस्तुत किया है।

आधुनिक घिनौनी राजनीति ने मनुष्य के हजारों–हजार बार टूटने की स्थितियां निर्मित की है। इस परिवेश मे जीने को बाहय मनुष्य की स्थिति के प्रति डॉ0 'मानव' के ह्वदय में करूणा के भाव है। अव्यवस्था, चारों ओर छाये भय तथा आतंक ने जीवन को नरक बना दिया है। सीधे–सादे, भोले–भाले लोगों के लिए आज जीना कठिन होता जा रहा है। आज राजनेता अपनी राजनीतिक स्वार्थ को पूरा करने के लिए आदमी को कहीं का नहीं छोड़ा। भारतीय राजनीति दिनो–दिन भ्रष्ट होती जा रही है। राजनेता अपने स्वार्थ के आगे जनता को अंधेरे में धकेल रहे है। परिस्थितियॉ दिनों–दिन बिगड़ रही है। डॉ0 रामगोपाल सिंह ने अपने ग्रन्थ 'आधुनिक हिन्दी' साहित्य में लिखा भी हैः

''यह स्थिति यहां तक बढ़ गई है कि अपने हित के आगे राष्ट्रीय हित को भी त्याग दिया जाता है। भ्रष्टाचार राष्ट्रीय–नैतिक पतन के स्तर की एक गंभीर समस्या बन गई है।''

वर्तमान नेता अपने मूल्य और मर्यादा बिल्कुल भूल गए है। आज के नेता और गुंडों में कोई अन्तर नहीं है। अपने संस्कारों को भूलकर एक दूसरे को गाली–गलौच देते है। धैर्य को त्याग कर और अपने कर्तव्यों को दर किनार करते हुए संसद जैसे पवित्र स्थान पर मुक्के लात चलाते है। संसद को देखकर लगता है जैसे यह जंगलात बन गई है। वर्तमान राजनीतिक परिप्रेक्ष्य में राजनेताओं ने जनमानस को कभी धर्म के नाम पर, कभी जाति के नाम पर, तो कभी भाषा अथवाा क्षेत्र के नाम पर लड़वाया है। इन अनीतिपूर्ण चालों से जहां आम आदमी निरन्तर आर्थिक दुष्चक्रों में फंसता चला जा रहा है, वहीं राजनेताओं के खातों का आकार दिनों–दिन गुणात्मक रूप से विशाल कोश में तब्दील होता जा रहा है। आज नेता लोकतन्त्र के नाम पर, लोगों को शोषण करते, इन्हें लूटने, बरगलाने में महारत हासिल कर चुके है। डॉ0 'मानव' प्रजातन्त्र के नाम पर देश की प्रजा का भाग्य बन चुकी शोषण वृति को, संवेदना के साथ, अपने काव्य में स्थान दिया है। गागर में सागर भरने वाली प्रमुख रचना 'बोलो मेरे राम' में कवि ने माना कि आधुनिक नेताओं के जीवन का एकमात्र लक्ष्य सता प्राप्त करता हो गया है। यही वजह है कि वे जन कल्याण की अपेक्षा स्वकल्याण के मार्ग पर चल रहें है। भ्रष्ट नेता बापू के देश 'सोने की चिड़ियां' कहलाने वाले देश को नोच–नोच कर खा रहे है। कवि ने लिखाः

प्रदूषित परिवेश हुआ, और भ्रष्ट आचार।
बापू तेरे देश में, कैसी बही बयार।।

एक अन्य उदाहरण—ः

चरखा साध मौन है, तकली पड़ी उदास।
कर्ता सब नेता हुये, काते कौन कपास।।

भारतीय राजनीति जनसामान्य के शिकारगाह में परिवर्तित हो चुकी है। जिस प्रकार चूहे घरों की चूलों को और कौवे जनता की चमड़ी को कुतरने में लीन रहते है, उसी प्रकार आज के नेता देश को खाने में लगे है। रक्षक ही भक्षक बन गये है, फिर भला देश की प्रगति और रक्षा की किससे गुहार लगायें। इन स्वार्थी सताधारियों के कारण देश की चूलें हिल गई है, जिससे पूरा राष्ट्र निरन्तर खोखला होता जा रहा है। स्वार्थ की पूर्ति के लिए ये राजनेता किसी भी नीति, किसी भी सिद्धान्त का परित्याग करने में जरा भी नहीं हिचकते। आज नेता बापू के बलिदान का मज़ाक उड़ा रहे है। उन्हें तो नेता शो—पीस की तरह सामने रखकर समाज को दोनों हाथों से लूटते है। कभी 'राम' नाम पे तो कभी अल्लाह के नाम पर आपसी झगड़े करवा कर अपनी राजनीतिक स्वार्थ को पूरा किया है। कवि ने लिखा हैः

मन्दिर का मुद्दा बना, बापू तेरा राम।
राम नाम के मर्म से, आज किसे क्या काम।।

एक अन्य उदाहरण—ः

राजनीति ने यह किया, सबसे पहले काम।
सरेआम बेचा गया, बापू तेरा नाम।।

डॉ0 'मानव' ने वर्तमान राजनेताओं की नीतियों का पर्दाफाश किया है। संसद में बैठकर ये नेता लोग कानून इस प्रकार बनाते है, जिससे इनके दामन पर कोई आंच ना आए। यूं कह सकते है कि कानून तो केवल आम आदमी के लिए बनते है। अंग्रेजों वाली नीति 'फूट डालो राज करो' का अनुशरण करते हुए समाज को बांटने का कार्य करते है। जैसा कि कवि ने लिखाः

क्या नेता, क्या नीतियां, क्या सता, क्या तन्त्र।
सरे बनकर रह गये, लूटपाट का मन्त्र।।

एक अन्य उदाहरण—ः

गंगा—यमुना प्यार की, बहती थी हर—द्वार,
राजनीति ने खींच दी, बीचों—बीच दीवार।

कवि का विचार है कि राजनीति और साम्प्रदायिकता एक दूसरे के पूरक बन गए है। आज राजनीति समाज का एक हिस्सा बन चुकी है। वह जगह—जगह धर्म के नाम पर दंगे करवाकर अराजकता फैलाते है। वर्तमान में धार्मिक, सामाजिक तथा आर्थिक साम्प्रदायिकताएं देश में अपनी चरम सीमा पर पहुंचती दृष्टिगोचर हो रही है ओर इन्होंने देश में दुश्मनों का सा रूप धारण कर लिया है। राजनेता जात—पांत के नाम पर भी लोगों को गुमराह करते है। घोटालों में शामिल होकर ये लोग रात—रात में करोड़पति बन जाते है। आज का नेता केवल अपना घर भरना चाहता है, वह स्वार्थी और दम्भी हो गया है। उसे आम आदमी की कोई चिन्ता नहीं है। वह तो उसके लिए महज एक वोट बनकर रह गया है। नेताओं की कुर्सी के प्रति मोह की भावना उनहें भ्रष्ट और निर्दयी बना रही है। आज नेता जनता को मूर्ख बनाने के लिए आरक्षण रूपी 'लाली पॉप' थमाते है। इसी आरक्षण को वे प्रगति की राह बताते है। छोटी—छोटी जातियों के बेरोज़गार युवाओं के राजनेता अपने जाल में फंसा लेते है। उन्हें भविष्य का नेता बताकर भोली—भाली जनता को गुमराह करने के नुस्खे सिखाय जाते है। आरक्षण की आग कुछ दिन तो जलती है, लेकिन धीरे—धीरे शांत हो जाती है। साल—दो—साल में फिर राजनीति की रोटियां सेंकने के लिए आरक्षण की आग जलाई जाती है। यह आग पूरे समाज के साथ पूरी दुनियां को किसी न किसी रूप में प्रभावित करती है। जैसा कि कवि ने अपने दोहे में कहा है कि :—

चन्द जातियों को मिला, आरक्षण का लाभ।
शेष ढूंढती ही रही, मरीचिका में आब।।

एक अन्य उदाहरण—ः

आरक्षण जारी रहा, और वर्ष—दर—वर्ष।
फिर भड़केगा एक दिन, नया वर्ग—संघर्ष।।

वर्तमान राजनीति और राजनीतिज्ञों के अमानवीय कृत्यों से लोकतन्त्र आये दिन शर्मसार होता है। लोगों की भावनाओं का गला घोटकर राजनीतिज्ञ लोकतन्त्र का काला अध्याय लिखने को तत्पर रहते है। परिणामस्वरूप विश्व के सबसे बड़े लोकतन्त्र के गौरवपूर्ण मस्तक को आये दिन खून का घूंट पीकर झुकना पड़ता है। सता के लालच में नेता कपड़ों की भांति पार्टी बदलते है। वोट हासिल करने के लिए जिस पार्टी का विरोध करते है और जीत भी जाते है, बाद में उसी पार्टी में मिलकर देश व प्रदेश की सरकार बनाकर मन्त्री पद प्राप्त कर लेते है। जनता के सामने किए वादे, एक पल में ही तोड़ देते है। भोली—भाली जनता पॉच साल में भूल जाती है ओर अगले चुनाव में फिर वही लोग किसी नई पार्टी से टिकट लेकर चुनाव के मैदान में आ जाते है। डॉ0 'मानव' ने अपने दोहों में इस दल—बदलू नेताओं के प्रति अपने भाव प्रकट करते है। वह लिखते हैः—

किस—किसने तोड़ा नहीं, जनता का विश्वास।
दल—बदलू रचने लगे, नित्य नये इतिहास।।

समाज का प्रत्येक हिस्सा भ्रश्टाचार की आग में जल रहा है। इसका उतरदायी सिर्फ राजनेताओं को ही समझा जाता है। राजनेता अपना स्वार्थ को सिद्ध करने के लिए समाज के प्रत्येक क्षेत्र में रूचि लेता है। न्यायालय, पुलिस, शिक्षा, प्रशासन, बिजली, जल, साहितय, स्वास्थ्य और न जाने कितने विभाग होते है, जहां इनका हाथ नहीं होता । राजनेता अवसरवादिता और भ्रश्टाचार दोनों में प्रमुख रूप से लिप्त रहते है। कवि ने अपनी कृति 'सहमी—सहमी आग' में लिखा है :

राजनीति के रह गये, केवल दो आधार।
पहला अवसरवादिता, दूजा भ्रश्टाचार।।

एक अन्य उदाहरणः—

इक प्रत्याशी भ्रश्ट है, दूजा उसका बाज।
दोनों में प्रतियोगिता, किसे चुनेंगे आप।।

राजनीतिज्ञों ने राष्ट्र को अपने रूपों में बांटने का बार—बार कुत्सित प्रयास किया है। अपनी राजनी तिक गोटियां फिट करने के

लिए राजनेता आये दिन मुखौटे बदलते रहते है। सता पर काबिज रहने के लिए ये राजनीतिज्ञ नित नयाा खेल खेलते है। लोकतन्त्र का मजाक उड़ाते है। जनता को लोकतन्त्र से चिढ़–सी हो गई है। कवि लोकतन्त्र को खेल समझने वालों के बारे में कह उठते हैः–

नेता जी क्या खूब हैं, आप देश पर भार।
लोकतन्त्र के द्वार पे, बैठे कुंडली मार।।

डॉ0 'मानव' का विचार है कि आज नेता केवल अपना निजि स्वार्थ ही नहीं बल्कि अपने भाई–भतीजा, सगे–संबंधी को भी राजनीति में लाकर उनका स्वार्थ पूरा करते है। समाज को भय दिखाकर प्रशासनिक ढांचे पर भी अपनी हकुमत जमाते है। अफसरों को कठपुतली की भांति नचाते है। कोई अफसर विरोध करता है तो उसे या तो झूठे मुकदमें में फंसा देते है, या फिर उनका तबादला करवा दियाा जाता है। इस भय से अफसर लोग सदैव भयभीत रहते है। पुलिस, दलालों के साथ मिलकर नेता लोग आम जन का जीना दुबर कर देते है।

लल्लू से लालू किया, कुर्सी कृपा–निधान।
कुर्सी पर कब्जा रहे, ऐसा करो विधान।।

एक अन्य उदाहरण–ः

नेता, पुलिस, दलाल का, हुआ आज गठजोड़।
लगा दांव पर देश है, मची लूट की होड़।

डॉ0 'मानव' का विचार है कि राजनीति साहित्य के क्षेत्र में भी अपना कदम बड़ा चुकी है। साहित्यिक पुरस्कारों में राजनीति हावी होती जा रही है। सरकार द्वारा विभिन्न संस्थाओं के माध्यम से रचनाओं पर दिए जाने वाले पुरस्कारों में घपले होते जा रहे है। रचनाओं को श्रेष्ठ पुरस्कार देने के लिए कमेटी बनाई जाती है। जो कवि या लेखक बड़े–बड़े राजनेता और अफसर की जी हजूरी करते ह।, उन्हें ये पुरस्कार मिल जाते है। यद्यपि पुरस्कार परिषद् निर्णायक का नाम गोपनीय रखती है लेकिन राजनेता इनका पता चलाकर मनचाहे साहित्कार को पुरस्कार दिला देते है।

डॉ0 'मानव' का विचार है कि राजनीति साहित्य के क्षेत्र में भी अपना कदम बड़ा चुकी है। साहित्यिक पुरस्कारों में राजनीति हावी होती जा रही है। सरकार द्वारा विभिन्न संस्थाओं के माध्यम से रचनाओं पर दिए जाने वाले पुरस्कारों में घपले होते जा रहे है। रचनाओं को श्रेश्ठ पुरस्कार देने के लिए कमेटी बनाई जाती है। जो कवि या लेखक बड़े–बड़े राजनेता और अफसर की जी हजूरी करते है, उन्हें ये पुरस्कार मिल जाते है। यद्यपि पुरस्कार परिशद् निर्णायक का नाम गोपनीय रखती है लेकिन राजनेता इनका पता चलाकर मनचाहे साहित्कार को पुरस्कार दिला देते है। जैसा कि कवि ने लिखा है :

गाल–बाजते रह गये, लेखक खड़े उदास।
पदम्–वद्म सब ले उड़े, नेता जी के खास।।

एक अन्य उदाहरणः–

प्यादे से फर्जी हुए, जिनकी थी अप्रोच।
क्वि तू कबिरा वंश का, बाल बैठकर नोच।।

आज के नेताा मुखौटेबाज है जो गिरगिट की तरह रंग बदलते है। उनका धर्म–ईमान सब कुर्सी है। कुर्सी के लालच में मंच पर अने कसमें–वादे किए जाते है। घड़ियाल आंसु बहाए जाते है। हमारी जनता जिन नेताओं पर विश्वास करके मंत्री पद पर बैठाती है, वही नेता अपने देश को टक सेर में बेच देते है। उनका विचार है कि जैसे चूहे चूल को, और कौआ चाम को कुतरता है, वैसे ही नेता देश को कुतरते है। जैसे :

आप इन्हें नेता कहें, कहें मुखौटेबाज।
कोई भी सरकार हो, यही करेगे राज।।

एक अन्य उदाहरणः–

चूहा कुतरे चूल को, कौआ कुतरे चाम।
नेता कुतरे देश को, भली करें अब राम।।

वर्तमान युग राजनीति व राजनेताओं को घृणा की दृष्टि से देखते है। कर्मठ व ईमानदार नेता भी अपने आपको बचा नहीं पाता। आज नेता और अपराध का रिश्ता चोली–दामन का बन चुका है। शायद ही कोई ऐसा नेता हो जिस पर भ्रष्टचारी, बलात्कार, रिश्वतखोरी, कत्ल आदि का मुकदमा ना चल रहा हो। नेता स्वार्थ की आम में जलते हुए पूरे देश व राष्ट्र को दाव पर लगा देते है। जनता जब नेताओं से अपने दुख दूर करने की फरियाद करती है तो ये नेता लोग गूंगे और बहरे बन जाते है। खादी के सफेद कपड़े पहनते है, मगर दिल इनका काला होता है। जनता के बने नायक चुनाव के बाद खलनायक बन जाते है। देश को दोनों हाथों से लूटने वाले लूटेरे बन जाते है। राजनीति आज जीवन का सर्वाधिक क्रूर पक्ष हैं। मनुष्यता के सुख संरक्षण के लिए रची गई त्याग और सेवाभावी राजनीति सुदूर अतीत से व्यक्ति के हित–पोषण में दुष्प्रयुक्त होती आ रही है। सामन्तकाल में सता की रक्षा के लिए नर–संहार हुए, आज भी हो रहे है। जनहित का अमृत–कलश स्वार्थी और सता लोलुप राजनेताओं की घिनौनी मानसिकता की अंधेरी कोठरी में कैद है। जनहित का दावा करने वाले किस प्रकार जनता का सर्वनाशा करने पर तुले है, यह सर्वविदित है। आजादी प्राप्ति से देश की जनता को क्या–क्या लाभ होंगे, इसके सन्दर्भ में, हमारे नेताओं ने, अनेक सुनहरे स्वप्न दिखाये थे। उनमें से अनेक नेताओं ने निष्ठापूर्वक उसके लिए प्रयत्न भी किये। समस्त भारत में नेताओं की बातों को ही अहमियत दी जाती है। उनकी बातों को सच्चा माना जाता है। प्रशासन भी उनके आगे कठपूतली बनकर कार्य करता है। संसद में बहस करते समय यूं लगता है जैसे नाटक–मण्डली में कार्य कर रहे हो। नेता स्वार्थ और सता में लीन रहता है।

निष्कर्ष

निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता है कि ' डॉ0 ' मानव' ने अपने दोहों में राजनीतिक के विविध पहलूओं को यर्थात के साथ लिखा है। आज हर व्यक्ति प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूपसे राजनीति जुड़ा हुआ है। राजनीति का क्षेत्र विस्तृत होने के कारण समाज का हर वर्ग

सताधारियों हाथों शोषण का शिकार हो रहा है। समाज के भोले—भाले लोगों को गुमराह किया जाता है, जो जनता उन्हें सता पे बैठाती है, उसे ही नरक की ओर धकेल जाता है, वर्तमान नेता निजी स्वार्थ की पूर्ति करने के लिए समसत राष्ट्र को टके सेर बेच देते है। नैतिकता और संस्कृति को त्याग कर मानवीय मूल्यों का हनन कर रहे है। ये लाग आज जनमानस को कभी धर्म के नाम पर, तो कभी भाषा अथवा क्षेत्र के नाम पर लड़वाते है। इनकी अनीतिपूर्ण चालों से जहां आम आदमी निरन्तर आर्थिक दुष्चक्रों में फंसता चला जा रहा है, तो वहीं राजनेताओं के खातों का आकार, दिनों—दिन गुणात्मक रूप से विशाल कोश में तब्दील होता जा रहा है। उनका मात्र एक लक्ष्य सता प्राप्त करना होता है। जैसे एक चूहा कागजों को कुतरता है, उसी प्रकार नेता देशा को कुतरते है। संसद में बैठे नेता बहस के नामपे नाटक करते है। कानून बनाते समय सर्वप्रथम अपने हित को ध्यान में रखते है। देश को धार्मिक, सामाजिक तथा साम्प्रदायिक दंगों में धकेलने का कार्य करते है। ईमानदार लोगों को झूठे मुकदमों में फंसायाा जाता है। भाई—भतीजेवाद की राजनीति करते है। चन्द पैसों के लालच में जनता को धोखा देकर अपना दल बदल लेते है। अनेक मुखौटे पहनकर हर बार जनता को फंसा लेते है। अतः कह सकते है कि डॉ0 ’ मानव’ ने अपने दोहों में राजनीतिक के प्रत्येक क्षेत्र पर लेखनी चलाई है।

सन्दर्भ—सूची

1.वी.के.पुरी – मार्डन पोलटीक्ल थ्योरी, पृ.सं.–27

2.वी.के.पुरी – मार्डन पोलटीक्ल थ्योरी, पृ.सं.–27

3.रामगोपाल सिंह चैहान, आधुनिक हिन्दी साहित्य, पृष्ठ–23

4.डॉ0 रामनिवास ’मानव’ सांझी है रोशनी, पृष्ठ–74

5.डॉ0 रामनिवास ’मानव’ बोलो मेरे राम, पृष्ठ–16

6.डॉ0 रामनिवास ’मानव’ बोलो मेरे राम पृष्ठ–16

7.डॉ0 रामनिवास ’मानव’ बोलो मेरे राम, पृष्ठ–31

8.डॉ0 रामनिवास ’मानव’ बोलो मेरे राम पृष्ठ–40

9.डॉ0 रामनिवास ’मानव’ सहमी–सहमी आग, पृष्ठ–54

10.डॉ0 रामनिवास ’मानव’ बोलो मेरे राम पृष्ठ–30

11.डॉ0 रामनिवास ’मानव’ बोलो मेरे राम पृष्ठ–34

12.डॉ0 रामनिवास ’मानव’ बोलो मेरे राम, पृष्ठ–32

13.डॉ0 रामनिवास ’मानव’ सहमी–सहमी आग, पृष्ठ–32

14.डॉ0 रामनिवास ’मानव’ सहमी–सहमी आग, पृष्ठ–55

अनीता रानी

W/0 श्री सज्जन सिहॅ

मकान न. 207 ब्लॉक न. 1

मेन चौक बाजार , धनिया ,

गॉव चौधरीवास, जिला हिसार,

125001 हरियाणा

7

प्लेटो की शिक्षा

Dr. Rajkumar Siwach

सारांश

प्लेटो का जन्म यूनान के प्रसिद्ध नगर – राज्य एथेन्स में ईसा से 427 ई० पू० हुआ था । प्लेटो का जन्म जिस कुल में हुआ वह एक उच्च और कुलीन घराना था जिसके विचार न तो रुढ़िवादी थे और न ही परम्परावादी थे । प्लेटो की माता का नाम परिक्टियनी और पिता का नाम एरिस्टोन था । प्रारम्भिक शिक्षा प्राप्त करने के बाद 20 वर्श की अवस्था में प्लेटो सुकरात के सम्पर्क में आया और उसके चरणों में बैठकर 8 वर्ष तक उसका शिष्य बने रह कर शिक्षा ग्रहण की । प्लेटो का पारिवारिक नाम अरिस्तोक्लीज था परन्तु उसके सुडौल, सुन्दर और हट्टे–कट्टे तंदरुस्त शरीर को देखकर उसके गुरु सुकरात ने उसका नाम 'प्लाटून' रख दिया। प्लेटो के ग्रन्थों की संख्या 36 या 38 के लगभग मानी जाती है । इसमें से प्रमाणिक ग्रन्थ केवल 28 हैं। प्लेटो की इन रचनाओं में 'दी रिपब्लिक' 'दी स्टेट्समैन' तथा 'दी लॉज' सबसे अधिक महत्वपूर्ण है । प्लेटो ने यह विभाजन दो आधार पर किया है–पहली अवस्था के आधार पर और दूसरी वर्ग के आधार पर । प्रारम्भिक शिक्षा 20 वर्ष तक है और यह सैनिक वर्ग के लिए है जबकि उच्च शिक्षा 20 वर्ष से 35 वर्ष तक है और यह शासक वर्ग के लिए है। प्रारम्भिक शिक्षा का उद्देश्य भावनाओं का परिमार्जन करके चरित्र निर्माण करना है जबकि उच्च शिक्षा का उद्देश्य विज्ञान और ज्ञान द्वारा विवेक का विकास कहना है तथा दिव्य दृष्टि को जन्म देना है। शिक्षा जो प्रारम्भिक अवस्था में सामाजिक होती है वह उच्च अवस्था में वैयक्तिक चरित्र धारण कर लेती है। प्रारम्भिक शिक्षा को प्लेटो ने तीन भागों में विभाजित किया है–प्रारम्भिक 6 वर्ष तक की शिक्षा, 6 वर्ष से 18 वर्ष तक की शिक्षा ,18 वर्ष से 20 वर्ष तक की शिक्षा। 6 वर्ष तक बच्चों को नैतिक तथा धार्मिक शिक्षा दी जाएगी। बच्चों को यह समझाया जाएगा कि वह किस चीज से घृणा करें और किस से प्रेम। यह शिक्षा बच्चों को छोटी–छोटी कहानियों द्वारा दी जाएगी। 6 वर्ष से 18 वर्ष तक की शिक्षा इस अवस्था में युवकों को शारीरिक व मानसिक दोनों प्रकार की शिक्षा दी जाएगी । जिससे व्यक्ति की आत्मा और शरीर दोनों का विकास हो सके । अतः प्लेटो ने व्यायाम और संगीत को बड़ा महत्व दिया । व्यायाम द्वारा शरीर को स्वस्थ बनाया जा सकता है । प्लेटो ने व्यायाम का व्यापक अर्थ लिया है । उसके व्यायाम शब्द में शरीर सम्बन्धी समस्त शिक्षा का समावेश हो जाता है । व्यायाम का अर्थ केवल शारीरिक कसरत ही नहीं बल्कि शरीर को स्वस्थ बनाए रखने वाले आहार–शास्त्र और चिकित्सा–शास्त्र का भी ज्ञान है । व्यक्ति के शारीरिक विकास के लिए प्लेटो ने सादे भोजन को महत्व दिया है। प्लेटो स्वादिष्ट भोजन के उपयोग को अच्छा नहीं समझता था । प्लेटो के अनुसार शरीर का निर्माण इस प्रकार से होना चाहिए कि शरीर स्वस्थ रहे और डॉक्टर की आवश्यकता न रहे। प्लेटो ने अपने आदर्श राज्य में डॉक्टरों को कोई महत्व नहीं दिया क्योंकि उसके मतानुसार डॉक्टर बीमारी का ईलाज करने के स्थान पर उसे बढ़ाते हैं। प्लेटो ने मस्तिष्क के विकास के लिए संगीत को महत्व दिया है। संगीत का अर्थ प्लेटो ने केवल गाने–बजाने से नहीं दिया है बल्कि संगीत, काव्य, साहित्य, गीत, नृत्य, मूर्ति, चित्र आदि सभी ललित कलाओं का प्रतीक है। संगीत प्रत्यक्ष रूप से शौर्य की भावना को संवारता है और विवेकशक्ति को जागृत करने में सहायक बनाता है। प्लेटो के अनुसार संगीत और साहित्य का स्वरूप ऐसा होना चाहिए जिससे व्यक्ति के चरित्र पर किसी तरह का बुरा प्रभाव न पड़े । पाठ्यक्रम में वे ही साहित्य सम्मिलित किया जाना चाहिए जो व्यक्ति में उज्ज्वल चरित्र, गुरुजनों तथा माता–पिता के प्रति सम्मान, भ्रातृभाव, सत्यप्रियता, आत्म–संयम जैसे गुणों का विकास करता हो । जो साहित्य क्रोध, घृणा, ईर्ष्या, भय आदि बुराइयों को प्रोत्साहन देता हो उसका बहिश्कार किया जाना चाहिए । प्लेटो के अनुसार प्राचीन साहित्य से ऐसे सभी अंशों को निकाल देना चाहिए जो देवताओं की प्रकृति के प्रतिकूल हों, उनसे बुरा काम कराते हों, छात्रों के साहस को कम करने वाले और असंयम तथा भोग–विलास के आनन्दों को उत्पन्न करने वाले हों। प्लेटो जिस प्रकार शारीरिक शिक्षण द्वारा अपने आदर्श राज्य से डॉक्टरों को निर्वासित करना चाहता है उसी प्रकार संगीत तथा साहित्य की शिक्षा द्वारा न्यायालयों और वकीलों को निर्वासित करना चाहता है। प्लेटो के अनुसार यदि संगीत और गानों की शिक्षा द्वारा सब नागरिकों के मनों में राज्य की व्यवस्थाएं अंकित कर दी जाएं तो वे स्वयं इनका पालन करेंगे, कानून बनाने की कोई आवश्यकता नहीं रहेगी। 18 से 20 वर्ष तक की शिक्षा में युवकों को कठोर सैनिक शिक्षा दी जाएगी ताकि स्त्रियों और पुरुषों को देश की सुरक्षा के लिए तैयार किया जा सके । प्लेटो ने उच्च शिक्षा को दो भागों में विभाजित किया है– 20 से 30 वर्ष तक व 30 से 35 वर्ष तक । उच्च शिक्षा 20 वर्ष की आयु से प्रारम्भ होगी और केवल उन्हीं युवक–युवतियों को दी जाएगी जो भविष्य में आदर्श शासक बनने की प्रतिभा रखतें हों। जिस प्रकार एक सैनिक का विशेष गुण साहस अथवा शौर्य है उसी प्रकार एक शासक का आवश्यक गुण ज्ञान अथवा विवेक है। इसलिए प्लेटो ने उन्हीं विषयों का चयन किया है जिससे विवेक का विकास होता है। ये विषय हैं– अंकगणित, रेखागणित, ज्योतिशशास्त्र तथा संगीतशास्त्र। इन विषयों को विद्याचतुष्टयी कहकर पुकारा जाता है। प्लेटो ने 20 से 30 वर्ष तक की आयु में जिन विषयों के अध्ययन पर जोर दिया है वे वैज्ञानिक अध्ययन के प्रतीक माने गये हैं। प्लेटो की मान्यता थी कि दर्शनशास्त्र में गणित और रेखागणित का बहुत महत्व है। प्लेटो ने सबसे अधिक महत्व अंकगणित को दिया है। विशुद्ध बुद्धि का प्रयोग

गणित से सीखा जाता है। गणित का ज्ञान व्यावहारिक रूप में अनिवार्य है। वैज्ञानिक विषयों के अध्ययन से दो मुख्य लाभ होते हैं। प्रथम यह चिन्तन सिखाता है। द्वितिय यह आत्मा को शनैः–शनैः उन सिद्धान्तों या उन आकृतियों से परिचित कराता है जोकि शिव के स्वरूप को समझने के लिए, अन्तिम ज्ञान की प्राप्ति के लिए अत्यावश्यक है। वैज्ञानिक शिक्षा की समाप्ति के बाद पुनः 30 वर्ष की आयु में परीक्षा होगी। इस परीक्षा में अनुतीर्ण होने वाले को राज्य के निम्न प्रशासनिक और सैनिक पदों पर नियुक्त किया जाएगा और जो उतीर्ण होंगे उनको आगे की शिक्षा पांच वर्षों तक दी जाएगी। इस स्तर के पाठ्यक्रम में छात्रों को द्वन्द्ववाद की शिक्षा दी जाएगी द्वन्द्ववाद के द्वारा प्रत्येक वस्तु के सार का ज्ञान प्राप्त होता है और विभिन्न शास्त्रों के पारस्परिक सम्बन्ध को जाना जाता है। समस्त विचारों में सर्वोच्च विचार 'सन्त' या 'शुभ' या 'शिव' है जो समस्त प्राण का कारण और ज्ञान का लक्ष्य है। प्लेटो के शुभ या सत्य का वही स्थान है जो वेदान्त में भ्रम का है। जो परम शुभ को जान लेता है वही सच्चा ज्ञानी है और इसलिए प्लेटो के अनुसार केवल वही शासन करने का अधिकारी है। प्लेटो की शिक्षा प्रणाली की पहली और सबसे मुख्य विशेषता यह थी कि प्लेटो ने अनिवार्य शिक्षा तथा राज्य नियन्त्रित प्रणाली का समर्थन किया है। प्लेटो ने शिक्षा को व्यक्तिगत विषय नहीं माना बल्कि एथेन्स में शिक्षा को सामाजिक विषय के रूप में प्रस्तुत किया। एथेन्स के लिए इस प्रकार की शिक्षा एक नवीन आविष्कार थी। प्लेटो की शिक्षा प्रणाली की अन्य विशेषता यह थी कि यह दोंनो स्त्री और पुरूष के लिए थी। उसने एथेन्स की पद्धति की कड़ी आलोचना की थी क्योंकि वहां स्त्रियों को केवल घरेलू शिक्षा दी जाती थी। उनका कार्य क्षेत्र केवल घर था। प्लेटो ने इस बात पर जोर दिया कि स्त्रियां पुरुषों के समान हैं, इसलिए उन्हें भी वही शिक्षा दी जानी चाहिए जो पुरुषों को दी जाती है और स्त्रियों को भी पुरुषों की ही भांति सार्वजनिक पद दिए जाने चाहिएं । प्लेटो की शिक्षा प्रणाली की यह भी विशेषता थी कि इसमें कृषकों और कारीगरों को भी मिलाया गया है। प्लेटो सभी साहित्य तथा कलाकृति पर कठोर नियन्त्रण के पक्ष में था ताकि बुरे नैतिक प्रभाव की कोई भी चीज युवकों के हाथों में न आए। नगर के युवकों को किसी बुरे साहित्य से पथ भ्रष्ट नहीं किया जाना चाहिए। साहित्य का सही अथवा गलत होने का निर्णय शासक ही करेंगे। प्लेटो की शिक्षा योजना प्रारम्भिक शिक्षा और उच्च शिक्षा दो भागों में बंटी हुई है। प्लेटो की शिक्षा का रूप मनोवैज्ञानिक है। उसके अनुसार मानव मन में ज्ञान का प्रसार ही शिक्षा है। उसके लिए वह आयु के अनुसार उचित वातावरण को महत्व देता है। अतः मनोविज्ञान के अनुसार वह अलग–अलग पाठ्यक्रम निश्चित करता हैं । प्लेटो ने उच्च शिक्षा में गणित का महत्व दिया है। प्लेटो की शिक्षा प्रणाली का लक्ष्य दार्शनिक राजा का निर्माण करना था। इसीलिए उसकी शिक्षा अधिकतर शासक वर्ग की शिक्षा पर जोर देती है प्लेटो की शिक्षा योजना का उसके आदर्श राज्य में विशेष महत्व है। वास्तव में उसका आदर्श राज्य उसकी शिक्षा का ही फल है। प्लेटो तत्कालीन यूनानी राजनीतिक व्यवस्था में अज्ञानता के कारण हुए दष्परिणामों को देख चुका था। इसीलिए उसने ऐसी शिक्षा व्यवस्था प्रस्तुत की जिससे शासक वर्ग कंचन और कामिनी के मोह से सर्वथा दूर रहकर अपना शासन सम्बन्धी कर्तव्य निष्ठापूर्वक सम्पन्न कर सकें । उसकी शिक्षा योजना नागरिकों में वांछित और कुशल गुणों का विकास करती है, उन्हें राजनीतिक जीवन में भाग लेने और विवेक के शासन द्वारा एकता के सूत्र में बांधती है। प्लेटो के ये विचार की ज्ञानी पुरुशों को ही शासन करना चाहिए, आधुनिक राजनीतिक समाजों के लिए महत्वपूर्ण हैं। प्लेटो ने शारीरिक और मानसिक दोनों प्रकार की शिक्षा की व्यवस्था की है। प्लेटो की शिक्षा योजना जीवन के सम्पूर्ण दृष्टिकोण को बदल कर बुराई की जड़ पर प्रहार करने वाला अस्त्र है। प्लेटो के 'एक समान शिक्षा' के विचार अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं । उसने पुरुषों एवं स्त्रियों को एक जैसी शिक्षा देने की बात की जो आधुनिक समय में बहुत महत्वपूर्ण है। प्लेटो की शिक्षा योजना इस प्रकार से प्रस्तुत की गई है जिससे समाज के सभी वर्ग अपने निर्दिश्ट कर्तव्यों का पालन कर सकें। प्लेटो शासक और सैनिक वर्ग को किस प्रकार की शिक्षा प्रदान करता है कि उनमें राजनीतिक चेतना और कर्तव्यपरायणता पनप सके । वास्तव में शिक्षा के द्वारा ही व्यक्तियों को अपने कर्तव्यों के प्रति सजग रखा जा सकता है। प्लेटो की शिक्षा योजना मानव आत्मा को विकसित करने का भी प्रयास करती है। प्लेटो मानव आत्मा को उस परिवेश में ले जाना चाहता था जो उसके विकास और उन्नयन के लिए सबसे अधिक अनुकूल हो । इसके लिए प्लेटो ने शिक्षा में संगीत को भी महत्व प्रदान किया है वास्तव में शिक्षा में संगीत को सम्मिलित किया जाना आत्मिक विकास के लिए बहुत आवश्यक है। प्लेटो की शिक्षा एकांगी नहीं है जैसा कि आलोचक मानते हैं। वह इस प्रकार की शिक्षा व्यवस्था करता है जिससे व्यक्ति का सर्वांगीण विकास सम्भव हो सके। उसकी शिक्षा मानसिक, शारीरिक, आत्मिक आदि तत्वों के विकास में मदद करती है। शिक्षा के द्वारा शुभ की प्राप्ति में आने वाली बाधाओं को दूर किया जा सकता है। शिक्षा मानव मन से अज्ञान रूपी अंधकार को मिटाती है। ज्ञान की ज्योति से समाज के समस्त वर्ग अपने कर्तव्य–पथ पर बढ़ते हैं जिससे राज्य में एकता और सुव्यवस्था कायम रह सकती है।

निष्कर्षः

शिक्षा न केवल सामाजिक कुरीतियों को दूर करने का साधन, बल्कि आत्म–समीक्षा का मन्त्र भी है । प्लेटो आजीवन शिक्षा व्यवस्था की योजना प्रस्तुत करता है जिसे मनुष्य सही ढंग से ग्रहण करके अपने मन और चेतना को सुसंस्कृत बना सकता है। यद्यपि प्लेटो शिक्षा पर कठोर नियन्त्रण रखने के पक्ष में था और उसके इन विचारों की आलोचना भी की गई है लेकिन प्लेटो के इस कथन से सभी सहमत हैं राज्य को अश्लील साहित्य पर कठोर नियन्त्रण लगाने चाहिएं । प्लेटो की शिक्षा का एक महत्व यह है कि यह उचित आयु में उचित शिक्षा व्यवस्था करती है । प्लेटो बालकों, किशोरों, युवकों और प्रौढ़ों के लिए अलग–अलग पाठ्यक्रम की व्यवस्था करता हैं। प्लेटो की शिक्षा योजना आधुनिक राज्यों के लिए प्रेरणा स्त्रोत है । उसकी शिक्षा सीमित नहीं निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है । केवल मानसिक नहीं,

धार्मिक, नैतिक तथा शारीरिक भी है; संकीर्ण नहीं, सर्वांगीण है।

सन्दर्भ सूची

1. पाश्चात्यराजनीतिक चिंतनः– डॉ. बी. एल. फडिया– साहित्य भवन पब्लिकेशन– आगरा
2. राजनीतिक चिंतन के आचार्य– खंड – लेखकः– माइकेलेवि फोस्टर अनुवादक डॉ. ओमप्रकाश गाबा–हिंदी माध्यम कार्यन्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय
3. पाश्चात्य राजनीतिक विचारक– ओमप्रकाश गाबा नेशनल पब्लिशिंग हाउस 2018
4. पाश्चात्य राजनीतिक विचारो का इतिहास– एच. सी. शर्मा ओमेगा पब्लिकेशन, न्यू दिल्ली 2020
5. Western Political Thought-O.P. Gauba- National Publishing House 2022

Dr. Raj kumar Siwach

Address: Associate Professor,

Govt. College Jassia (Rohtak)-124303

E-Mail ID:-drrajkumarsiwach45@gmail.com

Mob. No.:- 9466547277

8

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के साहित्य में जन जागरण

डॉ० किरण कुमारी

सारांश

भारतेन्दु एक महाप्राण साहित्यकार थे। मात्र पैंतीस वर्ष की अल्पायु में उन्होंने लगभग पौने दो सौ छोटे बड़े ग्रन्थों का प्रणयन कर अपनी अभूतपूर्व सृजनशीलता का परिचय दिया है। भारतेन्दु की राष्ट्रीय चेतना एकांगिनी नहीं है। वह सम्पूर्ण जीवन के परिष्कार का आन्दोलन है। भारतेन्दु ने कहीं सीधी तरह देश के राजनीतिक–आर्थिक परावलम्बन का अंकन किया है, कहीं हास–परिहास के माध्यम से तत्कालीन जीवन की विषमताओं और असंगतियों पर उंगली रख दी है। उनकी 'नये जमाने की मुकरियाँ' और 'चूरन के लटके' आज भी अपनी व्यंग्य–विच्छित्ति के लिए याद किये जाते हैं। इनकी लोकप्रियता ही इस बात का प्रमाण है कि इनका उन दिनों जन–जागरण में कितना योग रहा है।

भूमिका :–

हिन्दी साहित्य के इतिहास में नवयुग का उन्मेष भारतेन्दु हरिश्चन्द्र (जन्म–1850 ई० निधन–1885 ई०) से माना जाता है। भारतेन्दु एक ऐसे महाप्राण साहित्यकार थे, जिन्होंने अपने बहुमुखी सृजन द्वारा न केवल साहित्य के भण्डार में विपुल अभिवृद्धि की, बल्कि अपने स्निग्ध और मंजुल प्रकाश से उसे नयी राहों की ओर प्रेरित भी किया। मात्र पैंतीस वर्ष की अल्पायु में उन्होंने लगभग पौने दो सौ छोटे–बड़े ग्रन्थों का प्रणयन कर अपनी अभूतपूर्व सृजनशीलता का परिचय दिया है। लेकिन इससे भी बड़ा कार्य, जो उनके द्वारा सम्पन्न हुआ, वह था सहयोगी साहित्यकारों का एक विराट् संगठन, जिसके माध्यम से जनजागरण की ज्योतिशिखा प्रज्ज्वलित कर उन्होंने सचमुच 'जीवन और साहित्य के बीच गाँठ बाँध दी।' आचार्य रामचन्द्र शुक्ल लिखते हैं–

''भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का प्रभाव भाषा और साहित्य दोनों पर बड़ा गहरा पड़ा। उन्होंने जिसप्रकार गद्य की भाषा को परिमार्जित करके उसे बहुत ही चलता, मधुर और स्वच्छ रूप दिया, उसी प्रकार हिन्दी साहित्य को भी नये मार्ग पर लाकर खड़ा कर दिया। उनके भाषा–संस्कार की महत्ता को सब लोगों ने मुक्त कंठ से स्वीकार किया और वे वर्तमान हिन्दी गद्य के प्रवर्तक माने गये।''[1]

प्रसंगः–

भारतेन्दु ने समय की माँग को देखते हुए हिन्दी गद्य के लिए खड़ी बोली को सर्वथा उपयुक्त समझा। वे बहुमुखी प्रतिभा के धनी साहित्यकार थे। कविता, नाटक, निबन्ध, उपन्यास, साहित्यशास्त्र, भाषा विज्ञान, इतिहास, पुरातत्व, भूगोल–अर्थात् उनके समय तक की साहित्य और ज्ञान की कोई ऐसी शाखा नहीं जिसकी ओर उनका ध्यान न गया हो और जिस क्षेत्र में उन्होंने लेखनी न चलायी हो। आज उनसे बड़े कवियों का अभाव नहीं, उनसे सफल नाटककार मिल सकते हैं, उनसे श्रेष्ठ निबन्धकार भी हैं; मगर कोई ऐसा अकेला व्यक्तित्व नहीं, जो एक साथ ही कवि, नाटककार, निबन्ध लेखक, व्यंग्यकार, पुरातत्त्ववेत्ता, इतिहासज्ञ और पत्रकार रहा हो और सभी दिशाओं में उसकी उच्चता और श्रेष्ठता बनी हुई हो।

भारतेन्दु के भीतर सृजन का अदम्य उत्साह भरा था। वही जब लेखनी की नोंक से उतरा तो साहित्य का महनीय श्रृंगार बन गया। भारतेन्दु ने देशाटन किया था। इन यात्राओं में उन्हें अपने देश की दशा को निकट से देखने का अवसर मिला। इनमें उन्होंने देशवासियों की अशिक्षा, गरीबी और रूढ़िवादिता को देखा। इसीलिए भारतेन्दु के साहित्यसृजन की एक बहुत बड़ी विशेषता यह है कि केवल मनोविनोद के लिए लिखने वाले जीव न थे। उन्होंने देशवासियों को जगाने, उन्हें आत्मनिरीक्षण के लिए प्रेरित करने और प्रबुद्ध बनाने का एक निश्चित उद्देश्य सामने रखकर साहित्य देवता की आराधना की। इसीलिए उनके कृतित्व में तुलसी की भाँति 'स्वान्तः सुखाय' का 'बहुजनहिताय' से मणिकांचन योग हो गया है।

खड़ी बोली के माध्यम से उन्होंने पत्रकारिता, कहानी, निबंध, नाटक, समालोचना, जीवनी आदि गद्य की विभिन्न विधाओं का प्रवर्तन किया। नाटक चूँकि जनता के बीच खेले और देखे जाते हैं, अतः उन्होंने सर्वप्रथम नाटकों का प्रणयन किया। संस्कृत, बंगला के श्रेष्ठ नाटकों का हिन्दी नाट्य रूपान्तरण भी तैयार किया। नाटकों को अभिनीत करने के लिए रंगमंच बनाये। जनता के लिए बोधगम्य, सरल, सहज प्रवाही हिन्दी गद्य का सृजन किया, जिसे बाद में सभी ने स्वीकारा। भारतेन्दु का नाटककार रूप भी बड़ा प्रखर और विशिष्ट है। इसमें उनके गद्यकार और कविरूप का संगम भी हुआ है, क्योंकि उनके प्रायः प्रत्येक नाटक में सुन्दर, सरस कविताओं का समावेश हुआ है।

भारतेन्दु ने साहित्य को नवीन मार्ग दिखाया और वे उसे शिक्षित जनता के साहचर्य में ले आये। उनके मन में देशहित, समाजहित की नई उमंगें उत्पन्न हो रही थीं। भारतेंदु ने तत्कालीन जनता के मानसिक क्षितिज को विस्तृत करने का उद्योग किया था। भारतेन्दु ने आज से लगभग सौ वर्ष पूर्व 'कविवचनसुधा', 'हरिश्चन्द्र मैगजीन' (बाद में हरिश्चन्द्र चन्द्रिका) और बालाबोधिनी, जैसी पत्र–पत्रिकाओं का प्रकाशन किया था, 'कवितावर्द्धिनी सभा' और तदीय समाज की स्थापना की थी, 'पेनी रीडिंग क्लब' चलाया था, 'यंग मेन्स एसोसिएसन' कायम किया था और समाज–सेवा के दूसरे कार्यों के कारण विदेशी प्रभुओं के कोपभाजन बने थे। इन सबके पीछे उनकी जातीय गौरव की भावना और देशभक्ति की प्रेरणा ही वर्तमान है। राष्ट्रीय आन्दोलन को साहित्यिक रूप देने वालों में भारतेन्दु अग्रगण्य थे। उनके समय के साहित्य में राष्ट्रीयता की छाप थी और राष्ट्रीय जागृति के साथ लोग अपनी चीजों की ओर झुके। 'हिन्दू, हिन्दी, हिन्दुस्तान' की पुकार उठी और भारतेन्दु गा उठे ''निज भाषा उन्नति

अहै सब उन्नति को मूल। बिन निज भाषा ज्ञान के, मिटत न हिय को शूल।''

भारतेन्दु की यह उक्ति आज भी हमारे लिए कितनी सटीक और प्रेरक बनी हुई है।

बाबू गुलाबराय अपने ''हिन्दी साहित्य का सुबोध इतिहास'' में लिखते हैं:–

''भारतेन्दु को आधुनिक साहित्य का प्रवर्तक कहा जाता है। इन्होंने आधुनिक काल की सभी विधात्मक चेतनाओं का श्रीगणेश करने में अपना पूरा–पूरा योगदान दिया।''[2] भारतेन्दु ने कहीं सीधी तरह देश के राजनीतिक–आर्थिक परावलम्बन का अंकन किया है। कहीं हास–परिहास के माध्यम से तत्कालीन जीवन की विषमताओं और असंगतियों पर उँगली रख दी है। उनकी 'नये जमाने की मुकरियाँ' और चूरन के लटके आज भी अपनी व्यंग्य–विच्छित्ति के लिए याद किये जाते हैं। इनकी लोकप्रियता ही इस बात का प्रमाण है कि इनका उन दिनों जनजागरण में कितना योग रहा है। नौकरशाही के सबसे बड़े पाये 'पुलिस' के प्रति उनकी व्यंग्योक्ति ध्यान देने योग्य है–

''रूप दिखावत सरबस लूटै। फंदे में जो पड़ै न छूटै।

कपट कटारी हिय में हूलिस। का सखि साजन, नहि सखि पूलिस।।''[3]

जो लोग साहित्य को राजनीति का अनुचर मानते हैं, उन्हें भारतेन्दु की पंक्तियाँ ध्यान से देखनी चाहिए।

साहित्य की विभिन्न विधाओं में स्वयं भारतेन्दु ने नाटक को सर्वाधिक प्रश्रय दिया। राष्ट्रीय जागरण, सांस्कृतिक नवोत्थान और साहित्यिक चेतना के प्रचार–प्रसार के लिए 'नाटक' को उन्होंने सर्वाधिक सशक्त माध्यम के रूप में स्वीकार किया। उनके मौलिक नाटक हैं–''वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति; श्री चन्द्रावली; 'विषस्य विषमौषधम्' 'भारत दुर्दशा', 'नील देवी', 'अंधेर नगरी', 'प्रेमयोगिनी', 'सती प्रताप' और' 'सत्य हरिश्चन्द्र'। उनके अनूदित नाटक हैं–'विद्यासुन्दर', 'पाखण्ड विडम्बन' 'धनंजय–विजय' 'कर्पूर मंजरी', 'मुद्राराक्षस', 'भारत–जननी', 'दुर्लभ–बन्धु' और 'रत्नावली'।

भारतेन्दु ने अपने 'नाटक' नामक निबंध में नवीन नाटक रचना के पाँच उद्देश्य बताए हैं:– 1. शृंगार 2. हास्य, 3. कौतुक, 4. समाज–संस्कार, 5. देशवत्सलता। पहले तीन को चलता कर वे चौथे और पाँचवें प्रकार की ही व्याख्या करने बैठ जाते हैं। वे कहते हैं–''समाज संस्कार नाटकों में देश की कुरीतियों को दिखलाना मुख्य कर्त्तव्य कर्म है। यथा शिक्षा की उन्नति, विवाह संबंधी कुरीति निवारण अथवा धर्म सम्बन्धी अन्यान्य विषयों में संशोधन इत्यादि। किसी प्राचीन कथा–भाग का इस बुद्धि के संगठन कि, देश की उससे कुछ उन्नति हो इसी प्रकार के अंतर्गत हैं। इसके उदाहरण हैं–सावित्री चरित्र, दुःखिनी बाला, बाल्यविवाह, दूषक, जैसा काम वैसा ही परिणाम, जय नारसिंह की, चक्षुदान इत्यादि।''[4] भारतेन्दु ने इसमें अपने किसी नाटक की चर्चा नहीं की है। किन्तु उनका नाटक ''वैदिकी हिंसा'' और ''प्रेम जोगिनी'' ऐसे ही नाटक हैं। आगे वे राष्ट्रीय नाटकों की चर्चा करते हुए कहते हैं–''देश वत्सल नाटकों का उद्देश्य पढ़ने वालों व देखने वालों के हृदय में स्वदेशानुराग उत्पन्न करना है। और ये प्रायः करूण और वीर रस के होते हैं। उदाहरण–भारत जननी, नील देवी, भारत–दुर्दशा इत्यादि।''[5] भारतेंदु का प्रहसन 'अंधेर नगरी' भी इसी के अंतर्गत आएगा।

सामयिक उपादानों को लेकर लिखे गये नाटकों में भारतेन्दु कृत 'भारत दुर्दशा' उल्लेखनीय है। इसमें देश की तत्कालीन दुर्दशा का चित्र खींचा गया है और समाज की समस्याओं को प्रत्यक्ष करके उनके मूल में काम करने वाली बुराइयों को दूर करने की प्रेरणा दी गयी है। 'वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति' और 'अन्धेर नगरी' में व्यंग्यपूर्ण शैली में धार्मिक पाखण्डों का खण्डन हुआ है और सामाजिक कुरीतियों पर प्रहार किये गये हैं।

अपने मौलिक नाटकों के माध्यम से उन्होंने समाज में फैली कुरीतियों का पर्दाफाश किया है। 'पाखंड विखंडनम्' में धर्म के नाम पर होने वाले कुकृत्यों पर तीक्ष्ण व्यंग्य किये गये हैं। 'विषस्य विषमौषधम्' की रचना देशी राजाओं को सावधान करने के लिए की गयी है। इसमें भारतेन्दु ने यह बताया है कि यदि अपने देश के राजा लोग संभल न पाये तो उनके सभी राज्यों को अंग्रेज अपने अधिकार में कर लेंगे। 'भारत–दुर्दशा' में भारतेन्दु का देशप्रेमी रूप उभरकर सामने आया है। देश की दुर्दशा को देखकर भारतेन्दु का हृदय द्रवित हो गया। वे देख रहे थे कि देश की सारी सम्पत्ति को अंग्रेज लोग इंगलैंड लिये जा रहे हैं और यहाँ के लोग भूखों मर रहे हैं। इसीलिए उन्होंने इसमें अंग्रेजों को भारत–दुर्दैव के रूप में चित्रित करते हुए भारतवासियों के दुर्भाग्य की कहानी को यथार्थ रूप में चित्रित किया है।

वस्तुतः भारतेन्दु काल में नाटकों की रचना का मूल उद्देश्य मनोरंजन के साथ ही जन–मानस को जागृत करना और उसमें आत्मविश्वास उत्पन्न करना था। फलस्वरूप इनमें सत्य, न्याय, त्याग, उदारता आदि मानवीय मूल्यों के प्रति आस्था उत्पन्न करने, प्राचीन संस्कृति के प्रति प्रेम जगाने, अनुकरणीय पौराणिक एवं ऐतिहासिक चरित्रों के प्रति समाज को आकृष्ट करने और नवीनता की आँधी से समाज को सुरक्षित रखते हुए उसका सुधार एवं परिष्कार करने पर अधिक बल दिया गया है।

भारतेन्दु युग में जनचेतना पुर्नजागरण की भावना से अनुप्राणित थी, फलस्वरूप सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक क्षेत्रों में न केवल अतिरिक्त सक्रियता थी, अपितु इन सबमें गहन अन्तःसम्बन्ध विद्यमान था। भारतेन्दु ने जनता को उद्‌बोधन प्रदान करने के उद्देश्य से जातीय संगीत अर्थात् लोक गीत की शैली पर सामाजिक कविताओं की रचना पर बल दिया। मातृभूमि प्रेम, स्वदेशी वस्तुओं का व्यवहार, गोरक्षा, बाल–विवाह निषेध, शिक्षा प्रसार का महत्त्व, मद्य–निषेध, भ्रूण हत्या की निन्दा आदि विषयों को कविगण अधिकाधिक अपनाने लगे थे।

राष्ट्रीय भावना का उदय भी इस काल की अनन्य विशेषता है। ब्रह्मसमाज, प्रार्थना समाज, आर्य समाज, रामकृष्ण

परमहंस और विवेकानन्द के विचारों तथा थियोसोफिकल सोसाइटी के सिद्धान्तों का प्रभाव भी जन–जीवन पर पड़ रहा था। आर्थिक औद्योगिक और धार्मिक क्षेत्रों में पुनर्जागरण की प्रक्रिया आरम्भ होने लगी थी। पाश्चात्य शिक्षा प्रणाली ने शैक्षिक क्षेत्र में भी वैयक्तिक स्वतन्त्रता की प्रेरणा प्रदान की। अंगरेजी का प्रचार प्रसार यद्यपि जनता से सम्पर्क–साधन और प्रशासकीय आवश्यकताओं के लिए किया जा रहा था, पर अँगरेजी साहित्य के अध्ययन ने अन्य देशों के साथ तुलना का अवसर भी प्रदान किया और इस तरह राष्ट्रीय भावना के विकास के लिए उचित वातावरण बन सका। मुद्रण–यन्त्रों के विस्तार और समाचारपत्रों के प्रकाशन ने भी जनजागरण में योग दिया। साथ ही भारतीय शिक्षित समाज अंग्रेजी सभ्यता के रंग में बुरी तरह से रंगा जाने लगा। यह सब कुछ परोक्ष कूटनीति का परिणाम था, जिसकी प्रतिध्वनि हम भारतेन्द्र साहित्य में सुन सकते हैं :–

अंग्रेज राज सुख साज, सजे सब भारी।
पै धन विदेश चलि जात, यहै अति ख्वारी।।[6]

अथवा

''सर्बस लिए जात अंग्रेज, हम केवल लेक्चर के तेज।''[7]

विदेशी शासन के आर्थिक पहलू पर लिखी ये पंक्तियाँ कितनी अर्थपूर्ण हैं।

देश के उत्कर्ष–अपकर्ष के लिए उत्तरदायी परिस्थितियों पर प्रकाश डालकर भारतेन्दु ने जन–मानस में राष्ट्रीय भावना के बीज–वपन का महत्वपूर्ण कार्य किया। इस सन्दर्भ में उन्होंने अपने प्रतिपाद्य को कहीं व्यंग्योक्तियों के माध्यम से प्रकट किया है, तो कहीं अतीत के प्रेरणादायी प्रसंगों की चर्चा द्वारा नवयुवकों को पुनर्जागरण का मन्त्र दिया है। अंग्रेजों की शोषण नीति का भारतेन्दु द्वारा प्रत्यक्ष उल्लेख इस भावना की चरम परिणति हैः–

भीतर–भीतर सब रस चूसै, हंसि हंसि के तन–मन–धन मूसै
जाहिर बातन में अति तेज, क्यों सखि सज्जन! नहिं अंगरेज।

भारतेन्दु ने सामाजिक जीवन की उपेक्षा न कर जनता की समस्याओं के निरूपण की ओर पहली बार व्यापक रूप में ध्यान दिया। इसके पूर्व रीतिकाल में राजाओं और सामन्तों के आश्रय में लिखित दरबारी काव्य में सामाजिक परिवेश के चित्रण की ओर विशेष रूप में ध्यान दिया गया था। इसीलिए भारतेन्दु युग में नारी शिक्षा, विधवाओं की दुर्दशा अस्पृष्यता आदि को लेकर जो सहानुभूति पूर्ण कविताएँ लिखी गयीं उनके प्रतिपाद्य की नवीनता ने सहृदय समुदाय को विशेष रूप से आकृष्ट किया। इन समस्याओं को रूपायित करने के लिए कवियों ने एक ओर मध्यवर्गीय सामाजिक परिस्थितियों का चित्रण किया, तो दूसरी ओर रूढ़ियों का विरोध करते हुए विकास–चेतना की आकांक्षा को भी अभिव्यक्ति दी। भारतेन्दु ने 'भारत–दुर्दशा' नाटक में वर्णाश्रम धर्म की संकीर्णता का इन शब्दों में विरोध किया–

''बहुत हमने फैलाये धर्म, बढ़ाया छुआछूत का कर्म।''[8]

भारतीय अर्थ–व्यवस्था को सुदृढ़ करने की कामना से इस युग के कवियों ने स्वदेशी उद्योगों को प्रोत्साहन देने और स्वदेशी वस्तुओं का प्रयोग करने पर भी बल दिया। 'जीवत विदेश की वस्तु लै ता बिनु कछु नहिं करि सकत' के प्रतिपादक भारतेन्दु ने 'प्रबोधिनी' शीर्षक कविता में विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार की प्रत्यक्ष रूप में प्रेरणा दी है। साथ ही उन्होंने विदेशी वस्त्रों और अन्य वस्तुओं के आयात को भारत की आर्थिक दुर्गति का मूल कारण माना है।

कहाँ तो प्राचीन भारत की भौतिक और सांस्कृतिक समृद्धि और कहाँ अकाल, महँगाई, महामारी तथा करों के बोझ से त्रस्त जन जीवन! परिवार, समाज और देश की क्रमशः बढ़ती हुई हीनावस्था के चित्रण में भारतेन्दु की वाणी अनायास भींग उठी–

''रोवहु सब मिलि, आवहु भारत गाई।
हा! हा! भारत दुर्दशा न देखी जाई।''[9]

भारतेन्दु ने हिन्दी गद्य की भाषा में सामान्य जन के समझने योग्य भाषा का मानक रूप तैयार किया। उन्होंने संस्कृत के जन प्रचलित शब्दों को ही नहीं अपनाया, वरन् जनभाषा में घुल–मिल गये अरबी–फारसी के शब्दों के साथ उर्दू और अंग्रेजी के शब्दों का भी बिना संकोच के अपनी भाषा में प्रयोग किया। भाषा के साथ उन्होंने शैली के वैविध्य पर भी बल दिया। विभिन्न अवसरों पर उपयुक्त विभिन्न शैलियों का उन्होंने प्रयोग किया। एक ओर जहाँ उनकी शैली भावानुसारिणी होती थी तो वह आलंकारिक और सरस हो जाती थी तो दूसरी ओर तथ्य निरूपण के अवसर पर विवेचनात्मक भी हो जाती थी। बाबू गुलाब राय लिखते हैं–''भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की गद्य शैली मुख्यतः तीन प्रकार की कही जा सकती है–पहली, भावावेशमयी या कवित्वपूर्ण शैली जिसमें तद्भव शब्दों के साथ छोटे–छोटे वाक्यों का बाहुल्य रहता है। दूसरी, विचारपूर्ण या तथ्य–निरूपण की शैली, जिसमें विचारों की आवश्यकता के अनुकूल संस्कृत के तत्सम शब्दों का भी प्रयोग होता है। उनकी भाषा में चलते हुए उर्दू के शब्द विशेष सजीवता उत्पन्न कर देते हैं। भारतेन्दु जी की शैली का तीसरा प्रकार हास्य–व्यंगात्मक शैली का है, जिसमें उन्होंने आम बोलचाल की भाषा को अपनाया है।''[10]

भारतेन्दु की हास्य–व्यंग्य शैली का एक उदाहरण उनके अंग्रेजों को लिखे एक पत्र से दिया जाता है : ''खजाना तुम्हारा पेट है, लालच तुम्हारी क्षुधा है, सेना तुम्हारा चरण है, खिताब तुम्हारा प्रसाद है, अतएव हे विराट रूप अंग्रेज! हम तुमको प्रणाम करते हैं।''[11] अंधेर नगरी में पद्यात्मक व्यंग्य के बड़े सुन्दर उदाहरण भरे पड़े हैं–

''चूरन जब से हिन्द में आया।
इसका धन–बल सभी घटाया।
चूरन सभी महाजन खाते।
जिससे जमा हजम कर जाते।''[12]

रामविलास शर्मा का मंतव्य विचारणीय है–''आज साहित्य के आगे जन–हित की समस्या प्रधान है; उसी हित को देखकर भाषा का रूप भी निश्चित हो रहा है। जन–हित को ही ध्यान में रखकर सामाजिक संस्कृति स्थिर हो रही है। द्विवेदी–काल तथा छायावादी

युग में यह बात पीछे पड़ गयी थी। इसमें कोई संदेह नहीं कि भारतेन्दु युग कि भाषा में संस्कार की आवश्यकता थी और उसकी संस्कृति समाज–हित के साँचे में पूरी–पूरी न ढल पायी थी परन्तु पीछे भाषा–संस्कार और साहित्यिक संस्कृति ने जो रूप धारण किया, वह जन–हित की भावना से बहुत–दूर था। भारतेन्दु युग को पुनर्जीवित करने की आवश्यकता नहीं है; उस युग की निबलताओं को रंग–चुनकर सजाने की भी आवश्यकता नहीं है। हमें केवल इतिहास को क्रमबद्ध करके उससे अपना शृंखला–संबंध समझ लेना चाहिए।''[13]

भारतेन्दु युग नवोत्थान और जागरण का काल है। इस युग में अनेक सामाजिक एवं धार्मिक संस्थाओं और आंदोलनों ने जन्म लिया, विकास पाया एवं हिन्दू जीवन को झकझोरा। अपनी पुस्तक में गोपीनाथ तिवारी लिखते हैं–''कोई भी व्यक्ति युग से अछूता नहीं बचता। वरन् व्यक्ति का निर्माण अपने युग की परिस्थितियों से होता है और व्यक्ति की कृतियों में युग प्रतिबिम्बित होता है। किसी व्यक्ति की कृतियों के सम्यक् अध्ययन के लिए यह परमावश्यक है कि हम तत्कालीन परिस्थितियों का अध्ययन करें एवं उन परिस्थितियों के बीच में व्यक्ति के जीवन को पढ़ें।''[14]

निष्कर्ष :–

भारतेन्दु एक ओर जहाँ प्राचीनता के प्रेमी दिखाई देते हैं वहीं दूसरी ओर वे अर्वाचीनता की सूत्रधार भी हैं। वे तत्कालीन समस्याओं के प्रति जागरुक थे। उनके काव्य में राजभक्ति के साथ देशभक्ति है। उन्होंने विक्टोरिया की जमकर प्रशस्तियाँ लिखीं और ''अंग्रेज राज, सुख–साज' कहकर अपनी राजभक्ति का परिचय दिया वहीं अंग्रेजी शोषण ''यहै अति ख्वारी।'' आधुनिक युग का आलोचक भारतेन्दु की राजभक्ति को देखकर कभी–कभी उनकी राष्ट्रीयता के प्रति संशयालु हो उठता है किन्तु उस समय के साहित्यकार का हम सही मूल्यांकन तब तक न कर सकेंगे जबतक कि तत्कालीन राजनीति का स्वरूप न समझ लें। वस्तुतः देशभक्ति और राजभक्ति उस समय की राजनीति का अभिन्न अंग थी। हाँ, एक आश्चर्य अवश्य है कि उस समय के साहित्यकार की वाणी सन् 1857 की विशाल जनक्रांति के सम्बन्ध में नितान्त मूक है। भारतेन्दु जी का जन्म सन् 1857 की स्वतंत्रता क्रांति से सात वर्ष पूर्व और निधन कांग्रेस की स्थापना से एक वर्ष पूर्व हुआ। अतः भारतेन्दु की प्रारंभिक कविताओं में स्पष्ट रूप से राजभक्ति के दर्शन होते हैं, किन्तु ज्यों–ज्यों उनकी बुद्धि परिपक्व होती गई त्यों–त्यों उनकी वाणी पर देशभक्ति का रंग गाढ़ा होता गया, क्योंकि अब वे अंग्रेजों की शोषण–नीति को भली–भाँति जान गये थे। भारतेन्दु की जिस लेखनी ने अंग्रेजी–शासन की प्रशंसा के गीत लिखे थे वही बाद में विद्रोह की भयंकर चिनगारियों को उगलने लगी। भारतेन्दु युग में देशभक्ति और राजभक्ति कुछ ऐसी घुली–मिली हुई है कि कभी–कभी आलोचक को उस युग के कवि की राष्ट्रभक्ति पर संदेह होने लगता है। इस प्रकार का कोई निर्णय देने से पूर्व उस युग की परिस्थितियों का अध्ययन कर लेना अनिवार्य होगा। भारतेन्दु सच्चे देशभक्त थे इसमें कोई संदेह नहीं। उन्होंने तत्कालीन परिस्थितियों से संघर्ष करते हुए जनजागरण में अपना सर्वाधिक योगदान दिया। भारतेन्दु और उनके सहयोगियों की राजभक्तिपरक उक्तियाँ कोरी चाटुकारिता नहीं हैं। उनके पीछे पीढ़ियों के संस्कार मुखरित हैं। राजभक्ति से देशभक्ति की ओर क्रमशः झुकाव भारत की राष्ट्रीय चेतना के ही विकास का इतिहास है। भारतेन्दु का वैशिष्ट्य यह है कि उनकी राष्ट्रीय चेतना एकांगिनी नहीं है। वह सम्पूर्ण जीवन के परिष्कार का आन्दोलन है। इसीलिए उसके विस्तृत पाठ में समाज सुधार, आर्थिक आत्मनिर्भरता, जातीय गौरव, मातृभाषा के प्रचार आदि की अनेक छोटी–बड़ी लहरें समाहित हो गयी हैं।

संदर्भ सूची :–

1. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, विक्रम संवत् 2048, पृ0सं0–246
2. बाबू गुलाब राय, हिन्दी साहित्य का सुबोध इतिहास, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा, 2008, पृ0सं0–130
3. रामविलास शर्मा, भारतेन्दु युग और हिन्दी भाषा की विकास परम्परा, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 1975, पृ0सं0–103
4. भारतेन्दु ग्रंथावली, सं0 श्री ब्रजरत्न दास, प्रथम भाग, पृ0सं0–720
5. वही, पृ0सं0–721
6. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, भारत दुर्दशा, Palm Leaf Press, पृ0सं0–8
7. रामविलास शर्मा, भारतेन्दु युग और हिन्दी भाषा की विकास परम्परा, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 1975, पृ0सं0–104
8. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, भारत दुर्दशा, Palm Leaf Press, पृ0सं0–8
9. वही, अंक–3, पृ0सं0–11
10. बाबू गुलाब राय, हिन्दी साहित्य का सुबोध इतिहास, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा, 2008, पृ0सं0–118
11. वही, पृ0–118
12. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, अंधेर नगरी, अंक–2, सं0 डॉ0 रमेश गुप्ता, श्रीप्रकाशन, दिल्ली, 1981, पृ0सं0–19
13. रामविलास शर्मा, भारतेन्दु युग और हिन्दी भाषा की विकास परम्परा, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 1975, पृ0सं0–10
14. गोपीनाथ तिवारी, भारतेन्दु के नाटकों का शास्त्रीय अनुशीलन, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली–6, 1971, पृ0सं0–32

डॉ० किरण कुमारी
असिस्टेन्ट प्रोफेसर
स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग
डोरण्डा महाविद्यालय,राँची
ईमेल : kirankumari6163@gmail.com
मोबाइल नं– 9431767451, 8340560826

डॉ0 जोगेन्द्र कुमार के काव्य में नारी विमर्श

डॉ. सुखवीर सिंह

सारांश

पुरातनकाल से ही समाज में नारी का विशेष स्थान रहा है। हमारे पौराणिक धर्म ग्रन्थों में नारी को पूजनीया माना गया है। मनुस्मृति में नारी महिमा के उच्चकोटि के दर्शन होते हैं। जिसमें कहा गया है कि– यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः अर्थात् जहाँ नारियाँ पूजी जाती हैं, वहाँ देवता निवास करते हैं। किन्तु कालान्तर में भारतीय समाज में नारी सदैव अपने अधिकारों से वंचित रही है। नारी को पुरुष का आश्रित बना दिया गया। पुरुष ने स्वयं का वर्चस्व स्थापित करने के लिए नारी को अपनी अनुगामिनी घोषित कर दिया।

किसी भी समाज के सुसंस्कृत एवं विकास की ओर अग्रसर होने की पहचान नारी से ही होती है। यदि नारी के प्रति निरन्तर भेदभाव, निरादर होता रहा तो समाज या राष्ट्र का विकास सम्भव नहीं हो सकता। प्रेमचन्द से लेकर आज तक अनेक लेखकों ने नारी समस्या को अपना विषय बनाया है, लेकिन उस रूप में नहीं लिखा जिस रूप में आधुनिक कवि डॉ. जोगेन्द्र कुमार ने नारी के प्रति हो रहे अत्याचारों, भेदभाव तथा तिरस्कार जैसी वेदना को जाना है तथा उसे अपने काव्य में मुखरित किया है। इनकी कविताओं में नारी को अपनी शक्ति पहचानने, अपने अधिकारों एवं कर्तव्यों के प्रति जागरूक रहने की गूंज सर्वत्र सुनाई पड़ती है। वर्तमान समाज में नारी प्रत्येक क्षेत्र में अपना अमूल्य योगदान दे रही है। नारी के समुचित सम्मान पर बल देते हुए डॉ. जोगेन्द्र कुमार नारी को ईश्वर की अनुपम रचना कहते हैं। नारी के बिना समाज का अस्तित्व नहीं था। नारी महिमा का गुणगान करते हुए कवि ' नारी का सम्मान करो रे' शीर्षक कविता में कहते हैं–

नारी का सम्मान करो रे, करो नहीं उसका अपमान।
ईश्वर की ये अनुपम रचना, मानव जीवन का वरदान।।
अस्तित्व नहीं था लहरों का, जलधि यदि नहीं होता आज।
शक्ति भक्ति जगत की जननी, बिन नारी न होता समाज।।1

नारी के प्रति हो रहे अपमान, दुराचार को देखकर कवि का हृदय नारी महिमा का बखान इस प्रकार करता है–

नारी जग की तारिणी, नारी जग आधार।
नारी जग की शक्ति है, नारी से संसार।।2

यहाँ कवि का उद्देश्य नारी को उनका सम्मान दिलाना है। बिना नारी संसार की कल्पना असम्भव है। नारी के विभिन्न रूपों का यथा माता, पत्नी, बहन, बेटी आदि का कवि ने अपने काव्य में वर्णन किया है। नारी श्रद्धा के योग्या है, पूजनीया है।

नारी से ही है सुता, नारी से ही मात।
नारी बहना रूप है, श्रद्धा की सौगात।।3

नारी हर युग में पूजनीया थी और है। ' हर युग में मैं पूज्या नारी' कविता में सतयुग, त्रेता और द्वापर की नारी में शक्ति, त्याग व धर्म का अद्भुत वर्णन मिलता है।4 वर्तमान युग में कहीं नारी की अस्मिता का हनन हो रहा है तो कहीं दहेज की आग में जलाई जा रही है। गली, बाजार व सार्वजनिक स्थानों पर महिलाओं को कुछ दुष्ट पिशाचों द्वारा घूरा जा रहा है। समाज में इस प्रकार के भेड़िए अकेली बहन बेटी को देझकर झपट पड़ते हैं। सहमी बहन बेटियाँ अपनी सहायता की भीख मांगती हैं। समाज में इन कुकृत्यों को देख महिलाओं को उनकी शक्ति याद दिलाते हुए कवि कहते हैं–

रौंद रहा नर हर पल तुमको, कर– कर अत्याचार।
सम्भल जरा ए नारी अब तो, उठा क्रोध हथियार।।
निज दिल की अग्नि में जला दो, दुष्टों का अभिमान।
जागो नारी जागो री अब, बहुत सहा अपमान।।5

जगह–जगह नारी का अपमान देखकर व नारी को असहाय देखकर कवि हृदय नारी को चेताता हुआ उसकी शक्ति याद दिलाता है तथा स्वयं नारी को ही अपना पहरेदार बनाने की प्रेरणा देता है–

बहुत हुआ है मर्दन तेरा
तुमको अब डटना होगा।
मन में भर विश्वास सदा ही
खल–दल से लड़ना होगा।।
नैन नीर नदियों सा बहता
दिल सागर से गहरा है।
कोमल सी कंचन काया का
देना खुद ने पहरा है।।6

समाज में लड़कियों के जन्म को भार स्वरूप माना जाता है। अतः उन्हें जन्म से पहले ही मरवा दिया जाता है। बेटी को कभी भार स्वरूप माना जाता है तो कभी शान के खिलाफ व पराई मानी जाती है। अतः उसे उसके अधिकारों से वंचित रखा जाता है। कवि ने 'बेटी की अभिलाषा' कविता में बेटी की रचनात्मक एवं सकारात्मक सोच का परिचय दिया है–

चाह नहीं मैं घर वालों का
मान कहीं पर खो आऊँ।
चाह नहीं मैं अपने घर की
बात कहीं पर बतलाऊँ।।
चाह नहीं मैं सारा दिन ही
खाली बैठी इठलाऊँ।
चाह नहीं मैं किसी क्षेत्र में
बेटों से कम रह पाऊँ।।
मुझे जन्म से पहले माता

कूड़े में न देना फेंक।
थोड़ा सा अवसर मुझको दो
बन दिखाऊँ बेटी नेक।।7

बेटी के प्रति नकारात्मक सोच रखने वालों को बेटी की महत्ता बताते हुए कवि कहते हैं—

बेटी तो वह पेड़ है, जहाँ रहे दे छाँव।
करती अपना कर्म है, पति घर हो या गाँव।।8

बेटियों की कर्मनिष्ठा, कर्तव्यपरायणता व सहनशीलता का परिचय देते हुए कवि बहुत ही सुन्दर एवं सरल शब्दों में कहते हैं—

करे पढ़ाई साथ में, रखे काम से मेल।
भूल गई निज फर्ज में, सब गुड्डों का खेल।।9
सब सहती हैं बेटियाँ, मिले छाँव व धूप।
सच में बेटी तो लगे, यहाँ धरा का रूप।।10

डॉ. जोगेन्द्र कुमार ने अपने काव्य में नारी की विभिन्न पहलुओं और विभिन्न रूपों का सरल शैली में वर्णन किया है। बहन का अपने भाई के प्रति प्रेम का प्रदर्शन कवि ने इस प्रकार किया है—

छोटी हो या हो बड़ी, करे भ्रात से नेह।
दुख भाई का देखकर, हो नैनों से मेह।।11

बहन अपने भाई को दुःखी नहीं देखना चाहती। वह सदैव भाई के सुख की कामना करती है तथा अपने भाई पर बहुत गुमान करती है। कवि का कथन देखिए—

भाई मेरा खुश रहे, देती ये वरदान।
पति से बढ़कर भ्रातृ पर, करती बहन गुमान।।12

नारी का सर्वोत्तम रूप उसका मातृत्व है। क्योंकि इसी के माध्यम से वह संसार में अनुपम योगदान देती है। माँ की महिमा अपरम्पार है। माँ शक्ति की देवी है। त्याग की मूर्ति है। ममता की खान है। संसार में माँ का स्थान सर्वोपरि है। माँ जगज्जननी है। संसार की निर्मात्री है। माँ के ममत्त्व और महत्त्व को सिद्ध करते हुए कवि कहता है—

माँ मूरत है नेह की, और त्याग है नाम।
माँ ही सारे तीर्थ है, माँ ही चारों धाम।।13

माँ परिवार को जोड़े रखती है। वह अपनी संतान की रक्षा के लिए खुद म्यान स्वरूप है। उनकी ममता ऐसे बरसती है, जैसे बादल बरस रहा हो। अपनी देह की परवाह किए बिना ही औलाद को फसल के समान अपनी ममता से सींचती रहती है। ' माँ ममता की खान' कविता में कवि कहता है—

काम काज में लगी वह, सबका रखती ध्यान।
रक्षा निज सन्तान की, करती बनके म्यान।।14
माँ सावन बदली सदृश, बरसे ममता मेह।
फसल ज्यूँ औलाद को, सींचे खोकर देह।।15

इसी प्रकार 'माँ की महत्ता' नामक कविता में माँ का यशोगान करते हुए माँ को प्रकृति के समान दिखाया गया है। जिस प्रकार प्रकृति ने जीव को जीने के लिए हवा और पानी दिया है, उसी प्रकार माँ भी अपनी सन्तान के लिए प्रकृति जैसी भूमिका निभाती है। कवि का कथन है—

माता गङ्गा की धारा सी, माँ सुखद पवन का झोंका है।
माता कदली सी कोमल है, माता जीवन की नौका है।।16

पुरुष प्रधान समाज ने नारी की अनदेखी होती है। नारी का एक रूप पत्नी का भी होता है। परन्तु समाज नारी के पत्नी रूप को पुरुष के पैर की जूती समझता है। वह उसका उतना सम्मान नहीं करता जितने की वह हकदार है। ऐसे निकृष्ट सोच के व्यक्तियों को कवि पत्नी की परिभाषा समझाते हुए कहते हैं—

'पत' होता गिरना यहाँ, ' नी' ले जाना अर्थ।
ले जाने में सुपथ पर, पत्नी बड़ी समर्थ।।17

कवि कहता है कि यदि पत्नी को समुचित प्यार मिले, उसका अधिकार मिले तो पत्नी से सच्चा मित्र पुरुष का दूसरा नहीं हो सकता। वह पति के हर सुख दुख में साथ रहती है। पति को हौंसला देती है।

दुनिया में दूजा नहीं, पत्नी जैसा साथ।
सुख दुख में पति से सतत, चले मिलाकर हाथ।।18
संकट घर में हो अगर, पत्नी ले सम्भाल।
देकर पति को हौंसला, कर देती खुशहाल।।19

पत्नी भूखी रहकर भी घर का ध्यान रखती है। इसी संदर्भ में कवि कहता है—

जूती समझ न पैर की, पत्नी घर की शान।
खुद बेशक भूखी रहे, घर का रखती ध्यान।।20

कवि कहता है कि पत्नी आजीवन पति का साथ देती है। अतः उसका आदर आवश्यक है। आधुनिकता की चकाचौंध और बढ़ती महंगाई में निरन्तर मनुष्य धन की ओर अग्रसर है। वह धन कमाने की अन्तहीन लालसा में अपने घर— परिवार से दूर होता जा रहा है। इस प्रकार की वर्तमान स्थिति पर गहरा कटाक्ष करता हुआ कवि कहता है—

बहू पुत्र को ले गई, पुत्री को दामाद।
आजीवन पत्नी करे, पास बैठ संवाद।।21

चाहे सीता हो, उर्मिला हो या मैत्रेयी हो, सबकी एक ही नियति रही है। सभी ने सुख सुविधाओं को त्यागकर दुःखों की परवाह किए बिना केवल पत्नी धर्म निभाया है। 'पत्नी धर्म' कविता में कवि कहता है—

सीता उर्मिला मैत्रेयी ने पत्नी धर्म निभाया था।
नहीं किया था लोभ राज का पति परमेश्वर भाया था।।
सुख दुःख में सदा ही पत्नी निज पहचान कराती है।
पति का दिल से मान करे जो वह पत्नी कहलाती है।।22

डॉ. जोगेन्द्र कुमार के काव्य में नारी सशक्तिकरण की भावना सर्वत्र दृष्टिगोचर होती है। वर्तमान में नारी असहाय व सुरक्षित नहीं है। स्वावलंबन, आत्मपरायण, स्वातंत्रयभाव के बल पर आज नारी सभी क्षेत्रों में अपना विशिष्ट योगदान दे रही है। चूल्हा चौकी से लेकर राष्ट्र की सीमा तक आज नारी पुरुष का कंधे से कंधा मिलाकर राष्ट्रोन्नति में महतीं भूमिका निभा रही है। अपने अधिकारों के प्रति जागरूक है। अतः डॉ. जोगेन्द्र कुमार ने अपनी कृति 'अनुपमा' में नारी के महत्त्व की प्रतिष्ठा को नारी के विभिन्न रूपों में पिरोया है। अपनी कृति के माध्यम से नारी में स्वाभिमान और आत्मसमर्पण की भावना को उजागर किया

है। कवि ने नारी की शक्ति, भक्ति, संवेदनशीलता, ममता, करुणा को एक साथ अपने काव्य में पिरोकर समाज में नारी के पूजनीय चरित्र का सांगोपांग वर्णन किया है।

सन्दर्भ सूची

1.डॉ. जोगेन्द्र कुमार, ''अनुपमा'' (नारी का सम्मान करो रे) पृष्ठ 12

2. वही , 'नारी जग की तारिणी' पृष्ठ 14

3. वही, पृष्ठ 14

4. वही, ' हर युग में मैं पूज्या नारी' पृष्ठ 16

5. वही, 'जागो नारी जागो री अब' पृष्ठ 23

6 वही, 'सच कहता हूँ सुन लो नारी' पृष्ठ 28

7. वही, 'बेटी की अभिलाषा' पृष्ठ 48

8. वही, ' बेटी है तो सृष्टि है' पृष्ठ 40

9. वही, पृष्ठ 41

10. वही, पृष्ठ 41

11. वही, ' भगिनी' पृष्ठ 69

12. वही, पृष्ठ 68

13. वही, ' माँ ममता की खान' पृष्ठ 75

14. वही, पृष्ठ 74

15. वही, पृष्ठ 74

16. वही, ' माता की ममता' पृष्ठ 88

17. वही, 'पत्नी की परिभाषा' पृष्ठ 91

18. वही, पृष्ठ 91

19.वही, पृष्ठ 91

20. वही, पृष्ठ 91

21.वही, पृष्ठ 93

22. वही, 'पत्नी धर्म' 95

डॉ0 सुखवीर सिंह

सहायक प्रोफेसर शारीरिक शिक्षा विभाग ,

राजकीय महाविद्यालय हिसार।

10

डॉ0 गिरिराज शरण अग्रवाल के काव्य में नारी शोषण

डॉ0 प्रवीण कुमार वर्मा

सारांश

नारी ईश्वर की श्रेष्ठतम रचना है। संसार में जो कुछ सत्य है, सुन्दर है, नारी उसका प्रतीक है। प्राचीन काल में भारतीय नारी को पुरुषों के समान अधिकार प्राप्त थे। उसी का परिणाम है कि प्राचीन भारतीय संस्कृति में अनेक ऐसी आदर्श नारियां हैं जिनके ऊपर भारतीय संस्कृति और नारी जाति को गर्व है। सावित्री, सीता, उर्मिला, अपाला, गार्गी अनेक ऐसी नारियां हैं जिन्होंने अपने तप, विद्वता, त्याग और प्रेम से समाज में अत्यन्त ऊंचा स्थान ग्रहण किया है। धीरे–धीरे नारी की दशा गिरने लगी।

वह केवल पति की दासी बनकर रह गई है। नारी पुरुषों का उत्पीड़न सहन करती आ रही है। नारी की दशा दयनीय हो गई है। आज वह पूज्या से भोग्या बनकर रह गई है। नारियों की घोर उपेक्षा की जा रही है। जबकि भारतीय संविधान में उन्हें पुरुषों के बराबर अधिकार दिये गये हैं। परन्तु पर्दा प्रथा, अनमेल विवाह, दहेज प्रथा के कारण नारी का जीवन पुरुषों ने नरक बना दिया है। डॉ० गिरिराजशरण अग्रवाल ने नारी शोषण एवं अत्याचार की चक्की में पिसती नारी की दयनीय स्थिति पर व्यंग्य किया है– हां, तो माइक पर निरन्तर जानकी बाई की आवाज गूंज रही थी। वह कह रही थी कि अब परम्परा बदलनी चाहिए। महिलाएं ही पुरुषों का उत्पीड़न क्यों सहन ष्करें और कब तक सहन करें? अब पुरुषों को भी महिलाओं के उत्पीड़न का मजा चखाना होगा। इतना कहकर श्रीमती बाई ने उपस्थित पत्नियों को जानकारी दी कि अमेरिका जैसे विकसित देश में भी हाल ही में एक पति उत्पीड़न क्लब का गठन किया गया है। हमें आशा है कि इस प्रकार के क्लब और देशों में भी बनेंगे। भारत के एक –एक शहर एक–एक गांव में इसकी शाखाएं खोली जाएंगी। भारत के बाद ऐसी ही समितियां बंगलादेश में बनेंगी, पाकिस्तान में बनेंगी, श्रीलंका, अफगानिस्तान, ईरान, रूस, इंग्लैण्ड, जर्मनी, जापान हर जगह बनेंगी, क्योंकि हर जगह पतियों द्वारा पत्नियों का उत्पीड़न किया जा रहा है। कितनी सदियों से हम पुरुषों का शोषण उत्पीड़न सहती आई है, अब बारी मर्दों की है। आपने बहनो, भारत में प्रचलित वह कहावत अवश्य सुनी होगी, जिसमें कहा गया है कि कभी नाव गाड़ी में, कभी गाड़ी नाव में, यानि पतियों की नाव अब हम पत्नियों की दोपहिया गाड़ी पर नहीं लादी जाएगी, हमारी गाड़ी उनकी नाव पर लदेगी और नाव के तूफान में फंस जाने इसे खेने और बचाने की जिम्मेदारी पुरुषों की होगी।

डॉ० अग्रवाल ने नारी शोषण व उत्पीड़न के विरुद्ध एक आन्दोलन चलाया है। जो भारत में ही नहीं बल्कि विश्व के अनेक देशों की नारियों के द्वारा चलाया जाएगा। यह आन्दोलन चले या न चले हां नारी शोषण व उत्पीड़न आन्दोलन पर व्यंग्य अवश्य ही शिक्षाप्रद है।

डॉ० गिरिराजशरण अग्रवाल नारी शोषण और उत्पीड़न को रोकने के लिए परलोक की सत्ता को भी परमपिता के स्थान पर महामाता को सौंप देना चाहते हैं। डॉ० अग्रवाल ने अपने व्यंग्य द्वारा निश्चय कर लिया है कि वे नारी उत्पीड़न को हर हालत में समाप्त करवायेंगे और पृथ्वीलोक तथा परलोक दोनों में नारियों की सत्ता स्थापित करेंगे। इसी पर उन्होंने व्यंग्य किया है–श्इस लोक की सत्ता हथियाने के लिए पुरुषों द्वारा परलोक की सत्ता का ही दुरुपयोग किया जाता है। यह तो आप वर्षों से बल्कि जीवन भर से देखती आई हैं। पुरुष समाज भगवान के नाम पर, दीन–धर्म के नाम पर जितना शोषण, उत्पीड़न महिलाओं का करता आया है, उतना किसी और नाम पर नहीं कर सका। इसलिए मेरा मानना है, और मेरे साथ आपको भी यह मानना होगा कि यदि एक बार संसार के सृष्टा का लिंग परिवर्तन कर दिया जाए तो वह परमपिता के स्थान पर महामाता का रूप धारण कर ले तो नारी समाज की सारी समस्याएं – चुटकी बजाते हल हो जाएं।

भगवान का लिंग–परिवर्तन जरूरी है।श्भगवान का लिंग परिवर्तन जरूरी है।

डॉ० अग्रवाल के व्यंग्यानुसार परलोक की सत्ता महिलाओं के हाथों में आते ही, इस लोक की सत्ता भी महिलाओं के हाथों में होगी। जिससे कि पुरुष नारियों का शोषण और अत्याचार बंद कर देंगे।

डॉ० गिरिराजशरण अग्रवाल के व्यंग्यानुसार नारी शोषण की चक्की में पिसती आ रही है। आज तक समाज के प्रत्येक वर्ग द्वारा नारी के भोलेपन का लाभ उठाकर उसे छला जाता रहा है। अपना सर्वस्व समर्पण करके जिस व्यक्ति के साथ उसने जीवन के सुनहरी सपने देखे, वह भी उसे समान अधिकार देने के लिए तैयार नहीं है। डॉ० अग्रवाल ने अपने व्यंग्य लेख श्नारीवाद–पुरुषवाद में पति–पत्नी ने मिलकर एक पुस्तक लिखी है। परन्तु पति अपना नाम पहले और पत्नी का नाम बाद में प्रकाशित करवाना चाहते हैं। इसी बात को लेकर दोनों झगड़ा होता है, देखिए हमने समझाने का एक और फार्मूला पेश किया, श्आप अपना नाम नीचे न छपवाकर डॉ० माथुर के बराबर में क्यों नहीं छपवा लेती।

नहीं, नहीं, यह बराबरी दिखाने की होती है मेहता ही। कहने को ाबरी, लेकिन पुरुष यहां भी प्रथम बना रहता है ज्यों का त्यों। अब यह पुरुषवाद नहीं चलेगा, हरगिज नहीं चलेगा।

बराबरी, लेकिन पुरुष यहां भी प्रथम बना रहता है ज्यों का त्यों। अब यह पुरुषवाद नहीं चलेगा, हरगिज नहीं चलेगा।

देखता हूँ कौन रोकता है। डॉ०– माथुर बोले।

हम रोकेंगे, हमश् श्रीमती माथुर के डंके पर एक और घोट मारी। यह सिद्धान्त मानना होगा, वर्ना पुस्तक नहीं छपेगी। फिर तकरार और तेज हो गई। ष्लेडिज फर्स्ट । श्रीमती माथुर चिल्लाई, नहीं छपेगी, न छपे। डॉ० माथुर ताव में भस्कर अपनी सीट से उठ खड़े हुए। अगले ही पल हमने देखा कि पांडुलिपि के पुर्जे पुर्जे फर्श पर दूर तक बिखरे पड़े थे।डॉ० अग्रवाल ने अपनी व्यंग्य कविता तकरार का आधार के अनुरूप ही उक्त व्यंग्य लेख लिखा है नारी शोषण एवं अत्याचार तथा उनके साथ बलात्कार को अपने व्यंग्य साहित्य में पर्याप्त स्थान देकर डॉ० गिरिराज शरण अग्रवाल ने पाठक–वर्ग को सोचने के लिए विवश कर

दिया है। अनेक नारियों के साथ प्रतिदिन बलात्कार होते हैं, पुलिस मूक दर्शन बनी देखती है। यदि पुलिस की सहायता लेने का प्रयास भी किया जाता है तो वह भी सहायता करने में असमर्थ रहती है। जिसका परिणाम होता है कि पुनः बलात्कार और फिर पुनः बलात्कार नारियों पर हो रहे इस अत्याचार का सही चित्रण डॉ० अग्रवाल ने अपने व्यंग्य लेख चिन्ता है तो सब कुछ है में व्यंग्य द्वारा किया है– महिलाओं के प्रति अन्याय की घटनाओं में दिन पर दिन वृद्धि हो रही है लेकिन सरकार सब कुछ देखते हुए भी कुछ नहीं कर पा रही है। विपक्ष के एक सम्मानित सदस्य का आरोप था कि अमुक विश्वविद्यालय के छात्रावास में एक निरीह छात्रा के साथ सामूहिक बलात्कार हुआ। बलात्कार के नामजद अभियुक्त पुलिस को ठेंगा दिखाते हुए खुले घूमते रहे। उन्हें गिरफ्तार कर जेल नहीं भेजा गया। परिणाम यह हुआ कि फिर बलात्कार किया गया। एक और सज्जन ने अपने फेफड़ों की पूरी शक्ति से चिल्लाकर कहा कि उसके क्षेत्र में लगभग एक दर्जन दलित महिलाओं को निर्वस्त्र करके सरेआम नंगा घुमाया गया है, किन्तु प्रशासन के कान पर जूं तक नहीं रेंगी। एक और सदस्य ने खेत में काम करने वाली महिलाओं को पुरुषों के बराबर मजदूरी न दिए जाने का मामला उठाया, अगले दिन अखबार में सरकार का वक्तव्य छपा, जिसमें कहा गया था कि सरकार महिलाओं के प्रति बढ़ते अत्याचारों को सहन नहीं करेगी। सरकार ने ऐसे अपराधों पर भारी चिन्ता व्यक्त की है।

नारियों पर हो रहे इन अत्याचारों पर सरकार केवल चिन्ता व्यक्त करती है। प्रयोगात्मक रूप से कुछ नहीं करती। डॉ० अग्रवाल ने भी इसी बात की अनुभव परन्तु किया है।

डॉ० गिरिराजशरण अग्रवाल भी समाज के एक प्रतिष्ठित साहित्यकार हैं, अतः उन्होंने भी नारी अत्याचारों को अपने व्यंग्य लेखों का अनिवार्य अंग बना लिया है। डॉ० अग्रवाल इसी पर व्यंग्य करते हुए लिखते हैं कि– भूतपूर्व मेजर तुक्कासिंह के अनुसार उनकी सेना अब किसी कीमत पर यह बात सहन नहीं करेंगी कि समाचार पत्रों में बलात्कार की खबरें प्रकाशित हाँ। किसी अखबार का यह लात्कार किए जाने की बात कही हो, एकदम सामान्य और महत्त्वहीन है क्योंकि बलात्कार हमारे समाज का अभिन्न अंग बन चुका है। अब इनके प्रकाशन से न तो पुलिस चौंकती है, न सरकार चाँकती है, न जनता बौखलाती है, न हमें तुम्हें शर्म आती है। तब ऐसे समाचार छापने का लाभ ही क्या? मेजर तुक्कासिंह का दावा है कि बलात्कार और सामूहिक बलात्कार के समाचार पुलिस–प्रशासन आदि को न तो सचेत करते हैं और न लज्जित । उलटे भविष्य में बलात्कार करने की इच्छा रखने वालों को हौंसला देते हैं और उनका मनोबल बढ़ाते हैं। ऐसे तमाम समाचारों का प्रकाशन तुरन्त बन्द होना चाहिए, क्योंकि अब ये सामान्य घटनाएं हैं और इन्हें समाचार ने एक अनिवार्य सच्चाई के रूप में स्वीकार कर लिया है।

लिखना कि स्कूल की एक छात्रा के साथ पांच सशस्त्र गुंडों ने सामूहिक बलात्कार किया और पीड़ित छात्रा को बेहोशी की हालत में छोड़कर फरार हो गए, पुलिस सरगर्मी से बलात्कारियों की तलाश कर रही है, अथवा ऐसा समाचार देना कि राजकीय चिकित्सालय में काम करने वाली एक नर्स के साथ डॉक्टर द्वारा इमरजेंसी रूप में दिन–दहाड़े बलात्कार किया गया. अस्पताल का प्रशासन घटना को रफा–दफा करने का प्रयास कर रहा है अथवा कोई ऐसा समाचार छापना, जिसमें कुछ सशस्त्र व्यक्तियों द्वारा घर में घुसकर महिला के साथ उसके पति की उपस्थिति में बारी–बारी से बलात्कार किए जाने की बात कही हो, एकदम सामान्य और महत्त्वहीन है क्योंकि बलात्कार हमारे समाज का अभिन्न अंग बन चुका है। अब इनके प्रकाशन से न तो पुलिस चौंकती है, न सरकार चाँकती है, न जनता बौखलाती है, न हमें तुम्हें शर्म आती है। तब ऐसे समाचार छापने का लाभ ही क्या? मेजर तुक्कासिंह का दावा है कि बलात्कार और सामूहिक बलात्कार के समाचार पुलिस–प्रशासन आदि को न तो सचेत करते हैं और न लज्जित । उलटे भविष्य में बलात्कार करने की इच्छा रखने वालों को हौंसला देते हैं और उनका मनोबल बढ़ाते हैं। ऐसे तमाम समाचारों का प्रकाशन तुरन्त बन्द होना चाहिए, क्योंकि अब ये सामान्य घटनाएं हैं और इन्हें समाचार ने एक अनिवार्य सच्चाई के रूप में स्वीकार कर लिया है।

निष्कर्षः

नारी अत्याचारों से सम्बन्धित समाचार प्रकाशित होने पर लोगों को जब यह ज्ञात होता है कि बलात्कारी को कोई दंड नहीं मिला, तो अन्य लोग भी इस प्रकार के अपराध करने में कोई संकोच नहीं करते। इस प्रकार से नारी पर अत्याचार और अधिक होते हैं। डॉ० अग्रवाल ने इस सच को समाज में देखा है इसी के उपरान्त उन्होंने इस सच पर व्यंग्य किया है।

संदर्भ सूचीः

1.निरण अकाल, मेरी हाल्दा याच कविताएँ, पृ० १२६

2.डॉ. अनिल कुमार शर्मा, साठोत्तरी हिन्दी–गजल, डॉ० गिरिराज शरण अग्रवाल का योगदान, पृ० १०३.०४

3.डॉ० गिरिराज शरण अग्रवाल, खत्म कसाना हो गया, मेरे इक्यावन

4.व्यंग्य, पृ०

5.वही १० ७७

6.वही, पृ० १६४१

7.वही, पृ० १६३–१६६४

8.वही, पृ० १७२

डॉ. प्रवीण कुमार वर्मा

सह–प्रोफेसर (हिन्दी – विभाग गोस्वामी गणेशदत

सनातन धर्म महाविद्यालय, पलवल (हरियाणा)

11

Challenges To Micro, Small And Medium Enterprises In India

Dr. Joginder Singh

Abstract:-

This paper highlights the performance,growth and challenges to micro,small and medium enterprises in India . There is growing worldwide appreciation of the fact that micro,small and medium enterprises(MSMEs) play a critical role in the development process of most economies. In the particular paper described about MSMEs objectives, importance and growth over the years.Today small and medium enterprises occupies a position of strategic importance in the Indian economic structure due to its significance contribution in terms of output ,exports and employment .The small scale industry accounts for 40% of gross industrial value addition and 50% of total manufacturing exports . The MSMEs are the biggest employment provider after agriculture,providing employment to nearly 32 million people. This paper closely analyse the growth and development of the Indian small scale sector since opening of the economy in 1991. It also looks into the present scenario of MSMEs and the challenges they face like lending marketing, licence raj issue in detail.

Keywords:- MSMEs, Economic Growth,SME, GDP, Enterprises performance

Introduction

Micro,Small and Medium enterprises sector has emerged as a highly vibrant and dynamic sector of the Indian economy over the last 5 decades. MSMEs not only play critical role in providing large employment opportunities at comparatively lower capital cost than large industries but also help in industrialisation of rural and backward areas thereby, reducing regional imbalances, assuring more equitable distribution of national income and wealth. MSMEs are complementary to large industries as ancillary units and this sector contributes enormously to the socio-economic development of the country.

Ii.some Highlights Of The Msme Sector

a) MSMEs contributes about 40% of India's total exports.

b) MSMEs contributes about 45% of India's manufacturing output.

c) This sector has given employment to 73 million people. [5]

d) MSME manufacture more than 6,000 products.

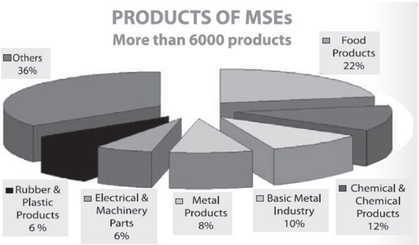

Iii. Definition Of Msme

MSME are the engines of growth of any country's economy. In accordance with the provision of Micro, Small and Medium Enterprises Development Act 2006 the micro, small and medium enterprises are classified into two classes.

A.Manufacturing Enterprises

a. The Enterprises engaged in the manufacturing or production of goods pertaining to any industry specified in the first schedule to the industries (Development and Regulation Act 1951) the manufacturing enterprises are defined in the terms of investment in plant and machinery .

B. Service Enterprises

a. The enterprises engaged in providing or rendering of services and are defined in the terms of investment in equipment.

b. The limit of investment in plant and machinery/equipment for manufacturing/ Service Enterprises as notified.

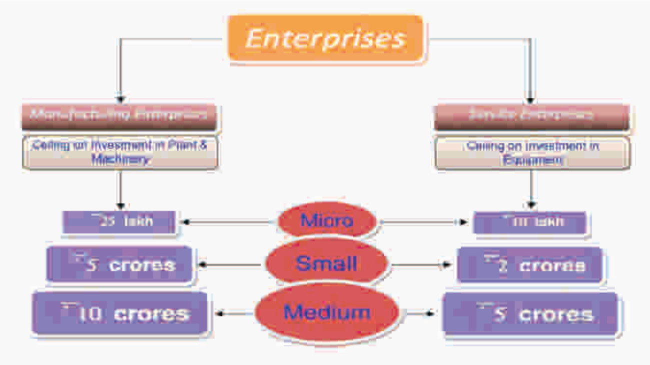

I

a) To study the need of importance of MSME

b) To review the challenges to be faced by MSMEs in India

c) To evaluate the opportunities in India

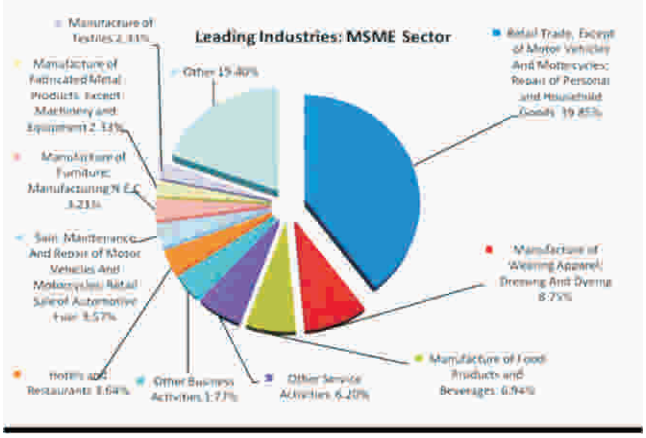

TABLE 2.1: PERFORMANCE OF MSME, EMPLOYMENT AND INVESTMENTS

Sl. No.	Year	Total Working Enterprises (in Lakh)	Employment (in Lakh)	Market Value of Fixed Assets (Rs. in Crore)
I	II	III	IV	V
1.	2006-07	361.76	805.23	868,543.79
2.	2007-08#	377.36	842.00	920,459.84
3.	2008-09#	393.70	880.84	977,114.72
4.	2009-10#	410.80	921.79	1,038,546.08
5.	2010-11#	428.73	965.15	1,105,934.09
6.	2011-12#	447.64	1,011.69	1,182,757.64
7.	2012-13#	447.54	1,061.40	1,268,763.67
8.	2013-14#	488.46	1,114.29	1,363,700.54

* Including activities of wholesale/retail trade, legal, education & social services, hotel & restaurants, transports and storage & warehousing (except cold storage) for which data were extracted Economic Census 2005, Central Statistics Office, MOSPI

* Estimated on the basis of per enterprises value obtained from sample survey of unregistered sector for activities wholesale/retail trade, legal, education & social services, hotel & restaurants, transports and storage & warehousing(except cold storage) which were excluded from Fourth All India Census of MSME, unregistered sector

\# Projected

B) EMPLOYMENT IN MSME SECTOR

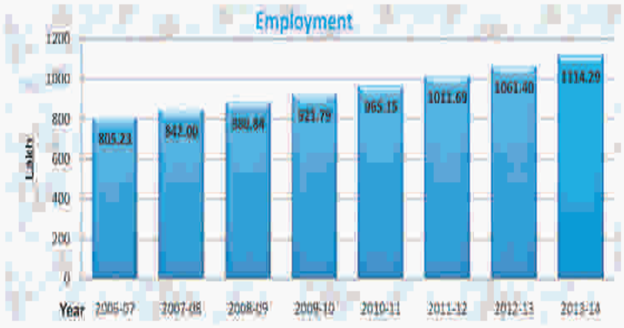

Projected data for the years 2007-08 to 2013-14.

C) FIXED INVESTMENT IN MSME SECTOR

Projected data for the years 2007-08 to 2013-14

ANNEXURE IV (A)

Summary Results of Fourth All India Census of Micro, Small and Medium Enterprise sector

(Lakh)

Sl. No.	Characteristics	Registered Sector	Unregistered Sector *	Total
1	Total number of working enterprises	15.64	346.12	361.76
	Manufacturing	10.5	104.51	115.01
	Services	5.14	241.61	246.75
2	Number of rural enterprises	7.07	193.12	200.19
3	Number of urban enterprises	8.57	153	161.57
4	Number of women enterprises	2.15	24.46	26.6
5	Number of enterprises running perennially	15.14	189.13	204.27
6	Employment	93.09	712.14	805.24
	Manufacturing	80.84	239.23	320.07
	Services	12.26	472.91	485.17
7	Employment	93.09	712.14	805.24
	Male	74.05	610.62	684.68
	Female	19.04	101.52	120.56
8	Enterprises by type of social category	15.64	346.12	361.76
	SC	1.19	27.15	28.34
	ST	0.45	20.4	20.84
	OBC	5.99	145.74	151.73
	Others	8.01	149.55	157.57
	Not Responded	0	3.27	3.27

(Lakh)

Sl. No.	Characteristics	Registered Sector	Unregistered Sector *	Total
9	Enterprises by type of organization	15.64	346.12	361.76
	Proprietary	14.09	327.45	341.54
	Partnership	0.43	3.85	4.28
	Private Company	0.43	0.06	0.49
	Co-operatives	0.05	1.16	1.21
	Others	0.44	7.65	8.09
	Not Recorded	0	6.75	6.75
10	Enterprises by main Source of power	15.64	346.12	361.76
	No Power needed	3.70	104.38	108.18
	Coal	0.25	6.23	6.48
	Oil	0.53	13.86	14.39
	LPG/CNG	0.07	3.97	4.04
	Electricity	10.49	106.52	117.01
	Non-Conventional Energy	0.03	0.85	0.88
	Traditional Energy/Firewood	0.23	7.15	7.30
	Others	0.25	10.19	10.44
	Not Recorded	0	2.95	2.95

* For activities excluded in Sample Survey of Fourth All India Census of MSME, Unregistered sector [illegible] Wholesale Trade [illegible] Legal Services, Educational Services, Social Services, Hotels & Restaurants, Transport, Storage & Warehousing (except Cold Storage) data were taken from Economic Census 2005, Central Statistics Office of Ministry of Statistics and Programme Implementation

Major Problems And Challenges Faced By Msme Sector

The MSMEs continue to face several problems in their day to day operations, that is, in production and marketing of their products. They find it difficult to sell their output at remunerative prices and cannot spend much on advertising, marketing research, etc. They also face stiff competition from large firms. Inadequate infrastructural facilities and access to credit are other major problems. Although Indian MSMEs are a diverse and heterogeneous group, they face some common problems, which are briefly indicated below:

- i. Lack of availability of adequate and timely credit;
- ii. High cost of credit;
- iii. Collateral requirements;
- iv. Limited access to equity capital;
- v. Problems in supply to government departments and agencies;
- vi. Procurement of raw materials at a competitive cost;
- vii. Problems of storage, designing, packaging and product display;
- viii. Lack of access to global markets;
- ix. Inadequate infrastructure facilities, including power, water, roads, tc.;
- x. Low technology levels and lack of access to modern technology;
- xi. Lack of skilled manpower for manufacturing, services, marketing, etc.;
- xii. Multiplicity of labour laws and complicated procedures associated with compliance of such laws;
- xiii. Absence of a suitable mechanism which enables the quick revival of viable sick enterprises and allows unviable entities to close down speedily; and Issues relating to taxation, both direct and indirect, and procedures thereof
- xiv. Lack of Social Security

Challenges Faced By Msmes:

MSMEs are very important in the economic growth of India but this sector is not getting sufficient support from the concerned government Departments, banks, financial institutions and corporate. This proves hurdle in the growth path of the MSMEs.

MSMEs faces a number of problemsa)

Absence of adequate and timely banking finance.

b) Limited capital and knowledge, non-availability of suitable technology.

c) Low production capacity.

d) High cost of credit.
e) Ineffective marketing strategy.
f) Lack of skilled man power for manufacturing, services, marketing etc.
g) Lack of access to global markets.
h) Constraints on modernization of expansion.
i) Problems of storage, designing, packing and product display.
j) In adequate infrastructure facilities, including power, water, roads.

Opportunities In Msmes

1. Less capital intensive
2. Most important employment generating sector. It provides 50% of private sector employment
3. Effective tool for promotion of balanced regional development
4. It is extensively promoted and supported by the Government
5. Finance and subsidies are provided by the government
6. Produced goods are purchased by the Government
7. 40% exports in India are through MSME channel
8. Procurement of machinery and raw material
9. Globalization has offered new opportunities for the MSMEs
10.Trade fares and exhibitions played a vital role in the economic growth of the countries

Suggestion For Improvements

1. Involvement of stakeholders.
2. Awaewness creation.
3. Information dissmenation.
4. Provide special incentives for encouraging larger flow of capial.

Conclusion

The Micro, Small and Medium Enterprise (MSMEs are an important sector and plays a critical role in the Indian economy. MSMEs will continue to play a very important and vital role in our economy where the twin problems of unemployment and poverty constitute a major development challenge. There are several challenges in the sector of MSMEs. If the Government, Bank and Financial Institutions will take proper initiatives in the sector of MSME and they will take pride while servicing the MSMEs, these challenges can be solved and the economic growth rate of India will be 8-
10% for the next decades.

References

[1] K. Hallberg – Small and Medium scale enterprises
[2] Annual Report 2014-15 Govt. of India , Ministry of Micro, Small and
Medium Enterprises
[3] Entrepreneurship development- Renuarora and S.K. Sood
[4] VOL. V. No.2 December-2009- Ashishkumar, Vikasbatra and S.k. sharma
[5] India's new economic policy- RudraDutta
[6] www.google.com.

Dr. Joginder Singh
Associate Professor,
Dept. of Economics,
Govt. College Hisar
Email joginderchopra05@gmail.com

12

NEP-2020: Road Map for Revival of Indigenous Knowledge System

Nisha Jain, Nitu Jain

Abstract

India is again realizing the need to become a self-reliant nation, especially during the COVID-19 pandemic. As the world's youngest nation, India has immense potential to generate employment. Technical advancement has changed our culture, and life values are declining. Our society has come under the grip of corruption, arrogance, unemployment, stress, crime, and drugs. In the absence of life values, human behavior is becoming zero, and education is becoming directionless. The only way to root out social evils is to start from the beginning.

History bears witness to the fact that higher education has played an important role in making any revolution, development, and innovation objectives meaningful. The New Education Policy 2020 is a step in this direction. Through this policy, the country's crumbling social, and economic conditions can be improved and balanced. That is why the New Education Policy 2020 has been introduced to improve the education system, whose main objective is to introduce value education at all levels of education. The article is based on the perspective of ancient Indian wisdom and life values described in the New Education **policy 2020.**

Introduction

This education policy lays special emphasis on the introduction of value education at all levels. Special emphasis has been laid on the role of teachers in developing Indian values in the youth and the same emphasis is also found in ancient Indian literature. Here an attempt has been made to highlight some of those aspects. At present the new education policy is also seen emphasizing the same points, the life values which we have left far behind in the path of progress, once again let us return to literature. That is, the missed life values have to be made a part of life again. India is the birthplace of the values of life. Our heritage was so rich when in 1811 there were 7,32,000 Gurukuls in India. At that time the first school was opened in England. The roots are still the same, just need to nurture those roots. In observing Indian literature, it is known that since ancient times, special emphasis has been laid on the values of life and the role of the teacher in Indian education. Indian culture has always had a rich heritage. In this article, an attempt is being made to integrate the valueswhich has been taken from Indian scriptures like Gita, Ayurveda, Upanishads, Vedas, Charaka, and Sankhya with the new education policy.

The purpose of education is not only to learn to read, write and speak, but its real meaning is the all-round development of the individual in sense of an integrated and sophisticated personality. Recently, on the recommendations of an expert committee headed by Dr. Kasturirangan, former chairman of the Indian Space Research Organisation, the Government of India announced the New Education Policy 2020. Special emphasis has been laid on the development of the creative potential of each individual. But this objective cannot be achieved by mere telling. Education makes a person wise, it works to open one's eyes to knowledge. At the same time, broad-mindedness also strengthens its social, economic, moral, and emotional side. Education makes humans from animalsand makes them logical and thoughtful. Behavior brings compassion, empathy, empathy, flexibility. Some important aspects of the New Education, Policy 2020show the value of education.

Moral, constitutional and human values such as empathy, a sense of respect for others, cleanliness, courtesy, democratic spirit, the spirit of service, respect for public property, scientific temper, freedom, responsibility, equality, and justice.

Life Skills: Communication, Cooperation, Group Work, Resilience, and Specific Developing Emotional and Adversity Achievement.

Teachers and faculty, their recruitment as the center of the teaching process, continuous professional development, positive attitudes, and work area environment are important. The 'Value Education' proposed in the New Education Policy 2020 is the implementation of value education contained in ancient Indian literature. According to CB Good, "Value education is the sum total of those processes by which a person develops positive values, abilities, attitudes and other forms of behavior in the society in which he lives".

For the all-around development of each student, both academic and non-academic areas have to be taken together. Parents along with teachers have to be sensitized so that their unique abilities are recognized and encouraged. Only then physical, mental, emotional, and spiritual development can happen.

In short, it can be said that the all-around development of students makes them capable of handling all situations independently. After all, the main goal of education has always been to prepare students for the paths of life.

Here those verses available in ancient Indian philosophy were described which show that value education had special importance in ancient India also. In ancient times, the role of the teacher, the teacher, and the education system was not only considered to be the backbone but were considered to be the vital energy for the entire education system process.

Teaching was considered a spiritual process where a mind-to-mind connection was made. In Indian philosophy,

the Guru has been regarded as the supreme entity who shapes life, as also depicted in the following verse. The root of meditation is the form of the Guru. The root of worship is the feet of the Guru. The root of the mantra is the word of the Guru. The root of salvation is the grace of the Guru, that is, the Guru is the master of meditation, worship, mantra, speech, and even salvation.

ध्यानमूलंगुरुर्मूर्तिःपूजामूलंगुरुर्पदम् ।
मन्त्रमूलंगुरुर्वाक्यंमोक्षमूलंगुरूर्कृपा।।

According to the New Education, Policy 2020, if the students have to imbibe the values of life, then teachers will have to play a wider role. They have to follow the same conduct in their life that they want to achieve in the lives of the students. In which the teacher is considered to be honest, cooperative, sympathetic, equanimity, knowledgeable, enthusiastic scientific approach,and a personality with similarities in words and deeds. It has also been said in the scriptures. As is the mind, so is the speech, as is the speech so is the action. Of the good people, there is uniformity in mind, speech, and action.

यथाचित्तंतथावाचोयथावाचस्तथाक्रिया ।
चित्तेवाचिक्रियायांचसाधूनामेकरूपता ।।

In the teaching-learning process, the interaction between the student and the teacher has special importance. Which is mentioned not only in ancient literature but also in the new education policy. It is impossible to do the teaching-learning process without enthusiasm and curiosity. The wise seek to acquire knowledge even if it comes from a child, just as a lamp does not illuminate that which the sun cannot illuminate.

In the new education policy also, the teacher has been kept as the core center of fundamental reforms. According to the new education policy, in order to prepare the students at the global level, today's teacher will have to teach mixed education style by connecting with technology in view of the demand of time in his teaching work. According to the new education policy, both teachers and students study and teach in an interactive process in such a way that they learn and teach and move forward. Just like those who are notable in our Indian philosophy.

In the new education policy, teachers have been considered advisors for the students. For this, the teacher should have a good listener, and a warm, fair attitude. Or simply say that the teacher should be well aware that the role he is playing is very important. He will have to contribute to the development and transformation of the children like an intelligent coach. They have to adopt a positive attitude. A firefly has to work and sow the middle of life's values with the hope that it will be a step towards a just and new society.

The heritage of ancient India's rich knowledge will prove to be a guide for this new education policy-2020. In ancient times the aim of education was not only to acquire knowledge but also to learn the art of living in this world. The path to complete self-realization and liberation was to be learned. World-renowned, multidisciplinary teaching and research centers such as Taxila, Nalanda, Vikramshila, and Vallabhi are also in India, setting the highest standards. Rather hosted students and researchers from across the country, world, and background. The Indian education system is the birthplace of many scholars like Charaka and Sushruta, Aryabhatta, Bhaskaracharya, Chanakya, Madhava, Patanjali, Panini, and Tiruvalluvar. We get a glimpse of ancient Indian knowledge from here.

सुखार्थिनःकुतोविद्यानास्तिविद्यार्थिनःसुखम् ।
सुखार्थीवात्यजेद्विद्यांविद्यार्थीवात्यजेत्सुखम्।।

There is no knowledge for the seekers of comfort and there is no rest for the curious. Student life is a life of sacrifice. A seeker of comfort should give up knowledge and a seeker of knowledge should give up comfort.

रूपयौवनसम्पन्नाविशालकुलसम्भवाः ।
विद्याहीनानशोभन्तेनिर्गन्धाःकिंशुकायथा।। ०३—०८

Born in a noble family, with full of beauty and youth, yet without education, like a flower without fragrance, which does not suit anywhere.

संतोषस्त्रिषुकर्तव्यःस्वदारेभोजनेधने ।
त्रिषुचौवनकर्तव्योऽध्ययनेजपदानयोः।। ०७—०४

one should be satisfied with one's wife, food, and money, but never with knowledge, learning, charity, and chanting.

यत्कर्मकृत्वाकुर्वंश्चकरिष्यंश्चौवलज्जति ।
तज्ज्ञेयंविदुषासर्वंतामसंगुणलक्षणम्।।

It has been said that if the conscious feels guilty before doing while doing, or after doing, such works are considered tamasic, they should not be done. Our rich heritage needs not only to be preserved but also to be cherished, protected

In short, it can be said that the objectives of the new education policy are similar with the principles of ancient Indian philosophy. Understanding, the treasure hidden in the Indian ethoscan illuminate every area of life, and taking advantage can be easily achieved. It is like that light in the darkness of Kalyug which will pave the way for all the stakeholders associated with the education system. All that is needed is to catch hold of our roots, turn to our heritage, and integrate it with the mainstream of society in the present.

References :

- Weise, J.R, Schopler, J., Morgan, C.T. and King, R.A.

(2015). “Introduction to Psychology” 7th Ed. Tata McGraw-Hill Publishing Company Limited, New

- https://www.education.gov.in/sites/upload_files/mhrd/files/NEP_Final_English_0. pdf
- https://resanskrit.com/sanskrit-shlok-popular-quotes-meaning-hindi-english/
- https://sanskritshlokas.com/chanakya-niti-shlokas-chapter-1-17-slokas/
- https://resanskrit.com/top-chanakya-neeti/

Nisha Jain
Associate Professor
V.M.M, Rohtak
psy.nisha.jain@gmail.com
(9996005021)
Nitu Jain
Assistant Professor
M.A.C.W,Jhajjar
nitujain8@gmail.com
(9466626466)

13

Literature: A Vehicle Of Social Change

Dr. Kiran Sharma

Abstract

Literature plays a crucial role in our society. It moulds and shapes the thoughts of young minds. It is able to form and touch lives in different ways and broadens our horizons. C.S. Lewis, a British scholar and novelist asserts in this regard: "Literature adds to reality, it does not simply describe it. It enriches the necessary competencies that daily life requires and provides: and in this respect, it irrigates the deserts that our lives have already become." Literature not only describes reality but also add to it. Prose, Poetry, Drama, Essay, Fiction, literary works based on philosophy, art, history, religion and culture provide society the guiding principles of life. It is through reading great literary and poetic works that one understands life. Henry Wadsworth Longfellow in one of his famous poem "A Psalm of Life" beautifully emphasises the significance of lives of great personalities. He says:

Lives of great men all remind us
We can make our lives sublime
And, departing, leave behind us
Footprints on the sands of time.

Further, we see that literature has the power to facilitate personal understanding and encouraging social cohesion. It is a strong and explicit tool for the dissemination of facts and ideas. For eg. Arnold's non- fictional piece 'Culture and Anarchy' is strongly in favour of the power of culture to facilitate societal improvement. Thus the present paper is an attempt to prove that literature is a vehicle of social change by going through some of the writers of English and Hindi writers.

A literary piece, may it be a poem, a novel, a short story or even a scholarly treatise, holds mirror to human life itself and exposing the truth, however shameful the naked truth be and that pain of shame itself is catharsis. Literature is social idiom where it always reflects the interplay between the writer and his society and the writer seeks to bring social ethos to the forefront by manipulation of cathartic emotions. As long as man has lived, he has pondered over life of self as an individual as well as social being and that is reflected in the writing also.

Moreover, man's journey in this world is not merely a sum of his material needs. He has a soul, a conscience and a mind that always asks for and is in need of upward movement. He yearns for fulfilment, he longs for love, he wishes to conquer, he craves to become immortal, he desires admiration and he needs emotional support in times of distress and failure. He also needs refinement in living. Such non-material aspirations are taken care of by literature. All of us in our journey through life do come across pain, love, pleasure, agony, misunderstanding, failures and questions. When we are too enmeshed in material pursuits we tend to become mechanical and starve our souls, the latter gradually wasting away. The eminent American poet Walt Whitman's *Leaves of Grass* exemplifies it well. It is the epic of democracy. Sense of 'oneness of all' makes his democracy universal and pantheistic. He has a sense of identity not only with man but also with all living creatures. This sense of 'oneness of all' makes him a poet of par excellence. The basic emotion in Whitman's lyricism is a feeling of kinship with all creation, evident in the very title *Leaves of Grass*. The grass is the great democratic symbol in nature and it is by lying on it and observing a spear of summer grass that the whole great motif is set in motion. The whole poem concludes with the image of the poet as he departs bequeathing to himself,

To the dirt to grow from the grass I love
If you want me again,
look for me under your boot sole.
Missing me one place search another
I stop somewhere waiting for you.

These lines of Whitman clearly bring out the point that literature is an artistic expression of "the best that is known and thought in the world." It is a record of man's dreams and ideals, his hopes and aspirations, his failures and disappointments, his motives and passions, his experiences and observations. It appeals to the widest human interests and the simplest human emotions. It knows no nationality, nor any bounds save those of humanity. It is occupied chiefly with elementary passion and emotions - love and hatred, joy and sorrow, fear and faith- which are an essential part of our human nature; and the more it reflects these emotions, the more surely does it awaken a response in men of every race. Rabindernath Tagore's *Gitanjali* exemplifies it very well. Tagore prays to God for the greatness of his country, where people enjoy moral, intellectual and spiritual freedom. The country should be free from narrow considerations of caste, colour and creed. People should have a spirit of love and tolerance and they should pursue peace, progress, truth and reason. They should not be slaves to outmoded customs and traditions. They should make tireless efforts to attain perfection. Tagore's faith in God and his sense of humility as a man are revealed when he surrenders himself to God and his Purpose:

This is my prayer to thee, my lord-strike, strike at the roots of penury in my heart.

Give me the strength lightly to bear my joys and sorrows.

Give me the strength to make my love fruitful in service.

Give me the strength never to disown the poor or bend my knees before insolent might.

Give me the strength to surrender my strength to thy will with love.

Tagore maintains that God cannot be realised by renouncing the world. He has to be realised in this very life, in

the hearts of ordinary men and women of the world. Addressing the ascetics, Tagore castigates idolatry and blind worship. He clearly states that God does not reside inside the temple but in the hearts of ordinary people. Tagore advises the priests to give up their counting of beads and chanting of mantras in a secluded counting of the temple with their eyes half-shut. To seek God, says Tagore, the priest must come out of the temple, give up his holy robes and work with the humble tillers and path-makers in rain and sun. Tagore, thus, glorifies the life of those who labour and reject the pseudo-religious way of life in "Leave This Chanting". He says:-

Leave this chanting and singing and
telling of beads! Whom dost thou
worship in this lonely dark corner of a
temple with doors all shut? Open
thine eyes and see thy God is not before thee!
He is there where the tiller is tilling
the hard ground and where the path-
maker is breaking stones. He is with
them in sun and in shower, and his
garment is covered with dust. Put off
thy holy mantle and even like him come
down on the dusty soil!

Literature has always been a source of social change throughout the ages. Like Tagore, the well known Hindi poet Maithali Sharan Gupt while inculcating the feelings of national unity in his fellow citizens asserts in a serene voice:

प्रत्येक जन, प्रत्येक जन को बंधु अपना जान लो,
सुख दुःख अपने बंधुओं का आप अपना मान लो,
आचार में कुछ भेद हो पर प्रेम हो व्यवहार में,
देखें फिर कौन सुख हमें मिलता नहीं संसार में

Thus we see that literature is a sacred instrument and through its use we can combat the forces of ignorance and prejudice and foster national unity and world communion. Literature brings out social change by giving voice to the past, reflecting the present and moulding the future. In this regard, I would like to quote Maithali Sharan Gupt's lines where he glorifies the past of India, laments on the prevailing deteriorated conditions and thereby gives a message to all Indians to learn from their majestic past.

संसार रूप शरीर में, जो प्राण रूप प्रसिद्ध था,
सब सिद्धियों में जो कभी सम्पूर्णता से सिद्ध था,
हा! हंत! जीते जी वही, अब हो रहा मृयमाण है,
अब लोक रूप मयंक में भारत कलंक समान है।

Thus, we find out that inspired language helps readers to develop a human and liberal outlook on life, to understand the world in which they live, to understand themselves and plan sensibly for their future. While signifying the importance of present time, Henry Wadsworth Longfellow in his poem "A Psalm of Life" gives this message to all:

Trust no future, however pleasant
Let the dead past bury its dead!
Act-act in the living present!
Heart within, and God o'er head!

After meditating over the beautiful lines of these famous poets we can affirm this view that literature plays a crucial role in bringing about social change in society. It is the noble function of literature to open our eyes to the beauty of life, to awaken our minds to the music of life. Robert Browning's optimistic lines - God's in His Heaven/All's right with the world boosts up the drooping sprit of everyone. Not only this but literature also serves as an enormous information base. Research works by famous inventors and literary works by notable scientists often narrate stories of their ground - breaking discoveries and inferences. Several ancient scriptures, relating stories of human evolution and narratives of human life in those times, have been of tremendous help to mankind.

Finally, I will sum up with the thoughts that what literature creates and recreates in every generation is life as a joyful and significant experience. Without literature nations would very quickly die from mere disgust at the boring and meaningless repetition of trivial accidents which life would seem. When life seems flat and dead; when we seem to exist merely for lack of energy and will to shoot ourselves, literature suddenly lifts our spirit up above the din and dust of mundane existence and makes it soar to the regions of the unknown. It shows us 'the light that never was on sea or land', and sometimes produces beautiful sparks of wisdom and knowledge which create a new zest in life. Knowledge for its own sake is the end of all literary activities of human spirit. The function of literature is to bring out social change in the society by strengthing the moral values and unification. It is this universal appeal of literature that makes it the proudest possession of our race.

Work cited

1. Pamela J. Annas & Robert C. Rosen, Literature and Society: An Introduction to Fiction, Poetry, Drama, Nonfiction, 4th edition, Paperback Publication, 2006.
2. *Leslie Stephen, English Literature and Society in the Eighteenth Century, Atlantic Publishers, 1994.*
3. Santosh Chakarbarti, Studies in Tagore: Critical Essays [New Delhi: Atlantic Publishers & Distributors, 2004.
4. *Mohit Ray, Selected Essays: Rabindranath Tagore, Atlantic Publishers, 2012.*
5. *Surya Prasad Dixit, Raastrakavi Maithili Sharan Gupt Aur Saaket, New Delhi, Kitabghar Prakashan, 2008.*
6. *Andrew Milner, Literature, Culture And Society (Routledge Pub.), 2005.*

Dr. Kiran Sharma
Associate Prof. of English
Govt. P.G College for Women,
Rohtak (Haryana)

14

Soft Skills Based Higher Education And Employbility

Dr. Joginder Singh

Abstract

The global scenario of education is changing day by day. Education has become a life skill rather than a job opportunity. To get a job is not a difficult task but to keep that job continue has become a herculean task in modern times. That is why we need soft skills. Soft skills is often associated with emotional quotient of a person. It is a part of one's personality. It includes communication skills, language proficiency, interpersonal skills, leadership, positive attitude and many more traits of one's personality. Today, we need higher education based on soft skills because it may suitably be called life skills. In higher Education, a teacher interacts with the students most and the personality of the teacher affects the students most. A teacher can mold the student in any shape depends on his communication skills and way of interaction. Higher Education is associated with job oriented education but now we need to focus on introducing soft skills in education. Education should impart employability but it must make people employable. Hard skills we learn through books in schools or in colleges but soft skills must be acquired by people time to time to keep going in life. A person having strong communication skills can give more profit to his company and more success chances to himself in difficult times of his job. The present paper is an attempt to study the relation between soft skills and employability in special reference to Higher Education.

Key Words- Soft Skills, Communication Skills, Employment, Higher Education Personality, Life skills

There is a remarkable difference between soft and hard skills. Hard skills is core proficiency of a person. It doesn't change according to environment of the job. It remained same as the work of a carpenter, mechanic, operation skills of a doctor, accounting, finance etc. but soft skills includes management, communication skills of a doctor- how he deals with his patient, a sales person's job etc. The grim reality is that you need hard skills to get a job but soft skills to continue the job. Communication skills and interpersonal skills are required today to survive.

Today, we need graduates who can respond to ever changing needs of contemporary workplace. An average graduate is not able to fulfill need of his employee today. The educators have to take the responsibility to develop soft skills in students. An educator can integrate soft skills with hard skills in his class. Soft skills can shape someone's personality in a very positive manner. It is important for every student to learn adequate skills other than academics and technical knowledge.

The cause of concern in higher Education today is that highly qualified graduates having distinctions in all subjects are not capable to face to face interaction and eye contact. People, especially in private sectors or business need soft skills necessarily. Today, the world of business is a world of relationships.A person can grow his business if he is good in communication. It can be acquired through experience. The finest example of soft skills is our Prime Minister, Hon'ble Narendra Modi. He is ruling the hearts of India not because of his hard skills but because of his soft skills. Whole America including the President Barak Obama is a huge fan of Mr. Modi, it is a success of his communication skills and confidence. He showed to the world that he is a man of out of box thinking. He is always clear in his message. He conveys so simply that a layman to a well-educated citizen of India or other than India understands his points clearly.

Genuineness is a part of soft skills. One should be genuine to his employees and colleagues for it is a first step for a good relationship. Becoming volunteer on the time of need is a great example of genuineness. Interpersonal skills are another name of soft skills. It is an umbrella of non-verbal Communication, listening skills, decision-making, attentiveness, negotiation skills etc. We all are aware of these since our childhood but we have never thought of honing these skills. Earlier we never paid attention to these skills because life was not so complicated or stressed but today we need to develop these skills to survive socially and personally. These skills lead us to many aspects of social, personal and professional life. The most important thing which can improve our performance is patient listening. Hearing and listening are two different things. We actually hear but not listen. An active listener removes ambiguity in communication till an extent.

Choosing proper words while talking is an important aspect of soft skill. To make the message clear, words should be well thought and rightly woven. In the same mirror, non-verbal communication or signs make the communication effective.

Dealing with stress is another feature of soft skills. It is a matter of preparation, confidence and positive attitude. Understanding of human nature is key feature to become successful. People may have different points of view. It may vary on the basis of their environment, thinking and culture. Stress is negative side of the same coin where stress triggers performance and hard work. There are so many stress management techniques to ease the pressure of life. Yoga, exercise, and meditation are some of the options. Analysis of a problem can sometimes give the main reason behind the failure of communication. It is a world of team work and

leadership. Your rapport plays an important role in your success. A leader should be a navigator and he must impart the feeling of brotherhood among people.

In today's cut throat competition, higher education must inculcate soft skills specially in the courses of marketing and management for instance – a sales person must know how to inspire emotion of a customer to sell his product. He should be able to use anecdotes and effective words to sell his products. A strong soft skill manager can get promotion in his job easily and his career may progress effortlessly.

The upcoming sectors like tourism and hospitality are based on soft skills. Some career options are need soft skills more than hard skills. All these point suggest that incorporating soft skills in to academic curriculum is vital. So far as employability is concerned it depends on basic knowledge, application of knowledge, attitude and context of the employment. Over the two decades, we have seen increased rate of unemployment. If an advertisement for the post of peon is published in newspaper, we can easily see that graduates and post- graduates applied for the above mentioned post. The unemployment rate among the graduate is high and lack of soft skills contributed in it greatly.

Employers generally assume that universities and Institutes should impart employability that is part and parcel of teaching and learning but gradually they realize that graduates or other students are not well-versed in thinking skills, understanding the problem, critical thinking, good communication skills etc. The real purpose of education has become 'earning' rather than 'learning'. Our traditional education system heed on disciplinary and technical knowledge rather than employability skills.

Competitive exams now- a- days also set a paper on aptitude skills for that is important for a life -long employability. The increased rate of unemployment raises this important question what went wrong with the higher education planning and learning. There must be a fusion of specific technical knowledge and learning soft skills. Soft skills are not particular skills , it may take a new shape according to environment and nature of job but one thing is sure that they are most needed skills in today's changing global scenario. English language is center of this skill and 4 s' of English language are pillars of soft skills- listening ,speaking, reading and writing. In the same vain implementation of soft skills at higher education can be done through formal and informal approaches. The formal one can be done through subject in academics and informal one can be through some supported programs- through the magic of classroom. A teacher can impart sharing, understanding, listening and communication skills through different sessions.

Soft skills are learned behaviors which require training and focused application. It will enable students with a strong and practical framework. It also helps students in career visioning and planning. It is an age of complex relationships between individuals and organizations. Having high marks is not the only criteria for success in professional life. Soft skills must be imparted in higher education to polish the student's attitudes, values, beliefs, desires, motivation, sharing and application of new ideas , flexibility, diplomacy and manners and etiquettes so that they can deal with different situation diligently and responsibly. These skills empower students to understand 'who they are' and how best they can come across as competent individual in any situation. One part of soft skills is to develop attitudes and attributes and other part involves communication skills to express attitudes, ideas and thought well. Integration of ideas and attitudes with communication skills is must for soft skills. Soft skills training must for the students who want to go for job and higher studies. Soft skills along with grammar pronunciation and vocabulary exercise boost the confidence of student.

Literature suggests that hard skills contribute to only 15% of one's success skills while remaining 85% is soft skills. Instead of getting degrees and diplomas, students have to strive towards mastering soft skills such as time management and having a strong work ethics. It will help the students increase their employability potential and face the challenge of present time. With the changing educational trends job acquisition and sustainability has become a huge challenge for students today. Students need to add values to their hard skills with soft skills to reveal their true potential. Soft skills are skills of learning, how to be nice, how to play together, how to resolve conflict, how to express appreciation by learning to say 'please ' and 'thank you' and using language in a way that persuades others. It helps in improving human potential. It helps in making students employable as it enables them to be flexible and to stay globally competitive.

Soft skills training may include projects , training sessions, projects, role plays, quizzes, and participatory sessions. The emphasis should be on learning by doing. It is about enabling and empowering. Letter writing , memos, reports, e-mails are core soft skills. Creative writing, routine messages , memos, report writing, business etiquette are all soft skills modules. The planning of soft skills may include following schedule

1. Letter writing session
2. Customer care course
3. Report writing course
4. Conflict management
5. Time management
6. Public speaking
7. Adaptability to change
8. Listening skills
9. Intellectual abilities
10. Negotiating skill
11. Proficiency in language

Etc. Such a program will give an excellent life and personality skills to the students for an effective transition from college to

corporate. The list above mentioned include three main parts

1. Qualities like life skills and knowledge
2. Skills that relate between one individual and many
3. 3.skills present with in individual

Now a days many Institutions and universities are changing their methodology and shifting to student center learning. Students are encourage to participate in a way that learning is enjoyed and are learning hard skills through soft skills.

To conclude we can say that soft skills occupy supreme importance . One has to take the trouble to acquire it. Faculty plays a major role here by imparting their respective courses by using soft skills. It is high time for the trainers, lecturers and faculties to change their methodology in imparting education.

References

- http://www.en.wikipedia.org/wiki/soft-skill...>
- <http:// www.inpactfactory.com/p/soft skills training development.../>
- http://www.inflibmet.ac.in/ojs/phd..../
- Altbach, Philip G. (2006) The Private Higher Education Revolution: An Introduction. University News. January 2-8, 2006. Vol. 44 No.01.
- Anandakrishnan, M. (2006) Privatization of higher education: Opportunities and anomalies. 'Privatization and commercialization of higher education' organized by NIEPA , May 2, 2006., New Delhi
- Delors, Jacques (1996) Learning the treasure within. Report to UNESCO of the International Commission on Education for the Twenty-first Century. UNSECO Publishing, Paris.
- MHRD (2006) Annual Report. Ministry of Human Resource Development, Department of Secondary and Higher education. Government of India. New Delhi. Planning Commission (1999) Approach paper to the Tenth Five-year Plan (2002- 2007). Planning Commission. New Delhi.
- http://www.qcin.org/nbqp/qualityindia/Vol-2-No2/specialreport.htm, by Dr. J D Singh.

Dr. Joginder Singh
Associate Professor,
Dept. of Economics,
Govt. College Hisar
Email joginderchopra05@gmail.com

15

महादेवी हिन्दी की सर्वश्रेष्ठ रेखाचित्रकार हैं

डॉ0 सुधा रानी

सारांश

हिन्दी के समीक्षा–जगत् में व्याप्त एक साधारण प्रवृत्ति है– प्रत्येक वस्तु (साहित्य–रूप अथवा प्रवृत्ति) को वेदों से उत्पन्न मानना। इस प्रवृत्ति से ग्रस्त समीक्षक हर बात में यही मानकर चलता है कि प्रत्येक साहित्यिक–विधा का उद्भव सीधे वैदिक साहित्य से हुआ है और कालान्तर में तो उसका विकास–मात्र ही हुआ है। इधर, पाश्चात्य जगत् के भक्त हर विधा को सीधे पश्चिम की देन मानते हैं मानो भारत पर अपना नया–पुराना कुछ है ही नहीं, सब कुछ पश्चिम से आयातित है, उधार या कृपा का माल है। निःसन्देह ये दोनों ही एकांकी प्रवृत्तियाँ 'रेखाचित्र' पर भी चरितार्थ हुई मिलती हैं। प्रथम वर्ग की मान्यता के अनुसार– 'रेखाचित्र का प्रारम्भिक रूप वेदों में वर्णित प्रकृति के सजीव चित्रण में मिलता है' निःसन्देह वैदिक साहित्य में ही नहीं, सम्पूर्ण सस्कृत साहित्य में रेखाचित्र (अथवा इससे मिलते जुलते) साहित्य–रूप का एकदम अभाव है, दूर–दूर तक इसका नामोनिशां नहीं मिलता, फिर भी महाकाव्यों में वर्णित पात्रों के सजीव रूप–चित्रण में रेखाचित्र का प्राचीन रूप देखा जा सकता है। अतएव हिन्दी में यह विधा संस्कृत से आयी है और "अतीत के चारणकाल से ही कविता के माध्यम द्वारा चित्रों की सृष्टि होती रही है।"[1] "पृथ्वीराज रासों" में अनेक रानियों और राजकुमारियों के रूप सौन्दर्य चित्र 'पद्मावत' में पद्मावती और नागमती का रूप, 'मानस' में बाल–राम, सीता आदि का रूप, रीतिकालीन कवियों के मुद्राचित्रण, आधुनिक काल में प्रसाद, पंत, निराला आदि छायावादी कवियों के पात्र और प्रकृति–चित्रण आदि मानों 'आधुनिक रेखाचित्र' के पूर्व पुरुष हैं। इसी से कृपाशंकर सिंह ने कहा है, "यहाँ पर कुछ रूककर मैं इस बात को स्पष्ट कर देना आवश्यक समझता हूँ कि हिन्दी–रेखाचित्र अंग्रेजी स्कैचेज के परिणामस्वरूप नहीं है। कम–अधिक मात्रा में उनसे प्रभावित हो सकते हैं।" परन्तु यह कहना कि हिन्दी–रेखाचित्र का एकमात्र स्त्रोत अंग्रेजी स्कैचेज हैं, कुछ अधिक समीचीन नहीं जान पड़ता। इनके उद्गम न डिकेन्स के 'स्कैचेज बाइ बाज' हैं, व गाल्सवर्दी के पोट्रेट और स्पिन्डिलबेरीज' कहानियाँ और बालजाक के स्कैचेज हैं। शब्दचित्रों की प्रवृत्ति भारतीय साहित्यिक परम्परा में आरम्भ से ही प्राप्त रही है। हिन्दी काव्यों में तो यह रूप चित्रण और वातावरण चित्रण के रूप प्राचीन–काल से ही प्राप्त होता है।"[2]

यहाँ पर यह स्मरणीय है कि आधुनिक काल से पूर्व सम्पूर्ण संस्कृत और हिन्दी साहित्य में 'रेखाचित्र' या इससे मिलती–जुलती किसी विधा का वर्णन नहीं मिलता। काव्य–जगत् में उपलब्ध 'चित्रमय–वर्णन' भी एक तो कविता में है (जबकि रेखाचित्र को गद्य–विद्या माना जाता है), दूसरे इसमें वैयक्तिकता अथवा रचयिता का सम्पर्क में आये विलक्षण व्यक्तित्व का चित्रण और देखी–सुनी पृष्ठभूमि भी नहीं होती। डॉ0 राजनाथ शर्मा ने कहा है – "रेखाचित्र हिन्दी साहित्य की एक ऐसी विधा है जिसके किसी भी पूर्व रूप का हमें प्राचीन भारतीय साहित्य में न तो कहीं उल्लेख ही मिलता है और न कहीं रेखाचित्र से मिलती जुलती किसी रचना के दर्शन होते हैं।[3] उपर्युक्त विवेचन से सिद्ध होता है कि वास्तव में दोनों ही मत अतिप्रधान और परिणामस्वरूप एकांगी हैं। वस्तुतः आधुनिक रेखाचित्र एक स्वतन्त्र साहित्यिक विधा है। जिस प्रकार 'रेडियो नाटक' सर्वथा नवीन विधा है उसी प्रकार 'रेखाचित्र' भी आधुनिक युग की देन है। इतना अवश्य है कि उस पर अंग्रेजी स्कैचेज का प्रत्यक्ष प्रभाव है और अधिक से अधिक संस्कृत और हिन्दी काव्यों में प्राप्त 'चित्रवर्णन' का परोक्ष प्रभाव माना जा सकता है। प्रभाव की मात्रा और प्रकार की दृष्टि से निःसन्देह 'रेखाचित्र' अंग्रेजी स्कैचेज से अधिक प्रभावित हैं।

आधुनिक काल से पूर्व हिन्दी–साहित्य में काव्य की प्रधानता थी। यही कारण है कि इस समय तक 'रेखाचित्र' नाम की किसी विधा के दर्शन नहीं होते। आधुनिक काल में, परिस्थितियों के फलस्वरूप, गद्य का न केवल प्रचलन हुआ वरन् प्रचुरता और प्रधानता भी रही है। ऐतिहासिक दृष्टि से, आधुनिक काल का श्रीगणेश भारतेन्दु युग से होता है। इस काल में भी शुद्ध 'रेखाचित्र' तो नहीं रचे गये किन्तु भारतेन्दु के 'विक्रम कालिदास', 'रामानुजाचार्य', 'शकराचार्य', 'जयदेव', 'वल्लभाचार्य', 'सूरदास', 'सुकरात', 'नैपोलियन तृतीय', 'जंगबहादुर', 'द्वारिकानाथ मिश्र', 'राजाराम शास्त्री', 'श्रीबालकृष्ण भट्ट के कुछ निबन्धों में 'रेखाचित्र' के कुछ गुण प्रत्यक्ष देखे जा सकते हैं। इसके पश्चात् 1929 में प्रकाशित पं0 पद्मसिंह शर्मा के 'पद्मपराग' के कुछ निबन्धों में भी ये ही गुण अधिक मुखर हुये हैं।

इस समय तक पाश्चात्य–साहित्य में डिकेन्स, गाल्सवर्दी बालजाक, गोर्की आदि साहित्यकार 'स्केच' (रेखाचित्र) साहित्य की अभिवृद्धि कर चुके थे। हिन्दी साहित्य में यह काल (1929–1936) छायावाद के पतन का काल था। छायावाद की सूक्ष्मता और कथा–साहित्य की अधिकता से पाठक ऊबने लगा था। कल्पना के स्थान पर यथार्थ की प्रधानता स्वीकार की जाने लगी थी। मार्क्स के विचारों के प्रभाव स्वरूप, निराला और महादेवी प्रभृति छायावादी कलाकार भी 'ऐकान्तिक शैली–शिल्प' को अपर्याप्त मानकर छोटे–छोटे चित्रों द्वारा समाज के ज्वलन्त प्रश्नों, व्यक्तिगत रूप और अमूर्त मनोभावों को प्रकट करने लगे थे। इसी समय (सन् 1936–37) पं0 श्री राम शर्मा का एक निबन्ध संग्रह 'बोलती प्रतिमा' प्रकाशित हुआ जिसमें संकलित 'बोलती प्रतिमा', 'ठाकुर की आन', 'वरदान', 'हरनामदास', 'पीताम्बर', 'अपराधी', 'रतन की अम्मा', आदि में अधिक रेखात्मकता प्राप्त होने के कारण इन्हें 'रेखाचित्र' के अधिक समीप रखा जा सकता है। वास्तव में 'पं0 श्री राम शर्मा की कुशल लेखनी ने ये रेखाचित्र उस समय बनाये जबकि हिन्दी स्कैच के कैनवस पर केवल मात्र दो चार धुंधली रेखाएँ खिची हुई थीं। इसी से कुछ आलोचक तो

इनको हिन्दी का प्रथम रेखाचित्रकार तक मानते हैं। सन् 1939 में 'कुल्लीभाट' और 1941 में 'बिल्लेसुर बिकरहा' का प्रकाशन हुआ। निराला जी की ये दोनों रचनाएँ वास्तव में लघु उपन्यास हैं किन्तु रेखाचित्र के कई गुण इनमें पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हैं, इसी से कुछ आलोचक इनको भी बृहद् रेखाचित्र मानते हैं। उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि सन् 1941 तक कुछ स्फुट रचनाओं में रेखाचित्र के कुछ तत्त्व तो अवश्य मिल जाते हैं किन्तु शुद्ध रेखाचित्र अत्यधिक न्यून मात्रा में ही मिल सकते हैं। पद्मसिंह शर्मा और श्रीराम आदि ने भी कुछ रेखाचित्र अवश्य लिखे किन्तु वे भी प्रयासमात्र ही अधिक हैं। निराला जी की दोनों रचनाएँ भी या तो आंचलिक उपन्यास अथवा अधिक से अधिक 'लघु उपन्यासनुमा रेखाचित्र' ही होने के कारण शुद्ध रेखाचित्र नहीं हैं। इसी काल में महादेवी वर्मा ने, जो एक सफल कवयित्री के रूप में भारत प्रसिद्ध हो चुकी थी, इस क्षेत्र में पदार्पण किया।

महादेवी वर्मा का प्रथम रेखाचित्र संग्रह है – 'अतीत के चलचित्र' – जिसका सर्वप्रथम प्रकाशन सन् 1941 (संवत् 1948) में हुआ। इसमें रामा, बिन्दा, सबिया, बिट्टो, अनाहूत और अवांछित बालक की विधवा माँ, घीसा, एक वेश्या माँ की पुत्री, अलोपी, बदलू और लछमा आदि ग्यारह रेखाचित्र संग्रहीत हैं। वास्तव में इसी रचना को हिन्दी का 'प्रथम शुद्ध रेखाचित्र' कहलाने का श्रेय प्राप्त है। इसके पश्चात् वर्मा जी की अन्य दो रचनाएँ – 'स्मृति की रेखाएँ' (प्रथम प्रकाशन 1943) और 'पथ के साथी' (प्रथम प्रकाशन 1956) – प्रकाश में आयी। प्रथम में भक्तिन, चीनी फेरीवाला, जंगिया, धनिया, बूटा, बेला तथा गुंगिया आदि सात रेखाचित्र संकलित हैं। 'पथ के साथी' संस्मरणात्मक रेखाचित्र है जिसमें रवीन्द्रनाथ ठाकुर, मैथिलीशरण गुप्त, सुभद्राकुमारी चौहान, निराला, जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानन्दन पन्त, सियाराम शरण गुप्त आदि हिन्दी कवि कवयित्रियों के रेखाचित्र हैं। इस प्रकार वास्तव में वर्तमान की शुद्ध रेखाचित्र विधा को प्रकाश में लाने और विकसित करने में सर्वाधिक श्रेय महादेवी जी को जाता है।

श्रीमती आशा गुप्त ने कहा है – "महादेवी जी ने इन अतीत के चित्रों को लिपिबद्ध करके प्रकाश में लाने के दो कारण स्पष्ट किये हैं। एक तो इस रूप में उन अतीत चित्रों की चमक समय के साथ धुंधली नही पड़ेगी जिनके सम्पर्क ने लेखिका के चिन्तन की दिशा बदली और संवेदना को गति दी है। दूसरे उन्हें यह भी आशा है कि उन अधूरी रेखाओं और धुंधले रंगों की समष्टि में किसी सहृदय पाठक को अपनी छाया की एक रेखा मिल जायेगी।"[4] स्वयं महादेवी जी ने अपने रेखाचित्रों का उद्देश्य स्पष्ट करते हुए कहा है "उनसे पाठकों का सस्ता मनोरंजन हो सके ऐसी कामना करके मैं इन क्षत–विक्षत जीवनों को खिलौनों की हाट में नहीं रखना चाहती। यदि इन अधूरी रेखाओं और धुंधलें रंगों की समष्टि में किसी को अपनी छाया की एक रेखा भी मिल सके तो यह सफल है, अन्यथा अपनी स्मृति की सुरक्षित सीमा से इसे बाहर लाकर मैंनै अन्याय ही किया है।"[5]

इन रेखाचित्रों के पात्र अधिकांश समाज के निम्न और मध्यम वर्ग के हैं जो नगर और ग्राम दोनों से सम्बन्धित हैं। सेवक रामा और भक्तिन, भंगिन सबिया, शिष्य घीसा, शाकभाजी विक्रेता अंधा अलोपी, कुम्हार बदलू, पहाड़िन लछमा, फेरीवाला चीनी भाई, पहाड़ी कुली जंगबहादुर, विधवा बिट्टों आदि कुछ ऐसे ही पात्र हैं। सभी पात्रों से लेखिका का व्यक्तिगत सम्बन्ध है। अतएव उनके गुण–दोषों, समस्याओं आदि से वह पूर्णतया परिचित हैं। नारी होने के कारण लेखिका की सहानुभूति प्रायः नारी पात्रों से अधिक रही है। श्री गोपालकृष्ण कौल ने ठीक ही कहा है– "उनके रेखाचित्रों के पात्र ऐतिहासिक महापुरुष नहीं बल्कि भारतीय जन–जीवन के वे कुरुप चिन्ह हैं जो कुछ तो अशिक्षा और शोषण से दीन और सरल बन गये हैं और कुछ महादेवी की ममता और करुणापूर्ण सहानुभूति से। दलित और पिछड़ा हुआ मानकर जिन व्यक्तियों की हम उपेक्षा कर देते हैं, महादेवी ने अपनी विराट् सहानुभूति के सहारे उनका अन्तरंग अध्ययन कर इन रेखाचित्रों में प्रस्तुत किया है। इनमें कहीं–कहीं दबा हुआ विद्रोह भी मुखरित होता है। विशेषतः भारतीय नारीत्व के विविध रूपों का अध्ययन भी इनमें प्रस्तुत किया गया है।"[6] यही कारण है कि इन रेखाचित्रों के कथानक में स्वाभाविकता, यथार्थता, परिस्थिति–सजगता, कौतूहल, साधारणीकरण में समर्थ मार्मिकता आदि सभी गुण आ गये हैं।

इन रेखाचित्रों में सामाजिक समस्याओं को उठाया गया है। अतः ये रेखाचित्र अपने क्लेवर में सामाजिक समस्या की प्रधानता को समेटे हुए हैं। प्रायः सभी रेखाचित्रों में एक ही पात्र, व्यक्तिगत विशेषताओं के होने पर भी वर्ग विशेष का प्रतिनिधि है। जिस प्रकार काव्य क्षेत्र में वर्मा जी पूर्णतया व्यक्तिवादी रहीं हैं, उसी प्रकार वहाँ वे पूर्णतया सामाजिक हैं। प्रायः समस्याएँ भारतीय नारी समाज से सम्बन्धित हैं। विमाता का दुर्व्यवहार, अकाल वैविध्य, बाल–विवाह, वृद्ध–विवाह, अनमेल–विवाह, अवैध मातृत्व, वेश्या–विवाह, पति भक्ति, सपत्नी आदि के साथ–साथ अशिक्षा, गरीबी, सामाजिक वैषम्य, शिष्टाचार, पारिवारिक सम्बन्ध, विभिन्न सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक रूढ़ियों आदि का सजीव, करुणामय और स्वाभाविक चित्रण किया गया है। श्रीरामस्वरुप आर्य ने ठीक ही कहा है–

"महादेवी जी के रेखाचित्र एवं संस्मरण हृदय की पूर्ण सरसता में डुबोकर लिखे गए हैं। उनमें उनके अन्तस् की करुणा, प्रेम और सहृदयता पंक्ति–पंक्ति पर छलक रही है। कोमल कल्पना के सहज स्पर्श से उनमें अपूर्व–माधुर्य एवं चमत्कार भर गया है।"[7]

महादेवी मूलतः कवियित्री हैं। अतएव इनकी गद्य–रचनाओं में भी भावमयता और कवित्व पग–पग पर छलकता हुआ मिलता है। इस सम्बन्ध में डॉ0 रस्तोगी ने ठीक ही कहा है – 'महादेवी जी के लेखन की प्रमुखतम विशिष्टता है – कवित्व। वास्तव में कवित्व ही उनकी आत्मा का निवासस्थल है और इसीलिए गद्य–लेखन में भी सर्वत्र उनकी छाप पड़ी है। शब्द–चयन से लेकर पद–विन्यास तक सर्वत्र कवित्व सजग मिलेगा। कुछ अंश तो संस्मरण से अलग जा पड़े हैं, गद्य–काव्य बन गये हैं।"

महादेवी जी के संस्मरणों में कहीं–कहीं उन्मुक्त हास्य और सूक्ष्म व्यंग्य भी मिलते हैं। कहना न होगा कि उनका प्रयोग साधन रूप

में ही किया गया है, साध्य रूप में नहीं, परिणामस्वरूप ये लेखिका की शैली के लिये वरदान सिद्ध हुये हैं।

भाषा शैली की दृष्टि से भी महादेवी के रेखाचित्र उच्चकोटि के हैं। चरित्र चित्रण करने में लेखिका ने नाटकीयतापूर्ण पात्र और स्थानानुकूल संवाद और भाषा का प्रयोग किया है। भाषा प्रायः हिन्दी है किन्तु पात्रानुकूल उच्चारण आदि बदलकर पूर्वी हिन्दी, ग्राम सुलभ शब्दावली आदि का प्रयोग कराया गया है। भक्ति का यह संवाद ऐसा ही है – "ई कउन बड़ी बात आय। रोटी बनावय जानित है, दाल राँध लेइत है, साग–भाजी छउक सकित है, अउर बाकी का रहा।"[8]साथ ही साथ उन्होंने घुघरी, गोदरा, बरेटिन आदि देशज शब्द, लेखा–जोखा, लिपे–पुते, माँग–जाँच, टोने–टोटके, नहाने–धोने, बची–खुची आदि शब्द युग्म। अंग्रेजी शब्द – टाइफाइड़, सीज़न, प्रोग्राम, हिटनोटाइज आदि अंग्रेजी – शब्दावली। तद्भव शब्द – समापत, प्रतिग्य, उमिर आदि तद्भव शब्द भाषा की पात्र, स्थान और वातावरण की अनुकूलता के साथ–साथ प्रभात्मकता और स्वाभाविकता के उदाहरण हैं। इसी प्रकार मान न मान मैं तेरा मेहमान, नौ दिन चले अढाई कोस, कोढ में खाज, लग जाये तो तीर नहीं तुक्का,रोज कुँआ खोदना, रोज पानी पीना आदि लोकोक्तियों का सुन्दर प्रयोग किया गया है। शैली के अन्तर्गत भी हास्य व्यंग्य, सूक्ति आलंकारिक और चित्रादि अनेक शैलियों का प्रयोग किया गया है। इस प्रकार हम देखते हैं कि महादेवी से पूर्व किसी भी अन्य सफल रेखाचित्रकार के दर्शन नही होते। वास्तव में भाव और भाषा, परिमाण और परिणाम, सभी दृष्टियों से महादेवी के रेखाचित्र सर्वोत्तम हैं। डॉ0 विश्वनाथ शुक्ल के शब्दों में – "उनकी अपनी ही अटपटी किन्तु प्रेम लपेटी वाणी को उन्होंने ज्यों का त्यों उद्घृत् कर जिस सदाशयता का प्रमाण दिया, उसी ने उनकी इन रेखाओं को काल की कठोर छाती पर वज्र की टॉकी से सदा के लिए अंकित कर दिया है।"[9]

इस प्रकार महादेवी जी ने सर्वप्रथम रेखाचित्र लिखकर एक ओर तो हिन्दी–जगत् को इससे परिचित कराया, दूसरी ओर भावी पीढ़ी का और अपने युग के अन्य रेखाचित्रकारों का मार्ग–दर्शन किया। श्री कृपाशंकर सिंह इस विषय में ठीक ही कहते हैं – "अतीत के चलचित्र में प्रथम बार रेखाचित्र के सम्पूर्ण गुण समाहित दिखाई देते हैं, हिन्दी 'रेखाचित्र–साहित्य को यहीं' से एक स्थायी मार्ग मिला ओर वह अपने पथ पर निश्चिन्तता से बढ़ चला।"[10]

महादेवी जी के पश्चात् श्री पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी का, 'कुछ', रामवृक्ष वेनीपुरी का 'लाल तारा', 'माटी की मूरते', 'गेहूँ और गुलाब', 'मील के पत्थर', श्री प्रकाश चन्द्र गुप्त का 'पुरानी स्मृतियाँ और नये स्केच श्री देवेन्द्र सत्यार्थी का 'रेखाएँ बोल उठी', श्री बनारसीदास चतुर्वेदी का 'रेखाचित्र', डॉ0 प्रेमनारायण टंडन का 'रेखाचित्र' कन्हैयालाल प्रभाकर का 'भूले हुए चेहरे', हर्ष देव मालवीय का 'पुराने तथा पोंगल गुरु', 'उपेन्द्रनाथ अश्क का 'रेखाएँ और चित्र', उदयशंकर भट्ट का 'वह जो मैने देखा' आदि इस युग के प्रमुख रेखाचित्र–संग्रह हैं। इनमें से बेनीपुरी जी ने प्रतीक तथा प्रकाशचन्द्र गुप्त ने निर्जीव वस्तुओं (खण्हर, सड़क, ताल आदि) को विषय बनाकर भावात्मक प्रयोग किये तो सत्यार्थी ने शैली सम्बन्धी नवीन प्रयोग भी किये। इनके अतिरिक्त सत्यवती मल्लिक, अविनाश, रघुबीर सहाय, विद्या माथुर, महताब अली, विष्णु प्रभाकर, प्रो0 सुरेन्द्र दीक्षित, रेणु, मदनवात्स्यायन, महीन्द्रनाथ, कपिल आदि इस क्षेत्र में अग्रणी हैं। इनके साथ ही साथ पन्त, निराला, भगवतीचरण वर्मा, बच्चन, नरेन्द्र शर्मा, सुमन आदि कवियों ने भी काव्य–क्षेत्र में रेखाचित्र सम्बन्धी प्रयोग किये हैं। इस प्रकार हिन्दी रेखाचित्र, जो महादेवी वर्मा के समय शैशवास्था में था, आज यौवन की देहरी पर पहुँच चुका है। कहना न होगा कि कि इसका सर्वाधिक श्रेय एकमात्र महादेवी जी को है। एक ओर हम देखते है कि उनसे पूर्व यदि रेखाचित्र सजीव और शुद्ध रूप में नहीं मिलते तो उनके बाद के रेखाचित्रकारों की तुलना में भी उन्हीं के रेखाचित्र कहीं अधिक सजीव, गुणवान, भावप्रधान, करुणा, सहानुभूति आदि गुणों से युक्त यथार्थ, स्वाभाविक और परिणामस्वरूप प्रभावशाली हैं। गोपाल कृष्ण कौल ने ठीक ही निष्कर्ष निकाला है कि – "हिन्दी में रामवृक्ष बेनीपुरी चोटी के रेखाचित्रकार हैं किन्तु उनके रेखाचित्र कहानी या कथाप्रधान होते हैं और आकृति प्रमुख होती किन्तु महादेवी के रेखाचित्रों में कहानी के साथ कविता भी रहती है।"[11] पं0 बनारसीदास चतुर्वेदी ने अधिकतर बड़े लोगों के रेखाचित्र और संस्मरण लिखे हैं किन्तु महादेवी ने जीवन में आने वाले उन उपेक्षित चरित्रों को अपनाया है जिनमें भारतीय समाज की ज्वलंत समस्यायें हैं। ..... महादेवी में रेखाचित्रलिखने की प्रबल शक्ति है। वह एक चित्रकार हैं और गीति काव्य में भावना चित्रों को प्रस्तुत करने वाली श्रेष्ठ कलाकार हैं।[12]

निष्कर्षः

अन्त में कह सकते है कि शुद्ध रेखाचित्रों से हिन्दी जगत् का परिचय कराने, समकालीन और भावी रेखाचित्रकारों को प्रभावित करने और हिन्दी को सशक्त यथार्थपरक रेखाचित्र प्रदान करने का सर्वप्रथम और सर्वाधिक श्रेय महादेवी जी का है।

संदर्भ सूची

1. कृपाशंकर सिंह : हिन्दी रेखाचित्र : उद्भव और विकास, पृ0 17
2. वही, पृ0 25
3. राजनाथ शर्मा : महादेवी वर्मा और स्मृति की रेखाएँ, पृ0 2
4. महादेवी, सम्पादक : डॉ0 मदान, पृ0 200
5. महादेवी, अतीत के चलचित्र : अपनी बात
6. महादेवी, सम्पादक मदान, पृ0 151
7. महादेवी, अंभिनन्दन ग्रंथ, अनुभूति खंड, पृ0 5
8. महादेवी, पृ0 153
9. महादेवी, स्मृति की रेखाएँ, पृ0 10
10. महादेवी, अभिनन्दन ग्रन्थ, अनुभूति खण्ड, पृ0 99
11. कृपाशंकर सिंह, हिन्दी–रेखाचित्र, उद्भव और विकास, पृ0 26
12. गोपाल कृष्ण कौल, महादेवी

डॉ0 सुधा रानी
(सह आचार्य)
अध्यक्ष हिन्दी–विभाग,
वैश्य महाविद्यालय, भिवानी

हिंदी साहित्य में जीवन मूल्य

भावना

सारांश

साहित्य का सृजन किसी न किसी समाज में रहकर होता है। साहित्य के द्वारा उस समाज के बारे में हमें पर्याप्त जानकारी मिलती हैं इस बारे में कहा भी हैं ''साहित्य समाज का दर्पण है।'' साहित्य में निहित मानवीय मूल्यों से समाज प्रेरणा लेकर प्रगति करता है। भारतीय साहित्य अनेक भाषाओं में लिखा हुआ है उन सभी में निहित मूल्य मानव की प्रगति का कारण बना है। इन मूल्यों से मानव को सदैव सद्गति मिलती है। मनुष्य इन मूल्यों को स्वयं ग्रहण करता है और लाभान्वित होता है बल्कि अपनी आने वाली पीढ़ी को भी लाभान्वित करता है। मूल्यों का स्थानांतरण पीढ़ी दर पीढ़ी चलता रहता है।

यूँ तो प्रत्येक मनुष्य के जीवन में कुछ ना कुछ मूल्य स्थापित रहते है। उन मूल्यों के साथ ही वो बड़ा होता है तथा जीवन भर साथ चलते हैं। भारतीय साहित्य में प्राचीन समय से ही जीवन–मूल्यों को महत्व दिया गया है। भारत में मूल्यों की विवेचना धर्म और संस्कृति के संदर्भ में की है। मानव ने जिन गुणों को अपनाया वो अपने धर्म के अनुसार थे। मनुष्य के अनुसार धर्म के दस लक्षण बताए गए हैं–

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेय शौचनिन्द्रिय निग्रहः।

धीविद्या सत्यमक्रोधो दशंक धर्म लक्षणम्।

धैर्य, क्षमा, दम, अस्तेय, शौच, इन्द्रिय–निग्रह, बुद्धि, विद्या, सत्य और अक्रोध (क्रोधन करना) में दस धर्म के लक्षण है। और यही गुण मानव में निहित हो तो श्रेश्ठता लाते हैं। ''नीतिशतक'' मे भर्तृहरि ने नैतिक मूल्यों का वर्णन करते हुए लिखा है कि जिस मनुष्य में विद्या, तप, दान, शील, ज्ञान, गुण और धर्म नहीं हैं वे मनुष्य इस पृथ्वी पर मनुष्य के रूप में मृग की भाँति विचरण करते हुए प्रतीत होते हैं।

येषां न विद्या न तपो नदानं, ज्ञानं न शीलं न गुणो न धर्मः।

ते मृत्युलोक भुवि भारभूता, मनुष्यरूपेण मृगाश्चरन्ति।।

मूल्य की उत्पत्ति तथा परिभाषा

'मूल्य' शब्द की उत्पत्ति के बारे में संस्कृत हिंदी कोश में कहा गया है किमूल्य शब्द मूल धातु के साथ 'यत्' प्रत्यय लगानेसे बनता है। जिसका अर्थ है–कीमत, मोल, लाभ, पूँजी, उखाड़ देने योग्य, मूलधन आदि। डॉ० धीरेन्द्र वर्मा के अनुसार ''मूल्य शब्द वस्तुतः नीतिशास्त्रीय वैल्यू का पर्यायवाची है। अर्थशास्त्र में वह बाजारवाद के अर्थ विनियम के एक आवश्यक प्रतिमान केअर्थ में प्रयुक्त होता है।''[1]

डॉ० नगेन्द्र ने मूल्य को गुण का पर्यायवाची शब्द स्वीकार किया है, ''मूल्य उस गुण या गुण समवाय का नाम है जो किसी पदार्थ की अपने लिए प्रमाता के लिए अथवा अपने परिवेश के लिए सार्थकता का निर्धारण करता हैं।''[2]

भारतीय विद्वानों ने धर्म, दर्शन, कला विज्ञान, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, नीतिशास्त्र आदि मानव जीवन के समग्र पक्षों में जीवन मूल्य की महत्ता को स्वीकार किया है।

भारत एक बहुभाषी, बहुजातीय एवं बहुसांस्कृतिक देश है। इसलिए यहाँ के साहित्य में भी विविधता के दर्शन होते। हैं। तमिल, तेलुगू, मराठी, गुजराती, कन्नड, बांग्ला, पंजाबी, कश्मीरी आदि में अभिव्यक्त समाज एवं साहित्य में भी वैविध्यझलकता है। परन्तु ये सभी भिन्न होते हुए भी भारतीय समाज का अंग है। समाज में अच्छाई और बुराई दोनों ही प्रवृतियाँ देखी जा सकती है। जहाँ मानवीय गुणों की श्रेष्ठता है वहीं पर दूसरी ओर राक्षसत्व भी मौजूद है। किंतु श्रेष्ठता को अपनाने वाले मानव को ही विजयी माना जाता है।

आदि काल में महर्षि वाल्मीकि ने रामायण की रचना की और इसको व्यापक रूप में मर्यादावादी एवं मूल्यान्वेषी रचना मानते है। जिसके कारण आदर्शवादी समाज की स्थापना को बल मिला।गोरखनाथ, जैन धर्म, बौद्ध धर्म, सिख सम्प्रदाय आदि ने समाज में दया, धर्म, संतोष, सत्य, अहिंसा, मानवता आदि का प्रचार–प्रसार किया। इन्हीं गुणों को कबीर ने विस्तारित रूप देकर अंधविश्वास, धर्म की कुरीतियों, समाज में फैली कुप्रथाओं का डटकर विरोध किया। कबीरदास ने समाज को जात–पात व धर्म के नाम पर बाँटने का विरोध किया। उन्होंने कहा कि मानव का लक्ष्य ईश्वर प्राप्ति होना चाहिए किंतु ईश्वर प्राप्ति कामार्ग मंदिर–मस्जिद जाने से नहीं मिलेगा। उसके लिए मानवीय मूल्यों को अपनाकर अपने जीवन को सही राह पर लेजाकर ही जीवन को सार्थक कर सकते हैं।

साहित्य का केंद्र बिंदु मानव एवं मानवता रही है। संतो ने जहाँ गुरु की महत्ता पर बल दिया वहीं पर सूफी कवियों ने प्रेम को सर्वोतम बताया। जैन साहित्य के माध्यम से त्याग, दया, परोपकार, सेवा आदि को प्रतिपादित किया गया। ''श्रावकाचार'' में धर्म प्रतिष्ठान हैं वहीं ''चन्दनबाला रास'' करुणामयी काव्य है। आदिकाल से लेकर आधुनिक काल तक समय–समय पर साहित्य ने समाज को जागृत करने का कार्य किया है।

आधुनिक काल में देश में कई स्तरों पर परिवर्तन देखने को मिले। किंतु सभी कवियों ने किसी ना किसी माध्यम से अपनी भावनाएँ प्रकट की हैं। कामायनी में प्रसाद जीनेकहा है–

औरों को हँसते देखो मनु

हँसो और सुख पाओ।

अपने सुख को विस्तृत कर लो

सबको सुखी बनाओ।।[3]

उपरोक्त पंक्तियों में विश्व बंधुत्व की भावना से अग्रसर होकर सबको सुखी बना सकते हैं। इस विषय में सुमित्रानंदन पंत जी

कहते है–

'सर्वमुक्ति हो मुक्ति तत्व अब
सामूहिकता ही निजत्व अब
बने विश्व जीवन की स्थूल निधि।[4]

कवि नागार्जुन मानव को जगाने का प्रयत्न निरंतर करते रहे हैं। इनकी कविताओं में जहाँ एक ओर राष्ट्रीयता का भाव दिखाई देता है, वही मानवता के लिए प्रेम की भावना है।

''विषमता के प्रति घृणा का अनोखा उपहारलो,
विश्व मानव के लिए मनुहार लो।[5]

निष्कर्ष:

इस प्रकार हम अध्ययन करते हैं तो ज्ञात होता है कि हिंदी साहित्य में मानवीय मूल्यों के दर्शन होते रहे हैं। समाज में किसी न किसी रचना के द्वारास्वस्थ एवं श्रेष्ठ प्रवृत्तियों की स्थापना होती रही है। मानव जाति ने स्वयं को सही दिशा में ले जाने का प्रयास निरंतर किया है।

संदर्भ सूची

1. डॉ० धीरेन्द्र वर्मा, हिंदी साहित्य कोश
2. डॉ० नगेन्द्र, भारतीय सौन्दर्य शास्त्र की भूमिका, पृ० 159
3. जयशंकर प्रसाद, कामायनी, पृ० 142
4. सुमित्रानंदन पंत, युगवाणी, पृ० 14
5. नागार्जुन, पुरानी जूतियों का कोरस, पृ० 30

भावना (NET, JRF)
पीएच० डी० शोद्यार्थी
हिंदी विभाग (बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय)
अस्थल बोहर (रोहतक)

17

"प्रवासी साहित्यकारों की विश्व पटल पर हिन्दी की स्थापना में भूमिका"

डॉ0 सुधा रानी

सारांश

प्रवासी हिन्दी साहित्य हिन्दी साहित्य से जुड़ी एक नवीन विधा एवं चेतना है। हिन्दी में प्रवासी साहित्य नवयुगीन साहित्यिक विमर्श है। विदेशी आक्रमणकारी, लुटेरे, व्यापारी, यात्री भारत देश में अपने–अपने लक्ष्य को पाने के लिए समय–समय पर आते रहे। अँग्रेज, डच, फैंच आदि शासक हजारों भारतीय मजदूरों को छल से गिरमिटिया मजदूर बनाकर मॉरिशस, फिज़ी, सूरीनाम, ट्रिनीडाड आदि देशों में ले जाये गए। हजारों मजदूर अपने साथ हनुमान चालीसा, रामचरितमानस आदि ग्रन्थों के साथ अपने देश से संस्कृति, गरिमा व भाषा भी लेकर गए।

अमेरिका, यूरोप आदि देशों में शिक्षित भारतीय नौकरी पाकर सुखमय जीवन की लालसा से वहाँ स्थापित हो गए। वहाँ अब दूसरी पीढ़ी तैयार हो गई है। वे अपने देश की स्मृति के साथ अपनी संस्कृति, अस्मिता व भाषा के प्रति समर्पित रहे। अपने देश–प्रेम, संस्कृति–प्रेम व प्रवासी जीवन के तनाव को हिन्दी भाषा में अभिव्यक्त करने लगे। गिरमिटिया भारतीय मजदूरों ने असीम यातनाएँ व संघर्ष झेले जबकि अमेरिका, यूरोप जाने वाले भारतीयों ने यह संघर्ष नहीं किया। इस प्रकार दोनों के साहित्य की परिस्थितियाँ, दृष्टिकोण और सरोकार भिन्न हैं पर भारत प्रेम, भारतीय संस्कृति प्रेम की भावना में एकरूपता है।

विदेशी धरती ने हिन्दी रचना क्षेत्र को विस्तृत आकाश दिया है। हिन्दी प्रवासी साहित्यकारों ने हिन्दी को वैश्विक रूप प्रदान करने में अहम् भूमिका निभाई है।

प्रवासी साहित्यकार देवी नागरानी कहती हैं, "हिन्दी का साहित्य विश्व में हिन्दी की अन्तर्राष्ट्रीयता को बुलंदी के साथ स्थापित कर रहा है। इस बात में कोई शंका नहीं है। चाहे वह मॉरिशस का हिन्दी साहित्य हो या अमेरिका का, सूरीनाम का हो या इंग्लैण्ड का। हिन्दी साहित्य की हर धारा उसी में मिलकर एक राष्ट्रीय भाषा हिन्दी की सरिता बनकर बहेगी। तभी वह सैलाब अन्तर्राष्ट्रीय धरातल पर अपना स्थान पा सकेगा। प्रवासी हिन्दी साहित्य हिन्दी के अन्तर्राष्ट्रीयकरण का सबसे सशक्त मार्ग है।"[1]

विदेशों में हिन्दी को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पहचान दिलाने में विभिन्न प्रवासी साहित्यकारों ने महत् भूमिका निभाई है। उनके द्वारा लिखा साहित्य अलग संवेदना, एक विशिष्ट सोच रखता है। प्रवासी हिन्दी साहित्यकार का भारतीय मन एक अलग देश व परिवेश में ढलता है तो उसके नए संस्कार व दृष्टिकोण उसके अन्तर्मन में निहित परिवेश के बीच टकराहट व दबाव उसके साहित्य में दृष्टिगोचर होता है। उसके मन की ऊब, अकुलाहट, व्याकुलता उसके लेखन में दृष्टिगोचर होती है।

कमल किशोर गोयनका का कहना है– "हिन्दी के प्रवासी साहित्य का रूपरंग, उसकी चेतना और संवेदना, भारत के हिन्दी पाठकों के लिए एक नई वस्तु है, एक नए भावबोध का साहित्य है, एक नई व्याकुलता और बेचैनी का साहित्य है जो हिन्दी साहित्य को अपनी मौलिकता और नए साहित्य संसार से समृद्ध करता है। इस प्रवासी साहित्य की बुनियाद भारत प्रेम तथा स्वदेश–परदेश के द्वन्द्वपर टिकी है तथा बार–बार हिन्दू जीवन मूल्यों तथा सांस्कृतिक उपलब्धियों और उनके प्रति श्रेष्ठता के भाव की अभिव्यक्ति होती है।"[2]

सबसे पहले महात्मा गाँधी व बाद में पं0 बनारसीदास चतुर्वेदी ने भारत में प्रवासी संसार के बारे में देश में नई जागृति पैदा की। 1914 में 21 वर्ष फिज़ी द्वीप में रहकर लौटे तोताराम के संस्मरण 'फिजीद्वीप में मेरे इक्कीस वर्ष' नाम से पुस्तक में वहाँ पर भारतीय मजदूरों के संघर्ष व समस्या को इंगित किया।

डॉ0 लक्ष्मीमल्ल सिंघवी ने प्रवासियों को 'भारतवंशी' नाम दिया। 1992 में उन्होंने लंदन में अपने निवास स्थान पर श्री अटल बिहारी वाजपेयी जी का एकल काव्य पाठकराकर वहाँ हिन्दी के विकास में नया उत्साह पैदा किया। भारत सरकार ने प्रवासियों के सम्मान व मिलन के लिए 9–10 जनवरी, 2003 को पहला प्रवासी भारतीय दिवस आयोजित किया। मॉरिशस में सन् 1935 में हिन्दी प्रचारिणी सभा, 'दुर्गा' हस्तलिखित पत्रिका, पं0 उमाशंकर गिरजावन, पं0 श्री निवास जगदत्त, नेमनारायण, गुरु जी मोहन लाल मोहित आदि अनेक हिन्दी प्रेमियों ने हिन्दी भाषा व साहित्य की धारा को नया मोड़ दिया। आज मॉरिशस के स्कूलों, विश्वविद्यालयों में हिन्दी शिक्षण के साथ–साथ एम. ए. (हिन्दी) व शोध कार्य भी हो रहा है। पहला उपन्यास कृष्ण लाल बिहारी का उपन्यास 'पहला कदम' है। प्रवासी हिन्दी कवि प्रहलाद शमशरण, लक्ष्मी नारायण चतुर्वेदी, पं0 जदुनंदन शर्मा की कविताओं में भारतवंशियों के शोषण, दमन के साथ अमानवीय दुर्व्यवहार का विरोध करते हुए स्वतंत्रता की चेतना उत्पन्न की। ब्रजेन्द्र कुमार भगत, सोनदत्त बखोरी, अभिमन्यु अनत, सूर्य देव सिबरत, धर्मवीर धूरा आदि कवियों ने हिन्दी के विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। मॉरिशस के राष्ट्रकवि कहे जाने वाले ब्रजेन्द्र कुमार भगत, 'मधुकर', की रचनाएँ अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सुप्रसिद्ध हैं। अभिमन्यु अनत ने मॉरिशस की हिन्दी कविता को वैश्विक मानवता से जोड़ा। 'बसन्त पत्रिका' के संपादक अभिमन्यु ने उपन्यास, कहानी, नाटक, यात्रावृतांत,

लघु कथा, संस्मरण, निबन्ध आदि पर अपनी लेखनी चलाई। अभिमन्यु अनत हिन्दी के जनक व विस्तारक माने जाते हैं। उनकी 'लाल पसीना', 'गाँधी जी बोले थे' और 'पसीना बहता रहा' तीन उपन्यासों ने अपने देश के इतिहास को पेश किया। उनके अन्य उपन्यास 'और नदी बहती रही', 'आंदोलन', 'एक बीघा प्यार', 'जम गया सूरज', 'तीसरे किनारे पर', 'चौथा प्राणी', 'तपती दोपहरी', 'कुहासे का दायरा', 'हड़ताल कब होगी', 'चुन–चुन चुनाव', 'अपनी तलाश', 'पर पगडंडी नहीं मरती', मार्कट्वेन का फैसला', 'घर लौट चलो वैशाली' आदि उल्लेखनीय हैं। कमल किशोर गोयन का 'अभिमन्यु' को 'उपन्यास सम्राट व मॉरिशस के प्रेमचन्द कहते हैं।' वे लिखते हैं – "अनत में सामाजिक यथार्थ की अभिव्यक्ति के साथ महाकाव्यात्मक प्रतिभा है जो अपने समाज की संस्कृति, अस्मिता, अस्तित्व और स्वाधीनता के महत् संघर्ष का जीवन्त चित्रण करती है और उपनिवेशवादियों के क्रूर, नृशंस और घातक अत्याचारों के बीच अपनी भारतीयता, भाषा और संस्कृति को जीवित रखती है। अनत ने अपने देश के गूँगे एवं चीखते इतिहास को इसी कारण 'लाल पसीना', 'गाँधी जी बोले थे' और 'पसीना बहता रहा' उपन्यास–त्रयी में प्रस्तुत किया जो महाकाव्यीय ऊर्जा और संघर्ष से परिपूर्ण है।"[3]

सूर्य प्रसाद मंगर भगत ने मॉरिशस में 'दुर्गा' नामक हस्तलिखित पत्रिका द्वारा मॉरिशस में हिन्दी भाषा, समाज–सुधार, सांस्कृतिक उत्थान को वाणी दी। वे हिन्दू, हिन्दी एवं हिन्दुस्तान मॉरिशसीयत की नयी चेतना के प्रतीक पुरुष हैं।

फिज़ी में हिन्दी को संवैधानिक मान्यता प्रदान की गई है। वहाँ रेडियों, टेलीविजन, स्कूल, पार्लियामेंट आदि हर स्थानों पर हिन्दी मिलेगी। प्रवासी साहित्य की दृष्टि से फिज़ी में मॉरिशस जितना विपुल साहित्य नहीं रचा गया।

'फिजी में माता–पिता अपने बच्चों को हिन्दी इसलिए नहीं पढ़ाते कि वहाँ रोजगार की संभावनाएँ हैं बल्कि इसलिए कि उनकी संस्कृति सुरक्षित रहे।'[4]

तोताराम सनाढय की पुस्तक 'फिजी में मेरे इक्कीस वर्ष– 1914 में प्रकाशित हुई। पं0 बनारसीदास चतुर्वेदी ने 'प्रवासी भारतवासी', 'फिजी की समस्या', 'फिजी के भारतवासी' तीन पुस्तकें लिखी।

पं0 रामचन्द्र की 'फिजी दिग्दर्शन', पं0 अयोध्या प्रसाद की 'किसान संघ का इतिहास' ज्ञानीदास की 'भारतीय उपनिवेश फिजी', 'गुप्तशक्तियाँ', 'फिजी गल्पिक' और 'मृदुला' उल्लेखनीय हैं।

प्रसिद्ध प्रवासी लेखक जोगिन्दर सिंह कंवल का योगदान सराहनीय है। उनके चार उपन्यास 'करवट', 'सबरा', 'धरती मेरी माता' तथा 'सात समुद्र पार', तथा एक काव्य संग्रह 'यादों की खुशबू' प्रकाशित हो चुके हैं।

फिजी का प्रवासी साहित्यकार प्रवास का दुखदर्द की संभावनाओं के साथ अपने देश के संस्कारों को जोड़कर, उसमें व्याप्त विषमताओं को कागज पर उतार देता है और उसकी संवेदना सहज ही जुड़कर सबकी संवेदना बन जाती है।

सूरीनाम में हिन्दू संस्कृति, धर्म तथा संस्कार पूर्णतः जीवित हैं। सूरीनाम के राजदूत हिन्दी प्रेमी बच्चू प्रसाद सिंह बने। सॉंतवा विश्व हिन्दी सम्मेलन सूरीनाम में हुआ। कमल किशोर गोयनका 'विश्व हिन्दी रचना' के संपादक व संयोजक थे। डॉ0 पुष्पिता ने अपनी पुस्तक 'सूरीनाम' में इस देश के भारतवंशियों के जीवन, हिन्दी–हिन्दू संस्कृति–प्रेम और हिन्दी साहित्य के स्वरूप पर प्रकाश डाला। उनकी अन्य पुस्तकें 'कविता सूरीनाम', 'कथा सूरीनाम', काफी लोकप्रिय रहीं। डॉ0 पुष्पिता ने सूरीनाम के हिन्दी प्रवासी साहित्य को भारत की मुख्य धारा से जोड़ने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया। महादेव खुनखुन, मार्तिम हरिदत्त (लछमन), सुरजन पुरोही चन्द्रमोहन आदि अन्य प्रवासी रचनाकार उल्लेखनीय हैं।

ट्रिनिडाड में 'इन्द्रधनुषी संस्कृति' है परन्तु हिन्दू धर्म व हिन्दी का अस्तित्व कायम है। यहाँ भारतीय उच्चायुक्त द्वारा स्थापित 'हिन्दी एजुकेशन बोर्ड' (1952), प्रो0 हरिशंकर आदेश द्वारा स्थापित 'भारतीय विद्या संस्थान', 'हिन्दी निधि' तथा वहाँ होने वाले पाँचवे विश्व हिन्दी सम्मेलन ने हिन्दी भाषा एवं साहित्य के विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान किया।

अमेरिका व इंग्लैण्ड में हिन्दी–साहित्य व हिन्दी का समुचित विकास हुआ है। अमेरिका के कई, विश्वविद्यालयों में हिन्दी पढ़ाई जाती है तथा अनेक भारतीय भी अपने घरों में बच्चों को हिन्दी पढ़ाते हैं। अनेक प्रवासी लेखकों में कुँवर चंद्रप्रकाशसिंह, रामेश्वर अशांत, गुलाब खंडेलवाल, डॉ0 भूदेव शर्मा, वेद प्रकाश बटुक, सुषम वेदी, अंजना संधीर, सुधा ओम ढ़ींगरा आदि ने अमेरिका में हिन्दी भाषा, हिन्दू धर्म व संस्कृति पर पूर्णतः निरपेक्षता से लिखा।

रामेश्वर अशांत ने न्यूयार्क में, 'विश्व हिन्दी समिति' की स्थापना की, अनेक कवि सम्मेलन करवाएँ, हिन्दी दिवस पर कार्यक्रम आयोजित करवाये। डॉ0 भूदेव शर्मा ने 'विश्व विवेक' नामक त्रैमासिक पत्रिका निकाली। अमेरिका के सौ से भी अधिक हिन्दी लेखकों व भाषाविद्ों की रचनाएँ प्रकाशित करवाई गई।

वेदप्रकाश बटुक ने लोक साहित्य पर एक संस्था बनायी। उन्होंने अमेरिका के कई विश्वविद्यालयों में शिक्षण कार्य किया। 'नचिकेता' व 'इंडियन वॉयस' पत्रिकाओं का संपादन किया। उनके काव्य ग्रन्थ 'त्रिविधा', 'बंधन', 'अपना देश पराया', 'आपातशतक', 'कैदी भाई बंदी देश', 'नील कंठ न बन सका', 'एक बूँद और', 'कल्पना के पंख पाकर', 'रात का अकेला सफर', 'नए अभिलेख का सूरज', 'बाहों में लिपटी दूरियाँ' आदि प्रकाशित हो चुके हैं।

अज्ञेय जी लिखते हैं "बटुक जी की कविताओं में प्रबल उर्जा

के वेग की कसमसाहट है, दो जीवन दृष्टियों और संस्कृतियों का तनाव है, अस्मिता की एक छटपटाहट–भरी खोज है, भारतीय लोक–जीवन से रस लेने वाला स्वदेश का सम्वेदन है तथा उनमें ग्रामीण तथा नगर दोनों संस्कार हैं।"[5]

गुलाब खण्डेलवाल 'विश्वा' नामक पत्रिका के संपादक मंडल के सदस्य रहे। उन्होंने 47 काव्य ग्रन्थों की रचना अमेरिका में की है। खण्डेलवाल कुँवर चन्द्रप्रकाश सिंह के साथ जुड़े जिन्होंने अमेरिका में हिन्दी साहित्य के विकास के लिए महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। सुषम बेदी और अंजना संधीर कोलम्बिया विश्वविद्यालय में पढ़ाती हैं और साहित्य रचना करती हैं। सुषम वेदी की उपन्यास 'हवन', 'लौटना', 'कतरा दर कतरा', 'इतर गाथा', 'अमर बेल की'। कहानी संग्रह 'चिड़िया और चील' तथा शोध प्रबन्ध 'हिन्दी–नाटक : प्रयोग के संदर्भ' में उल्लेखनीय हैं। उन्होंने अमेरिका में प्रवासियों के जीवन के तनाव, संघर्ष व सरोकारों का मार्मिक चित्रण किया है।

डॉ0 अंजना संधीर का गज़ल संग्रह – 'धूप, छाँव और ऑगन'। कविता संग्रह– 'तुम मेरे पापा जैसे नहीं हो', 'अमेरीका हड्डियों में जम जाता है', संपादित काव्य संग्रह– 'प्रवासी हस्ताक्षर', 'प्रवासिनी के बोल', 'प्रवासी आवाज', 'ये कश्मीर है प्रकाशित हो चुके हैं। उनके साहित्य में प्रवासियों के दर्द, अकेलापन, दोहरा जीवन जीने की विवशता को दर्शाने का प्रयास है। अमेरिका में डॉ0 सुधा ओम ढींगरा, हिन्दी के लेखन कार्य करने, समाचार – पत्रों में लेख लिखने, 'हिन्दी चेतना' के संपादन के साथ हिन्दी भाषा व साहित्य के लिए महत्त्वपूर्ण कार्य कर रही हैं। उनके द्वारा लिखित पुस्तकों में 'मेरा दावा है', 'तलाश पहचान की', 'परिक्रमा', 'माँ ने कहा था', 'सफर यादों का', 'वसूली', 'गंगा बहती रही', उल्लेखनीय हैं।

रेणु गुप्ता राजवंशी की 'प्रवासी स्वर', 'प्रवासी मन', 'कौन कितना निकट', 'जीवन लीला', 'तमसो मा ज्योतिर्गमय', 'असतो मा सद्गमय' आदि प्रकाशित हुए हैं।

'ब्रिटेन में हिन्दी' साहित्य पर दो पुस्तके आई–राधा कान्त भारती द्वारा संपादित 'ब्रिटेन में हिन्दी रचनाकार', उषा राजे सक्सेना की 'ब्रिटेन में हिन्दी' : उषा राजे सक्सेना अपनी पुस्तक में ब्रिटेन में हिन्दी भाषा और साहित्य के विकास और उसके इतिहास को विस्तृत रूप से पेश करती हैं। अन्य यूरोपीय देशों में भी हिन्दी प्रवासी साहित्य का विपुल भण्डार है।

भारतेतर देशो में भारतवंशियों द्वारा लिखा हिन्दी प्रवासी साहित्य का भरा पूरा भंडार है जो हिन्दी साहित्य के संसार को ओरविस्तार देता है। प्रवासी साहित्य हिन्दी साहित्य का ही विस्तार है। प्रवासी साहित्य में भारत देश है, उनका समाज है, संस्कृति है। हिन्दी भाषा उनकी अभिव्यक्ति, धर्म व संस्कृति की भाषा है। प्रवासी साहित्य में मौलिकता है, अतीत का दर्द, शोषण संघर्ष के साथ वर्तमान जीवन के दंश व समस्याएँ हैं। वे अपनी जड़ों से जुड़ाव व पुरखों का दर्द महसूस करते हैं और उसकी अभिव्यक्ति हिन्दी भाषा में अभिव्यक्त करते हैं।

डॉ0 कमल किशोर गोयनका लिखते हैं –

"हिन्दी के प्रवासी साहित्य ने अपना एक संसार रचा, जो चाहे छोटा ही था, परन्तु उसने एक अलग साहित्य संसार की रचना की, जो पूरे विश्व में निरंतर फैलता गया और हिन्दी के प्रवासी साहित्य का एक बिम्ब निर्मित हुआ। अब वह मॉरिशस तक सीमित न था उसका परिदृश्य वैश्विक बन गया। उसकी संरचना में कई शक्तियाँ काम करती रहीं। विश्व के कई देशों में विश्व हिन्दी सम्मेलन हुए। भारत के हिन्दी लेखकों एवं प्रवासी हिन्दी लेखकों का भारत में सम्मान होने लगा। देश के साहित्यिक अकादमियों ने प्रवासी हिन्दी साहित्य पर गोष्ठियाँ की, प्रवासी भारतीय दिवस और डायस्पोरा आरम्भ किया। प्रवासी लेखकों की कृतियाँ भारत में छपती रही, उन पर चर्चाएँ हुई और हिन्दी विश्व में प्रवासी हिन्दी साहित्य की प्रतिष्ठा बढ़ी, हिन्दी को मुख्यधारा में उचित स्थान देने की माँग उठने लगी। हिन्दी साहित्य का उपर्युक्त प्रयास श्लाघ्य है।"[6]

प्रवासी हिन्दी साहित्य लेखन की यह परम्परा दीर्घकाल तक यथावत बनी रहे। प्रवासी लेखक अपने लेखन की परम्परा को व भारतवंशी होने के गर्व को सदा अपनी लेखनी से उद्वेलितकरते रहें।

संदर्भ–

1. उषा राजे सक्सेना, विदेशों में हिन्दी साहित्य, नया ज्ञानोदय, दिसम्बर, 2008।
2. कमल किशोर गोयनका 'विश्व हिन्दी रचना' भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद, नई दिल्ली।
3. कमल किशोर गोयनका, अभिमन्यु अनत – मेरे दोस्त, हिन्दी का प्रवासी साहित्य।
4. विश्व हिन्दी पत्रिका 2010, सं0 गंगाधर सिंह सुखलाल।
5. 'एक बूंद और' अज्ञेय की भूमिका।
6. कमल किशोर गोयनका, हिन्दी प्रवासी साहित्य।

डॉ0 सुधा रानी

(सह आचार्य)

अध्यक्षा हिन्दी–विभाग,

वैश्य महाविद्यालय, भिवानी

18

राजभाषा हिन्दी : कल, आज और कल

डॉ0 अनिता गोयल

सारांश

किसी भी देश की भाषा में राजभाषा बनने के लिए तीन गुणों का होना अत्यंत आवश्यक है, वह बहुसंख्यक जनता द्वारा प्रयोग होती हो, वह सीखने में उपयुक्त व सरल हो तथा देश की सभ्यता व संस्कृति से सीधा संबंध हो. इन तीनों शर्तों को पूर्ण करने वाली हिन्दी को 14 सितम्बर 1949 को संविधान में 343 (1) के अन्तर्गत भारतीय संघ की अधिकृत भाषा या राज भाषा घोषित किया गया. 15 वर्षों के लिए अंग्रेजी को सह राजभाषा का पद दे दिया गया. दलगत व स्वार्थी राजनीति, क्षेत्रवाद, प्रान्तवाद के चलते हिन्दी की भावना फाइलों के ढेर में सिसक–सिसक कर रह गई व केवल 3 प्रतिशत लोगों द्वारा प्रयुक्त अंग्रेजी भाषा का वर्चस्व कायम रहा.

अलगाववादी, स्वार्थी तत्वों व संकीर्ण विचारकों ने हिन्दी को क्लिशट भाषा कह कर हिन्दी का विरोध किया. जबकि हिन्दी भाषा पूर्ण रूप से व्याकरण सम्मत व वैज्ञानिक भाशा है. हिन्दी की अपनी लिपि देवनागरी है. वर्ण व्यवस्था, स्वर व मात्राओं की व्यवस्था, ध्वनियों की व्यवस्था, सर्वनाम, प्रसर्ग, विभक्ति चिन्हों, क्रिया पदों की जैसी व्यवस्था हिन्दी में है वैसी अन्य किसी भाषा में नहीं.

आज अनेकानेक अवरोधों के बावजूद हिन्दी निरन्तर विकास की ओर उन्मुख दिखाई देती है. आज हिन्दी राजभाषा, राष्ट्रभाषा, माध्यमभाषा, राजकाज की भाषा आदि नामों से जानी जाती है, हिन्दी साहित्यिक भाषा तक ही नहीं अपितु शिक्षा के क्षेत्र में, व्यवसाय के क्षेत्र में, खेलकूद के क्षेत्र में, विज्ञान व तकनीकी के क्षेत्र में, मीडिया के क्षेत्र में, आकाशवाणी, दूरदर्शन, समाचार पत्र, पत्रिकाओं, विज्ञापन व चलचित्र आदि में हिन्दी के वर्चस्व को देखा जा सकता है. कम्पयूटर व इंटरनेट ने देश देशान्तरों के अन्तर को मिटा दिया है. धीरे–धीरे हिन्दी सम्पर्क भाषा के रूप में स्थापित हो रही है. आवश्यकता है–सकारात्मक सोच की.

भारत के अतिरिक्त विश्व के लगभग 100 विश्वविद्यालयों में हिन्दी पढ़ाई जा रही हैं. हिन्दी के विकास में बाजारवाद ने अपनी महत्ती भूमिका निभाई है. अनेक विदेशी कम्पनियों के लिए भारतीय बाजार आकर्षण का केन्द्र है. भारतीय बाजार में पैठ बनाने के लिए हिन्दी को जानना व समझना अनिवार्य हो गया है. कारण भले ही कुछ भी हों, परन्तु विकास तो हिन्दी का ही हो रहा है.

भाषा, भावों की अभिव्यक्ति का माध्यम है. भाषा मनुष्य की उन्नति एवं विकास का प्रमुख आधार है। भाषा का सीधा सम्बंध मनुष्य से है। मनुष्य के चिंतन और कार्यक्षेत्र की पर्याप्त विविधता के कारण भाषायी विविधता स्वाभाविक है।

किसी भी देश की भाषा में राजभाषा बनने के लिए तीन गुणों का होना अत्यंत आवश्यक है।

1) वह बहुसंख्यक जनता द्वारा प्रयोग होती हो।
2) वह सीखने में उपयुक्त व सरल हो।
3) देश की सभ्यता व संस्कृति से सीधा सम्बंध हो।

हिन्दी भाषा इन सभी तीन शर्तों को पूर्ण करती है। यही कारण है कि आज हिन्दी राजभाषा, राष्ट्रभाषा, माध्यम भाषा, राजकाज की भाशा आदि नामों से जानी जाती है। कुछ संकीर्ण विचारकों के अनुसार हिन्दी क्लिष्ट भाषा है। जबकि हिन्दी भाषा पूर्ण रूप से व्याकरण सम्मत व वैज्ञानिक भाषा है। हिन्दी की अपनी लिपि देवनागरी है। वर्ण व्यवस्था, स्वर व मात्राओं की व्यवस्था, ध्वनियों की व्यवस्था, सर्वनाम, प्रसर्ग विभक्ति चिन्हों, क्रिया पदों की जैसी व्यवस्था हिन्दी में है वैसी व्यवस्था किसी अन्य भाषा में नहीं। हिन्दी का विकास अबाध गति से निरन्तर आगे की ओर बढ़ रहा है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् संविधान की रचना हुई। संविधान के अनुसार भारत राष्ट्र को एक पूर्ण स्वतंत्र प्रभुसत्ता सम्पन्न एक तंत्रीय संघीय गणराज्य घोषित किया गया। इसी संविधान में 343 (1) के अन्तर्गत हिन्दी को भारतीय संघ की अधिकृत भाषा या राष्ट्रभाषा घोषित किया गया। हिन्दी का 63 वर्षों के पश्चात् भी राष्ट्रभाषा के पद पर आसीन न होने का प्रमुख कारण 1950 में ही इसे राष्ट्रभाषा न बनाकर 15 वर्षों के लिए टाल देना था। अब तो यहां तक कह दिया गया है कि जब तक किसी भी राज्य का हिन्दी के प्रति विरोध रहेगा, तब तक अंग्रेज़ी 'माध्यम भाषा' के रूप में प्रयुक्त होती रहेगी। हद तो तब हुई जब भारत के संविधान की रचना भारत की राष्ट्रभाषा में न होकर अंग्रेज़ी में आरम्भ हुई। संविधान में प्रत्येक स्थान पर भारत के स्थान पर इंडिया शब्द का प्रयोग हुआ है। इसके अतिरिक्त भारत की 18 राष्ट्रीय भाषाओं कश्मीरी, राजस्थानी, हिन्दी, पंजाबी, गुजराती, असमिया, उड़िया, तमिल, तेलगु, कन्नड़, मलयालम, बंग्ला आदि को भी संविधान में जोड़ा गया।

अलगाववादी, स्वार्थी व संकीर्ण विचारकों ने हिन्दी को क्लिष्ट भाषा कहकर हिन्दी का विरोध किया। जबकि सरलता हिन्दी का सहज धर्म है और संसार की सरलतम भाषाओं में वह अन्यतम है। किसी भाषा के सम्बंध में जानने से पूर्व उसके चार अवयवों पर विचार करना चाहिए– 1 ध्वनि 2 शब्द 3 वाक्य 4 अर्थ. इसके अतिरिक्त हम लिपि को भी जोड़ सकते है। लेखन अनुरूप उच्चारण, स्वर व व्यंजन की स्पष्ट व निश्चित योजना, विपुल शब्द भण्डार, सर्वनाम, कारक विभक्ति, क्रिया, विशेषण, वाक्य विन्यास आदि की कसौटी पर खरी उतरती हैं। महाकवि तुलसीदास जी के शब्दों में–'कहत, सुनत समुझत सब नीका'

हिन्दी से तात्पर्य उस भाषा से है जो सम्पूर्ण हिन्दी भाषी क्षेत्र की परिनिष्ठित भाषा है। यह हिन्दी भाषी क्षेत्र हरियाणा, राजस्थान, मध्यप्रदेश दिल्ली, उत्तर प्रदेश, बिहार और हिमाचल में फैला हुआ है।

इस विशाल क्षेत्र में बसे हुए लोगों की भाषा हिन्दी है। जो खड़ी बोली का परिनिश्ठित रूप है। हिन्दी भाषी समुदाय के साथ–साथ हिन्दी भाषा का विकास हुआ।

शब्दार्थ की दृष्टि से हिन्दी–'हिन्द' या भारत में बोली जाने वाली भाषा कही जा सकती है। इसके प्राचीन नामों में 'हिन्दुई' या 'हिंदवी' भी इसी अर्थ को व्यक्त करती है। जब मुसलमान भारत में आए तो उन्होंने मध्यदेश की भाषा को 'हिन्दुई' कहा, जो बाद में व श्रुति के कारण हिंदुवी बन गई है। मौटे तौर पर दिल्ली के आसपास की बोली 'देहलवी' या उसके निकटवर्ती क्षेत्रों की बोलियों पर आधारित यह हिन्दू–मुसलमानों की समान भाषा रही, जिसके अन्तर्गत प्राचीन–नवीन रूप हिन्दी, हिन्दुस्तानी, दक्किनी, रेख्ता, उर्दू आदि सभी समाहित हो जाते है।

आदिकालीन कवि अमीर खुसरो ने कहा ''मैं हिन्दुस्तानी तुर्क हूँ और हिंदवी में उत्तर देता हूँ। मेरे पास मिस्र की शक्कर नहीं है जिससे मैं अरबी में बात कर सकूँ।

तुर्क–इ–हिंदुस्तानिम मनदर हिंदवी गोएम जवाब।

शक्कर–इ–मिस्री न दरम कज़ अरब गोएम सुखन ।।

मुसलमानों के आगमन से पूर्व हमारी भाषा को सामान्यतः 'भाशा' अथवा 'भाखा' कहकर पुकारा गया। हिन्दी के मध्यकालीन कवियों–कबीर, तुलसी, केशव आदि ने हमारी देशी भाषा को केवल भाषा की संज्ञा दी।

संस्कृत कबिरा कूप जल, भाषा बहता नीर (कबीर)

का भाषा का संस्कृत, प्रेम चाहिए सांच (तुलसी)

भाषा बोलि न जान ही, जिनके कूल दास (केशवदास)

प्राचीन कवियों ने 'भाशा' शब्द का प्रयोग हिन्दी के पर्याय रूप में स्वीकार किया है। हिन्दी–हिन्दुओं की भाषा है या हिन्दी भाषी जाति की भाषा है, इस संकीर्ण अर्थ में 'हिन्दी' को नहीं लेना चाहिए।

इतिहासकार 'गार्सा द तासी' ने हिन्दवी के सम्बंध में लिखा है –''उत्तर और पश्चिम प्रांत में जिस भाशा का विकास हुआ है, जो केवल भाशा या भाखा (सामान्य भाशा) नाम से पुकारी जाती है। वह हिन्दुई (हिन्दुओं की भाषा) या हिन्दवी (भारतीय भाषा) के विशेश नाम से प्रचलित है।'' 1

भाषा शास्त्रीय दृश्टि से 'हिन्दी' से तात्पर्य खड़ी बोली से है। वास्तव में हिन्दी खड़ी बोली का वही रूप है। जो देवनागरी लिपि में लिखी जाती है और जो अपने वृहद् शब्द भण्ड़ार का निर्माण प्रमुख रूप से संस्कृत के तत्सम्, अर्द्धतत्सम् शब्दों से करती है।

डॉ0 धीरेन्द्र वर्मा ने हिन्दी को उत्तर भारत के मध्य भाग के हिन्दुओं की वर्तमान साहित्यिक भाषा मानते हुए लिखा– '' संसार के भाशा समूहों में भारत यूरोपीय कुल के भारत–ईरानी उपकुल में भारतीय आर्य भाशा की आधुनिक भाषाओं में से एक मुख्य भाशा हिन्दी है '। 2

1500 ई0 से 1800 ई0 तक का काल मध्यकाल है। 16वीं शती के आरम्भ में राजनीतिक परिस्थिति में परिवर्तन हुआ। शासन की बागडोर मुगल शासकों के हाथ में आ गई। इस काल में भाशा के तीन रूप सामने आते हैं– खड़ी बोली, ब्रजभाशा तथा अवधी। ब्रजभाशा एवं अवधी का अत्यधिक साहित्यिक विकास हुआ। कृश्ण भक्त कवियों का सम्पूर्ण विकास ब्रजभाशा में लिखा गया तथा रामभक्त कवियों ने अवधी में। सूफी काव्य की भाशा का माध्यम अवधी रहा। फ़ारसी शैली होने के कारण उन्हें उर्दू का कवि माना गया।

19वीं सदी के दूसरे दशक में हिन्दी प्रदेशों में अंग्रेजों की सत्ता स्थापित हुई। इस राजनीतिक परिवर्तन का सीधा असर मध्य भारत की भाशा हिन्दी पर भी पड़ा। अठारहवीं सदी में जब अवधी और ब्रज का साहित्यिक रूप जन भाशा से दूर हो गया, तब उसका स्थान खड़ी बोली हिन्दी ने लिया।

सम्पूर्ण भारत पर अंग्रेजी शासकों ने कब्ज़ा कर लिया। अंग्रेजों को हिन्दी व फ़ारसी तथा भारतीयों को अंग्रेज़ी को समझने में परेशानी होने लगी। अंग्रेजों के सामने समस्या उत्पन्न हुई कि किस प्रकार आपसी संवाद स्थापित किया जाए। उनका मुख्य उद्देश्य व्यापार में वृद्धि करना एवं अधिक से अधिक धन को अपने देश भेजना था। अतः व्यापार चलाने व धन लाभ हेतु भाषा को सीखने व सीखाने की आवश्यकता आ पड़ी।

फोर्ट विलियम कॉलिज, कलकत्ता की स्थापना हुई और लल्लूलाल, सदासुख लाल, सदनमित्र एवं इंशा अल्ला खां आदि साहित्यकारों ने खड़ी बोली हिन्दी के प्रयोग की ओर कदम बढ़ाया। आज़ादी से पूर्व भारतेन्दु हरिश्चन्द्र जी ने हिन्दी भाषा के प्रचार–प्रसार के लिए आन्दोलन चलाया। उन्होंने निज़ भाषा पर बल दिया. एक ऐसी भाषा की योजना बनाने का निश्चय किया जो हमारी हो। बचपन से बड़े होने तक हम जिस भाषा में बोलते, सोचते व समझते हैं उसी भाषा को प्रचरित किया। भारतेन्दु ने 1 लाख लोगों के हस्ताक्षर करवा कर हिन्दी के प्रयोग पर बल दिया क्योंकि रीतिकालीन ब्रज भाषा भी अपना स्वरूप बदल रही थी। उन्होंने कहा कि हमारी भाषा की लिपि देवनागरी है।

1 हिन्दुई साहित्य का इतिहास पृ0 5

2 धीरेन्द्र वर्मा : हिन्दी भाषा और लिपि

अंग्रेजों द्वारा हिन्दी के प्रचार के पीछे मूल कारण शासन को चलाने की आवश्यकता थी। भारतेन्दु युग से ब्रजभाषा, अवधी, अरबी, फ़ारसी, हिन्दी आदि सभी भाषाओं के बीच की भाषा को तैयार किया गया। जिसे हम खड़ी बोली हिन्दी कहते हैं। अंग्रेजों के द्वारा अंग्रेजी भाषा सीखने पर बल दिया जाने लगा। 1857 के स्वाधीनता आन्दोलन की भाषा हिन्दी रही। यह आन्दोलन सम्पूर्ण भारतवर्ष में चला। क्रान्तिकारियों ने एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश, हिन्दी भाषा भाशियों से अन्य भाषा भाषियों तक आन्दोलन को पहुंचाया और एक जुट होकर अंग्रेजी नीतियों का विरोध किया। अनेक रियासतों एवं राज्यों जहां पर हिन्दी नहीं बोली जाती थी, उन्हें भी अंग्रेज़ी शासन में काम करने के लिए हिन्दी को अपनाना पड़ा। लार्ड मैकाले की शिक्षा नीति के अन्तर्गत भारतीयों को अंग्रेज़ी सिखाई जाने लगी ताकि उन्हें शासन व राज काज के कार्यों के लिए विदेशी महंगे क्लर्कों को बुलाना न पड़े। और धीरे–धीरे अंग्रेजी को माध्यम भाषा के रूप में अपनाया जाने लगा।

आज हिन्दी केवल साहित्यिक भाषा तक ही नहीं अपितु शिक्षा के क्षेत्र में, व्यवसाय के क्षेत्र में, खेलकूद के क्षेत्र में, विज्ञान व तकनीकी क्षेत्र में, मीड़िया के क्षेत्र में, आकाशवाणी, दूरदर्शन, समाचार–पत्र, पत्र–पत्रिकाएं, विज्ञापन, चलचित्र आदि में हिन्दी के वर्चस्व को देखा जा सकता है।

कुछ वर्ष पूर्व दूरदर्शन पर आने वाले विभिन्न कार्यक्रमों जैसे कार्टून नैटवर्क, डिस्कवरी आदि चैनलों पर केवल अंग्रेजी का ही वर्चस्व था। परन्तु आज प्रत्येक रिपोर्ट व प्रत्येक चैनल पर हिन्दी के विकास को देखा जा सकता है। कार्टून व डिस्कवरी जैसे चैनलों पर हिन्दी अनुवाद सुना जा सकता है। ऐनीमिऐशन फिल्में भी हिन्दी में बन रही है ।

हिन्दी के विकास की दिशा में हिन्दी समाचार–पत्रों एवं पत्र–पत्रिकाओं का भी महत्त्वपूर्ण योगदान है। अंग्रेज़ी के समाचार–पत्रों की संख्या, हिन्दी के समाचार–पत्रों की संख्या के सामने न के बराबर है। साहित्यिक हिन्दी पत्रिकाओं की संख्या अत्यधिक है। हिन्दी भाषी क्षेत्रों व अहिन्दी भाषी क्षेत्रों में इनका प्रकाशन बिना किसी भेदभाव के हो रहा है। धर्मयुग, सारिका, दिनमान, जाह्नवी, साप्ताहिक हिन्दुस्तान, नया ज्ञानोदय, हंस, कादम्बिनी, साहित्य अमृत, सरस्वती सुमन, शब्द सरोवर, अक्षर पर्व, पुश्पगंधा, अभिनव प्रयास, शुभतारिका, युगीन, मंदाकिनी आदि। स्वयं हमारे कॉलिज के हिन्दी विभाग की ओर से वर्श 2005 में आयोजित राश्ट्रीय–संगोश्ठी '' संतों की वाणी में क्रान्ति चेतना'' एवं पत्रिका–प्रदर्शनी के अन्तर्गत अनेकानेक क्षेत्रों में प्रकाशित होने वाली हजारों हिन्दी पत्रिकाओं की प्रदर्शनी लगाई। यह इस बात का प्रमाण है कि हिन्दी में जितनी पत्रिकाओं का प्रकाशन हो रहा है, उतना अंग्रेजी में नहीं।

विज्ञापन के क्षेत्र में भले ही शीर्षक रोमन में लिखा जा रहा हो, परन्तु पढ़ा हिन्दी में ही जा रहा है। 'ठण्ड़ा मतलब कोका–कोला' , छोटी कार बड़ा आकार', 'ये दिल मांगे मोर', जिन्दगी के साथ भी जिन्दगी के बाद भी, क्या आइडिया है आदि।

कहने का तात्पर्य यह है कि बाज़ार और व्यवसाय की भाषा हिन्दी ही है। अधिक से अधिक आकर्षण को भरकर अधिक से अधिक मुनाफा कमाना ही इनका एकमात्र ध्येय है। बड़ी से बड़ी कम्पनियों को यह अहसास है कि भारतीय समाज में यदि उन्हें पैठ बनानी है तो वह हिन्दी के माध्यम से ही होगी। कारण भले ही कुछ भी हों, परन्तु विकास तो हिन्दी का ही हो रहा है.

राजनीति व राजनेताओं की भाषा हिन्दी है। हिन्दी भाषी क्षेत्र में नेता द्वारा दिया गया भाषण हिन्दी में ही होगा तथा अहिन्दी भाषी क्षेत्रों में भाषण या तो क्षेत्रीय भाषाओं में या फिर हिन्दी भाषा में ही होगा, परन्तु अंग्रेज़ी में नहीं। वोट मांगने के समय हिन्दी ही काम आती है। लेकिन चुने जाने के पश्चात् यही नेता न जाने क्यूं अंग्रेज़ी के पक्षधर हो जाते हैं।

अंग्रेज़ी को माध्यम भाषा कहना भ्रान्तिपूर्ण है। विश्व के अनेकानेक देशों में हिन्दी में बोला व समझा जा रहा है। हिन्दी फिल्मों, दूरदर्शन कार्यक्रमों एवं प्रवासी भारतीयों'' ने हिन्दी के प्रचार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। फिजी, सूरीनाम, ट्रीनीड़ाड, गुयाना मॉरीशस, ब्रिटेन, मलेशिया सिंगापुर आदि देशों में प्रवासी भारतीयों की बड़ी संख्या होने के कारण हिन्दी की धारा प्रवाहमान है। धर्म प्रचारकों ने भी देश विदेश में धर्म प्रचार के साथ–साथ हिन्दी का भी प्रचार किया। फिजी में हिन्दी का आरम्भ सन् 1879 ई0 में हुआ। भारतीय मजदूरों की भाषा हिन्दी थी। उन्होंने हिन्दी को अपनाया व धीरे–धीरे हिन्दी का विकास हुआ। 1926 में फिजी में भारतीय पाठशाला का आयोजन हुआ। आज फिजी में हिन्दी की अनेक पत्रिकाएं निकलती हैं। यही स्थिति बर्मा, दक्षिण अफ्रिका, जापान, फ्रांस, चैकोस्लाविया में भी है। पर्यटन में भी इस दिशा में अभूतपूर्व योगदान दिया है। दुबई के सम्बन्ध में मेरा व्यक्तिगत अनुभव रहा कि वहां पर हिन्दी को आसानी से बोला व समझा जा सकता है, अंग्रेजी को नहीं। अगर हम विदेशों की बात करें तो अमेरीका, इग्लैंड़ तथा इंग्लैड़ द्वारा शासित देशों में ही अंग्रेज़ी बोली जाती है, अन्य सभी देशों में नहीं।

राम मनोहर लोहिया जब शोधकार्य हेतु जर्मन गए, तब उन्हें यह जानकर आश्चर्य हुआ कि जर्मन में एक भी ऐसा विद्वान नहीं जो उन्हें अंग्रेज़ी माध्यम से शोध कार्य करवा सके। तब उन्होंने पहले जर्मनी को सीखा, तत्पश्चात् शोधकार्य सम्पन्न किया। ऐसा ही अनुभव अनेक ऐसे लोगों का रहा होगा जो विदेशों में जाने से पूर्व अंग्रेज़ी सीखते हैं, परन्तु अंग्रेज़ी उनके किसी काम नहीं आती। एक बार लोहिया जी से प्रश्न किया गया कि यदि वे प्रधानमंत्री बन गए तो क्या कर लेंगे ? उन्होंने जवाब दिया ''मैं भारत माता को अपनी जुबान दे दूँगा, राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी को प्रतिष्ठित करके'' ।

पिछले अनेक वर्पों में हिन्दी के प्रचार प्रसार के अनेक प्रयास किए। उनके प्रयासों के परिणामस्वरूप हिन्दी निरन्तर विकास की ओर अग्रसर है। किसी अन्य भाषा को सीखना या बोलना ज्ञान में वृद्धि है। ज्ञान–विज्ञान के लिए किसी विदेशी भाषा को थोपना गलत है। हिन्दी का मानक स्वरूप, परिभापित शब्दावली आदि की निरन्तरता ही हिन्दी विकास में सार्थक पहल है। हमारे विद्वानों के द्वारा संस्कृत के शब्दों से अनेक हिन्दी शब्दों के नव निर्माण पर बल दिया गया। उन्होंने स्वीकार किया कि क्षेत्रीय, प्रान्तीय, बोलचाल के शब्दों, अन्य भाषाओं के शब्दों को व्याकरण सम्मत एवं भाशायी अनुशासन के अन्तर्गत स्वीकार किया जाना चाहिए। हिन्दी भाषा में ग्रहण शक्ति भी है और सृजन शक्ति भी। एक ऐसे शब्दकोश का निर्माण किया जाना चाहिए जिनमें भारत में बोले जाने वाले सभी भाषाओं के शब्दों को एक शब्द के पर्यायवाची के रूप में लिखा जाए।

कम्पयूटर, इंटरनैट व मोबाइल ने देश–देशान्तरों के अन्तर को मिटा दिया है। आज हिन्दी सम्पर्क भाषा के रूप में प्रयुक्त हो रही है। आवश्यकता है–सकारात्मक सोच की। हमें अपनी मानसिकता को बदलना होगा। बच्चों को अपनी भाषा बोलना, लिखना व सिखाना होगा। उनके मन से इस हीन भावना को निकालना होगा कि 'अंग्रेज़ी बोलने से ही विद्वान का ठप्पा नहीं लगता। पिछले वर्षों में हिन्दी को समाप्त करने की भरसक कोशिश की गई, परन्तु हिन्दी को थोड़ा सा

पीछे तो भले ही धकेल दो, समाप्त नहीं किया जा सकता। हम जिस भाषा में सोचते, स्वप्न देखते, काम करते, विचार बुनते हैं, भला वह भाषा कैसे पिछड़ सकती है।

केन्द्रीय शिक्षा मंत्रालय, केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग, गृह मंत्रालय, राजभाषा आयोग केन्द्रीय अनुवाद ब्यूरो, राजभाषा विभाग, विधि मंत्रालय, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, रेलवे मंत्रालय आदि ने हिन्दी के प्रचार प्रसार एंव हिन्दी को अपनाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की।

शिक्षा मंत्रालय द्वारा स्वैच्छिक हिन्दी संस्थानों की आर्थिक सहायता हिन्दी अध्यापकों के लिए अनुसंधान, विश्वविद्यालयों के स्तर की मानक पुस्तकों का हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में अनुवाद व प्रकाशन विश्वकोष, शब्दकोष आदि का निर्माण, वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली का हिन्दी में विकास सराहनीय प्रयास है। केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय की स्थापना मार्च 1960 को शिक्षा मंत्रालय के अधीनस्थ कार्यालय के रूप में हुई। अनेक फार्मों का हिन्दी में अनुवाद किया गया। निदेशालय द्वारा शब्दकोष, द्विभाशिक शब्दकोषों एवं हिन्दी विश्वकोषों आदि का संकलन किया गया। अहिन्दी भाषी भारतीयों व विदेशियों के लिए हिन्दी पाठशालाओं को तैयार किया गया। हिन्दी के प्रचार के लिए **हिन्दी समाचार जगत** नामक पत्रिका का प्रकाशन मील का पत्थर साबित हुआ। अन्य विभागों ने भी हिन्दी के विकास में अभूतपूर्व कार्य किया।

1964–66 कोठारी आयोग ने पहली शिक्षा नीति में त्रिभाषा की परिकल्पना की थी परन्तु अनेक कारणों से पहली शिक्षा नीति भी तीन भाषाओं के फार्मूले पर चलते हुए न तो राष्ट्र भाषा का पद ही प्राप्त कर पाई और न ही मातृभाषा में अनिवार्य शिक्षा की नीति को तैयार कर पाई। इन कारणों में प्रमुख कारण रहा कि इस शिक्षा नीति का पूरे भारतवर्ष में एक समान पालन नहीं हुआ। अतः कहा जा सकता है कि 1964 की कोठारी आयोग की सिफारिशे हो या 1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति दोनों ही हिन्दी भाषा के सन्दर्भ में अधिक सफल नहीं हो पाई।

हिन्दी की विडम्बना यही है कि स्वयं भारतीयों के द्वारा ही इसका विरोध किया गया। तमिलनाडु व अन्य दक्षिण राज्यों द्वारा किया गया हिन्दी विरोध समस्त हिन्दी भाषी राज्यों को याद है। आश्चर्य की बात है कि वे द्वितीय भाषा के रूप में अंग्रेज़ी के तो पक्षधर हैं, पर हिन्दी के नहीं। क्या उन्हें राजभाषा के रूप में अंग्रेज़ी अपनाने में असुविधा नहीं होगी।

5 अप्रैल 2000 को भारत के प्रधानमंत्री श्री **अटल बिहारी वाजपेयी** का वक्तव्य ''राष्ट्र को एक मंच पर लाने और आज़ादी की आवाज़ एक साथ मिलकर उठाने में हिन्दी की अहम भूमिका रही है। स्वाधीनता आन्दोलन के दौरान देश के राष्ट्रीय स्तर के नेताओं ने आपसी सम्पर्क सूत्र के रूप में हिन्दी को अपनाया''। यह वक्तव्य हिन्दी के विकास की ओर संकेत करता है।

लोकमान्य तिलक ने हिन्दी को एकता का सूचक मान कर कहा –''राष्ट्र के एकीकरण के लिए सर्वमान्य भाशा से अधिक बलशाली कोई तत्त्व नहीं, मेरे विचार में हिन्दी ही ऐसी भाषा है।''

हिन्दी के प्रचार एवं प्रसार में मुख्यतः तीन बाधाएं दृष्टिगत होती हैं– 1 मनोवैज्ञानिक 2 पारिभाषित शब्दावली 3 प्रसार. सबसे बड़ी समस्या मनोवैज्ञानिक है। अंग्रेजों के दो सौ वर्षों के शासनकाल के कारण अंग्रेजी भाषा का बहुलता से प्रचार व प्रसार हुआ। हमने अंग्रेजी को अपनी इज्ज़त व स्तर का पैमाना मान लिया। आज अनेकानेक प्रतियोगिताओं व प्रतिस्पर्धाओं का आयोजन अंग्रेजी माध्यम से हो रहा है। हम भले ही कुछ भी कह लें, परन्तु अंग्रेजी को जाने समझे बगैर भी आगे नहीं बढ़ पा रहे हैं। भाषा का ज्ञान एक बात है और भाशा का प्रयोग दूसरी बात. हमें मानसिक दासता को छोड़कर हिन्दी को प्राथमिकता देनी होगी व अपनी सोच को बदलना होगा तभी हिन्दी का विकास सम्भव है।

19वीं 20वीं शती में मदरसों में उर्दू पढ़ाई जा रही थी। उस समय 'दिगर–जबान' अर्थात् दो भाषाओं को पढ़ने व लिखने पर बल दिया गया। प्रत्येक हिन्दी भाषी के लिए उर्दू व उर्दू भाषी के लिए हिन्दी सीखना अनिवार्य हो गया। अन्य सभी विषय उर्दू में पढ़ाए जाने लगे। अगर भाषा का यही रूप चलता रहता व भारत की अन्य प्रादेशिक भाषाओं के सम्बंध में भी इसी प्रकार की योजना बना ली जाती तो आज हमें इस प्रकार की गोष्ठियों के आयोजन की आवश्यकता ही नहीं रहती।

दूसरी समस्या पारिभाशिक शब्दावली की है। हिन्दी के प्रयोजनमूलक स्वरूप के कारण हिन्दी का प्रयोग विशेष प्रयोजन की सिद्धी हेतु किया जा रहा है। अतः आवश्यकता है पारिभाषिक शब्दावली की. शिक्षा, न्याय, व्यवसाय, चिकित्सा, विज्ञान व तकनीकी तथा अनेकानेक क्षेत्रों में कार्य करने के लिए हिन्दी की शब्दावली का निर्माण किया जाए। हालांकि बहुत से पारिभाषिक शब्दों का निर्माण किया जा चुका है। हमें संस्कृत व क्षेत्रीय भाषाओं के शब्दों से पारिभाशिक शब्दों का नव–निर्माण करना होगा तथा अन्य भाषाओं के प्रचलित शब्दों के प्रयोग से भी पारिभाषिक शब्दावली को बढ़ाया जा सकता है।

तीसरी समस्या प्रसार की है. प्रसार का अर्थ है– हिन्दी को व्यवहार में लाया जाए. हिन्दी के प्रसार का इतिहास संघर्ष और विरोधों का इतिहास है। शायद ही किसी भाषा के प्रसार में इतनी बाधाएं उत्पन्न हुई हों, जितनी हिन्दी के मार्ग में हुई हैं। हिन्दी बाधाओं को दूर करके निरन्तर अग्रसर है. विज्ञापन, मीडिया, चलचित्र, इंटरनेट, हिन्दी संस्थान, समाचार–पत्र, पुस्तके व बाजारवाद ये सभी गैर सरकारी संस्थाएं हिन्दी के प्रसार में कार्यरत हैं. यह कहना गलत नहीं होगा कि जब तक सरकारी संस्थाएं अंग्रेजी में कार्य करती रहेंगी तक तक हिन्दी का विकास तीव्र गति से नहीं हो पाएगा. सरकारी कार्यालयों, शासन, न्याय आदि को चलाने वाले लोग अंग्रेजी के आदी हो चुके हैं. उन्हें अंग्रेजी के मोह को त्यागना होगा. स्वतंत्रता भी बिना प्रयास के आसानी से नहीं मिली थी। बहुत बलिदानों के बाद हम स्वतंत्र हुए हैं. परतंत्र केवल देश की मिट्टी नही भाषाएँ भी है उनकी मुक्ति के लिए कठोर

प्रयास जल्दी से जल्दी करने होंगे।

पं0 जवाहर लाल नेहरू जी का कहना था कि असल समस्या भाषा की नहीं लिपि की है और एकता के लिए सभी को देवनागरी लिपि अपना लेनी चाहिए ।

जिनेन्द्र वेद ने भाषा और लिपि की एकरूपता में देवनागरी लिपि में संस्कृत, पालि, हिन्दी, मराठी, कोंकणी, भोजपुरी, मैथिली, सिन्धी, कश्मीरी, गढ़वाली, बोडो, सन्याली, नेपाली, तामाग, अंगिका, गुजराती, पंजाबी, विशुनुपुरिया, मणिपुरी, रोमानी और ऊर्दू के जुड़े होने की बात बतायी है।

इसको टंकित करने की सरल विधि 'इनस्क्रिप्ट–की–बोर्ड बतायी गई है। किसी भी भारतीय भाषा को एक ही की बोर्ड से यूनिकोड टंकित करने की यह प्रणाली है– विस्तृत जानकारी के लिए –www.leenamehendale.com. हिन्दी के प्रचार व प्रसार में सिनेमा का बहुत बडा योगदान है। आज हिन्दी फिल्में सम्पूर्ण विश्व में देखी व समझी जा रही है। भारतीय विश्व के हर कोने मे मौजूद है. जहां–जहां भारतीय पहुंचे हैं, वहां–वहां उनके साथ हिन्दी भी पहुंची है।

हिन्दी प्रेस ने भी हिन्दी का प्रचार व प्रसार में योगदान दिया है। गीता प्रेस, गोरखपुर एक ऐसा प्रकाशन है जो हिन्दी धार्मिक पुस्तकों को कम कीमत पर बेचता है।

इसमें कोई संदेह नहीं कि अब विश्व के अनेकानेक राष्ट्रों में हिन्दी की जानकारी प्राप्त करने के लिए एक नवीन जागृति उत्पन्न हो चुकी है। विश्व के एक विशाल जनसमूह की भाषा होने के कारण हिन्दी संयुक्त राष्ट्र संघ की भाषा भी बन सकती है और हिन्दी में वे सभी योग्यताएं हैं, जो संघ की भाषा में होनी चाहिए। भारत के अतिरिक्त विश्व के 100 से भी अधिक विश्वविद्यालयों में हिन्दी पढ़ाई जाती है। विश्व हिन्दी सम्मेलनों ने यह सुनिश्चित कर दिया है कि हिन्दी केवल भारत की ही भाषा नहीं अपितु हिन्दी प्रेमी भारत के बाहर एवं विश्व के प्रत्येक कोने में हैं।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में मातृभाषा की अनिवार्यता को अपना कर सम्पूर्ण भारतवर्ष में हिन्दी में शिक्षा के महत्व को प्रतिपादित किया है। माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी एवं शिक्षा मंत्री व मानव संसाधन मंत्रालय माननीय श्री रमेश चन्द पोखरियाल त्रिशंक के इन प्रयासों से सम्पूर्ण हिन्दी भाषी व हिन्दी साहित्य जगत हर्षोल्लास से भरा हुआ है। आवश्यकता है सरकार द्वारा प्रभावी तरीके से इस शिक्षा नीति को लागू किया जाए जिससे न केवल हमारी मातृभाषाएं समृद्ध होगी अपितु हमारी युवा पीढ़ी हिन्दी के माध्यम से ज्ञान–विज्ञान की नई उचाइयों को छू सकेंगी।

निष्कर्ष:

यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगी कि 21वीं शदी में हिन्दी राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय प्रत्येक स्तर अपना परचम लहरा रही हैं। हिन्दी ने अपने पंख खोलकर चहुं दिशाओं में उड़ना सीख लिया है। वह दिन दूर नहीं जब हिन्दी सम्पूर्ण विश्व में बोली–समझी व सीखी जाएगी। केवल आवश्यकता है हिन्दी को विश्व भाषा बनाने के लिए निरन्तर प्रयासरत रहना होगा एवं सकारात्मक सोच के साथ आगे बढ़ना होगा। हिन्दी का मार्ग कहीं भी अवरूद्ध नहीं। चलिए हम और आप मिलकर प्रण करें कि हम सब हिन्दी के प्रचार एवं प्रसार के लिए कृतसंकल्प रहेंगे।

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल,
बिन निज भाशा ज्ञान के, मिटत न हिय को सूल।।
जब अति कोमल जिय रहत, जब बालक तुतरात,
भूलत नहिं सो बात जो, तबै सिखाई जात ।।

(भारतेन्दु)

सहायक ग्रन्थ सूची

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास – आचार्य रामचन्द्र शुक्ल
2. हिन्दी साहित्य की भूमिका – हजारी प्रसाद द्विवेदी
3. राजभाषा हिन्दी – सेठ गोबिन्ददास
4. हिन्दी भाषा और लिपि – डॉ0 धीरेन्द्र शर्मा
5. हिन्दी साहित्य को हिन्दीतर प्रदेशों की देन – डॉ0 मलिक मोहम्मद
6. राजभाषा हिन्दी : विकास के विविध आयाम – डॉ0 मलिक मोहम्मद
7. आधुनिक हिन्दी साहित्य – डॉ0 लक्ष्मी सागर वार्शृेय
8. आधुनिक इतिहास – डॉ0 बच्चन सिंह
9. राष्ट्रभाषा की समस्या – डॉ0 राम विलास शर्मा
10. प्रयोजनमूलक व्यावहारिक हिन्दी भाषा – डॉ0 कैलाश चन्द्र भाटिया, रचना भाटिया
11. प्रयोजनमूलक हिन्दी – डॉ0 नरेश मिश्र, डॉ0 सुरेश सिंघल, डॉ0 डी।के।जैन
12. हिन्दी के प्राचीन प्रतिनिधि कवि – डॉ0 द्वारिका प्रसाद सक्सेना
13. प्रयोजनमूलक हिन्दी – डॉ0 विनोद गोदरे
14. राष्ट्रभाषा हिन्दी : समस्याएं और समाधान

डॉ0 अनिता गोयल
एसो0 प्रो0 हिन्दी विभाग
हिन्दू गर्ल्ज कॉलेज, सोनीपत
मो0 नं0– 09896050560
email ID - dranitagoel1966@gmail.com
कोठी नं0 50, सेक्टर 14
सोनीपत–131001

किसान जीवन का जीवन्त दस्तावेज 'अकाल में उत्सव'

पवित्रा देवी

सारांश

किसान शब्द वर्तमान समय का सबसे ज्यादा डरावना और भयावह शब्द बनता जा रहा है जिस किसान वर्ग को कभी अन्नदाता कहकर महिमामण्डित किया जाता था आज वही अर्थव्यवस्था की भेंट चढ़ता जा रहा है किसानों की बदहाली का मुख्य कारण सरकार द्वारा किसानों की उपेक्षा करना है। वर्तमान समय मे नवउदावादी नीतियो के स्थापित होने के कारण उद्योगपतियो और पुंजीपतियो को बेतहासा लाभ हुआ है किसान वर्ग का प्राकृतिक आपदाओ से भी सामना हुआ है सुखा, ओला और बाढ किसान जीवन के जन्मदाता शत्रु है लेकिन सरकार ऐसी स्थिति मे भी किसानो को समझने के बझाय उनकी स्थिती पर छोड देती है सरकार का नीतियाँ उल्टे किसान के जीवन की गले की फाँस बन गई है। किसान की आत्महत्या और उसकी मौंत के आँकडे भी स्वभाविक घटना सी जान पडती है सरकार किसान जीवन के प्रति संवेदहीन होती जा रही है।

आज का भारत प्रेमचन्द युग से काफी बदला हुआ है । मनुष्य अब उतना सामाजिक नहीं रहा है नब्बे के दशक में भारत सरकार द्वारा जो नई आर्थिक नीति लागू की गई थी उसमे समाज के प्रत्येक क्षेत्र मे परिवर्तन हुआ परन्तु किसानो के जीवन शैली मे कुछ आवश्यक बदलाव नही दिखाइ दिया उसके साथ ही उदारवाद और बाजारवाय का जन्म हुआ और इसी कारण साहित्य लेखनद मे नई शैली का विकास हुआ। आज कॉर्पोरेट कम्पनियों का निरंतर विकास होता जा रहा है। सरकार आज जमीनो का अधिकरण करने मे लगी हुई है किसान जीवन के विकास मे सामाजिक व्यवस्था सभ्यता और संस्कृति के सविधान और विकास के लिए रूपया की महत्वपूर्ण भूमिका होती है भारत देश एक कृषि प्रधान देश है आज भी 70 प्रतिशत आबादी जीवनयापन करने के लिए कृषि को अपना आधार बनाया है समय की मांग को देखते हुए कृषि के उत्पादन मे परिवर्तन होना जरूरी है। भारत देश मे हरित क्रांति होने से कृषि उत्पादन मे काफी बदलाव आया है परन्तु आज सन्दर्भ मे भी किसान शोषित और पीडित होता जा रहा है।

भारतीय कृषि प्रणाली की सबसे बडी विडबना का दस्तावेज है कि जब भी किसान का कृषि उत्पाद बाजार मे आता है तो उसका मूल्य गिरने लगने लगता है मध्यस्थ सस्ती दरो पर खरीद लेते है जिससे कृषि घाटे का सौदा बनती जा रही है किसानो की फसलो तथा उत्पादो का मूल्य सरकार तथा क्रेता द्वारा निर्धारित की जाती है फिर भी किसान अपनी फसल के कारण किसान असह्य ही दिखाई देती है जब भी हम किसान के बारे मे सोचते है तो उसका चेहरा चिंता ग्रस्त, पीडा ग्रस्त,संत्राससे भरा दिखाई देता है अगली आने वाली फसल के बीज खाद के दाम पानी की चिंता, बेटा बेटी के विवाह की चिंता पिछला कर्ज चुकता करने की चिंता कितने ही अनगिनत प्रश्न उनके दिमाग मे चलते रहते है उन्ही दस्तावेजो का आकलन, अकाल मे उत्सव उपन्यास में पंकज सुबीर ने अपने मार्मिक दृष्टिकोण से चित्रित किया गया है भारतीय अर्थव्यवस्था का प्रमुख आधार कृषि और किसान है किसान ही पूरी अर्थव्यवस्था को चलाने के लिए जिम्मेदार है लेकिन वह बाजारवाद के दौर मे वह हाशिए पर चलाया गया है उसे अपनी ही फसल का उचित मूल्य नही मिल पाता है, क्योकि एक किसान कर्ज से घिरे होने के कारण खाद बिजली और पानी की समस्याओ से धिरा हुआ होता है। अगर किसान को उसकी फसल का उचित मूल्य नही मिल पाता है तो आत्महत्या करने की कगार पर पहुचॅं जाता है आए दिन किसानो की आत्महत्या की खबर सुनते रहते है वह सरकार की नीतियों से भी किसान जीवन संकटग्रस्त रहता है जब श्री राम परिहार रामप्रसाद नामक किसान आत्महत्या के विषय मे पूछताछ करता है तब उसको बताया जाता है कि उसकी फसल ओलावृष्टि के कारण बर्बाद हो गई थी जिसके कारण उसे न तो मुआवजा मिल पाया और न ही सर्मथन मूल्य मिल पाया किसान अपनी आत्महत्या खुशी से नही करता बल्की पर कई सामाजिक अडचनो का प्रभाव रहता है।

इस प्रकार स्पष्ट रुप से कह सकते हैं कि किसान जीवन कई सामाजिक, प्राकृतिक, राजनीतिक और आर्थिक विपदाओं मे से घिरा हुआ है। आज के सन्दर्भ मे किसानो के लिए मुआवजे की समस्या एक गम्भीर समस्या बनी हुई है सरकार आज भी किसानो के लिए मुआवजे के लिए संवेदनहीन दिखाई नहीं देती। प्रत्येक सरकार इस गम्भीर समस्या को फालतु की चीज मानती है और और मजबूरी मे किसानो को मुआवजा देती है। इसके पीछे भी कई कारण निहित है भविष्य मे अपनी सरकार लाने या विपक्ष की सरकार को नीचा दिखाने के लिए करती है। सरकारो की यह वास्तविकता होती है कि शहरीकरण मे औद्योगीकरण को बढावा देने के नाम पर न जाने कितनी भूमि को अधिकृत करती है और बहुराष्ट्रीय कम्पनियो को मनचाहे दामो पर बेच दी है।

जब मुआवजा देने का समय आता है तो सरकार बहुत कम भाव से किसानो को उनकी जमीन का मुआवजा दिया जाता है यह कैसी विडम्बना है। इस समस्या को पंकज सुबीर ने रामप्रसाद नामक किसान के माध्यम से चित्रित किया है रामप्रसाद की फसल जब ओलो के कारण बर्बाद हो जाती है तब वह अपनी फसल का भुगतान सरकार से मागती है तो पह पीडित सा अनुभव करता है इस विषय पर राकेश पांडे और रमेश चौरासिया आपस मे आपस मे ग्रांट खच्र करने की प्रकिया का निर्धारण करते है तो किसान मुआवजे की समस्या पर चर्चा करती है किसानो को सिर्फ धक्का, गालियाँ, अपमान, उपाक्षित और जब मुआवजा मिलता है तब तक किसान ही जा चुका होता है इतनी लिखा पढी होती है। जो कि इस उपन्यास मे राकेश पाण्डे नामक पात्र

के माध्यम से चित्रित किया है जो की इस प्रकार स्पष्ट होता है, ''अभी पेपर मे छापा था। किस प्रदेश मे किसानो को दस रूपये के चौक दिए गए। दस रूपये बताइए आप भी क्या कोई भी नुकसान ऐसा हो सकता है जिसमे केवल दस रूपय ही मुआवजा मिले हम आज तक अग्रेजो बनाए हुए रेवेन्यू देने के लिए नही बल्कि ओर राजस्व की माफी के लिए बनाए गए थे इन कानूनो इन नियमो को देख कर लगता है कि देश मे अभी औपनाभिक साम्राज्य है, हम बभी तक आजाद हुए नही हैं। अगर आजाद हो गए होते तो कम से कम यह सर्टिकानून बदले होते अब तक रमेश चौरासिया ने अपनी जानकारी की बात मे शामिल किया।"[1]

किसान जीवन विभिन्न यातनाओं समस्याओ और पीडाओ से ग्रस्त रहता है। किसान का अधिकांश जीवन आपदाओ से ग्रस्ति रहता है । किसान का अधिकांश जीवन आपदाओ से ग्रसित रहता है । किसान के लिए आवास की समस्या प्रत्येक भारतीय किसान के लिए गम्भीर समस्या है क्योंकि उनकी आर्थिक स्थिति मजबूत होती है उन्हें मकान बनाने के लिए कर्ज लेना पडता है। इस चुनौति को पंकज सुबीर ने 'अकाल मे उत्सव' उपन्यास मे रामप्रसाद नामक किसान से चित्रित किया द्य रामप्रसाद के पिता ने पहले एक मकान बनवाया था, परन्तु अब वह खडंहर हो चुका है। वह कई बार सोचता है। कि नया घर बनाए परन्तु पैसो का अभाव होने के कारण वह इस वर्णन अबकया है कि उन्हे सोने का भी डर रहता है इन शब्दो के जुडाव से पता चलता है कि किसान जीवन जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त अभाव ग्रस्त रहता है। जिसका चित्रण रामप्रसाद नामक किसान पात्रके माध्यम से दर्शाया है। "पिता ने जो कच्चा घर बनवाया था उसे भी समय ने कोच कोच कर अब खण्डर सा कर दिया था उसी खण्डर मे रामप्रसाद का परिवार रहता था पत्नी कमला और तीन बच्चे यह था उसका परिवार दो एकड जमींन मे परिवार का गुजारा कैसा होता था, यह रामप्रसाद को ही पता था उसमे भी भागीरन का हिस्सा निकालना। फसल आती, पैसा नही आता, मुटठी मे बस पसीने की बुंद रह जाती है। रामप्रसाद खुद भी दुसरो के खेतो मे कुछ करके थोडा बहुत कमा लेता दिन रात रहता अपने खेतो मे भी और अधवटिया से लिए गए खेत मे भी कहने को किसान और काम से मजबूर हर बरसात मे घर की दीवारे डराती कि अभी लहराकर झुकेगी और पांचो प्राणियो को जीवित कब्रे बना देगी हर बरसात मे निर्णय होता था किइस बार सोयाबीन की फसल मे कम से कम एक कमरा तो ठीक करवाना है। जिसके बरसात का समय बिना किसी डर के बिताया जा सके। बरसात बीत जाती है और बात भी जाती है।"[2] स्पष्ट है कि किसान वर्ग समस्या की उधेडबून कभी खत्म नहीं होती हमेसा कुछ बुनता ही रहता है। वह आगामी भविष्य के सपने संजोता है परन्तु कर्ज की मार और कुर्की की मार से एक आवास का भी सपना पूरा नहीं हो पाता है। यह किसान जीवन की सबसे बडी विडम्बना है। भारतीय किसान के पास अगर जमीन नहीं है तो वह अपनी खेती नहीं कर सकता। सरकार के केवल अपना फायदा देखती है। वह सिर्फ अपनी योजनाओं को लागू होते देखना चाहती है। किसानों की आर्थिक स्थिति कमजोर होने के कारण वह अपने घर की वस्तुएँ बेचने के लिए मजबूर हो जाता हे। क्योंकि किसान परम्परा पोषित होने के कारण वह परम्परा निभाने के लिए मजबूर होता है। इस स्थिति का चित्रण पंकज सुधीर ने इस उपन्यास में रामप्रसाद नाम किसान पाथ के माध्यम से चित्रित किया है जब वह अपनी बहन की सास के क्रिया क्रम करने के बारे में सोचता है, तो वह अपनी पत्नी के जेवर गिरवी रखता है। राम प्रसाद सोचता है कि किसानी परिवार में उसकी पत्नी के बाद उसके जेवर धीरे–धीरे उतरने लगते है। वह सोचता है उसकी पत्नी के जेवर गिरवी रखने के बाद जब सुनार की सम्पति बनने जा रही है जिस चित्रण इस प्रकार चित्रित होता है। किसान के जीवन में बढ़ते दुखा उसकी पत्नी के शरीर पर घटते जेवरों से आंकलित किये जा सकते है। "नई बहु जब आती है तो नए घाघरा लुगडी पीलिया के सान सोडी बनती झालर लच्छे करधानी में चमकती है। फिर से धीरे–2 उम्र बढ़ने के साथ साथ शरीर पर एकदृएक जेवर कम होता जाता है । जेवर तो जाते है और किसान के घर की चीज एक बार गिरवी रखी जाए तो कब है पहले सोने के जेवर जाते है। फिर उसके पिदे चांदी के जेवर हर जेवर गिरवी के लिए जाता है तो इसके पक्के मन के साथ है। कि दो महीने बाद फसल आएगी तो सबसे पहला काम उस जेवर को छूडाना ही है लेकिन जब यह पहला काम अगर सच में पहले जाता तो उस देश में सरकार की तिजौरियां और उसकी तोने इतनी कैसे फूल पाती। कई बार तो एसा लगता है कि बहू के चढ़ाव के जेवर उसी सुनार के पास लिए पहूंच जाते सुनारों को भी पता होता था की आज नहीं तो कल इन जेवरों को हमारे पास हीं आना है, पहले गिरवी के रूप में फिर डुब कर पूरे रूप में ब्याज पर ब्याज और ब्याज के ब्याज पर भी ब्याज रकम बढ़ती जाती है। उम्मीद डुबती जाती है।"[4]

इस प्रकार स्पष्ट है कि किसान जीवन विपतियों एवं पीडाओं का दस्तावेज बनकर रह जाता है। किसान समाज की व्यवस्था को बनाए रखने में अपनी भागीदारी विशेष रूप से चित्रित रखती है। राजस्व प्रणाली की वसूली को पूरानी प्रणाली यह भी थी कि पैदावार का एक निश्चित हिस्सा ही राजस्व घोषित कर दिया जाता था किन्तु विविध कारणों से अंग्रेजो के आगमन के पहले भूमि कभी भी पूर्णतः निजी सम्पति के तौर पर किसी के अधिकार में नहीं रही उत्पादन के लाभांष के पारम्परिक हिस्सों में राजस्व अधिकार होता था जिसे भू राजस्व के नाम से जाना जाता था। भारतीय शासक अपना अधिकांश रक्षा व पारम्परिक रक्षा व पारम्परिक तौर पर भूमि से प्राप्त करता था।

इस प्रकार पंकज सुधीर ने अकाल में उत्सव 'उपन्यास में दूषित राजस्व प्रणाली का चित्रण किया है रामप्रसाद नाम किसान पात्र जो कि गरीब किसान है वह आर्थिक रूप से कमजोर है और बैंक के कर्ज में डूबा हुआ है वह अपने घर को चलानें के लिए अपनी पत्नी के जेवरों को गिरवी रखता है। इस उपन्यास में चित्रित किया गया है कि अकाल पडा हुआ ह लेकिन राजस्व अधिकारी अपने ग्रांट को कंज्यूम करने में लगे हुए है। जिसे हमे राजस्व अधिकारियों की हरकतो का पता चलता है। जब राकेश पाण्डे और अन्य अधिकारियों आपस में चर्चा

करते हे कि किसान कई समस्यओं से घिरा होता है किसान जीवन में किसी प्रकार का बदलाव नजर नहीं आता। राजस्व के रूप बदले हुए है। लेकिन कोई सकारात्मक पहलु नजर नहीं आता जिसका चित्रण रामप्रसाद पात्र के माध्यम से चित्रित किया गया हक। "किसान के जीवन संत्रास को समझने के लिए आपको राजस्व प्रणाली को समझना होगा। राजस्व प्रणाली जो कि किसानो से राजस्व वसूलने कि लिए बनाई गई थी वह प्रणाली कभी नहीं बदली राजाओं महाराजाओं के बनाने में भी वैसी ही थी उसके बाद अंग्रेज आए तो उन्होने वैसा ही रखा और एक अगस्त 1947 के बाद भी व्यवस्था वैसी की वैसी बनी रही राजाओं के समय में बारह गावों पर एक बाहुबली होता था जिसे जागीरदार कहते थे। इस जागीरदार का काम था किसानों से वसुली करना । लगान को जुर्माने की आजादी के बाद जागीरदार का नाम बदल दिया गया अब वह जागीरदार से हो गया है गिरदावर या अंग्रेजो ने उसे एक और नाम मिला रिवेन्यू आफिसर जागीरदारी के समय हर गांव से वसूली करने के लिए उस गांव के सबसे बाहुबली की गांव का पटेल बना देते थे पटेल का काम होता था गांव के किसानो को धमका कर वसूली करना। आजादी के बाद पटेल भी समाप्त होगये और नए जागीदार अर्थात गिरदवार और पटेल बन गए पटवारी किसी रजिस्टर्ड से कम है। क्या नाम बदल गए काम वहीं का वहीं रहा। बस अन्तर यह है कि पटेलो के गांव का पटेल बनाया जाता था और पटवारी हल्के का होता है। एक हल्के में एक से अधिक गांव होते है। राजस्व व्यवस्था ने सबसे नीचे की कही होता है, चौकीदार वह गांव के लिए वसूली करता था कि सरकार कता के घर में नई बहु आगई नववाने के लिए बुला लो चौकिदार, पटवारी और गिरदावर तीनों कितने महत्वपूर्ण होता है। वह केवल किसान ही बता सकता है किसके पास होती है आर. आर. सी जिसका पूरा नाम रिवेन्यू रिकवरी सर्टिफिकेट। इस आर. आर. सी में जान फसी होती है किसान की। हर छोरा किसान किसी न किसी का कर्जदार है बैंक की सोसायटी का बिजली विभाग का या सरकार का सारे कर्जो की वसूली इन्हीं आर. आर.सी के माध्यम से पटवारी और गिरदवार को करनी होती है। वसूली कितना खोफनाक शब्द है यह कोई कर्जदार ही बता सकता है। वसूली के ठीक बाद की प्रक्रिया है यह जो कुर्की है यह अपने से ही किसान को डराती है कुर्की में वसूली से ज्यादा डर इज्ज्त उतरने का होता है। किसान कर्जा कलेक्टर और कुर्की चारों नामों का साथ लेने में भले ही अधूरा हो अनुप्रास अंलकार बनता है । लेकिन यह किसान ही जानता है कि इस अनुप्रास में जीवन का कितना बड़ा संगास छिपा हुआ है। एसा नहीं है कि सरकार बांटती है। उसको मुआवजा कहते है।"[5]

कहने का अभिप्राय है कि किसान जीवन सिर्फ एक पीडा और कथा का पुतला है । इसका अस्तित्व होते हुए भी कोई अस्तित्व नहीं है। किसान को ही कुर्की, सुखा, भूमि अधिग्रहण मुआवजो की समस्याओं से पीडित रहता है। इस व्यवस्था में किसान सिर्फ कर्जदार बनके ही रहजाता है जो कि इस उपन्या में दिखाया गया है।

निष्कर्ष :

निष्कर्ष रूप से कह सकते है कि किसान जीवन दुःख का सिर्फ एक दस्तावेज है। किसान जीवन का दस्तावेज है किसान जीवन का दस्तावेज किसान संवेदनाओं को सोचने पर विवश करता है । इस उपन्यास में खेती की समस्या कर्ज बाजारवाद, सरकारी नितियां, महंगाई, शोषण, मुआवजा, कुर्की, आत्महत्या, की समस्या का भावनात्मक चित्रण दिखाई देता है। किसान जन्म से लेकर मरने तक कर्ज में डूबकर अपना जीवन व्याम देता है । किसान हमेशा ही घटने लगता है किसान अर्थवयवस्था की

आधारभूत सरंचना है । ओर वही आर्थिक रूप से कमजोर रहता है। इसे अपनी ही फसल का समर्थन मूल्य नहीं मिलता है। उसे अपनी फसल बेचने के लिए दलालों की मदद लेनी पडती है। किसानों की दशा सुधारने के लिए सरकार को ठोस कदम उठाने चाहिए । उनको मुआवजा मिलने का विशेष प्रावधान करना चाहिए और उनकी फसल बैचने के लिए मंडियों की व्यवस्था करनी चाहिए ताकि वे अपनी फसल बिना दलालों के खोफ से बेच सके। किसान को सरकार की सवेदनशील का शिकार होना पड़ता है। क्योकि सरकार उन्हे धोखे में रखकर उन्हे कम्पनियो के हाथो मे बेचने को तैयार रहता है इस धोखे मे सरकार को किसानो को डराना चाहती है आधुनिक सन्दर्भ मे किसान जीवन सवार्धिक जीवन सवार्धिक कठनाईयो से भरा हुआ है आज कृषक एक नई अवसर पदिता राजनीतिक सभी कारणो की कीडा सिर्फ एक बवडर है किसानो को सिर्फ धोखा हाथ लगती है किसान सम्पूर्ण देश के सामाजिक आर्थिक सामाजिक तथा राजनीतिक लोकतंत्र की कुंजी है आजाद भारत देश मे उच्च कृषि नीति एंव योजनाओ का लाभ उच्च भूस्वामी वर्ग ने ही उठाया है किसान जीवन विभिन्न क्षेत्रों मेविडम्बत रह रहा है यह एक गभीर समस्या है

सन्दर्भ ग्रन्थ सुची

1. पंकज सुधीर, अकाल मे उत्सव, पृ0 207
2. पंकज सुधीर, अकाल मे उत्सव,पृ० 173
3. पंकज सुधीर, अकाल मे उत्सव,पृ० 010
4. पंकज सुधीर, अकाल मे उत्सव, पृ० 10, 11
5. पंकज सुधीर, अकाल मे उत्सव, पृ० 27,28

पवित्रा देवी

पीएचडी. शोधार्थी

म०द० विश्वविद्यालय, रोहतक

मोबाईल : 9728091817

भ्रष्टाचार उन्मूलन में मनुस्मृति की उपादेयता– आधुनिक परिप्रेक्ष्य में

डॉ0 जोगेन्द्र कुमार

सारांश

आधुनिक समाज में भ्रष्टाचार एक प्रमुख समस्या के रूप में अपने पैर फैला रहा है। भ्रष्टाचार रूपी दीमक राष्ट्र को दिन–प्रतिदिन खोखला करता जा रहा है। वर्तमान में राष्ट्र की हर समस्या के मूल में भ्रष्टाचार एक प्रमुख कारण बनता जा रहा है। भ्रष्टाचार शब्द भ्रष्ट और आचार शब्दों के मेल से बना है जिसका अर्थ है– भ्रष्ट आचरण। अर्थात् वह आचरण जो किसी भी प्रकार से अनैतिक या अनुचित हो। जब कोई व्यक्ति न्याय व्यवस्था के नियमों के विरुद्ध स्वार्थ पूर्ति हेतु गलत आचरण करता है, तो वह भ्रष्टाचारी कहा जाता है। वर्तमान समाज भ्रष्टाचार के मकड़जाल में इस प्रकार उलझ गया है कि उससे बाहर निकलने का रास्ता नहीं खोज पा रहा है। भ्रष्टाचार देश की अर्थव्यवस्था को अत्यधिक हानि पहुँचा रहा है। राष्ट्र का धन मुट्ठी भर लोगों तक सिमट कर रह गया है। अमीर अमीर होता जा रहा है जबकि गरीब और गरीब होता जा रहा है। इससे अमीर और गरीब के बीच अत्यधिक अन्तर बढ़ गया है। यूँ तो हर तरह का दुराचार भ्रष्टाचार कहलाता है, किन्तु अर्थ सम्बन्धी भ्रष्टाचार राष्ट्र में सर्वत्र दृष्टिगोचर होता है। कहीं रिश्वत का बोलबाला है तो कहीं कम तौल व खाद्य पदार्थों में मिलावट का भयंकर रूप दिखाई पड़ता है। पहले रिश्वत का प्रयोग गलत कार्यों को करने के लिए किया जाता था, लेकिन आधुनिक समाज मंक सही कार्य को सही समय पर करने के लिए भी होता है। आज नौकरशाहों और राजनेताओं से लेकर छोटे से छोटा कर्मचारी भी भ्रष्टाचार से लिप्त है। देश में भ्रष्टाचार के बढ़ते कुप्रभावों से बचने के लिए इसका उन्मूलन अत्यावश्यक है। अतः मैंने अपने शोध– पत्र को भ्रष्टाचार उन्मूलन के सिद्धांतों को आधार बनाया है ताकि समाज व राष्ट्र का उत्थान हो। मनुस्मृति में कई स्थानों पर भ्रष्टाचार उन्मूलन के सिद्धांतों का उल्लेख मिलता है।

आज के परिदृश्य में किसी भी सरकारी कार्यालय में छोटे से छोटे कार्य को भी कर्मचारी बिना पैसे लिए नहीं करते। रिश्वत लेने के चक्कर में अकारण उस कार्य में कोई न कोई आपत्ति लगा देते हैं या कार्य करवाने वाले व्यक्ति के अनेकों चक्कर कार्यालय के लगवा देते हैं। इस प्रकार व्यक्ति परेशान हो जाता है तथा वह कर्मचारी उस कार्य के बदले धन ले लेता है। इस प्रकार के घूसखोर कर्मचारियों से राजा प्रजा की रक्षा करे। इसका उल्लेख करती हुई मनुस्मृति कहती है–

राज्ञो हि रक्षाधिकृतारू परस्वादायिनरू शठारू।

भृत्या भवन्ति प्रायेण तेभ्यो रक्षेदिमारू प्रजारू1।।

जो कर्मचारी अनुचित रूप से कार्य के लिए धन अर्थात् घूस लेता है, राजा उसका सर्वस्व लेकर उन्हें राज्य से बाहर निकाल दे। उस घूसखोर को कठोर दण्ड देने का विधान मनुस्मृति में मिलता है–

ये कार्यिकेभ्योर्थमेव गृह्णीयुरू पापचेतसरू।

तेषां सर्वस्वमादाय राजा कुर्यात्प्रवासनम्2।।

यदि कोई राजा मोहवश अपने राज्य की देख–रेख न करके धन ग्रहण करता है अर्थात् प्रजा की रक्षा न करके भी अन्यायपूर्वक उनसे अनेक प्रकार का कर लेता है। वह अपने राज्य के साथ–साथ जीवन से भी भ्रष्ट हो जाता है अर्थात् अपने बन्धुओं सहित मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। घूसखोरी राजा के दण्ड विधान का उल्लेख भी मनुस्मृति में दृष्टिगोचर होता है।

मोहाद्राजा स्वराष्ट्रं यः कर्षयत्यनवेक्षया।

सोचिराद् भ्रश्यते राज्याज्जीविताच्च सबान्धवरू3।।

वर्तमान भौतिकवादी युग में मनुष्य येन केन प्रकारेण धन प्राप्त करना चाहता है। धन प्राप्ति के लिए वह अनेकों अनुचित कार्यों को करता है। धन के लालच में वह अनेकों पापाचार करता है। झूठी गवाही देकर धन प्राप्त करता है और अपनी विजय पाकर एक बार तो वह अपना कल्याण देखता है, लेकिन वह पापबुद्धि कुछ समय बाद समूल नष्ट हो जाता है। इसी का उल्लेख करती हुई मनुस्मृति कहती है–

अधर्मेणैधते तावत्ततो भद्राणि पश्यति।

ततरू सपत्नाञ्जयति समूलस्तु विनश्यति4।।

अर्थात् अधर्मकर (दूसरे से वैर बाँधकर, झूठी गवाही आदि देकर) पहले उन्नति करता है, उसके बाद कल्याण देखता है, फिर शत्रुओं पर विजय पाता है और कुछ समय बाद ही बान्धव, भृत्य, धन– धान्यादि सहित नष्ट हो जाता है। मनुस्मृति कहती है कि भ्रष्टाचार से मनुष्य क्षणिक सुख तो पा लेता है, परन्तु अन्त में वह भ्रष्टाचारी ही समूल नष्ट हो जाता है।

नाधर्मश्चरितो लोके सद्यरू फलति गौरिव।

शनैरावर्तमानस्तु कर्तुर्मूलानि कृन्तति5।।

भ्रष्टाचार के आगोश में फँसकर कई बार निर्दोष व्यक्ति भी अन्याय का शिकार हो जाता है। अपराधी प्रवृत्ति का मनुष्य रिश्वत देकर स्वयं बच जाता है तथा निर्दोष को उसमें उलझा देता है। इस प्रकार की अनेकशः घटनाएँ सर्वत्र व्याप्त हैं। जिससे अपराधियों का साहस दिन–प्रतिदिन बढ़ता जाता है। राजा या राजपुरुष लोभ आदि के कारण सच्चाई को न दबाने व समुचित न्याय करने का उपदेश देने का कथन मनुस्मृति में निहित है–

नोत्पादयेत्स्वयं कार्यं राजा नाप्यस्य पूरुषः।

न च प्रापितमन्येन ग्रसेदर्थं कथंचन6।।

राजा को चाहिए कि वह प्रतिदिन विभागीय अधिकारियों द्वारा आरम्भ किए गए कार्यों की समाप्ति, हाथी– घोड़ा आदि वाहन, आय, व्यय,(कोयला, अभ्रक, लोहा, सोना आदि की) खान और कोष इनको अन्य कार्यों में लीन रहने पर भी देखता रहे। कहने का तात्पर्य यह है कि जो अधिकारी धन सम्बन्धी विभागों में कार्यरत हैं, उन पर राजा अपनी दृष्टि रखे ताकि भ्रष्टाचार से बचा जा सके। मनुस्मृति में कथन है–

अहन्यहन्यवेक्षेत कर्मान्तान्वाहनानि च।

आयव्ययौ च नियतावाकरान्कोशमेव च7।।

वर्तमान में जहाँ छोटे से छोटे कार्यों को करवाने, नियुक्ति पाने आदि में सर्वत्र भ्रष्टाचार का बोलबाला है, वहीं खाद्य पदार्थों में मिलावट का धन्धा भी प्रचुर मात्रा प्रचलित है। शुद्ध पदार्थ में अशुद्ध पदार्थ मिलाकर बेचने वाले, आभूषण निर्माण में अवांछित मिलावट का प्रयोग करने वाले व्यक्ति को दण्ड देने का विधान मनुस्मृति में मिलता है–

अदूषितानां द्रव्याणां दूषणे भेदने तथा।

मणिनामपवेधे च दण्डरू प्रथमसाहसरू8।।

अर्थात् शुद्ध पदार्थ में अशुद्ध पदार्थ मिलाकर दूषित करने वाले, नहीं छेदने योग्य माणिक्य आदि को छेदने वाले और छेदने योग्य मोती माणिक्य आदि को ठीक–ठीक योग्य नहीं छेदने वाले व्यक्तियों को राजा प्रथम साहस से दण्डित करे तथा जिसके उपर्युक्त पदार्थ नष्ट या दूषित हो गए हों, उसे उन पदार्थों का मूल्य देकर वह (पदार्थ–दूषक मनुष्य) प्रसन्न करे।

इसके अतिरिक्त यदि कोई व्यक्ति समान मूल्य में किसी को अधिक या किसी को कम वस्तु दे। किसी को उत्तम व किसी को निकृष्ट वस्तु दे। उसको भी दण्ड देने का विधान मनुस्मृति में दिया गया है।

समैर्हि विषमं यस्तु चरैद्वै मूल्यतोपि वा।

समाप्नुयाहमं पूर्वं नरो मध्यमेव वा9।।

जो मनुष्य समान मूल्य देने वाले किसी को अच्छी या अधिक वस्तु दे तथा किसी को निकृष्ट या कम वस्तु दे अथवा समान मूल्य की कोई वस्तु किसी को कम मूल्य में दे और किसी को अधिक मूल्य में दे तो वह मनुष्य प्रथम साहस (250 पण) या मध्यम साहस(500 पण) से दण्डित होता है।

यदि कोई सोनार अच्छी धातुओं में घटिया धातु मिलाता हुआ प्रमाणित हो जाए तो उसको दण्ड देने का विधान बताती हुई मनुस्मृति कहती है–

सर्वकण्टकपापिष्ठं हेमकारं तु पार्थिवरू।

प्रवर्तमानमन्याये छेदयेल्लवशरू क्षुरैरू10।।

अर्थात् सब कण्टकों (चोरी आदि पापकर्म करने से राज्य में कण्टकतुल्य लोगों) से अधिक पापी सोनार आदि अन्याय करने (किस प्रकार सोना–चाँदी आदि चुराने या अच्छे धातु के साथ हीन धातु मिलाकर देने) वाला प्रमाणित हो जाए तो राजा उसके शरीर को शस्त्रों से टुकड़े–टुकड़े कटवा डाले।

निष्कर्षतः वर्तमान परिप्रेक्ष्य में बढ़ते भ्रष्टाचार पर यदि हमने काबू पाना है या इसे समूल नष्ट करना है तो मनुस्मृति का परिशीलन अत्यावश्यक है। मनुस्मृति के परिशीलन से ही भ्रष्टाचार उन्मूलन के सिद्धांतों को अपनाया जा सकता है। मनुस्मृति के अनुसार लोक यात्रा दण्डनीति पर आधारित है। इसलिए प्रजा को सुमार्ग पर चलाने के लिए राजा दण्ड हेतु उद्यत रहे। राष्ट्र विकास के विरुद्ध चलने वाले मनुष्यों को उचित दण्ड दे दण्डित करे। श्दण्डरू शास्ति प्रजारू सर्वा दण्ड एवाभिरक्षतिश11 अर्थात् दण्ड ही सब प्रजाओं का शासन करता है, दण्ड ही सबकी रक्षा करता है। यदि भ्रष्टाचारियों को दण्ड नहीं मिलेगा तो धीरे– धीरे सारा तन्त्र भ्रष्ट हो जाएगा और यह भ्रष्ट तन्त्र एक दिन राष्ट्र को निगल जाएगा। इससे राष्ट्र का पतन होने में देर नहीं लगती है। अतः मनुस्मृति भ्रष्टाचार उन्मूलन में उपयोगी सिद्ध होगी व इसके परिशीलन से ही एक सुदृढ़ राष्ट्र की संकल्पना का सपना साकार हो सकता है।

सन्दर्भः–

1. मनुस्मृति 7.123
2. वही 7.124
3. वही 7.111
4. वही 4.174
5. वही 4.172
6. वही 8.43
7. वही 8.419
8. वही 9.286
9. वही 9.287
10. वही 9.292
11. वही 7.18

डॉ0 जोगेन्द्र कुमार

एसोसिएट प्रोफेसर

बी.एल.जे.एस. महाविद्यालय

तोशाम (भिवानी)

21 जम्मू–कश्मीर एवं आतंकवाद : एक विश्लेषण

सुरेन्द्र सिंह

सारांश

भारत के राज्य जम्मू–कश्मीर में आतंकवाद एक समस्या बन गई है जो 1947 से ही विद्यमान है लेकिन 1980 के दशक के बाद पाकिस्तान प्रायोजित आतंकवादी संगठनों ने कश्मीर में अनियंत्रित आतंकवादी कारनामे करके, समाज, राज्य व राष्ट्र के समान एक चुनौती बना दी है। शोध में आतंक का अर्थ, परिभाषा देकर बताने का प्रयास किया गया है कि आतंकवाद एक बुनियादी हिंसा, नकारात्मक विचार है जिसकी सहायता से भय, आक्रांत, विस्मय फैलाकर उन क्रियाओं जैसे–हिंसा, अपहरण, हत्या, नर–संहार, कत्लेआम करके मानवता का शोषण करना है। आतंकवाद के कारणों में आर्थिक विषमता, राज्य में विद्यमान बहुसंख्यकों तथा अल्पसंख्यकों के बीच प्रतिशोध की भावना, बेरोजगारी, जेहादी उत्प्रेरक तत्व, पाक द्वारा घुसपैठ को राजनीतिक अस्थिरता, युवाओं को आर्थिक मदद की लालच इत्यादि कारक शामिल है। शोध के उद्देश्यों में जम्मू–कश्मीर में आतंकवाद के पनपने, आतंकियों को पाकिस्तान आई.एस.आई. द्वारा तथा अन्य संगठनों द्वारा की जा रही आर्थिक मदद का अवलोकन करना तथा भारत सरकार व राज्य सरकार द्वारा जम्मू–कश्मीर में आतंक के विरूद्ध उठाए गए कदमों की विवेचना करना है। 1999 से 2019 तक की आतंकी अमानवीय घटनाओं का विश्लेषण करना है। अंत में शोध की उपयोगिता को परिलक्षित किया गया है। 2019 में तत्कालीन भारतीय जनता पार्टी सरकार द्वारा अनुच्छेद 370 को समाप्त करके राज्य पुनगंठन अधिनियम पास किया जिसमें जम्मू–कश्मीर तथा लद्दाख संघीय क्षेत्र का रूप दे दिया गया ताकि शासन पूर्ण रूप से केन्द्र सरकार के द्वारा संचालित किया जा सके।

भूमिका :–

जम्मू–कश्मीर और आतंकवाद एक दूसरे के पर्याय कहें तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी। 1947 से ही पाकिस्तान ने सीमा पार घुसपैठ के माध्यम से लगातार राज्य में अशांति फैलाता आ रहा है। अप्रत्यक्ष युद्ध के रूप में पाकिस्तान ने कारगिल, 1999 करवाया ताकि भारत से आतंकवाद का जरिया बनाकर राज्य में विकासात्मक ढ़ांचे को नुकसान पहुंचाया जा सके। भौगोलिक दृष्टि से जम्मू–कश्मीर की सीमा पाकिस्तान से लगती है, पर्वतीय सीमा होने के कारण आतंकवादियों को पाक द्वारा प्रशिक्षण प्रदान करके घाटी में प्रवेश का कार्य लगातार जारी हैं। पाकिस्तान का यह प्रयास इसलिए है कि कश्मीरी जनता आतंक से पीड़ित, शोषित तथा तंग आकर भारतीय सरकार का विरोध करना आरम्भ कर देगी तथा पाक अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय के सामने कश्मीर में जनमत–संग्रह की मांग करेगा जिससे भारत की अन्तर्राष्ट्रीय साख प्रभावित होगी। 1980 के दशक से पाकिस्तान द्वारा आतंकवाद को एक हथियार का रूप देकर आतंकवादी गतिविधियों में लगातार वृद्धि की गई। 1948 से ही पाकिस्तान अधिकृत क्षेत्र पर पाकिस्तान का आधिपत्य है अतएव इसे बचाए रखने के लिए भी भारत में आतंक का सहारा लिया जा रहा है। कश्मीर में आतंक गतिविधियां बनाने में पाकिस्तान ने खाद का कार्य किया है। जम्मू–कश्मीर के प्रमुख राजनीतिक दलों जैसे–ऑल पार्टी हुर्रियत कान्फ्रेंस तथा जम्मू–कश्मीर लिबरेशन फ्रन्ट ने भी आतंकियों से नर्म रूख बढ़ाने में वृद्धि की है जिससे आतंकवादी घटनाओं को अमलीजामा देने में आसानी रहती है। 1999 से 2019 (राज्य पुर्नगठन अधिनियम) तक राज्य में आतंकवाद ने एक बहुत बड़ा तनाव झेला है।

मुख्य शब्दावली :– आई.एस.आई., लश्कर–ए–तोयबा, अल्पसंख्यक, इण्डियन एयरलाइन्स।

अनुसंधान प्रविधि :– ऐतिहासिक वर्णनात्मक तथ्यपरक तथा तुलनात्मक प्रविधि से अध्ययन करना।

उद्देश्य :–

पाठकों तथा शोधार्थियों में आतंकवाद का अर्थ तथा परिभाषा का अध्ययन करना तथा आतंकवाद का राज्य पर पड़ने वाले प्रभावों, परिणामों तथा आतंकी संगठनों के प्रति ज्ञानात्मक दृश्टिकोण का विकास करना है।

कारण :–

जम्मू–कश्मीर में परिस्थितियां लम्बे काल से असामान्य रही है। उग्रवाद पनपने के पीछे राजनीतिक अस्थिरता, राजनीतिक अवसरवादिता, आर्थिक असामनता, आर्थिक पीछड़ापन, भू–खण्ड की स्वतंत्रता का विवाद, अल्पसंख्यकों तथा बहुसंख्यकों के बीच प्रतिशोध की भावना का विकास, ऐतिहासिक समस्याएं, बेरोजगारी, अशिक्षा, जेहादी भावना इत्यादि कारक जिम्मेदार की भूमिका में है।

उपयोगिता :–

आतंकवाद के प्रति पाकिस्तान रवैये को स्पष्ट करना तथा सीमा पार आतंकवादी घटनाओं के पीछे मुख्य सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक घटकों का विवेचन करके यह स्पश्ट करना कि अनेक आतंकी संगठन राज्य की दशा को बिगाड़कर अपूर्ण नीहित स्वार्थों को पूरा करने का प्रयास कर रहे है। आतंकवाद के प्रति जागरूकता का संचार करना तथा आतंकवादी समापन के कदमों के बारे में जानना।

आतंकवाद की परिभाषा एवं अर्थ :–

आतंकवाद एक मानवीय चुनौती है जिसने समाज व राष्ट्रों को कठिनाई में डाल दिया है। यहएक ऐसा जाल बन चुका है जिसे नित्य–प्रतिदिन अखबारों, टी.वी., पत्र–पत्रिकाओं तथा राजनीति विश्लेषकों की वाद–विवाद में भली–भांति देखा व परखा जा सकता है। आतंकवाद एक बनियादी हिंसा है, भय है, आतंक है, एक नकारात्मक विचार है जिसकी सहायता से मानवता में आक्रांत, विस्मय

फैलाकर अपने उद्देश्यों की पूर्ति की जा सके। इनकी कार्य पद्धति में हिंसा, अपहरण, हत्या, निर्दोष लोगों की जघन्य हत्या तथा कत्लेआम शामिल है। आतंकी राक्षसों जैसी अमानवीय पाशविक शक्ति के अनुसार जीवन–यापन करते है।

परिभाषाएँ :–

आतंकवाद की विभिन्न विद्वानों तथा संगठनों तथा संस्थाओं ने अपने–अपने तरीके से परिभाषित किया है जिनका वर्णन इस प्रकार है :–

इनसाइक्लोपेडिया ब्रिटानिका में स्पष्ट किया है कि व्यवस्थित तरीके से हिंसा का ऐसा प्रयोग जो बहुत अधिक जनसंख्या में भय का परिवेश पैदा करे और किसी विशेष राजनीतिक उद्देश्य की पूर्ति कर सके, आतंकवाद कहलाता है।

इस परिभाषात्मक शब्दावली में आतंकवाद को व्यापक दृष्टिकोण से प्रभावित शब्दों का प्रयोग किया गया है कि राजनीतिक संस्थाओं, राष्ट्रीय धार्मिक संघों व समुदायों, संगठनों, राजनीतिक दलों, पुलिस, सेना की मिलीभगत से ही आतंकवाद संचालित हो रहा है।[1]

कानूनी शब्दकोश के अनुसार ऐसा हमला जो राजनीतिक से उत्प्रेरित होकर किसी को मजबूर करना, अथवा गैर–कानूनी तरीके से किसी पर हमला करना तथा हिंसा का भय दिखाकर किसी देश, समाज, जनता, समुदाय के लिए किया गया हो, आतंकवाद कहलाएगा।

सांस्कृतिक शब्दकोश में आतंकवाद का अर्थ बताया गया है कि ऐतिहासिक परिदृश्य में ऐसे समूहों का जिसका लगातार शोषण हो रहा है, सरकारों से मदद का अभाव होता है वे केवल नैतिकता के आधार पर ऐसे समूहों या समुदायों की मदद करने का ढ़ोंग करती है ताकि नागरिकों के मनोबल को बनाए रखा जा सके।[2]

कारगिल युद्ध से 2019 तक की प्रमुख्य आतंकवादी घटनाओं का विवेचन :–

भारत में कारगिल युद्ध 1999 के बाद जम्मू–कश्मीर में शांति स्थापित नहीं हो सकी। भास्कर समाचार पत्र के प्रतिवेदनों में स्पष्ट किया गया है कि–1999 में हुए संघर्ष में लगभग 1400–2500 के बीच भारतीय, 9 पाकिस्तानी सैनिक, मुस्लिम विद्रोही तथा नागरिक मारे गए तथा हिन्दुओं को अपना स्थान छोड़ना पड़ा अर्थात् 80000 लोग विस्थापित हुए। 2000–2006 के बीच सबसे अधिक आतंकी गतिविधियां हुई जिसमें 2600–3200 के बीच भारतीय सैनिक पाकिस्तानी सैनिक, विद्रोही व नागरिक मारे गए।[3]

इण्डियन एयरलाइंस विमान–अपहरण मामला :–

24 दिसम्बर, 1999 की शाम 4:30 बजे इण्डियन एयरलाइंस के विमान ने नेपाल से उड़ान भरी। भारतीय सीमा क्षेत्र में प्रवेश करते ही दिल्ली ऐयर कन्ट्रोल (ट्रेफिक) को सूचना मिलती है कि विमान का अपहरण कर लिया गया है। विमान को आतंकियों द्वारा लाहौर ले जाया गया, जहां उतरने की इजाजत विमान को नहीं दी गई। विमान 6 बजकर 44 मिनट पर अमृतसर हवाई अड्डे पर पहुंचा। विमान द्वारा ईंधन की मांग पर दिल्ली से निर्देश दिया गया कि विमान को ईंधन प्रदान करने में देरी की जाए तथा सरकार ने आतंकवादियों से बात न करने का स्पष्ट रूख भी दिया गया। 20 मिनट तक जहाज हमारे क्षेत्र में (अमृतसर) में रहा लेकिन हमारी सरकार द्वारा ठोस कदम न उठाने की वजह से पायलट डी.शरण ने संदेश दिया कि हम मर रहे है। परिणामस्वरूप जहाज तुरन्त उड़ा भरकर विमान को 7 बजकर 44 मिनट पर लाहौर उतार दिया गया। लाहौर से पैट्रोल लेकर विमान दुबई उतार दिया गया। एक यात्री कत्याल को जहाज के आतंकियों द्वारा मार दिया गया तथा उनके शव तथा 27 अपहरणकर्त्ताओं को रिहा दुबई में किया गया तथा विमान को कंधार ले जाया गया। भारत की ओर से विदेश मंत्रालय के संयुक्त सचिव तथा कैबिनेट सचिवालय से दो अधिकारियों को शामिल किया गया। आतंकियों के विरूद्ध कार्यवाही से अफगान सरकार ने मना कर दिया। परिणामस्वरूप भारत सरकार द्वारा विमान–यात्रियों को छुड़ाने के लिए मुश्ताक अहमद–जरगर, मसूद अहमद तथा अहमद उमर शेख तीन उग्रवादियों को रिहा किया गया तथा तीनों को तत्कालीन विदेश मंत्री जसवंत सिंह विमान में बैठकर कंधार ले गए तथा अपहरण विमान को छुड़वाया गया। तालिबान सरकार ने उन्हें क्वेटा शहर की ओर भेज दिया।[4]

1999 से 2018 के बीच मारे गए भारतीय सैनिक/पाक सैनिक/सिविल नागरिक/आतंकवादी अनुमानित आंकड़ा इस प्रकार है :–

1999	1400–2500 के बीच
2000	2600–3500 के बीच
2001	4500 के लगभग
2002	2500–3000 के बीच
2003	2000–2500 के बीच
2004	1800 से अधिक
2005	1700 से अधिक
2006	1000 से अधिक
2007	777 से अधिक
2008	541 (382 आतंकवादी)
2009	377 (55 नागरिक, 78 सुरक्षा बल, 244 आतंकी)
2010	375 (36 नागरिक, 69 सुरक्षा बलों के जवान, 270 आतंकी)
2011	183
2012	86 (36 सशस्त्र बलों के जवान)
2013	181 (100 आतंकी, 61 सुरक्षा बल, 20 नागरिक)
2014	193 (32 नागरिक, 51 सुरक्षाकर्मी, 110 आतंकवादी)
2014	222 (गृहमंत्रालय के रिर्पोटानुसार)
2015	208
2016	421 (लगभग 50 प्रतिशत से अधिक बढ़त)
2017	342

2018 614

इस प्रकार लगातार आतंकी गतिविधियों में हताहतों की संख्या में निरन्तर उतार–चढ़ाव जारी रहा है।[5]

कश्मीर में प्रमुख आतंकी संगठन :–

क्र आई.एस.आई. :– पाकिस्तानी खुफिया एजेंसी आई.एस.आई. भारत में आतंकवादी घटनाएं फैलाने के परोक्ष रूप से निर्णायक भूमिका निभा रही है।

क्र अलबद :– अलबद आतंकवादी अपने उद्देश्यों को पूरा करने में पाकिस्तान अधिकार क्षेत्र में अपनी गतिविधियां संचालित कर रहा है। बेग जामिन खान इस संगठन के मुखिया है।

क्र लश्कर–ए–तोयबा :– संगठन का धन आई.एस.आई. द्वारा दिया जाता है। इस संगठन का अर्थ है –पैगम्बर की सेना। कंधार विमान अपहरण करके इस उग्रवादी संगठन के आतंकी मसूद अजहर द्वारा गठित किया गया है।[6] इनके अलावा भी अन्य आतंकी संगठन जैसे हरकत–उल–अंसार, अल–बद्र, दुख्तरान–ए–मिल्लत, जम्मू–कश्मीर लिबरेशन फ्रंट, हिजबुल, मुजाहिद्दीन, शावीर साह, इत्यादि कार्यरत है।[7] जम्मू–कश्मीर मुख्य राजनीतिक दल हुर्रियल कॉन्फ्रेंस, नेशनल कॉन्फ्रेंस तथा पीपुल्स डेमोक्रेटिक पार्टी भी आतंकवादियों से नरम रूख रखती है तथा उनके आवश्यकतानुसार कार्य करते हुए देखे गए है।[8]

Ø आतंकवाद का प्रभाव :– आतंकवाद के परिणामस्वरूप कश्मीर में जन, धन तथा माल की बहुत अधिक हानि हुई है। कश्मीरी पण्डितों का विस्थापन बहुत बड़ी घटना है। लगभग 7 लाख पण्डित अपने घर छोड़कर देश के दूसरे हिस्सों में जाने को मजबूर है। आतंकवाद के प्रभाव से ही पाकिस्तानी छदम् युद्ध का सामना भारत को करना पड़ रहा है। कारगिल युद्ध में पाक द्वारा आतंकवाद को खुल्लम–खुला समर्थन देना आतंकी प्रभाव को स्पष्ट देखा जा सकता है। चीन द्वारा पाकिस्तान को समर्थन देना, चीन द्वारा जम्मू–कश्मीर को स्वतंत्र राष्ट्र घोषित करने का इरादा, धार्मिक आधार को आतंक का पर्याय बनाना, जेहाद के नाम पर नौजवानों को आतंक के लिए उत्प्रेरित करना, जम्मू–कश्मीर में बेरोजगारी, कला, संस्कृति तथा पर्यटन को नुकसान पहुंचाना, प्रशासनिक तंत्र में उदासीनता, सार्वजनिक व निजी उपक्रमों का न लगना इत्यादि अनेक दुष्प्रभाव पड़े है।[9]

सरकार द्वारा उठाए गए कदम :–

भारत सरकार द्वारा आतंकवादी संगठनों पर प्रतिबंध लगाए गए, घाटी में पत्थरबाजी युवकों के विरूद्ध कठोर कार्यवाही करने तथा उनको प्रदान की गई फंडिंग की भी गहनता से जांच की गई। प्रधानमंत्री मोदी ने विशेष आर्थिक पैकेज जम्मू–कश्मीर के लिए प्रदान किया ताकि युवकों तथा कृषकों के लिए आर्थिक विकास किया जा सके। बैंकों के ऋण प्रदान के लिए, आतंकी कार्यवाहियों में मारे गए युवकों व नागरिकों के लिए वित्तिय सहायता, विधवाओं को पैंशन, रोजगार बढ़ाने के लिए व्यवसायिक कौशल प्रशिक्षण, विस्थापितों के कल्याण के लिए अनेक कार्यक्रमों को संचालित किया जा रहा है। 2019 में राज्य पुर्नगठन अधिनियम का उद्देश्य भी आतंकवाद समाप्त करना है जिसके अनुसार जम्मू–कश्मीर तथा लद्दाख संघीय क्षेत्र बना दिए गए है।[10]

निष्कर्ष :–

अंत में जम्मू–कश्मीर में आतंकवादी घटनाएं अपने आप में भारतीय परिदृश्य में अत्यंत घातक, खतरनाक व चिन्ताजनक मोड़ पर है। जम्मू–कश्मीर में आतंकवादी घटनाओं के पीछे पाक परोक्ष सहायता है जिसे वर्तमान दौर में उपयोगी नहीं माना जाता सकता है। सभी सरकारी व गैर–सरकारी संगठनों को आतंक से निपटने में निर्णायक सहयोग व समर्थ देना होगा ताकि इस भयानक अमानवीय समस्या से राज्य के नागरिकों को बचाया जा सके तथा मानवता को संरक्षण दिया जा सके। जम्मू–कश्मीर में आतंकवादी विश्लेशण से यह स्पश्ट हुआ कि घृणा, इर्श्या व प्रतिशोध की भावना ने मानवता को भारी नुकसान पहुंचाया है। पुनर्गठन के बाद राज्य के विकासात्मक स्वरूप को नई दिशा मिलेगी। यही परिकल्पना की जा सकती है कि राज्य को नन्दनवन के नाम से फिर एक नई पहचान बनेगी तथा पर्यटन को बढ़ावा मिलेगा।

संदर्भ–ग्रन्थ सूची

1. विश्वजीत 'सपन', आतंकवाद एक परिचय, 2011, आकृति प्रकाशन, पृ.सं.–115
2. वही, पृ.सं.–115
3. अमर उजाला वेबसाईट www.amarujala.com
4. लेफ्टिनेंट जनरल (सेवानिवृत) के.के. नन्दा (2001), कश्मीर निरंतर युद्ध के सांए में ''प्रभात प्रकाशन–दिल्ली, पृ.सं. –262
5. भास्कर वेबसाईट www.bhaskar.com
6. इण्डिया टुडे, मई, 2000
7. विश्वजीत 'सपन' आतंकवाद एक परिचय, आकृति प्रकाशन, पृ. सं.–115
8. इण्डिया टुडे, मई, 2000
9. विश्वजीत 'सपन' आतंकवाद एक परिचय, आकृति प्रकाशन, पृ. सं.–115
10. भास्कर वेबसाईट www.bhaskar.com

सुरेन्द्र सिंह पुत्र श्री फूल सिंह
गांव व डाकघर–शीशवाला
तहसील व जिला चरखी दादरी
पिन–127306 (हरियाणा)
सम्पर्क – 9813049625

22

आधुनिक दाम्पत्य–जीवन की अपनी–अपनी राहेंःभुवनेश्वर का 'स्ट्राइक' एकांकी

डॉ0 नियतिकल्प

सारांश

भुवनेश्वर का 'स्ट्राइक' एकांकी' कारवाँ तथा अन्य एकांकी' नामक पुस्तक में संकलित है। एकांकी के तीन छोटे–छोटे दृष्यों में भुवनेश्वर ने आधुनिक दाम्पत्य–जीवन का यथार्थ चित्रण कियाहै। सफल दांपत्य जीवन का अचूकमंत्र पति–पत्नी का आपसी प्रेम और विश्वास होता है। भुवनेश्वर ने आधुनिक संवेदनाहीन दांपत्य प्रेमको उस कारखाने या फैक्टरी के सदृश चित्रित किया है जिसमें वेमशीन के दोपुरजों के समान प्रतीत होते हैं। ऐसे कारखाने मेंआये दिन स्ट्राइक होती ही रहती है। भुवनेश्वर का 'स्ट्राइक' आधुनिक दांपत्य जीवन पर, पति–पत्नी के प्रेम और आपसी समझदारी की कमी परकरारा व्यंग्य करता है।

आलेख :

'एकांकी' शब्द का अर्थ होता है– एक अंकवाला। एकांकी भी नाटक की तरह दृश्य काव्य में परिगणित होता है, परंतु जहाँ एकांकी में एक अंक, एक घटना, कम पात्र, एक कार्य और एक समस्या की उपस्थिति होती है, वहीं नाटक में कई अंक, कई घटनाएँ, कई समस्याओं के साथ–साथ कई पात्रों का समायोजन होता है।वस्तुतः एकांकी का प्रारंभिक रूप लघु नाटकों की समानता रखता था परंतु समयानुसार शिल्पगत वैविध्य ने इसे स्वतंत्र विधा के रूप में स्थापित कर दिया।

अल्पावधि में ही पाठकों या दर्शकों पर अपना अमिट प्रभाव प्रेषित करने में एकांकी सक्षम है, जिसके लेखन की शुरुआत हिन्दी साहित्य में भारतेन्दु युग से हुई। भारतेन्दु के साथ तदयुगीन अन्य रचनाकारों ने भी प्राचीन संस्कृत–नाट्य–साहित्य से प्रेरित होकर नाटक एवं एकांकी के विविध रूपों के विकास में अमूल्य योगदान दिया। डॉ नगेन्द्र समेत कई विद्वानों ने 1929 ई० में प्रकाशित जयशंकर प्रसाद के एकांकी 'एक घूँट' कोहिन्दी का पहला एकांकी स्वीकारा है।"वास्तव में जयशंकर प्रसाद का 'एक घूँट' ही ऐसा नाटक है जो हिन्दी में पहली बार छोटे नाटक को एकांकी नाटक की गरिमा से जोड़ता है। ... दर असल' एक घूँट' का रचनाकाल जहां आधुनिक ढाँचे के एकांकी का अभ्युदय काल है,वहीं संस्कृत का अनुवर्तन करने वाली परंपरा का सायंकाल भी है। यह इसलिए कि' एक घूँट' के बादजो एकांकी हिंदी में लिखे गए वे शैली, संवाद, वस्तु और सम्प्रेषण की सभी क्षमताओं की दृष्टि से बहुत दूर तक विदेशी थे।"[1]प्रसाद जी के 'एक घूँट' के बाद कई रचनाकारों ने अनूदित एवं मौलिक एकांकियों की सर्जना की। मौलिक एकांकियों की श्रृंखला को गति प्रदान में डॉ0 रामकुमार वर्मा के 1930 ई० मे प्रकाशित' बादल की मृत्यु' को महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है।"कला की दृष्टि से यद्यपि यह सफल एकांकी नहीं था...इसमें काल्पनिक एवं काव्यात्मकता अधिक है, नाटकीयता कम।"[2]

वर्मा जी के साथ–साथ एकांकी के क्षेत्र में उदित होने वाले एकांकी कारों में भुवनेश्वर अन्यतम हैं। एकांकी विधा सही मायने में भुवनेश्वर प्रसाद श्री वास्तव की लेखन प्रतिभा से पुष्पित और पल्लवित हुई।"श्री भुवनेश्वर प्रसाद पाश्चात्य एकांकियों एवं एकांकीकारों की शैली का हिन्दी में पूर्ण विकास करने की दृष्टि से बहुत विख्यात है।"[3] युग प्रवर्तक एकांकीकार के रूप में प्रतिष्ठित भुवनेश्वर को मार्च 1935 ई० में प्रकाशित उनके 'कारवाँ' नामक एकांकी–संग्रह से हिन्दी–साहित्य में अपार प्रसिद्धि मिली। "इस संग्रह के नाटक इतने नये और भारतीय ढाँचे से इतने भिन्न थे किसंग्रह के भूमिका–लेखक प्रेमचंद ने भुवनेश्वर को' आने वाले कल का लेखक' कहा था।"[4]उक्त संकलन में कुल छह एकांकी हैं, जिनमें 'श्यामा–एक वैवाहिक विडंबना', 'एक साम्यहीन साम्यवादी', 'शैतान', 'प्रतिभा का विवाह', 'रोमांस–रोमांच' और 'लाटरी' हैं। कारवाँ के प्रकाशित होने के दो महीने बाद यानी जून 1935 ई० में' हंस' पत्रिका में संपादक कथा–सम्राट प्रेमचंद ने उसकी अत्यंत विस्तार से समीक्षा की। भुवनेश्वर पर' ऑस्करवाइल्ड' के प्रभाव को स्वीकारते हुए कारवाँ की भूमिका में उन्होंने लिखा है–""कारवाँ' हिंदी साहित्य के इतिहास में एक नई प्रगति का प्रवर्तक है, जिसमें शॉ और ऑस्करवाइल्ड का सुंदर समन्वय हुआ है..... लेखक ने यहाँ कुछ मुबालगे से काम लिया है, लेकिन इसमें दोरा यें नहीं हो सकतीं कि समस्या नाटक की स्पिरिट को उन्होंने खूब पकड़ पाया है और हमारे जीवन के गुप्तर हस्यों, प्रेम और भावुकता की आड़ में छिपे हुए मनोविकारों पर ऐसा निर्दय प्रकाश डाला है कि उनकी ओर ताकते डर लगता है।"[5]

अपने अल्पकालिक जीवन में भुवनेश्वर ने कहानी, समीक्षा, एकांकी, कविता (ब्रजभाषा, अंग्रेजी एवं हिन्दी) सभी विधाओं में अपनी लेखनी चलाई। परंतु सर्वाधिक प्रसिद्धि उन्हें एकांकियों के माध्यम से ही मिली। प्रत्येक रचनाकार की अपनी स्वतंत्र और मौलिक लेखन शैली ही उसे अन्य रचनाकारों से अलग पायदान पर खड़ा करती है। इस कसौटी पर भुवनेश्वर की प्रत्येक रचना अलग मुकाम हासिल करती है। यहाँ तककि उनकी रचनाओं की भूमिकाओं की भी विशिष्ट और अनुपम शैली है।"भुवनेश्वर ने अपनी भूमिका 'प्रवेश' लिखने के लिए भी एक नया स्टाइल निकाला। उन्होंने सूक्तियों में 'भूमिका' लिखी, और यह भूमिका हिन्दी साहित्य की एक महान धरोहर है। नाट्य–लेखन और सामाजिक–मानवी अन्त संबन्धों की यह अद्भुत सूक्त्यात्मक व्याख्या है।"[6]भुवनेश्वर ने सामाजिक रुढ़ियों, विवाह–वैषम्य के साथ–साथ आधुनिक कृत्रिम जीवन पर तीखा व्यंग्य किया है। कथानक में तीव्र गति के साथ स्पष्ट उद्देश्य को समाहित किये आधुनिक समाज की समस्याओं का चित्रण करने में भुवनेश्वर अन्यतम हैं।

श्रीपतराय द्वारा निकाले गये 'हंस' पत्रिका के एकांकी विशेषांकमई 1938 ई०में प्रकाशित 'स्ट्राइक' शीर्षक एकांकी ने भुवनेश्वर को अत्यंत उच्च स्थान में प्रतिष्ठित कर दिया। जिसमें मध्यवर्गीय आधुनिक समाज के साथ–साथ आधुनिक दाम्पत्य–जीवन में अवस्थित विद्रूपताओं और उसके खोखलेपन का व्यंग्यपूर्ण चित्रण है।भुवनेश्वर का 'स्ट्राइक' एकांकी'कारवाँ तथा अन्य एकांकी' नामक पुस्तक में संकलित है, जिसका संपादन प्रसिद्ध एकांकी कार प्रोफेसर विपिन

अग्रवाल ने किया।

आलोच्य एकांकी की कथा तीन दृष्यों के माध्यम से अपनी प्रभावक क्षमता के साथ प्रस्तुत है।उक्त एकांकी के प्रमुख पात्र दोहैं–पुरुष और स्त्री।दोनों पति–पत्नी हैं। दोनों कहने भर को पति–पत्नी हैं क्योंकि दोनों के स्वभाव में कोई मेल नहीं है। पति अधेड़ है और पत्नी युवा। इस सामाजिक अन्याय ने पत्नी को विद्रोही स्वभाव का बना दिया है।वहपति की किसी भी बात में न तो कोई दिलचस्पी ही लेती है और न ही उसके प्रश्नों का ठीक से उत्तर ही देती है।इसका पता एकांकी के प्रथम दृष्य में खाने की मेज पर नाश्ता करते हुए दोनों के आपसी संवाद से चलताहै। पुरुष अपनी पत्नी से मीठी–मीठी बातें कर उससे अपनी फैक्टरी की बातें भी करता जा रहा है। पति की बातों में पत्नी की अन्य मनस्कता स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। पुरुष कहता है कि साढ़े चार बजे उसकी मीटिंग है, वह आठ बजे लौटेगा। अचानक पत्नी अपने लखनऊ जाने की बात कहती है।पति द्वारा कारण पूछे जाने पर वह बस इतना ही कहती है–"कुछ नहीं, ऐसे ही घूमने।" वह कुछ महिलाओं का नाम लेती है जिनके साथ वह लखन ऊजा रही है।पति अपने आश्चर्य को भरसक छिपाने की कोशिश करता हुआ हिसाब लगाता है कि उसकी पत्नी लखनऊ से कब लौटेगी? कब वह उसको लेने के लिए गाड़ी स्टेशन भेजेगा और कब वहस्टेशन से बना–बनाया खाना लेकर घर पहुँचेगी। पत्नी अनमने भाव से उसकी बातें सुनती है।तनाव कम करने के लिए आपस में वे दोनों कुछ बातें करते हैं, मगर सब व्यर्थ और निष्फल।पति मीटिंग के लिए चला जाता है और पत्नी अपनी सहेलियों की प्रतीक्षा करती है।प्रथम दृश्य में पति–पत्नी के अलगाव एवं असमान स्थिति को स्पष्ट तौर पर देखा और महसूस किया जा सकता है।

दूसरे दृष्य में मध्यवर्गीय क्लब–जीवन के खोखले पन का वर्णन है।क्लब का वातावरण मन हूसियत और ऊब से भरा हुआ है। इस ऊब से बचने के लिए क्लब के सदस्य सिगरेट पीते और ब्रिज खेलते हैं।इसके बावजूद वहाँ का वातावरणनी रस और उबाऊ ही बना रहताहै। सदस्य अनेक प्रसंग उठाते हैं किंतु जमकर किसी भी विषय पर बातें नहीं कर पाते हैं।

तीसरा और अंतिम दृष्य एकांकी का प्राणहै। उक्त दृष्य कोहम एकांकी की चरम स्थिति कह सकते हैं।तीसरे दृष्य मेंपुरुष श्री चन्द और उसका युवक मित्र घर आते हैं। पुरुष ने युवक को अपने घर पर रात्रि के भोजन के लिए आमंत्रित किया है।परंतु पुरुष की पत्नी लखनऊ से अभी तक लौटी नहीं है और दोनों नौकर भी छुट्टी पर हैं।इसलिए घर का चूल्हा ठंडा है। समय काटने के लिए पुरुष युवक से शादी न करने का कारण पूछता है। युवक कहता है कि उसने शादी नहीं की क्योंकि औरत का दिमाग कभी भी बिगड़ सकता है।फिर ऐसी मुसीबत क्यों मोल ली जाय? पुरुष युवकको समझाता है कि शादी एक गहरी समस्या है जिसके साथ खिलवाड़ नहीं किया जा सकता। जीवन और फैक्टरी की तुलना करते हुए वह कहता है कि जीवन एक फैक्टरी है, एक मशीन है, जिसमें स्त्री और पुरुष दोनों दो पुरजों के समान हैं। यह आवश्यक नहीं कि मशीन के सभी एक दूसरे को जाने और समझें ही।अगर मशीन का एक पुरजा बिगड़ जाए तो उसे बदल देना चाहिए, मशीन पुनः चलने लग जाएगी।पुरुष का इशारा उस तरफ है कि उसने पहली पत्नी की मृत्यु के बाद दूसरा विवाह किया है।उसने और उसकी पत्नी दोनों ने अपनी–अपनी जगह समझली है।जिस कारण दोनों में कभी भी मनमुटाव नहीं होता है। युवक और पुरुष की बातचीत के मध्य एक चपरासी एक पत्र लाकर पुरुष को देता है, जिससे पता चलता है कि स्त्री कल घर आयेगी। पुरुष असमंजस में पड़ जाताहै।जिसे देख उसका युवक मित्र उसी की भाषा में, उसी के शब्दों में कहता है–"आइए मेरे होटल में आइए, आपकी फैक्टरी में तो आज स्ट्राइक हो गयी।" एकांकी की कथा वस्तु इसी बिन्दु पर समाप्त हो जाती है।

प्रस्तुत एकांकी के दो प्रमुख पात्रों में श्री चन्द और उसकी युवा पत्नी हैं।श्री चन्द का जीवन के संबंध में जो भौतिक वादी दृष्टिकोणहै, वह उसकी संकुचित मनोवृत्ति और स्वार्थ परता को अभिव्यक्त करता है।उसके अनुसार बहुमत का जमाना बीत चुका है।अब उस शक्तिशाली व्यक्ति का युग आया है जो अकेले ही सारी दुनिया को हिला सकता है। अभिप्राय यह है कि बुद्धि हीन भीड़ की तुलना में बुद्धिमान और शक्तिशाली एक हीपुरुष काफी है। सांकेतिक रूप से वह यही कहना चाहता ह कि डायरेक्टरों की तुलना में अकेला वही अधिक बुद्धिमान और शक्ति संपन्न है।

श्रीचंद की पत्नी उससे उम्र में बहुत ही कम है। जहाँ श्रीचन्द को ऐश्वर्य और शक्ति की चिंता है वहीं उसकी पत्नी के सामने छोटी–छोटी आकांक्षाओं का महत्व अधिक है जो किसी भीनारी के जीवन से सामान्य तया संबंधित हुआ करती है।पुरुष को स्त्री के मनोविज्ञान की कम समझ है।उसके जीवन का एक ही लक्ष्य है शक्ति और सामर्थ्य के बल पर सफलता की प्राप्ति।उसका विश्वास है कि एक दिन सुख और दुःख शीशियों में बिका करेंगे।जो लोग बराबर पराजय के गीत गाते हैं और रोया करते हैं उसकी नजर में वे घृणा के पात्र हैं।

दूसरी ओर श्रीचन्द की पत्नी का असंतोष उसके उदासीन व्यवहार एवंक्रिया–कला पों में झलकता है। बिना पति को सूचित कियेवह लखनऊ जाने की योजना बना लेती है। उचित–अनुचित का विचार न कर वह रात में भी वहाँ रुकने का निश्चय कर लेती है।बिना यह सोचेकि घर की चाबी भी उसी के पास है और पति के भोजन की भी कोई व्यवस्था नहीं है।

भुवनेश्वर का एकांकी शिल्प अत्याधुनिक है। एकांकी के तीन छोटे–छोटे दृष्यों में इन्होंने आधुनिक समाज के खोखलेपन को सजीव और जीवंत कर दिया है।पहले दृष्य में पति–पत्नी के अलगाव को, दूसरे में ऊब भरे क्लब जीवन के तथा तीसरे दृष्य में दोनों की परिणति बेबसी में दिखायी गई है। भुवनेश्वर के संवादगूढ़ और अत्यंत सार्थक है।

भाषा की व्यंजकता और सांकेतिकता दर्शनीय है।जैसे पुरुष का यह संवाद उसकी प्रकृति और चरित्र को अभिव्यक्ति प्रदान करता है–"दुनिया का भविष्य उचित समय पर उचित काम करने वालों के हाथों में है–दुनिया की सारी दौलत, सारा आराम, साराजस उसका हैजो अपनी जगह पर कायम है और काम का जो छोटा हिस्सा उसका है उसे मशीन की तरह पूरा कर रहा है।"

एकांकी में प्रतीकों का प्रयोग दर्शनीय है। शीर्षक 'स्ट्राइक' स्वयंमें एक प्रतीक है जो मशीनी सभ्यता की निस्सारता का द्योतक है।आज के यांत्रिक भौतिकवादी युग में पति–पत्नी मानो मशीन के दो पुरजों के समान बन गये हैं।वे साथ–साथ इसलिए रहते हैं किउन्हें जीवन रूपी

मशीन या फैक्टरी को चलाना है।वे यंत्रवत् अपना काम करते हैं।मानवीय संवेदना, सहयोग, प्रेम का अभाव उनमें साफ दिखा लायी देता है। आधुनिक वैज्ञानिक सभ्यता वस्तुतः फैक्टरी नुमा ही हो गयी है।

एकांकी के अंतिम दृष्य में एकांकीकार ने व्यंग्यात्मक दृष्टि से पत्नी की अनुपस्थिति और घर की अव्यवस्था का संकेत 'स्ट्राइक' शब्द से कर दियाहै। 'स्ट्राइक' शब्द का प्रयोग अमूनन कारखानों या उद्योग धंधों में श्रमिकों द्वारा अपनी मांगों के एवज में किये जाने वाले धरना–प्रदर्शन या हड़ताल से संबंधित है। घर में गृह स्वामिनी की अनु परस्थिति को 'स्ट्राइक' शब्द से द्योतित करनानिः संदेह भुवनेश्वर के मौलिक और नूतन दृष्टिकोण को दर्शाता है। शीर्षक पूरी तरह से एकांकी के मूलभाव की सांकेतिक अभिव्यक्ति में सफल है।

एकांकी की सफलता, उसका पूर्ण सौंदर्य रंग मंच पर ही दृष्टिगोचर हो सकताहै।प्रस्तुत एकांकी में तीन छोटे–छोटे दृष्य है ंजिन्हें सफलता पूर्वक रंगमंच पर अभिनीत किया जा सकता है।प्रत्येक दृश्य के आरंभ में मंचसज्जा का निर्देश भी है।

निष्कर्षः

रचनाकार भविष्य द्रष्टा होता है।भले ही भुवनेश्वर की रचनाओं पर पाश्चात्य परिवेश का, उसकी संस्कृति का प्रभाव परिलक्षित होता है,परंतु मौजूदा भारतीय परिवेश को देखकर इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि आज से करीब 80–90 वर्षों पूर्व लिखा गया उनका साहित्य आज अधिक प्रासंगिक हो उठा है। इस परिप्रेक्ष्य में' स्ट्राइक' की बात की जाय तो इसमें वर्णित समस्याएँ माना`आज की ही प्रतीत होती हैं। इसमें मध्यवर्गीय आधुनिक समाज के उस यथार्थ का जीवंत चित्रण है जिसमें वह उच्चवर्ग की जीवन–शैली में स्वयं को ढालने की कोशिश में गर्व और आनंद की अनुभूति करता है। जिसका परिणाम यह होता है कि वह जीवन की सहजता और सरलता से कोसों दूर हो जाता है। विदित है कि सफल दांपत्य जीवन का अचूकमंत्र पति–पत्नी का आपसी प्रेम और विश्वास होता है।पर आजपति–पत्नी की अपनी–अपनी राहें हैं औरवेरा हें आपस में मिलने से कतराती हैं।भुवनेश्वर ने आधुनिक संवेदना हीन दांपत्य प्रेम को उस मशीनी कारखाने या फैक्टरी के सदृश चित्रित किया है जिसमें वे मशीन के दो पुरजों के समान प्रतीत होते हैं। और ऐसे कारखाने में आये दिन स्ट्राइक होती ही रहती है। निःसंदेह भुवनेश्वर का 'स्ट्राइक' आधुनिक दांपत्य जीवन पर, पति–पत्नी के प्रेम और आपसी समझदारी की कमी पर करारा व्यंग्य करता है।

संदर्भः

1. डॉ त्रिभुवन सिंह, आधुनिक साहित्यिक निबंध, रत्ना पब्लिकेशन्स, वाराणसी, 1998 ई., पृ. सं. 176
2. डॉ गणपति चन्द्र गुप्त, साहित्यिक निबन्ध, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1973 ई., पृ.सं. 450
3. वही–पृ.सं. 452
4. डॉ त्रिभुवन सिंह, आधुनिक साहित्यिक निबंध, रत्ना पब्लिकेशन्स, वाराणसी, 1998 ई., पृ. सं. 176
5. दूधनाथ सिंह (सं.), भुवनेश्वर समग्र, राज कमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2012 ई., पृ.सं. 411
6. वही–पृ.सं. 16

डॉ0 नियति कल्प

सहायक प्रोफेसर,

स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग

राँचीविश्वविद्यालय, राँची ।

मो.: 9430346083

ईमेलः niyatikalpru@gmail-com

मधुकर सिंह की कहानियों में दलित विमर्श

पंकज कुमार

सारांश

साहित्य की रचना लोकमंगल की कामना के उद्देश्य से की जाती है। हाशिए पर रह रहे लोगों को समाज की मुख्यधारा के साथ जोड़ना साहित्यकार का परम धर्म है। इसी धर्म को निभाते हुए साहित्यकार मधुकर सिंह ने अपनी कहानियों में दलित विमर्श को उपयुक्त स्थान प्रदान किया है। अपनी कहानियों के माध्यम से लेखक ने दलित विमर्श के विभिन्न आयामों को स्थापित करने में काफी सफलता पायी है। मधुकर सिंह की विभिन्न कहानियाँ जैसे 'अगनुकापड़','उसका सपना', 'हरिजन सेवक' तथा 'कवि भुनेसर मास्टर' में दलित विमर्श की सुंदर और सशक्त अभिव्यक्ति है। 'अगनुकापड' कहानी के माध्यम से लेखक ने एक ओर अगनुकापड़ जैसे दब्बू, दीन–हीन और स्वामिभक्त चरित्र को चित्रित किया है वहीं दूसरी ओर अगनुकापड़ की संघर्षशील, हिम्मती और निडर पत्नी की भी बात कही है। 'उसका सपना' कहानी के द्वारा मधुकर सिंह ने ग्रामीण क्षेत्रों में दलितों पर जोने वाले जुल्मों को उठाया है। इसी कहानी में दलित बस्तियों को जलाने और दलितों के अंदर डर पैदा करने की घटना भी शामिल है। 'हरिजन सेवक' कहानी में स्वाभिमानी दलितों को संघर्ष करते हुए दिखलाया गया है। मधुकर सिंह की सभी कहानियों में दलित संघर्ष प्रमुखता से उभरा है। 'कवि भूनेसर मास्टर' कहानी में वे डॉ. भीमराव अंबेडकर के बताए आदर्शों को अपनी लेखनी के द्वारा चित्रित किया है। इस कहानी में वे शिक्षा रूपी हथियार को सदैव अपने साथ लेकर चलने का आह्वान किया है।

बीजशब्दः–लोकमंगल, दलित विमर्श, अभिव्यक्ति, संघर्षशील, स्वाभिमानी, दलित संघर्ष, आह्वान आदि।

शोध आलेखः–

आजादी के इतने वर्षों बाद भी आज दलित समाज समानता और स्वतंत्रता के अधिकार के लिए संघर्षरत है। कानून के समक्ष वह अपने आप को असहाय और असुरक्षित महसूस करता है, क्योंकि उसे लगता है कि पुलिस और प्रशासन उसकी सहायता के लिए नहीं बल्कि उसे परेशान करने के लिए एक मजबूत तंत्र के रूप में काम कर रही है। मधुकर सिंह ने 'हरिजन सेवक' कहानी में ऐसे अनेक प्रसंग उठाए हैं जिसमें दलितों को पीटने, उसका घर जलाने, उनकी बहु–बेटियों के साथ छेड़खानी की घटना और पुलिस द्वारा उसकी रिपोर्ट नहीं लिखे जाने का जिक्र है। इस कहानी में खेत मालिकों द्वारा किए जा रहे अत्याचारों और उसमें पुलिस का सहयोग दलितों की स्थिति को और बदत्तर बनाता है। कथाकार मधुकर सिंह लिखते हैं ''दुसाध टोली में एक रात किसी ने बम फेंक दिया और पुलिस में खबर चली गई कि दुसाध टोली में बम भी बनते हैं बम फटने से दुसाध टोली में ही धमाका हुआ है। एक दर्जन बंदूकधारी पुलिस आ गई। दीनदयाल उन दिनों बीमार पड़ गया था और हमारे साथ दो–चार दिनों के लिए काम पर नहीं आ रहा था। एक सिपाही उसकी छाती पर चढ़ गया और किरिच से उसका अंडकोष फाड़ दिया। हम जब लौटकर आए तब हमने फूँक–फाँक की। मगर पुलिस ने हत्या की रपट कहीं नोट नहीं की।''[1] बेवजह किसी न किसी दलित पर झूठा आरोप लगाकर उसके खिलाफ मुकदमा दर्ज करना पुलिस का दैनिक कार्य बन गया है। कभी–कभी तो दलितों पर नक्सलपंथी का साथ देने और नक्सलपंथी होने का भी आरोप लगता रहा है। मधुकर सिंह के विचारों का समर्थन करते हुए कुँवर पाल सिंह लिखते हैं, ''दलितों के संबंध में सामंती सोच और संस्कार अब भी पूरी तरह नहीं बदले हैं। दलितों की चेतना और उनके जनतांत्रिक मानवीय अधिकारों को स्वीकार करने को पचास साल बाद भी तैयार नहीं है। दमन और शोषण के तरीके बदल गए हैं। अब वे स्वयं अन्याय न करके असामाजिक तत्वों, पुलिस और प्रशासन की मदद लेते हैं।''[2]

आत्म विश्वास की कमी के कारण दलित हमेशा अपने आपको निम्न और हीन मानता आया है। शोषित और दीन–हीन होने की वजह से दलित आज भी अपमान सहने को मजबूर हैं। ऐसी घटनाएँ अक्सर सुनायी देती हैं कि नमक का कर्ज चुकाने के चक्कर में मालिक द्वारा किए गए कुकर्म का इल्जाम नौकरों ने स्वयं पर ले लिया। कभी–कभार इन बेचारे की भोली–भाली सूरत भी उन्हें ही गुनहगार साबित करने पर तुली रहती है। कहानी 'अगनुकापड़; में अगनुकापड़ भी वकील साहब का जुर्म स्वयं पर ले लेता है। मधुकर सिंह लिखते हैं, ''कचहरी–पुलिस सभी मान रही है कि अगनुकापड़ के हाथ में भाला था इसलिए देवकी मंडल को खुन भी उसी ने किया है। अगनुकापड़ की शक्ल, सूरत, जात, समाज–सब कुछ ऐसा है कि पुलिस–कचहरी वकील साहब को खूनी साबित कर ही नहीं सकती। अपने ही यहाँ के जेल में जाकर अंदाज लगा लीजिए– नब्बे के प्रतिशत इसी जमात के लोग जेल में हैं। यह बात दूसरी है कि ये बगैर किसी केस–मुकदमें के वर्षों से जेल की सजा काट रहे हैं।''[3]

आर्थिक विषमता दलितों के लिए अभिशाप है। श्रीधर पाठक ने 'मनु जी' कविता में सामाजिक ओर आर्थिक व्यवस्था पर कुठाराघात करते हुए एक प्रश्नचिह्न लगाया है–

''मनु जी तुमने यह क्या किया?
किसी को पौन, किसी को पूरा, किसी को आधा दिया।
सरस प्रीति के थल में बोया।
बिष अनीति का बिया।''[4]

सामंती सोच आज भी दलितों के विरुद्ध है। इसी सोच का परिणाम बंधुआ मजदूरी की प्रथा है। बंधुआ मजदूर होने की वजह से ही अगनुकापड़ को वकील साहब की हर गलत बात भी माननी पड़ती थी।

'अगनुकापड़' कहानी में इसी बंधुआ मजदूरी के संदर्भ में मधुकर सिंह लिखते है ''अगनु तीन पुश्त से ही वकील साहब के यहाँ बँधा हुआ है। अगनु का दादा वकील साहब के बाप का कर्जखोर था। सूद में जिंदगी–भर उसके बाप ने परिवार की सेवा की ओर मरने के बाद अगनु को भी सौंप गया।''[5]

दलित संघर्ष दलित विमर्श का आधार स्तंभ है। इस संघर्ष का मुख्य कारण जाति प्रथा, छुआछूत और उचित मजदूरी का न होना है। ग्रामीण अशिक्षित दलितों के जीवन में आज भी कमोवेश जातिप्रथा और छुआछूत कोढ़ की भाँति मौजूद है। दलितों पर होने वाले जुल्म को रेखांकित करते हुए लेखक मधुकर सिंह कहते हैं कि ''शहर में तो लोग खैरियत है कि हड़ताल जुलुस और कभी–कभी आगजनी तक बढ़ जाते हैं। यहाँ तो खून–खराबियाँ होती हैं, घरों में आग लगा दी जाती है तथा बच्चों को जिन्दा जला दिया जाता है।''[6] मधुकर सिंह की इन्हीं बातों को समर्थन मन्नू भंडारी ने अपने उपन्यास 'महाभोज' में भी किया है। मन्नू भंडारी लिखती हैं ''गाँव की सरहद से जरा हटकर जो हरिजन टोला है। वहाँ कुछ झोपड़ियों में आग लगा दी गयी थी आदमियों सहित। दूसरे दिन लोगों ने देखा तो झोपड़ियाँ राख में बदल चुकी थी और आदमी कबाब में।''[7] हरिजनों की जीविका का मुख्य आधार मजदूरी है। कम मजदूरी देकर दलितों से बेगार की तरह काम करवाना हमारे समाज की पुरातन परंपरा रही है, जो आज भी चली आ रही है। समय के साथ इसमें भी काफी बदलाव हुआ है। मधुकर सिंह का दृष्टिकोण इस संबंध में आक्रोश पूर्ण रहा है। 'हरिजन सेवक' कहानी में जब मालिकों और मजदूरों के बीच बात नहीं बनती है तो संघर्ष ही एकमात्र विकल्प है। इसी तथ्य को दर्शाते हुए कथाकार मधुर सिंह कहते हैं कि ''हमने तय कर लिया जब तक हमें रोजाना तीन सेर चावल नहीं मिलता तब तक उनके यहाँ कोई काम नहीं करेंगे। मालिकों को विश्वास था कि दो–तीन दिनों में जब हम भूख से बिलबिलाने लगेंगे तब हमारा मिजाज खुद ही ठिकाने आ जाएगा। मगर हमारा भी विश्वास था कि हम शहर जाकर मेहनत मजदूरी करेंगे, परन्तु मालिकों के सामने कभी हाथ नहीं पसारेंगे।''[8]

बेबसी और लाचारी का प्रतिफल आक्रोश है। जब किसी चीज के बर्दाश्त करने की सीमा समाप्त हो जाती है तो व्यक्ति आक्रोशित होकर संघर्ष की चाह चुन लेता है। किन्तु इस संघर्ष को दबाने के क्रम में पुलिस द्वारा पीटा जाना आम बात है। कहानी 'कवि भूनेसर मास्टर में कुछ इस तरह की घटना घटती है– ''अचानक बस्ती में पुलिस आ गई और सूअरों की तरह खदेड़–खदेड़कर उन्हें मारने लगी। पुलिस के लोगों ने जवान लड़कियों के साथ खूब मजा भी किया। औरतें, बच्चे चीखते–चिल्लाते इधर–उधर भाग रहे थे। दो–तीन तो वहीं छटपटा–छटपटाकर मर गए थे। बड़ों की टोली छोड़कर सारा गाँव श्मशान नजर आ रहा था।''[9] इस घटना के बाद भूनेसर महतो और भी आक्रोशित हो उठता है। और बाबुओं की टोली में जाकर साफ–साफ कहता है। ''मजूरी दबाकर रखना जुल्म है। तय किया हुआ बल और मजूरी हम लेंगे। घरों में जो गल्ला छिपाकर सड़ाते हो उन्हें गरीबों के हाथों सस्ते दामों में बेच डालो, नहीं तो भुक्खड़ों की टोलियाँ तुम्हारी कोठी लूट लेंगी। हम जानते हैं कि पुलिस भी तुम्हारे ही लोग हैं। मगर हम भी अपनी रक्षा के लिए तैयार हो गए हैं।''[10]

दलितों में संघर्ष करने की पूर्ण क्षमता होती है। इस कारण बड़ा–बड़ा त्याग और बलिदान देने को वे सदैव तैयार रहते हैं। दलित सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से कमजोर जरूर होते हैं, लेकिन अंदर से हिम्मती और मजबूत होते हैं। जब भूपति की जुल्म जंगी और देवनचमार की बेटी तक पहुँच जाता है तब भूनेसर क्रोधित होकर उसका बदला लेता है। मधुकर सिंह लिखते हैं, ''भूपति की पत्नी दौड़कर अंदर गई और सारे कागजातों में आग लगा दी और तमाम लोगों को संबोधित करते हुए बोला, 'भाईयों! अब से इस जालिम का कोई गुलाम नहीं है, थाना–पुलिस का नाम ले तो मिलकर गर्दन उतार लो।''[11] दलित औरतें भी संघर्षशील होती हैं। 'अगनुकापड़' कहानी में अगनु की पत्नी को शोषित के साथ–साथ स्वाभिमानी और निडर स्त्री के रूप में भी दिखाया गया है। अगनुकापड़ की स्त्री को पूरा विश्वास है कि जब वह पुलिस के पास जाएगी तो उसके पति को छोड़ दिया जाएगा। वकील साहब और अगनुकापड़ की पत्नी के बीच हुए वार्तालाप को मधुकर सिंह कुछ इस तरह रेखांकित करते हैं ''पुलिस के सामने आँचल पसारकर भीख माँगूंगी कि मेरा मरद बेकसूर है। भाला उसने नहीं चलाया। 'पुलिस नाम पूछेगी तो किसका बताओगी?' आपका बता दूँगी और कहूँगी, हम तो उनके बेगार हैं। उनके इज्जत पानी के लिए उन्होंने कहा तो मेरे सवांग ने अपने ऊपर ओढ़ लिया है।''[12]

दलित विमर्श सिर्फ दलितों की दीन–हीन दशा और जर्जर स्थिति को ही नहीं उजागर करता है, बल्कि दलितों में शिक्षा के प्रचार–प्रसार पर भी जोर देता है। शिक्षा से हमेशा दलितों को वंचित रखा गया है। दलितों के पिछड़ेपन का एक मुख्य कारण उसका अशिक्षित होना है। आज भी दलितों के बीच शिक्षा का अभाव है। 'कवि भूनेसर मास्टर' कहानी में मधुकर सिंह ने यह बताने की कोशिश की हे कि जीवन की लड़ाई को लड़ने के लिए शिक्षा ही सबसे ज्यादा शक्तिशाली और असरदार हथियार है। मधुकर सिंह लिखते हैं ''भुनेसर रविवार को या छुट्टियों में गाँव चला जाता था। वह युवक साथियों का शिविर लगाता, क्लास लेता और किताबें पढने के लिए देता। भुनेसर उन्हें इस बात की ट्रेनिंग देता कि अत्याचार और जुल्म के खिलाफ किस प्रकार संगठित होकर काम करना चाहिए। लुंबी छुट्टियों के लिए दरखास्त देकर वह गाँव चला आया था। रात को पत्नी को बता रहा था मेरी बीमारी का असली इलाज तो मेरे वे तमाम साथी हैं। मैं इनके बीच ही अच्छा हो सकता हूँ।''[13]

वास्तव में मधुकर सिंह दलित विमर्श के चितेरे हैं। हिंदी कथा–साहित्य में दलित चेतना की दृष्टि से मधुकर सिंह की कहानियाँ अपना प्रभावशाली स्थान रखती हैं। विशेष रूप से दलित संघर्ष को प्रमुखता देकर इन्होंने दलित विकास की यात्रा को अविरल गति प्रदान की है।

संदर्भ सूचीः–

1. मधुकर सिंह, दस प्रतिनिधि कहानियाँ, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 32
2. कुँवरपाल सिंह, साहित्य और हमारा समय, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2002, पृ. 106
3. मधुकर सिंह, दस प्रतिनिधि कहानियाँ, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 15
4. श्रीधर पाठक, श्रीधर ग्रंथावली, पृ. 445
5. मधुकर सिंह, दस प्रतिनिधि कहानियाँ, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 16–17
6. वही, पृ. 24
7. मन्नू भंडारी, महाभोज, पृ. 7
8. मधुकर सिंह, दस प्रतिनिधि कहानियाँ, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 31
9. वही, पृ. 47
10. वही, पृ. 47–48
11. वही, पृ. 48
12. वही, पृ. 18–19
13. वही, पृ. 46–47

पंकज कुमार

फ्लैट नं. 201, द्वितीय तल, प्लॉट नं. 145

आई.आई.एम.टी. विश्वविद्यालय

मेरठ, उत्तर प्रदेश

घिटोरनी, नई दिल्ली–110030

मोबाइल नं. – 9871111694

ई–मेल : pk04041978@gmail.com

दक्षिण एशिया का सामरिक वातावरण एवं सुरक्षा सम्भाव्यताएं

डॉ0 स्नेह लता

सारांश

भू–रणनीतिक संदर्भ एशियाई महाद्वीप के पांच क्षेत्रों (पश्चिम एशिया, दक्षिण एशिया, पूर्वी एशिया, मध्य एशिया और दक्षिण पूर्व एशिया) में, दक्षिण एशिया की रणनीतिक स्थिति महत्वपूर्ण है। यह दुनिया के सबसे घनी आबादी वाले क्षेत्रों में से एक है, जिसमें वैश्विक आबादी का लगभग एक–चौथाई हिस्सा सिर्फ 3.5 प्रतिशत भूमि क्षेत्र में है। इस क्षेत्र में आठ देश शामिल हैं अफगानिस्तान, बांग्लादेश, भूटान, भारत, मालदीव, नेपाल, पाकिस्तान और श्रीलंका – और दो समुद्र (अरब सागर और बंगाल की खाड़ी) और एक महासागर (हिंद महासागर)। अंतरराष्ट्रीय व्यवस्था की तरह, दक्षिण एशिया में संख्या के मामले में छोटे राज्य बहुमत का गठन करते हैं। यह क्षेत्र आबादी वाला है, लेकिन सबसे गरीब लोगों में से एक है। समान सांस्कृतिक विशेषताओं के बावजूद, यह क्षेत्र कम से कम एकीत है। भारत निर्विवाद रूप से क्षेत्रीय शक्ति है जो इस क्षेत्र को हर क्षेत्र में 'भारत–प्रभुत्व' बनाती हैः क्षेत्र, जनसंख्या, आर्थिक ताकत, सैन्य शक्ति, परमाणु ऊर्जा, प्रौद्येगिकी आदि। पाकिस्तान अपनी परमाणु और सैन्य शक्ति के कारण छोटा राज्य नहीं माना जाता है, हालांकि अन्य सभी पहलुओं में कमजोर है।दक्षिण एशिया एक विकासशील क्षेत्र है जिसका सकल घरेलू उत्पाद 2021 में प्रति व्यक्तिलगभग 1,800 अमेरिकी डलर है, जबकि विश्व औसत 10,000 अमेरिकी डलर है। महामारी ने आर्थिक विकास को और प्रभावित किया है।

दक्षिण एशियाई देशों द्वारा सुरक्षा गतिशीलता पर प्रतिक्रियाः

दक्षिण एशिया की सुरक्षा गतिशीलता दक्षिण एशिया की सुरक्षा गतिशीलता को दो आयामों में समझना होगाः पारपंरिक औरगैर–पारंपरिक।पारंपरिक सुरक्षा गतिशीलता अन्यथा 'पारपंरिक सुरक्षा खतरो' के रूप में जाना जाता है, पारंपरिक सुरक्षा खतरे वे हैं जोराज्य के लिए खतरा हैंः सैन्य बल और हथियारों, युद्ध, गठबंधन और शक्ति संतुलन के माध्यमसे इसकी क्षेत्रीय अखंडता, संप्रभुता और जनसंख्या। सैन्य बल प्रशिक्षित और पेशेवर हैयउपयोग किए जाने वाले आयुध या तो पारंपरिक या परमाणु या दोनों हैंय सैन्य गठबंधन औरशक्ति संतुलन का उद्देश्य प्रतिरोध मूल्य को बढ़ाना है।पारंपरिक संघर्षः जहां तक दक्षिण एशियाई क्षेत्र का संबंध है, पारंपरिक अपारंपरिक सुरक्षा खतरे लाजिमी हैं। इस क्षेत्र के दो प्रमुख देशों – भारत और पाकिस्तान – ने अपनी स्वतंत्रता केबाद से चार युद्ध लड़ेः 1947–48, 1965, 1971 और 1999। इन चार युद्धों में से तीन जम्मूऔर कश्मीर (1947–48, 1965, 1999) में और उसके ऊपर लड़े गए थे।) और 1971 का युद्ध बांग्लादेश, पूर्व में पूर्वी पाकिस्तान की मुक्ति से सबंधित था। इन सभी चार युद्धों में दोनों पक्षोंकी सयुंक्त रूप से लगभग 25,000 सैन्य मौतें हुईं। इन पारंपरिक सघंर्षों के अलावा, भारत और पाकिस्तान दोनों के बीच सीमाओं पर (सियाचिन ग्लेशियर सहित) गतिरोध जारी है, जो सैन्य संसाधनों का महत्वपूर्ण हिस्सा खींच रहा है। इसी तरह की प्रवृत्ति भारत और चीन के बीच विशिष्ट है। शांतिपूर्ण सह–अस्तित्व के पांच सिद्धांतों और एक प्रसिद्ध दोस्ती नारे ''हिंदी–चीनी भाई–भाई'' पर सहमत होने के बावजूद दोनों देशों ने 1962 में पूर्वी क्षेत्र में युद्ध लड़ा। ऐसा लगता है कि सीमा और तिब्बत मुद्दे परविवाद 1962 के टकराव का कारण बना, जिसके परिणाम स्वरूप दोनों पक्षों में 2000 से अधिक सैन्य मौतें हुईं। तब से वास्तविक नियत्रंण रेखा (एलएसी) पर देशों के बीच राजनीतिक, सैन्य और राजनयिक स्तरों पर कई वार्ताओं के बावजूद गतिरोध जारी है। 1962 के बाद दोनोंसेनाओं के बीच अब तक की सबसे भीषण हिंसक झड़पें जून 2020 में गालवान घाटी (पश्चिमीक्षेत्र) में हुईं, जिसमें लगभग 30 लोग मारे गए।परमाणु आयामः पारंपरिक संघर्ष अब इस क्षेत्र के परमाणुकरण से जटिल हो गए हैं। चीन1964 में परमाणु बन गया, भारत 1974 में और पाकिस्तान 1998 में। तीनों देशों में 100 से अधिक परमाणु युद्ध प्रमुख और संबंधित मिसाइल वितरण प्रणाली हैं। हालांकि तीनों देशों मेंसे किसी ने भी अब तक अपने द्विपक्षीय संघर्षों में परमाणु हथियारों का इस्तेमाल नहीं किया है, लेकिन भविष्य में कभी भी इनके इस्तेमाल का डर बना हुआ है। दूसरे शब्दों में, वर्तमान' रणनीतिक संयम' लंबे समय तक नहीं रह सकता है। हालाँकि, परमाणु हथियारों केइस्तेमाल का डर पाकिस्तान की ओर से, रणनीतिक और सामरिक दोनों स्तरों पर हो सकता है। इस्लामाबाद ने अपनी न्यूनतम विश्वसनीय प्रतिरोधक क्षमता के लिए परमाणु हथियारों कीभूमिका को मान्यता देने के अलावा 'पहले इस्तेमाल न करने' की नीति को सिरे से खारिजकर दिया। दूसरी ओर, भारत 'पहले उपयोग नहीं' परमाणु हथियार नीति का पालन कर रहाहै।

गरीबी तेजी से बढ़ रही है और मौजूदा असमानताएं चौड़ी हो रही हैं। उच्च जनसंख्या घनत्व के कारण, पहले से ही दुर्लभ ससांधनों पर एक महत्वपूर्ण दबाव है। साथ ही, इस क्षेत्र में विशाल उपभोक्ता बाजार, सस्ते श्रम की अच्छी आपूर्ति (तकनीकी और गैर–तकनीकी दोनों) और विभिन्न क्षेत्रों में प्रचुर मात्रा में मानव ससांधन जैसे विभिन्न रूपों में जनसांख्यिकीय लाभांश की अच्छी संभावना है। हालाँकि, इस क्षेत्र के देश इस बात से जूझ रहे हैं कि इस लाभ का लाभ कैसे उठाया जाए। फिर भी एक अन्य प्रमुख चिंता इस क्षेत्र के भीतर आर्थिक एकीकरण की कमी है।तथ्य यह है कि दक्षिण एशिया कई सांस्कृतिक परंपराओं का घर है, इस क्षेत्र को आम तौर पर ''एक बहु सांस्कृतिक

दुनिया का सूक्ष्म जगत''कहा जाता है। वास्तव में, यह क्षेत्र भू–राजनीतिक निर्माण की तुलना में अधिक सांस्कृतिक है। विभिन्न जातीय समूहों से सबंधित, इस क्षेत्र के लोग 1000 से अधिक भाषाओं में बातचीत करते हैं और विभिन्न धार्मिक सप्रंदायों का पालन करते हैं। क्षेत्र के अधिकाशं देशों में जाति व्यवस्था जैसी पदानुक्रमित सामाजिक संरचनाएँ प्रचलित हैं। क्षेत्र की संस्कृति साहित्य, संगीत, सिनेमा, नृत्य, कला, नाटक, चित्रकला,वास्तुकला में प्रकट होती है, और भोजन एक बंधन के रूप में कार्य करता है और प्रति में सीमा पार है। सस्कंति सीमाओं से परे है और इसलिए लोगों से लोगों के संपर्क का स्तर अच्छा रहा है, अगर यह सबसे अच्छा नहीं है। हालांकि, सद्भावना के इस जबरदस्त भंडार केलिए अंतर–राज्यीय तनाव एक बड़ा बिगाड़ है। क्षेत्र का साक्षरता स्तर, हालांकि बेहतर औरसुधार कर रहा है, अप–टू–द–मार्क नहीं है।

– परमाणु हथियारों का उपयोग केवल परमाणु हमले के प्रतिशोध में करने की प्रतिबद्धता है न कि पारंपरिक हथियारों के उपयोग के जवाब में। परमाणु हमलों पर चीन की घोषित'नो फर्स्ट यूज' नीति भी है। फिर भी, हाल ही में, ऐसे सुझाव हैं कि बीजिंग ''क्षेत्र में अमेरिकी सैन्य उपस्थिति का मुकाबला करने'' के कारण इस लंबे समय से चली आ रही स्थिति पर पुनर्विचार करने पर विचार कर रहा है। भारत भी 'दो–मोर्चे' परमाणु खतरे कीगतिशीलता में बदलाव के कारण पहले उपयोग न करने की नीति पर फिर से विचार करने के लिए इसी तरह की तर्ज पर विचार कर रहा है। विशेष रूप से, पाकिस्तान की स्पष्ट परमाणु क्षमता ने भारत के खिलाफ उप–पारंपरिक युद्ध रणनीति को आगे बढ़ाने के लिए उसके विश्वास को बढ़ा दिया है। परमाणु हथियारों के हिंसक गैर–राज्य अभिनेताओं के हाथों में पड़ने का भी खतरा है जो पाकिस्तान में अत्यधिक वैधता और प्रभाव के साथ कामकर रहे हैं। इस प्रकार, भारत–पाक उप–पारंपरिक संघर्षों का एक परमाणु आयाम अंतरराष्ट्रीय सगंठित अपराधः इस क्षत्रे में नशीली दवाओं की तस्करी, मानव तस्करी, हथियारों की तस्करी और साइबर अपराध जैसे अंतरराष्ट्रीय संगठित अपराध बहुतायत में हैं। तथ्य यह है कि दक्षिण एशिया 'गोल्डन ट्राएंगल' (म्यांमार, लाओस और थाईलैंड) और 'गोल्डन क्रिसेंट'(अफगानिस्तान, पाकिस्तान और ईरान) के बीच स्थित है, जो दुनिया के दो प्रमुख नारकोटिक हब हैं, इस क्षेत्र को एक डिफल्ट पारगमन मार्ग बनाता है। विश्व की लगभग 80 प्रतिशत अफीम का उत्पादन अफगानिस्तान में होता है। और भांग के उत्पादन में देश मोरक्को के बाददूसरे स्थान पर है। इस प्रकार उत्पादित दवाओं का प्रसस्करण और तस्करी ज्यादातर पाकिस्तान, ईरान और मध्य एशियाई देशों के माध्यम से की जाती है। मानव तस्करी एक और गैर–पारंपरिक सुरक्षा खतरा है जिसका सामना क्षेत्र के लगभग सभी देश करते हैं। क्षेत्र के देशों के बीच खुली और झरझरा सीमाओं ने सगंठित गिरोहों द्वारा तस्करी को आसान बनाया है। गौरतलब है कि तस्करी करने वालों में एक तिहाई बच्चे हैं। मानव तस्करी के शिकार दुनिया भर के लगभग 40 देशों में पाए जाते हैं, खासकर पश्चिमएशिया में। यौन शोषण और जबरन मजदूरी इसके मुख्य चालक प्रतीत होते हैं। विडंबना यहहै कि गरीबी का मानव तस्करी से सीधा संबंध है। गरीबी और आर्थिक असमानता के अलावा,लैंगिक भेदभाव, लैंगिक हिंसा और सामाजिक बहिष्कार को कुछ कारणों के रूप में पहचाना जाता है। इसलिए, अधिकांश पीड़ित नेपाल, बांग्लादेश, भारत, पाकिस्तान और अफगानिस्तान जैसे देशों के गरीब क्षेत्रों से हैं। अवैध व्यापार सचांलन इतना अधिक है कि ''मानव तस्करीके एन्क्लेव'' भारत के कुछ सीमावर्ती क्षेत्रों में संग्रह और भर्ती केंद्रों के रूप में मौजूद हैं। दक्षिण एशिया में छोटे हथियारों की तस्करी चिंताजनक है। अफगानिस्तान और पाकिस्तान विशेष रूप से दुनिया में छोटे हथियारों के उच्चतम संकेंद्रण के लिए जाने जाते हैं। इस घनता का फैलाव पूरे क्षेत्र में और बाहर महसूस किया जाता है। इस क्षेत्र में प्रमुख संघर्ष –अफगानिस्तान, पाकिस्तान, कश्मीर, पूर्वोत्तर भारत, मध्य भारत, श्रीलंका, बांग्लादेश, म्यांमार औरनेपाल ने महत्वपूर्ण अनुपात में छोटे हथियारों की आवश्यकता को प्रेरित किया है। म्यांमार और बांग्लादेश के रास्ते चीन और दक्षिण पूर्व एशिया से भी हथियारों की तस्करी की जातीहै। इस उद्द्येय के लिए समुद्री और भूमि दोनों मार्गों का उपयोग किया जाता है दिल चस्पबात यह है कि नशीले पदार्थों के तस्करों और हथियारों के तस्करों के बीच एक सहजीवी संबंध है।

साइबर युद्ध भी गंभीर खतरों में से एक बन गया है वास्तव में, इसे ''अगली पीढ़ी के खतरों'' में से एक माना जाता है। सांख्यिकीय रूप से, भारत हमेशा इंटरनेट पर दुर्भावनापूर्ण गतिविधि के शीर्ष पांच लक्ष्यों में से रहा है जो वायरस, ट्रोजन, मैलवयेर, पहचान की चोरी, है किंग, साइबर स्टकिंग, साइबर स्क्वाटिंग, स्पैमिंग, ईमेल–बमबारी, ईमेल–स्पूफिंग,साइबर मानहानि, वेब से लेकर हैं। विरूपण, डेटा डिडलिंग, वेब जैकिंग, सेवा हमले सेइनकार, कुंजी लगिंग और इटंरनेट समय की चोरी। क्षेत्र के देश जिन साइबर खतरो ं का सामना करते हैं, वे राज्य और गैर–राज्य दोनों अभिनेताओं से आते हैंः व्यक्तिगत आपराधिक हैकर्स से लेकर संगठित आपराधिक समूह, आतंकवादी नेटवर्क से लेकर उन्नत राष्ट्र राज्योंतक।

हाल पर्यावरण सुरक्षाः दक्षिण एशिया प्रमुख पर्यावरण–सवेंदनशील क्षेत्रों में से एक है। वनों का कम होना, हिमालय के ग्लेशियरों का तेजी से पिघलना और मौसम के बदलते मिजाज के कारण बे मौसम बारिश और सूखे की घटना आम बात हो गई है। पर्यावरण सुरक्षा की उपेक्षा नहीं की जा सकती क्योंकि इसका सघंर्षो से गहरा सबंध है और इसका मानव सुरक्षा पर प्रभाव पडत़ाहै। जैसा कि पर्यावरण और विकास पर विश्व आयोग ठीक ही बताता है,

''पर्यावरण तनाव किसी भी संघर्ष से जुड़े कार्य–कारण के वेब का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हो सकता है और कुछ मामलों में उत्प्रेरक हो सकता है।'' पानी, विशेष रूप से, क्षेत्र के ऊपरी और निचले तटवर्ती ऊर्जा सुरक्षाः ऊर्जा सुरक्षा को बिना किसी रुकावट और किफायती मूल्य पर ऊर्जा स्रोतों की निरंतर उपलब्धता के रूप में समझा जाता है। इस अर्थ में, दक्षिण एशिया तीव्र ऊर्जा सकंट का सामना कर रहा है जो तीन मूलभूत मुद्दों से उपजा हैः

(1) बढ़ती जनसंख्या और क्षेत्र के सभी देशों की विकासात्मक आकाक्षांएयं

(2) स्वच्छ और टिकाऊ ऊर्जा आपूर्ति तक पहुंच की कमीय और

(3) विशाल जल–ऊर्जा क्षमता और कोयले के बड़े भंडार के बावजूद ऊर्जा आपूर्ति के लिए बाहरी निर्भरता।

आने वाले वर्षों में यह चलन और बढ़ने वाला है। पश्चिम एशियाजैसे क्षेत्रों की अस्थिरता और तेल की कीमतों में उतार–चढ़ाव के कारण हाइड्रोकार्बन ऊर्जा आपूर्ति की बाहरी निर्भरता जोखिम भरा है। अपर्याप्त ऊर्जा सुरक्षा के परिणामस्वरूप, क्षेत्र की आर्थिक वृद्धि अवरुद्ध है।

निष्कर्षः

इस क्षेत्र के देशों ने द्विपक्षीय और बहुपक्षीय दोनों स्तरों पर व्यापक उपाय किए हैं। फिर भी, प्राथमिकता के संदर्भ में, ऐसा लगता है कि सरकारों ने गैर–पारंपरिक मुद्दों के बजाय पारंपरिक सुरक्षा मुद्दों को संबोधित करने पर अधिक ध्यान केंद्रित किया है।जटिलताओं की परतें कई कारकों की उपस्थिति से जुड़ जाती हैं जैसे भारत के ''बड़े भाई केरवैये'',भू–रणनीतिक, राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक–सांस्कृतिक– हर संदर्भ में देखा जाए तो दक्षिण एशिया सबसे अस्थिर और असुरक्षित क्षत्रों में से एक है। यह कई पारंपरिक औरगैर–पारंपरिक सुरक्षा चुनौतियों का सामना करता है जो एक दूसरे के पूरक और सुढ़ होते हैं। भारत और पाकिस्तान और भारत और चीन के बीच अंतर–राज्यीय संघर्ष इस क्षेत्र मेंपारपंरिक सुरक्षा खतरों पर हावी है। इन तीनों देशों के पास परमाणु हथियार होने से खतरेका स्तर बढ़ गया है। दक्षिण एशिया के देश अपनी सुरक्षा के लिए पांच प्रकार केगैर–पारंपरिक खतरो ं का सामना करते हैं, जैसे आतंकवाद, अंतरराष्ट्रीय सगं ठित अपराध, अवैध

प्रवास, पर्यावरण क्षरण और ऊर्जा की कमी। ये सभी चुनौतियाँ क्षेत्र के देशों की भेद्यता कोतीव्र करती जा रही हैं और इसने इस क्षेत्र को सबसे अधिक अस्थिर बना दिया है। जवाब में,क्षेत्र के देशों ने खुद को सुरक्षित करने के लिए विभिन्न एकतरफा, द्विपक्षीय और बहुपक्षीयउपायों का सहारा लिया है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

- दैनिक जागरण
- नवभारत टाइम्स
- दैनिकभास्कर
- यादव, आर0एस0, 'भारत की विदेश नीति', पीयर्सन पब्लिकेशन, 2013.
- रेणु, फणीश्वरनाथ, 'नेपाली क्रांति–कथा', राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, 1977
- विवेक एस0 राज, ''भारतीय विदेश नीति'', सिविल सर्विसेज़ टाइम्स प्रकाशन, नई दिल्ली, 2010.
- सिंह, पंकज के0, 'भारतीय विदेश नीति : 21वी ं सदी में निर्णायक मोड़ पर', प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, 2015

डॉ0 स्नेह लता
एसोसिएट प्रोफेसर
विपुला, शोधार्थी
आर– आई– एम– टी– विश्वविद्ययालय
गवर्नमेंट पीजी कॉलेज,
हिसार

25

हरियाणा का लोक रंगमंच 'सांग'परं परा उद्भव, विकास और परंपरा– एक अध्ययन।

डॉ0 हनीफ भाटी

सारांश

हरियाणवी सांग लोक रंगमंच का एक उत्तम रूप हैं। सांग हरियाणा की पुरुष गायन लोकविधा है। यह एक ललित कला है। इसके विभिन्न नाम प्रचलित रहे हैं जैसे सांग, स्वांग, सांगीत, सांगीतक आदि। प्रचलित नामावली में संगीतक सबसे प्राचीन नाम है। स्वांग शब्द का मूल अर्थ वेश भरना है। इस शब्द का प्रयोग भिन्न–भिन्न रूपों में होता परन्तु लोक रंगमंच में इसका संबंध किसी व्यक्ति द्वारा वेश भरने की प्रक्रिया से है।

हरियाणवी साँग प्राय खुले मैदानों में होता रहा है। मंच का निर्माण किन्ही शास्त्रीय नियमों पर आधारित नहीं होता है, 'यद्यपि सुलभ वस्तुओं के प्रयोग से बनाया जाता है। आमतौर पर लकड़ी के बने मजबूत तख्तों को मिलाकर मंच बनाया जाता है या फिर ईंटों के ऊपर लकड़ी के मजबूत तख्ते या किवाड़ रखकर बनाया जाता है, या लकड़ी से बनी घड़ौचियों के ऊपर दरवाजों के किवाड़ रखकर भी इसका मंच निर्माण होता रहा है। सांग का मंच प्रायरू वर्गाकार होता है।''1 इसकी एक भुजा 20 फुट के आस–पास होती व मंच की ऊँचाई लगभग चार फुट होती है। पात्र एक साथ ही मंच पर आकर बैठ जाते है और जिसकी बारी आती है उह उठकर अपनी भूमिका निभा देता है और वापस अपने स्थान पर आकर बैठ जाता है। साजिन्द्रे मंच के मध्य बैठते हैं उनके लिए भी कोई अलग स्थान नहीं होता। मण्डली के गुरु (सुधार) के लिए मंच के बीच में एक लकड़ी का मूढा या कुर्सी रखी होती हैं। सांग कलाकारों का कार्य क्षेत्र मंच के चारों कोने होते हैं।

हरियाणवी सांग प्रस्तुति की परंपरा पर गहराई से विचार किया जाये तो शास्त्रीय नाटको की भांति सांग में लगभग सारे तत्वों के अंश व्याप्त होते रहे हैं। जिस प्रकार शास्त्रीय नाटकों की शुरूआत पूर्व रंग से होती है उसी तरह हरियाणवी सांगों में धारुडा नाचने का प्रचलन रहा है। इसका मुख्य उद्देश्य लोगों को सांग आरम्भ होने की सूचना देना था, जो आजकल बिल्कुल लोप हो चुका है। 'यदि वर्तमान समय के सांगों की चर्चा की जाये तो आजकल दर्शक पूर्व सूचना पर अमुक स्थान पर पहुंचने शुरू हो जाते हैं। उसके बाद साजिन्दे व अन्य पत्र साज सिगार करके मंच पर पहुँचकर लोक वाद्यों को साधना शुरू कर देते हैं। इस प्रकार नगाड़े और ढोलक की करारी आवाज पर समीपवर्ती दर्शक पहुंच जाते है।''2 इसके बाद साजिन्दे व अन्य पात्र भेंट व गुरु स्मरण करते है। जिससे दर्शको को पता चलता है कि यह सांगी किस गुरु का चला या शिष्य है। इससे हो उसकी शोहरत वा कला कौशल का भी अनुमान लगता है। इस भेंट या स्तुति एवं गुरु गुणगान के उपरान्त एक भजन या गीत प्रभावशाली तरीके से गाया जाता है जिससे कि दर्शकगण उब महसूस नहीं करते। नाट्य शास्त्र के अनुसार नाटक में पूर्व रंग या नान्दी पाठ के बाद रंगद्वार नामक एक कार्य संपन्न होता. हैं। इस कार्य में नाटक के प्रारम्भ होने की सूचना दी जाती है। हरियाणवी सांगों में इसका अंश भी मिलता है। डॉ. इन्द्र शर्मा वारिज लिखते हैं 'सांग के प्रारम्भ होने की सूचना नगाड़ा बजाकर दी जाती है। इसके उपरान्त सभी पात्र मंच पर आकर बैठ जाते हैं। सांग के सभी पत्र कभी–कभी व्यक्तिशः एक एक करके कभी सामूहिक रूप से नृतं दिखलाते है। इस नृत का हम रंगद्वार में पार्वती और भूतों को प्रसन्न करने वाले नृर्त का पर्याय कह सकते हैं।''3 इस कार्य के पश्चात ही बेड़ेबन्द अपना व अपने गुरु का परिचय करवाते हैं और जनता जनार्दन से शांतिपूर्वक स्वांग देखने की भी अपील करता है।

सांग प्रस्तुति में कभी कभी मंच के एक कोने में किसी बर्तन में आग रखी जाती है। इस आग पर नगाइची कभी–कभी अपना नगाड़ा सकता था जिससे उसकी आवाज कड़क हो जती हैं। प्रस्तुति के दौरान मण्डली में हुक्के के लिए इससे आग भी ली जाती है। इस आग का सांग में किसी प्रकार का कोई प्रतीकात्मक महत्व नहीं है। रघुवीर सिंह मथाना लिखते है कि मांगे राम सांग चन्द्रहास में मंगलाचरण इन पंक्तियों द्वारा करते थेय

'ओमनाम सबसे बड़ा इससे बड़ा न कोए।
जे सुमिरन करे ओमका, शुद्ध आत्मा होए।।
खैर चाहवे जान की, उस मालिक का नाम ले। सच्चा उसी का नाम है, जो गिरते न थाम ले।।
मन के मते न चालिए, मन के मते अनेक ।
ले डोब मझधार में, बलि लगे न टेक।।'4

और इन पंक्तियों के बाद एक दोहा भी बोलते थेरू

"अरी भावनी वास कर, मेरे घट के परदे खोला रसना में वास करो, माई शुद्ध शब्द मुख बोल।।
के म सुमर लिए भगवान ।
श्री लख्मीचंद सतगुरु मिले न जिन तै पालिया ग्यान ।।'5

कथा का आरम्भ आमतौर पर वार्ता से शुरू किया जाता है। मण्डली का गुरू (सांग हम इसको बेडबंद कहते हैं) स्मरण व सरस्वती वंदना करता है। लगभग सभी सांगियों का मंगलाचरण भिन्न–भिन्न पदावलियों में होता है। मंगलाचरण उपरान्त बेड़बंद शान्तिपूर्वक सांग देखने की गुजारिश करता है।

सांग एक काव्य विधा है। किसी कथा विशेष को ग्रहण करके उसके मार्मिक स्थलों को काव्यबद्ध किया जाता है। सांग का विषय कोई भी हो सकता है। 'लोकनाट्यकार कथानक का कोई बन्धन नहीं मानता। वो उपयुक्त जंचने पर अपना कथानक पुराण से ले सकता है, इतिहास से ले सकता है। लोक कथा और कल्पना से भी काम चला सकता है।'5

सांग को कथावस्तु साधारण विषय पर नहीं होती। यह कोई असाधारण घटना या विशेष होती है। इन्द्र शर्मा बारिज लिखते हैं कि 'शास्त्रीय दृष्टि से इतिवृत के आधार या कथा के तीन स्वरूप है– प्रख्यात उपाय और मिश्रित । इनके आधार पर भी मांगों का वर्गीकरण किया जा सकता है। प्रख्यात वर्ग में पौराणिक व इतिहासिक कथाएं

आती है जैसे नल–दमयंती, मोरध्वज, राजा हरिश्चन्द्र, सत्यवान–सावित्री आदि। इसी प्रकार किसी फिल्मी कहानी के विषय पर भी सांग होते हैं। अर्थात यह भी प्रख्यात वर्ग में आते हैं। उत्पाद्य वर्ग में वे कथाएं होती हैं जो किसी सामाजिक समस्या पर आधारित होती है जैसे किसानों को पुकार चन्द्रा की चतुराई, भारत– चीन, गरीब हिन्दुस्तान आदि।'6 और मिश्रित वर्ग के विषय में लिखते है कि 'मिश्रित वर्ग में साहित्यिक विषयों पर आधारित कथाएं आती है। ये जन– 1– श्रुतियों पर आधारित होती है। इनकी लौकिक सांग भी कहते है। जैसे लैला–मजनू, हीर रांझा, लीलो–चमन, सोला जेठाणी जानी चोर, शाही लकड़हारा आदि। इनका दृष्टिकोण प्रायः श्रृंगारिक व सामाजिक होता है। इनमें वीरों की कथाएं, गाथा, दानियों की दानवीरता, प्रेम पाखंडियों को आडम्बर समावेश रहता है।'7

' मण्डली में एक कौटुम्बिक भावना होती है। कोई भी व्यक्ति किसी भी उत्तरदायित्व को निभा सकता है। जो अभी दासी हैं वह दूसरे ही पल रानी भी बन सकती है।'8 नायक–नायिका तथा अन्य पात्र किसी भी वर्ग के हो सकते है। परिवार तथा सामाजिक
दृष्टि से उनका चुनाव नहीं किया जाता। सांगों में दो–दो नकलियों की परंपरा भी रही है। 'मौखिक परम्परा के विदूषक जीवित अखबार का काम भी करता है।'9नृर्तक सांग

में विशेष भूमिका रखते है। ये नई उम्र के जवान लड़के होते है जो जनाना कपड़े व श्रृंगार करके औरत की भूमिका अदा करते हैं।
नाट्यशास्त्र में चार प्रकार के अभिनयों का वर्णन किया गया है आंगिक, वाचिक, आहार्य साचिक अभिनय हरियाणवी सांगों में आंगिक अभिनय के बारे में चर्चा की जाये तो

नाटकों की तरह शारीरिक अभिनय नही किया जाता। यद्यपि कुछ पात्रों के चरित्र के लिए थोड़ा बहुत आंगिक अभिनय किया जाता है। जैसे कि किसी लंगड़े व्यक्ति का अभिनय करना है तो वह अदाकार थोड़ा बहुत दांग को लचकाकर चलता है तो दर्शक समझ जाते है कि यह लंगड़ा व्यक्ति है। अर्थात् उसको साहित्यिक नाटकों की तरह लगातार लगाकर चलने की आवश्यकता नहीं होती व इन अदाकारों के पास कोई पूर्व प्रशिक्षण भी नहीं होता, जो इस प्रकार का अभिनय करे। ये तो सीधे साधे सरल कलाकार होते है। अपनी बात कहते है और चले जाते है। वाचिक अभिनय का प्रयोग अधिक किया जाता है। वाचिक अभिनय गद्यः (वार्ता) पद्य (रागनी) द्वारा किया जाता है। कई बार आधा पद्म व आधा गद्य का भी प्रयोग होता है। गद्य रूप में बाताएं होती हैं। ये वार्ताएं कहानी को आगे बढ़ाने और घटनाओं को जोड़ने का कार्य करती है। डॉ. शंकरलाल यादव लिखते है कि 'ये वाताएं बढ़ महत्वपूर्ण होती है। इनके कई लाभ होते है। (क) कथा को एक विशेष मोड़ देने में ये बड़ी महायक होती है। (ख) चरित्र नायक के प्रच्छन गुण जो गीत की पकड़ से बाहर पड़ गये होते हैं वार्ता द्वारा श्रोताओं तक पहुंच जाते है। कथा की रोचकता बनी रहती है, गीत प्रवाह = बहता श्रोता मण्डली वार्तातंतुओं को पकड़कर कथापट पर आ जाती है और ये वार्ताएं कथा श्रवण की भी बुभुक्षा जागृत कर देती हैं।'10 इन वार्ताओं को बेडबंद या सूत्रधार बोलता हैं। आहार्य अभिनय के अन्तर्गत साहित्यिक नाटकों में प्रयोग होने वाली चीजें जैसे चरित्र

के अनुकूल वेशभूषा, सेटयासिनेरी, आवश्यक वस्तुओं, मुख सज्जा आदि का किन्हीं नियमों पर इस्तेमाल नहीं होता। उस चरित्र के अनुरूप जो वस्तुएं आसानी से उपलब्ध होते हैं वहीं प्रयोग में लाई जाती है। सेंट या सीनरी तो बिल्कुल न के बराबर प्रयोग होता है क्योंकि इसका मंच भी इसकी अनुमति नहीं देता।

सात्त्विक अभिनय के अन्तर्गत आंतरिक भावों को दर्शाने के लिए चरित्र की सूक्ष्मताओं का ज्ञान नहीं होता और न ही चरित्र चित्रण की मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया से वाकिफ होते है। ये तो सीधे साधे लोग सरल व स्पष्ट भाषा या बोली का प्रयोग करके सरलता से समझ में
आने वाली सरल विधि का प्रयोग करते हैं। जिस प्रकार सांगियों ने सीधे साधे दर्शकों को ध्यान मेकांग खलना शुरू किया था तो उनका उद्देश्य केवल साधारण तरीके से मनोरंजन कथा 'हरियाणवी सांगों में संकेतो का बहुलता से प्रयोग होता है। इससे यह लाभ होता है कि अनेक बातें बिना शब्दों के जामा पहनने की अभिव्यक्ति हो जाती है। सत्य यह है कि यह तत्त्व हो सांग में स्वाभाविकता भर देता है।

नई उम्र के लड़के ही स्त्री वेश में नृत्तं करते रहे है। शास्त्रीय नृत्य से इनका कुछ संबंध नहीं होता है। हरियाणा सांग के नर्तक जी जान लगाकर वाद्ययंत्रों की लय पर तख्त तोड़ न करते है। नृर्त में आंखों के इशारे, ओठों की आकृतियां शामिल होती है। नई उम्र के जवान लड़के ही सांग में औरतों के कपड़े व श्रृंगार करके जनाना रूप धारण करते हैं। जुर्न करने वाले लड़के अपने पैरों में घुंघरू भी बाँधते है, जो नृर्त के दौरान एक संगीतात्मक माहौल पैदा करते है।
सांगों में वेशभूषा सामाजिक परिवेश के अनुकूल होती है। जैसे 'धोती कुर्ता, साफा, बंद गले का कोट, या बास्कट छड़ी, घघरी, लहंगा, साडी, जम्फर, सलवार, ओदनी, धोती की बांधने एवं छड़ी को धारण करने से ही अनेक चरित्रों का निर्माण करते हैं। धोती के अनुसार स्त्री पात्रों की चुनड़ी व ओढ़नी सांग में एक विशेष स्थान रखती है। चुनड़ी या आंदनी को भिन्न–भिन्न तरीकों से प्रयोग किया जाता है। स्त्री पात्र की ओढ़नी सांग में एक कलात्मक रूप से प्रयोग होती है। यह चुनड़ी बहुत सी बातों को बिना बोले स्पष्ट कर देती है। सांग पूरेसमाज कीदेह का अंग है। सांग लोक समाज का रंगमंच होता है। इसमें पूरा समाज योगदान देता है। कुछ वर्ष पहले सांग मण्डली जिस गांव में जाती थी उस गांव से वस्त्रों की व्यवस्था कर ली जाती थी और यदि गांव बड़ा होता था तो उस गांव में दो या तीन भागों में बांटकर प्रदर्शन किया जाता था तो वहां आसपास से भी वस्त्रों की व्यवस्था कर ली परन्तु आजकल अनेक कारणों से मण्डलियों के पास अपने वस्त्र होते हैं। सांग मैं स्त्रीपहराबे में कुछ दशक पूर्व आंगी, कमीज, घाघरा व सिर पर चुनड़ी होती थी परन्तु

आजकल सलवार कुर्ता, जम्फर व साड़ों का भी प्रयोग करते है। पहराये के अतिरिक्त सांग मे तलवार, हण्टर या कोड़ा, नकली पिस्तौल आदि का भी प्रयोग है। आभूषणों में साधारण आभूषण का प्रयोग करते हैं। सांगों का नकली स्वात्मक पहरावा पहनता है जिससे दर्शक देखते ही ठहाका लगा देते है। जैसे कई बार कती सिर पर जोकर वाली टोपी, ऊंचा पायजामा जिसका नाड़ा लटकाता हुआ टांकी लगा कई बार नकली मुछे भी लगाता है।

काजल, गेरू, खड़िया व सफेदा आदि प्राकृतिक साधनों से मुख का श्रृंगार किया जाता रहा है। सांग में शास्त्रीय नाटकों की भांति मुखसज्जा नहीं की जाती जिस प्रकार सांग की देवा ग्रामीण समाज के

लोगों के लिए की गई है उसी प्रकार इसके खेलने वाले भी इसी समाज से होते हैं और उनका उद्देश्य सिर्फ मनोरंजन करना होता है। अर्थात् वे सोधे साधे ग्रामीण कलाकार किसी प्रकार की औपचारिकताएं नहीं करते ये तो मंच पर आते हैं और अपना कार्य करके चले जाते हैं। 'सांग कलाकार स्त्री दिखने के लिए कभी–कभी नकली वक्षस्थल व नकली बालों का भी प्रयोग करते हैं। साधू के लिए कभी–कभी नकली दाढ़ी, धोती आदि प्रयोग होता है।

सांग में किसी प्रकार की औपचारिकताएं नहीं होती, उसी प्रकार सांग प्रदर्शन में शास्त्रीय नाटकों की तरह भव्य सैट या सीनरी व आधुनिक लाइटों का प्रयोग देश काल एवं वातावरण के लिए नहीं किया जात। सांग में गद्य (वार्ता) व पद्य (रागनी) के द्वारा दृश्य निर्माण किया जाता है। सांग में वेशभूषा भी साधारण रूप से प्रयोग की जाती है। अर्थात् उस काल के मुताबिक वेशभूषा प्रयोग नहीं की जाती। निष्कर्ष रूप में सांगी द्वारा दिए गए कथा परिचय रागनी द्वारा काल की जानकारी दी जाती हैं। कभी–कभी सांग के पात्र भी वार्ता या संवाद दृश्य निर्माण का कार्य करते हैं और यदि सांग के मंच की कल्पना की जाये तो इसके साधरण मंच पर देश–काल या वातावरण न तो स्थापित करने की परम्परा रही है और न प्रस्तुत किया जा सकता है।

सांग में संगीत तत्त्व की अहम भूमिका अदा करता है। संगीत के द्वारा ही दर्शक रातभर बैठकर मनोरंजन करते हैं। 'सांग में मुख्यतः नगाड़ा, सारंगी, ढोलक, हरमोनियम, ताल, अलगोजा बैजू, घड़ा (घड़वा), चिमटा, बोन, व झांज आदि वाद्ययंत्र प्रयुक्त होते पंडित दीपचन्द ने परंपरागत रूढ़ियों को तोड़कर वाद्य यंत्रों में उनके समय एक या दो सारंगी और एक ढोलक होती थी। उन्होंने नक्कारे या नगाड़े को पहली बार सांग में प्रयोग किया था। नगाड़े को करारी चोट दर्शकों को आने पर मजबूर कर देती है। इन यंत्रों से निकलने वाली ध्वनियां दर्शकों को सराबोर कर देती हैं और दर्शक सांप की तरह टूलने (झूमने जगते हैं। वास्तव में ये धुनें सांग की आत्मा के समान होती है। परन्तु आजकल फिल्मी धुनों का प्रयोग होने लगा है।

सांग एक गीत–नाट्य विधा भी है। इसमें संवादों को रागिनी के द्वारा अदा किया जाता हैं। रागिनी की बनावट में छंद व कली का प्रयोग होता है। 'रागनी का जवाब रागिनी में दो कली का जवाब दो कली में पंक्ति का जवाब पंक्ति में दिया जाता है। दो कलिया रागिनी में पहली दो कली एक पात्र गाता है तो अंतिम दो कली दूसरा कली का जवाब कली में (देन के लिए एक ही रागिनी की समविषयक कलियों क्रमशः दोनों पात्रों द्वारा बारी–बारी से गाई जाती है। रागिनी मिलयां या दो चश्मी में, रागिनी का प्रत्येक वाक्य पात्रों द्वारा काटा जाता है। ' रागिनी की बनावट में तीन घटक होते हैं दृ 1. टेक 2. कली 3. बोड़। 'टेक का स्थान रागिनी के शुरूआत में होता है। टेक केवल बोल से ही हो सकती है और दो बाल की थी। वास्तव में यह रागिनी का आधार होता है। कली रागिनी का वह भाग हैरू जी टेक के बाद आता है। कली दो अढाई तीन–चार व छह बोल की हो सकती हैं। कली में विचार को विस्तार से वर्णन किया जाता है। तोड़ का अर्थ है तोड़ना या अलग करना । पाणिनी रचनाकार एक कली में जो विचार प्रस्तुत करना चाहता है तो उसके आशय को तोड़ के द्वारा कली को समाप्त करता है। आजकल की रागनियों की अंतिम कली में रचनाकार अपने नाम की छाप लगाते हैं परन्तु सांग के अंत में किसी रागनी में लगाई जाती है।

सांग परम्परा में रौशनी के लिए प्राचीन काल से मशाले ही रही हैरू लकड़ी के डण्ड दर कपड़ा लपेटकर या मिट्टी से निर्मित व उसके ऊपर अरण्डी या अन्य कोई तेल डालकर बनाई जाती थी। इसके बाद गैसे के हाण्डे (लैम्पों को मंच के चारों कोनों पर लकड़ों की बल्लों के द्वारा लगाया जाता था। उसके बाद विद्युत की उपलब्धता पर बिजली के बड़े बल्बों का प्रयोग हो रहा है, लेकिन वर्तमान समय में कई सांगों की प्रस्तुति प्रसिनियम मंच पर आधुनिक इसे भी रौशनी की जाती है।

हरियाणवी सांगों में विदूषक तत्व पर विचार करे तो प्राचीन सांग या स्वांगों में दो–दो नकली (विदूषक) हुआ करते थे जिनका मुख्य कार्य हास्य उत्पन्न करना होता था। इनके विभिन्न रूप में होते थे। जैसे यह राजा का मंत्री सेट या साहूकार का मुंशी भी हो सकता था। वर्तमान समय के सांगों में यह एक ही होता है। इसका स्थान महत्त्वपूर्ण होता है और दर्शकों को भी यह प्रिय होता है। वह समय की नजाकत को देखकर परिहास करने में बिल्कुल भी नहीं चूकता। इसकी कला कौशल उसके परिधान एवं उसकी दबंग तेज आवाज में होता है, जो एक कैवों को तरह चलती है। यह सिर्फ हास्य–विनोद ही उत्पन्न नहीं करता वरन् सामयिक अच्छी बुरी सामाजिक परिस्थिति पर भी कटाक्ष करता है। हरियाणवी सांग की समाप्ति पर संस्कृत नाटकों की तरह भरत वाक्य जैसा रूप भी मिलता है। आमतौर पर सांगी नगर खेड़ की जय या फिर गौ माता की जय के साथ किया जाता है परन्तु कई सांगी विभिन्न पदावलियों का प्रवर करते थे 'जैस टांकड़ी जिला गुड़गांव निवासी मास्टर भीमराज आजाद रंगाल द्वारा तैयार संग महकदे जाती चार के अन्त में भ रत वाक्य याउपसंहारयासांगकासमापनइस प्रकार किया करते थे–

पढ़ने वाला और गुणी रख लो हमारी लाज सांग सम्पूरण हो गया कहे दास भीमराज
ईश्वर की भक्ति करो मिटयां सारे भया
ओमराज कई प्रेम से बोलों छत्र को जय'11

संदर्भ सूची

1.शोधार्थी की निजी जानकारी अनुसार
2.वही, पृ .66
3.इन्द्र शर्मा चारिन लोक नाट्य स्वांग ६
4.रघुबीर सिंह मध्थामा हरियाणा लोक नाट्य परंपरा एवं कवि शिरोमणि मंगिराम,
5.वही, पृ.191
6. विजयेन्द्र सिंह (डॉ.) हरियाणा के लोगों में सौन्दर्य निरूपण, 72
7. वही, पृ .55
8.शंकरलाल यादव (डॉ.) हरियाणा प्रदेश का सोक साहित्य, पू. 408
9.साप्ताहिकःहिन्दुस्तान 34 मार्च,1976. पू.27
10.हरियाणा प्रदेश का लोक साहित्य, पृ. 388
11. राजेंद संगी पुत्र श्री जिया लाल सांगी ने बताया।

डॉ0 हनीफ भाटी
पी–एचडी.
रंगमंच और दूरदर्शन विभाग पंजाबी यूनिवर्सिटी
Mob-9466654091]8168792682
Email : haneefbhatti786@gmail-com

शिवमहापुराण गत मोक्ष

डॉ. नवीन गहलावत

सारांश

मोक्ष शब्द की निष्पत्ति 'मुच' धातु सन् प्रत्यय करने पर होती है। भारतीय दर्शन मूल्यों का दर्शन है। मनुष्य जिन ध्येयों को सम्मुख रख प्रवृत होता है वे ही मूल्य होते हैं और इन्हें शास्त्रीय भाषा में 'पुरुषार्थ' कहते हैं। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष– ये चार पुरुषार्थ हैं। मोक्ष अन्तिम पुरुषार्थ है पर अन्य पुरुषार्थों से भिन्न अर्थ में। मोक्ष की प्राप्ति का अर्थ किसी बाह्य स्थिति को प्राप्त करना नहीं है वरन् आत्मस्वरूप का दर्शन या ज्ञान 'मोक्ष' है। जैन आचार्यों में तीर्थकर शब्द का अर्थ भी इसी परिपेक्ष्य में उचित है। संसार रूपी नदी के ऊपर उस पार जाने के लिये मार्ग पर निर्माणकर्ता तीर्थकर हैं। इस प्रकार विचार – शास्त्र रूपी कल्पतरू का फल मोक्ष है। मोक्ष प्राप्ति का अर्थ है कि मानव नहीं रह जाता, ब्रह्मा हो जाता है और इसी जीवन में परमावस्था को प्राप्त कर लेता है। यदा सर्वे विमुच्यन्ते कामा हास्य हृदि स्थिता तदा मत्यौडमृतो भवत्यत्र ब्रह्म समश्नुते।[1] आत्मा किस प्रकार मुक्ति प्राप्त कर सके यही प्रत्येक आस्तिक भारतीय दर्शन एवं वाड्य का उद्देश्य है। शिवमहापुराण में भी तत्व – ज्ञान का अनुसन्धान इसीलिये किया गया है कि उसके द्वारा जीवन के लक्ष्य की उपलब्धि हो सके। मुक्ति का वर्णन विभिन्न दर्शनों एवं मतों में भिन्न–भिन्न प्रकार से किया गया है। मुक्ति एवं मुक्ति प्राप्ति के साधनों का वर्णन यहाँ के दर्शनों का सर्वस्व रहा है। शिवमहापुराण के अनुसार 'आत्मस्वरूप' का जो अतिशय आनन्द है उसी को मुक्ति कहते है और वह क्रिया जप, तप, ज्ञान ध्यान धर्मो में स्थित है।[2] शिवमहापुराण में द्वैत एवं अद्वैत विविध दर्शनों विवरण प्राप्त होता है कैलास संहिता में प्रधान रूप से अद्वैत दर्शन का वर्णन किया गया है।[3] किन्तु वायवीय संहिता में द्वैत दर्शन की ही प्रबलता दृष्टिगोचर होती है। कैलास संहिता में वर्णित अद्वैतदर्शन अपनी मुक्ति विषयक अनुभूति में औपनिषदिक विचारधारा से अत्यधिक प्रभावित है। यहाँ कुछ महावाक्यों को उद्धृत किया गया है, जिनसे आत्मा एवं परमात्मा पशुपति में अद्वैत विषयक सिद्धान्त का समर्थन होता है :– अहं ब्रह्मास्मि, तत्त्वमसि, अयमात्मा ब्रह्म।[4] उन महावाक्यों से यही समर्थित होता है कि आत्मा और पति शिव में कुछ भी अंतर नहीं है। शक्तिपात (पशुपति का अनुग्रह) के अनन्तर, दीक्षा के बाद प्रारब्ध कर्म की परिसमाप्ति होने पर साधक पांच भौतिक शरीर का परित्याग कर परमात्मा – शिव में विलीन हो पूर्ण शिव ही हो जाता है।[5] यहीं पर मुक्ति की अवस्था है। इस संसार में परोक्ष अपरोक्ष दो प्रकार का ज्ञान होता है। परोक्ष अस्थिर और अपरोक्ष निश्चल है। हेतु और उपरेशयुक्त वाक्य को परोक्ष कहते हैं: अपरोक्ष (प्रत्यक्ष) ज्ञान श्रेष्ठ अनुष्ठान से होता है। अपरोक्ष ज्ञान के बिना मोक्ष नहीं होता है।[6] अद्वैत दर्शन के अनुसार मुक्ति दो प्रकार की होती है पर एवं अपर।[7] पर मुक्ति पूर्ण पशुपति शिव ही हो जाना है और इस अवस्था को पहुँचने पर आत्मा कभी पुनः इस जगत् में जन्म नहीं ग्रहण करता है।[8] अपर मुक्ति की अवस्था में आत्मा का अभ्युदय होता है। वह (आत्मा) पशुपति के गाणपत्य को प्राप्त कर शिव के समान शरीर को धारण करता है। ऐसी आस्था में उसके मृगचर्म, टंक, त्रिशूल, त्रिनेत्र, चन्द्रशकल, जटा में गंगा का प्रवाह, अविहत गति वाले विमान, ये सभी शिव के समान होते है। वरदान देने का अधिकार भी उसे प्राप्त रहता है।[9] वायवीय संहिता में प्रायः द्वैतदर्शन का प्रतिपादन हुआ है, जिसमें यही प्रतीत होता है कि मुक्त होने पर आत्मब्रह्म (पशुपति) शिव में विलीन नहीं होता है। किन्तु पशुपति शिव के समान हो जाता है उसे शिव साधर्म्य की उपलब्धि होती है। इस शिव साधर्म्य की प्राप्ति से प्राणी जन्म एवं पुनर्जन्म के चक्र से छुटकारा प्राप्त कर लेता है। उसके पुण्य पाप सभी विनष्ट हो जाते हैं वह निरंजन हो जाता है संसार के कारण मल – माया आदि पाश भी समाप्त हो जाते है। आत्मा संसार से पूर्ण रूप से मुक्ति प्राप्त कर लेता है।[10] द्वैत दर्शन के अनुसार यहीं पर मुक्ति है। द्वैत दर्शन के अनुसार अपर मुक्ति में आत्मा विद्येश्वर (शुद्ध के विद्या के निवासी आत्मा) आदि के पद को प्राप्त कर लेता है। वह (आत्मा) वहाँ बहुत से लोगो को भोग कर एक बार पुनः जन्म धारण करता है और पुनः शिव की कृपा प्राप्त कर शिव साधर्म्य प्राप्त करता है और वह वहाँ से पुनः कभी नहीं लौटता।[11] इस प्रकार द्वैतवादी दर्शन के अनुसार विद्येश्वर पद की प्राप्ति अपर मोक्ष और शिव साधर्म्य पर मोक्ष है अपर मोक्ष का प्राप्त कर्ता एक बार पुनः जन्म ग्रहण करता है किन्तु पर मोक्ष भागी व्यक्ति संसार के चक्र से पूर्णरूप से मुक्ति प्राप्त कर लेता है। इस शिव साधर्म्य में आत्मा के उपकरण वाहन आदि सभी पशुपति शिव के समान हो जाते हैं। इस वस्था को पहुँचा आत्म अनग्रह को छोड़ कर सब कुछ करने में समर्थ होता है अनुग्रह करना उक मात्र पशुपतिशिव का कार्य है।[12] मुण्डकोपनिषद के ऋषि की यह उद्घोषणा है कि दो प्रकार की ज्ञातव्य विधायें हैः– परा और अपरा।[13] (सभी वेद–वेदांग अपरा विद्या की श्रेणी में आते हैं और परा विद्या मोक्ष विद्या है जो कि मोक्ष का साक्षात्कार करा देती है।[14] वास्तविकता तो यह है कि अपरा विद्या परा विद्या का पूर्व सोपान है। ठीक इसी प्रकार कठोपनिषद् में प्राणियों के जीवन यापन हेतु दो मार्ग दिखाये गए है–प्रेयोमार्ग और श्रोयोमार्ग। राग–द्वेष के कारण मनुष्य आपाततः रमणीय वस्तुओं की ओर आकृष्ट हो कर संसार में प्रवृत होता है और प्रपंच में और अधिक बंधता चला जाता है। इसके विपरीत श्रोयो मार्ग परम कल्याण का

मार्ग है।[15] इसमें विषयोन्मुखी इन्द्रियों को बलात् विषयों के अन्तर्मुखी बनना पड़ता है इसके लिए आवश्यक है आत्मसंगम और चित–शुद्धि। मार्ग कठिन है पर फल भी परामोत्कृष्ट है। 16. इसके अतिरिक्त शिवमहा–पुराण में मुक्ति का एक और वर्गीकरण किया गया है। इस वर्गीकरण के अनुसार मुक्ति के पांच भेद माने गये हैं। सारूप्यमुक्ति, सालोक्य मुक्ति, सान्निध्य मुक्ति, सायुज मुक्ति और कैवल्य मुक्ति।[17] 1. **सालोका मुक्तिः** जब परमात्मा शिव की कृपा से कर्मजनित शरीर अपने वंश में हो जाता है, तब व्यक्ति परमात्म– शिव के लोक में निवास का सौभाग्य प्राप्त करता है इसी को सालोक्य मुक्ति कहते हैं।[18]2. **सान्निध्य मुक्तिः** जब तन्मात्राएं वश में हो जाती है, तब जीव परमात्म–शिव का सान्निध्य प्राप्त कर ले यही सान्निध्य मुक्ति है। इस अवस्था को पहुंचे हुए जीव के आयुध और क्रिया आदि सब कुछ परमात्मा शिव के समान हो जाते हैं।[19] **सारूप्य अथवा सृष्टि मुक्तिः–** परमात्म शिव के महाप्रसाद के प्राप्त होने पर बुद्धि भी वश में हो जाती है। बुद्धि प्रकृति का कार्य है। बुद्धि का वश में होना सृष्टि मुक्ति कही गई है।[20] 4. **सायुज्य तृप्तिः** जब भगवान् परमात्म से शिव के अनुग्रह से प्रकृति भी वश में हो जाती है उस समय परमात्मा शिव का मानसिक ऐश्वर्य बिना प्रयत्न के ही प्राप्त हो जाता है। सर्वज्ञाता और वृटित आदि जो परमात्म शिव के ऐश्वर्य है उन्हें प्राप्त कर मुक्त पुरुष अपनी आत्मा मे विराजमान होता है यही सायुज्य मुक्ति है।[21] 5. **कैवल्य युक्तिः–** यह मुक्ति असमान्य मुक्ति है। साधारण मनुष्यों के लिये यह दुर्लभ है।[22] शिवज्ञान के उदित होने घर अर्थात आत्मा परमात्म शिव ही है। ऐसा ज्ञान होने पर ब्रह्मा परमात्म शिव की प्राप्ति होती है अर्थात् जीव पर्मात्म शिव ही हो जाता है।[23] अर्थात परमात्मा शिव ही हो जात है यही कैवल्य मुक्ति है। द्वैतवादी शैवदर्शन मुक्ति को द्विधा मानते है – पर एवं– अपर शिव पद की प्राप्ति मुख्य एवं परमोक्ष है और निद्येश्वर शुद्धविजेश्वर आदि की प्राप्ति हो अपर मोक्ष है उसे ही गौण मोस की कहते है रत्नत्रय के अनुसार शिव पद की प्राप्ति ही शिव साम्य है।[24] अद्वैवादी शैवदर्शन के अनुसार शिव अनुसार भी सिद्धि (मोक्ष) दो प्रकार का होता है पर एवं अपर । परसिद्धि को मोक्ष कहते हैं। अपर सिद्धि अभ्युदय रूप अर्थात् उच्च पद की प्राप्ति रूप है।[25] इनके यहां अपने रूप को पहचान लेना ही मोक्ष कहा गया है।[26] इस प्रकार स्वरूप का पहचानना आत्मा की शक्ति का विकास है। इस अवस्था में आत्मा परमात्म शिव ही हो जाता है।[27] अपर मोक्ष जिसे प्रत्यभिज्ञा मे अभ्युदय रूप मानते हैं महेश्वरतत्वादि के लोकों की उपलब्धि स्वरूप है।[28] शिव महापुराण में अद्वैत दृष्टिकोण के अनुसार वर्णित मुक्ति विषयक धारणा प्रत्यभिज्ञा दर्शन अर्थात् अद्वैत दर्शन से साम्य रखती है। दोनों ही पर मुक्ति के विषय में समान दृष्टि कोण रखते हैं। अपर मोक्ष के बारे में भी वे दोनों समदृष्टि है। यहाँ अन्तर यही है कि शिवमहापुराण अपनी पौराणिक भाषा में जिसे शिव के गाणपत्य पद से अभिहित करता है। उसे ही प्रत्यभिज्ञा 'मन्त्र' महेश्वर आदि प्रमातृवर्ग के पद के रूप में चित्रित करता है किन्तु दोनों का विचार एक समान ही है।

संदर्भ सूची

1.कठोपनिषद् – 2/3/14

2.मुक्तिरात्मस्वरूमेनस्वात्मारात्वमेवाहि
क्रियातपोजपज्ञानध्यानधर्मेषुसु स्थितः शिवमहापुराण – 1/17/99

3.अद्वैतः शैववादी थंडद्वैत न सहते क्वचित्।
अद्वैतं च नश्वरं ब्रह्माद्वैतं परमनश्वरम् ।शिवमहापुराण – 6/17/3

4.शिव महापुराण – कैलास संहिता 19 वां अध्याय 6¢14¢28

5.शिवमहापुराण 6/16/77, 6/21/8

6.शितमहापुराण – 7/1/32/99-100

7.प्रभुश्चान्यस्तु जीवनां परावर विमुक्तिदः शिव महापुराण – 6/14/28

8.शिव महापुराण 6/21/31

9.स्वसाम्यं च वपुर्दते गाणपत्ये भिषिचय च।
अनुगृहणादि सर्वेशः शंकरः सर्वनायकः।।
मृगांक त्रिशूलग्ग्रयवरदान विभूषितम् ।
त्रिनेत्र चन्द्रशकलं गंगोल्लासिजटा धरम्।। '' शिव महापुराण – 6/21/22, 23

10. शिव महापुराण – 7/1/32/22, 7/2/10/24, 7/2/28/29, 7/2/5/37, 7/1/32/22

11. शिवमहापुराण – 7/2/28/27-29

12. पंचमं मुक्ति हेतु पैनित्यं मयि च सुस्चिरम् । शिवमहापुराण– 1/10/5 अनुग्रहाख्यं केनापि लब्धुंनैव हि शक्यते।। शिवमहापुराण – 1/10/11

13. द्वेविद्ये वेदितव्यों इति ह स्मयद् ब्रह्मविदो वर्दान्त, परा चौवापरा च । मुण्डकोपनिषद् 1/1/6

14. यथा तदक्षरमधिगम्यते। मुण्डकोपनिषद् – 1/1/5

15. श्रेयश्च प्रेयश्च मनुष्यमेतस्तौ संपरीत्य विविनक्ति धीरः । श्रोयो हि धीरोऽभिप्रयसो वृवीले प्रेयोमन्दोयोग सेमार वृणीते । कठोपनिषद– 1/2/2

16. उत्तिष्ठत जास्तत प्राप्य वरान् निबोधत। कठोपनिषद् – 3/14

17. सारूप्या चौन सालोक्या सान्निध्या च तथा परा । सायुज्या च चतुर्थी 1 शिवमहापुराण – 4/41/3
कैवल्याख्या च पंचमी सर्वचा दुर्लना नृणाम् '' शिवमहापुराण – 1/41/7

18. प्रसादात्परमेशस्य कर्मदो यदावशः ।
तदा वै शिवलोके तु वासः सालोक्यमुच्यते।। शिवमहापुराण – 1/18/18-19

19. शिव महापुराण – 1/18/19-20
20. शिवमहापुराण – 1/18/21-23
21. पुनर्महाप्रसादेन प्रकृतिर्वशमेष्यति । शिवस्य मानसैश्वर्यं तदाऽयत्न भविष्यति। त्तायुज्यमिति प्राहुर्वेदागमपरायणः ’’ शिवमहापुराण – 1/18/21-3
22. कैवल्याख्या पंचमी च सर्वया दुर्लभा नृणाम् । शिवमहापुराण – 4/41/7
23. शिवमहापुराण 4/41/14-16
24. मोक्षतु द्विविधः । परो परश्च। शिवपदप्राप्तिरूपों मुख्या परो मोक्षः।
विद्येश्वरादि पदप्राप्तिरेव चापरो मोक्षो यमेव गौण उच्चते। सर्वदर्शनसंग्रहः, शैवदर्शन
मोक्षः शिव साम्यं सदाशिवादिपर प्राप्तिश्च।।
रत्नत्रय श्लोक 8 पर अधोर शिवाचार्य टीका।।
25. परसिद्धिमोक्षः उपरसिद्धि भ्युद्यः सर्वदर्शन संग्रह, प्रत्यभिज्ञादर्शन।
26. मोक्ष हि नाम नैवान्यः स्वरूपप्रधनं हि तत् । अभिनवगुप्त तन्त्रालोक, पृ० 19, 2
27. ‘स्वशक्ति विकासे तु शिव एव । प्रत्यभिज्ञा दर्शन 10
28. श्री सदाशिव भट् घिष्ठतो मन्त्र महेश्वराख्यः प्रमातृवर्ग – 1
ईश्वरभट्टारिका घिष्ठितो मन्त्रेश्वर वर्गः आदि। प्रत्यभिज्ञादर्शन 3/1

डॉ0 नवीन गहलावत
Assistant Professor in Sanskrit
Govt. College,
Rewari

27

मन्नू भण्डारी कृत महाभोज उपन्यास में चित्रित दलितों की दयनीय स्थिति

डॉ0 प्रवीण कुमार वर्मा

सारांश

ती मन्नूजी का पदार्पण पहले कहानी लेखिका के रूप में हुआ। सशक्त कहानियों के द्वारा वे विशेष आदर्श लेखिका के रूप में स्थापित हुई। कहानियों के साथ उपन्यास और नाटक साहित्य रूपों को भी अपनाया। एक इंच मुस्कान, आप का बंटी, स्वामी, कलवा और महाभोज जैसी सशक्त कृतियों के माध्यम उपन्यास विधा की प्रमुख हस्ताक्षर समझी जाने लगी। उनकी प्रतिभा और सर्जन उत्तम प्रमाण सन् 1979 में प्रकाशित महाभोज उपन्यास के द्वारा मिलता है। इस रचना ने उपन्यास धारा की सोच और मोड को ही बदल दिया। इस उपन्यास में पहली बार पढ़ने को मिला कि एक दलित (खेतिहर मजदूर द्वारा गाँव की शोषित जनता को जगाने के प्रयत्न पर समाज के सूत्रधारों ने उसे सदा के लिए सुला दिया। ऐसी वर्तमान समाज की दोगली राजनीति और उसके पिटुओं और चमचों की नीति रीतियों को हूबहू चित्रित किया है। इस कृति के माध्यम से मन्नू जी ने यह स्पष्ट कर दिया कि देश की समाज व्यवस्था में जाति भेद मानों खून में बसे हुए कोढ़ की भाँति है।

महाभोज भंडारी का एक सौ सत्तर पृष्ठों में विभाजित उपन्यास है। इसमें सरहा मन्नू गाँव की राजनीतिक कथा है, जहाँ आज भी जमींदार, शासक, प्रशासन सभी मिलकर किस प्रकार खेतिहरों का शोषण कर रहे हैं इतना ही नहीं उन अत्याचारों, शोषण, उत्पीड़न के विरुद्ध आवाज उठाने का भी उन्हें हक नहीं है, मगर आवाज उठाता है तो उन्हें बुरी तरह कुचल दिया जाता है। कभी तो पूरे वर्ग की झोंपड़ियों को भी आग लगा दी जाती है। महाभोजन भले ही राजनीतिक श्रेणी का उपन्यास रहा हो किन्तु उसे राजनीतिक वातावरणयुक्त सामाजिक उपन्यास ही कहा जायेगा। इस उपन्यास की शुरूआत में ही कथा लेखिका के उद्‌गार हैं– दुर्निवार सम्मोहन भरी उस खतरनाक लपकती अग्नि लीक के लिए जो बिसू और बिंद्रा तक ही नहीं रूकी रहती।

इसे संदह, सकट, चिंता या चेतावनी भी समझा जा सकता है। यहां सर्वहारा के शोषक वर्ग पर प्रहार है। लोकतंत्र में सही अर्थों में लोकधर्मी संस्कृति की रचना हमारा पहला दायित्व है। सर्वहारा वर्ग का संघर्ष अपनी आशा आकांक्षाओं आवश्यकता पूर्ति का है।

हिन्दी उपन्यास साहित्य में आजादी से पूर्व और आजादी के बाद की दलितों की स्थिति का चित्र अंकित हुआ है। आजादी के छः दशक पूरे होने के बाद की उनकी स्थिति और जीवन व्यवहार परिवर्तन नहीं दिखता है। दलितों को तो आजादी पूर्व भी अंग्रेजों की गुलामी सहन करनी पड़ी थी। अब स्वतंत्र भारत में जमींदारों, शोषकों, मालिक, काशीकारों या प्रशासन की गुलामी झेलनी पड़ रही हैं। आज भले नस्ल भेद दूर हुआ हो पर उनके प्रति रखी जाने वाली मानसिकता के बंधन मानो और कड़े हो गए हैं। उनके प्रति सौतेला व्यवहार हो रहा है। अस्पृश्यता एवं शोषण से मुक्ति दिलाने का काम तो मानो आज भी प्रशस्त नहीं हुआ है। उनके स्वाभिमान को जगाना आज भी संभव नहीं हुआ है।

सहानुभूति हो या स्वानुभूति दलित साहित्य के केन्द्र वर्ग की समस्याएँ हैं। दलित साहित्यकार हो या गैर दलित साहित्य लेखक हो कोई भी दलित जनधर्मी रचनाओं को खारिज हीं कर सकता। ऐसी ही एक सशक्त कृति है मन्नू भंडारी की सन् 1979 में रची गई महाभोज। 2008 तक इसकी चार आवृतियां छप चुकी हैं। महाभोज उपन्यास के प्रारंभ में सेसर की लाश का उल्लेख कर कहा गया है कि लावारिस लाश नहीं थी क्योंकि बिसेसर माँ–बाप जीवित थे। महीने भर पहले गाँव की सरहद के पास वाले हरिजन टोलें की कुछ झोंपड़ियों के साथ साथ उसमें रहने वाले भी जलकर राख हो गए। लोग दौड़कर थाने पहुँचे पर थानेदार साहब ने उस दिन छुट्टी ली थी और उपस्थित दो लोगों ने यह कहकर बात टाल दी कि थानेदार साहब के आने पर ही जाँच होगी।

बिसू या बिसेसर सरोहा गाँव के किसान हीरा का बेटा था। पिता ने मेहनत मजदूरी करके उसे शहर में भेजकर बी०ए० तक पढ़ाया वापस वह सरोहा लौट आया था और गाँव के लोगों को अध्ययन का महत्त्व समझाकर अपने अधिकारों के लिए संघर्ष कर अपने हक की लड़ाई लड़ने के लिए तैयार कर रहा था। वह खुद पिछड़ी जातियों के लड़के–लड़कियों को पढ़ाने जाता है। हरिजनों को शिक्षित कर उनको अपना धर्म समझाने के कर्म में जुटा था। इन सब प्रवृतियों से गाँव के जमींदारों, सामन्तों एवं नेताओं तथा प्रशासन के लोग सख्त नाराज थे। इसी कारण वह गांव के जमींदारों एवं साहूकारों का दुश्मन बन गया है। पुलिस साहूकारों और जमींदारों के पक्ष में ही बिसू पर नक्सली का आरोप लगाकर किसानों और मजदूरों को भटकाने का आरोप लगाकर पुलिस द्वारा उसे बन्दी बनाकर जेल में बन्द कर दिया जाता है। दो महीनों तक तो पता ही नहीं चल सका कि बिसू कहाँ है। उसके माता–पिता उसकी याद में कितने ही दिनों तक खाना–पीना छोड़ कलपते रहे। इस प्रकार बिसू चार साल जेल में रहा। जेल में उसके साथ अमानुषी अत्याचार होता रहा। चार साल में उसे अनेकों बार पीटा गया। जिसके कारण उसके शरीर पर जगह जगह जख्म पड़ गए थे। चार साल के बाद जब उसे छोड़ा गया तो दो महीनों तक चारपाई से उठ न पाया। फिर वह न कहीं जाता न कुछ बोलता घंटों तक घुटनों के बीच सिर छिपाए बैठा रहता था। ऐसे तो पूरे महाभोज उपन्यास में तीस से अधिक पात्र शामिल है– बिसू या बिसेसर, दा साहिब, सुकुल बाबू, त्रिलोचन सिंह बिंद्रा या बिंदेश्वरी प्रसाद आदि । पर सारे उपन्यास में बिसेसर और बिन्दा की संवेदना ही पाठक के मन को छू जाती है। छू सरोह गाँव में हरिजनों की बस्ती में आग लगा दी जाती है और जब इस आगजनी की घटना के प्रमाण बिसू या बिसेसर एकत्र कर रहा है वह घटना के पीछे जमींदार जोरावर सिंह का हाथ रहने की बात जान जाता है तब बिससेर की भी हत्या कर दी जाती है। सिद्धांत एवं आदर्श की बातें करने वाले गाँव के नेताओं का रवैया देखिए। सरोह गाँव में उपचुनाव होने वाला है हर दल बिसू की मौत का लाभ उठाना

चाहता है। चुनाव में खड़े उस इलाके के नेता •सुकुल बाबू अपने भाषण में हो रहे अत्याचारों का जिक्र इन शब्दों में करते हैं– क्या दोष था इन हरिजनों का ? यही न कि सरकारी रेट पर मजदूरी माँग रहे थे। गुनाह था यह? पर शायद था तभी तो वे जिन्दा जला दिए गए और जिन्होंने जलाया उन पर कोई उँगली उठाने वाला तक नहीं बेचारे बिसु ने ऊँगली उठाने की कोशिश की तो हमेशा के लिए चुप कर दिया गया उसे। बिसेसर की हत्या के बाद उसके गाँव आकर वे नेता जब हरिजनों के प्रति सहानुभूति जताकर सुविधाएं उपलब्ध करा देने का आश्वासन देते हैं तब बिसेसर के दोस्त बिन्द्रा को बहुत गुस्सा आता है वह सच्चाई को बिना किसी लिहाज के सामने दहाड़ उठता है– तीस साल से आप लोगों की बातें ही सुनते समझते आ रहे हैं। क्या हुआ आज तक ? पेट भरने के लिए अन्न नहीं। आपकी बातें ...... खाली बातें जैसे सुकुल बाबू वैसे आप।

शरीर पर जगह जगह जख्म पड़ गए थे। चार साल के बाद जब उसे छोड़ा गया तो दो महीनों तक चारपाई से उठ न पाया। फिर वह न कहीं जाता न कुछ बोलता घंटों तक घुटनों के बीच सिर छिपाए बैठा रहता था। ऐसे तो पूरे महाभोज उपन्यास में तीस से अधिक पात्र शामिल है– बिसू या बिसेसर, दा साहिब, सुकुल बाबू, त्रिलोचन सिंह बिंद्रा या बिंदेश्वरी प्रसाद आदि । पर सारे उपन्यास में बिसेसर और बिन्दा की संवेदना ही पाठक के मन को छू जाती है। छू सरोह गाँव में हरिजनों की बस्ती में आग लगा दी जाती है और जब इस आगजनी की घटना के प्रमाण बिसू या बिसेसर एकत्र कर रहा है वह घटना के पीछे जमींदार जोरावर सिंह का हाथ रहने की बात जान जाता है तब बिससेर की भी हत्या कर दी जाती है। सिद्धांत एवं आदर्श की बातें करने वाले गाँव के नेताओं का रवैया देखिए। सरोह गाँव में उपचुनाव होने वाला है हर दल बिसू की मौत का लाभ उठाना चाहता है। चुनाव में खड़े उस इलाके के नेता •सुकुल बाबू अपने भाषण में हो रहे अत्याचारों का जिक्र इन शब्दों में करते हैं– क्या दोष था इन हरिजनों का ? यही न कि सरकारी रेट पर मजदूरी माँग रहे थे। गुनाह था यह? पर शायद था तभी तो वे जिन्दा जला दिए गए और जिन्होंने जलाया उन पर कोई उँगली उठाने वाला तक नहीं बेचारे बिसु ने ऊँगली उठाने की कोशिश की तो हमेशा के लिए चुप कर दिया गया उसे। बिसेसर की हत्या के बाद उसके गाँव आकर वे नेता जब हरिजनों के प्रति सहानुभूति जताकर सुविधाएं उपलब्ध करा देने का आश्वासन देते हैं तब बिसेसर के दोस्त बिन्द्रा को बहुत गुस्सा आता है वह सच्चाई को बिना किसी लिहाज के सामने दहाड़ उठता है– तीस साल से आप लोगों की बातें ही सुनते समझते आ रहे हैं। क्या हुआ आज तक ? पेट भरने के लिए अन्न नहीं। आपकी बातें ...... खाली बातें जैसे सुकुल बाबू वैसे आप।

बिन्द्रा एक साहसी युवक है उसके रूप में दलित समाज में आज एक पढ़ा लिखा युवा वर्ग उभर रहा है जिसे परिणाम की परवाह नहीं। अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध उठ खड़ा होना ही वह जानता है। सत्य का पक्ष बड़े बवाल ढंग से पेश करते हुए बिंद्रा पुलिस से कहता है कि बिसेसर की हत्या की गई है। जो जिन्दगी को इतना प्यार करता है अपनी ही नहीं, हर , किसी की जिंदगी को ? नहीं साहब नहीं नहीं उसे मारा गया है, पर किसने मारा? क्यों मारा? जिंदा रहने का मतलब समझते हैं न आप ? लोग भूल गये हैं जिंदा रहने का मतलब इसलिए मैं पूछ रहा हूँ।

यही तो दलित वर्ग में आयी चेतना का परिणाम है। उसकी वर्गीय चेतना अन्य समाज को भी प्रभावित कर रही है। आज दलितों को अपने पारंपरिक व्यवसायों और वातावरण से छुटकारा जरूर मिला किंतु अन्याय और सामाजिक कुव्यवस्था का शिकार तो वह आज भी है। संविधान में दलितों के उत्थान हेतु दिए गए प्रावधान से उन्हें शिक्षा प्राप्ति के अवसर मिले जिनके कारण उनके मानस में अपूर्व परिवर्तन आया है जिसका सटीक चित्रण महाभोज में हुआ है।` एक भीतर तक हिला देने वाला सदमा । समझ लीजिए सर हम लोगों के जिंदा रहने पर प्रश्नचिन्ह लगाकर वह मर गया।

अन्याय और विरोध में खड़े होने का साहस कर के बिसेसर विद्रोह करते हुए अपनी जान की बाजी लगा देता है, पर हार नहीं मानता। महाभोज उपन्यास में पुलिस के सामने ब्यान देता हुआ शोध छात्र महेश शर्मा बिसू या बिसेसर के बारे में बताता है कि बहुत सदमा लगा उसकी मौत से एक भीतर तक हिला देने वाला सदमा । समझ लीजिए सर हम लोगों के जिंदा रहने पर प्रश्नचिन्ह लगाकर वह मर गया।

उपन्यास के अंत में बिसेसर एस०पी० साहब को चिल्लाकर चीखता हुआ कह देता है कि मार डाला, मार डाला तुमने बिसू को, मार डालो मुझे भी मार डालो लेकिन देखना कि बिसू की इच्छा को कोई नहीं मार सकता।

निष्कर्षः

इस प्रकार महाभोज उपन्यास में वर्तमान समाज का वास्तविक और विश्वसनीय चित्र हमारे समक्ष रखा है। आज की दोगली राजनीति का घिनौना रूप दर्शाया गया है। ऐसे धूर्त, स्वार्थी नेताओं के द्वारा जनतंत्र के नाम पर सत्ता को हथियाने के लिए कैसे कैसे हथकण्डे अपनाये जाते हैं। उसकी पोल खोल कर रख दी है।

संदर्भ सूचीः

1. महाभोज – मन्नू भंडारी

2. मधुमती (अप्रैल–मई 2010), संपादक रू उमराव सालोदिया

3. भाक्तिकाव्य का समाजदर्शन– डॉ० प्रेमशंकर 4. दलित अस्मिता और हिन्दी उपन्यास– डॉ० पुरूषोत्तम सत्यप्रेमी

डॉ. प्रवीण कुमार वर्मा

सह–प्रोफेसर (हिन्दी – विभाग गोस्वामी गणेशदत

सनातन धर्म महाविद्यालय, पलवल (हरियाणा)

भारत में दल–बदल विरोधी कानून 1985 : एक मूल्यांकन

डॉ. ममता शर्मा, युधिष्ठर सिंह सोलंकी

सारांश

बीज शब्द

दल–बदल, दल–बदल विरोधी कानून 1985, दल–बदल विरोधी कानून की कमियाँ।

शोध सारांश

1967 में संपन्न चतुर्थ आम चुनावों के पश्चात 'दल–बदल' भारतीय राजनीति में एक गंभीर समस्या के रूप में उभर कर सामने आई। अतः इस समस्या के समाधान हेतु, वर्ष 1985 में राजीव गांधी सरकार, भारतीय संविधान में 52वें संविधान संशोधन अधिनियम, 1985 के माध्यम से 'दल–बदल' विरोधी कानून लेकर आई। परंतु शीघ्र ही, कानून के क्रियान्वयन में अनेक खामियाँ यथा – पीठासीन अधिकारियों द्वारा किए गए निर्णयों में विलंब व निष्पक्षता का अभाव, व्यक्तिगत व सामूहिक दल–बदल में भेदभाव, कानून में प्रयुक्त विभिन्न शब्दों (जैसे–राजनीतिक दल, मूल राजनीतिक दल, स्वेच्छा से राजनीतिक दल की सदस्यता का त्याग आदि) का अस्पष्ट अर्थ, प्रकाश में आने लगीं, जिसके कारण कानून उतना प्रभावी नहीं रहा है, जितना कि इसके निर्माताओं को आशा थी।

अतः प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य दल–बदल विरोधी कानून, 1985 के क्रियान्वयन में आने वाली खामियों को प्रकाश में लाना और उन्हें दूर करने के कुछ उपाय सुझाना है, जिससे कि कानून और अधिक प्रभावी बन सके।

परिचय

वर्तमान युग प्रतिनिधि लोकतंत्र का युग है। इस व्यवस्था में जनता अपने प्रतिनिधियों के माध्यम से शासन में अप्रत्यक्ष रूप से भागीदारी करती है। जनता अपने प्रतिनिधियों को संबंधित राजनीतिक दल की विचारधारा, कार्यक्रम व नीतियों के आधार पर चुनती है। परंतु जब चुने हुए जन प्रतिनिधि धन व पद की लिप्सा में दल–परिवर्तन कर सरकार बनाने या गिराने में भूमिका निभाते हैं, तब उनका यह कृत्य न केवल उस जनता के साथ विश्वासघात है, अपितु किसी भी स्वस्थ लोकतंत्र के लिए एक घातक प्रवृत्ति है। यद्यपि स्वतंत्रता से पूर्व व स्वतंत्रता के पश्चात भी भारत में दल–बदल की घटनाएँ देखने को मिलती हैं। परन्तु 1967 में संपन्न चतुर्थ आम चुनावों के पश्चात, भारतीय राजनीति में दल–बदल की असैद्धांतिक व अनैतिक प्रक्रिया ने गंभीर समस्या का रूप धारण कर लिया। चुनाव पश्चात, हरियाणा, उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश में दल–बदल के कारण कांग्रेस सरकारों का पतन हो गया।[1] वर्ष 1983 में चुनाव सुधारों पर अपने एक भाषण में मुख्य चुनाव आयुक्त ने बताया कि 1967 से 1983 तक कुल मिलाकर 2700 दल–बदल के मामले रिकॉर्ड किये गये जिसमें से 212 दल–बदलू विधायक मंत्री बने और 15 मुख्यमंत्री।[2] अतः दल–बदल की इस असैद्धांतिक व अनैतिक प्रक्रिया पर रोक लगाने हेतु, तत्कालीन राजीव गांधी सरकार ने 24 जनवरी, 1985 को लोकसभा में 52वां संविधान संशोधन विधेयक पेश किया, जो कि बहस के उपरांत लोकसभा द्वारा 30 जनवरी, 1985 व राज्य सभा द्वारा 31 जनवरी 1985 को पास किया गया। 15 फरवरी, 1985 को इसे राष्ट्रपति की अनुमति मिल गई और सरकारी गजट में प्रकाशित होने के पश्चात 1 मार्च, 1985 को दल–बदल विरोधी कानून लागू हो गया। इस अधिनयम के द्वारा संविधान के अनुच्छेद 101, 102, 190 और 191 में संशोधन किया गया और संविधान में एक नई 10वीं अनुसूची जोड़ी गई। इस अनुसूची के प्रावधानों को कार्यान्वित करने हेतु, 10वीं अनुसूची के पैरा 8 के तहत लोकसभा अध्यक्ष द्वारा, लोकसभा सदस्य (दल–परिवर्तन के आधार पर निरर्हता) नियम 1985 बनाये, जो कि दिनांक 18 मार्च, 1985 से लागू हैं। इसी प्रकार के नियम विभिन्न राज्यों की विधान सभा अध्यक्षों द्वारा भी बनाए गए हैं। उल्लेखनीय है कि, दल–बदल को रोकने हेतु पूर्व में भी 32वां और 48वां संविधान संशोधन विधेयक क्रमशः 1973 व 1978 में पेश किये गए थे। परन्तु विभिन्न कारणों से पास होने में असफल रहे।

दसवीं अनुसूची के प्रावधान

1. **दल–परिवर्तन के आधार पर निरर्हता** – दसवीं अनुसूची के पैरा 1 में राजनीतिक दलों के सदस्य, निर्दलीय सदस्य व नाम–निर्देशित सदस्यों की सदस्यता निरर्हता के संबंध में भिन्न–भिन्न प्रावधान हैं –

(क) **राजनीतिक दलों के सदस्यों के संबंध में** – विधायिका के किसी सदन का सदस्य जो कि किसी राजनीतिक दल के टिकट पर चुना गया है, अपनी सदस्यता से निरर्ह होगा –

(i) यदि वह संबंधित राजनीतिक दल की सदस्यता को स्वेच्छा से त्याग देता है। अथवा

(ii) सदन में अपने राजनीतिक दल के निर्देश के विपरीत मत देता है या मतदान से अनुपस्थित रहता है। परंतु उसकी सदस्यता बनी रहेगी, यदि संबंधित राजनीतिक दल उसे उक्त कृत्यों के लिए 15 दिन के अंदर माफ कर देता है।

(ख) **निर्दलीय सदस्यों के संबंध में** – चुनाव जीतने के पश्चात् यदि कोई निर्दलीय सदस्य किसी राजनीतिक दल की सदस्यता ग्रहण करता है, तब वह सदन की सदस्यता से निरर्ह हो जाएगा।

(ग) **नाम–निर्देशित सदस्यों के संबंध में** – नाम–निर्देशित सदस्य सदन की सदस्यता ग्रहण करने की तारीख से 6 माह पश्चात यदि किसी राजनीतिक दल की सदस्यता ग्रहण करता है, तब वह अपनी सदस्यता से निरर्ह हो जाएगा। इसका अभिप्राय यह हुआ कि वह 6 माह की अवधि के अंदर किसी राजनीतिक दल का सदस्य बन सकता है।[3]

दसवीं अनुसूची के अपवाद

(1) **दल विभाजन की स्थिति में** – यदि विधान दल के कम से कम एक तिहाई सदस्य मूल राजनीतिक दल में दल विभाजन के परिणामस्वरूप अलग हो गए हैं, तब उन्हें दल–परिवर्तन के आधार पर सदन की सदस्यता से निरर्ह नहीं माना जाएगा।[4]

(2) **दल विलय की स्थिति में** – यदि विधान दल के कम से कम दो–तिहाई सदस्य किसी दल में अपना विलय कर लेते हैं, तब उन्हें दल–बदल के आधार पर सदन की सदस्यता से निरर्ह नहीं माना जाएगा।

(3) **पीठासीन अधिकारियों के संबंध में** – यदि कोई सदस्य सदन का पीठासीन अधिकारी निर्वाचित होने के कारण स्वेच्छा से अपने राजनीतिक दल की सदस्यता छोड़ देता है और कार्यकाल की समाप्ति पर पुनः अपने राजनीतिक दल की सदस्यता ग्रहण कर लेता है, तब उसे दल–बदल के आधार पर निरर्ह नहीं माना जाएगा।

दल–बदल विरोधी, कानून की कमियाँ

(1) **व्यक्तिगत व सामूहिक दल बदल में भेदभाव** – इस कानून की सबसे अधिक आलोचना इस आधार पर की जाती है कि, यह व्यक्तिगत स्तर पर होने वाले दल–बदल को तो कानूनी रूप से प्रतिबंधित करता है। जबकि 10वीं' अनुसूची का पैरा 3 (विधान–दल के एक–तिहाई सदस्यों द्वारा दल–विभाजन की स्थिति में) और पैरा 4 (विधान दल के दो–तिहाई सदस्यों द्वारा दल–विलय की स्थिति में) सामूहिक दल–बदल को कानूनी मान्यता देता है। प्रश्न यह है कि एक ही अपराध के लिए दोहरा मापदण्ड क्यों?

(2) **निर्दलीय व नाम–निर्देशित सदस्यों में भेदभाव** – 10वीं अनुसूची के पैरा 2(2) के अनुसार यदि कोई निर्दलीय सदस्य निर्वाचन के पश्चात किसी राजनीतिक दल का सदस्य बन जाता है, तो वह अपनी सदस्यता से निरर्ह माना जाएगा। जबकि नाम–निर्देशित सदस्य अपने स्थान ग्रहण करने की तिथि से 6 माह की अवधि के अंदर किसी राजनीतिक दल का सदस्य बन जाता है, तब भी उसकी सदस्यता बनी रहेगी। निर्दलीय व नाम–निर्देशित सदस्यों के बीच यह भेदभाव न केवल अतार्किक है, बल्कि संविधान के अनुच्छेद 14 'कानून के समक्ष समानता' का भी उल्लंघन है।

(3) **निर्दलीय सदस्यों की गतिविधियों को नियंत्रित करने में असक्षम** – यह कानून सदन के अंदर निर्दलीय सदस्यों की गतिविधियों को नियंत्रित करने में सक्षम नहीं हैं। कानून के अनुसार निर्दलीय सदस्य की सदस्यता का अंत किसी राजनीतिक दल की सदस्यता ग्रहण करने के पश्चात ही हो सकता है। जबकि वास्तविकता यह है कि कई अवसरों पर सरकार बनाने या गिराने में इनकी महत्वपूर्ण भूमिका रही है। उदाहरण के लिए राजस्थान में 1967 में संपन्न तीसरे आम चुनावों में कांग्रेस को 176 में से 88 स्थान प्राप्त हुए। जबकि सरकार के गठन के लिए 89 सदस्यों की आवश्यकता थी। इन परिस्थितियों में कांग्रेस ने एक निर्दलीय को कांग्रेस में शामिल कर सरकार का गठन किया।[5]

(4) **अध्यक्ष/सभापति की विवादास्पद भूमिका** – कानून के तहत किसी सदस्य की निरर्हता का निर्धारण करने की शक्ति संबंधित सदन के अध्यक्ष/सभापति को इस आशा के साथ सौंपी गई थी, कि वे इस शक्ति का निष्पक्ष प्रयोग करेंगे। परंतु व्यवहार में सदस्यों की निरर्हता तय करने में अध्यक्ष/सभापति की भूमिका काफी विवादस्पद रही है। इस प्रकार अध्यक्षों द्वारा मामलों के निस्तारण में न केवल अनावश्यक देरी की गई, अपितु जिस प्रकार से कानून व तथ्यों की अवहेलना की गई। उससे दल–बदल विरोधी कानून मखौल बनकर रह गया। गोवा में अध्यक्ष बारबोसा[6] द्वारा शासन की सत्ता हथियाने के उद्देश्य से स्वयं का दल–बदल करना व अन्य सदस्यों से दल–बदल करवाने की घटना सर्वविदित है। बाद में, उन्हें भी दल–बदलू घोषित करके अनर्ह घोषित किया गया।

(5) **निष्कासन व असम्बद्धता का मामला** – यदि कोई राजनीतिक दल किसी सदस्य को अपने अधिकार क्षेत्र से निष्कासित कर देता है। तब ऐसी स्थिति में उस सदस्य को विधानमंडल के संबंधित दल का सदस्य माना जाए अथवा नहीं। कानून में इस बात का कोई प्रावधान नहीं है और न ही इस बात का कि किसी सदस्य को किसी राजनीतिक दल से असंबंद्ध घोषित किया जा सकता है। जैसा कि अनेक अध्यक्षों द्वारा किया गया है। इस प्रकार असंबद्ध सदस्य दल–बदल कानून की दृष्टि से तो निरर्ह घोषित नहीं होंगे। परंतु सदन में किस दल के सदस्य के रूप में रहेंगे यह स्पष्ट नहीं है।[7]

(6) **राजनीतिक दल शब्द की अस्पष्टता** – कानून में राजनीतिक दल शब्द का उल्लेख कई बार हुआ है। परंतु कानून में उसकी कोई परिभाषा नहीं दी गई है। राजनीतिक दल व मूल राजनीतिक दल के बीच भेद भी स्पष्ट नहीं है। परिणामस्वरूप अध्यक्ष/सभापति को निर्णय देने में कठिनाई का सामना करना पड़ता है। उदाहरण के लिए, असम विधानसभा में 6 निर्दलीय विधायकों के द्वारा निर्वाचन के पश्चात 'असम गण परिषद' में शामिल होने पर 10वीं अनुसूची के पैरा 2(2) के अनुसार उन्हें सदन की सदस्यता से निरर्ह करने की याचिका दाखिल की गई। परंतु दिनाँक 1 अप्रैल, 1986 को अध्यक्ष द्वारा दिए गए निर्णय में याचिका को इस आधार पर खारिज कर दिया गया कि 'असम गण परिषद' निर्वाचन आयोग द्वारा मान्यता प्राप्त न होने के कारण राजनीतिक दल की श्रेणी में नहीं आती। राजनीतिक दल वही हो सकता है जिसे निर्वाचन आयोग मान्यता दे।[8]

(7) **स्वेच्छा से राजनीतिक दल की सदस्यता का त्याग** – 10वीं अनुसूची के पैरा 2(1)(क) के अनुसार, किसी राजनीतिक दल का सदस्य, सदन की सदस्यता से उस समय निरर्ह हो जाएगा। जबकि वह स्वेच्छा से अपने राजनीतिक दल की सदस्यता छोड़ देता है। परंतु प्रश्न यह है कि 'स्वेच्छा से सदस्यता का त्याग' शब्दों क्या अर्थ है? वस्तुतः इन शब्दों के विभिन्न अध्यक्षों द्वारा विभिन्न अर्थ निकाले गए हैं।

(8) **जन प्रतिनिधियों की विचार व अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का मामला** – इस कानून के कारण जन प्रतिनिधियों की विचार एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर अंकुश लग गया है। परिणामस्वरूप विधायिकाओं में संवाद की संस्कृति का ह्रास हुआ है और दलीय अनुशासन के नाम पर इसने 'दलीय राज' की संस्कृति को बढ़ावा दिया है। वस्तुतः यह कानून असहमति व दल–परिवर्तन के बीच अंतर को स्पष्ट नहीं करता है।**सुझाव**

(1) यद्यपि 91वें संविधान संशोधन, अधिनियम 2003 के तहत एक–तिहाई सदस्यों द्वारा दल में विभाजन के आधार पर दल–परिवर्तन के प्रावधान को समाप्त कर दिया गया है। परंतु अभी भी 10वीं अनुसूची का पैरा 4 दो–तिहाई सदस्यों द्वारा किसी दल में विलय के आधार पर 'सामूहिक दल–बदल' को बढ़ावा देता है। अतः इस प्रावधान को समाप्त करने की आवश्यकता है।

(2) चूंकि नाम–निर्देशित सदस्यों का मनोनयन सत्ताधारी दल द्वारा

किया जाता है, जिसका शासक दल द्वारा दुरुपयोग भी किया जा सकता है। अतः नाम–निर्देशित सदस्यों की निष्पक्ष भूमिका सुनिश्चित करने हेतु, उनके सदन की सदस्यता ग्रहण करने की तिथि से 6 महीने के अंदर किसी राजनीतिक दल का सदस्य बनने के प्रावधान को समाप्त किया जाए।

(3) अध्यक्ष / सभापति सत्ताधारी दल के सदस्य होते हैं। वे अपने पद पर सत्ताधारी दल की कृपा तक रह सकते हैं। अतः ऐसे में उनसे निष्पक्ष निर्णय की संभावना बहुत कम हो जाती है। अतः दल–बदल के आधार पर सदस्यों की निरर्हता तय करने का अधिकार किसी स्वतंत्र न्यायाधिकरण को दिया जाए अथवा चुनाव सुधार पर गठित 'दिनेश गोस्वामी समिति'[8] और विधि आयोग की 170वीं और 255वीं[9] रिपोर्ट के अनुसार सदस्यों की अयोग्यता निर्धारण का अधिकार चुनाव आयोग की सलाह पर राष्ट्रपति या राज्यपाल को दिया जाए।

(4) सदस्यों की निरर्हता तय करने की कोई तार्किक समय सीमा निर्धारित की जाए। प्रथम दृष्टतया किसी सदस्य को दल–बदल का दोषी पाए जाने पर अंतिम निर्णय आने तक उसकी सदस्यता निलंबित की जाए और उसके वेतन, भत्ते व अन्य सुविधाओं को रोक दिया जाए।

(5) किसी राजनीतिक दल के सदस्य द्वारा 'स्वेच्छा से दल की सदस्यता छोड़ना' शब्दों का बहुत ही व्यापक व भ्रामक अर्थ है। अतः इन शब्दों की निश्चित व्याख्या की जाए।

(6) पार्टी व्हिप की व्यवस्था के कारण विधायिकाओं में रचनात्मक बहस का ह्रास हुआ है। अतः पार्टी व्हिप की व्यवस्था को विश्वास / अविश्वास प्रस्ताव, धन विधेयक या जहाँ सरकार के स्थायित्व पर संकट हो, तक सीमित किया जाए। इसके अतिरिक्त सदस्य किसी भी प्रस्ताव पर अपनी पक्ष / विपक्ष में राय देने के लिए स्वतंत्र होंगे।

निष्कर्ष

निश्चय ही दल–बदल विरोधी कानून ने दल–बदल की असैद्धांतिक प्रक्रिया पर कुठाराघात और हमारे लोकतंत्र को मजबूत करने का कार्य किया है। परंतु किसी भी कानून की कमियों का पता तभी लगता है जबकि उसे वास्तविक धरातल पर लागू किया जाता है। बीते 37 वर्षों में दल–बदल विरोधी कानून के क्रियान्वयन को लेकर समय–समय पर विभिन्न पीठासीन अधिकारियों के निर्णय और सर्वोच्च व उच्च न्यायालयों के निर्णयों से यह स्पष्ट हो जाता है कि कानून में उपरोक्त वर्णित कमियों का निदान अति–आवश्यक है। पूर्व में भी, 91वें संविधान संशोधन अधिनियम 2003, के माध्यम से दल–बदल विरोधी कानून की कमियों को दूर करने का प्रयास किया गया है। एक बार पुनः वह समय आ गया है, जब हमारे नीति–निर्माता दल–बदल विरोधी कानून की समीक्षा करें और इसमें वांछित संशोधन करें, जिससे कि कानून का और अधिक प्रभावी क्रियान्वयन सुनिश्चित किया जा सके।

संदर्भ

1. कोठारी, रजनी (1972), भारत में राजनीति, (दूसरा संस्करण) ओरियंट ब्लैकस्वॉन, हैदराबाद, पृ. 127
2. गोस्वामी, भालचन्द्र, (1995) दल–बदल विरोधी कानून 1985 : दशा और दिशा, पंचशील प्रकाशन, जयपुर, पृ. 32
3. भारतीय संविधान 10वीं अनुसूची
4. 91वें संविधान संशोधन अधिनियम, 2003 द्वारा निरस्त
5. गोस्वामी, भालचन्द्र (1995) दल–बदल विरोधी कानून 1985 : दशा और दिशा, पंचशील प्रकाशन, जयपुर, पृ. 22
6. वही, पृ. 80
7. वही, पृ. 69
8. वही, पृ. 282
9. गोस्वामी, दिनेश (मई, 1990) चुनाव सुधारों पर रिपोर्ट, पृ. 60
10. विधि आयोग (मई, 1999) चुनाव सुधारों पर 170वीं रिपोर्ट, पृ. 84–89

डॉ. ममता शर्मा
एसोसिएट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग,
मेरठ कॉलिज, मेरठ
युधिष्ठर सिंह सोलंकी
शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग,
मेरठ कॉलिज, मेरठ

29

कबीर की मानवतावादी चेतना

पुनीत शर्मा

सारांश

कबीर के काव्य में मानवतावादी चेतना की समीक्षा करने से पूर्व हमें यह जान लेना आवश्यक है कि मानवतावादी चेतना या मानवातवादी विचारधारा किसे कहते हैं ?'मानवता' शब्द पशुता का प्रतिवाद है–अर्थात् पशुता जहाँ मिट जाती है, नष्ट हो जाती है, वहाँ से मानवता का उदय होता है। मानवोचित गुणों के कारण ही दया, करूणा, प्रेम, उदारता, ममता, सहनशीलता, सेवा, समर्पण, क्षमा आदि उदात्त गुणों के कारण ही मानव की मानवता सभी के लिए मंगलकारी होती है। अपने इन्हीं गुणों के कारण ही मानव सृष्टि का श्रेष्ठतम प्राणी माना जाता है। कबीरदास जी कहते हैं कि समभाव एवं उदार दृष्टिकोण ही सच्ची मानवता का आधार है। कबीरदास जी मध्ययुग के सर्वाधिक जागरूक संत, समाजद्रष्टा और अप्रतिम मानवतावादी थे।

मुख्य–शब्दः मानवतावाद, प्रेम भावना, लोकचेतना।

कबीरदास जी मनुष्य जन्म को श्रेष्ठतम जन्म स्वीकार करते हुए कहते हैं–

''मानुस जन्म दुर्लभ अहै होइ न दूजो बार।''

कबीरदास कहते हैं कि निश्चय ही मानव जन्म बहुत दुर्लभ है। सच्चे अर्थो में मानव वही है जो सबको समभाव, समदृष्टि से देखे और सबके साथ समान व्यवहार करे। जो धर्म की दृष्टि से या जातिगत भेदभाव न करे। सबको ईश्वर की संतान समझकर उन्हें आदर प्रदान करे।

समभाव एवं उदार दृष्टिकोण ही सच्ची मानवता का आधार है। मानव–मानव के बीच एकता की भावना और सभी धर्मो के प्रति सहिष्णुता एवं आदर का भाव ही 'मानवतावाद' की सही पहचान है। एक सच्चा मानवतावादी व्यक्ति कभी भी धार्मिक, सांस्कृतिक व साम्प्रदायिक, जातिगत आदि किसी भी प्रकार का भेद–भाव नहीं करता।

कबीर के काव्य के अध्ययन से ज्ञात हो जाता है कि कबीर मूलरूप से मानवतावादी संत एवं कवि थे। वे सभी प्राणियां में उस एक परमतत्त्व के दर्शन करते थे। वे सबको उसी दिव्य ज्योति से उत्पन्न समझते थे। कबीरदास जी ने अपनी वाणी से मानव–मानव में एकता स्थापित करने का प्रयास किया।

कबीर किसी संप्रदाय और वर्ग विशेष को लक्षित नहीं करते, उनकी स्वानुभूति व्यापक है, उनके विचार सत्य के निकट हैं। कबीरदास जी ने अपनी वाणी के माध्यम से जहाँ एक ओर समाज में व्याप्त विकृतियों पर आघात किया, वही दूसरी ओर समाज के प्रति, गुरू के प्रति, मानवता के प्रति संदेश भी दिया है।

मानवतावाद के अन्तर्गत प्रेम, सेवाभाव, दया, क्षमा, सहिष्णुता तथा विनम्रता, परोपकार, समता, संतोष, अहिंसा, पावनता, सत्य, इन्द्रिय निग्रह ये सब आते हैं। कबीर के साहित्य में इन सभी को देखा जा सकता है।

कबीर के साहित्य में मानवतावादी दृष्टि के साथ–साथ समतावादी दृष्टि भी देखने को मिलती है। कबीरदास जी कहते हैं कि संसार में सभी मनुष्य एक समान हैं, उनमें कोई भी उच्च या निम्न नहीं है। सभी मनुष्यों में एक ही आत्मा का निवास है।

कबीरदास जी समाज में फैले ऊँच–नीच के भेदभाव का विरोध करते हैं। वह कहते हैं कि समाज में समता होनी चाहिए। समता ऐसी होनी चाहिए, जिस प्रकार जल व मछली की है, जैसे यदि मछली तनिक भी जल से विलग होती है तो शीघ्र ही अपने प्राण त्याग देती है। कबीर कहते हैं–

''पलट ऐसे प्रति करू जल और मीन समान
जहाँ तनिके जल बीछुड़ै क्षेडि हेतु है प्राण।।''

कबीर के काव्य में प्रेम का सम्बन्ध विशेष रूप से समर्पण भावना और आस्था से है। कबीर ने प्रेम रहित व्यक्ति के जीवन को व्यर्थ और असफल माना है। कबीरदास प्रेमभाव को प्रकट करते हुए कहते हैं कि–

''सौवौं तो सुपने मिलै, जागौ तो मन माहिं।
लोचन राधा सुधि हरी, बिछुरत कबहूँ नाहिं।।''

कबीर जी कहते हैं कि प्रेम भावना के अंतर्गत मनुष्य में आत्मसमर्पण, श्रद्धा, नम्रता, आस्था तथा सदाचार आदि उदात्त भावनाएँ होनी चाहिए। इस संदर्भ में आत्मसमर्पण भाव से कबीर कहते हैं कि–

''लाली मेरे लाल की, जित देखौ तित लाल।
लाली देखन मैं गई, मैं भी हो गई लाल।।''

कबीर ने समाज में व्याप्त अनेक धर्म और धर्म के आधार पर बंटे हुए लोगों तथा उनकी जातियों पर भी व्यंग्य किया है। उनकी दृष्टि में जन्म से कोई व्यक्ति ज्ञानी नहीं कहला सकता है, बल्कि वही व्यक्ति ज्ञानी है, जिसने प्रेम के महत्त्व को स्वीकार कर लिया है। इसीलिए कबीर जी कहते हैं–

''पोथी पढ़ि पढ़ि जग मुआ, पण्डित भया न कोय।
ढाई अक्षर प्रेम का, पढ़े सो पण्डित होय।।''

कबीरदास जी के समय में जाति–पाति के आधार पर बहुत भेदभाव किया जाता था। उन्होंनें जाति–पाति का घोर विरोध किया और कहा–

''जाति–पाति पूछैं नहिं कोई।
हरि को भजै सो हरि का होई।।''

कबीरदास जी कहते हैं कि सत्य से बड़ा कोई धर्म नहीं है। सत्य के आधार पर साधारण मनुष्य भी उच्चता को ग्रहण कर सकता

है। इसके विपरीत यदि कोई व्यक्ति झूठ का सहारा लेता है तो उसका शरीर अनेक बुराईयों से युक्त हो जाता है। अतः जो मनुष्य झूठ बोलता है वह पापी है।

सत्य के महत्त्व को बताते हुए कबीरदास जी कहते हैं कि–

'' सांच बराबर तप नहीं, झूठ बराबर पाप।
जाकै हृदय सांच है, ताके हृदय आप।।''

कबीरदास ने अपनी भक्ति में सत्संगति पर बल देते हुए सदाचार के आचरण को आवश्यक माना है। सदाचार तभी संभव है जबकि भक्त आचरण संबंधी सभी सांसारिक विकारों से रहित हो। साथ ही कबीर का यह भी कहना है कि सदाचार को ग्रहण करने के लिए मानव को कुसंगति का त्याग करना चाहिए।

''कबीर संगति साध की, बेगि करीजै जाइ।
दुरमति दूर गँवाइ सो, देखि सुरति बताई।।''

कबीरदास ने यह भी स्वीकार किया है कि सत्संगति कभी निष्फल नहीं जाती। सत्संगति से भक्ति मार्ग की बाधाओं पर विजय प्राप्त की जा सकती है।

''कबीर संगत साध की, कदे न निष्फल होई।
चंदन होसी बांवना, नीवं न कहसी कोई।।''

कबीरदास जी कहते हैं कि भक्त ईश्वर की कृपा को अपनी दीनता, मूर्खता और अविचार को बतलाकर ही प्राप्त कर सकता है। वह उसकी सेवा करके ही उसके स्नेह और दयालुता का भाजन बन सकता है। कबीर कहते हैं कि–

''लघुता से प्रभुता मिलै, प्रभुता से प्रभु इरि।
चींटी लै शक्कर चली, हाथी के सर धूरि।।''

सर्वहित भावना का विकास ही मानवतावाद की चरम सीमा है। संतों ने अपने साहित्य में दया और सहानुभूति के आदर्श को विशेष महत्व दिया है। दया तत्व ही जगत का सार है। दयाशीलता, संवेदना और सहानुभूति मानवतावादी प्रकृति के स्वस्थ और सुदृढ़ उपकरण हैं।

कबीर के अनुसार शील भी मानवतावाद का एक गुण है। इस संसार में ज्ञानी, ध्यानी, संयमी, दानी, शूरवीर आदि अनेक गुणों से परिपूर्ण व्यक्ति मिल जायेंगे, परन्तु शीलगुण युक्त एकाध ही पुरूष मिलेगा–

''ज्ञानी ध्यानी संजयी दाता सूर अनेक।
जपिया तपिया बहुत है सीलवंत कोर एक।।''

कबीरदास जी कहते हैं कि हमें संसार के किसी भी जीव को कष्ट नहीं देना चाहिए क्योंकि सभी जीवों में ईश्वर का वास होता है। हमें सभी जीवों पर दया करनी चाहिए तथा सभी लोगों से अमृत के समान मीठे वचन बोलने चाहिए।

कबीर सहिष्णु भाव को मानव का अलंकार मानते हैं क्योंकि ऐसे व्यक्ति को चाहे कितने भी करोड़ों व्यक्ति ऐसे मिलें जोकि मानवता गुणों से रहित हों, परन्तु फिर भी वे क्षमाशील, धैर्यवान व विनम्र होते हैं। जैसे चन्दन के वृक्ष पर सर्प लिपटे रहने पर भी वह अपनी शीतलता नहीं छोड़ता। उसी प्रकार सहिष्णु मानव अपने गुणों को नहीं छोड़ता है –

''कबीर चंदन का बीड़ा, बैठ्या आक पलास।
आप सरीखे करि लिए, जे जोते उन पास।।''

कबीर कहते हैं कि यदि चंदन का वृक्ष मदार और ढाक से घिरा हुआ हो तो वह अपनी सुगंध को उसमें संक्रांत कर देता है। जो उसके पास होते हैं उन सबको अपने समान बना लेता है, उसी प्रकार संतजन के निकट जो संसारी व्यक्ति होते हैं, वे भी उनके साथ से साधु बन जाते हैं।

निष्कर्षः

कबीर के साहित्य में मानवतावाद के इन सभी बिंदुओं को स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है क्योंकि चाहे कबीर का समय हो या वर्तमान समय कबीर के दोहे प्रासंगिक प्रतीत होते है। डॉ. रामदरश मिश्र ने कबीर के मानवतावादी विचारों से प्रभावित होकर कहा है,'' वे मानव–धर्म की ऊँचाई के प्रतीक थे।'' उनकी मानवतावादी चिन्तन धारा आज भी उतनी ही प्रासंगिक है, जितनी उनके काल में थी। आज भी उनकी वाणी इस कराहती हुई मानवता के लिए सांत्वना का संदेश देती है।

संदर्भ सूची

1. कल्याण, संत वाणी अंक, कबीर, पृ. 211
2. कल्याण, संत वाणी अंक, कबीर, पृ. 212
3. कल्याण, पद 11 संत वाणी अंक
4. डॉ. अरूणा रानी, कल्याण, साखी, कबीर
5. कबीर, पृ. 334
6. डॉ. अरूणा रानी, कबीर वचनावली, पृ. 57
7. कबीर ग्रंथावली, साधु कौ अंग

पुनीत शर्मा
नेट, एम.ए., बी.एड़,
भिवानी (हरियाणा)

वर्तमान भारतीय समाज और संस्कृति

नेहा सिंह

सारांश

भारतीय संस्कृति एक समृद्ध संस्कृति है । इसकी समृद्धता का आधार का पता इस बात से लगाया जा सकता है कि इसमे न जाने कितनी संस्कृतियाँ आकार समाहित हो गयी । परंतु भारतीय संस्कृति और उसके सामाजिक मूल्य आज भी अपनी महत्ता को बनाए हुए हैं । परंतु अब वर्तमान पीढ़ी जो पश्चिमी देशों से प्रभावित हो रही है वह पश्चिमी अंधानुकरण में इतनी गहराई में जा चुकी है कि अपनी इसी संस्कृति को नजरंदाज करने लगी है । हमारी वर्तमान पीढ़ी यह समझने को तैयार नहीं है कि हम किसी भी देश से कितने भी प्रभावित क्यों न हो जाए, उस देश की संस्कृति, सभ्यता और मूल्यों को कितना भी क्यों न अपना लें परंतु फिर भी हम उस देश के निवासी नही हो सकते । हमारी विशेषता यही की हम भारतीय हैं । हम इस जमीन पर जन्में हैं और हमारा कर्तव्य है कि इस जमीन का, यहाँ की संस्कृति का, यहाँ के सामाजिक मूल्यों का न सिर्फ हम सम्मान करें अपितु कभी कोई ऐसा काम भी न करें जिससे इसके सम्मान में कभी कोई कमी आए ।

मुख्य शब्द :—विविधता, सभ्यता, संस्कृति, पाश्चात्य सभ्यता, आदर्श, सांप्रदायिकता, वैदिक, संप्रदाय ।

भारतीय समाज अपने अन्दर अनेक विविधताओं को समेटे हुए है। भारत देश के समाज की पहचान उसकी विविधताओं के अंदर ही है। हमारे देश की सीमाएँ हजारों किलोमीटर तक फैली हुई हैं । जो इसकी सभ्यता और संस्कृति की विविधता की गवाही जोर जोर से अपने आप दे देती हैं। भारत देश बहुत भिन्नता वाला देश है और इसकी यही भिन्नता उत्तर से दक्षिण तक पूर्व से पश्चिम तक स्पष्ट देखी जा सकती है।1 उत्तर भारतीय लोग जो खाना खाते हैं वह जरूरी नहीं कि दक्षिण भारतीय भी खाते हों। ऐसे ही जो पहनावा पश्चिमी भारत में पहना जाता है वह किसी भी हालत में पूर्वी भारत में रहने वाले लोगों के द्वारा अपने दैनिक जीवन में पहना नहीं जा सकता है और इस भिन्नता का कारण मानसिक ही नहीं है अपितु भौगोलिक भी है। पूर्वी भारतीय लोग पश्चिमी भारतीयों जैसा पहनावा इसलिए भी नहीं पहन सकता है क्योंकि क्षेत्रीय भिन्नता अधिक है। जहां पश्चिमी भारत में मरुभूमि पायी जाती है वहीं पूर्वी भारत पहाड़ी क्षेत्र होने की वजह से अलग है। ये लोग इसी क्षेत्रीय भिन्नता के कारण दिखने में भी एक दूसरे से अलग हैं। भारत में पहाड़ी से लेकर मैदानी, मैदानी से लेकर रेगिस्तानी, रेगिस्तानी से लेकर समुद्री हर प्रकार के क्षेत्र में रहने वाले लोग आसानी से मिल जाएंगे। ये लोग बचपन से ही अपने क्षेत्र की सभ्यता और संस्कृति को लेकर पले बडे होते हैं। इनकी भाषाएँ, इनका खानपान, इनका पहनावा, इनका रहन सहन सब एक दूसरे से भिन्न होता है। फिर भी इतनी भिन्नताओं के बाद भी भारत में एक एकता का भाव अपने आप महसूस किया जा सकता है। इसका कारण है भारतीय संस्कृति दिखने में जितनी भिन्नता चाहे क्यों न रखती हो फिर भी सभी जगह उसका मूल रूप एक जैसा है। अर्थात इसका बाहरी रूप परिवर्तित हुआ है परंतु आंतरिक रूप से सभी जगह एक ही भाव रखती है।

संस्कृति क्या है, इसे कैसे परिभाषित किया जाए। यह भी अपने आप में बहुत मुश्किल कार्य है। परंतु इसके शाब्दिक अर्थ से हम कुछ सीमा तक इसके अर्थ को जान सकते हैं। संस्कृति शब्द की उत्पत्ति "सम" उपसर्ग के साथ 'कृ' धातु में 'ति' प्रत्यय जुडने के फलस्वरूप हुई है। "संस्कृति = सम. कृति अर्थात अच्छी प्रकार से सोच समझ कर किए गए कार्य।" संस्कृति शब्द का अर्थ अपने आप में बहुत व्यापक है। क्योंकि संस्कृति किसी देश की विचारधारा दर्शन एवं धर्म के रूप को अभिव्यक्त करती है। यही विचारधारा और दर्शन विकसित होकर एक सभ्यता का रूप धारण कर लेते है।कुछ परिभाषाएँ भी संस्कृति को लेकर दी गयी हैं जैसेः—

मैकाइवर के अनुसार :— "संस्कृति हमारे जीवन के दैनिक व्यवहारों, कला, साहित्य, धर्म, मनोरंजन व आमोद प्रमोद, रहन सहन और विचार की विधियों में हमारी प्रकृति की अभिव्यक्ति है।"

महात्मा गांधी के अनुसार :— "संस्कृति नींव है, प्रारम्भिक वस्तु है, तुम्हारे सूक्ष्मातिसूक्ष्म व्यवहारों से इसे प्रकट होना चाहिए।"

जैसा कहा भी गया है कि "विभिन्नता में एकता " ही भारत को एक श्रेष्ठ देश बनाता है। इस एकता का प्रमुख कारण हजारों साल पुरानी हमारी संस्कृति और सभ्यता ही है। जो वर्तमान समय में भी अपने मूल रूप का त्याग नहीं कर पाई। इसी कारण हम अपनी संस्कृति और सभ्यता को ही भारतीय एकता का प्रमुख कारण मानते हैं।

लोग ज्यादातर सभ्यता और संस्कृति को एक मान लेते हैं। उनका मानना होता है कि सभ्यता ही संस्कृति है और संस्कृति ही सभ्यता है। परंतु ऐसा बिलकुल नहीं है सभ्यता एक समाज के बाहरी रूप को सामने लाती है। सभ्यता का अर्थ ही है जो सभ्य होना दर्शता हो।2 वहीं संस्कृति आंतरिक रूप से संबन्धित है। सभ्यता और संस्कृति भारतीय समाज की मजबूती का मूल आधार है। सभ्यता हमे यह बताती है कि उस समाज के लोग कैसा खाना खाते हैं, वो क्या पहनते हैं, उनका रहना सहना कैसा है अर्थात सभ्यता बाहरी रूप को व्यक्त करती है। वहीं संस्कृति एक समाज की आंतरिक संरचना है।3 देश का विकास जब भौतिक रूप से होता है तब वह सभ्यता का विकास है परंतु देश की आध्यात्मिक समृद्धि और विकास ही संस्कृति है।4 संस्कृति सभ्यता के अंदर सूक्ष्म रूप से व्याप्त है और यही संस्कृति सभ्यता को उत्कृष्ट बनाती है। जब कोई व्यक्ति अपनी संस्कृति से पूर्ण रूप से परिचित होता है तब वह अपनी संस्कृति की महत्ता को समझ पाने में सक्षम होता है। तब ही वह जान पता है कि उसे अपनी संस्कृति से कौन से मूल्य, परम्पराएँ, मान्यताएँ और आदर्श मिलें हैं। इन्ही आदर्श और मूल्यों को जानने के उपरांत ही उनका महत्व समझ सकने के लायक बन पता है। अपनी संस्कृति को जानने के उपरांत ही

उसकी समझ इतनी विकसित हो पाती है कि वह उसी के अनुसार कार्य करना प्रारम्भ कर सके। उसकी समझ पर उसके आस पास के महोल का प्रभाव अर्थात उसकी संस्कृति का प्रभाव पड़ता है। अतः वह सामाजिक रूप से जो निर्णय लेता है वह तब कहीं न कहीं अपनी संस्कृति की मान्यताओं और आदर्शो से प्रभावित होकर ही निर्णय लेता है।

बहुत से विद्वान यह कहकर भारतीय संस्कृति को कमजोर बताते हैं कि भारतीय संस्कृति अपने स्वरूप को बदलना नहीं चाहती है, वह अपने आप को आधुनिकीकरण से दूर और उन्हीं पुराने रीति रिवाजों , जात पात के चक्कर में बांध कर रखना चाहती है। यह सच है कि भारतीय संस्कृति वर्णाश्रम की संस्कृति रही है और भारत की सांस्कृतिक विरासत और मूल्य वर्तमान आधुनिकता से भिन्न हैं।5 परंतु भारतीय संस्कृति की आधुनिकता का प्रमाण यह है कि जब भी हमारे आंतरिक विचारधाराओं में हमारी मान्यताओं में हम लोगों को कभी भी कोई कमी दिखी तो उस कमी को दूर करने के लिए आवाज उठाने वाले भी हमारी ही इस संस्कृति के लोग ही थे जैसे जब भारतीय वैदिक धर्म में आडंबर दिखने लगे तो महात्मा बुद्ध ने इसके इन आडंबरों को दूर करने के लिए कुछ विचार प्रस्तुत किए और उनका मानना था कि इन विचारों को अपनाने भर से लोगो की अंतर आत्मा शुद्ध होगी। महात्मा बुद्ध ने वैदिक संस्कृति में आए आडंबरों को एक तरफ रख दिया और वैदिक संस्कृति के अच्छे गुणों को लेकर बौद्ध धर्म की नींव रखी। बौद्ध धर्म भारतीय संस्कृति का शुद्ध रूप लेकर आगे चला।6 परंतु आगे चलकर उसमें भी आडंबर प्रवेश करने लगे अर्थात यह भी उसी प्रकार दुष्प्रभावित हुआ जैसे वैदिक धर्म हुआ था। जो इस बात का उदाहरण है कि हम जिस समाज का हिस्सा है,और हम जिस धर्म संस्कृति और सभ्यता का पालन करते हैं वे समाज में प्रचलित किसी भी अच्छी या बुरी धारणा या कहें विचारधारा से बहुत अधिक लंबे समय तक प्रभावित हुये बिना नहीं रह सकते हैं। बौद्ध धर्म की ही तरह अनेकों विचारधाराओं ने अपनी राह वैदिक धर्म से अलग की। परंतु फिर भी वैदिक धर्म और वैदिक संस्कृति सुचारु रूप से चलती रही। समय समय पर इसमें सुधार करने के लिए भारतीय संस्कृति से अनेक विचारधाराएँ निकली और कई महापुरुष आए जो भारतीय संस्कृति को महत्वपूर्ण मानते थे और उसकी कमी को दूर कर भारतीय संस्कृति को बनाए रखना चाहते थे। इन लोगों द्वारा ऐसे निर्णय लिए गए जिससे भारतीय संस्कृति के मूल्यों को हानि न पहुंचे।

परंतु सत्य यह भी है कि हमारी सभ्यता और संस्कृति का मूल्य ह्रास वर्तमान समय में बढ़ता जा रहा है और इसके अनेक कारण हैं परंतु सबसे बड़ा और प्रमुख कारण मान सकते हैं अपनी संस्कृति की महत्ता को समझ न पाना। वर्तमान में भारतीय लोग अपनी संस्कृति और महत्ता को कमतर मानकर चल रहे हैं और ज्यादातर लोग पश्चिमी संस्कृति से अधिक प्रभावित हो रहे हैं। जिसका बुरा प्रभाव यह पड़ा की हमारी सांस्कृतिक मान्यताओं पर भी वही बुरे प्रभाव पड़ने आरम्भ हो गए जो पश्चिमी संस्कृति की मान्यताओं पर पड़े। भारतीय समाज में भी लोग हीन भावना से ग्रस्त होने लगे हैं। दूसरा महत्वपूर्ण कारण जो हमारी संस्कृति को प्रभावित कर रहा है वह है साम्प्रदायिक भावना। लोग चाहे माने या न माने परंतु कहीं न कहीं इस बात का प्रभाव वर्तमान समय में अधिक बढ़ने लगा है कि लोग किस धर्म, संप्रदाय, और धारणा को मानते हैं उनके आराध्य कौन है इस तरह की भावनाएँ भारतीय प्रजा के अंदर ही द्वेषभावना व कलह की स्थिति उत्पन्न करने लगी हैं। जिससे अंदर ही अंदर संस्कृति और सभ्यता का बंटवारा होने लगा है।

एक और महत्वपूर्ण कारण जो हमारी संस्कृति को कमजोर कर रहा है वह है पाश्चात्य पद्धति पर आधारित शिक्षा। हमारे भारत देश में अब पाश्चात्य पद्धति पर आधारित शिक्षा अधिक प्रचलित होने लगी है जिस कारण भारतीय भाषाएँ भी अपना महत्व खोती जा रही हैं। यह एक महत्वपूर्ण विषय है क्योंकि भारतीय भाषाएँ ही हैं जो हमें हमारी संस्कृति के साथ जोड़ती हैं। यदि भारतीय भाषाओं का स्थान पाश्चात्य भाषाएँ ले लेंगी तो स्वाभाविक है कि देश में भारतीय संस्कृति का स्थान भी पाश्चात्य संस्कृति द्वारा ले लिया जाएगा।7

वर्तमान समय में कोई भी देश किसी अन्य देश को आक्रमण कर अपने अधीन बनाने की नीति स्पष्ट रूप से सामने रखता हो या न रखता हो। परंतु सांस्कृतिक रूप से सभी देशों के मध्य एक मूक युद्ध अवश्य चल रहा है।अपने इसी मूक युद्ध के माध्यम से देश अन्य देशों को अधीन बनाने की नीति अपनाने लगे हैं। इस मूक युद्ध से वही देश अपनी संस्कृति को बचा पाएगा जो अपनी संस्कृति की महत्ता को समझता हो, जो अपनी संस्कृति की जड़ों को पहचानता हो और जिसे अपनी संस्कृति से सच्चे अर्थों में प्रेम हो। क्योंकि संस्कृति के प्रति यही प्रेम उसे इस मूक युद्ध से लड़ने की प्रेरणा देगा।

निष्कर्ष

अंततः हम यह कह सकते हैं कि भारतीय भूमि एक ऐसी भूमि रही है जहां सभी संस्कृतियों का समन्वय हुआ है। भारतीय संस्कृति में जो ग्रहनशीलता है उसका मुख्य आधार आर्य संस्कृति रही है।8उसके बाद यहाँ इस भूमि पर जितने भी लोग आए वह भारतीय संस्कृति का हिस्सा बन इसी में समा गए। परंतु इसके बाद भी वैदिक संस्कृति हमेशा जिंदा रही। हमने अपनाया परंतु अपना मूल रूप कभी नही खोया। अतः आगे भी हमे इसी प्रकार की भावना को अपना कर चलना होगा कि चाहे जितने भी लोग, विचारधाराएँ और धारणाएँ भारतीय भूमि पर आयें परंतु वो भारतीय संस्कृति के मूल रूप को खराब न कर पाएँ।

संदर्भ

1 रामधारी सिंह दिनकर, चिंतन के आयाम, पृ संख्या 53, लोक भारती प्रकाशन, संस्करण– 2008

2 डॉ हरदेव बाहरी, राजकमल हिन्दी शब्दकोश, पृष्ठ संख्या– 803,राजकमल हिन्दी प्रकाशन, संस्करण –2022

3 रामधारी सिंह दिनकर, संस्कृति, भाषा और राष्ट्र, पृष्ठ संख्या– 12, लोकभरती प्रकाशन, संस्करण– 2008

4 व्रजवल्लभ द्विवेदी, एक विश्व एक संस्कृति, विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी, पृष्ठ संख्या– 5, संस्करण 2003

5 कमलेश अवस्थी, परंपरा और आधुनिकीकरण, पृष्ट संख्या– 25 स्वराज प्रकाशन, संस्करण 2006

6 वहीं , पृष्ट संख्या 175

7 वहीं, पृष्ठ संख्या 87

8 रामस्वरूप चतुर्वेदी, हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास, पृष्ट संख्या 16, लोकभरती प्रकाशन, संस्करण– 2021

नेहा सिंह

नेट, एम.ए, बी.ए

सैक्टर 3 फरीदाबाद (हरियाणा)

मोबाइल नंबर 8800348081

समकालीन हिंदी कविता में नारी का स्थान

पुनीत शर्मा

सारांश

प्रस्तुत शोध–पत्र में ''समकालीन हिंदी कविता में नारी का स्थान'' का विवरण प्रस्तुत किया गया है। नारी आदिकाल से ही हमारी सभ्यता, संस्कृति, साहित्य और कविता के साथ जुड़ी रही है। नारी ने हर कठिन परिस्थिति में पुरूष का साथ देकर, उसकी जीवन–यात्रा को सरल बनाया है और उसके अभिशापों को स्वयं झेल कर उसे अपने स्नेह, ममता, त्याग और समर्पण रूपी वरदान दिये हैं। समकालीन हिंदी कविता में नारी बराबर ही चर्चा का विषय रही है। भिन्न–भिन्न प्रसंग तथा संदर्भ में नारी का बहु–आयामी अस्तित्व प्रस्तुत किया गया है। नारी की अस्मिता एवं गुणवत्ता का आकलन केवल कवियों एवं साहित्यकारों ने ही नहीं किया अपितु विश्व के इतिहासकारों ने भी यह माना है कि स्त्रियों की उन्नति या अवनति पर ही किसी राष्ट्र की उन्नति या अवनति निर्भर है। इस शोध–पत्र में समकालीन हिंदी कविता में नारी की स्थिति को स्पष्ट किया गया है।

मुख्य–शब्दः नारियों की भारतीय समाज में दशा, नारी समस्याएँ,नारी उत्थान के प्रयास।

आदि कवि वाल्मीकि नारी को सम्मानित और प्रतिष्ठित स्थान देते हुए रामायण में कहते हैं–

''यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमंते तत्र देवताः।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः।।''

अर्थात् जहाँ स्त्रियों की पूजा होती है वहाँ देवता निवास करते हैं और जहाँ स्त्रियों की पूजा नहीं होती है, उनका सम्मान नहीं होता है वहाँ किये गये समस्त अच्छे कर्म निष्फल हो जाते हैं।

भारतीय संस्कृति में शिव के 'अर्द्ध नारीश्वर' रूप की संकल्पना नारी के महत्त्व को स्पष्ट करती है। भारतीय संस्कृति में वेदों से लेकर वर्तमान तक नारी को महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त रहा है। शास्त्रों ने नारी के तीनों रूपों का विश्लेषण करते हुए कहा है कि वह सेवा को अधिकार समझती है, इसलिए वह देवी है। वह त्याग करना जानती है, इसलिए वह साम्राज्ञी है। यह विश्व उसके ममतामय आँचल में वात्सल्य से ओत–प्रोत स्थान पा सकता है, इसलिए वह विश्व जननी है।

समकालीन कविता में नारी के यही विविध रूप प्रतिबिम्बित हुए हैं। आधुनिक काल के कवियों में जयशंकर प्रसाद ने नारी के लिए कहा है कि –

''नारी ममता माया का बल,
वह शक्तिमयी छाया शीतल।''

नारी नर के जीवन की पूरक होती है। अतुल कृष्ण गोस्वामी ने इसी बात को स्पष्ट करने के लिए कहा है कि –

''नारी नर की आलोक राशि,
नारी नर की चित्ति का प्रसार।
दोनों का न्यायोचित्त समत्व,
उन्मीलित करता स्वर्ग द्वार।।''

नारी को पुरानी रूढिवादी सोच से मुक्त करने का प्रयास भी अनेक कवियों ने किया है। इन कवियों ने नारी को ऐसे पुरातन संस्कारों को त्यागने के लिए कहा है, जो नारी की प्रगति में बाधक हैं। जगन्नाथ प्रसाद मिलिन्द नारी को सचेत करते हुए कहते हैं कि–

'' जो चाटुकारिता की सीमा में तुमको
आबद्ध रखे, ठुकरा दो नर की माया।
युग–युग की प्रेरक शक्ति, उठो, फिर नारी
देखो जग के आँगन में नवयुग आया।''

नारी–सम्मान के पक्षधर कवि स्व. बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' कहते हैं कि–

''जो नारी में कामुकता ही देखें, वे भी क्या मानव हैं ?
वे तो बस, चाण्डाल अधम, वे तो बस पूरे दानव हैं।''

नारी के उदात्त तथा उदार रूप का वर्णन करते हुए जयशंकर प्रसाद ने 'कामायनी' में बहुत पहले ही कहा है कि –

''नारी तुम केवल श्रद्धा हो,
विश्वास रजन नग पग तल में।
पीयूष स्त्रोत सी बहा करो,
जीवन के सुन्दर समतल में।''

रघुवीर सहाय की दृष्टि में नारी पूर्ण रूप से शोशिता है। उसकी इच्छा–आकांशा, भूख–प्यास, प्रसन्नता सब पुरूश की इच्छा–आकांक्षाओं से बंधी है। उनकी कविता 'नारी' में नारी स्वंय कुछ नहीं, बेचारी है–

"नारी बिचारी
पुरूश की मारी
तन से क्षुधित
मन से मुदित
लपक झपककर
अन्त में चित्त"

देवी प्रसाद मिश्र की 'औरतें यहाँ नहीं दिखती' कविता में नारी के निजी संसार की विभिन्न दशाओं को प्रस्तुत करके उसको वहाँ पाने की बात कही है–

"औरतें यहाँ नहीं दिखती
वे आटे में पिस गई होंगी
या चटनी में पुदीने की तरह
महक रही होंगी
वे तेल की तरह खोल रही होंगी
सीलन और अंधेरे की अपाठ्य

पांडुलिपियाँ होकर गल रही होंगी
वे कुएँ मे होंगी या धुएँ में होंगी
आवाजें नहीं कनबतियाँ होकर
फुसफुसा रही होंगी।"

यहाँ यह मानने में सकोंच नहीं करना होगा कि आज भी नारी को लेकर पुरूष की दृष्टि में खास बदलाव नहीं आया है, लेकिन नारी यानि कवयित्रियों की नारी–दृष्टि में बदलाव आया है और इस बदलाव की बहुत जरूरत है, क्योंकि इस सत्य से कोई मुँह नहीं मोड़ सकता कि आज नारी की भूमिकाएँ बहुत विस्तृत हुई हैं। उसने वैयक्तिक दृश्टि से बहुत ऊँचे उठकर समाज के साथ अपने संबंधों में पर्याप्त बदलाव ला दिया है। परम्परागत बंधनग्रस्त नारी आज विद्रोहिनी है। धनोपार्जन के क्षेत्र में उतरी नारी अपनी अस्मिता कायम करने में पुरूश–समाज से संघर्शरत है।

सुमन सहगल की अस्मिता, आकाश तो है तथा जिजीविशा कविताएँ नारी ने अपने होने के अहसास व उसके अस्तित्वबोध से युक्त हैं। 'अस्मिता' कविता का एक अंश द्रश्टव्य है–

"हाँ
मैं हूँ
मैं कैसे नकार दूं
तुम्ही कहो
वह स्थान
वह टीला
वह बुर्ज
जहाँ से सुन सको तुम
एक बार फिर पुकार दूँ।"

शकुन्त माथुर की कविता 'जी लेने दो' में नारी–अस्मिता की तलाश है–

"जी लेने दो
मुझे
वह कोरा अर्थ
मेर लिए समूचा हैं
रख लेने दो मुझे
वही मेरे पास
जो नितान्त मेरा अपना है
पी लेने दो
वह चाह
वह रस
जो मेरे लिए अच्छा है।"

कात्यायनी स्त्री की एक नई छवि को प्रतिश्ठित करना चाहती है। उनकी दृष्टि में नारी की रचना केवल वंश चलाने के लिए नहीं हुई है। वह नारी की स्वतन्त्रता के बिना जीवन के सौन्दर्य, प्यार, मातृत्व सबको नकारती है। 'वह रचती है जीवन और..........' कविता में उनकी नवीन नारी–दृष्टि द्रष्टव्य है–

"वह कौन सी चीज है
जिसके बिना सब कुछ अधूरा है
प्यार भी, सौन्दर्य भी, मातृत्व भी
सोचती है वह
और पूछती है चीख–चीखकर
प्रतिध्वनि गूंजती है
घाटियों में, मैदानों में
पहाड़ों से, समुद्र की ऊँची लहरों से टकराकर
आजादी! आजादी !! आजादी !!! "

प्रभा खेतान, सुमन राजे की नारी–दृष्टि, नारी–अस्मिता को उजागर करती है। डॉ. रश्मि बजाज की इक स्वर, चलोगे मेरे साथ तुम, बेघर, अपना आकाश, कविताएँ नारी के अस्तित्व बोध व नारी–स्वातन्त्र्य का प्रबल रूप में उद्घोष करती हैं। डॉ. रश्मि बजाज की कविता 'अपना आकाश' का एक अंश द्रष्टव्य है–

''चलो आज सब मिलकर जाएँ
छीन लाएँ अपना आकाश
अपने हिस्से की वो धरती
अपने हिस्से का आकाश।''

समकालीन हिंदी कविता में नारी पर हो रहे अत्याचारों तथा शोषण का वर्णन भी किया गया है। औरतों का शारीरिक, मानसिक, भावात्मक यानि सर्वरूपेण शोषण, उनकी दयनीय अवस्था का चित्र, जहाँ औरत होना ही अभिशाप है, उदय प्रकाश की 'औरतें' कविता में देखा जा सकता है–

''हजारों लाखों छुपती हैं गर्भ के अंधेरे में
इस दुनिया में जन्म लेने से इन्कार करती हुई
वहाँ भी खोज लेती हैं उन्हें भेदिया तरंगें
और वहाँ भी भ्रूण के अंधेरे में उतरती हैं हत्यारी कटार।''

आधुनिक काल के कवियों ने समाज को दैहिक नारी के भीतर छिपी मानसिक नारी के विषय में सोचने के लिए बाध्य किया है। दिनकर जी ने उसी अज्ञात मर्म की ओर संकेत करते हुए कहा है कि–

''नारी के भीतर असीम जो एक ओर नारी है,
सोचा है, उसकी रक्षा पुरूषों में कौन करेगा ?''

हमारे समाज में कन्या–भ्रूण हत्या की समस्या बढ़ती ही जा रही है। समकालीन हिंदी कविता में समाज में फैलती इस बुराई को समाप्त करने का प्रयास किया गया है तथा लोगों को जागरूक किया गया है। इसी व्यथा की अभिव्यक्ति 'पातीः अजन्मी बेटियों की' शीर्षक कविता में हुई है–

''आखिर क्यों है तुम्हें
हमारे अस्तित्व से इतनी चिढ़
हमारे कोमल सपनों से इतनी नफरत... ?
घर–बार जीने की चाह में छटपटाती
और, जन्म से पहले ही
मरने को मजबूर कर दी जाती

हम हैं, तुम्हारी अजन्मी बेटियाँ।''

इस प्रकार समकालीन हिंदी कविता में नारी के नकारात्मक और सकारात्मक दोनों रूपों को अभिव्यक्ति मिली है। आज का कवि नारी की उच्छृंखल, अश्लील और मादक गतिविधियों से आक्रोशित है तो दूसरी ओर वह उसको समाज का प्रतिष्ठित और गरिमामय आदर भी प्रदान करता है। नारी के सभी रूपों को चित्रित करते हुए समकालीन कवि ने नारी की महत्ता का वर्णन इस प्रकार किया है–

क्रीतदासी, स्वामिनी, आराध्य हो, आराधिका भी
प्राण मोहन कृष्ण हो तुम, शरण अनुगत राधिका भी
सहचरी हो, भार्या हो, वन्दनीय अम्बिका भी
भक्ति की कृति हो स्वयं, भक्त की प्रतिपालिका भी।

निष्कर्ष:

कहा जा सकता है कि समकालीन हिंदी काव्य में नारी के सभी रूपों को कवि ने वाणी दी है। जिन सामाजिक प्रभावों और वैज्ञानिक यान्त्रिक प्रभावों के कारण विश्व जीवन और व्यवहार में अनेक परिवर्तन आए हैं, उन सबका प्रभाव नारी–जीवन पर आना भी स्वाभाविक है। इसी कारण उसके व्यवहार , विचार, जीवन–शैली तथा संस्कारों में व्यापक परिवर्तन परिलक्षित होते हैं। इन समस्त परिवर्तनों को आज के कवियों ने अपने–अपने दृष्टिकोण से ग्रहण कर अभिव्यक्त किया है।

संदर्भ सूची

1. जयशंकर प्रसाद–कामायनी, पृ. 238
2. अतुल कृष्ण गोस्वामी–नारी महाकाव्य, पृ. 198
3. जगन्नाथ प्रसाद मिलिन्द–भूमि की अनुभूति, पृ. 28
4. बालकृष्ण शर्मा, 'नवीन'–हम विषपायी जनम के, पृ. 522
5. जयशंकर प्रसाद– कामायनी, पृ. 13
6. वहीः अपना आकाश, वही, पृ. 61
7. उदय प्रकाशः औरतें, वहीं, पृ. 107
8. रघुवीर सहाय– 'सीढ़ियों पर धूप में' कविता सं0 से।
9. वही : 'अस्मिता' पृ0 16
10. शकुन्त माथुर– 'जी लेने दो', 'लहर नहीं टूटेगी' कविता सं0 से।
11. दिनकर की सूक्तियाँ, पृ0 52
12. कात्यायनी– 'वह रचती है जीवन और ....', 'सात भाईयों के बीच चम्पा' कविता सं0 से, पृ0 30

पुनीत शर्मा
नेट, एम.ए., बी.एड़,
भिवानी (हरियाणा)

ममता कालिया के कथा–साहित्य में पारिवारिक विघटन

श्वेता कुमारी

सारांश

पारिवारिक विघटन का अभिप्राय परिवार के टूटने से है। प्रेम, सहयोग तथा स्नेह आदि परिवार के तत्व हैं जो परिवार को एक संगठित इकाई के रूप में बाँधे रहते हैं। पारिवारिक विघटन में सिर्फ पति–पत्नी के बीच उत्पन्न तनाव ही नहीं है, बल्कि बच्चों तथा माता–पिता के बीच पनपने वाले तनाव भी सम्मिलित हैं। परिवार का प्रत्येक सदस्य एक–दूसरे के साथ सहयोगात्मक भूमिका अदा करता है, अतः इन समूह सदस्यों का टूटना ही पारिवारिक विघटन है।

प्राचीन भारतीय परिवार कृषि पर आधृत था, लेकिन आज के आधुनिक दौर में कृषि–व्यवसाय की जगह नौकरी–पेशा, उद्योग तथा व्यवसाय ने ले ली है। अतः परिवार का परम्परागत स्वरूप परिवर्तित होने लगा है तथा पारिवारिक बदलाव की यह प्रक्रिया पारिवारिक विघटन को प्रकट करने लगी है। पारिवारिक विघटन की समस्या को ममता कालिया ने अपने कथा–साहित्य में बड़ा ही मार्मिक चित्र प्रस्तुत किया है।

ममता जी ने पारिवारिक सम्बन्धों की महत्ता प्रदान करते हुए अनेक कहानियाँ लिखी हैं। सम्बन्धों के डोर बहुत नाजुक होते हैं। परस्पर सामंजस्य की वजह से ये डोर तनकर टूट जाते हैं। यदि किसी वजह से ये जुट भी जायें तो उसमें गाँठे पड़ जाती हैं। आधुनिक समय में पारिवारिक–जीवन में विघटन का कारण पाश्चात्य–संस्कृति से प्रभाववित होना भी है। विवाहोपरान्त पुत्र अपने विवाह के पश्चात् पत्नी के साथ अलग हो जाना चाहता है। हालाँकि ऐसे बहुत से कारण हैं जहाँ सम्बन्धों में दरार आना शुरू हो जाता है। आज के माहौल में समाज का जो बदला हुआ स्वरूप है, उसका चित्रण ममता जी ने अपनी कहानियों में बखूबी दर्शाया है। उनका मानना है कि सम्बन्धों में दरार अधिकांश पैसों के कारण आते हैं। इस तरह का संदर्भ ममता जी की कहानी "बीमारी" के अलावे अन्य कहानियों में भी दृष्टिगोचर होता है। "बीमारी" कहानी को देखने से पता चलता है कि इसकी नायिका अविवाहित है, लेकिन नौकरी–पेशा वाली है। वह परिवार से दूर रहती है। एक दिन जब वह बीमार पड़ती है तब वह अपने भाई और भाभी को कुछ दिन के लिए अपने पास बुलाती है। उन दोनों के व्यवहार से ऐसा लगता है कि वे दोनों सैर करने आये हैं। भाई को अपनी बहन की बीमारी से कोई दुःख नहीं होता, लेकिन सेवा करने के नाम पर बहन की बीमारी में अपने खर्च का हिसाब वह जरूर लगाते दिखता है। लाचार बहन का मन कह उठता है कि–"कैश मैं अपने पास ही रख रही हूँ , इसकी आवश्यकता पड़ सकती है। तुम मुझसे चेक ले लोगे।"[1]

प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में विवाह अनिवार्य होता है, क्योंकि परिवार का निर्माण मूलतः पति–पत्नी के रिश्तों पर आधृत होता है। परिवार की सुख–समृद्धि पति–पत्नी के आपसी समझदारी पर आश्रित होता है, किन्तु जहाँ दाम्पत्य–सम्बन्धों में आत्मीयता, प्रेम तथा विश्वास जैसे मूल्यों का ह्रास होने लगता है तब अंतर्द्वन्द्व, तनाव एवं अकेलापन बढ़ने की संभावना प्रबल हो जाती है। यदि पति–पत्नी का रिश्ता ठीक–सा रहता है तो परिवार भी अच्छे ढंग से चलता है। लेकिन जब पति–पत्नी के रिश्तों में निरसता आ जाती है तब परिवार में विघटन होने के आसार बढ़ जाते हैं।

ममता जी ने पति–पत्नी के रिश्तों को अपनी कहानी "बातचीत बेकार है" में घर में कैद नारी की मानसिक स्थिति को दर्शाया है। इस संदर्भ में कहानी की निम्न पंक्तियाँ कुछ इस तरह बयाँ करती हैं–पति उसे सब कुछ दे सकता है, किन्तु सुख–शांति नहीं। उसे यह लगने लगा कि इन चार सालों में उसका कार्य–क्षेत्र केवल रसोई एवं प्रसूति–गृह ही रहे हैं। उसे यह भी अनुभूति होने लगती है कि पति–पत्नी के बीच की बातचीत किसी काम की नहीं।

विनीता को एकान्त में ऐसा अनुभव होता है कि–"आँखे बंद कर जागते रहने से मस्तिष्क को आराम नहीं मिलता, बल्कि वह तन जाता है। वहीं नित्य–दिन का असंतोष तथा अफसोस भींगे कंबल–सा आकर उसके ऊपर गिर गया। उसे लगा वह खैरियत से नहीं है, कभी थी भी नहीं।"[2]

ममता जी की कहानी "लगभग प्रेमिका" में प्रेम–विवाह के बाद परिवार में अस्थिरता की अनुभूति करती हुई नायिका कहती है–" अस्वाभाविक तथा अप्राकृतिक सम्बन्ध मुझे कभी अपील नहीं करते, चाहे वे कितनी ही आधुनिक तरीके से पेश किये जाएँ।........मेरे सिर में पीड़ा होने लगी।"[3] इसी तरह कहानी "उपलब्धि" में पति–पत्नी के विवादों तथा पारिवारिक संघर्ष का चित्रण हुआ है। शादी के पूर्व हर क्षण अपने में समर्पित रहने वाला चेतन अब प्राची से दूर होता जा रहा था। चेतन प्राची से बात करने आता तो उसे यह अहसास होता कि वह फरमाइशों, शिकायतों और तुनक–मिजाजियों की एक पिटारा बनी हुई है। दोनों दोहरे स्तरों पर अकेले होते जा रहे थे।"[4] "तस्की को हम न रोएँ" कहानी में आशा अपने कॉलेज के दिनों में क्वीन थी, लेकिन विवाहोपरान्त उसका व्यक्तित्व तथा जीवन परिवर्तित हो चुका था। उसका पति भी उसकी अनदेखी करता था, क्योंकि उसकी शादीशुदा–जीवन में बदलाव आ गया था। इसीलिए वह कहती है–"तुम्हारे दिन के सच और रात के सच में जमीन–आसमान का अंतर होता है। तुम्हें यह भी याद दिलाना पड़ेगा कि हमारा विवाह हुआ था सन् पचास में, अब है सन् सत्तर।"[5]

ममता जी ने अपनी "दर्पण" कहानी में पुरुष की मानसिकता को प्रकट किया है। कहानी की नायिका बानी का जब विवाह होता है तो उसका पति उसकी नौकरी छुड़ा देता है। उसकी अपनी यही इच्छा थी कि उसकी अनुमति के बिना घर में कुछ भी नहीं हो। बानी का पति विवाह के पश्चात् ही अपने प्रभुत्व का इस्तेमाल करने लगा था। जबकि बानी की अपनी यह सोच थी कि विवाह के पश्चात् वह सर्वप्रथम "दर्पण" खरीदेगी।"[6]

विवाह के बीस वर्ष के बाद पति–पत्नी के सम्बन्धों में हुए बदलाव को "दाम्पत्य" कहानी उद्घाटित करती है। इस कहानी में पति अपनी पत्नी से पहले ही जैसा प्रेम चाहता है, लेकिन पत्नी के

चेहरे पर चिड़चिड़ाहट तथा झाइयाँ देखकर वह खामोश हो जाता है। पत्नी हर बात में लाभ–हानि देखती है, जो उसके पति को कतई यह पसंद नहीं है। अतः दोनों की सोच अलग–अलग होने से उनके सम्बन्धों में दरार पड़ने लगती है। उसकी पत्नी मोहब्बत को मशक्कत समझने लग जाती है। इसी तरह की कहानी "नया त्रिकोण" भी है जहाँ पारिवारिक सम्बन्धों में विघटन दिखयी देता है। कहानी में दादी की सोच है कि सारा परिवार उसकी सेवा में लगा रहे। उसके बेटे और बहू दादी को हरसंभव खुश रखने की कोशिश तो करते हैं, लेकिन जीजी की वजह से तनाव उत्पन्न होना शुरू हो जाता है।

ममता जी की कहानी "गुस्सा" की नायिका माया गुस्सैल प्रकृति की है जिसके कारण उसका पति हमेशा उसे घर छोड़कर चले जाने की धमकी देते रहता है। एक दिन सचमुच वह माया के स्वभाव से ऊबकर घर छोड़कर चला भी जाता है। यही स्थिति "खाली होता हुआ घर" कहानी की सुमित्रा मिश्रा की है जो माता–पिता के स्वभाव के कारण मानसिक रूप से क्षुब्ध दिखती है। पारिवारिक तनाव में जीने को विवश सुमित्रा अपना एक मुकाम ढूँढ़ निकालती है और अंततः अपने परिवार तथा घर का परित्याग कर वह भी चली जाती है।

"वर्दी" कहानी की नायिका आशा विवाहोपरान्त दैहिक और मानसिक रूप से पति की प्रताड़ना से पीड़ित है, फिर भी वह अपने अत्याचारी पति का विरोध नहीं करती है। जबकि "अंठावनवा साल" कहानी की नायिका सुषमा पति के अमानवीय सम्बन्धों से मर्माहत पशुवत–जीवन बिताने को विवश है।

ममता जी ने अपनी कहानी "सेवा" में यह दिखाने का प्रयास किया है कि आज माता–पिता की सेवा के लिए बेटों को फुर्सत नहीं मिलती, चाहे वे किसी भी विषम परिस्थितियों में क्यों न हों। इस कहानी में नरोत्तम की पत्नी को जब ब्रेन हेमरेज होता है, तब भी वह पुत्रमोह से ग्रसित दिखती है और अपने बेटे बिस्सू का स्मरण करती है। लेकिन बेटे के पास इतना भी समय नहीं है कि वह अपनी बीमार माँ को देखने भी आये। तात्पर्य यह कि भौतिकवादी–युग में बूढ़े माँ–बाप अपने बेटे–बहू के इस तरह के बर्ताव से अकेलापन महसूस करने लगे हैं। अतएव सम्बन्धों में बिखराव तथा पारिवारिक विघटन होने लगा है।

आज के परिवेश में स्त्रियाँ पुरुष की सेविका या साया बनी रहने से परहेज करती हैं। इसका कारण है स्त्रियों में उच्च–शिक्षा एवं नौकरी करना। वे स्वावलंबन के मार्ग पर आगे बढ़ने की इच्छा पाल रखी हैं, जिससे नारी–पुरुष के सम्बन्धों में कटुता बढ़ने लगी है। इस संदर्भ की कहानी "फर्क नहीं" की नायिका पारिवारिक तनाव तथा घुटन के बाद भी निजी अस्मिता की कद्र करती है। वह स्त्री–मुक्ति की हिमायती है। अपनी एक अलग तरह की पहचान बनाने की आतुर नायिका की मनःस्थिति को कहानी की निम्नांकित पंक्तियों में देखा जा सकता है :

मेरी चेतना में आजकल एक भीषण तड़फड़ मची हुई थी। लगातार एक असहमत आवाज उठती–"मुझे इन लाखों–करोड़ों लड़कियों की तरह नहीं बनना है, मैं इनसे अलग हूँ।"[7] इसी प्रकार "नयी दुनिया" कहानी की पूर्वा भी औसतपन से मुक्त होकर एक अलग पहचान बनाने की हिमायती है। वह सर्जक का पद हासिल करने की इच्छा रखती है, किन्तु पारिवारिक स्थिति उसके सपनों के अनुकूल नहीं है। पूर्वा के पिता उसे औसत स्त्री की भाँति विवाह करके विदा लेने के इच्छुक दिखते हैं, लेकिन पूर्वा उससे पट नहीं पाती है, क्योंकि उसमें पारिवारिक मुक्ति की कामना कूट–कूटकर भरी हुई है। जब परिवार तथा समाज द्वारा उसे औसतपन की बेड़ियों में बाँधने की कोशिश की जाती है, तब वह निजी अस्मिता कायम रखने के लिए अपना प्रतिरोध जारी रखती है। इस कहानी की पंक्तियाँ उसके इस स्थिति के द्योतक हैं–"मैं किसी साहब की साहब नहीं बनना चाहती, तुम लोग मुझे पूर्वा ही क्यों नहीं रहने देते, सिर्फ निखालिस पूर्वा।"[8] अतएव पूर्वा में निजी मुक्ति के प्रतिरोध में संघर्षरत स्त्री का मूर्त्तरूप साकार हो उठा है।

ममता जी की कहानी "चिरकुमारी" की दिशा भी मुक्ति की कामना से ओतप्रोत दिखती है। अपने माता–पिता तथा अनेक विवाहित दम्पतियों के तनावग्रस्त वैवाहिक–जीवन को जानकर वह विवाह नहीं करने का संकल्प लेती है। दिशा पी–एच.डी. की है और वह जन्तु–विज्ञान की प्राध्यापिका है, फिर भी निजी स्वतंत्रता को पूर्वरूपेण महत्व देने की पक्षधर है। उसके इस विचार को ये पंक्तियाँ स्पष्ट करती दिखती हैं–"मैं तो सदा ही लड़कियों की स्वतंत्रता की कायल रही हूँ।"[9] "तोहमत" कहानी की दो स्त्रियाँ आशा तथा सुधा जीवन में ऊँची सपना पाल रखी हैं। परिवार वालों के इच्छानुरूप वे दोनों विवाह एवं बाल–बच्चों के चंगुल में फँसे रहने की कतई इच्छा नहीं रखती हैं। आशा एवं सुधा की मानसिक स्थिति निम्न पंक्तियों में जाहिर होती है –

"फिलहाल आशा–सुधा ने तय किया था कि एम. ए. के पश्चात् न तो उन्हें विवाह करना है और न ही घर बैठना है। वे आईएएस की तैयारी करेंगे और साथ–ही साथ रिसर्च।"[10] मुक्ति की इस कामना में जब घरवाले तोहमत लगाते हैं तब उनकी अस्मिता पर आघात पहुँचती है। अतएव उपर्युक्त कहानी के ये दोनों नारी–पात्र आधुनिक सुशिक्षित स्त्री–मन के सशक्त अहं तथा अस्मिता के प्रतिरूप दिखते हैं। ये स्त्री–पात्र निजी पहचान एवं मुक्ति के प्रति हमेशा ही जागरूक दिखते हैं। अतः परिवार में घुटन एवं विघटन की स्थिति उत्पन्न होती है।

ममता जी ने अपनी कहानियों में पारिवारिक–जीवन में तनाव के बाद भी अपनी अस्मिता कायम रखने में प्रयत्नशील एवं संघर्षरत स्त्री–पात्रों को प्रश्रय दिया है। साथ ही परिवार में जो आज स्थिति उत्पन्न हो रही है तथा छोटी–छोटी बातों को लेकर कैसे सम्बन्धों में विखराव हो रहा है, इसका यथार्थ चित्र भी उन्होंने अपनी कहानियों में खींचा है।

परिवार, समाज का महत्वपूर्ण अंग माना जाता रहा है। जो सामाजिक नियम है, उसे परिवार के सदस्यों को मानकर ही चलना पड़ता है। परिवार का प्रत्येक व्यक्ति जीवन–मूल्यों का पालन करता है। यदि परिवार के सदस्य इसका निर्वाह नहीं करते हैं, तो परिवार में विघटन उत्पन्न होने लगता है। प्राचीन काल में संयुक्त परिवार थे जहाँ परिवार के सभी सदस्य एक साथ रहते थे, जिनमें प्रेम तथा आदर एवं परस्पर स्नेह की भावना होती थी, किन्तु जैसे–जैसे देश और समाज में आधुनिकता, पाश्चात्य–प्रभाव, शिक्षा का

प्रचार–प्रसार, औद्योगीकरण तथा भूमंडलीकरण का प्रभाव बढ़ता गया, वैसे–वैसे लोग शहरों एवं महानगरों में जाने लगे, जिसका परिणाम हुआ कि संयुक्त परिवार विघटन के कगार पर पहुँच गया। इसी वजह से एकल परिवार की निर्मिति हुई।

आज के पारिवारिक सदस्यों की स्वार्थी सोच इतनी घटिया हो गयी है कि वह अपने स्वार्थों की वजह से परिवार से अलग दूर रहना चाहता है। अतएव बढ़ती हुई स्वार्थ–भावना पारिवारिक विघटन के लिए जिम्मेदार ठहराया जा सकता है। आज नौकरी की वजह से भी परिवार के सदस्यों को अपना घर छोड़ना पड़ रहा है जिससे एकल परिवार बनता जा रहा है। ममता जी ने इसका चित्र अपने उपन्यासों में भी खींचा है। "बेघर" उपन्यास में परमजीत विवाहोपरान्त अपनी पत्नी रमा को मुम्बई लेकर चला जाता है। पहले तो वह अपने परिवार को पैसा भी भेजता था, लेकिन महानगर में आने के बाद रमा जब उस पर अपना हक जताती है तो पैसा भेजना वह बंद कर देता है। परमजीत अपने भाई की पढ़ाई की भी जिम्मेदारी उठाने के लिए सोचता है, लेकिन पत्नी के व्यवहार से वह ऐसा नहीं कर पाता है। रमा कहती है–"पहले उन्हें तो पढ़ाओं, जिन्हें पैदा किया है। बाद में दूसरों को पढ़ाने की बात सोचना।"[11]

इसी तरह पारिवारिक विघटन का चित्रण "नरक दर नरक" उपन्यास में भी दिदृष्ट होता है। उपन्यास के नायक जगन तथा नायिका उषा की स्थिति विवाहोपरान्त अत्यन्त ही दयनीय हो गयी है। दोनों मुम्बई जैसे महानगर में आकर अपनी जिन्दगी की शुरूआत करते हैं, लेकिन कुछ वर्षो के पश्चात् जब जगन की नौकरी चली जाती है तब वह उषा के पिता के यहाँ जाने का विचार करता है, किन्तु जा नहीं पाता है। उषा के पापा अपनी बेटी से अत्यधिक प्रेम करते थे, लेकिन जगन से प्रेम–विवाह के बाद वे टूट जाते हैं। "बहुत प्यार करने वाले उषा के पापा आज इस स्थिति में हैं जैसे पापा रह ही नहीं गये थे।"[12]

काफी संघर्ष के बाद जगन इलाहाबाद आकर एक प्रेस खरीदकर अपना व्यवसाय शुरू करता है। इस व्यवसाय में वह इतना व्यस्त हो जाता है कि उसे पत्नी, बेटे तथा परिवार के लिए भी समय नहीं निकल पाता। यही कारण है कि पति–पत्नी के सम्बन्धों में भी दरार–सी पड़ जाती है। इस तरह यहाँ परिवार में विघटन की स्थिति स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। "प्रेम कहानी" उपन्यास की जया और गिनेस भी परिवार के विरूद्ध जाकर शादी करते हैं। जया जब पिता के स्थानान्तरण के बाद मुम्बई आती है तब वह "सागर पार छात्र समिति" की सचिव बन जाती है। वहीं पर मॉरिशस से आया गिनेस के सम्पर्क में आती है। गिनेस के माँ–बाप की इच्छा है कि वह "हाउस–सर्जनशीप" के पश्चात् मॉरिशस लौट आये, लेकिन गिनेस उनके सपनों पर पानी फेर देता है। गिनेस जया को लेकर दिल्ली आ जाता है। इस तरह गिनेस भी अपनी नौकरी की खातिर परिवार को छोड़ देता है। इसी प्रकार "दौड़" उपन्यास का पवन भी स्टैला के संग एकाकी जीवन जीता है तथा अपने परिवार को नजरअंदाज कर देता है।

सारांशतः यह कहा जा सकता है कि आत्मीयता, स्नेह, श्रद्धा तथा त्याग की भावना आज परिवार के सदस्यों में नहीं रही। आज के दौर में आदमी मूल्यों तथा पारिवारिक विघटन की वजह से स्वार्थ के पीछे भागा जा रहा है। स्थिति आज ऐसी हो गयी है कि शादी–विवाह होते ही नयी पीढ़ी के बच्चे पत्नी के साथ अलग घर बसाने को इच्छुक दिखते हैं, जिससे कि पारिवारिक सम्बन्धों में विघटन होना शुरू हो गया है। इन सबके मूल में पैसा है। पति–पत्नी के सम्बन्धों में कटुता तथा विच्छेद का कारण भी पद–प्रतिष्ठा तथा पैसा ही मूल है। कहने का मतलब यह कि पैसों के सामने आज परिवार का कोई मूल्य नहीं रह गया है। अतएव इन सभी समस्याओं को ममता कालिया जी ने अपने कथा–साहित्य में यथार्थपरक चित्रण किया है।

संदर्भ सूची :–

1. कालिया, ममता–"छुटकारा",लोकभारती प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण–1996, पृ०सं०–36
2. कालिया, ममता, "ममता कालिया की काहानियाँ", खंड–एक, वाणी प्रकाशन नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण–2005, पृ०सं०–148
3. वही, पृ०सं०–264
4. वही, पृ०सं०–178
5. वही, पृ०सं०–391
6. वही, पृ०सं०–268
7. वही, पृ०सं०–125
8. वही, पृ०सं०–317
9. कालिया, ममता–"ममता कालिया की कहानियाँ", खंड–दो, वाणी प्रकाशन नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण–2006, पृ०सं०–227
10. कालिया, ममता–"ममता कालिया की कहानियाँ", खंड–एक, वाणी प्रकाशन नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण–2005, पृ०सं०–274
11. कालिया, ममता–"बेघर",वाणी प्रकाशन नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण– 1971, पृ०सं०–172
12. कालिया, ममता–"नरक दर नरक", लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण–1975, पृ०सं०–105

श्वेता कुमारी
शोध छात्रा
हिन्दी विभाग
राँची विश्वविद्यालय, राँची।
मो०नं०–9576252859
E-Mail : swetakumari639@gmail.com

संगीत व योग में सम्बन्ध

डॉ. अंजना बंसल

सारांश

मानव जीवन की आवश्यकताओं में पहला सुख निरोगी काया माना जाता है जिस प्रकार संगीत एक उपासना का सेतू माना जाता है उसी प्रकार योग जीवन का मित्र है। संगीत और योग दोनों में नाद का विशेष महत्व है। नाद दो प्रकार का होता है आहत नाद, अनाहत नाद। संगीत का सम्बन्ध आहत नाद से माना जाता है और योग का सम्बन्ध अनाहत नाद से है। आहत नाद जो दो वस्तुओं की रगड़ से उत्पन्न। संगीत में इसी नाद का प्रयोग किया जाता है। अनाहत नाद की उत्पति मानव के मानव शरीर में होती है। इस प्रयोग ध्यान भक्ति व योग के लिए किया जाता है।

एक दूसरे के पूरक :— संगीत व योग सेहत के दो पहलू है संगीत में रियाज के लिए एकाग्रता की आवश्यकता होती है और योग शास्त्र हमारे शरीर को स्वस्थ रखता है। मन व मसिष्टिक की एकाग्रता योग की देन है। योग और संगीत में स्वर्ण मुद्रा की श्रेष्ठता है जिसमें आनन्द और स्वास्थ्य पाया जाता है इस दष्टि से देखा जाए तो दोनों शास्त्र एक दूसरे के पूरक है।

उद्देश्य — संगीत को ईश्वर का दर्जा प्राप्त है इसलिए इस विद्या में शुद्धता और शास्त्रीयता का विशेष महत्व है। सात शुद्ध व पांच कोमल स्वरों के माध्यमों से मन को साधने का उपाय है संगीत। जहॉ योग मनुष्य के शरीर मन व मस्तिष्कि को साधता है वही संगीत हमारी आत्मा को शुद्ध करता है।

संगीत का उद्देश्य केवल मनोरंजन करना नहीं है। मीडिया में बने रहने के लिए कुछ संगीत प्रेमियों को छोड़ दिया जाए तो हर तरह का संगीत अपनी शुद्धता व पवित्रता लिए हुए है। स्वरों का रियाज, शुद्ध पद्धति द्वारा एक दूसरे से जुड़े हुए है क्योंकि दोनों का उद्देश्य एक समान है आत्मा साक्षात्कार। योग और संगीत दोनों ही साधना है संगीत सुनने या गुनगुनाने से आपकी मानसिक स्थिति बेहतर होती है जबकि योग शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य दोनों के लिए लाभकारी है।

21 जून अर्न्तराष्ट्रीय योग दिवस व विश्व संगीत दिवस दोनों मनाए जाते है दोनों मिलकर न केवल मानसिक शांति व सबलता प्रदान करते है बल्कि रोग प्रतिरोधक क्षमता को बेहतर बनाते है। योग और संगीत दोनों साधना ही संगीत सुनने या गुनगुनाने से आपकी मानसिक स्थिति बेहतर होती है जबकि योग शारीरिक व मानसिक स्वास्थय दोनों के लिए लाभकारी है। योग और संगीत एक दूसरे के पूरक है। संगीत और योग के मेल पर 'अनूप जलोंटा' का कहना है — कि कमजोर इंसान गाना नहीं गा सकता है। इसके लिए स्वस्थ शरीर व सासो का साथ देना जरूरी है।

कैलाश खेर का कहना है कि संगीत योग ही है। जो पृथ्वी को बचाएंगे। दवाओं से शारीरिक रोग दूर होते है लेकिन मानसिक रोग तो योग से ही दूर होंगे। संगीत एक मजबूत सहारा है सुख की घड़ी हो या दुख की संगीत हमारे जीवन का पूरक रहा हैं

शारीरिक व मानसिक शुद्धता का स्त्रोत :—

संगीत की बात हो और उसमें भक्ति रस का जिक्र न हो ऐसा संभव नहीं। उसके प्रति लगाव कम नहीं होता उसी तरह से योग भी आपके तनाव को दूर करता है। योग व संगीत के खूबसूरत सामंजस्य का उद्देश्य तन के साथ मन की शुद्धता को हासिल करना है। योग में हमे अपना मस्तिष्क एक जगह पर केंद्रित करना होता है। ठीक उसी तरह जैसे संगीत बनाते समय हमें ध्यान लगाना होता हैं योग और संगीत एक साथ चलते है। यह दोनों ही एक संतुलित जीवन और मस्तिष्क के लिए काम आते है।

वेस्ट वर्जीनिया यूनिवर्सिटी की हेल्थ प्रोफैसर किम इंसने ने अपने शोध में कहा है कि जब बात सम्पूर्ण स्वास्थ्य को बेहतर बनाने की हो तो मेडिटेशन और म्यूजिक दोनों समान रूप से कार्य करते है। संगीत सट्रैस हारमोनस के स्तर को कम करता है जबकि योगासन के अर्न्तगत ध्यान और प्राणायाम के जरिए तनाव, ब्लड प्रैशर, दिल की बिमारियों का खतरा कम होता है मन प्रसन्न व निरोगी रहता है। भारतीय शास्त्रीय संगीत की मधुरता तो अतुलनीय है अब कई रोगों के निदान के लिए इसका प्राकृतिक चिकित्सा की तरह प्रयोग किया जा रहा है स्वरों को धीरे—2 साधने की युक्ति, ध्यान, अवस्था सभी क्रियाए किसी योग से कम नहीं बल्कि योग का ही एक अंग है। योग क्रिया व संगीत आज की आधुनिक परिस्थिति का जीता जागता उदाहरण है। कोरोना काल में जिस भी व्यक्ति को कोरोना हुआ या कोरोना से बचने का कोई साधन रहा तो वह था योग व संगीत। योग द्वारा आक्सीजन लैवल को बढ़ाया गया। तथा संगीत द्वारा कोरोना काल के सट्रैस को कम किया गया। निरोगी शरीर व मस्तिष्क हर किसी के लिए आवश्यक है। कई साधक बीमार शरीर के कारण प्रगति नहीं कर पाते है। जिस प्रकार संगीत एक उपासना का तरीका है उसी प्रकार योग शास्त्र जीवन का मित्र है यदि शरीर स्वस्थ रहे तो हम जीवन का आनन्द ले सकते है।

संगीत व योग में समाजस्य

संगीत में स्वरों की शुद्धता पर जोर दिया जाता है योग शास्त्र में आसन व मुद्रअे पर जोर दिया जाता है। दोनों में ही स्वर व मुद्रा की श्रेष्ठता से आन्नद व स्वास्थ्य पाया जाता है संगीत साधना चाहे गायन हो या वादन हो, कलाकार को एक ही मुद्रा में घंटां बैठे रहना पड़ता है। उसी प्रकार से योग में भी एक अवस्था में बैठना आवश्यक है। संगीत में एक ही स्थान पर साधना करने के लिए

शरीर मन व मस्तिष्क पूर्ण स्वस्थ होना चाहिए और इसके लिए योग सर्वेश्रेष्ठ है। योग से शरीर मन मस्तिष्क स्वस्थ रहता है।

संगीत एवं योग का वैज्ञानिक स्वरूपः

विभिन्न वैज्ञानिक प्रयोगों द्वारा यह सिद्ध हो चुका है कि संगीत साधना व योग साधना दोनों से मनुष्य के जीवन में शक्ति का विकास होता है। अतः कहा जा सकता है शरीर व मन को स्वस्थ रखने के लिए योग शास्त्र व संगीत शास्त्र दोनों समान रूप से आवश्यक है। भारत में भी इस प्रकार के प्रयोग हो रहे हैं कि उचित समय उचित राग को एक दिन में 30 मिनट तक गाने से पौधों के बढ़ने में शीघ्रता लाता है। इसका परीक्षण डा. टी.एन. सिंह ने विभिन्न रागों की ध्वनियों का पौधों पर परीक्षण किया। उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि बहार राग को बायलन पर बजाने से पौधों पर प्रभाव पड़ता है। पौधे भी खिल उठते है। उसी प्रकार संगीत लगाकर योग किया जाए तो मनुष्य शारीरिक रूप से स्वस्थ हो जाता है और योग करने में मन लगता है।

संगीत द्वारा योग एक्सरसाइज : योग व संगीत का सम्बन्ध सारी दुनिया मानती है। योग करते समय संगीत के साथ शरीर और आत्मा का जुड़ाव तेजी से होता है संगीत का मनुष्य जीवन पर सीधा प्रभाव पड़ता है ओर मनुष्य में बौद्धिक विकास होता है संगीत व्यकित को प्रत्येक परिस्थिति में संतुलित रखता है योग द्वारा हमारा ध्यान एकाग्रचित होता है इस अर्थ में मन व शरीर दोनों पर प्रभाव पड़ता है मन संगीत की ओर जल्दी आकर्षित हो जाता है और योग द्वारा शरीर अपने आप स्वस्थ रहता है। योग में ध्यान, प्रणायाम, अनुलोम–विलोम, ओम उच्चरण जो संगीत के जरिये आसानी से व आन्नदित होकर किए जा कसते है। रियाज में श्वास का सबसे ज्यादा महत्व है। योग द्वारा सॉस रोकने की शक्ति को बढ़ाकर संगीत के स्वरों पर ठहराव अधिक देर तक किया जा सकता है। प्रो. किरण देशपांडे जो शास्त्रीय गायक और तबला बादक है कहते हैं कि क्लासिकल गायन में ब्रहानाद एक स्थिति होती है जो नाद योग से प्राप्त होती है। नाद योग संगीत की दुनिया की योग क्रिया है। संगीत में कई स्वर नाभि से भी लगाए जाते है इन स्वरों को लगाने से नाभि पर जो असर पड़ता है उससे सच्चा स्वर निकलता है। इस प्रक्रिया में कलापभाति योग क्रिया का बहुत महत्व है ओकार की साधना के लिए नाभि से स्वर निकालना कपालभाति की तरह योग करना ही है। सॉस रोकने की शक्ति से ऑक्सीजन लैवल तो बढ़ता ही है साथ ही साथ स्वरों पर ठहराव भी किया जा सकता है। योग का उद्देश्य एकाग्रता है संगीत के माध्यम से भी यही एकाग्रता प्राप्त होती है।

निष्कर्षः

सारा विश्व आज योग दिवस व संगीत दिवस को अपने–2 तरीके से मना रहा है। कोरोना संकट के समय यह एक सबसे जरूरी कदम है कि खुद को कैसे स्वस्थ रखा जाए। जिस तरह दुनिया में आपादा जनक स्थिति है उससे कैसे छुटकारा पाया जाए। संगीत के स्वरों का रियज करने से शरीर की तंत्रियों का योग हो जाता है। इसलिए योग को जीवन में उतारना हर किसी के लिए हितकर होगा।

संदर्भ सूचि

1. भारतीय संगीत का इतिहास – उमेश जोशी
2. यू–टूयूब
3. इंटरनेट
4. स्वयं के विचार

डॉ0 अंजना बंसल
Associate Professor
विभागाध्यक्ष संगीत विभाग (वादन)
वैश्य महिला महाविद्यालय, रोहतक
M-9896051605
Email:anjanabansal05@gmail.com

वर्तमान शैक्षिक स्थिति का अध्ययनः भारतीय प्राथमिक शिक्षा के संदर्भ में

डॉ0 प्रताप सिंह राना, नसरीन फातिमा

सारांश

किसी भी राष्ट्र का आर्थिक विकास उस राष्ट्र में उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों के साथ–साथ मानवीय संसाधनों निर्भर करता है। मानव संसाधन प्रकृति की एक सर्वोत्तम रचना है। शिक्षा के द्वारा मानव में ऐसी योग्यता एवं क्षमता का विकास होता है, जिससे वह उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों का अनुकूतम स्तर पर उपयोग करने में सक्षम होता है। मनीषियों का मानना है कि शिक्षारूपी भवन के निर्माण के लिए उत्तम संस्कारों का सुदृढ़ चारित्रिक आधार आवश्यक है।

शिक्षा व्यक्ति और समाज का बुनियादी आधार है। अपने औपचारिक और अनौपचारिक रूप में शिक्षा विकास की एक सतत प्रक्रिया है, जो व्यक्ति, समाज और संस्थाओं को स्वरूप प्रदान करती है। अनौपचारिक शिक्षा का कोई निश्चित स्वरुप नहीं होता, वह संस्थानिक ढांचे से मुक्त होती हैं, पर औपचारिक शिक्षा का अपना एक संस्थानिक स्वरूप होता है। अपनी दोनों ही रूपों में शिक्षा समाज से प्रभावित होती है और समाज को प्रभावित भी सकती है। शिक्षा की शक्ति अद्‌भुत है, वह बदलाव का साधन है और सांस्कृतिक विरासत में संरक्षण की प्रेरणा भी है। यदि शिक्षा बदलाव का माध्यम नहीं बनेगी तथा समाज में विकास की विवेचनात्मक सोच और दृष्टि विकसित नहीं करेगी, तो वह अपनी सामाजिक उपयोगिता खो देगी। साथ ही यदि शिक्षा, ज्ञान, सांस्कृतिक विरासत और धरोहरों को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक नहीं पहुंचाएगी, तो समाज अपनी जड़ों से कट जाएगा तथा उसकी इतिहास की समझ और सभ्यता का बोध समाप्त हो जाएगा। प्रस्तुत शोध पत्र 'वर्तमान शैक्षिक स्थिति का अध्ययन :भारतीय प्राथमिक शिक्षा के संदर्भ में'प्रस्तुत किया गया है।

शब्द संकेत–

प्राथमिक शिक्षा एवं उसकी वर्तमान स्थिति, N.C.E.R.T., भारतीय संविधान।

प्रस्तावना–

शिक्षा मानव विकास सूचकांक का एक प्रमुख कारक है। शिक्षा के माध्यम से ही मनुष्य अपना सर्वांगीण विकास करने में सफल हो सकता है। भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात से ही राष्ट्रीय सरकारों ने मानव विकास के सूचकांकों में अपनी स्थिति को सुधारने हेतु विभिन्न प्रकार की योजनाओं को आरंभ किया जिनके माध्यम से गरीबी, कुपोषण एवं अशिक्षा जैसी गंभीर समस्याओं को दूर करने के प्रयास किए गए। इन प्रयासों के दौरान यह बात स्पष्ट रुप से सामने आयी कि मानव विकास सूचकांक के अधिकतम संकेत में शिक्षा की भूमिका अत्यंत प्रभावशाली है। शिक्षा के माध्यम से ही समाज के हर क्षेत्र में जागरुकता बढ़ाई जा सकती है जिसका स्पष्ट प्रभाव हमें यहां व्याप्त सामाजिक समस्याओं को दूर करने में प्राप्त हो सकेगा। विद्यालीय शिक्षा समाज के सर्वांगीण विकास के लिए अत्यधिक आवश्यक है। प्राथमिक शिक्षा के रूप में यह शिक्षा जहां समाज को निरक्षरता से साक्षरता की ओर बढ़ाती है वहीं दूसरी ओर माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक शिक्षा छात्रों में समाज के प्रत्येक पहलू को गंभीरता से समझने का अवसर देती है एवं उन्हें आने वाले समय में रोजगार चयन की कठिन प्रक्रिया को सुलझाने की ओर अग्रसर करती है। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि मानव विकास के प्रभावी निष्पादन शिक्षा एक अनिवार्य तत्व है।

शिक्षा का तात्पर्य केवल सीखना, ज्ञान प्राप्त करना या विद्या ग्रहण करना ही नहीं है। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने शिक्षा को परिभाषित करते हुए लिखा है कि'शिक्षा से मेरा अभिप्राय बालक एवं मनुष्य के शरीर, मस्तिष्क एवं आत्मा के सर्वांगीण एवं सर्वोत्तम अंश की अभिव्यक्ति से है।'

'शिक्षा जन्म से प्रारंभ होकर मृत्यु तक चलने वाली एक सतत प्रक्रिया है।'बालक के जन्म लेने से पूर्व और जन्म के काल के बाद भी सीखने की प्रक्रिया परिवार में मां के आंचल से ही प्रारंभ हो जाती है, तत्पश्चात परिवार, पास –पड़ोस, मित्र एवं समाज की विभिन्न संस्थाओं से बालक के शैक्षिक ज्ञान में अभिवृद्धि होती है।

सत्रहवीं शताब्दी में अंग्रेजों का हमारे देश में आगमन हुआ। इससे पहले भारतीय शिक्षा प्रणाली मूल्यों, नैतिकता तथा धार्मिकता पर आधारित थी। प्रायः सभी कालों में शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य मोक्ष एवं आध्यात्मिकता की प्राप्ति था।

प्राचीन काल के विद्वानों ने सामाजिक, राजनैतिक व आर्थिक जीवन के मूलभूत सिद्धांतों को एक व्यापक प्रणाली के रूप में प्रस्तुत किया और इसे धर्म की संज्ञा दी। इसलिए प्राचीन काल में शिक्षा भी धर्म से ही निर्देशित होती थी। धर्म ने ही भारत में साहित्य को जन्म दिया तथा धर्म ने ही शिक्षा का स्वरुप निर्धारित किया था। वास्तव में प्राचीन भारतीय शिक्षा भी धर्म की ही देन है। वेदों को भारतीय जीवन दर्शन का स्रोत माना जाता है। वैदिक काल में शिक्षा दो भागों में विभक्त थी–परा और अपरा। इसमें से परा विद्या अर्थात अलौकिक विद्या को अपरा विद्या से श्रेष्ठ समझा जाता था। वैदिक कालीन शिक्षा के प्रमुख उद्देश्य इस प्रकार निर्धारित थे कि व्यक्ति जीवन के सर्वोच्च लक्ष्य मोक्ष की प्राप्ति कर सकती। वैदिक कालीन शिक्षा के प्रमुख उद्देश्य नैतिक चरित्र का विकास, पवित्रता एवं धार्मिकता का विकास, मनुष्य में विभिन्न जीवन मूल्यों का विकास आदि मनुष्य को धार्मिकता एवं आध्यात्मिकता की ओर प्रेरित करते थे। बौद्ध कालीन शिक्षा में आध्यात्मिकता पर जोर न देकर नैतिकता पर अधिक बल दिया गया था। बौद्ध कालीन शिक्षा की भांति ही मुस्लिम कालीन शिक्षा भी धार्मिकता पर आधारित थी। इस्लाम धर्म के अनुयायी भी ज्ञान को निजात (मुक्ति) प्राप्त करने का साधन मानते थे।

इसके पश्चात भारत में सन् 1600 ई० ईस्ट इंडिया कंपनी की स्थापना हुई। शुरू में इसका उद्देश्य व्यापार करना था किंतु 1757 में प्लासी का युद्ध एवं 1765 में बक्सर के युद्ध के पश्चात् ईस्ट इंडिया

कंपनी ने राजनैतिक रूप धारण कर लिया। अपनी राजनैतिक सत्ता को स्थायी बनाने के लिए कंपनी ने अपना ध्यान भारतीय शिक्षा की ओर आकर्षित किया। कंपनी ने ईसाई मिशनरियों को भारत बुलाया और उन्हें शिक्षण संस्थाएं खोलने के लिए प्रोत्साहित किया, जिससे भारतीयों में ईसाई धर्म का प्रचार हो सके। 1792 में चार्ल्स ग्राण्ट ने भारतियों के लिए शिक्षा –प्रसार की आवश्यकता को जोरदार ढंग से प्रतिपादित किया।

उसकी धारणा थी कि अंग्रेजी साहित्य तथा विज्ञान की शिक्षा प्राप्त करने से उपरांत भारतियों की पुरानी विचारधारा में परिवर्तन आएगा और वे सरलता से ईसाई धर्म के अनुयायी बन जायेंगे। 1835 में लॉर्ड मैंकाले ने अरबी–फारसी एवं संस्कृत साहित्य की अवहेलना करते हुए एवं अंग्रेजी साहित्य को उत्कृष्ट बताते हुए उसने कहा कि एक अच्छे यूरोपीय पुस्तकालय की एक अलमारी का साहित्य भारत व अरब के संपूर्ण साहित्य के समान महत्व रखता है।

भारतीयों को अंग्रेजी भाषा के माध्यम से शिक्षित करने का समर्थन करते हुए उसने कहा कि–"हमें एक ऐसे वर्ग को बनाने का प्रयास करना चाहिए जो हमारे एवं हमारे द्वारा शासित लाखों लोगों के बीच दुभाषिए का काम कर सके तथा जो रंग व रूप में भारतीय हों परंतु रुचि, विचार, आदर्श, एवं बुद्धि में अंग्रेज हों। इससे अंग्रेजों ने मन, मस्तिष्क एवं दोहा से भारतीयों को अंग्रेज बना दिया और उन्हें उस शिक्षा से दूर कर दिया जो उन्हें मूल्य ईश्वराधीन एवं नैतिकता आदि तत्वों से जोड़े रखती थी।

N.C.E.R.T. ने SOCIAL, MORAL AND SPIRITUAL VALUES–नामक एक पुस्तिका प्रकाशित की जिसमें 83 मूल्यों की एक सूची दी गयी है, जिनके आधार पर सामाजिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों की चर्चा की गयी है। वे मूल्य निम्नलिखित हैं–दूसरों के सांस्कृतिक मूल्यों की सराहना, सार्वभौमिक प्रेम, एकात्मकता, अस्पृश्यता विरोध, सत्य, समाज सेवा, नागरिकता, सहिष्णुता, चिंतन, दूसरों की चिंता, सत्यता, आत्मनिर्भरता, दूसरों का ध्यान, न्याय, स्वाध्याय, दल–कार्य, मानवतावाद, स्वसमर्थन, समय की पाबंदी, सहायता, आत्मविश्वास, दल–भावना, ईमानदारी, स्व–सम्मान, पृच्छाभाव, कृतज्ञता, स्व–सहायता, धर्मनिरपेक्षता, सज्जनता, स्वानुशासन, सहानुभूति, दूरदर्शिता, सामाजिक न्याय, समाजवाद, स्वतंत्रता, सादा जीवन, देश भक्ति, वफादारी, वृद्धावस्था का सम्मान, शांति, मित्रता, दूसरों का सम्मान, अहिंसा, समानता, नियमितता, राष्ट्रीय चेतना, सहनशीलता, साधन सम्पन्नता, नेतृत्व, अनुशासन, आत्म–नियंत्रण, राष्ट्रीय एकता, धर्म, निष्कपटता, धर्म –परायणता, जिज्ञासा, शुचिता, दया, साहस, स्वास्थ्यकर जीवन, दयालुता, स्वच्छता, भक्ति, पहल, सामाजिक उत्तरदायित्व का भाव, शिष्टाचार, राष्ट्रीय जन संपत्ति का महत्व, अच्छे –बुरे में भेद, सामान्य लक्ष्य, करुणा, संयम, ज्ञान की खोज, समय का सदुपयोग, आज्ञा पालन, राष्ट्रीय समाकलन, साथी भावना, अच्छा आचरण, शारीरिक कार्य का सम्मान, व्यक्ति का महत्ता, प्रजातांत्रिक निर्णय लेना, सहयोग, सामान्य अच्छाई, अखण्डता, N.C.E.R.T. के इन 83 मूल्यों को पांच भागों में बांटा गया है–

1–सदाचार –28
2–सत्य–8
3–शांति–12
4–प्रेम–8
5–अहिंसा–27

गांधीवादियों का तर्क है कि वर्तमान भारत में सर्वाधिक प्रभाव महात्मा गांधी का है। उनकी दृष्टि से भारत में गांधीजी द्वारा प्रतिपादित एकादश व्रत–1–सत्य, 2–अहिंसा, 3–अस्तेय, 4–अपरिग्रह, 5–ब्रहमचर्य, 6–अस्वाद, 7–अभय, 8–अस्पृश्यता निवारण, 9–कायिकश्रम, 10–सर्व धर्म समभाव और, 11–विनम्रता को ही मूल्यों के रूप में शिक्षा दी जानी चाहिए।

अध्ययन के उद्देश्य–

प्रस्तुत शोध पत्र के अध्यन के उद्देश्य प्रमुख हैं–

1–वर्तमान प्रारंभिक शिक्षा पाठ्यक्रम के अंतर्गत मूल्य आधारित आध्यात्मिक शिक्षा के अंशों का ध्यान करना।

2–वर्तमान शैक्षिक स्थिति का प्राथमिक शिक्षा के संदर्भ में अध्ययन करना।

3–प्राथमिक शिक्षा में मूल्य– आधारित, आध्यात्मिक शिक्षा प्राप्त कर रहे छात्रों पर होने वाले प्रभाव का अध्ययन करना।

4–ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड के अनुसार प्रत्येक विद्यालय में एक कक्षा में एक शिक्षक अनुपात से शिक्षक की नियुक्ति की बात कही गई साथ ही साथ जहां पर यह सम्भव न हो वहां कक्षा शिक्षक की व्यवस्था की जाए का अध्ययन करना।

प्राथमिक शिक्षा एवं उसकी वर्तमान स्थिति–

संपूर्ण विश्व में प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य बनाने का प्रचलन 19वीं शताब्दी के मध्य से ही प्रारंभ हो गया था। सर्वप्रथम इस दिशा में सफल प्रयास 1842में स्वीडन में हुआ। इसके बाद यह कार्य 1852 में संयुक्त राज अमेरिका ने किया। नार्वे ने 1860 में प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य किया। इंग्लैंड ने इसके बाद 1870में यह कार्य किया। यूरोप के कुछ छोटे–छोटे देशों जैसे हंगरी, पुर्तगाल, स्विट्ज़रलैंड ने 1905में प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य किया। रूस ने भी लाल क्रांति के बाद प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य कर दिया था। इस समस्त देशों में प्रायः 7–14 वर्ष तक के बच्चे अनिवार्य रूप से शिक्षा प्राप्त करते हैं।

अगर वर्तमान शैक्षिक स्थिति का अध्ययन भारतीय प्राथमिक शिक्षा के संदर्भ में किया जाए तो भारतवर्ष में अनिवार्य शिक्षा की दिशा में सर्वप्रथम प्रयास बड़ौदा नरेश महाराजा सयाजी राव गायकवाड़ ने 1892 में किया। इसके बाद बिट्ठन भाई पटेल के प्रयासों से 1917 में पटेल कानून के अंतर्गत मुंबई नगर निगम क्षेत्र में प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य किया गया। इसके पश्चात तो कई राज्यों में कार्य प्रारंभ कर दिया गया परंतु इस क्षेत्र में कोई विशेष प्रगति नहीं हुई। N.C.R.T. नई दिल्ली के 6वें सर्वेक्षण 1996 के अनुसार देश में केवल 50 प्रतिशत क्षेत्रों में जिसमें 73 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती थी, जिनमें प्राथमिक विद्यालय थे इनमें से अधिकांश में वे न्यूनतम सुविधाएं उपलब्ध नहीं थीं जो कि शिक्षा प्राप्त करने के लिए आवश्यक समझी जाती थीं।

शिक्षा ही राष्ट्र प्रगति एवं कल्याण का माध्यम हो सकती है। देश व समाज का हित जितना शिक्षा से हो सकता है उतना किसी अन्य स्रोत से नहीं हो सकता है। भारत में राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली का विकास करने के लिए शिक्षा के संपूर्ण क्षेत्र की जांच की जानी आवश्यक है क्योंकि शिक्षा प्रणाली के सभी अंग एक दूसरे पर प्रभाव डालते हैं।

वर्तमान में वैज्ञानिक युग की असामान्य परिस्थितियों में हमारे देश को एक ऐसी शिक्षा की आवश्यकता है जो प्रजातंत्र और समाजवाद के विकास में सहायक हो। इसे कोठारी आयोग ने भी स्वीकार किया है "राष्ट्रीय विकास के नवीन युग के साथ प्रजातंत्र पर निर्मित स्वाधीनता केवल प्रशासन की प्रणाली मात्र ही नहीं बल्कि जीवन की एक प्रणाली है। लोगों को समुचित जीवन स्तर प्रदान करना तथा निर्धनता दूर करना इनका संकल्प है।

भारत सरकार ने 1986 में शिक्षा की चुनौती के नाम से नई शिक्षा नीति की घोषणा की। इस नीति में प्राथमिक शिक्षा को प्रथम वरीयता देते हुए 14 वर्ष तक की आयु के सभी बच्चों के सार्वजनिक नामांकन व नियमित शिक्षा प्राप्ति तथा शिक्षा की गुणवत्ता में पर्याप्त सुधार पर बल दिया गया। जिसके लिए अनेक प्रकार की सुविधाएं जैसे बच्चों को अपनी गति से पढ़ने का अवसर, पूरक उपचारात्मक अनुदेशन व बच्चों को किसी भी एक कक्षा में एक से अधिक वर्ष तक न रोका जाना तथा बच्चों की सुविधानुसार विद्यालय समय व छुट्टियों का निर्धारण राधे दिए जाने की सुविधा प्रदान करने की व्यवस्था है। विद्यालयों में बड़े–बड़े हवादार प्रकाशयुक्त कक्ष, खिलौने, श्यामपट्ट,मानचित्र, चार्ट एवं अन्य अधिगम सामग्री तथा प्राकृतिक सुंदर मनोहारी वातावरण की व्यवस्था होनी चाहिए।

ऑपरेशन ब्लैकबोर्ड के अनुसार प्रत्येक विद्यालय में एक कक्षा में एक शिक्षक के अनुपात से शिक्षक की नियुक्ति की बात कही गयी साथ ही साथ जहां पर यह सम्भव न हो वहां कक्षा शिक्षक की व्यवस्था की जाए। इस हेतु मॉनीटर प्रणाली पुनः विकसित की जाए। कामगार बच्चों तथा मध्य में विद्यालय छोड़ने वाले बच्चों के लिए निरौपचारिक का व्यापक व क्रमबद्ध कार्यक्रम प्रारंभ हो जाने से शिक्षा में अपव्यय और अवरोधन की समस्या समाप्त हो सकती है और प्राथमिक शिक्षा का विकास सुनियोजित ढंग से प्रारंभ हो सकता है।

"भारतीय संविधान में वर्णित यह तथ्य कि 6–14 वर्ष के विद्यार्थियों की शिक्षा अनिवार्य रूप से हो सके। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात निरंतर इस हेतु प्रयास हो रहा है, परंतु दुर्भाग्य है कि इस लक्ष्य को हम आज तक नहीं प्राप्त कर सके। इसके साथ ही यह कि सुनिश्चित हो कि सन 1990 तक 11 वर्ष की आयु के सभी बच्चे पांच वर्ष की विद्यालयी शिक्षा प्राप्त कर सकें तथा 1995 तक 14 वर्ष के बालकों को निः शुल्क व अनिवार्य शिक्षा उपलब्ध करा दी जाए। पूर्व प्रधानमंत्री स्वर्गीय राजीव गांधी द्वारा क्रियान्वित की गती राष्ट्रीय शिक्षा नीति अपने अंतिम लक्ष्य को नहीं प्राप्त कर सकी।

भारतीय शिक्षा व्यवस्था में प्राथमिक शिक्षा का महत्वपूर्ण स्थान है जो शिक्षा व्यवस्था का प्रथम सोपान है। इसे शिक्षा की बुनियाद भी कहा जा सकता है। प्राथमिक शिक्षा समाप्त करने के पश्चात विद्यार्थी माध्यमिक शिक्षा में प्रवेश करते हैं। भारत के भाग्य का निर्माण इन्हीं कक्षाओं में होता है। विज्ञान, कला और शिल्प पर आधारित इस दुनिया में शिक्षा ही लोगों की खुशहाली, कल्याण और सुरक्षा के स्तर निर्धारित करती है। किंतु देखने में प्रायः यह आता है कि इस समय प्राथमिक शिक्षा का स्तर दिनों दिन गिरता जा रहा है। प्राथमिक शिक्षा की बुनियादी सुविधा का भी अभाव है, जिससे प्राथमिक विद्यालय आज अप्रासंगिक हो जाने के कारण विद्वानों ने बच्चों की शिक्षा हेतु नर्सरी विद्यालय की स्थापना पर विशेष बल दिया है।

राष्ट्रीय जीवन के साथ जितना घनिष्ठ संबंध प्राथमिक शिक्षा का है उतना माध्यमिक या उच्च शिक्षा का नहीं। जनसाधारण की शिक्षा ही राष्ट्रीय प्रगति का मूल आधार है।

वर्तमान लोकतंत्रीय व्यवस्था में संपूर्ण देश में शिक्षा के प्रथम स्तर की शिक्षा प्राप्ति के लिए प्राथमिक विद्यालयों की स्थापना की गई है। जहां कक्षा 1–8 तक की शिक्षा प्रदान की जाती है। इसके लिए निशित अनुपात में विद्यालय भवन एवं उपकरणों के साथ विद्यार्थी और शिक्षकों की सुनिश्चित व्यवस्था की गई हैं। इन प्राथमिक विद्यालयों में आवश्यकतानुसार क्रमशः पाठ्यक्रम के अनुरुप योग्य शिक्षकों की नियुक्ति की व्यवस्था है। शासन की ओर से आवश्यक वित्तीय सहायता एवं अन्य सुविधाएं मुहैया करायी जाती हैं। फिर भी समूचे प्रांत में प्राथमिक विद्यालयों से वांछित परिणाम प्राप्त नहीं हो पा रहे हैं। यही कारण है कि आधुनिक परिवेश में लोगों का झुकाव प्राथमिक विद्यालयों से कम होता जा रहा है परिणामस्वरुप विकास के इस युग में साथ में विद्यालयों की अनेक नवीन एवं परिष्कृत प्रथा प्रचलित हो रही है आज पूरे देश में प्राथमिक शिक्षा के लिए विभिन्न प्रकार के संस्थाएं शिक्षा प्रदान कर रही हैं, जिनका विभाजन दो रूपों में किया गया है–1–शासन द्वारा संचालित परिषदीय प्राथमिक स्कूल, 2–व्यक्तिगत संगठन द्वारा संचालित प्राथमिक स्कूल।

प्रत्येक बालक आत्म–परिष्कार का सबसे सशक्त साधन विद्यालयी वातावरण ही होता है क्योंकि व्यक्ति के विकास में बचपन से किशोरावस्था और तरुण होने तक तीन प्रकार की अंतः प्रेरणाएं कार्य करती हैं–1–स्वतंत्रता, 2–उत्तेजना, 3–जीवन दर्शन का निरुपण। इसने भी स्वतंत्रता की सबसे महत्वपूर्ण भूमिका होती है।जिसका वास्तविक सदुपयोग ही बालक को एक पूर्ण व्यक्ति बना सकता है।एक बालक के लिए यह कार्य उसके अपने पारिवारिक वातावरण और प्राथमिक शिक्षा संस्थान के माध्यम से ही पूर्ण हो सकता है।

वर्तमान समय में किसी भी राष्ट्र के जीवन व उसके अस्तित्व के लिए उसे एक निश्चित भू–भाग, विशाल जनसमूह, स्वशासन तथा स्वयं की भाषा संस्कृति आदि अनेक तत्वों की आवश्यकता होती है, परंतु इन सबके बावजूद भी विश्व में उसकी पहचान सबसे बढ़कर उनके अपने चरित्र के आधार पर ही की जा सकती है उसका नैतिक चरित्र जितना उदार, उच्च आदर्शोन्मुख, व्यापक और शिक्षा परक होगा, विश्व या मानव समाज राष्ट्रीय समूहों के मध्य वह उतना ही प्रतिष्ठित अनुकारणी और समृद्धि माना जाएगा। अतः उत्तम राष्ट्रीय चरित्र का विकास हर प्रकार से जागरुक रह कर किया जाना चाहिए। वर्तमान परिदृश्य में इस पावन कार्य की पूर्ति शिक्षा के प्रथम स्तर की शिक्षण संस्थाओं से ही संभव हो सकती है क्योंकि प्राथमिक स्तर पर

विद्यार्थियों में जिस चरित्र की भावना विकसित हो जाएगी वह आजीवन वर्धित होती रहेगी।

निष्कर्ष –

भारत के संदर्भ में जो कुछ भी देश में श्रेष्ठ है उसके प्रति श्रद्धावान, आस्थावान बन जाएं, राष्ट्रीय गौरव और प्रतिष्ठा के लिए सर्वथा सजग हो जाएं प्राथमिक विद्यालयों के माध्यम से शिक्षा की नींव देते समय आदर्श, चारित्रिक मूल्यों, कर्मठता, ईमानदारी, दृढ़ संकल्प, धर्मनिरपेक्षता, त्याग, सहिष्णुता, लोकतंत्रिकता, राष्ट्रीय एकता, सामाजिकता, राष्ट्र के प्रति सजकता, शिक्षा प्रसार में निष्ठा, राष्ट्रीय संस्कृति एवं भारतीय जीवन दर्शन में आस्था एवं विश्वास, मातृभाषा से प्रति अनुराग आदि गुणों के प्रति विद्यार्थियों को जागरुक करना। प्राथमिक स्तर पर विद्यार्थियों का मन ,मस्तिष्क, कोमल एवं सद– प्रवृति वाला होता है। अतः किसी भी प्रकार के शिक्षा इस स्तर पर अधिक प्रभावशाली हो सकती है। जिस प्रकार मकान बनाते समय उसकी नींव को महत्व दिया जाता है। क्योंकि जितनी अधिक नींव की मजबूती होगी, उतना ही मकान मजबूत होगा। उसी प्रकार शिक्षा ग्रहण करने में प्राथमिक शिक्षा की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। वर्तमान शैक्षिक स्थिति का अध्ययन भारतीय प्राथमिक शिक्षा के संदर्भ में औपचारिक शिक्षा व्यवस्था की प्रथम चरण को प्राथमिक शिक्षा कहा जाता है। प्राथमिक स्तर पर विद्यार्थी किसी शिक्षा संस्थान में नियमित रुप से विद्या अध्ययन आरंभ कर देता है सामान्यतः कक्षा एक से कक्षा पांच तक की शिक्षा को प्राथमिक शिक्षा की संज्ञा दी जाती है।

संदर्भ ग्रंथ–

1–डॉ० अमरनाथः प्रकाशित लेख,'प्राथमिक शिक्षा का भयावह परिदृष्य "दैनिक जागरण 13 दिसंबर 1998 (साप्ताहिक)

2–एजूकेशन एंड नेशनल डेवलपमेंट रिपोर्ट ऑफ द एजूकेशन कमीशन, एन.सी.ईआर.टी.1971 पृष्ठ–168

3–डॉ ० रामशकल पाण्डेय –भारतीय शिक्षा और शिक्षा नीति, पृष्ठ 86

4–जी०एस०डी०(प्रारंभिक शिक्षा पृष्ठ–1)

5–प्रो० रमन बिहारी लालः भारतीय शिक्षा और उसकी समस्याएं, रस्तोगी पब्लिकेशन मेरठ, 2005–06 पृष्ठ–सं०02

6–जी०ओ०आई०(1986), राशि शिक्षा नीति 1986 मानव संसाधन विकास मंत्रालय भारत सरकार, नई दिल्ली

डॉ0 प्रताप सिंह राना

शोध निर्देशक

नसरीन फातिमा

शोधछात्रा

सोशल मीडिया की खबरों की प्रमाणिकता जांचना

Dr. Annu

सारांश

सोशल मीडिया वह माध्यम है जिसने सूचनाओं की पहुंच आम लोगों तक कर दीहै ।व्हाट्सएप,यूट्यूब,ट्विटरआदि सोशल मीडिया के वे माध्यम है जिनका प्रयोग लगातार बढ़ता जा रहा है। हर आयु वर्ग,क्षेत्र और लिंग के लोग इसका प्रयोग कर रहे हैं परंतु प्रश्न है कि इनका प्रयोग किस तरह से हो रहा हैक्योंकि गलत प्रयोग की वजह से अनजाने में ही एक आम आदमी साइबर क्राइममें लिप्त हो जाता है या उसका शिकार हो जाता हैऔर इसके प्रति अब भारतीय सरकार काफी सख्त हो चुकी है।न केवल केंद्र सरकार बल्कि राज्य सरकार भी अपनी वेबसाइट पर इस संदर्भ में जानकारी उपलब्ध करा रहे हैं। छत्तीसगढ़ सरकार की वेबसाइट पर ऐसी कई महत्वपूर्ण सूचनाएं अंकित हैं ताकि लोगों में जागृति आए और वे सोशल मीडिया का प्रयोग सोच समझकर कर सके।किन बातों को ध्यान में रखकर सोशल मीडिया पर आई खबरों को जांचा जा सकता है इसे इस पेपर में स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है, साथ ही कुछ वेबसाइट का भी वर्णन इसके अंतर्गत किया गया है जहां पर आप किसी खबर की प्रमाणिकता को जाँच सकते हैं।

क्रियाविधि

इस पेपर में विभिन्न स्त्रोतों से जानकारी एकत्रित की गई है ताकि विषय को स्पष्ट किया जा सके। प्राथमिक और द्वितीयकदोनों स्रोतों का प्रयोग किया गया है। कुछ अध्ययनों का भी इस पेपर के अंतर्गत वर्णन किया गया है ताकि फर्जी खबरों की जाँच संभव हो सके ।वर्णनात्मक और विश्लेषणात्मक पद्धति का प्रयोग करके विषय को स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है ।

कीवर्ड्स

सोशल मीडिया,फर्जी खबर, खबरों की प्रमाणिकता, साइबर क्राइम ।

भूमिका

सोशल साइटस के बढ़ते प्रयोग और इसके साथ–साथ इस क्षेत्र में बढ़ते अपराध की वजह से सोशल मीडिया के प्रयोग की सही जानकारी होना बहुत आवश्यक है। जब भी कोई व्यक्ति इस माध्यम से किसी संदेश या खबर को पढ़ता है तो उसे साझा करने से पहले उसे सतर्क रहना चाहिए। यह सतर्कता तभी आ सकती है जब आपको इस बात की जानकारी हो कि आप किसी संदेश या खबर की प्रमाणिकता कैसे जांच सकते हैं। उपयोगकर्ता अपने विवेक के आधार पर किसी तथ्य तक आसानी से पहुंच सकता है,परंतु उसे जल्दबाजी करने से बचना होगा।

इस संदर्भ में जानकारी

1. अफवाहों को पहचाने

हर रोज सोशल मीडिया पर बहुत सी अफवाहें आती रहती हैं । जिनमें किसी खबर को तोड़ मरोड़ कर पेश किया जाता है। फोटो एडिटिंग के माध्यम से खबर को असली खबर की तरह पेश किया जाता है जैसे किसी फिल्मी अदाकारा के विवाह संबंधी खबर या किसी प्रसिद्ध व्यक्ति की मृत्यु संबंधी ख़बरें। इन खबरों पर विश्वास करने से पहले जांच करना आवश्यक है। बिना जांच किए ऐसी खबरों को साझा नहीं करना चाहिए।

2. नकारात्मक खबरों या संदेशों के प्रति सावधान

नफरत फैलाने का कार्य सोशल मीडिया के माध्यम से खुलकर हो रहा है। उत्तर प्रदेश में भदोही में कथित रूप से एक मुस्लिम द्वारा स्वामी विवेकानन्द की प्रतिमा का सिर धड़ से अलग करने की खबर दी गई। जिसकी सच्चाई का बाद में पता चला जब इस खबर का खंडन करते हुए भदोही पुलिस ने बताया कि आरोपी को 26 अक्टूबर 2017 को दोपहर 12रू55 पर गिरफ्तार कर लिया गया है और उसका नाम प्रेमचंद गौतम है जबकि यह खबर सांप्रदायिक दंगे का कारण भी बन सकती थी।

3.शीर्षक को ध्यान से पढ़ें

फर्जी खबर में शीर्षक को लुभावना बनाकर पेश किया जाता है। ऐसे शब्दों का प्रयोग किया जाता है जो लोगों को आकर्षित करें। इन खबरों में विषय को बढ़ा–चढ़ा कर पेश किया जाता है और ऐसे दावे किए जाते हैं जो संभव नहीं होते।

4. वेबसाइट यू०आर०एल ध्यान से पढ़ें

झूठी खबरों से संबंधित यू०आर०एल, खबरों से जुड़े प्रसिद्ध पोर्टल की कॉपी होते हैं। इसमें थोड़ा बहुत परिवर्तन किया जाता है ताकि आम उपयोगकर्ता पहचान न सके। उसे लगे कि वह विश्वसनीय खबरों की साइट पर खबरें पढ़ रहा है परंतु उपयोगकर्ता की जागरूकता उसको कुचक्र से बचा सकती है। आप वास्तविक साइट पर जाकर खबर की सच्चाई जान सकते हैं

5. खबरों के स्रोतों की खोज

हम यह जाने बिना की खबर या संदेश कहां से आया है साझा कर देते हैं जो कि सही नहीं है अगर खबर किसी प्रतिष्ठित स्रोत के माध्यम से आई है तो उसके सच होने की ज्यादा संभावनाएं हैं जबकि अगर खबर का माध्यम अनजान या नया है तो ऐसे में उसकी प्रमाणिकता जाने बिना उसे साझा नहीं करना चाहिए।

6. खबर के चित्र या तारीख की जांच करें

बहुत बार पुरानी खबरों को वर्तमान में घटी घटना से जोड़कर इस तरह से पेश किया जाता है कि वह ताजा खबर लगती है जबकि वह बहुत पुरानी खबर होती है जैसे स्कूलों की छुट्टियों को लेकर इसी तरह की खबरें आती रहती हैं जो गलत सूचनाएं उपयोगकर्ता तक पहुंचाती हैं।

7. विषय के गठन पर ध्यान दें

झूठी खबरों वाली साइट दिखने में काफी आकर्षक होती हैं उनके फांट में विभिन्न गलतियां होती हैं क्योंकि वह आवेश में खबरों को प्रचारित करते हैं। इनकी सही ढंग से जांच परख नहीं की जाती है। अतः आप इससे भी इन्हें पहचान सकते हैं।

8. अन्य साइटस पर भी जांच करें

जिस खबर पर आपको संदेह हो उस खबर को दूसरी साइट पर भी जरूर जांच लेना चाहिए । अगर वहां पर भी वैसे ही खबर है तो खबर के सच होने की संभावनाएं काफी अधिक हो जाती हैं अन्यथा यह झूठी खबर भी हो सकती है। सच्चाई जानने का यह भी एक अच्छा ढंग हैद्य ।

9.अनावश्यक खबरों को साझान करें

सोशल मीडिया पर कई बार हम ऐसी खबरों या संदेशों को देखते हैं जिनका कोई औचित्य नहीं होता उदाहरण के लिए "इस खबर को आगे साझा करोगे तो आपको धन की प्राप्ति होगी या अच्छी खबर मिलेगी" आदि द्य ऐसी खबरों या संदेशों को साझा करने से बचें। ऐसे संदेश जो स्थिति को गंभीर बनाकर पेश करते हैं, उन्हें भी परिचितों को साझा करने से बचे क्योंकि सभी का समय अमूल्य है।

इसके साथ–साथ प्रमाणिकता जांच करने के लिए कुछ साइटस का प्रयोग करके भी आप संदेशों की सच्चाई का पता लगा सकते हैं

1 इंडिया टुडे एंटी फेक न्यूजवॉर रूम ।ध्।

2 ीजजचेरूध्ध्ंदसलजपबेपदकपंुंह

3 थ्ंबजबीमबा ध् पदजवकंल.बवउ,ीजे ।चच दव 7370007000

4 प्रेस इंफॉर्मेशनब्यूरो फैक्ट चेक(च्प्ठ बिज बीमबा)

खबरों की प्रमाणिकता जांचने के लिए यह सभी अहम भूमिका निभाते हैं। पीआईबी फैक्ट चेक सरकारी न्यूज एजेंसी से संबंधित है जबकि अन्य साइटस समाचार चौनल या निजी तौर पर झूठी खबरों को जांचने का कार्य करती है। यहां जाकर कोई भी व्यक्ति किसी भी खबर की प्रमाणिकता जांच सकता है ना केवल इन साइटस के माध्यम से बल्कि स्वयं की जागरूकता के द्वारा भी आप खबरों की प्रमाणिकता को जाँच सकते हैं।

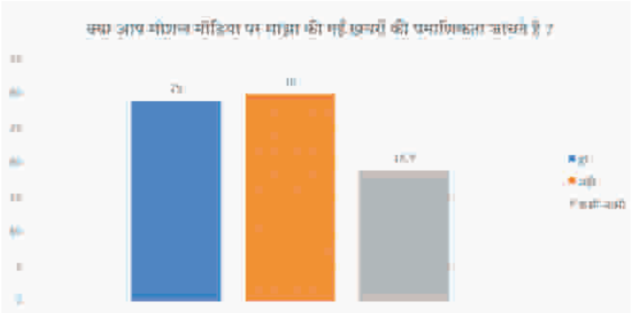

सोशल मीडिया पर साझा की गई खबरों की प्रमाणिकता को कितने प्रति शतलोग जाँचते हैं

उपरोक्त बार आरेख में सोशल मीडिया पर साझा की गई खबरों की प्रमाणिकता जांचने के लिए तीन श्रेणियां रखी गई है। हां 29ः नहीं 30ः तथा कभी–कभी को 18.9ः मत प्राप्त हुए हैं। इससे पता चलता है कि ज्यादातर लोग खबरों को साझा करने से पहले उनकी प्रमाणिकता नहीं जाँचते हैं। सहायक चरों के आधार पर 18 से 25 वर्ष आयु वर्ग में 20.8ः तथा 25 वर्ष से ऊपर आयु वर्ग में 6.2ः के साथ ज्यादा खबरों की प्रमाणिकता जांची गई है। शैक्षणिक योग्यता में सभी वर्गों में हां या नहीं के मतों में ज्यादा अंतर नहीं है अर्थात शिक्षा के आधार पर भी प्रमाणिकता जांचने पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। झज्जर में प्रमाणिकता जांचने वाले 17.2ः तथा नहीं जांचने वाले 17.2ः के साथ समान प्रति शत रखते हैं जबकि रोहतक में प्रमाणिकता नहीं जांचने वालों की संख्या 1ः ज्यादा है। गांव तथा शहरों में भी हां तथा नहीं के पक्ष में लगभग समान मत है अर्थात परिवेश से खबरों की प्रमाणिकता जांचने पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। सामान्य वर्ग में प्रमाणिकता नहीं जांचने वालों की संख्या 21.6ः ज्यादा है। आरक्षित वर्ग में प्रमाणिकता जांचने वालों की संख्या 9.2ः है परंतु हां या नहीं में 0.8ः का अंतर है। महिलाओं का मत हां के पक्ष में ज्यादा तो पुरुषों का मत नहीं के पक्ष में ज्यादा है। महिलाओं में कभी–कभी वालों की संख्या सबसे ज्यादा है। छात्रों में प्रमाणिकता जांचने वालों का प्रति शत 17.8ः है। व्यावसायिक वर्ग में नहीं के साथ 15ः मत हैं। विभिन्न आय वर्ग में 200000 तक की आय में हां को ज्यादा मत मिले हैं तो दो से चार लाख तक तथा चार लाख से ऊपर क्रमशः 3.4ः, 6.8ः मत के साथ में "नहीं" प्रथम पसंद है।

सरकार द्वारा किए गए प्रयास

सोशल साइटस की भूमिका निर्धारित करने के लिए भारतीय सरकार ने भी प्रयास किए हैं। इस संदर्भ में इलेक्ट्रॉनिक और आईटी मंत्रालय ने बड़े–बड़े सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म में डिजिटल नियमों के उल्लंघन की स्टेटस रिपोर्ट मांगी, साथ ही मंत्रालय ने नए नियमों के तहत डिजिटल प्लेटफॉर्म द्वारा नियुक्त मुख्य अधिकारी तथा नोडल शिकायत अधिकारी का विवरण मांगा है।

निष्कर्ष:

अतः आम उपयोगकर्ताओं की जागरूकता और सरकार के सहयोग से सोशल मीडिया एक ऐसा माध्यम बन सकता है जिसका प्रयोग सभी के लिए लाभदायक रहेगा क्योंकि यह ऐसा माध्यम है जिसके उचित प्रयोग द्वारा एक आम उपयोग करता अपने सपने सच कर सकता है। यह सूचना और जानकारी का भंडार है। इसने विभिन्न वर्गों तक जानकारी उपलब्ध करवाने में अहम भूमिका निभाई है परंतु इसके प्रयोग में थोड़ी सी कोताही उपयोगकर्ता के लिए मुसीबत का सबब भी बन सकती है।अगर इसका प्रयोग सोच समझकर किया जाए तो यह एक ऐसा माध्यम है जो मानवता के विकास का मुख्य कारण बन कर उभरेगा।

सन्दर्भ:

1. Baurai Mukesh [N-D-T-V] 31 October 2017] "ऐसे करें सोशल मीडिया का सही इस्तेमाल, जानिये हर पोस्ट के पीछे काराज"https://ndtv-i/lifestyle/do&the&right&use&of&social&media1769257_gl¾1*1ekdyÛf*_ga*WE92bmN1Tk5ibDdLS2U1bHU1S2Û2VFl2NHgÛREÛiOXJoWmpKYVhXN2ÛKLXF1a2VEU0hJVWw4NkVJV3pGU3liYQ--#comments_result
2. http://cgpolice-gov-in/hi/do&and&don*ts
3. कुमार केशव,15 मार्च 2016, " सारे पोस्ट्स सही नहीं : सोशल esfnvdh 10 बड़ी अफवाह" आज तक https://m-economictimes-com/hindi/wealth/personal&finance/10&tips & for & spotting & false & news & on & social & media / amp_article show/60868371-

cms
4. https://www-bbc-com/hindi/india & 43346196
5. Bureau ET] The Economics Times] 28 September 2017]"सोशल मीडिया पर झूठी खबर पकड़ने के 10 तरीके" https://m-economictimes-com/hindi/wealth/personal & finance/10 &tips & for & spotting & false &news &on & social & media/ amp_articleshow / 60868371-cms
6. http://cgpolice-gov-in/hi/do&and&don*ts
7. Zee News Desk Wed] 26 May 2021 7:57PM] New Digital Rules; सरकार ने सोशल मीडिया कंपनियों से मांगी रिपोर्ट, आज से नए नियम लागू

Annu
Associate Professor,
Political Science
Maharaja Aggrasen PG College for Women,
Jhajjar
Email: annu.bahmania@gmail.com

महिला सशक्तिकरण एवं शिक्षा : सावित्री बाई फुले के योगदान के संदर्भ में

डॉ० ममता रानी

सारांश

महिलाएँ विश्व आबादी का लगभग आधा भाग है। इस समानता के बावजुद भी महिलाएँ समाज में समानता लिए शताब्दियों से संघर्षरत रही हैं, इतिहास इस बात का साक्षी रहा है। इसके इस संघर्ष की कहानी विश्व इतिहास के पन्नों मे ं देखी जा सकती है। घर की चार दिवारी में बन्द, वस्त् ु समझी जाने वाली महिला ने स्वयं को चार दिवारी से न केवल बाहर निकाला है अपितु आज आसमान का े भी छू लिया है। उसके साहस की कहानियों की न केवल धरती अपितु आसमान भी गवाह है। तमाम बाधाओं को पार करने में सार्थकता पाते हुए आज भी सशक्तिकरण के मार्ग में प्रयासरत महिलाएँ किसी परिचय की मोहताज नहीं है। महिला सशक्तिकरण के इस मार्ग में अनेकों समाज सुधारको ं की अविस्मरणीय भूमिका रही है जिसमें न केवल महिलाएँ अपितु अनेकों पुरूष समाज सुधारक भी शामिल रहे हैं। प्रस्तुत शोध पत्र में 'महिला सशक्तिकरण एवं शिक्षा : सावित्री बाई फुल के योगदान के संदर्भ में' महिला सशक्तिकरण की मिसाल और भारत की प्रथम महिला शिक्षिका सावित्री बाई फुले के महिला शिक्षा में योगदान का अध्ययन किया जाएगा।

महिला सशक्तिकरण के मार्ग में अविस्मरणीय योगदान देने वाले अनेकों समाज सुधारकों में सावित्रीबाई फूले का नाम अत्यन्त महत्वपूर्ण नाम रहा है जिनकी भूमिका को भारतीय समाज में महिला सशक्तिकरण हेतु मील का पत्थर कहा जाता है। बावजूद इसके भी समाज का एक बहुत बड़ा भाग उनके योगदान को नहीं जानता। डॉ० संगीता चौहान एवं सरिता देवी ने अपने शोधपत्र 'सावित्री बाई फूले के स्त्री शिक्षा से स ंबंधित विचारों के विश्लेषणात्मक अध्ययन' के शोध निष्कर्ष बताते हैं कि सावित्री बाई फूले के योगदान से समाज का अधिकांश भाग अनभिज्ञ है। इस शोध के निष्कर्ष बताते हैं कि समाज का शिक्षित वर्ग भी इस बात से अनभिज्ञ है कि सावित्री बाई फूले ने सत्ती प्रथा, बाल विवाह जैसी कुरीतियों का खुलकर विरोध किया। प्रस्तुत शोधपत्र का उद्देश्य महिला सशक्तिकरण एवं शिक्षा के मार्ग में सावित्री बाई फूले के योगदान का अध्ययन करना है। इसके साथ ही विषय के समग्र अध्ययन हेतु सावित्री बाई फूले के जीवन को जानना भी अध्ययन का अन्य उद्देश्य रहेगा।

महिला सशक्तिकरण एवं शिक्षा

समाज में पितृसत्तात्मक दृष्टिकोण के चलते महिलाओं की स्थितिको सदैव पुरूषों की तुलना में कमतर आँका गया है। इस स्थिति में सुधार हेतु राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अनेकों प्रयास किए गए ताकि महिलाओं की इस स्थिति में सुधार कर उसे शारीरिक, मानसिक, आर्थिक, सामाजिक दृष्टि से सशक्त बनाया जाए। महिला को सशक्त बनाने की इस प्रक्रिया को महिला सशक्तिकरण कहा जाता है। महिला सशक्तिकरण के इस मार्ग में उसका सबसे अधिक सहयोग शिक्षा ने दिया है। महिलाएँ समाज की वास्तविक वास्तुकार होती है। हम सब महिला सशक्तिकरण की बात करते हैं परन्तु वास्तव में यदि उसे सशक्त बनाना है तो उसे शिक्षित बनाना होगा क्योंकि शिक्षा ही उसके सशक्तिकरण का एकमात्र आधार है। महिलाओं को शिक्षित करने का अर्थ है एक अन्य समाज का निर्माण करना। दुनिया की इस आधी आबादी को शिक्षित किए बिना वास्तविक अर्थों में सभ्य एवं शिक्षित समाज के निर्माण की हम कल्पना भी नहीं कर सकते, और न ही एक विकसित राष्ट्र का निर्माण कर सकते हैं। महिलाएँ प्रत्येक घर की मजबूत नींव होती है, उसी पर घर का भविष्य निर्भर करता है। घर को सुचारू एवं नियोजित रूप से चलाने के लिए पुरूष एवं महिलाएँ दोनों का शिक्षित होना अति आवश्यक है।

बुद्धि, तर्क एवं विवेक सभी का आधार शिक्षा ही है। एक शिक्षित महिला ही शिक्षा के महत्त्व को समझते हुए शिक्षा की जोत से जोत जगाते हुए, पीढ़ी दर पीढ़ी उसे आगे बढ़ा सकती है। परिवार एवं समाज में आने वाले अनेक उतार चढ़ावों को शिक्षित महिलाएँ ही समझ सकती है और समाज में अपनी सकारात्मक भूमिका निभा सकती है। समाज के हर क्षेत्र में महिलाएँ अपना लोहा मनवा रही है, अनेको महत्त्वपूर्ण पदो ं पर अपना परचम लहरा रही है। आज वह न केवल राष्ट्र में अपितु अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में भी अनेको पदा ें पर कार्यरत है। अपनी भूमिकाओं को प्रखरता और विश्वसनीयता के साथ निभाने में, मुख्य आधार शिक्षा ही रहा है।

शिक्षा ने ही उसकी निर्णय लेने की क्षमता में वृद्धि की है। समाज में आज वह जिस मुकाम पर पहुँच पाई है, शिक्षा के अधिकार के बिना ये संभव न था। सावित्री बाई फूले ने महिला शिक्षा की इस आवश्यकता को बखूबी समझा। जिसके परिणामस्वरूप उन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन महिला शिक्षा को समर्पित कर दिया।

सावित्री बाई फुले का अविस्मरणीय योगदान सवित्री बाई फुले एक निडर, तर्कशील, प्रखर, दार्शनिक, स्त्रीवादी एवं लोकप्रिय कवयित्री थी। उनका जन्म महाराष्ट्र राज्य के सतारा जिले के नाय गाँव में सन् 1831 में हुआ था। 1840 में नौ वर्ष की छोटी सी उम्र में उनका विवाह भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के प्रतिष्ठित व्यक्ति महात्मा ज्योतिबा फुले से हुआ। सावित्री फुले अनपढ़ थी और जब उनकी शादी हुई उस वक्त वह पढ़ना लिखना भी नहीं चाह रही थी। ज्योतिबा फुले ने पढ़ाई का महत्त्व समझाते हुए पढ़ने के लिए प्रेरित किया। पति के कहने पर सावित्री बाई फुले ने पढ़ाई का मन बनाया और स्कूल जाने लगी। उनके लिए यह दौर बड़ा ही कठिन दौर था, स्कूल जाते समय लोग उन पर अभद्र टिप्पणियाँ करते थे, यहाँ तक कि उन पर कीचड़ भी फेंकते थे। कुछ लोग नहीं चाहत े थे कि वह पढ़ाई कर े, इसलिए उन पर स्कूल जाते समय कंकड पत्थर भी फेंके जाते थे जिससे उन्हें कई बार चोटें भी आई। ज्योतिबा फुले ने तमाम सामाजिक कठिनाइयों

की परवाह किए बिना सावित्रीबाई फुले की पढ़ाई में पुरजोर सहयोग किया।

उन्होंने समाज के लोगों के मिथक तोड़ने के लिए खूब प्रयास किए। फलस्वरूप धीरे धीरे वह स्वयं को साबित करने में सफल हुई। परन्तु सावित्रीबाई फुले की यात्रा यहाँ समाप्त नहीं होती है। एक प्रश्न हमेशा उन्हें झकझोरता था कि आखिर महिलाओं को इतना अनावश्यक संघर्ष क्यों करना पड़ता है। उन्होंने स्वयं से एक संकल्प किया कि जीवन रहने तक वह महिलाओं के कल्याण के लिए सभी सामाजिक कुरीतियों से लडती रहेंगी और यहाँ से उन्होंने आरम्भ की
संकल्प से सिद्धि तक की अपनी यात्रा।

ब्राह्मणवाद एवं पितृसत्तात्मक व्यवस्था का विरोध करते हुए, लड़कियों के शिक्षा के लिए विद्यालय खोलने से लेकर समाज में व्याप्त तमाम बुराइयों, सामाजिक एवं धार्मिक रूढ़ियों एवं प्रतिक्रियावादी ताकता ें पर अपनी शिक्षा को एक हथियार के रूप में इस्तेमाल करते हुए स्वयं द्वारा रचित साहित्य के माध्यम से कड़ा प्रहार किया। सावित्री बाई फुलेक साहित्य में उनकी कविताएं, पत्र, लेख, भाषण एवं किताबें शामिल है। उन्होनें अपने जीवन में दो काव्य
पुस्तकों 'काव्य फुले' (1854) एवं 'बावनकशी सुधा`बरत्नाकर' (1891) की भी रचना की।

लड़कियों की पढ़ाई के लिए देश में 18 स्कूलों का निर्माण किया। उनके अथक प्रयासों की बदौलत ही 1848 में, महाराष्ट्र के पूणे में बालिका स्कूल की स्थापना की एव ं पहली महिला शिक्षिका भी बनी। इस स्कूल को देश का पहला महिला विद्यालय होने का गौरव प्राप्त है।

शिक्षिका के साथ–साथ सावित्री बाई फुले पहले बालिका विधालय की पहली महिला प्राचार्या भी बनी।

पितृसत्तात्मक एवं स्वर्ण व्यवस्था की बाधाओं के बावजुद भी सावित्री बाई ने अपने संकल्प को टूटने न दिया अपितु इन अड़चनों ने उनकी लगन और विश्वास को मजबूती प्रदान की। समानता, बंधुता एवं न्याय के लिए, सामाजिक क्रांति को आगे बढ़ाने के लिए सावित्री बाई फुल` ने साहित्य की रचना की और उनके इसी साहित्य ने इतिहास रचने में उनका सहयोग किया। निसन्देह वह अशिक्षा रूपी अज्ञानता की बात कर रही है जब वह लिखती है–

''हमारे जानी दुश्मन का नाम है अज्ञान उसे धर दबोचो, मजबूत पकड़ कर पीटो'' विधार्थियों का विद्यालय आने पर जिस तरह स्वागत करती है। वह उनकी शिक्षा के प्रति लगन को दर्शाता है–

''सुनहरे दिन का उदय हुआ आओ प्यारे बच्चों आज, हर्षोल्लास से तुम्हारा स्वागत, करती हूँ आज'' विद्या और ज्ञान को ही सर्वश्रेष्ठ धन बताती है–

''विधा ही सर्वश्रेष्ठ धन है सभी धन–दौलत से जिसके पास है ज्ञान का भण्डार है वो ज्ञानी जनता की नजरों में'' महिला शिक्षा के लिए संघर्षरत सावित्री बाई फुले लड़कियों के घर के काम की अपेक्षा उनकी पढ़ाई को अधिक महत्व देती थी–

''चौका बर्तन से बहुत जरूरी है पढ़ाई
क्या तुम्हे मेरी यह बात समझ में आई''

''चलों चले पाठशाला हमें है पढ़ना
नहीं अब वक्त गँवाना है
ज्ञान विधा प्राप्त करें, चलों अब चलकर संकल्प करे
मूढ़ अज्ञानता, गरीबी गुलामी की जंजीरों को चलो खत्म करें।''

उनकी कविताओं की उपरोक्त सभी पंक्तियाँ ये बताती है कि सावित्री बाई फुले शिक्षिका के साथ–साथ महान समाज सुधारक थी। उन्होंने अपनी पूरी प्रतिभा एवं ताकत के साथ समाज के वंचित तबकों के अधिकारों के लिए संघर्ष किया विशेषकर महिलाओं के उत्थान एवं छुआछूत के खिलाफ आवाज उठाने से भी वह नहीं डरी, विपरीत सामाजिक परिस्थितियों के बावजूद भी अड़िग रही।
महिला शिक्षा के साथ–साथ उन्होंने निराश्रित महिलाओं के लिए आश्रम खोले।

उन विधवाओं और बाल वधुओं को आसरा व सहारा दिया जिनकों उनके परिवारों ने घर से बेघर किया था। सावित्री बाई फुले नारी मुक्ति आन्दोलन का नेतृत्व करने वाली पहली महिला थी। उन्होनें केवल महिला अधिकार अपितु कन्या शिशु हत्या को रोकने की प्रभावी पहल की। महिला आश्रम ही नहीं नवजात कन्या शिशुओं के लिए भी उन्होंने आश्रम खोले। प्लेग महामारी के दौरान उन्होंने प्लेग से ग्रसित मरीजों की सेवा की जिसके कारण उन्हें भी यह बिमारी हो गई और इसी बिमारी की वजह से उनका निधन (10 मार्च 1897) हुआ।

महिलाओं के विकास के बिना किसी भी समाज का विकास अधूरा है। डॉ० बी० आर० अम्बेड़कर ने कहा है कि ''मैं किसी समुदाय की प्रगति उस समुदाय में हुई महिलाओं की प्रगति से मापता हूँ।'' साथ ही उन्होंने यह भी कहा कि, ''शिक्षा जितनी पुरूषों के लिए आवश्यक है उतनी ही महिलाओं के लिए है।'' यह कहना गलता न होगा कि राष्ट्र का विकास महिलाओं के विकास पर और महिलाओ ं का विकास शिक्षा पर आधारित है। सावित्रीबाई फुले ने राष्ट्र विकास की इस बुनियाद को बखूबी समझा और संकल्प से सिद्धि को प्राप्त करने में अपना सम्पूर्ण जीवन समर्पित किया। आगामी पीढि.यों के लिए यह आवश्यक है कि उनके इस संघर्ष और बलिदान को न केवल जाने व समझे अपितु पीढ़ी दर पीढ़ी इसे निरन्तर आगे बढ़ाएँ ताकि आने वाली पीढ़ियाँ भी सामाजिक कुरीतियों के खिलाफ अपनी आवाज बुलन्द करें।
संदर्भ ग्रन्थछुआछूत के खिलाफ आवाज उठाने से भी वह नहीं डरी, विपरीत सामाजिक परिस्थितियों के बावजूद भी अड़िग रही।

निष्कर्षः

महिला शिक्षा के साथ–साथ उन्होंने निराश्रित महिलाओं के लिए आश्रम खोले। उन विधवाओं और बाल वधुओं को आसरा व सहारा दिया जिनकों उनके परिवारों ने घर से बेघर किया था। सावित्री बाई फुले नारी मुक्ति आन्दोलन का नेतृत्व करने वाली पहली महिला थी। उन्होनें ने केवल महिला अधिकार अपितु कन्या शिशु हत्या को रोकने की प्रभावी पहल की। महिला आश्रम ही नहीं नवजात कन्या शिशुओं के लिए भी उन्होंने आश्रम खोले। प्लेग महामारी के दौरान उन्होंने प्लेग से ग्रसित मरीजों की सेवा की जिसके कारण उन्हें भी यह बिमारी हो गई और इसी बिमारी की वजह से उनका निधन (10 मार्च 1897) हुआ।

सारांश

- आचार्य, डॉ० हेमलता, 'भारत में सामाजिक क्रान्ति के पथ–प्रदर्शक ज्योतिबा फुले',
- सम्यक प्रकाशान, दिल्ली, (2015)।
- तिलक, रजनी, 'सावित्री बाई फुले रचना समग्र', दि मर्जिनलाइज्ड पब्लिकेशन, दिल्ली (2017)।
- ‌ बौद्ध, शान्ति स्वरूप, 'सावित्री बाई फुलेः सचित्र जीवनी', सम्यक प्रकाशन, इलाहाबाद (2004)।
- ‌ भारती, अनीता, 'सावित्री बाई फुले की कविताएँ', स्वराज प्रकाशन, नई दिल्ली, (2015)।
- ‌ राय, विनीत रीता, 'फर्स्ट इण्डियन वुमन टीचर', एजुकेशन पब्लिशिंग, नई दिल्ली, (2018)।
- ‌ माली, एम० जी०, 'क्रान्तिज्योति सावित्रीबाई फुले', पब्लिकेशन डिविजन, गर्वमेन्ट ऑफ इण्डिया (2011)।
- ‌ मेघवाल, डॉ० कुसुम, 'भारतीय नारी के उद्धारक : बाबा साहेब डॉ० बी० आर० अम्बेड़ कर', सम्यक प्रकाशन, दिल्ली (2010)।

डॉ० ममता रानी

एसोसिएट प्रोफेसर,

राजनीतिक विज्ञान विभाग,

सत जीन्दा कल्याणा कालेज, कलानौर, (रोहतक)

mamtasohal80@gmail.com

पाश्चात्य वाद्यों का भारतीय संगीत में समावेश

डॉ0 अंजना बंसल

सारांश

परिवर्तन सृष्टि का नियम है जो वस्तु परिवर्तित सामाजिक परिवेश के अनुसार परिवर्तित होती रहती है वही अधिक लोकप्रियता को प्राप्त करती है यही कारण है कि वर्तमान समय में भारतीय संगीत के गीत, भजन, चित्रपट संगीत, लोकगीत, गजल, सुगम संगीत की विधाओं, चित्रपट संगीत में पाश्चात्य वाद्यों का प्रयोग भरपूर किया जाता है कुछ वाद्य जो पश्चिमी सभ्यता से सम्बन्धित है भारतीय शास्त्रीय संगीत में अपना वर्चस्व पूर्ण रूप से स्थापित कर चुके है जैसे वायलिन, हारमोनियम, गिटार आदि। चलचित्रो में पाश्चात्य वाद्यों का सबसे अधिक प्रयोग चलचित्रों के पार्श्व संगीत में हुआ। सिनेमा संगीत में जिन वाद्यों का प्रयोग हो रहा है वे पूर्णतः पाश्चात्य है सिनेमा संगीत में इलैक्ट्रिक गिटार, स्पैनिश गिटार, जैज गिटार, सिन्थेसाइजर, आक्टोपैड, एकोरडियन, पियानो बाइब्रोफोन, जैलो फोन ड्रम, कोगों चागों, सैक्सोफोन क्लारनेट, ट्रम्पेट, वायलन की बोर्ड आदि वाद्यो के नाम प्रमुख है।

चित्रपट संगीत : भारत के चित्रपट संगीत में जहॉ विदेशी वाद्यों का प्रचलन हुआ वही दूसरी ओर धीरे–2 संगीत में गति भी आई ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि नृत्य व गायन में पाश्चात्य वाद्यों से संगीत को लोकप्रियता व अच्छे स्थान की प्राप्ति होने लगी। जिस प्रकार ख्याल व ध्रुपद की लोकप्रियता ठूमरी तथा गजलों ने ले ली वैसे ही तबला व ढोलक की पाश्चात्य वाद्य कोगों–बोगों ने ली ली।

सुगम संगीत व लोकसंगीत : इन दोनों विद्याओं में पाश्चात्य संगीत वाद्यों का प्रयोग दिन–प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है शास्त्रीय संगीत के गायक भी भजन गायन में गिटार वायलिन वाद्यों का प्रयोग करने लगे है। ख्याल गायन में जहाँ एकमात्र सारंगी का प्रयोग संगत वाद्य के रूप में होता था वही सारंगी का स्थान हारमोनियम ने लिया । कत्थक नृत्य में लहरा देने के लिए भी हारमोनियम प्रमुख वाद्य है अब यदि क्लारनेट वाद्य को ही ले तो पश्चिम से आया यह वाद्य लोकसंगीत मैं अपना पूरा स्थान बना चुका है।

सामान्य जन जीवन में पाश्चात्य वाद्यों का वर्चस्व विवाहोत्सव, जन्मोत्सव विभिन्न प्रकार के सामाजिक, उत्सव आदि में बजने वाले बैण्ड पूर्ण रूप से पाश्चात्य वाद्यों से परिपूर्ण है विवाह के समय बैंड पार्टी में ट्रम्पेट, सैक्सोफोन, क्लारनेट, बेस हार्न, स्केल ड्रम, टैम्बरिन पोलीफोन बैगापाइप, टयूबा आदि सभी पाश्चात्य वाद्यों का प्रयोग किया जाता है। पहले जहाँ शुभ अवसरों पर शहनाई, नगाडा आदि वाद्यों का वादन मंगलकारी माना जाता था वही आज इनका स्थान पाश्चात्य बैंड ने ले लिया है। यहा तक कि सेनाओ के बैण्ड में भी इन्ही पाश्चात्य वाद्यों को प्रमुखता दी जाती है इस प्रकार सम्पूर्ण भारतीय संगीत में तथा साधारण जनजीवन पर पाश्चात्य वाद्य पूर्ण रुप से समाहित हो चुके हैं।

उदयशंकर के अनुसार–''भारत का आरकेस्ट्रा इस तरह मालूम होता है मानो यह भारतीय भोजन अंग्रेजी प्लेट में कर रहे है'' अधिकांश भारतीय संगीतज्ञों ने पाश्चात्य वाद्यों का प्रयोग भारतीय आरकैस्ट्रा के लिए प्रारम्भ किया क्योंकि पाश्चात्य वाद्य भारतीय वाद्यों की अपेक्षा अधिक विकसित है। पं. रविशंकर ने पाश्चात्य वाद्यों का प्रयोग अपने वाद्यवृन्द में किया। पाश्चात्य वाद्यों के प्रयोग के विषय में इन्होंने "My Life My Music में लिखा है कि उदयशंकर जी ने उनसे कहा कि वे पाश्चात्य संगीत वाद्यों का प्रयोग न करे। उदयशंकर जी के बार–2 मना करने का प्रभाव इनके मन मस्तिष्क पर भी पड़ा लेकिन ज्यो–2 इनका ज्ञान वाद्य सम्बन्धी विकसित होता गया इन्होंने महसूस किया कि पाश्चात्य वाद्य विशेष रूप से वायलन तथा वायलन परिवार भारतीय संगीत का अनुकरण कर सकता है। जब इन्होंने इन सभी सम्भावनाओं को समझा तब वायलन परिवार के सभी सदस्यों को अपने विभिन्न प्रकार की आरकेस्ट्रा रचनाओं में प्रयोग करना आरम्भ किया। इस प्रकार पाश्चात्य वाद्य का समावेश आरकेस्ट्रा में हुआ।

अब यदि हम भारतीय संगीत में पाश्चात्य वाद्यों की इतनी आधिक लोकप्रियता प्राप्त करने के कारणों का विश्लेषण करे तो निम्न तथ्य उभरकर सामने आते है

पहला कारण : मेरे विचार से प्रथम कारण तो यह है कि वर्तमान समय में भारतीय संस्कृति पाश्चात्य संस्कार से पूर्णतः अनुप्रभावित है। समय के परिवर्तन के साथ ही यह भारतीय समाज पर अपना प्रभाव स्थापित करने में सफल हो गई। आज युवाओं का रहन–सहन, खानपान, चाल चलन सभी कुछ पाश्चात्य रंग में रंगा है इसलिए सांगीतिक पसन्द भी पाश्चात्य ही है।

दूसरा कारण पाश्चात्य वाद्य अपने सुगमता व सरलता आदि गुणों के कारण भी लोकप्रिय है। पाश्चात्य संगीत शास्त्रीय बंधनों से मुक्त है इसलिए पाश्चात्य वाद्यों को सीखने के लिए विद्यार्थियों को शास्त्रीय नियमों में बंधना नहीं पड़ता। पाश्चात्य संगीत स्वतंत्र है इसलिए स्वतंत्रता से जीने वाला युवा वर्ग इन्हीं वाद्यों का चयन करते हैं।

तीसरा कारण यह है कि भारतीय शास्त्रीय संगीत का आनन्द वही श्रोता ले सकते हैं जो इसकी समझ रखते है इसलिए इस तरफ साधारण जन की रूचि कम है इस बात का एहसास मुझे तब हुआ जब एक प्रसिद्ध गायक के प्रस्तुतीकरण को मैंने सुनने के लिए चुना जहॉ उनका गायन शास्त्रीय संगीत के रसिक श्रोतागण को आनन्द दे रहा था वही सामान्य श्रोतागण ने सुनने से इंकार कर दिया तथा शोर मचाना आरंभ कर दिया परिणाम यह हुआ है कि गायक ने अपनी प्रस्तुति बीच में ही बन्द कर दी। उसी के तुरंत बाद हारमोनियम व ढोलक के साथ एक गायक अपना सीधा साधा गायन प्रस्तुत करने

लगा तो सभी ने ध्यानपूर्वक सुना। इस घटना से शास्त्रीय संगीत की भारतीय सामान्य जनता में लोकप्रियता के प्रत्यक्ष दर्शन हो गए।

चौथा कारण जनजीवन की तेज रफतार में लोगों को संगीत तीव्र गति प्रधान ही पसन्द है। पश्चात्य संगीत अति तीव्रता लिए है इसलिए युवा वर्ग की पसन्द भी आज पाश्चात्य गायन वादन ही है।

पांचवा कारण पाश्चात्य वाद्यों की लोकप्रियता उनकी आधुनिकता व वैज्ञानिकता के कारण है। पाश्चात्य वाद्य अधिकतर विद्युत चलित होते हैं इनमें एक ही वाद्य से विभिन्न प्रकार की ध्वनियां उपलब्ध हो जाती है। सिन्थेसाइजर वाद्य से हर प्रकार की ध्वनि प्राप्त होती है तथा ओकटोपैड से विभिनन ताल वाद्यों की ध्वनि प्राप्त होती है। इसलिए संगीत कार्यक्रमों में अतिरिक्त वाद्य ले जाने की आवश्यकता नहीं होती है। इसी कारण भारतीय संगीत के विभिन्न संगीत प्रयोजनों में इन वाद्यों का प्रयोग भरपूर मात्रा में होने लगा। पाश्चात्य वाद्यों के वादन से उन्हें पर्याप्त धन व यश की प्राप्ति होती है इसलिए वर्तमान युवा वर्ग पाश्चात्य वाद्यों की ओर आकर्षित रहा है।

छठा कारण भारतीय वाद्यों की शास्त्रीय परम्परा को सीखने तथा उच्च कोटि के कलाकार बनने के लिए घराना परम्परा या गुरु शिष्य परम्परा द्वारा शिक्षण दिया जाता है इस पद्धति के द्वारा शिष्य खरे सोने के समान निखरकर सामने आया है परन्तु इस प्रक्रिया में आधी से ज्यादा आयु निकल जाती है तथा इन भारतीय वाद्यों को सीखने के लिए गुरु की तालाश में दर–दर भटकना पड़ता है। गुरु की प्राप्ति के पश्चात भी सिखाना या ना सीखाना गुरू की इच्छा पर निर्भर हैं पाश्चात्य वाद्यों को सीखने के लिए गुरु की तालाश में भटकना नहीं पड़ता। पाश्चात्य वाद्यों के शिक्षण संस्थान जगह–जगह पर पाए जाते हैं कोई भी व्यक्ति इन संस्थाओं में बंधन मुक्त होकर शिक्षा प्राप्त कर सकता है।

सातंवा कारण : आज का युग बहुमुखी प्रतिभा का युग है एक व्यक्ति को गायक के साथ–2 वादक भी होना चाहिए तभी वह उन्नति को प्राप्त कर सकता है इस प्रकार एक गायक के लिए गिटार, हारमोनियम, सिन्थेसाइजर आदि वाद्यों द्वारा स्वयं संगत करके गाना उसकी कला में चार चॉद लगा देता है वही किसी भारतीय शा़स्त्रीय वाद्य को बजाना चाहे तो उसका पूर्ण समय वाद्य के वादन तकनीको को सीखने तथा उसके अभ्यास में ही लग जाएगा। इसलिए पाश्चात्य वाद्यों का चयन भारतीय संगीत में मंच प्रदर्शन में किया जाता है।

निष्कर्ष : अन्त में मैं यही कहूंगी कि पाश्चात्य वाद्य अपनी सरलता, सुगमता, उपलब्धता, आधुनिकता, वैज्ञानिकता व अपनी प्रयोगात्मकता आदि गुणों के कारण लोकप्रिय हुए और इस प्रकार पाश्चात्य वाद्यों का भारतीय संगीत में समावेश हुआ। पाश्चात्य आधुनिक से भारतीय संगीत पूर्णतः प्रभावित है इसलिए पाश्चात्य वाद्यों की ओर भारतीय संगीतज्ञ भी आकृष्ट हुए है।

संदर्भ

1. पाश्चात्य स्वरलिपि पद्धति एवं भारतीय संगीत – डा. स्वतंत्र शर्मा, प्रतिभा प्रकाशन, प्राच्य विद्या प्रकाशन एवं पुस्तक विक्रेता, 29/5, शक्ति नगर, दिल्ली
2. पाश्चात्य संगीत परिभाषा कोष वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग मानव संसाधन विकास मंत्रालय भारत सरकार (1986)
3. संगीत वाद्य वादन अंक, जनवरी 1975, संगीत कार्यालय हाथरस
4. डा. लालमणि मिश्र, भारतीय संगीत के वाद्य
5. पाश्चात्य संगीत शिक्षा भगवत शरण शर्मा संगीत कार्यालय हाथरस
6. संगीत का योगदान मानव जीवन के विकास में डा. उमाशंकर शर्मा, इस्टर्न बुक लिकंस न्यू चन्द्रावल जवाहर नगर, दिल्ली, प्रथम संस्करण 2001
7. यू टयूब, इन्टरनेट आदि

डॉ0 अंजना बंसल
असिस्टेंट प्रोफैसर
वैश्य महिला महाविद्यालय,
रोहतक

संताली भाषा का कल और आज

दयाल चन्द्र मंडल

सारांश

भाषा मनुष्य की अभिव्यक्ति का सबसे सशक्त माध्यक है। भाषा के द्वारा ही मनुष्य अपने काम–काज से लेकर अपनी कोमल भावनाओं को प्रकट करता है। काव्यादर्श में कहा गया है :–

" इदमंधतमः कृत्स्नं जायते भुवनत्रयम्
यदि शब्दाहयं ज्योतिरात्संसार न दीप्यते।"

कात्यादर्शकार का यह कथन कि "यह समस्त विश्व अंधकार में लिपटा होता, यदि शब्दों की ज्योति से दीप्त न होता।"

अर्थपूर्ण एवं सत्य है। वस्तुतः, भाषा ही भावों, विचारों, सभ्यता एवं संस्कृतियों की संवाहिका है। भाषा में जाति अथवा राष्ट्र की संवेदनाएँ एवं संधर्ष छिपे होते है। भाषा में मानव समुदाय की प्रगति तथा विशेषताएँ संग्रहित होती है। भाषा में विचार, हास्य, रूदन, हाहाकार तथा जातीय स्पन्दन का प्रत्यक्ष दर्शन हमें होता है। कहा भी गया है 'Story of language is the story of Civilization – A.Peri, वस्तुतः, भाषा की कहानी ही सभ्यता की कहानी है। अतः भाशा के माध्यम से ही हम किसी जाति के वास्तविक स्वरूप को पहचानने में सफल हो सकते है। यह स्पश्ट ही है कि भाशा काल की पकड़ के परे है और यही कारण है कि मानव समाज एवं संस्कृति के विकास की यह शाश्वत साक्षी है।

परन्तु, कोई भी भाषा अपने आरंभिक काल में बोली के रूप में ही होती है। इस प्रकार बोली भाषा का एक प्राचीनत रूप है। यह मनुश्य का एक चमत्कारिक आविश्कार एवं अनुभव है। आंगिक सम्प्रेशण से हम बड़ी काठिनाई से मोटे–मोटे इसारे भर करके काम तो चला सकते है, लेकिन इसमें बहुत दिक्कते पेश आती हैं। अपने हृदय की कोमलतम भावनाओं को दूसरे व्यक्ति तक प्रेषित नही कर सकते है। भाषा की उपलब्धि मनुष्य के लिए बड़ी विस्मयकारी और उपयोगी प्राप्ति है।

संताली भाषा भी सदियों से बोली के रूप में ही अपने भाषा–भाषियों के बीच व्यवहृत होती रही। बोली से सीमित उपयोग का ही काम हम ले पाते हैं। बोली एक बड़े जन समूह तक पहुँचने में अपने को असमर्थ पाती है। संताली बोली भी धीरे–धीरे विकसित हुई है। जंगल और जमीन से जुड़े रहने के कारण संतालों में शिक्षा का प्रकाश बहुत धीरे–धीरे आया। संताल बहुत संतोशी होते हैं। थोड़े में ही खुश हो जाने वाले महत्वाकांक्षा और सपने पालने के मामले में ये आज भी धरती के अभिभावक और आदिवासी हैं। दूसरों को आगे बढ़ता देखकर प्रसन्न हो जाने वाली यह विरल कोम हैं। संतालों में शिक्षा की रोशनी जब पहुँची तब इनकी बोली भी भाषा बनी। संताली भाषा के स्वरूप के सम्बन्ध में डॉक्टर जे0एम0 मैकफेल ने अपनी "सन्तालिया" नामक पुस्तक में लिखा है–

संताली भाषा वस्तुतः संताल नामक जनजाति की भाषा है। संताल लोग खुद को होड़ कहते हैं और अपनी भाषा को होड़ पारसी (रोड़)। संताली लोक कथा के अनुसार संतालों के पूर्वज (आदि पुरूष) पिलचु बुढ़ा और पिलचु बुढ़ी हिहिड़ी पिपिड़ी (सिसिली टापू) में जन्म ग्रहन करने के बाद संताल लोग खोज कामान, हाराता (अरारत पर्वत), सासाड़ बेडा, जारपी दिसाम (जापान), आयरे दिसाम (ईरान), कांयडे दिसाम (अफगानिस्तान), चाय दिसाम(चिन), चाम्पा दिसाम(पंजाब), तोड़े पुखुरी बाहा बान्देला, जोनाजोसपुर (मध्य प्रदेश) खासपाल बेलावंजा, सिर दिसाम–शिखर दिसाम (गिरिडीह) होते हुए शांत दिसाम (शमंतभूम/शांतभूम–सिलदा परगना का पुराना नाम) को पहुँचे, वहाँ पर काफी दिन रहे। वहाँ से कही भी जाने से वे लोग अपना परिचय शांतभूम रेन होड़ कह कर देते थे। कठिन से सरलता की ओर भाषा की अपनी प्रवृति होती है जिसके कारण शांतभूम रेन होड़ से शांत रेन होड़ और शांत रेन होड़ से शांत होड़ हो गया और फिर अलग–अलग भाषा–भाषियों की उच्चारण भिन्नताओं के कारण शांत होड़ ही शांतहोड़, संथाड, संताड़, साँवताल, संथाल और संताल हो गया। इस प्रकार होड़ संताल कहलाये और उनकी भाषा संताली कहलायी। इस प्रकार देखा जाय तो संताल पगाना में प्रयुक्त भाषा ही संताली का मानक रुप है।

आज भी इस शब्द का उच्चारण अलग–अलग क्षेत्र में अलग–अलग किया जाता है। संताल परगना में इसे संताल, राँची तरफ संथाल तो उड़ीसा और झारखण्ड के उड़ीसा सीमावर्ती क्षेत्र तथा पश्चिम बंगाल के जंगल महल क्षेत्र में संताड़ कहकर उच्चारित किया जाता है।

संसार में लगभग तीन हजार (2796) भाषाएँ हैं। बहुत सी भाषाएँ तो लुप्त हो गयी है। भाषा का अध्ययन समुचित रूप से नहीं होने के कारण आज भी बहुत सी भाषाएँ या तो नष्ट हो रही है। या नष्ट होने की स्थिति में हैं। भाषा विज्ञान के आचार्यो ने 18वीं सदी में विदेशों में भाषा का अध्ययन आरम्भ कर दिया। जिसके कारण कुछ भाषाएँ बच गई हैं। उनका मूल्यांकन होने लगा है। परन्तु, भारत में भाषा का अध्ययन विलम्ब से हुआ। भारत में भाषा का अध्ययन भाषा–विज्ञान के सर्व सम्मत सिद्धान्तों के आधार पर डॉक्टर जान बीम्स की पुस्तक कंपैरेटिव ग्रैमर ऑफ दी माडर्न एरियन लैंग्वेजेज ऑफ इण्डिया द्वारा श्री गणेश हुआ है। विभिन्नता में एकत्व के आधार पर भाशाओं के परिवार का निर्धारण हुआ। संताली भाषा का मूल रूप हमें आस्ट्रिक वर्ग परिवार में मिलता है।

भाषा विज्ञान के सर्व सम्मत सिद्धान्तों को दृष्टि में रखकर आस्ट्रिक परिवार की भाषाओं का अध्ययन आरम्भ हुआ। पहले लोग संताली भाषा को द्रविड भाषा परिवार की भाषा मानते थें पर संताली भाषा को द्रविड भाषा परिवार के अन्तर्गत रखने का कोई प्रमाण हमें प्राप्त नहीं हुआ है, विद्धानों ने अब मान लिया है कि संताली भाषा आग्नेय (आस्ट्रिक) परिवार की ही एक शाखा है। सन् 1854 ई0 में सबसे पहले मैक्समूलर ने यह आवाज दी थी कि संताली भाषा द्रविड

भाषा से अलग है, उसका कुल अलग है। और उन्होनें इसे मुंडा परिवार की भाषाओं का नाम दिया था।

चूँकि इस वर्ग में सबसे अधिक संताली भाषा बोलने वाले हैं। इसलिए यह नाम उपयुक्त नहीं है। सुनीति कुमार चटर्जी ने संताली मुंडारी, हो, खड़िया आदि भाषाओं को निशाद भाषा का नाम दिया था कैम्पबेल ने इसे कोलारियन नाम दिया। एल0ओ0 स्क्रेफसरूड ने इसे खेरवारी नाम दिया। कुल मिलाकर यह मुंडा भाषा परिवार के नाम से परिचित है। परन्तु, औचित्य की दृष्टी से अगर देखा जाय तो संताली मुडारी हो खड़िया कोरकू (कोड़कू) आदि भाषाओं को होड़ भाषा–परिवार (होड़ पारसी घारोंज) के नाम से नामकरण कर देना चाहिए। कारण संताल जाति का वास्तविक नाम होड़ ही है। हो लोग भी होड़ ही कहलाते थे बाद में ड़ का लोप हो जाने के कारण हो कहे जाने लगे। मुंडा लोगों में भी होड़ो शब्द प्रचलित हैं जो कि होड़ में ओ, कार की वृद्धि हो कर होड़ो हो गया है। फिर कोड़कू (कोरकू) शब्द को देखने से पता चलता है कि होड़ का बहुवचन होड़ को (होड़कू) ही कोड़कू (कोरकू) रूप में परिणत हो गया है।

इस प्रकार संताली भाषा का उद्‌भव आग्नेय भाषा परिवार की आस्ट्रो एशियाटिक शाखा से हुआ है। और भारत में इसका विकास संस्कृत प्राकृत, अपभ्रंश, हिन्दी, बंगला आदि के पास–पास रहते हुए हुआ है। तथा मुंडारी, हो खड़िया नेपाली आदि संताली की सहवर्ती अथवा पार्श्ववर्ती भाषाएँ है।

परन्तु, संताली भाषा सदियों से बोली के रूप में प्रयुक्त होने और संतालों में शिक्षा के अभाव के कारण संताली में साहित्य सृजन काफी विलम्ब से हुआ संताल जन समुदाय अपने जीवन के सुख–दुख, हँसी–खुशी, राग–द्वेश, प्रेम–घृणा, हर्ष–विशाद आदि को लोकगीत, लोक कथा, विनती आदि के रूप में सृजित करके मौखिक रूप से पीढ़ी दर पीढ़ी संजोकर रखा है। मगर कुछ संताल विद्वान इस बात को मानने को तैयार नहीं है कि संताल लोग पढ़े–लिखे नहीं थे और संताली भाषा में साहित्य सृजन नही हुआ था कहा जाता है कि चाम्पा दिसाम में जब संताल लोग थे तो वे लोग हर तरह से समृद्ध थे। इस सम्बन्ध में एक लोग गीत प्रचलित है :–

मूर्म ठाकुर को दो बाबा
पुथी बाबा को पाड़हावाबादोली कोयडा गाड़ते लिखन चालाक् कान।

अर्थात मूर्मू ठाकुर लोग पुस्तक पढ़ते हैं और बादोली कोंयडा दुर्ग में इसका प्रसार है। इससे यह पता चलता है कि संतालों में लिखने का प्रचलन था। अर्थात, उनकी एक लिपि भी थी। कालान्तर में वह लिपि खो गयी और आगे चलकर ब्राह्मी लिपि में विलीन हो गयी।

संताल विद्वान बाबूलाल मुर्मू आदिवासी जी लिखते है कि जब संताल लोग चाम्पा दिसाम में थे तो उस समय संताली साहित्य काफी समृद्ध था। परन्तु अन्यान्य जातियों के लोगों के साथ संताल लोगों की लड़ाई हुई। इस लड़ाई में संतालो की पराजय हुई। काफी लोग मारे गए। बचे हुए लोग अपनी जान बचाकर जंगल में जाकर शरण लिए। जो संताली साहित्य था उसमें से कुछ को आग के हवाले कर दिया गया, कुछ को पानी में बहा दिया गया और कुछ को मिट्‌टी में गाड़ कर सड़ा दिया गया। इस प्रकार जो लोग जान बचाकर जंगल में जाकर शरण लेने में सफल रहे, उन लोगों के मश्तिश्क में जो निहित साहित्य था उसे वे सदियों से मौखिक रूप से पीढ़ी दर पीढ़ी लोकगीत लोक कथा, विनती आदि के रूप में सुरक्षित रखा।

संताल समाज में शिक्षा का प्रसार नही होने के बावजूद संताल लोग कैथी लिपि का उपयोग करते थें। वे लोग चिट्‌ठी–पत्र का आदन–प्रदान लिखकर अथवा लिखवाकर संताली भाषा में कैथी लिपि के माध्यम से ही करते थें। कैथी लिपि के ही माध्यम से संताल विद्रोह के नेता सिदो मुर्मू ने बाबू वीर कुँअर सिंह से सम्पर्क स्थापित करने की चेष्टा की थी साथ ही उन्होने जो अपना घोषणा–पत्र भागलपुर प्रमंडल के आयुक्त के पास भेजा था कि–'अंग्रेज संतालों की भूमि छोड़ दे' उसकी लिपि कैथी थी।

कहा जाता है कि तिलका मुर्मू ने कैथी लिपि में कई साहित्यिक रचनाएँ की थी जिसे अंग्रेजों ने नश्ट कर दिया।

भारत पहले मुगलों के अधीन था फिर सन् 1600 ई0 में अंग्रेज आये। उन्होनें लगभग दो सो सालों तक हमें गुलाम रखा अंग्रेजों ने यह मान लिया था कि भारत पर उनका शासन तब तक स्थिर नहीं रह सकता है जब तक भारतीय लोगों के साथ उनका सम्पर्क स्थापित नहीं होता है। उनके साथ सम्पर्क स्थापित करने के लिए उन्होनें उन लोगों की भाशाओं की जानकारी हासिल करने के लिए उनका शब्दकोश बनाया अगर हम यह कहें कि अंग्रेजों ने भारत की भाषाओं का ही नही बल्कि बोलियों के शब्द कोशों का निर्माण कर शब्द कोशों के द्वारा भी भारत पर शासन किया था, तो आज आश्चर्य से अधिक विस्मय मालूम होगा पर यह बात सत्य है। सैनिकों से अधिक उन्होनें हमारे यहाँ के लोगों की भाषाओं का महत्व दिया।

ईसाई मिशनरियों ने जो प्रयोग यूरोप में किया था। वहाँ की जनजातियों को ईसाई बनाते समय उनकी भाशा और साहित्य को लिपिवद्ध किया था ठीक वही प्रयोग भारत में भी करना प्रारम्भ किया। पहले तो जनजातियों की शिक्षा पर उनका ध्यान नहीं था, जब संताल विद्रोह हुआ, तब जाकर उनका ध्यान जनजातियों की शिक्षा पर गया। सबसे पहले बाप्टिज मिशन के पादरी रेवरेन्ड जर्मिया फिलिप्स एवं उनके सहयोगी इलमियास सन् 1838 ई0 में ईसाई धर्म प्रचार के लिए भारत के उड़ीसा राज्य के जलेश्वर क्षेत्र में आये। वह संतालों से सम्पर्क साधने के लिए संताली भाषा को सिखना प्रारंभ किया। फिर संताली में कुछ पुस्तके लिखी जिसमें बंगला लिपि का प्रयोग किया गया। उन्होने सबसे पहले 1845 ई0 में संताली प्राईमर लिखां उसके बाद 1850 ई0 में सेक्वेल टू ए संताली प्राइमर लिखा, जो कि संताली प्राईमर में ही कुछ योग कर के लिखा गया। 1852 ई0 में एन0 इनट्रोडक्शन टू द संताली लैग्वेज लिखा जिसके आधा में संताली व्याकरण और आधा में 500 संताली शब्द और उसका अंग्रजी अर्थ है। इसके अलावे भी उन्होनें कुछ और कार्य किये।

इसके बाद सन् 1868 ई में E.L. Puxley ने 'ए व्होकेब्युलरी ऑफ दी संताली लैग्वेज' नामक पुस्तक लिखी जिसमें उसने रोमन लिपि को माध्यम बनाया। तत्पश्चात् जिस रोमन लिपि कोE.L. Puxley ने संताली के लिए उपयोग किया था, उसी को कुछ संशोधन कर के एल0 ओ0 स्क्रेफसरूड ने उपयोग करना शुरू किया। उन्होनें सन् 1873 ई0 में 'ए ग्रामर ऑफ दी संताल लैग्वेज' नामक पुस्तक

लिखी, फिर सन् 1887 में 'मारे हापड़ाम को रेयाक् काथा' नामक पुस्तक लिखी। उन्होनें ने सन् 1890 से 'होड़ होपोन रेन पेड़ा' नामक सताली पत्रिका का प्रकाशन किया। सन् 1899 ई0 में ए कैम्पबेल ने संताली इंगलिश एण्ड इंगलिश संताली डिक्शनरी लिखा। इसके बाद पी0 ओ0 बोडिंग ने मैटिरियल्स फॉर संताली ग्रामर (पार्ट–1 एण्ड–2, 1922 और 1929) लिखा, 'ए संताल डिक्शनरी' (जिल्द–1–5, 1932–36) लिखा। तत्पश्चात 1922 से 'पेड़ा होड़' नामक संताली पत्रिका का प्रकाशन किया। सन् 1949 ई0 में आर0 रोजनलंद ने 'होड़ रोड रेयाक् बेयाकोरोन' नामक पुस्तक लिखा। इसके अलावे भी कई मिशनरियों ने संताली भाषा पर काम किया है।

देश जब आजाद हुआ तो 1947 से ही देवघर से एक संताली भाषा में हो़ड़ सोम्बाद नामक देवनागरी लिपि में पत्रिका का प्रकाशन प्रारंभ किया गया इस सप्ताहिक 'हो़ड़ सो़म्बाद' पत्रिका के संस्थापक सम्पादक डॉ0 डोमन साहु 'समीर' जी थे। जिन्होनें 1947 से 1983 तक अर्थात् लगातार 36 वर्षों तक इस पत्रिका का सम्पादन किया। इस दौरान इस पत्रिका में हजारों कविता, कहानियाँ, लेख आदि छपे। समीर जी ने सेकड़ों साहित्यकारों को उत्पन्न किया। संताली साहित्य के प्रायः सभी मूर्धन्य साहित्यकारों जैसे–नारायण सोरेन 'तोड़े सुताम, भागवत मुर्मू ठाकुर, बाबूलाल मुर्मू 'आदिवासी' ठाकुर प्रसाद मुर्मू, आदित्य मित्र संताली, बालकिशोर बास्की अरमान, शारदा प्रसाद किस्कू आदि सभी का प्रादुर्भाव होड़ सोम्वाद पत्रिका (डॉ0 डोमन साहु 'समीर') के द्वारा ही हुआ है। डॉ0 डोमन साहु समीर जी ने भी 1951 में संताली प्रवेशिका (1–2), 1964 में संताली प्रकाशिका और 1998 में 'हिन्दी और संताली : तुलनात्मक अध्ययन' नामक पुस्तक लिखे है। 1993 में हिन्दी–संताली और संताली–हिन्दी शब्दकोश लिखे। इसके अतिरिक्त भी उन्होनें और कई पुस्तक लिखी है। इस प्रकार देखा जाय तो देवनागरी लिपि में प्रकाशित होड़ सोम्वाद पत्रिका के माध्यम से संताली भाशा–साहित्य को बहुत ज्यादा लाभ हुआ।

दूसरी तरफ सन् 1923 में साधु रामचाँद मुर्मू जी ने संताली के लिए 'मोंज दाँदेर आँक' नामक लिपि तैयार किया। 1925 में उड़ीसा के गुरू गोमके पंडित रधुनाथ मुर्मू ने संताली के लिए ओल चिकी नामक लिपि तैयार किया। इसके अलावे भी संताली भाषा को लिपि बद्ध करने के लिए अनेकों लिपि का आविश्कार करने की बात सुनने में आयी है। परन्तु ओल चिकी को छोड़कर किसी का वजूद नहीं है। वर्तमान में ओल चिकी में भी काफी काम हो रहा है। साहित्य आकादमी ने ओल चिकी को ही स्वीकार किया है। इस तरह भिन्न–भिन्न संताली क्षेत्रों में अलग –अलग लिपियों के माध्यम से विभिन्न विधाओं में अनेकानेक संताली और गैर संताली लेखकों के द्वारा साहित्य सृजन में इस बोली को सशक्त भाषा के रूप में उभरने में सहायता की। विभिन्न क्षेत्रों के लेखकों ने पत्र–पत्रिकाओं के सम्पादन तथा महत्वपूर्ण साहित्यिक गतिविधियों से इस भाषा को समृद्ध किया। और इसके साथ ही विभिन्न स्तर के विद्यालयों, महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों में संताली भाषा–साहित्य के शिक्षण ने संताली भाषा साहित्य के विकास में प्रभूत योगदान दिया। फलतः संताली भाषा एक बोली से लेकर भाषा बनने के लम्बे संघर्ष के बाद 22 दिसम्बर 2003 को भारत सरकार ने संविधान की आठवीं अनुसूचि में सम्मिलित किया। और इस प्रकार संताली भाषा साहित्य अपने विकास के मार्ग पर गतिशील है। इस समय संताली भाषा की अध्ययन –अध्यापन कई लिपियों में हो रही है, किन्तू राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में देवनागरी लिपि उपयुक्त है। साथ ही संताली भाषा का ध्वनियों सटी अकंन एवं मानक स्वरुप देवनागरी लिपि में ही उपलब्ध है।

संदर्भ ग्रंथ सूचि :–

1. संताली भाषा और साहित्य का इतिहास–उमाशंकर
2. साँवताली साहित्येर इतिहास–परिमल हेम्ब्रम
3. भाषा विज्ञान– अचार्य देवेन्द्र नाथ शर्मा
4. हिन्दी और संताली : तुलनात्मक अध्ययन– डॉ0 डोमन साहु समीर
5. आद पारसी संताली–बाबूलाल मुर्मू आदिवासी
6. संताली साहित्य(काथनी आर गाथनी)–शेतचरण हाँसदा, डाँ डोमन साहु समीर
7. हो़ड़ सो़म्बाद

दयाल चन्द्र मंडल

सहायक प्रोफेसर

संताली विभाग

रामानन्द सेन्टानरी कॉलेज, लौलाड़ा,

पुरूलिया

भक्तिकलीन परिस्थितियाँ : व दर्शनों का परिचय

काजल

सारांश

भक्ति में दो धाराएं प्रवाहित होती है– निर्गुण धारा और सगुण धारा । निर्गुण और सगुण धाराओं में प्रायः राम के स्वरूप को लेकर मतभेद बना रहता है। किंतु यह नहीं है निर्गुणों के गुणहीन और सगुण के राम या कृष्ण हैं। निर्गुण का संतो यहाँ अर्थ – गुणातीत से होता हैं। वे भी मानवीय भावो से युक्त व संपन्न होते है। इसी मतभेदों को स्पष्ट करने के लिए अनेक संप्रदाय हुए। किंतु सभी का आधार स्तंभ –'**भगवदविषयक रति एवं अनन्यता है।** भक्ति संप्रदायों ने इसी आधार बनाकर अपने– अपने मत प्रस्तुत किए। उनमें से चार प्रमुख संप्रदायो और आचार्य हुए। जिनका परिचय आगे दिया जा रहा है। वे चार संप्रदाय हैं– श्री, ब्रह्मा, रुद्र, सनकादि या निंवार्क । सभी संप्रदाय ने जड और जीव का महत्त्व बताया। किसी संप्रदाय ने जड़ और जीव को एक माना, तो किसी ने इनमें भेद उत्पन्न करके एक विशिष्ट मत का प्रसार किया।

तत्तकालीन समाजः– मध्यकालीन भारत की महत्वपूर्ण देन भक्ति आंदोलन है। भारत में जब इस्लामियों का आगमन हुआ तो उसका स्पष्ट प्रभाव हम हिन्दुओ के बौहिदकता और मानसिकता पर देख सकते हैं। इस्लाम धर्म की ओर लोगों का झुकाव होना स्वाभाविक भी था, क्योंकि हिन्दू समाज में धर्म के नाम पर अनेक आडम्बर फैल चुके थे जैसे मूर्ति– पूजा,उपवास, छापा–तिल्का, यात्रा, तीर्थ आदि। दूसरी और इस्लाम धर्म में इन सभी का विरोध होता है, जिसके कारण अनेक भारतीय इस्लाम धर्म में परिवर्तित होने लगे। परंतु इनके कुछ अवश्य अनेक प्रकार की परिस्थिवियों रही होगी जिसके कारण भारतीय समाज में इन विरक्तियो ने जन्म लिया। मध्यकालीन भारत की परिस्थितियां –

ऐतिहासिक व राजनीतिक परिस्थितियां–राजनीतिक दृष्टि से अगर देखा जाए तो भक्तिकाल का उदय दिल्ली के सुल्तान मुहम्मद बिन तुगलक के राज्य काल (1325–1351) के दौरान के हुआ। इतिहासकार उन्हें अव्यावहारिक मानते थे। क्योंकि उन्हें अपने कार्यकाल मे ऐसे निर्णय लिए विपरीत प्रभाव उनके राज्य व राजकोष पर पड़ा। पहला उनका निर्णय – दिल्ली को हटाकर देवगिरि को राजधानी बनाया, जिसके कारण दिल्ली प्रदेश उजड गया, जिसके पश्चात् पुनः दिल्ली को राजधानी बनाया। इसी प्रकार सिवकों के बदलाव के प्रचलन मे भी उन्हें भारी नुकसान का सामना करना पड़ा। तुगलक बड़े ही उदारी स्वाभाव के थे, किंतु उनके पुत्र फिरोजशाह तुगलक ने हिन्दुओं के साथ बड़ा भारी पक्षपात करके उन्हें धोखा दिया। भारतीय पर अत्यंत दुराचार व्यवहार किया। इसी कारण इतिहासकारों ने उन्हें एक अयोग्य शासक ठहराया। तुगलक वंश के पश्चात् खिज्रखां ने दिल्ली पर अपना अधिकार स्थापित करके सैयद वंश का शासन आरंभ हुआ। सन् 1457 से इसके पश्चात शीघ्र ही लोदी वंश के शासको ने दिल्ली पर विजय प्राप्त करके उस पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया। लोदी वंश नें भक्तिकाल के अनेक कवियों को मरवाने तक कोशिश की।

(1) देश में मुसलमानों का राज्य प्रतिष्ठित हो जाने पर हिंदू जनता के ह्रदय मे गौरव, गर्व और उत्साह के लिए बह अवकाश न रह गया। उनके सामने ही उसके देव मंदिर गिराये जाते थे, देवमूर्तियां तोड़ी जाती थी और पूज्य पुरुषों का अपमान होता था और वे कुछ भी नही कर सकते थे। ऐसी दशा में अपनी वीरता के गीत न तो वे गा ही सकते थे और न बिना लज्जित हुए सुन ही सकते थे।

अतः इतने भारी उथल– पुथल होने के बाद भी हिन्दू समाज मे काफी समय तक उदासी ही छायी रही, किंतु अपनी इस हताश, निराशा को लेकर भगवान के चरणो में जाने के अलावा उन्हें कोई रास्ता नहीं सुझा। अतः यह तो हुई ऐतिहासिक राजनीतिक परिस्थितियाँ। अब आइए इस समय की धार्मिक स्थिति से परिचित होते हैं।

धार्मिक परिस्थितियाँ :– आदिकाल मे योगियों और नाथ पंथियों को हठयोग साधना, वज्रयानी, कापालिक आदि के कारण सामान्य जनता की धर्मभावना दबती जा रही थी, उसका ह्रदय धर्म से दूर होता जा रहा था। ऐसे में जनता के असंतोष का प्रचार होता जा रहा था। जनता में निराशा का स्वर सुनाई देने लगा। ऐसी परिस्थिति हमारे समाज में कुछ ऐसे संत हमारे समक्ष केवल भक्ति का प्रचार किया, अपितु हिंदु धर्म को बचाने का भी भरसक प्रयास किया। कबीरदास, संत नामदेव ,गुरुनानक जी, सुंदरदास, दादूदयाल, तुलसीदास जी आदि अनेक ऐसे संत समाज की धर्म का रास्ता दिखलाया ।

2)'' धर्म का प्रवाह कर्म, ज्ञान और भक्ति, इन तीन धाराओं में चलता है। इन तीनों के सामंजस्य से धर्म अपनी पूर्ण सजीव दशा में रहता है । किसी अभाव से वह विकलांग रहता है।

भक्तिकाल के कबीर दास और तुलसीदास जैसे कवियों में समाज की इन तीनो कर्म, ज्ञान और भक्ति के सामाजस्य के साथ रहना सिखाया। **(3)** भक्ति में धर्म साधना का नहीं, भावना का विषय बन गया है। इसलिए इसे धर्म का रसात्मक रूप कहा जाता है। 'भक्तिकाल के कई सतो ने समाज में व्याप्त निवृति का विरोध किया उन्होंने यह भी संदेश दिया कि भक्ति के लिए घर–गृहस्थी का त्याग करना आवश्यक नहीं। गृहस्थी में रहकर भी भक्ति व धर्म का पालन किया जा सकता। संसार मे रहते हुए और बिना किसी व्यय के भी ईश्वर को प्राप्त किया जा सकता है। इसके उदाहरण कबीर, नानक आदि हैं।

(4)भक्ति युग के सतों ने हिन्दु मुस्लिम एकता पर विशेष जोर दिया उन्होंने अपने विचारों एवं शिक्षाओं से हिन्दुओं और मुसलमानों मे विद्यमान पारस्पारिक मतभेदों की खाई को पाटने का काम किया । उन्होंने दोनो जातियों के लोगों को एक दूसरे के समीप लाने तथा उनमे आपसी सद्भावना तथा प्रेम स्थापित करने के उपदेश दिये।

सांस्कृतिक परिस्थितियाँ– भक्तिकाल से कई वर्षो पहले भारत में वैदिक विधि के द्वारा पूजा–पाठ की जाती थी, किंतु धीरे– धीरे इन विधियों में कर्मकाण्ड बाहयाडम्बर, पाखंड आदि का समावेश हो गया, फलत: भारतीय संस्कृति जो किसी समय सबसे अधिक पवित्र व निवृत समझी जाती थी, वह धीरे–धीरे दूषित होनी लगी। समाज विभिन्न विभिन्न वर्गों में बंटने लगा। जिसका आधार कर्म न होकर जन्म व जातिगत हो गया। जिसके चलते समाज में जातिगत भेदभाव बढ़ने लगा। इस प्रकार ब्राह्मण कुल में उत्पन्न होने वाला ब्राह्मण चाहे उसके कर्म कितने ही व्याभिचारी व कुटिल हो, दूसरी तरफ नीच जाति में उत्पन्न होने वाला व्यक्ति चाहे कितन भी ईमानदार, हिंदू सरकारो के प्रति आस्था रखने वाले हो, उसे समाज हेय दृष्टि से ही देखता था।

इस युग मे एक और जैन धर्म, बौध्द धर्म आदि समप्रदायों के प्रवक्ता अपने – अपने सम्प्रदायों का अस्तित्व बनाए रखने का प्रयास कर रह ये वही दूसरी और कृष्ण काव्य परंपरा और रामकाव्य परंपरा के संत कवि अपने विचारों का प्रचार प्रसार कर रहे थे। इस युग मे अनेक ऐसे संत हुए भी, जिन्होंने निर्गुण – ब्रह्मा की उपासना पर बल दिया । उनका यह ध्यातव्य दृष्टिकोण निम्न वर्ग की जातियों के लिए एक वरदान सिध्द हुआ। क्योंकि उस निम्न जातियों का मंदिरों में प्रवेश निषेध था, वही दूसरी तरफ निर्गुण ब्रह्मा की उपासना में मूर्ति पूजा और झुकाव का खंडन था, उन्हें किसी भी मंदिर में जाने की आवश्यकता न थी। तो निम्न वर्ग के लोगों का निर्गुण संप्रदाय की ओर होना स्वाभाविक था। इस्लाम धर्म के प्रवेश के कारण भी मंदिर को गिराया जा रहा था, यह भी निर्गुण ब्रह्मा की उपासना का एक विशेष कारण था है। ईस्लाम धर्म के होते हुए भी हिंदू धर्म व मुस्लिम धर्म में की दशा मे कोई विशेष भेद नही था। मुस्लिम धर्म की स्त्रिया भी शिक्षा से उसी प्रकार बचिंत थी, जिस प्रकार हिंदु धर्म की स्त्रिया थी। फलतः अशिक्षा के कारण उनमें जादू–टोना, टोना टोटका, अंधविश्वास में डूब जाना निशचित था। उदाहरण के लिए रोजा रखना, नमाज अदा करना, दरगाह पर प्रार्थना करना आदि।

(5) भक्तिकाल के सभी सन्तों ने अपने विचारों तथा शिक्षाओं का प्रचार करने हेतु महावीर स्वामी व महात्मा बुद्ध की भाँति सरल एवं लोक भाषाओं का प्रयोग किया। संस्कृत के विद्वान एवं पण्डित होते हुए भी कई सन्तों ने संस्कृत की अपेक्षा जनसाधारण की भाषा में ही अपनी रचनाएँ की तथा उसी में अपने उपदेश दियें, जिसमे परिणामस्वरूप जनसाधारण में भक्ति भावना का विकास हुआ"।

:– भक्तिकाल के दर्शनो का परिचय

प्राचीन समय में प्रायः यह मत प्रचलित था कि मोक्ष प्राप्ति का केवल एक रास्ता है– भक्ति, परंतु मध्ययुग में स्थापित हुए निर्गुण संप्रदाय ने यह स्पष्ट कर दिया कि मोक्ष केवल भक्ति से ही नही अपितु ज्ञान, कर्म के आधार पर भी प्राप्त कर सकते। हमे मोक्ष अपने कर्मो के आधार पर मिलता हैं और सही कर्मो का मार्ग हमे ज्ञान के पथ पर चलकर ही प्राप्त हो सकता है। इसीलिए मोक्ष प्राप्ति में धर्म, ज्ञान, कर्म तीनो की सामंजस्य आवश्यक हैं। किंतु यह बात भी उल्लेखनीय है कि– भक्ति भावना का यह दार्शनिक आधार हजारों साल की उपासना के पश्चात् ही संभव हो पाया है।

(6) जब दार्शनिक विचारधारा का पर्याप्त विकास हुआ, तब भक्ति आंदोलन का श्री गणेश हुआ। (7)इतिहास तथा साहित्य ने इस आंदोलन को प्रभावशाली सिध्द कर दिया। भारत की भावात्मक एकता तथा हिंदू संस्कृति के विकास में भक्ति आंदोलन का सर्व प्रमुख योग है। भारत में प्राचीन भक्ति साहित्य में इस आंदोलन की पृष्ठभूमि मिलती है। भक्ति आंदोलन का अध्ययन मुख्यत: भारतीय इतिहास ,साहित्य एवं दर्शन के सम्यक् विवेचना पर बंधन आधारित है। प्राचीनतर साहित्य में भी भक्ति तत्वों का पर्याप्त विकासित रूप दृष्टिगत होता है

मनोवैज्ञानिकों के अनुसार मानव की मौलिक संवेदना तीन है–

→जीवन की इच्छा

→प्रत्युत्पत्ति

→ समाज & बो/ा

अर्थात् जीवन जीने की इच्छा के कारण प्रत्युत्पात्ति का जन्म होता है, जिसके चरम उत्कर्ष पर पहुंचने के पश्चात् ही समाज का बोध होता है। समाज का बोध होने के पश्चात् हमे दार्शनिक विचारधारा का महत्तव समझ आने लगता है। जीवन की इच्छा ही एक मात्र ऐसा साधन है, जो मनुष्य को इस सांसारिक जाल के मोह बंधन में फांसे रखती है, इन सभी परिस्थितियों पर विजय प्राप्त करना ही समाज बोधा कहलाता है। (9) मानव ने अनुभव किया कि मैं शक्तिशाली, सौर्न्दयमय, कृपाशील रौद्रभाव युक्त वस्तुओं से घिरा हुआ है। इन सार्वभौम गुणों से युक्त साधनों तथा शक्तियों से तुलना करने पर उसको अपनी हीनता का पता लगता है। उसके मन में उसके कुतूहल, श्रद्धा, संभ्रम आदि भावनाएं जाग्रत हो गई। '' → इन सबके बावजूद मानव का इन आलौकिक शक्तियों के प्रति विश्वास बढ़ने लगा। मनुष्य का लगाव इनके प्रति बढ़ता जा रहा था. मानव की

शक्तियां हीन होती जा रही थी, वह अपने आपकी तुलना इन सांसरिक साधनों से कर रहा था। जिसके कारण मनुष्य निराशा होता जा रहा था, उसमें निराशा के बादल छा रहे थे। इसी कारण उपासना के रास्ते पर जाने के अलावा कोई अन्य रास्ता नहीं था, "अतः कहा जा सकता है कि मूलभूत प्रेम तत्वों पर आधारित भावना ही हर तरह की उपासनाओ तथा धार्मिक आचरणों का आधार है।"10

भक्ति आंदोलन का आरम्भ – समाज व धर्म सुधारक– 'शंकराचार्य के समय से माना जाता है। शंकराचार्य जी ने उस समय भारत में जो बौद्ध धर्म प्रचलित था उसके विरुद्ध संघर्ष करके हिन्दू धर्म की एक मजबूत दर्शनिक पृष्ठभूमि प्रदान की थी। उन्होने 'अद्वैतावाद' मत की स्थापना करके उसके माध्यम से अपने विचारो एवं मतो का प्रचार प्रसार करना आरंभ किया। उन्होंने मोक्षप्राप्ति के लिए ज्ञान के मार्ग को बतलाया चूंकि शंकराचार्य का मत – दार्शनिक और बौद्धिकता पर आधारित था। जो समाज के जनसाधारण लोगों को ना ही समझ आ सका और ना ही उसे प्रभावित कर सका। इसीलिए मध्यकालीन धर्म–सुधारकों ने हिन्दू धर्म की और जन साधारण को आकर्षित करने के लिए और उसे जन–जन तक पहुंचाने के लिए ईश्वर की भक्ति पर जोर दिया।

→ 12 वी सदी के आस & पास दयिाण में शंकराचार्य के दर्शनों के प्रति

विरुहद प्रतिक्रिया आरंभ हुई। उनके विरुद्ध आचार्यो ने उनके मतो का मायावाद व रहस्यवाद ठहराया, क्योंकि वह वाद जनसाधारण के बौध्दिकता से परे थे।

चार प्रबल संप्रदाय ऐसे दृष्टि मे आए जो अद्वैताबाद के विरोध में स्तंभित हुए थे। जो आगे चलकर सम्पूर्ण भारतीय भक्ति साधना की पध्दित व विश्वास को बदल देने में समर्थ थे। ये चार सम्प्रदाय है– रामानुजाचार्य का 'श्री सम्प्रदाय मध्वाचार्य जी का 'ब्राह्मसंप्रदाय' विष्णु 'का 'रुद्र सम्प्रदाय' तथा निम्बाकाचार्य जी का 'सनकादि संप्रदाय' । इन चारों संप्रदाय के दर्शनिक मतो का आधार भिन्न–भिन्न था लेकिन उनके मतो में एक समानता थी– 'मायाबाद का विरोध। दूसरी बात जो इन सब में एक ही प्रकार की है–'' भगवान का अवतारी रूप धारण करना। जीवात्मा का विषय सभी बातो मे विभिन्न है। वह अद्वैतवादियो को अनुसार भगवान में कभी लीन नहीं होती।

अदैतावाद के संस्थापक शंकराचार्य का जन्म कालडी (केरल) में आठवी शताब्दी में हुआ।

शंकराचार्य जी को प्रच्छन्नबौद्ध धर्म था कहा जाता है, जिसके पीछे यह कारण बताया जाता है कि इनके गुरु के गुरु 'गौडपाद बौद्ध' थे। किंतु इस बात का कोई प्रमाणिक आधार अभी तक प्राप्त नहीं हो सका है

→ शंकराचार्य जी को प्रस्थानत्रयी $\frac{1}{4}$उपनियाद् ब्रहमासूत्र व गीता$\frac{1}{2}$ का भायकार के रूप मे भी जाना जाता है।

शंकराचार्य जी के दर्शन का आधार 'वेदातं तथा 'उपनिषद्' था इन्होंने स्मृति संप्रदाय का प्रवर्तन भी किया।

इनके सिद्धांत की प्रायः यह अवधारणा रही है कि – जगत् मिथ्य है। ब्रह्मा और जीव में भी भेद नही है। ज्ञान से ही सत्य की प्राप्ति हो सकती है → शंकराचार्य जी के इस दर्शन का जनता पर नकारात्मक प्रभाव पड़ा।

भक्ति के लिए भगवान और स्वामी (आराध्य) में भेद व अंतर को स्पष्ट करना आवश्यक है, जबकि शंकराचार्य जी के अनुसार ये एक है। → शंकराचार्य जी का यह दर्शन लोगों में निराशावाद को खत्म न कर सका, इसी कारण अद्वैतावाद की आलोचना की गई। जब भी किसी मत की आलोचना होती हैं तो उसके विरोध मे नवीन संप्रदाय की स्थापना अवश्य होती है। वे इस प्रकार है–

काल	संस्थापक	मत	संप्रदाय
12 वी शताब्दी	रामानुजाचार्य	विशिश्टाद्वैत	श्री सम्प्रदाय
13 वी शताब्दी	माध्वाचार्य	द्वैतावाद	ब्रहमा संप्रदाय
13 वी शताब्दी	विश्णुस्वामी	शुध्दाद्वैत	रूद्र संप्रदाय
13 वी शताब्दी	निम्बाकाचार्य	द्वैताद्वैत	सनकादि संप्रदाय

विशिष्टाद्वैतः–11 ''शंकराचार्य ने अद्वैतावाद का समर्थन किया, वह साधारण भक्तो की पहुँच का नहीं था। नाथ मुनि, यामुनाचार्य तथा रामानुजाचार्य इन त्रिमुनियों ने सर्वसाधारण को लक्ष्य करके विशिष्टाद्वैत दर्शन को प्रस्तुत किया। यह अवश्य ही दक्षिण भारत की देन था। भारत को दार्शनिक आधार देने में विशिष्टाद्वैत' महत्वपूर्ण साबित हुआ। ''''वास्तव में आचार्यो से अविष्कृत समस्त वैष्णव सम्प्रदायो का लक्ष्य वैदिक एवं अवैदिक उपासना पध्दतियो का सामंजस्य उपस्थित करना मात्र था। उपरोक्त मुनिजियों में से रामानुजाचार्य ने अपने सम्प्रदाय का नाम 'श्री सम्प्रदाय' रखा, समानुजाचार्य आलवार संतो के शिष्य परंपरा में गिने जाते हैं इनके शिक्षा कांची मे संपूर्ण हुई। कहा जाता है कि इन्हें लक्ष्मी का उपदेश मिला, उसी आधार पर इन्होंने अपने श्री संप्रदाय की स्थापना की। इसी कारण इस सम्प्रदाय मे खानपीन, आचार– व्यवहार आदि पर बहुत ध्यान रखा जाता है। परिणाम स्वरूप यह केवल ब्राह्मणो तक ही सीमित रहा गया।

13" रामानुजाचार्य ने अपने सम्प्रदाय की प्रगति एवं सिथिरता के लिए अनुयोज्य प्रबन्ध किया। उन्होने उपासना के अनुष्ठानपरक अंशो पर प्रकाश डाला उनकी विस्तृत चर्चा की।''

रामानुजाचार्य की परपरा –देवाचार्य→ हयानन्द→
राघवानन्द →रामानन्या

रामानुजाचार्य जी रामामंद की शिष्य परंपरा में आते हैं।

रामानंद ने अपने समुदाय में केवल उच्च वर्ग की जातियों को ही नहीं आपितु निम्न जातियों को भी अपना शिष्य बनाया। उन्होंने अपने राम–रूप का आधार– बैष्णव के अवतार को बताया। कबीर, सैना रैदास आदि निर्वाचित पंथ के संत तथा सगुण जगत् के महान संत तुलसीदास जी रामानंद के अनुयायी थे। ये सब रामानन्द के अनुयायी होने के कारण – 'रामावत' कहलाते है। (14) ''अपने सम्प्रदाय का प्रचार करने के लिए रामावतो ने अनुयोज्य कदम उठायें और हिन्दी प्रदेश के भक्ति आंदोलन के मुख्य प्रवर्तक बन बैठे। समस्त बैष्णव अवतारों की भी पूजा करने वाले होने के कारण अन्य वैशणवो से मेल रखते थे।''

द्वैताबाद– भक्तिकाल के उपदेशको में सर्वप्रमुख स्थान माध्वाचार्य को भी दिया जाता है। वेदांत दर्शन में उनका नाम शंकराचार्य तथा रामानुजाचार्य जी के साथ आदर से लिया जाता है। यह संप्रदाय अद्वैताबाद का घोर विरोध करते हैं। माधवाचार्य जी तप्तवाद के प्रवत्तर्क कहे जाते हैं। इस संप्रदाय में ब्रहाा की आराधना की जाती है। इस सप्रंदाय के विचार का आधार– जगत् सत्य है, ईश्वर और जीव का भेद, जीव का जीव से भेद तथा जड का जीव से भेद वास्तविक है। इस संसार में जीव को अल्पज्ञ अर्थात् ज्ञान का अधूरा आधार जानने वाला जीव। ऐसी अवस्था मे यह सर्वज्ञ विष्णु के अधीन रह कर ही कार्य करता है। माधवाचार्य का संप्रदाय 'ब्रह्मा संप्रदाय' के नाम से भी प्रसिद्ध है। ये पहले शैव थे, बाद में वैष्णव मे परिवर्तित हो गए। → चैतन्य महाप्रभु इस संप्रदाय में पहले से दीक्षित थे। (15) ''माध्वाचार्य ने अपने संप्रदाय को द्वैताबाद पर अवलम्बित किया। यह संख्या दर्शन को असाधारण महत्त्व देने का परिणाम था। ''

इन्होनें विष्णु को ब्रहाा का अवतार सिद्ध किया, इसी कारण इस संप्रदाय का नाम ब्राहाा संप्रदाय पड़ा।

ग्रियर्सन के अनुसार– ''ब्राह्मा संप्रदाय वाले शिव और दोनों की

उपासने करने को तैयार होते थे। दक्षिण भारत मे इस संप्रदाय का अपेक्षाकृत अधिक प्रभाव था। **ताराचन्द**– इस संप्रदाय मे कोइ आगम नहीं मिलता, क्योंकि आगमों के विकास के पहले वह दख चुकी थी

शुद्धाद्वैतावाद :– इस संप्रदाय के प्रतिष्ठापक विष्णुस्वामी आचार्य थे। उन्होंने सरल उपासना को सरल बनाने के उद्देश्य मूर्तिपूजा का खंडन न करके जोरदार समर्थन किया। मूर्तियों को लेकर उन्होंने विष्णु के अवतार की भक्ति का मार्ग बतलाकर मोक्ष प्राप्ति का मार्ग सुगम बना दिया। ये वल्लभाचार्य चैतन्य महाप्रभु के बाद कृष्ण भक्ति शाखा के दूसरे ऐसे संत हुए थे जिन्होंने विष्णु की उपासना पर बल देते हुए यह सिद्ध किया कि ब्रह्मा माया से सर्वथा अलिप्त है अर्थात् शुद्ध है। यहां पर 'शुद्ध केवल विशेष में रूप में प्रयोग किया गया है।

कहा भी जाता है– कि जिस प्रकार स्वर्ण को चाहे जितने भिन्न–भिन्न रूपों में परिवर्तित कर लो, वह स्वर्ण ही रहता, उसी प्रकार श्रद्धा भी सभी रूपों में शुद्ध रहते हैं। वल्लभाचार्य के अनुसार– 'संपूर्ण सृष्टि तीन प्रकार की को गुणों से निर्मित

होती है – सत्, चिद और आनंद '' ईश्वर इन सभी गुणों से परिपूर्ण है। किंतु जीव में केवल सत् और चित पाया जाता है, किंतु आनंद का अभाव पाया जाता है। जिस अतः प्रकार ईश्वर शुद्ध है, उसी प्रकार जीव को भी शुद्ध एवं जगत को भी शुद के श्रेणी मे कि, रखा जा सकता है।

(16) ''**वल्लभाचार्य** के पुत्र गोसाई विठ्ठलनाथ बाद में आचार्य के पद पर अधिकारी हुए थे। पिता–पुत्र चार–चार शिष्य हिन्दी साहित्य के आधियुग के उन्नायक हो। गो० विठ्ठलनाथ ने इन आठ को लेकर

'अष्ठछाप' की स्थापना की।

इन आठ शिष्यों के नाम– सूरदास, कुंभनदास, परमानंददास, कृष्णादास. छीतस्वामी, गोविन्दस्वामी, चतुर्भुजदास तथा नंददासा इस सप्रंदाय मेबाल गोपाल की उपासना का प्रमुख स्थान था।

इस प्रंसग में यह उल्लेखनीय है कि वैदिक युग से लेकर शिशु रूप में ईश्वर की उपासना करने की प्रथा मौजूद थी।'' (17) ईश्वर की पवित्रता उनके प्रति निष्कलंक प्रेम की भावना इस प्रकार की उपासना की मुख्य विशेषता थी। ''

अतः यह स्पष्ट है उपासना का नया मार्ग दिखाकर बल्लभाचार्य जी में जनसाधारण के मन में मोठा का स्वपन जागृत करना, उन्हें भक्ति करने की प्रेरणा दी।

द्वैताद्वैतवाद– आचार्य निम्बार्कार्चाय जी को इस संप्रदाय का संस्थापक माना जाता है। वल्लभाचार्य जी की तरह निम्बार्क भी वृंदावन में रहते थे। निम्बकाचार्य का संप्रदाय – 'संकादि संप्रदाय' के नाम से उत्तर भारत में प्रचलित है। इस संप्रदाय की एक शाखा राधावल्लभ नाम से भी जानी जाती है। इस संप्रदाय मे राधा को ही आधार बनाकर ईश्वर के प्रति अपना अन्यतम् प्रेम न्यौछावर करते हैं।

डॉ भण्डारकर ने इनका समय 1162 ई दिया है। इन्हें निम्बार्कार्चाय, निम्बादित्य, निम्बभास्कर, नियमानन्दाचार्य आदि नामों से भी जाना जाता है। साथ ही यह भी माना जाता है कि 'भेदाभेदवादी' श्री भास्काचार्य तथा निम्बकाचार्थ दोनो एक ही व्यक्ति थो

→ यसी किबन्दन्ती प्रचलित हैं निम वृया पर अर्क $\frac{1}{4}$ सूर्य$\frac{1}{2}$ का रात के सम; सायाात दर्शन कराने के कारण इनका नाम निम्बार्कया निम्बादि पड़ा। इसी आधार पर इनका एक अन; नाम नि;मानन्द बता;ा जाता है। इनके दर्शन का आधार & माना जाता है। ^भेदाभेद& सि)ांत^ को माना जाता है।

शंकराचार्य से पूर्व भी अनेक आचार्यो ने 'भेदाभेदावादी सिद्धांत का प्रकिया, जैसे ब्रह्मा सूत्र के कर्ता बादरायण से भी पूर्व आचार्य औडुलामि तथा आचार्य आरमस्थ्य । शंकराचार्य के पूर्ववर्ती आचायो मे **भर्तृ प्रपंच** जो **'भेदाभेदवादी'** सिद्धात के अनुयायी मे प्रमुख माने जाते हैं।

इस संप्रदाय में प्रायः यह मान्यता थी कि – जीव ब्रह्मा का अंश तथा ब्रह्मा अशी हैं। इस संप्रदाय में विष्णु के अवतार के रूप कृष्ण जी ही उपास्य है। राधा–कृष्ण युगल उपासना को ही इस संप्रदाय का मार्ग बताया जाता है। विष्णु कृष्ण के रूप में तथा का मुख्य प्रार्थना – शक्ति राधा के रूप मे आराध्य बने ।

"18 वस्तुतः विज्ञान स्वरूप एक ही ब्रह्मा सर्व जीव–जगह का नियन्ता है। जीव और ब्रह्मा में अभेद रहते हुए भी जीव तथा ब्रह्मा का विलक्षण व्यवहार है, जैसे अवतार और अवतारी, गुण और गुणी मे अभेद हैं परन्तु दृष्टिमात्र से भेद दिखाई देता है, वस्तुतः भेद नहीं है।''

निष्कर्षः अतः स्पष्ट है कि भक्तिकाल में अनेक उतार चढ़ाव हुए, भक्तिकाल आंतरिक उथल–पुथल का समय रहा है। इस समय मे अनेक संत हुए, सभी ने अपने–अपने मत दिए। किसी ने ईश्वर को नायक माना तो, किसी ने नायिका किंतु यह बात मान्य है कि ईश्वर सर्वकालिक, व सर्वव्यापी। इस समय में उत्पन्न अनेक दर्शनो ने अपने – अपने मत प्रस्तुत किए। जड और जीव के भेद को स्पष्ट करने का प्रयास किया। सभी संप्रदायों का अपना एक विशिष्ट स्थान रहा है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1 आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, 'हिन्दी साहित्य का इतिहास',पृ 53

2. उपरोक्त पृ 53

3. विश्वनाथ त्रिपाठी, 'हिन्दी साहित्य का सरल इतिहास, पृ 11

4 डॉ रश्मि जोशी, ''भक्ति आंदोलन व कृष्ण काव्य, पृ18

5 उपरोक्त – पृ.17

6 राधाकृष्णन, डॉ एस. 'इण्डियन फिलॉस्फी' बाल्यम–ए, 1958 ए इन्ट्रोडक्शन

7 शर्मा डॉ. मशीराम, 'भक्ति का विकास', (958), पृ. 111–132

8 Thomas Hywel Hughes,Psychology and Religious Truth1941Page No- & 27

9 राधाकृष्णन डॉ एस, इण्डियन फिलॉस्फी वाल्यूम –2, पृ. 45
10 डॉ रश्मि जोशी, भक्ति आंदोलन व कृश्ण 'काव्य' पृ 20
11अरुण कैप्टन डॉ सरनाम सिंह, रामानुजाचार्य विशिष्टा दैनिक भक्ति दर्शन पृ 13–263
12 जी. ए. ग्रीयर्सन, 'भक्तिमार्ग वॉ–2'य 'इन्सायक्लोपीडिया
ऑंव रेलीजन एण्ड एथिक्स
13 पाय. डी. ए.,'' मोनोग्राफ ऑन द रेलीजन्स सेक्टस इन इंडिया ऑन या हिन्दूज (1928)
14. विल्सन, एच. एच, 'रेलीजन्स सेक्ट्स ऑव दा हिन्दूज (1958)
15 ग्रीयर्सन, जी. ए 'भक्तिमार्ग वॉ–2', ' इन्सायक्लोपीडिया ऑव रेलीजन एण्ड एथ्थिक्स : वॉ–2
16. 'ऋग्वेद' 7 9:85, 1110, 923–1
,17 भण्डारकर, आर. जी ''वैष्णविज्म, शैविज्म एण्ड माइनर व 'रेलीजन्स सिस्टम', क्लेक्टेड वर्कस (बॉं 4), पृ. 49–54
18. निम्बादिव्यय दशश्लोकी, 'हरिव्यासदेव', पृ 28

Kajal
Mobile-9999412022
Add- Vill Dulhera Dist. Jhajjar (Haryana)
Email Id- kajlphakran9780@gmail.com
Pin code 124507

40

संत नितानन्द : वाणी में चित्रित मानवतावाद

डॉ0 कृष्णा मल्हान

सारांश

सन्त व्यक्तिगत–साधना के प्रचारक रहे हैं। समष्टि परक साधना, सुधार अथवा कोई मतवाद उनके स्वभाव में नहीं रहा है। उनका विश्वास व्यक्ति के सुधार और उद्धार में रहा है। यदि कहीं उनका सुधारवादी तथा मानवतावादी रूप सामने भी आया है तो वह भी उनकी व्यक्तिगत रहनी का अंग हो कर आया है। कबीर के समाज– सुधारक अथवा मानवतावादी दृष्टिकोण का उल्लेख करते हुए आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का कहना है कि– 'वे मूलतः भक्त थे। भगवान पर उनका अविचल अखण्ड विश्वास था। वे कभी सुधार के फेर में नहीं पड़े। शायद वे अनुभव कर चुके थे कि जो स्वयं सुधरना नहीं चाहता उसे जबरदस्ती सुधारने का व्रत व्यर्थ का प्रयास है। वे अपने उपदेश 'साधु' भाई को देते थे या फिर स्वयं अपने–आपको ही सम्बोधित करके कह देते थे। यदि उनकी बात कोई सुनने वाला न मिले तो वे निश्चिंत होकर स्वयं को ही पुकार कर कह उठते– 'अपनी राहतू चले कबीरा।' अपनी राह यह है जो धर्म, सम्प्रदाय, जाति, कुल और शास्त्र की रूढ़ियों से बद्ध नहीं है। बल्कि अपने अनुभव के द्वारा प्रत्यक्षीकृत है।[1]

सभी सन्त कबीर की तरह ही 'अपनी एकली राह के राही' थे। कोई रूढ़ि, कोई पूर्व निर्धारित पथ उनके काम का नहीं था। उनका संगी–साथी उनका 'आत्मानुभव' था। इस 'आत्मानुमय' पथ के लिए वे एक विशिष्ट 'रहनी' का आश्रय लेते हैं। वे सारे तत्त्व जो किसी को समन्वयवादी, समाज सुधारक अथवा मानवता वादी बनाने के लिए आवश्यक एवं अपेक्षित होते हैं, वे इनकी विशिष्ट रहनी में मौजूद रहते हैं। यही कारण है कि विद्वान लोग कबीर को सुधारक, समन्वयवादी तथा मानवतावादी अनेक रूपों में प्रस्तुत करते हैं। इसी संदर्भ में आचार्य द्विवेदी का कहना है कि– 'कबीर ने ऐसी बहुत–सी बातें कही हैं जिनसे (अगर उपयोग किया जाए तो) समाज–सुधार में सहायता मिल सकती है, पर इसलिए उनको समाज–सुधारक समझना गलती है। वस्तुतः वे व्यक्तिगत साधना के प्रचारक थे। समष्टि–वृत्ति उनके चित्त का स्वाभाविक धर्म नहीं था। वे व्यष्टिवादी थे। सर्व–धर्म–समन्वय के लिए जिस मजबूत आधार की जरूरत होती है वह वस्तु कबीर के पदों में सर्वत्र पाई जाती है, वह बात है भगवान के प्रति अहैतुक प्रेम और मनुष्य मात्र को उसके निर्विशिष्ट रूप में समान समझना। परन्तु आजकल सर्व–धर्म–समन्वय से जिस प्रकार का भाव लिया जाता है, वह कबीर में एकदम नहीं था। सभी धर्मों के बाह्याचारों और अन्तः संस्कारों में कुछ–न–कुछ विशेष देखना और सब आधारों, संस्कारों के प्रति सम्मान की दृष्टि उत्पन्न करना ही यह भाव है। कबीर इनके कठोर विरोधी थे। उन्हें अर्थ–हीन आचार पसन्द नहीं थे, चाहे वे बड़े से बड़े आचार्य या पैगम्बर के ही प्रवर्तित हों या उच्च से उच्च समझी जाने वाली धर्म–पुस्तक से उपदिष्ट हों। बाह्याचार की निरर्थक पूजा और संस्कारों की विचारहीन गुलामी कबीर को पसन्द नहीं थी। वे इनसे मुक्त मनुष्यता को ही प्रेम– भक्ति का पात्र मानते थे। धर्मगत विशेषताओं के प्रति सहनशीलता और सम्भ्रम का भाव भी उनके पदों में नहीं मिलता। परन्तु वे मनुष्य मात्र को समान मर्यादा का अधिकारी मानते थे, जातिगत, कुलगत, आचारगत श्रेष्ठता का उनकी दृष्टि से कोई मूल्य नहीं था। सम्प्रदाय प्रतिष्ठा के भी वे विरोधी जान पड़ते हैं।[2] उपर्युक्त उद्धरण से कबीर की व्यष्टिगत साधना, अर्थहीन आचार–विचार का विरोध, निरर्थक बाह्याचारों एवं रूढ़ियों का विरोध, प्रचलित धर्मों के प्रति अनास्था, मानव मात्र की समानता, वर्ण–व्यवस्थागत ऊँच–नीच का विरोध साम्प्रदायिकता का विरोधादि बातों में ही सन्तों की मानवतावादी दृष्टि के बीज निहित हैं। उपर्युक्त वर्णित तथ्यों में यदि सत्य, अहिंसा, करुणा, धैर्य एवं सहिष्णुता आदि तत्वों को जोड़ दिया जाए तो सन्तों का मानवतावाद सम्बन्धी दृष्टिकोण सामने आ जाएगा।

सन्त नितानन्द की बानी सत्य, अहिंसा, करुणा, पर दुःख कातरता, समता, एकता, वैचारिक स्वतन्त्रता, वर्ण–वैषम्य का विरोध, अंधविश्वास, रूढ़िवादिता का खण्डन आदि मानवीय मूल्यों के चित्रण से अत्यन्त समृद्ध है। इनकी बानी में इन मूल्यों की विशद एवं प्रभावशाली व्याख्या देखने को मिलती है। इन्हीं मूल्यों के आधार पर नितानन्द जी की मानवतावादी दृष्टि का विवेचन–विश्लेषण किया जा सकता है।

महात्मा गांधी सत्य को ईश्वर के समशील मानते थे। उनका सारा जीवन सत्य– संधान में ही बीता है। गांधी जी इस युग के सबसे महान् मानवतावादी रहे हैं। सत्य मानवीय मूल्यों में सर्वोपरि हैं। सन्त नितानन्द जी भी सत्य के प्रति बड़े आग्रहशील हैं। नितानन्द जी का कहना है कि हरि सच्चे के हमेशा साथ हैं और झूठ बोलने वाले से वे सौ कोस दूर रहते हैं।[3] उनका आगे कहना है कि सच बोलने वाला ही मानव कहलाने का अधिकारी है बाकी पशुतुल्य ही जीवन–निर्वाह करते हैं, यथा–

मिथ्या सा पातक नहीं, पुण्य न साच समान।
नितानन्द साचे मनुष,झूठे सूकर स्वान।।[4]

मनुष्य किसी भी भेष अथवा सम्प्रदाय में हो उसे अपने भीतर सत्य को धारण किए रहना चाहिए।[5] सत्य को धारण करने वाले तथा सच्चे रास्ते पर चलने वाले सदा राम रस का पान करते हैं। सच्चे से सच्चे का सम्बन्ध होने पर सत्य लोक की प्राप्ति हो जाती है।[6] सच्चेजन प्रभु के प्रिय होते हैं, साहब सदा उनका सहायक है।[7] सच्चे सर्वांग राम को पहचान लेते हैं, वे इस जगत के सही स्वरूप को समझ जाते हैं।

फिर वह संसार उससे लिप्त नहीं होता, यथा

नितानन्द जिन जानिया सत्य राम सरवंग।
वैनर झूठे जगत के कदे ना राचौ रंग।।[8]

मानव को चाहिए कि वह अपनी सामर्थ्य अनुसार ही बातें करें, सदा सत्य का अनुसरण करे तथा भ्रमित करने वाली

लम्बी–चौड़ी व्यर्थ की चर्चाओं में विवेक का आश्रय ग्रहण करे।[9] नितानन्द जी का कहना है कि कभी भूल कर भी झूठ न बोले बल्कि रात–दिन उस सच्चे साहब का स्मरण करना चाहिए, यथा–

कदे न कहिए भूल कर, मुख से मिथ्या बैन।
साचा साहब सुमरिये, नितानन्द दिन रैन।।

जिनकी सत्य पर आस्था है वे धन्य हैं। ऐसे साधकों को सार्वभौमिक सत्य पाने में भी अधिक कष्ट का सामना नहीं करना पड़ता, यथा–

नितानन्द वे धन्य हैं, जिन को साच सुहाय।[11]
साचे से साचा लगे, रहे नूर में छाय।।

नितानन्द जी जीव–हत्या को बहुत बुरा मानते हैं। जीव–हत्या भी अपने स्वाद के लिए, यह तो बड़ा भारी पाप है। इसीलिए नितानन्द जी मांसाहारी को भूत प्रेत मानते हैं। इनका कहना है कि जीव–हत्या करने वाले ये मांसाहारी कुल सहित नरक –गामी होते हैं, यथा–

मांस खाय सो मनुष ना, वे सभ भूत परेत ।
नितानन्द वे पड़ें, नरक में, कुल परिवार समेत।।[12]

सभी जीव समान हैं वे भी हमारे जैसे ही है। ऐसा सोचकर भी जो जीव–हत्या करते हैं वे भी पाप के भागी हैं, यथा–

जैसी काया आपनी, वैसी सभ की होय ।
जिबह करै नाहीं डरै, बड़ा गजब है सोय।।[13]

नितानन्द जी काजी से पूछ रहे हैं कि जीव–हत्या का आदेश तुम्हारे पास खुदा ने कब भेजा है घ् क्या औचित्य है तुम्हारे पास जीव–हत्या के लिए, खुदा के बना, एवं पैदा किए जीवों को आप क्यों मारते होघ् इसी जिज्ञासा को निम्न साखी में प्रस्तुति दी गई है, यथा–

काजी हुकम खुदाय का, कद आया तुझ पास।
सूरत साहब की घड़ी, तैं क्यों दई विनास।।[14]

जीव हिंसा का निषेध करते हुए नितानन्द जी कहते हैं कि–

जैसा जत है अपना, ऐसा सभ का जान।
नितानन्द नहीं ढ़ाइए, साहब का निसान।।[15]

जो मस्जिद पर चढ़ ऊंचे स्वर में खुदा को पुकारते हैं और साथ ही जीव–हत्या भी करते हैं, उनका कैसा खुदा जो अपनी जिह्वा स्वाद के लिए जीव–हत्या करते हैं ?इसी प्रश्न को निम्न साखी उठाती हैं, यथा–

मियां स्वाद के बस पड्या, बहुत विनासै जीव।
चढ़ मसीद साहब कहैं, कहाँ उन्हीं को पीव।।[16]

मुसलमान जीव–हिंसा कर मांसाहार को हलाल (उचित) समझते हैं। नितानन्द जी का कहना है कि कमजोर जीव की हत्या किसी भी तरह उचित नहीं ठहराई जा सकती अर्थात् मियां जी तुम्हें खुदा का कोप भाजन बनना पड़ेगा–

जिबह किया बेजोर को, याते नहीं हलाल।
लेखा लेगा साईयां, तुम पर पड़ै सवाल।।[17]

खुदा के बन्दो, खुदा से डरो, सभी जीवों में खुदा हाजिर है। जो तुम जीवों को मार– मार खाए जा रहे हो, तुम्हे दोजख में जाना ही पड़ेगा ! यथा–

नितानन्द डर रब्ब से, साहब सभ ही माहिं।
जो गल काटै और का, वे दोजख को जाहिं।।[18]

जो तुम जीवों पर अत्याचार कर रहे हो, खुदा के दरबार में इसका हिसाब देना पड़ेगा और जो दण्ड खूनी को मिलता है उसी प्रकार तुम भी पूरी तरह और बुरी तरह दण्डित किए जाओगे! गजब की मार पड़ेगी, बच नहीं पाओगे ! इसी दंड की व्याख्या निम्न साखी कर रही है, यथा–

जोर जुल्म जो कुछ करै, लिखा जाय दरबार।
खूनी कर के पकड़िए, पड़े गजब की मार।।[19]

सन्त नितानन्द की वाणी में जीव–हत्या पर पूरा एक श्अंगश् है। इन्होंने अनेक प्रकार से जीव हिंसा न करने के लिए समझाया है। जिस प्रकार नितानन्द जी जीव–दया के प्रति आग्रहशील हैं इसी प्रकार ये विवेकपूर्ण रहनी पर भी बल देते हैं। सच्चा मानवतावादी विवेकशील होता है। उसे तो हर कहीं अपने साईं का नूर दिखाई देता है। नितानन्द जी भी विवेकपूर्ण आचरण के प्रति बड़े सजग हैं। इन्होंने श्हंसश् को विवेक का प्रतीक मान कर श्हंस–ज्ञानश् अथवा श्हंस रहनीश् का अनुसरण करने की सीख दी है। नितानन्द जी का कहना है कि मानव को हंस की तरह सारग्रही होना चाहिए जो अपने विवेक से नीर को छोड़ क्षीर का सेवन करता है और केवल मोतियों पर ही निर्वाह करने की जिसकी आन है। साधक को हंस की तरह विवेकी होना चाहिए। गुण–अवगुण,सार–असार तथा अच्छाई–बुराई को पहचान कर केवल सार अथवा अच्छाई को ही ग्रहण करना चाहिए। निम्नलिखित साखी इन्हीं भावों को परिलक्षित कर रही है, यथा–

नितानन्द गुण लीजिए, जथा हंस पैलेत ।
दूध दूध को अंच कर, पानी चोंच न देत।।[20]

विवेकपूर्ण रहनी को आवश्यक मानते हुए नितानन्द जी का कहना है कि हमें हंस– ज्ञान का आश्रय लेकर, अवगुणों को छोड़ कर आन्तरिक विधि से भक्त–भजन में लगे रहना चाहिए, यथा–

नितानन्द इस जगत में, पकड़ हंस का ज्ञान।
तज विकार हर भक्तिकर, घट पड़दै दरम्यान।।
नितानन्द इस देह में, गहो हंस का ज्ञान।
तज छीलर संसार को, कर ले ब्रह्म पिछान।।
नितानन्द गुरु की कृपा, गहो हंस का ज्ञान।
हंसा हर मोती चुगैं, मींडक चुगै अज्ञान।।[21]

विवेकी–जन को इस जागतिक व्यापार में, दिन प्रतिदिन पग–पग पर नई–नई समस्याओं का सामना करना पड़ता है। विवेकशील मानव का जीवन खड़ग–धार पर चलने जैसा कठिन होता है। जिसके सिर पर कफन बांध दिया जाता है उसे तो किसी भी बड़ी विघ्न–बाधा से दो–चार होने के लिए प्रतिपल कटिबद्ध रहना पड़ता है। इसके लिए आवश्यक है अपार–अकूत धैर्य एवं सहिष्णुता की। नितानन्द जी ने इस धैर्य एवं सहिष्णुता के लिए 'जरना' शब्द का प्रयोग किया है। 'जरना' शब्द का उल्लेख करते हुए नितानन्द जी इसे विशाल–तत्त्व की संज्ञा देते हैं और कहते हैं कि इस को धारण करने वाला अमर हो जाता है, यथा–

जरे तो पीवै अमर रस, जरे तो बचे काल ।
जरे सो जगपति जगत गुरु, जरे सो तत्त्व विशाल।।

नितानन्द कुछ मत कहो, समझ समझ गहो मौन।
जरना जोगी थिर रहे, मिट जा आवागौन।।[22]

स्थिर भाव से 'रहीम' की तरह 'रहीम मन की व्यथा मन ही राखो गोय' अपने सुख–दुःख सहते धैर्य से चलते रहो, इस रहनी से मोक्ष तक भी सुलभ हो जाता है। जिन हरि के साधकों को कण में अपने सांई का नूर झलकता दिखाई दे और जहां देखें वहीं अपने लाल की लाली ही दिखे वो ऐसे खुदाई खिदमतगारों को यह मानव–मानव में ऊंच–नीच, जाति पांति और छोटे–बड़े का भेद–भाव बहुत खलता है। सच्चे मानवतावादी के लिए मानवीय समता ही काम्य है। उन्हें तो यहभेद–भावपूर्णतया अमान्य है। सभी मानव उनकी दृष्टि में एक समान हैं। नितानन्द का कहना है कि ये सारी जाति–पांति और कौमियत व्यर्थ की बातें हैं । सार तत्त्व केवल हरि–भक्ति है। भक्ति भजन विहीन कोई भी वर्ण–जाति हो वह तो श्मशान है, वहां सब मुर्दा हैं, क्या बड़ाई और कैसी श्रेष्ठता! इन्हें तो हर किसी
साहब ही नजर आता है, यथा–

जहां तहां मौजूद है, पूर्ण ब्रह्म अलेख।।
साहबपूर्ण ब्रह्म है, पूर रहया सभ माहिं।
जित देखूं तित है वही, उस बिन दूजा नाहिं।
घट घट मांही बोलता, घट घट रहया समाय।।[23]

सच्चे मानवतावादी के लिए जैसे वर्ण–वैषम्य, वर्ग–भेद आदि मानव के उत्कर्ष में बाधक हैं ऐसे वे साम्प्रदायिकता को मानव–विकास में बड़ा बाधक मानते हैं। विभिन्न पन्थों, मतों एवं सम्प्रदायों में मानव अलग–अलग बंट जाते हैं और नाना प्रकार की विभेदक दीवारें उनके बीच पैदा हो जाती हैं। इस दृष्टि से तो सन्त सभी से अधिक मानवतावादी ठहरते हैं। मानव के उत्कर्ष अथवा सम्भावनाओं का अन्त नहीं और सन्तों की व्यष्टिवादी रहनी में जितना अवसर जितनी स्वतन्त्रता मानवीय विकास के लिए है, अन्यत्र दुर्लभ है। सन्त इस तथ्य सेअच्छी तरह परिचित हैं कि ये सम्प्रदाय मानव को मानव से लड़ाते ही नहीं वरन् मानव के चिन्तन को भी कुंठित करते हैं। संगठन– बद्ध मानव के लिए स्वतन्त्र–चिंतन के द्वार बंद हो जाते हैं। सम्प्रदाय का संविधान कितना ही उदार हो, वह रूढ़–गतानुगतिकता में बदल जाता है और वहां स्वतन्त्र– चिंतन के लिए कोई अवकाश नहीं रहता। सन्त तो स्वभावतया श्विद्रोहीश् होते हैं। इनकी राह तो 'एकला चलो' की है। फिर किसी संगठन अथवा सम्प्रदाय जैसी जकड़बंदी के ये कैसे पक्षधर हो सकते हैं?नितानन्द जी इस सम्प्रदाय–विहीनता के लिए 'निर–पख' तथा 'निरदावा' शब्दों का प्रयोग करते हैं तथा पक्ष–विपक्ष से परे रहने की सलाह देते हैं। निम्नलिखित पंक्तियों में पक्ष–विपक्ष से दूर रहने की हीसलाह दी गई है, यथा–

पखा–पखी को छोड़ दोए पखा–पखी में काल।
पख ले भूल्या जगत सभए चल्या झूठ के साथ।
निर्पख हो हर को भजैए जिनकी बुद्धि विशाल।
दावा दिल से दूर करए दावे दाझन होय।
निरदावा हो मगन रहए दावा दूर निवार।[24]

नितानन्द जी का कहना है कि सभी अपनी–अपनी हदों में बंधे हुए हैं, किन्तु सच्चे साधक इन सीमाओं से परे रहते हैं, यथा–

अपनी–अपनी हद्द में, हिन्दू मुसलमान ।
नितानन्द साधू बसैं बेहद के मैदान।।[25]

आचार्य द्विवेदी जो कबीर के संदर्भ में ना हिन्दू ना मुसलमान की जो व्याख्या करते हैं वह बड़े काम की बात है। विद्वानों द्वारा इस कथन–'ना हिन्दू ना मुसलमान' की अनदेखी करने और इसका मर्म न समझ पाने का डॉ0 राजदेव सिंह को बड़ा खेद है। इनका कहना है कि यदि विद्वान लोग इस 'कथन' को सूत्र रूप में लेकर सन्त– साहित्य विशेषकर कबीर की सूझ–समझ में इसका उपयोग करते तो बहुत से गलतनिर्णयों से बच जाते। यह कथन 'ना हिन्दू ना मुसलमान' साम्प्रदायिक विहीनता का सरल–सटीक द्योतक है। सन्तजन इन बंधनों को व्यर्थ मानते हैं और साथ ही सभी अनर्थों की जड़ भी। नितानन्द जी की वाणी का भी यही सूत्र वाक्य है। इसी सूत्र वाक्य को इन्होंने निम्न साखी में निर्देशित किया है, यथा–

नितानन्द हिन्दू नहीं, मुसलमान भी नांहि ।
दिना चार की सैल कर, फेर अमरपुर जाहिं।।[26]

सच्चे मानवतावादी का कोई सम्प्रदाय नहीं होता। कोई जाति नहीं होती। नारद के गुरु धीवर (मधुआ) का कौन सा ऐसा सम्प्रदाय था जिसने नारद को ज्ञान दिया था?साधकों का कोई भी सम्प्रदाय नही होता। इसी तथ्य को निम्न पद में निबद्ध किया गया है, यथा–

उनकी एकै जाति हैं, लगैं चरण की सेव ।
झीमर की क्या सम्प्रदा, नारद के गुरुदेव।।[27]

वस्तुतः सभी भक्तों का एक ही वैष्णव सम्प्रदाय है । मूर्ख हैं वे जो अपने को विभिन्न सम्प्रदायों में विभक्त कर लेते हैं, यथा–

एक विष्णु की सम्प्रदा, जेते भक्त अपार ।
अपनी अपनी हदद में, खेचैं मुगद गंवार।।[28]

सन्तों की पैनी दृष्टि और संवेदनशीलता ने सामान्य मानव को सम्प्रदाय, संगठन जाति आदि के अनेक विभेदक बंधनो में बंधा देखा है। वहीं उनके लिए मानव का अंधविश्वासी होना और नाना रूढ़ मृत–परम्पराओं पर चलते देखना भी उनके लिए परम–पीड़क था। सच्चा मानवतावाी हृदय कैसे सहन करे कि मानव–सृष्टि का सिरमौर जड़ पदार्थों की पूजा करे, यथा–

चेतन साहब छोड़ कर, जड़ को पूजन जाय।
अंधों को दीखै नहीं, दर्पण लाख दिखाय।।[29]

लाख दर्पण दिखाने पर भी अंधों को दृष्टि नहीं मिलती किन्तु सन्तों ने साफ– साफ देख लिया था कि यह मूर्ति पूजा, तीर्थाटन, संध्या–तर्पण आदि मृत–प्रथाएं हैं और मानव अज्ञानवश इनकी पूजा में फंसा हुआ है। सन्त इन व्यर्थ की रूढ़ियों का खण्डन करते हैं। यह खण्डन करना भी सन्तों की भूत–दया का ही अंग है। यह इनके मानवतावादी का एक और उज्जवल एवं उल्लेखनीय पक्ष है। नितानन्द जी का कहना है कि मानव चेतन होकर चेतन प्रभु को छोड़ कर जो जड़ पदार्थों की पूजा करते हैं वह भ्रम में ग्रसित हैं जैसे कोई काठ की गाय से दूध–दोहन की कामना करता है, यथा–

चेतन साहब छोड़ कर, जड़ को पूजन जाय ।
नितानन्द नहीं दूध दे, कदे काठ की गाय।।[30]

ये जो पत्थर के सालिगराम, देवी–देवताओं की मूर्तियाँ आदि तो एक व्यापार है लोगों का। यह तो चतुर लोगों ने अज्ञानियों को

फंसाने का धंधा बनाया है। इनसे लग कर काल का ग्रास ही बनना है और निर्देश दिया है, यथा–

नितानन्द धंधा रच्या, पाथर का करतार।
जान बूझ कर फंस गया, बूड़ा काली धार।[31]
चतुर धाम को परसकर, बसैं बनारस मांहि।
नितानन्द हर नाम बिन, मुक्त पदार्थ नांहि।।[32]

उपर्युक्त विवेचन से नितानन्द जी की मानवतावादी दृष्टि का आभास हो जाता है। वस्तुतः सारी बानी ही आरम्भ से अन्त तक मानवीय–हित–साधन के लिए है। इनकी सारी 'कहनी' का लक्षीभूत श्रोता मात्र मानव है और यह सारा बानी–विधान इस की हित–चिंता करता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची0

1. कबीर : आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ0 187
2. कबीर : आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ0 186
3. सत्य–सिद्धांत–प्रकाश,सा0 13, पृ0 191
4. सत्य–सिद्धांत–प्रकाश, सा0 5, पृ0 191
5. वही, सा0 20, पृ0 193
6. वही, सा0 22, पृ0 193
7. वही, सा0 29, पृ0 193
8. वही, सा0 40, पृ0 194
9. वही, सा0 48, पृ0 195
10. वही, सा0 49, पृ0 195
11. सत्य–सिद्धांत–प्रकाश, सा0 52, पृ0 195
12. वही, सा0 50, पृ0 312
13. वही, सा0 53, पृ0 312
14. वही, सा0 2, पृ0 307
15. सत्य–सिद्धांत–प्रकाश, सा0 9, पृ0 308
16. वही, सा0 16, पृ0 309
17. वही, सा0 22, पृ0 309
18. वही, सा0 23, पृ0 309
19. सत्य–सिद्धांत–प्रकाश, सा0 24, पृ0 309,
20. वही, सा0 8, पृ0 239
21. वही, सा0 15, 21, 23, पृ0 235
22. सत्य–सिद्धांत–प्रकाश, सा0 5, 6, पृ0 82
23. सत्य–सिद्धांत–प्रकाश, सा0 218, 219, 216, 1 पृ0 68
24. वही, सा0 1–6, पृ0 334, 35
25. सत्य–सिद्धांत–प्रकाश, सा0 7, पृ0 336
26. वही, सा0 16, पृ0 336
27. वही, सा0 19, पृ0 337
28. सत्य–सिद्धांत–प्रकाश, सा0 20, पृ0 337
29. वही, सा0 13, पृ0 197
30. वही, सा0 14, पृ0 197
31. सत्य–सिद्धांत–प्रकाश, सा0 18, पृ0 197
32. वही, सा0 51, पृ0 200

डॉ0 कृष्णा मल्हान
एसोसिएट प्रोफेसर
हिन्दी राजकीय महाविद्यालय,
सैक्टर–9,
गुरुग्राम

तुलसीदास के उत्तरकांड की प्रासंगिकता

काजल

सारांश

हिंदी साहित्य के इतिहास को चार भागो में बाटा जाता है।आदिकाल, भक्तिकाल, रीतिकाल व आधुनिककाल। आचार्य शुक्ल ने भक्तिकाल को पुनः दो वर्गों में विभाजित किया निर्गुण व सगुण । सगुण भक्ति को पुनः दोउप वर्गो में बाटा—राम काव्य 4 कृष्ण काव्य''। ''आचार्य श्याम सुन्दर दास ने इसे 'स्वर्ण—युग' कहा है।

रामकाव्य परंपरा का अध्ययन करने पर सर्व प्रथम हमारा परिचय रामानुजाचार्य जी से होता है।इसके पश्चात रामानंद जी आते है। इस प्रकार रामकवियों की एक लंबी परंपरा रही है। भक्तिकाल मे अनेक दर्शनो का परिचय भी होताहै, जिसके माध्यम से जड व जीव का विषय में ज्ञान प्राप्त होता है। 'राम' शब्द को लेकर सभी की मान्यताए भिन्न भिन्न है।रामकाव्य की प्रारंभता का विषय लेतो, यह 'वाल्मीकिरामायण' से आरंभ होता है।इसी की प्रेरणा से रामकाव्य परंपरा आरंभ हुई थीं, बौद्ध, जैनग्रंथों मे भी रामकथा का प्रसंग आता है। धार्मिक ग्रंथों के अतिरिक्त संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश आदि भाशाओं के साहित्य में भी रामकथा कही गई हैं जैसे—पउमचरिउ । किंतुरामकाव्य के सर्वश्रेष्ठ उपलब्धि तुलसी के 'रामचरितमानस' से प्राप्त हुई।तुलसी पूर्व विष्णुदास, अग्रदास, ईश्वर आदि ने भी रामकथा कही थी, किन्तु राम काव्य की प्रसिध्दि तुलसी जी द्वारा ही प्राप्त हुई।

रामकाव्य परंपरा में तुलसी का स्थान—तुलसीदास जी का रामकाव्य परंपरा में अपना विशिश्ट स्थान है, 'मूलगोसाईचरित' के आधार पर इनके जीवन का परिचय इस प्रकार है— **''पंद्रह सौ चौवन विसे, कालिटी के तीर ।**

श्रावण शुक्ला सप्तमी तुलसी धरे शरीर ''

'शिवसिंह सरोज' में गोस्वामी जी के शिष्य 'बेनी माधवदास कृत ' गोसाई चरित्र का उल्लेख भी मिलता है।किंतु आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का कहना कि—गोसाई चरित्र में बहुत सी बाते इतिहास विरुद्ध जान पड़ती हैं। यह बात माता प्रसाद गुप्त जी भी अपने कई लेखो मे स्पष्ट कर चुकी है। 'आचार्य रामचंद्र शुक्ल' के अनुसार गोस्वामी जी के पिता का नाम—आत्माराम दूबे और माता का नाम हुलसी था।तुलसी जी की रचनाए—रामचरितमानस, विनय पत्रिका, कवितावली, गीतावली, दोहावली, पार्वतमंगल, जानकीमंगल, वैराग्य संदीपनी, कृष्ण गीतावली, बरवै रामायण, रामलला नहछू ,रामाज्ञा प्रश्नावली।

ग्रंथपरिचय— 'रामचरितमानस' को तुलसी जी ने उत्कर्ष पर पहुंचाया था।इसकी रचना संवत् 1631 के चैत्र शुक्ल रामनवमी को आरंभ हुई, रामचरितमानस के अधिकांश पद अयोध्या में और शेष काशी में रचित हुआ। यह ग्रंथ 2 वर्ष 7 माह व 26 दिन में पूर्ण रूप में अभिष्टि हुआ। रामचरितमानस में सात काण्ड हैं—(1) बालकाण्ड (2) अयोध्या काण्ड (3) अरण्यकाण्ड (4) किष्किंधाकाण्ड (5) सुंदरकाण्ड (6) लंकाकाण्ड (7) उत्तरकाण्ड ।

'उत्तरकांड' में' काकभुशुण्डि के माध्यम से रामकथा कही गई हैं।उत्तरकांड में संत—असंतों की चर्चा, कलियुग का वर्णन, सनकादि ब्राहमण का उपवन मे राम से मिलन, मित्रो का संवाद, भरत— शत्रुध्न का प्रेमतत्व हनुमान को उपासना नारी का चित्रण, माया का विरोध, जन्म—मृत्यु चक्र आदि का वर्णन किया गया है।

रामचरितमानस के माध्यम से 'तुलसी' का रामकाव्य परंपरा में, स्थान निर्धारित करते हुए हम तुलसी राम जी के विचारों की प्रासंगिकता पर विचार करेंगे

जौ कारनी सुमझै प्रभु मेरी। की विस्तार कलय सत कोरी। जन अवगुन प्रभु मान न कोउ।दीन बंधु अति बहुत सुभाऊ।।''तुलसीदास जी यहा भारत के माध्यम से यह समझाना चाहते हैं कि राम का कोई भी सेवक हो, चाहे उसमे कितने भी अवगुण हो, फिर भी श्री राम उनका उध्दार कर ही देते है।

जासु बिरह सोचहु दिन राती। रटहु निंरतर गुन गन पाती। रघुकुल तिलक सुजन सुखदाता आयउ कुशल देव मुनि त्राता।

तुलसीदास जी ने यह स्पष्ट करने का प्रयास किया है कि यदि आप किसी भी बात को दिन—रात रटते है, तो वह अवश्य ही पूरी होता, अर्थात आज के समय में भी यह प्रासंगिक है कि प्रयास करने से ही सफलता मिलती है।

निजी दास ज्यो रघुबंसभूषण कब हुँ मम सुमिरन करयो ।।
सुनि भरत वचन विनित अति कपि पुलिक तन चरम्हि परयो ।।
रघुबीर निज मुख जासु गुन कहत अग जग नाय जो।।
काहे न होई विनीत परम पुनित सद्‌गुन सिंधु सो।।

तुलसीजी—हनुमान के माध्यम से यह बताते है कि अगर मनुश्य प्रभु का सेवक है,

तो प्रभु भी उसके गुण करते है।अर्थात् मनुष्य कों निंरतर अपने लक्ष्य की ओर अग्रसरा न होगा।

जधपि सब बैकुंठ बखाना।वेद पुरान विदित जगु जाना ।।
अवधपुरी सब प्रिय नहि मोऊ। यह प्रसंग जानइ कोऊ कोऊ।।

जिस प्रकार राम को बैंकुठ से अधिक प्रिय अपनी अवधपुरी अधिक प्रिय है उसी प्रकार हे मनुष्य तुभी दूसरों के माया विलमत महलो का देखकर निराशा न हो आफ्ना घर ही महल बनाओ, व्यर्थ भटकने से कोई लाभ नही।

पुनि प्रभु हरषि संत्रुहन भेटे हदर्य लगाउ
लक्ष्मिन भरत मिलें तब परम प्रेम दोउ भाई।।

'भरतानुज लछिमन पुनि भेटे । दुसह बिरह संभव दुख मेटे।सीता चरन भरत सिर उनावा।।अनुज समेत पर सुख पावा।।

तुलसी जी ने 'श्रीराम', 'भरत', 'शत्रुधन' भाईयो के प्रेम को दिखाया है. साथ ही आज के समय इसी प्रकार प्रेम करने का संकेत दिया, किंतु इस कलियुग में भाईयों में से प्रेम दुर्लभ है।साथ ही तुलसीदास जी ने सीता के 'मध्यम' से 'भाभी को भी बड़ी मां के सम्मान की तरह नवाजा

हैं।अर्थात भाईयो को मिलकर रहना चाहिए।'**लछिमन सब मातन्ह मिलि हरशे आसिश पाई।**
कैकई बार पुनि मिले मन कर छोभु न जाइय।

लक्ष्मण जी कैकई से बार बार मिलकर भी उनका रोष नहीं जाता है अर्थात हमे कभी भी किसी का बुरा नही करना चाहिए कटुवचनो का प्रयोग नहीं करना चाहिए, क्योंकि कटुवचन सदैव मन पर पत्थर के समान पडे रहते है।

सासहु सबनि मिली बैदेही।चरनन्हि लगी हरशु अति नेही।
दही असीम बूझि कुसलाता।होई अचल तुम्हारी अहिबाला।

तुलसीदास जी ने सीत के माध्यम से यह समझाने का प्रयास किया तुलसी है कि बुरे लोगों के साथ भी सद्व्यवहार करना चाहिए, उसमे तुम्हारी ही महानता का परिचय मिलेगा।अर्थात सास के रूप मे तुलसी ने बडो के आशीर्वाद फलदायिनी बता रहे हैं।

'पुनि रघुपति सब सख बोलाए।मुनिः पद् लाग हुँ सकल सिखाए।
गुर वसिष्ट कुल पूज्य हमारे।इन्ह की कर्पा दनुज रन मारे ।
तुलसीजी के द्वारा बताया गया–गुरु का महत्त्व आज भी प्रासंगिक है के मनुष्यों का उध्दार गुरूओं की सेवा द्वारा ही संभव है, अर्थात, हमे गुरु के चरणों में रहना चाहिए, उनकी सेवा करना चाहिए।

→तुलसीदास जी ने ;हां भारती; संस्— ति का परिच; भी दि;ा हुआ है।भारती; परंपरा को निर्जीव होने से भी बचा;ा है→ **कंचन कलस विचित्र संवारे ।**
स्र्वहो घरे साजि नीज नीज दवारा ।
"सुनत वचन जहँ तहँ जब धाए।सुग्रीवादि तुरत अध्दवए।
पुनीकरूना निधि भरतु हेकारे, निज का राम जटा निरउारे।"

तुलसीजी की बात यह आज भी प्रासंगिक है कि लक्ष्य प्राप्ति के लिए त्याग अनिवार्य है।जिस प्रकार राम और सुग्रीव दोनों ही जटाधारी थे, जब श्री रामजी बनवास गए थे। लक्ष्य प्राप्ति एवं घर आने पर ही जटाओं को उतरवाया था।

''तब विषम माया यम सुरासुर नाग अर आग जग हरे॥
भव पंथ भ्रमण अमित दिवस नितिकाल कर्म गुननि भरे॥
जे नाथ करि करुणा विलोके त्रिविध दुख ते निर्वहे,
भव खेद छेदन दच्छ हम कहुँ रच्छ राम नमामहे॥,

तुलसी जी ने यह बताया कि राम के शरण में आजाने पर यम, असुर, नाग सभी माया के चक्करों से मुक्त होने के साथ–साथ जन्म–मृत्यु के आवागमन चक्कर से मुक्त हो जाते हैं।अर्थात् आज भी इस मार्ग के माध्यम से या भक्ति के माध्यम से ही हम इस कलियुग में यापन कर सकते हैं नहीं तो विनार निश्चय ही हमारे सामने है।

ब्रहानंद मगन कपि सब के प्रभु पद प्रीति ।
जात न जाने दिवस तिन्ह गए मास घट वीति।।

तुलसी जी की मान्यता आज भी प्रास्तविक है कि प्रभु के चरणों में समर्पित होने पर बुरे समय कब बीत जाता है पता ही नही चलता, निराशा होने पर हमें प्रभु के चरणो मे ध्यान मग्न रहना चाहिए, जिससे हमें दुख का एहसास नहीं होगा।

कहेहु दंडवत प्रभु मै तुम्हि कहुँ कर जोरि।
बार–बार रघुनायकहि सुरति कराएहु मोरि।

सुग्रीव जी जाते हुए हनुमान से कहते है–कि प्रभु को मेरा दण्डवत कहना और रघुनाथ जी को बार–बार मेरी याद दिलाना अर्थात् यहां पर तुलसी की भक्तिभावना एवं ह्रदय में व्याप्त रघुनाथ जी के प्रति उतर्कश्ट प्रेम को दिखाया गया है।

'तुलसी दास की राम राज्य/आदर्श समाज की कल्पना की
''राम राज बैठ त्रिलोका।हरशित भए गए सब सोका ।
वपरू न कर काहु सब कोई।राम प्रताप विषमता खोइ''

''वरनाश्र मनिज मिल धरम निरत वेद पय लोग ।
चलहिं सदा पाशायि सुखहि नहिं भय सोक न रोग''
दौहिक दैविक भौतिक तापा ।'राम राज नहि कहुहि व्यापा।
सब नर करहि परस्पर प्रीति।चलहिं स्वधर्म मिरत श्रुति नीती।

तुलसी जी कलियुग में भी ऐसे ही समान की स्थापना करना, जहां वर्णाश्रम का विरोध हो, जहाँ कोई भय शोक ना हो।किसी भी प्रकार का कोई संताप न हो शारीरिक,संसारिक, प्राकृतिक सभी प्रकारो के दुःखों से मुक्त समाज हो।

''अल्पमृत्यु नहि कवनिउ पीरा।सब सुंदर सब विरुज सरीरा ।।

नहिं दरिद्र कोउ दुखों न दीना।नहि कोउ अवधु न लच्छन हीना॥

तुलसीदास जी मनुष्य के आचरण को दर्शाते हुए बताया है कि रामराज्य मे भी अल्प मृत्यु नही होगी। न किसी को कोई पीड़ा होगी।सभी के शरीर सुंदर और नी रोगहैं। न कोई मूर्ख है और न ही कोई दरिद्र हो।

''सब उदार सब परउपकारी।विप्र चरन सेवक नर–नारी॥
एकनारि व्रत रत सब झारी । ते मन बस क्रम पति हितकारी।।

तुलसी जी ने नर एवं नारी को दोनो पतिव्रता व पत्नीव्रता होना बताया है।ब्रह्मणों के चरणों की सेवा को परम धर्म बताया है।

→तुलसीजी ने अनेक स्थानों पर आतिशीक्ति;ों का भी वर्णन कि;ा है जैसे–

" दंड जतिन्ह कर भेद जह नर्तक नृत्य समाज ।
जीतहु मनहि सुनिअ उस रामचंद्र के राज॥"

→वैर–भावना की समाप्ति का भी प्र;ास कि;ा–फूलहि फरिह सदा तर, कानन । तुलसी जी आज भी ऐसा ही समाज की परिकल्पना करते हैं।**रहलि एक स¡ग गज पंचानन॥**

खग–मृग सहज वपरू चिसराई।सबन्हि पर प्रीति बड़ाई ।

1) तुलसीदास जी ने यह भी बताया है कि चाहे हम किसी भी पद पर हो, हम

बड़ो की सेवा तथा अभिमान नही करना चाहिए।जैसे–जेहि विधि कृपासिंधु सुख मानइ ।सोइ कर श्री सेवा निधि जानइ । कौसल्यादि सासु गृह माहीं।सेवइ सर्बान्हि मान मद नाहि
कला की मिल का वर्णन –चारू चित्रसाला गृह गृह प्रति लखे बनाइ। प्राकृतिक वर्णन प्रकृति की सुंदरता का वर्णन–सुमन की वटिका सबहि लगाई, विविध भाति करि जतन बनाई।

तुलसीदास किसी भी जीव को बधनं मे नही रखना चाहते थे वे सदैव के जीव के मुक्ति का आह्वान करते हैं 'आजादी ही सुंदरता के पक्ष पर बल देते हुए कहते हैं

1) नाना खग बालकन्हि लिए बोलत 'मधुर उड़ात सुहाया।

मोर हंस सारस पारावत । भावमि पर सोभा अति पावत।।जह वह देखहिं मिल परिछाही बुह विधि जति नृत्य कराही॥ तुलसीदास जी ने अपने समय का वर्णन करते हुए कलियुगी वातांवरण अर्थात–आज के समाज पर कटाक्ष करत`हुए कहते हैं किस सरयू नदी पवित्र है, उसके घाट, किनारे भी साफ है किंतु आज के समय मे सारी गंदगी नदियों में बहाकर उसे अपवित्र किया जा रहा है।

' उत्तर दिसि सरजू बह निर्मल जल गंभीर।

बॉधे घाट मनोहर स्वरुप पकं नहितीर।।

तुलसी जी का प्राकृतिक के चुकि स्वच्छता का वर्णन हम उपरोक्त वर्णन के द्वारा देख सकते हैं।इसके माध्यम से तुलसी जी समाप्त का मार्ग दर्शन कर रहे हैं।
कहु कहु सरिता तीर उदासी ।बसहिं गयान रत मुनि संयासी तीर तीर तुलसिका सुहाई।वृध्द वृध्द मुमिन्ह लगाई॥

अत तुलसीदास जी ने उस समय पर भी वृक्षो`को लगाना परमावश्यक बताया यही विचार आज भी प्रारंभिक रूप से विद्यमान है कि हमे अधिक से अधिक पेड लगाने चाहिए।प्राकृतिक संतुलन पर भी बल दिया गाया है

"पुर सोभा कछु बरनि न आई।बाहेर नगर परम की पराई॥
जलज त्रिलोचन स्थामल गातही, पलक नयन इस सेवक त्रातहि घृत सर रूचिर चाय नूनीराहि सतं कुज वन रवि रनधीर ।।'तुलसी जी ने ईश्वर की वंदना करने पर बल देते हैं।अर्थात् के करते है

कि जिस प्रकार शलक नयनों की सेवा करते हैं, उसी प्रकार सेवको की रक्षा करने वाले को भेजो।

– **"यह प्रताप रवि जाके पर जब कहु प्रकास । पछिले की प्रथम जे`काहे ते नास**

अवगुणों का विनाश करने का एकमात्र रास्ता बताते हुए–तुलसी जी कहते हैं कि राम को भजने से सभी प्रकार के द्वेष आविध (पाप, काम, क्रोध, कर्म, काल, अवगुण, स्वभाव आदि का नाश हो जाता है।वर्तमान में भी श्री राम जी को भजते से ही हमारा उध्दार हो सकता है।

दोष– **संत संग अपवर्ग कर कामी अब कर पथ करहि संत कवि `कविद क्षुति पुरान संदग्रथ**

तुलसीदास कहते हैं कि सतो के संग से जीवन–मृत्यु के चह से मुक्त हो सकते है और कामी की संगतको बंधनमें उलझते चले जाओगे।प्रातगिंकता के विषय में यही सुनिश्चत किया जाता है सभी का साथ ही अध्धार का मार्ग हो।

'निर्गुण सगुण का समन्वय करते हुए, तुलसीदास जी राम जी की आराधना करते हुए करतेहैं क प्र. " जय निर्गुण जय जय गुणसागर।सुख मंदिर सुंदरअनिनागया जय इंदिरा रमन जब आूधरा अनुपमअज अनाथ, सोभाकारः ॥ सुरी चरोह प्रभु मुख के खानी।जोमुमि क्षेत्र सफल शुभहानीअंतर धामी प्रभु सभ जाया।भूमत करड का हनुमाना।।

संत व असतो की संगति के विषय में तुलसी जी कहते हैं–**"सत असंत भेद दिखलाई।प्रतपाल मोहि कहहु बुझाई सतह के साधन सुनुबमत अगमित क्षृति पुरान विखाय।॥**

संत असतीन के अस्नि करती, जिमि कुठार चंदन आचरठी काटइ परसु मलय सुनु भाई। निज गुन देई सुगंध बसाई।।
तुलसी दास जी कहते है कि मनुष्य अपने कर्मो से अपना भाग्य निरचित क जिसपर चंदन को पता है. कुल्हाड़ी उसेक काटेगी, फिर भी

वह उसमें अपनी घोड़ती है, इसीलिए चंदन देवताओं के सिर पर होती है।

– ''ताते सुर सींसन्ह चढ़त जग वलभ श्री खंड अनल दाहि पटिन धनहि परसु बदन यह दड

सुनहु असजन्ह सुधाऊ भूलैह संगति चरित्र न काउ॥ तिन्ह कर संग सदा दुख दाई।जिमि कपिलहि पालई वर्तमान समय मे भी यह प्रासंगिक है कि दुष्टों की संगति में नही ंरहना चाहिए । उनका सण सदा दुखदायी होता है।भूल कर भी असती के विषय में बताते हुए कहते ह कि बेंझू ठही रहाते हैं, झूठ ही बालेना होता है, झूठी हीं गमा रतेह ''जैसे–झुरुड लेना झूठ देना।भोजन झूठ चमेना कोटि मधुर वचन जि मि मोरा। खाईमहा अतिह्रदय कठोरा॥

आतुपि गुरविश् न माना है।आप गए आरु पालहि आनटिंग

करा हे और बस होईट्रद्रोहप गया। संत संग हरिक्या न आया॥ कुटिल लोगों को माता, पिता, गुरु और ब्राह्मण आदि किसी का साथ नही चाहिए। अर्थात–आज हम अधिकतर अपने निकट इन्ही प्रकार के मनुष्य से परिचित होते हैं।

नरसरीर घरिजेपरपीरा।करहितेसहहि मा भवभीरा॥

करहेमोर बस नर अध नाना।स्वास्थरतपरलोकनसाना॥

उपरोक्त दोहे में तुलसी जी ने जो बताया कि मनुष्य का शरीर धारण कर के, जो लोग दूसरी को दुख पहुँचाते हैं, उनकोजन्म–मृत्यु के महान संकट सहने पड़ते हैं।

→शुभ व अशुभकर्मों के फल के विश; में बतातेहु, तुलसीदासजीआजपदंग; करतेहु, बताते है कि प्रभु श्रीरामकोसभीदेवी, देवता, मुनि भजतेहैअर्थात् वे सर्व श्रेष्ठ है।जैसे–

'त्यागहि कर्मसुधा सुध दस्तक द्य भजहिमोहिसुरनरमुनिनायक ।। संत असंतन्ह के गुणभावे । ते न परहिंभवजिन्हेंलखि राखे ।

Kajal
Ph.No 9999412022
E-mail- kajalthakran9780@gmail.com
Add-village dulhera dist jhajjar(Haryana)
Pin code 124507

कर्मयोगी सन्त महाराज श्री दूलमदास (भीष्म) जी

डॉ0 कृष्णा मल्हान

सारांश

हमारे युग में जीवात्माओं को संसार सागर से पार उतारने वाले कर्मयोगी सन्त महाराज श्री दूलमदास (भीष्म) जी का जन्म फाल्गुन शुक्ला नौंवीं सम्वत् 1962 विक्रमी में तहसील व जिला झज्जर के गाँव मूंदसा (मुनसैं) में जाखड़ गोत्र के जाट परिवार में हुआ। आपके पिता का नाम श्री रामलाल एवं माता का नाम नाहन्टी देवी था। बचपन में आपका नाम दुलीचन्द रखा। आपके भरे–पूरे परिवार में तीन भाई और तीन बहनें थीं। यह एक सामान्य कृषक परिवार था। जहाँ आजीविका हेतु खेती–बाड़ी तथा गाय, भैंस, बैल, ऊँट आदि पशुओं का पालन किया जाता था। बाल्यावस्था में आपने भी संगी–साथियों के साथ बड़ी रूचि से कई वर्षों तक गोचारण किया था। आपका परिवार साधु–सन्तों की सेवा करता था। आपके परिवार में तो कोई समर्पित प्रभु–भक्त नहीं था, परन्तु आपके गाँव में जन्में खूबीदास जी एक ब्रह्मज्ञानी संत के रूप में ख्याति पाने लगे थे जो उन दिनों अकहेड़ी–मदनपुर गाँव में सत्संग करते थे।

जब दूलमदास जी छः सात वर्ष के थे तब इनके माता–पिता इन्हें एक रिश्तेदारी में अपने साथ ले गए। मार्ग में, गाँव जेरपुर (पाली, महेन्द्रगढ़) में, बाबा माधोदास जी का स्थान पड़ता था। वहाँ इनके माता–पिता थोड़ा विश्राम करने के लिए रूक गये। उस समय इनकी गर्दन पर एक फोड़ा निकला हुआ था, जो महीनों से ठीक होने में नहीं आ रहा था। इनकी माता श्री ने अवसर पाकर बाबा माधोदास जी से इस व्याधि का उल्लेख किया। बाबा जी ने बालक को देखा और कहा कि दही के साथ लड्डू खिलने से तीन–चार दिन में फोड़ा ठीक हो जाएगा। फिर पूछा कि आप किस प्रयोजन से यहाँ आए हैं? माताश्री नाहन्टी ने बताया कि थोड़ा आगे रिश्तेदारी में जाएंगे। बाबा जी ने कहा कि वापसी में इसी ओर से आना। बाबा जी के आदेशानुसार वापसी में इनके माता–पिता पुनः उनकी सेवा में प्रस्तुत हो गए। तब बाबा बाधोदास जी ने कहा कि यह कोई साधारण बालक नहीं है, हमारे लिए आदरणीय तथा पूजनीय है। बाबा जी ने एक सुसज्जित रथ मँगा कर इन्हें तथा इनके माता–पिता को आदर के साथ मूनसैं भेजा। बाबा माधोदास जी ने इनमें समाहित दिव्य अलौकिकता को उसी समय पहचान लिया था। इस घटना के बीस–बाईस वर्ष पश्चात् जेरपुर गद्दी के छोटूनाथ नामक साधु महाराज दूलमदास जी के मार्ग–दर्शन एवं इनकी 'मौज' प्राप्त करने हेतु, इनको ढूंढ़ते, इनके पास मुनसैं तालाब पर पहुँचे। इन्होंने बताया कि हमें बीस वर्ष पहले बाबा माधेदास जी ने बताया था कि आप हमें इस स्थान पर, इस रूप में मिलेंगे। बाबा छोटूनाथ महाराज दूलमदास जी के शरीरांत के समय माड़ौधी डेरे में पधारे थे।

उन दिनों गाँवों में बालकों की शिक्षा की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता था। इस कारण इनकी औपचारिक शिक्षा नहीं हो सकी। सत्संग से जुड़ने पर ही इन्होंने अक्षर–ज्ञान प्राप्त किया और सन्तों की वाणियों को पढ़ने–समझने के योग्य हो गये। ये कुशाग्र बुद्धि थे। कालान्तर में साधु–संगत और जीवनानुभवों से अपरिमित ज्ञान अर्जित किया। बचपन को पार कर युवावस्था में पहुँच कर ये एक बलिष्ठ एवं सुदर्शन शरीर के युवक थे। इनका कद लम्बा, नाक ऊँची सुतवाँ तथा तेजोमयी दृष्टि थी। ये गौर वर्णी थे। इनके मुख पर ऐसी तेजस्विता थी कि आम आदमी इनसे नजर नहीं मिला सकता था। ये निडर और दबंग स्वभाव के थे।

महाराज दलेदास जी गुरु की खोज में सर्वप्रथम बादली (झज्झर) के चौधरी इन्द्राज जी के पास गए। उन्होंने कहा कि साधु बन कर भीख माँग कर गुजारा करोगे। एक भिखमंगा साधु समाज के लिए ठीक आदर्श प्रस्तुत नहीं करता। उन्होंने उन्हें बहुत समझाया लेकिन साधु बनने की इनकी दृढ़ बलवती इच्छा देखकर इनके गाँव के सन्त खूबीदास जी के पास जाकर भक्ति–मार्ग में दीक्षित होने का आदेश दिया। महाराज दलेदास जी ने इन्हें काम करके खाने का वचन दिया जिसका उन्होंने अन्त तक दृढ़तापूर्वक पालन किया। ये खूबीदास जी के पास गए और उन्हें गुरु धारण कर लिया।

इन्होंने साधना में पूर्णता हासिल की। इन्होंने सन्त जैतराम जी की वाणी का प्रकाशन करवाया। इन्होंने रोहतक के नजदीक गाँव माड़ौधी रांगड़ान में साढ़े तेईस एकड़ की जमीन खरीदी और अपने परिश्रम से हल जोत कर अन्न उगाया। फल–फूल के पेड़–पौधे उगाये। पशु पाले ताकि सत्संगी जनों, साधुओं के खान–पान का उचित प्रबन्ध हो सके। 'मांगन से मरना भला' इनका सिद्धान्त रहा।

कर्म ही धर्म है

महाराज श्री कर्मयोगेश्वर थे। वस्तुतः महाराज श्री सभी योगों के सिद्धयोगेश्वर थे – भक्ति योग, ज्ञान योग, तप योग, सहज योग – सभी के बिनानी पुरुष थे। किन्तु कर्म योग गृही–वैरागी, आबाल–वृद्ध सभी के लिए उत्तम है। सहज ही सिद्ध होने वाला, सर्वसुलभ होने के कारण महाराज श्री इसी का उपदेश देते थे।

महाराज श्री से जब भी कोई परमार्थ लाभ के लिए कुछ बतलाने की जिज्ञासा करता तो मुख्यतः कर्मयोग पर अधिक बल देते थे महाराज श्री। महाराज श्री कहते थे कि वह सर्वसुलभ योग है, परमार्थ का सीधा–सरल मार्ग है। यह प्राचीनतम योग है– इसमें किसी प्रकार की जटिलता नहीं, सभी के लिए शक्य है। महाराज श्री का इस योग पर विशेष बल इसीलिए था कि इसमें किसी साधन की जटिलता नहीं। इसे साधने के लिए बहुत ज्यादा शिक्षा की आवश्यकता नहीं पड़ती। महाराज श्री कर्मयोग को सभी साधनों का मूल मानते थे कि कोई योग करे उसमें कुछ न कुछ कर्म की आवश्यकता तो रहती ही है– इसके कर्म के, बिना कोई योग नहीं साधने वाला। इसीलिए यह सभी परमार्थ साधनों का मूल है। सभी को सहज सुलभ होने के कारण इसे सुखमूल मानते थे।

महाराज श्री इस कर्मयोग को सतलोक तक पहुँचने की सुगम सीढ़ी मानते थे। इस सहज–सुलभ योग को महाराज श्री भवतारक बोहित मानते थे। महाराज श्री कहते थे कि अपना कर्म अपनी

पूर्ण कुशलता से करें– मनोयोग से करें। कर्म कुशलता की महाराज श्री कर्मयोग की संज्ञा देते हुए कहा करते थे कि प्रभु को साक्षी मानकर, हाजिर–नाजिर मान कर, तन–मन की पूर्ण क्षमता से काम करें, प्रभु का काम मानकर प्रेम से करें पूर्ण कुशलता से करें और प्रभु को सौंप दें कि राम जी आपने करवाया– मुझे मिमित्त बनाया –यह काम, यह कर्म आपका ही है, आप ही इसके कर्त्ता हैं। मुझे निमित्त बनाया यह आप की कृपा है, आपका ही काम आप ही सम्भालें– फल जो दें आपका प्रसाद है– सर्वात्मना मुझे स्वीकार है। मुझे अपना यंत्र बना लें, मुझसे खूब काम लें– जो फल दें, आपकी रजा, मेरी कोई पसंद नहीं, कोई कामना नहीं। महाराज श्री निरिच्छ कुशल कर्म को कर्मयोग मानते थे।

खेती करने वाला खेती करें, नौकरी करने वाला नौकरी करें, दुकानदार लेन–देन करें, बहन–बेटियाँ घर का काम करें–सभी अपने–अपने कर्त्तव्य कर्म को पूर्ण निष्ठा से, राम जी का काम मानकर कुशलता से करें और परिणाम की, फल की इच्छा नहीं करें– महाराज श्री इसे ही कर्मयोग मानते थे। महाराजश्री मानते थे कि कर्म से कोई बचाव नहीं है– सभी के लिए कर्म की अनिवार्यता है। बस इस कर्त्तव्य कर्म को अपने सिर न रखकर, स्वयं को कर्त्ता न मानकर कर्म प्रभु को ही अर्पित करें– प्रभु को ही कर्त्ता मानें – ऐसा महाराज श्री कहते थे। इससे निर्भार हो – कर्म–काई से अलिप्त रहकर मानव कर्म करके भी निःकाम रहने –होने का उत्तम लाभ ले सकता है।

महाराज श्री सामान्य कामकाजी गृहस्थ को, गृहिणी को भी कर्मयोग की युक्ति बतलाते हुए कहा करते थे कि सामान्य गृहस्थ भी अपने कर्त्तव्य कर्म को प्रभु का काम मानकर निष्ठा से करे, प्रेम से करें तो इसे भी एक पूर्ण कर्मयोगी की रहनी का लाभ मिलेगा। वे कहते थे कि सब कुछ प्रभु का है तो आदमी स्वयं को कर्त्ता मान कर, इस कर्म की पोट के बोझ से क्यों दबे– यह कर्म भी उसी का है। उनका मानना था क हाथ में काम और मन में राम– बस योग सध गया।

महाराज श्री के अनुसार सामान्यजन यदि अपने कर्त्तव्य कर्मों को प्रभु अर्पित न भी कर पाये तो सामान्य व्यावहारिक दृष्टि से भी, नैतिक दृष्टि से भी, एक भले सामाजिक की भाँति कर्म करे। कर्म करते ध्यान रखे कि मेरे कर्म से किसी को हानि न हो, मेरे कर्म से किसी का मर्म न दुखे, मेरे कर्म से, समाज का हित हो, मेरे कर्म से राष्ट्र का हित हो, मेरे कर्म से मानव मात्र का हित हो, मेरे कर्म से प्राणीमात्र का हित साधन हो। सामान्य गृहस्थ के लिए महाराज श्री का उपदेश था कि कोई भी ऐसा कर्म जो आपको अपने लिए अच्छा न लगे– वह कर्म दूसरे के लिए मन, वचन से भी न करें। वे उपदेश देते थे कि हर भला काम आपको प्रभु से जोड़ता है। जो काम, जो विचार किसी के हित के लिए किया जाए– महाराज श्री उसको गृहस्थ के लिए कर्मयोग के समतल मानते थे।

महाराज श्री के अनुसार हर वह कर्म जिसके करने में अपना कोई स्वार्थ नहीं और दूसरे का हित साधन होता है – वह कर्मयोग की श्रेणी में आता है। वे कहते थे कि सामान्य जन के लिए हर भला कर्म, सत्कर्म, परोपकार आदि प्रभु की राह पर अग्रसर करने वाला होता है। महाराजश्री जन सामान्य की सीमाओं से परिचित थे, अतः व्यावहारिक ज्ञान की बातें जो सभी के लिए सहज सम्भव हो, वहीं छोटी–छोटी परोपकार की, जीव दया की बातें दर्शनार्थियों को बतलाते थे। अपने आचरण से सीख देते थे। लोगों को सन्मार्ग पर लगाते थे। स्वयं उन्हीं जैसा बनकर सीख देते थे। महाराज श्री स्वयं को लोगों की दृष्टि में कभी अलौकिक सत्ताधारी या विशेष सिद्ध पुरुष के रूप में प्रस्तुत नहीं करते थे।

महाराज दूलमदास जी लोगों में कर्म के प्रति प्रमाद, आलस्य, निठल्लापन देखते थे। वे इस वस्तुस्थिति से परिचित थे कि लोग ताश खेलते रहते हैं, इधर–उधर समय को नष्ट करते हैं, कर्म से जी चुराते हैं। ये सब बातें महाराज श्री को पता थी – इसलिए लोगों की अकर्मण्यता, प्रमाद को दूर करने के लिए, लोक–शिक्षण के लिए महाराजश्री रात–दिन घोर परिश्रम करते थे। यह केवल लोक–शिक्षण के लिए करते थे, अन्यथा उन्हें बिना कुछ किये ही सब प्राप्त था – प्राप्त हो सकता था। महाराजश्री कहते थे कि समाज में समर्थ पुरुषों को विशेषकर सन्यासियों को, कर्म का त्याग नहीं करना चाहिए, क्योंकि समाज सदा से बड़ों की नकल करता, अनुसरण करता आया है। अगर समाज के अग्रपुरुष परजीवी होने का अस्वस्थ उदाहरण पेश करेंगे तो सामान्यजन कभी भी कर्म की ओर प्रवृत्त नहीं होगा।

महाराज श्री दूलमदास (भीष्म) जी बड़ा बल देकर कहते थ कि गृहस्थियों में जो अपना कर्त्तव्य कर्म ठीक से करेगा, उसे भी कर्म–बन्धन नहीं लगेगा। महाराज श्री बार–बार कहते थे कि प्रभु आश्रित हो जो अपना कर्त्तव्य कर्म करेगा, स्व धर्म (कर्त्तव्य–कर्म) का पालन करेगा, तो कर्त्ता के लिए यह कर्त्तव्य कर्म ही उसके लिए कल्पवृक्ष बन जाएगा– यही कामधेनु हो जाएगा। मानव की, अपनी करणीय कर्म को ठीक से करने में ही उसकी सद्गति है। अपने कर्त्तव्य कर्म का ठीक से निर्वाह न करने वाले के जीवन को महाराजश्री निष्फल, असफल कहते थे। शरीरधारी के लिए कर्म, उचित कर्म, सत्कर्म अनिवार्य हैं। उनका कहना था कि मानव जीवन एक अखण्ड यज्ञ रूप होना चाहिए, निरन्तर भले कर्म करते रहना चाहिये। यह संसार मानव के लिए कर्मभूमि है– भोग तो मात्र निर्वाह के लिये है। यहाँ जीवन धारण कर, सांसारिक भोगों में भूल कर स्वधर्म में जो प्रमाद करते हैं सद्पथ–सत्कर्म छोड़ जो निज स्वार्थ में लिप्त रहते हैं, सो जीवन–जन्म हार कर जाते हैं– ऐसा महाराजश्री कहते थे।

निष्कर्ष:

महाराजश्री की वाणी थी कि इस सृष्टि का धर्म कर्म है। कर्म ही इस सृष्टि का ब्रह्म है। कर्म ही सबसे बड़ा देवता है। कर्म ही कर्म से मुक्त कराता है– अग जग के भलाई के काम करते जाइये, करते जाइये – या ही विधि राम जी पाइये, राम जी पाइये!

संदर्भ –

1. संत दूलमदास जी भीष्म (जीवन और वाणी) : डॉ0 हनुमन्त राय नीरव : जन्म, परिवार और देहयष्टि, पृ0 19
2. वही, पृ0 20,21
3. बाबा भाव बोध : डॉ0 सूरजभान, पृ0 254, 255
4. बाबा भाव बोध : डॉ0 सूरजभान, पृ0 256, 257, 258

डॉ0 कृष्णा मल्हान

एसोसिएट प्रोफेसर

हिन्दी राजकीय महाविद्यालय,

सैक्टर–9, गुरुग्राम

भारत में जनसंख्या वृद्धि एवं नगरीकरण की समस्यायें

डॉ0 जिलेदार, डॉ0 बुद्धिप्रिय सिद्धार्थ

सारांश

भारत में जनसंख्या कारक भी समाजिक परिवर्तन लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं । क्योंकि किसी समाज की रचना को जनसंख्या प्रत्यक्ष रुप से प्रभावित करती है । जनसंख्या आकार , जन्मदर , मृत्युदर , देशान्तरगन जनसंख्या की कमी एवं बहुलता स्त्री पुरुशों का अनुपात युवकों एवं वृद्धों की संख्या आदि सभी जनसंख्या का कारक माने जाते हैं । पृथ्वी पर आवादी विभिन्न जीवों की संख्या एवं उपलब्ध संसाधनों के मध्य सह अस्तित्व बनायें रखने वाली ऐसी जैविक प्रक्रिया है । जिसका एक निश्चित अनुपात में संतुलित रहना अनिवार्य है । आवादी का अनियन्त्रित विस्तार न केवल हमारे आर्थिक विकास को पीछे ढकेल देता है बल्कि सामाजिक मानवीय संसाधनों को भी कमजोर करता है । भारत में आवादी के विस्फोट ने इको अनुपात को बिगाडकर असन्तुलन पैदा कर दिया हैं । अनेक सामाजिक संकट खड़े करने के साथ ही हमारे विकासात्मक प्रयासों एवं अवधारणाओं को भारी धक्का पहुँचाया है ।

ग्रामीण परिवेश में आधारभूत सुविधाओं जैसे शिक्षा स्वास्थ्य एवं सुरक्षा आदि की अनुपलब्धता लोगों को नगरों की ओर पलायन करने की ओर अग्रसर करती है । इस तरह से नगरीकरण की गति बढ़ने से अनेक समस्यायें उत्पन्न होती हैं जैसे –

1. नगरों में जनसंख्या तेजी से बढ़ने के कारण स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्यायें पैदा हो गयी हैं , शहरों में अस्पताल हैं , लेकिन वहाँ पर ग्रामीण एवं नगरीय जनसंख्या का दवदवा इतना है कि वैद्यों और डॉक्टरों की कमी व अन्य सुविधाओं की कमी हो रही है ।

2. शिक्षा एवं बेरोजगारी की समस्या जहाँ एक ओर स्कूल / कालेजों की संख्या सीमित हैं , शिक्षा सुविधा मांगने वालों की संख्या में लगातार वृद्धि हो रही है जहाँ प्रवेश स्थान सीमित हैं इससे युवक प्रवेश पाने में वंचित रह जाते हैं । इसी तरह बेरोजगारी की समस्या भी होती है जहाँ ग्रामीण एवं नगरीय से लोग सीमित जगहों के लिये दौड़ते हैं ।

3. नगरों में शान्ति बनाये रखना एक समस्या बन गयी हैं, कभी कारखानों में हड़ताल होती है तो कभी राजनैतिक दलों की रैलियां या जेल भरों आन्दोलन या धरना तो कभी मालिको द्वारा तालेबन्दी । इन सबसे शहरों से शांति व्यवस्था भंग हो जाती है और अव्यवस्था फैल जाती है ।

4. सफाई संबंधी समस्या बढ़ती जनसंख्या के कारण उत्पन्न हो गयी है । अत्यधिक जनसंख्या घनत्व के कारण शहरों का कुछ क्षेत्र ऐसा हो जाता है जिससे सफाई आदि की कोई खास व्यवस्था नहीं हो पाती है उसके कारण अनेक तरह की बीमारियां उत्पन्न होती है जो केवल उन गन्दी बस्तियों तक ही सीमित नहीं रहती है बल्कि वायरस के माध्यम से वो अपना प्रकोप अन्य क्षेत्रों में भी फैलाते हैं ।

शिक्षा , स्वास्थ्य मकान एवं शांति एवं सुरक्षा आदि व्यक्ति की मूलभूत सुविधाओं का धीरे – धीरे ह्रास होता है ।जहां एक ओर हमें स्वच्छ एवं खुले वातावरण की आवश्यकता होती है , वहां पर हम पाते हैं कि खुला और स्वच्छ वातावरण तो दूर हमें पर्याप्त रोशनी भी मुहैया भी नहीं होती है , इस घुटन भरी और उबाऊ जिन्दगी में सिर्फ हमारा दम घुट रहा होता है , हम सिर्फ जीवित होते है । जिन्दगी का आनन्द नहीं ले पाते हैं । यहाँ पर सिर्फ निवास की भी समस्या नहीं होती है । बढ़ती जनसंख्या का दवाब खाद्यान्नों पर भी पड़ता है । पर्याप्त मात्रा में पोशक तत्वों के न लेने पर कुछ कुपोशण का शिकार हो रहे हैं । तो दूसरी ओर मिलावटी खाद्य– पदार्थो की वजह से भी अनेक तरह की बीमारियाँ पैर फैला रही है । जिनकी रोकथाम के लिए सरकार करोड़ो रुपये व्यय करती हैं , बावजूद इसके समस्या जस की तस बनी हुई है । यह सब बढ़ती जनसंख्या के दुश्प्रभाव या दुश्परिणाम ही है कि सीमित साधनों का अनवरत असीमित दोहन आज हमें यह ध्यानाकर्शित करने के लिए यह बाध्य करती है कि बीमारी भुखमरी , महंगाई और बेरोजगारी आदि समस्याओं से जो एक वर्ग जूझ रहा है उस से हम सभी लोगों की यही समस्या हो जायेगी ।

समग्रतः कहा जा सकता है कि शहरी विकास की प्रक्रिया में सबसे बड़ा अवरोध जनसंख्या वृद्विकी समस्या है, श्री मनीशदेव कहते हैं कि भारत भी अब विकसित देशों की श्रेणी में आता जा रहा है लेकिन मलिन बस्तियों की दशा जस की तस है । उसमें कोई उल्लेखनीय सुधार नहीं आया है , मलिन बस्तियों में लोगो की संख्या निरन्तर बढ़ती जा रही है निर्धनता तथा बेरोजगारी के मकड़जाल में फँसे लोग गॉवो से शहरो में आकर जहाँ कहीं भी खाली जगह पाते हैं वही तिरपाल की झोपड़ी बनाकर रहने लगते हैं , बोटबैंक की राजनीति के तहत इन मलिन बस्तियों में रहने वाले लोगों को संरक्षण प्रदान किया जाता है । इस कारण समस्या तमाम विकास योजनाओं के बावजूद स्थिर बनी रहती है । स्थायी समाधान तो यह है कि ग्रामीण क्षेत्रों में आय एवं रोजगार के साधन सृजित किए जाएं जिससे ग्रामीण क्षेत्रों से जनता का पलायन रुके , जनता को अपने में समेटने की प्रत्येक शहर की क्षमता सीमित है क्योकि उसके भौगोलिक क्षेत्रफल सीमित है । यदि शहरों में हो रहे जनसंख्या अप्रवाह को नियंत्रित करने को कोई स्थायी समाधान नहीं खोजा गया तो शहरों की समस्या यथाावत् बनी रहेगी ।

नगरीकरण की समस्याऐं –

तेजी से शहरीकरण और बढ़ती शहरी आबादी को स्वास्थ्य समस्याओं के समाधान की दशा में बड़ी चुनौतियों के रुप में देखा गया है । यह अनुमान है कि 1990 और 2025 के बीच विकासशील देशों में शहरी आबादी तीन गुना बढ़ गई होगी और यह कुल आबादी का 61 प्रतिशत हो जाएगा । इस बढ़ती शहरी आबादी के मद्देनजर स्वास्थ्य सन्बन्धी कई चुनौतियों जैसे पानी , पर्यावरण , हिंसा और चोट , गैर – संचारी रोगों का सामना करना पड़ सकता है ।इसके अलावा , तंबाकू के उपयोग , अस्वास्थ्यकर आहार , शारीरिक निश्क्रियता और महामारी

के प्रकोप से जुड़े जोखिम और खतरे कम चुनौतीपूर्ण नहीं हैं ।

पर्यावरणीय चुनौती :–

पर्यावरण संरक्षण के मद्देनजर शहर एक बड़ी चुनौती बनते जा रहें हैं क्योंकि शहर के विकास के लिए हरित क्षेत्र की बलि दी जा रही है । जलवायु परिवर्तन ने कई शहरों के अस्तित्व को चुनौती दी है , खासकर समुद्र तटीय शहर अब मानव निर्मित आपदाओं से अछूते नहीं हैं । इसके अलावा , तेजी से तकनीकी विकास शहरों में कई पारंपरिक व्यापारिक समूहों के लिए खतरा बन जाता है क्योंकि यह पर्यावरण को भी नुकसान पहुंचाता है ।

भाहरों में बढ़ती झुग्गी बस्तियाँ :

देश के सभी प्रमुख शहरों और महानगरों में बड़ी संख्या में झुग्गी बस्तियों का गठन किया गया है । उनमें रहने वाले लोग शहरी आबादी से सम्बन्धित उच्च और मध्यम वर्ग की कई जरूरतों को पूरा करते हैं , लेकिन वे न केवल गरीबी के शिकार हैं , बल्कि बुनियादी सुविधाओं से भी वंचित हैं ।

यातायात की समस्या :

हर शहर में बेतरतीब यातायात एक गम्भीर समस्या बन गई है क्योंकि सार्वजनिक परिवहन सेवाएं लगभग समाप्त हो गई हैं । शहर में रहने वाले अमीर लोग अपनी शक्ति और समृद्धि का प्रदर्शन करने के लिए यातायात नियमों का उल्लंघन करते हैं और इससे बड़ी संख्या में दुर्घटनाएं होती हैं ।

कुछ अन्य समस्याएं :–

हमारे देश का लगभग हर शहर सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाओं से वंचित है । निजीकरण और स्वास्थ्य सेवाओं के व्यावसायीकरण ने शहरों में असमानता पैदा कर दी है ।

शहरों की सड़कों पर गड्ढे, सीवर प्रणाली की कमी और जल भराव , बिजली , पानी और संचार सुविधाओं के अव्यवस्थित रूप के कारण समस्याएं शहरी जीवन को इतना अधिक समस्याग्रस्त बना देती हैं कि मात्र कई शहरों में जाने के बारे में सोचा जाना दूभर हो जाता है ।

शहर भी तुलनात्मक रूप से अपराध से अधिक असुरक्षित हैं । कंक्रीट के जंगल में रहने वाले लोग अपने पड़ोसी को भी नहीं जानते हैं । भावनात्मकता , संचार की खाई और विशयगतता शहरी आबादी के जीवन का हिस्सा बन गई हैं ।

वैश्वीकरण के बाद , गाँव अब केवल खाद्य , श्रम और कच्चे उत्पादों के आपूर्तिकर्ता बन गए हैं । शहर आधुनिकीकरण और उपभोक्तावादी सभ्यता को दर्शाते हैं और अधिकांश गांव अपने अस्तित्व के लिए इन शहरों से जुड़े हुए हैं । शहरीकरण , औद्योगीकरण , सामाजिक गतिशीलता और प्रवासन की प्रक्रिया में वृद्धि हुई है और एक नई पीढ़ी ने गांवों से शहरो की ओर पलायन करना शुरू कर दिया है ।

निष्कर्ष :

इस तरह हम देखते हैं कि भारत में बढ़ते शहरीकरण के कारण कई समस्याएँ पैदा हुई हैं । इन समस्याओं के पीछे मुख्य कारण बढ़ती जनसंख्या है । भारतीय शहरों में पुरानी परंपरा के अनुसार , परिवारों के लिए रहना बहुत मुश्किल है क्योंकि आधुनिक समय में तेजी से और मूलभूत परिवर्तन हो रहे हैं । पुरानी परंपरा कृषि समाज के अनुसार है । शहरी परंपरा और ग्रामीण परंपरा में इसका तीव्र विरोध है । यह स्वाभाविक है कि प्रौद्योगिकी और शहरी समाजों में , नए प्रतिमान विकसित होंगे । कोई फर्क नहीं पड़ता कि कौन सी संस्था , संगठन का मुख्य उद्देश्य मानवीय जरूरतों को पूरा करना है । वे संस्थान जो किसी भी समय मानवीय आवश्यकताओं को पूरा करने में असमर्थ हैं , वे हैं : यह समाप्त होता है । शहरों के विकास के लिए , सरकार ने ग्रामीण क्षेत्रों में कई रोजगार योजना , ट्रिसम , आरएलईजीपी । आदि प्रदान किए गए हैं । इसके साथ ही शहरी बाहरी इलाकों में विकास पोल केंद्र स्थापित करना होगा । शहरी क्षेत्रों में स्थित औद्योगिक प्रतिशठानों को भी बाहरी क्षेत्रों में स्थानांतरित किया जाना चाहिए । इससे शहरी क्षेत्रों में जनसंख्या का दवदवा कम होगा और प्रदूशण के स्तर में काफी कमी आएगी । इन उपायों को सफलतापूर्वक लागू करने से ही हम इन समस्याओं से छुटकारा पा सकते हैं ।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची –

1. कुरुक्षेत्र , सितम्बर 2003 पृ0 – 19
2. समाजशास्त्र (बी0ए0 प्रथम वर्श) डा0 पंत एवं डा0 जैन पृ0 79
3. अर्थशास्त्र (बी0 ए0 प्रथम वर्श) डा0 पंत एवं डा0 जैन पृ0 79
4. प्रतियोगिता दर्पण , अक्टूबर 2010 पृ 501
5. नगरीय भूगोल , डॉ सुरेश चन्द्र बंसल , मिनाक्षी पब्लिकेशन , नई दिल्ली
6. भारत में नगरीय समाज , रिया खत्री , कैलाश पुस्तक भवन , भोपाल , मध्यप्रदेश
7. नगरीय समाज शास्त्र , डॉ. वी एन सिंह , रावत पब्लिकेशन , जयपुर , नई दिल्ली
8. जनसंख्या भूगोल , डॉ चतुर्भुज मामोरिया , साहित्य भवन पब्लिकेशन , आगरा , उत्तरप्रदेश

डॉ0 जिलेदार

एम0ए0 , बी0 एड0 , पी0 एच0 डी0

असिस्टेट प्रोफेसर भूगोल विभाग /कार्यवाहक प्राचार्य

ईश्वरी प्रसाद रामकली देवी महाविद्यालय

विरासिन , निगोही , शाहजहाँपुर , उ0प्र0

डॉ0 बुद्धप्रिय सिद्धार्थ

असिस्टेट प्रोफेसर समाज शास्त्र विभाग

ठाकुर रोशन सिंह संघटक राजकीय महाविद्यालय ,

नवादा – दरोवस्त , कटरा , शाहजहाँपुर , उ0प्र0

मो0 नं0 –9415587252 ,

Email - dr.buddhapriya@gmail.com

पत्राचार पता –

डॉ0 जिलेदार पुत्र स्व0 श्री सूबेदार

ग्राम – दीपपुर , पो0 – खुदागंज , तह0 तिलहर ,

जिला – शाहजहाँपुर उ0प्र0 पिन कोड़ – 242305

मो0 नं0 – 9198729024 ,

Email – jiledarspn@gmail.com

संथाली भाषा साहित्य का सामान्य परिचय

शकुन्तला बेसरा

सारांश

हमारा देश भारत जो तीन ओर महासागरों से तथा एक ओर विशाल हिमालय पर्वत श्रृंखला से घिरा हुआ है। अपने आप में एक मनोरम दष्य को प्रस्तुत करता है। भारत देश 28 राज्यों और 8 केन्द्र शासित प्रदेशों से सुसज्जित है। इनमें हमारा झारखण्ड भी है। जो घने जंगलो, पहाड़ों, नदियों और पठारों दुर्गम इलाकों वाला धरती का एक ऐसा हिस्सा है जिसे प्रकृति ने अपनी बेशुमार नेमतों से सजाया है।

झारखण्ड प्रदेश 24 जिलों और पाँच प्रमंडल में विभक्त है। सांस्कृतिक गरिमा एवं वैभव से युक्त झारखण्ड का इतिहास गौरवशाली है। झारखण्ड भारत का एक ऐसा अनोखा राज्य है जो अपनी वैविध्यपूर्ण भाषिक सम्पदा के कारण देश के मानचित्र पर एक विलक्षण स्थान का अधिकारी है। इस राज्य का अनोखापन इस बात से भी है कि यहाँ पर एक साथ कई भाषा परिवार की भाषाएँ बोली जाती है। ये भाषाएँ इस क्षेत्र के लोक जीवन की आस्था उमंग तथा उल्लास की वाहिका है।

झारखण्डी भाषा के रुप में उन भाशाओं को भी प्रमुखता दी जाती है, जिनसे राज्य की सांस्कृतिक अस्मिता जुड़ी हुई है। ये विशुद्ध झारखण्डी भाषाएँ ही राज्य को विशिष्ट पहचान दिलाती है। इन भाषाओं की अपनी लोक–साहित्य है, जिसमें झारखण्ड की लम्बी परम्परा, संस्कृति एवं संघर्ष की तसवीरें दिखाई पड़ती है। इन भाषाओं में रचित लोक–गीतों में लोक जीवन के विविध रंगों के दर्शन होते हैं। झारखण्ड राज्य में एक साथ तीन परिवारों की कई भाषाएँ बोली जाती है।

ऑस्ट्रिक भाषा परिवार – इसके अन्तर्गत संताली, मुण्डारी, हो, खड़िया प्रचलित है।

आर्य भाषा परिवार – इसके अन्तर्गत नागपुरी, पंचपरगनिया, कुरमाली, खोरठा आदि हैं।

द्रविड़ भाषा परिवार – इसके अर्न्तगत कुड़ुख भाषा है।

संताली भाषा भारत के विस्तृत भू–भाग की मातृभाषा है जो कि यूरेशिया भाषा परिवार में आती है। यूरेशिया भाषा परिवार मुख्य रुप से दो महादेशों क्रमशः यूरोप और एशिया में बोली जाती है। उन्ही के आधार पर इसका नाम यूरेशिया (यूरोप+एशिया) पड़ा है। इस परिवार के ऑस्ट्रोएशियाटिक भाशा को ऑस्ट्रिक (आग्नेय) भाषा परिवार कहा गया है। ऑस्ट्रिक शाखा भारत के आदिवासियों की भाषा की सबसे बड़ी शाखा है।यथा – संताली,मुण्डारी,हो,खड़िया, सबर, जुवांग, गुतोब, निकोबारी, खासी आदि।

संताली भाशा ऑस्ट्रिक भाषा परिवार की महत्वपूर्ण भाषा है। यह भाषा झारखण्ड राज्य के अलावे बिहार, पश्चिम बंगाल, उड़ीसा, मध्यप्रदेश और असम आदि राज्यों के विभिन्न भागों में बोली जाती है।

ऑस्ट्रिक परिवार की यह भाषा संतालों के इतिहास से सम्बन्धित है। यह भी रोमन, देवनागरी और 'ओल–चिकी' लिपि में लिखी जाती है।'ओल–चिकी'नाम की लिपि पंडित रघुनाथ मुर्मू द्वारा सन् 1925 ई0 में तैयार की गयी है। झारखण्ड राज्य के शिक्षण संस्थनों में स्कुल/कॉलेज एवं विश्वविद्यालयों में इसकी पढ़ाई हो रही है।

झारखण्ड के अलावे पश्चिम बंगाल, उड़ीसा और असम के क्षेत्रों में जहाँ कहीं भी संताल जनजाति बसे हैं, उन्होंने अपनी संताली भाशा का ही उपयोग किया है। ईस्ट इडिया कंपनी ने झारखण्ड में संतालियों की सर्वाधिक जनसंख्या वाले क्षेत्र को संताल परगना नाम से अभिहित किया। झारखण्ड राज्य के अन्तर्गत देवघर, दुमका, गोड्डा, पाकुड़, साहेबगंज जिलों में तथा पश्चिम बंगाल के मालदा, वीरभुम, बाँकुडा, बर्द्धमान जिलों में प्रचलित संताली भाषा को उत्तरी संताली कहा जाता है। तथा पश्चिम बंगाल के मेदनीपुर एवं उड़ीसा के विभिन्न क्षेत्रों में प्रचलित संताली को दक्षिणी संताली कहा जाता है।झारखण्ड में प्रचलित संताली की मानक संताली मानी जाती है। भारतीय संविधान का 92वाँ संशोधन अधिनियम 2003 के तहत संताली को आठवी अनुसूचि में जोड़ा गया।

संताली की अपनी स्वतंत्र सांस्कृतिक और साहित्यिक परम्परा होने के कारण संताली भाषा साहित्य का स्वतंत्र अस्तित्व है। संताली साहित्य को सामान्यतः दो भागों में विभाजित किया गया है। संताली लोक साहित्य और संताली शिष्ट साहित्य।

संताली लोक साहित्य अधिकाशतः मौखिक रुप में मिलती है। लोक साहित्य में "लोक" शब्द का अर्थ 'होड़' है। इसका अर्थ होता है। मानव जाति। लोक साहित्य में लोक साहित्य में लोक जीवन के भावों, विचारों और विविध घटनाओं आदि के विशय हैं। लोक साहित्य में मानव की परम्परागत भावनाएँ एवं चेतनागत सभी अभिव्यक्ति का लेखा–जोखा निहित होता है। इसके अन्तर्गत किसी भी जाति के रीति–रिवाज, रहन–सहन, विश्वास, कथाएँ, कहानियाँ, गीत, संगीत, मुहावरे, पहेलियाँ, लेकोक्तियाँ आदि आते हैं। संताली लोक साहित्य में संस्कृति का एक अंग है। यही कारण है कि लोक साहित्य में जातीय संस्कार, पूर्वजों की कथाएँ, रीति–रिवाज, सामाजिक व्यवस्थाएँ, पर्व–त्योहार, कथा, गीत,मुहावरे, लोकोक्तियाँ, पहेलियाँ इत्यादि पाये जाते है।

निष्कर्षः

इस प्रकार संताली भाषा साहित्य का महत्वपूर्ण स्थान है। कई रुपों में इसके महत्व को देखा जात है। यथा–ऐतिहासिक महत्व, सामाजिक महत्व, साँस्कृतिक महत्व, आर्थिक महत्व, भौगोलिक महत्व, धार्मिक महत्व, नैतिक महत्व तथा साहित्यिक महत्व आदि। संताली लोक साहित्य में अनेक ऐतिहासिक तथ्य मिलते हैं। जैसे पृथ्वी की

सृष्टि, पेड़–पौधों की सृश्टि, मानवों की सृष्टि आदि। भोगोंलिक क्षेत्र का वर्णन के अर्न्तगत संताली गीत या कथा के अनुसार संतालों का जन्म हिहिड़ी–पिपिड़ी देश में हुआ था।

इस प्रकार संताली भाषा साहित्य एक अमूल्य निधि है। और यह निधि समाज में जन मानस के बीच विधमान है। इसको समझने में किसी प्रकार की कठिनाईयों का सामना नही करना पड़ता है। क्योंकि संताली साहित्य की भाषा बहुत ही सरल है। इसका अर्थ बड़ी ही सुगमता से समझा जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ

1. सानताड़ी होड़ सँावहेत, डॉ0 कृष्णा चन्द्र टुडू, संताली साहित्य परिशद, राँची –2008, पृष्ठ – 08,12
2. संताली भाषा, लोक गीत एवं नृत्य, डॉ0 विनय कुमार झारखण्ड झरोखा, न्यु मार्केट रातु रोड, राँची–2014, पृष्ठ – 77,79
3. संताली लोकगीतों में साहित्य और संस्कृति, डॅा0 रतन हेम्ब्रम माधा प्रकाशन, जाहेरटोला, बारीडीह, जमशेदपुर–2005, पृष्ठ – 02,12
4. आदिवासी समाज एवं संस्कृति, प्रो0 (डॉ0) कृष्ण चन्द्र टुडू, प्रो0 कृष्ण कुटीर, राजदोहा, पुर्वी सिंहभूम झारखण्ड–2021, पृष्ठ – 49,50
5. झारखण्ड की जनजातियाँ, डॉ0 चतुर्भुज साहु के0 के0 पब्लिकेशन, 618 कटरा इलाहाबाद – 211002,पृष्ठ – 45,46

शकुन्तला बेसरा
सहायक प्राध्यापिका (संताली)
जनजातीय एव क्षेत्रीय भाषा संकाय
राँची विश्वविद्यालय, राँची
मो0 – 7645913037
E-mail:- besrashakuntala@gmail.com
Pin - 834001

वेदव्यासविरचिते महाभारते अश्टांगयोगस्य विवेचनम्

भूपेंद्र सिंह

सारांश

संस्कृतभाषा गीर्वाणीति संज्ञया विधीयते। सन्त्यस्यां भाषायामनेकाः ग्रन्थाः, येश्वस्याकं भारतीयानामितिहासः सुरक्षितोऽस्ति। यथा– रामायण महाभारता टाध्यायी महाभायश्चेत्यादयः ग्रन्थाः। रामायण वन्महाभारतम प्यस्माकस्ति राष्ट्रेतिहासः। अतो महाभारत विषये एकोक्त्यपि भण्यते–

यन्न भारते तन्न भारते।

इत्युक्ते यन्महाभारते नास्ति तद् भारतवर्षेऽपि नास्ति। वेदव्यासोऽपि महाभारते वदति–

धर्मे चार्थे च कामे च मोक्षे च भरतर्षभ।

यदिहस्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत् क्वचिद् ।।

अद्य महाभारतं यद्रूपं बिभर्ति, तत्र शतसहस्त्रसंख्यकाः श्लोकाः शोभन्ते। अश्टादशसु पर्वसु विभक्तं महाभारतम्। तानि च– 1. आदिपर्वम् 2. सभापर्वम् 3. वनपर्वम् 4. विराटपर्वम् 5. उद्योगपर्वम् 6. भीष्मपर्वम् 7. द्रोणपर्वम् 8. कर्णपर्वम् 9. शल्यपर्वम् 10. सौप्तिकपर्वम् 11. स्त्रीपर्वम् 12. शान्तिपर्वम् 13. अनुशासनपर्वम् 14. आश्वमेधिकपर्वम् 15. आश्रमवासिकपर्वम् 16. मौसलपर्वम् 17. महाप्रस्थानिकपर्वम् 18. स्वर्गारोहणपर्वम्।

सम्प्रति योगविषये विचारयामः–

योगशब्दस्य निष्पत्तिः "युजिर्–योगे" धातुना भवति। महर्षिपतञ्जलिविरचितं योगसूत्रं समाधि–साधन–विभूति–कैवल्याख्येशु चतुर्शु पादेशु विभक्तमस्ति। तत्र कः योगः? इति जिज्ञासायां योगदर्शनस्य पातञ्जलयोगसूत्रस्य प्रथमपादे उक्तमस्ति

योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः।

योगस्य अष्टाङ्गानि सन्ति। तानि च–

यम नियमाऽऽसनप्राणा याम प्रत्याहार धारणा ध्यान समाध्योऽश्टा वङ्दगानि।

महाभारते अष्टाङ्गयोगस्यावधारणा–

महाभारते अनेकस्थलेशु चित्तवृत्तिनिरोधमिति योगरूपस्योल्लेखं लभते। महाभारतस्य वनपर्वणि प्राप्यते–

अप्ताङ्गां बुद्धिमाहुर्या सर्वाश्रेयोऽभिधातिनीम्।

श्रुतिस्मृति समायुक्तां राजन् सा त्वय्यवस्थिता।।

महाभारतस्य वनपर्वणि एवोक्तमस्ति यदिन्द्रियाणां नियन्त्रणममेव योगसाधनायाः फलं वर्त्तते। उक्तमपि–

एशः योगविधिः कृतस्नो यावदिन्द्रियधारणम्।

यस्येन्द्रियाणिमनश्च नियन्त्रणे भवति तस्यैव धीः स्थिरा भवति। यथा उक्तमपि–

वशे हि यस्येन्द्रियाणि तस्य प्रज्ञा प्रतिश्ठिता।

महाभारते योगस्याष्टाङ्गानां विवेचनम्–

पातञ्जलयोगसूत्रे पञ्चयमाः निर्दिष्टा सन्ति–

अंहिसासत्यास्तेयब्रह्मचर्यपरिग्रहाः यमाः।

महाभारतेऽपि यमानामवधारणा दरीदृश्यते। अत्र सर्वेशां यमानां वर्णनं व्यासेन कृतमस्ति। यथा महाभारत स्यादि पर्वण्युक्त मस्ति–

अहिंसा परमो धर्मः।

एवमेव द्रोणपर्वण्यपि निगदितमस्ति– अहिंसा सर्वभूतेशु धर्म ज्यायस्तरं विदुः।

अहिंसा विषये महाभारते अनेकेशु स्थानेशु वर्णनं प्रदत्तमस्ति। अनुशासनपर्वण्यपि कथितम्–

अहिंसालक्षणं धर्मं वेदप्रामाण्यदर्शनात्।

यमेशु द्वितीयं वर्तते–सत्यम्। सत्यविशये महाभारतस्यानुसानपर्वणि ब्रवितमस्ति–

वसुर्वसमनाः सत्याः समात्मासम्मितः समः।

एवमेव शांतिपर्वण्यप्युक्तम् – सत्यं नामाव्ययं नित्यमविकारी तथैव च।

यमेशु तृतीय स्थानं भजते– अस्तेय। योगसूत्रस्य व्यासभाष्ये उक्तमस्ति–

स्तेयमशास्त्रपूर्वकं द्रव्याणां परतः स्वीकरणम्। तत्प्रतिशेधः पुनरस्पृहरूपमस्तेयमिति।

अर्थात्– शास्त्रोक्त विरुद्धरीपत्यापरधनस्य ग्रहणं चोयमिति कथ्यते। अस्याभावं परधनं प्रति स्पृहैव अस्तेयं भवति। परधनस्य हरणं इति चिन्तनस्य सर्वथाभावमेव अस्तेयम्।

यमेशु अग्रीमं वर्तते– ब्रह्मचर्यम्। पतञ्जलिनाऽप्युक्तम्– गुप्तेन्द्रियस्योपस्थस्य संयमः।

ब्रह्मचर्यशब्दस्य निष्पत्तिः चर् धातुना भवति यस्यार्थः भक्षणम्। ब्रह्मचर्यशब्दस्यार्थः भवति ब्रह्मणि विचरणं वीर्य रक्षणमिति। महाभारतस्य आश्वमेधिकपर्वण्यप्युक्तम्–

ब्रह्मचारी सदैवैश च इन्द्रियजये रतः।

एवमेव शान्तिपर्वण्यपि उक्तं वर्तते–

भार्यां गच्छन् ब्रह्मचारी ऋतौ भवति वै द्विजः।

पञ्चमयमस्य नाम अपरिग्रहः। अपरिग्रहविषये पातञ्जलयोगसूत्रस्य व्यासभाश्ये वर्णितमस्ति यत्–

विशयाणा मर्जन रक्षण क्षय सङ्ग हिंसा दोश दर्शना दस्वी करणम परिग्रहः।

महाभारते अप्यनेकेशु पर्वसु उक्तमस्ति–

परिग्रहवतः तन्मे प्रत्यक्षमरिसूदन।

अश्टविधयोगङ्गेशु द्वितीयः– नियम–

शौचसन्तोशतपः स्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि नियमाः।

तत्र शौचं मृज्जलादिजनितं मेध्याभ्यवहरणादि च बाह्यम्। आभ्यन्तरं चित्तमलानामाक्षालनम्। सन्तोषः सन्निहित–साधना दधिकस्यानुपादित्सा। तपः– द्वन्द्वसहनम्। स्वाध्यायः मोक्षशास्त्राणामध्ययनं प्रणवजपो वा। ईश्वरप्रणिधानम्– तस्मिन् परमगुरौ सर्वकर्मार्पणम्।

महाभारतस्य उद्योगपर्वण्यपि उल्लिखतं वर्तते– पतिव्रता व युक्ता च यमेन नियमेन च।

महाभारते मार्कण्डेय ऋषिः युधिष्ठिरं शिक्ष्यति यत् शोचष्त्रिविधम्। यथा वनपर्वणि–

वाक् शौचं कर्मशौचञ्च यच्च शौचं जलात्मकम्।

त्रिभिः शौचैरुपेतः यः सः स्वर्गी नात्र संशयः।।

एवमेवानुशासनपर्वणि वर्तते– प्रज्ञानं शौचमेवेह शरीरस्य विशेषतः।

सन्तोषविशियेऽति उद्योगपर्वणि प्राप्यते यत्– तोशपरो हि लाभः।

अर्थात् संतोषात्परमलाभः भवति।

तपः विषये महाभारतस्य वनपर्वणि दत्तं वर्तते– तपः स्वधर्म वर्तित्वम्।

ये जनाः तपः नैव कुर्वन्ति ते कदापि जीवने सुखं नैव अनुभवन्ति। वनपर्वणि कथितमस्ति–

नातप्ततपसो लोके प्रापुवन्ति महासुखम्।

एवमेव– नानाध्यं तपसः किंचिदिति बुद्धयस्य भारत।

स्वाध्यायविषये वनपर्वणि प्राप्यते– स्वाध्यायो एशां देवत्वम्।

आसनम्– आसनविशये पातञ्जलयोगसूत्रे सूत्रितम्–

स्थिरसुखमासनम्।

यथा– पद्मासनं, वीरासनं, दण्डासनं इत्यादिः।

आसनविशये महाभारतस्य अनुशासनपर्वण्यपि उक्तमस्ति यत्–

उपविश्यासने तस्मिन्नृजुकायशिरोधरः।

अव्यग्रः सुखमासीनः स्वाङ्गानि न विकम्पयते।।

प्राणायामः–

तस्मिन् सति श्वासप्रश्वासयोर्गतिविच्छेदः प्राणायामः।

अर्थात्–

महाभारतेऽपि अनेकेशु स्थलेशु प्रणायामविशये वर्णनं प्राप्यते। यथा भीष्मपर्वणि–

प्राणापानगती रुद्ध्वा प्राणायामपरायणाः।

एवमेव वनपर्वणप्युक्तमस्ति–

प्राणयामैर्निहरन्ति स्वलोमानि द्विजोत्तमाः।

प्रत्याहारः–

स्वविषयासम्प्रयोगे चित्तस्य स्वरुपानुकारः इवेन्द्रियाणां प्रत्याहारः।

अर्थात्–

चित्तनिरोधे चित्तवन्निरुद्धानि इन्द्रियाणि, नेतरेन्द्रिय जयवदुपायान्तरम् अपेक्षन्ते। यद्यपि महाभारते प्रत्याहारस्य नाम्नोल्लेखं नैव लभते तथापि इन्द्रिय नियन्त्रण विशय कोप देशाः प्राचोर्येण मिलन्ति। यथा आश्रमवासिकपर्वणि वेदव्यासः लिखति–

इन्द्रियाणि च सर्वाणि वाजिवत् परिपालय।

हितायैव भविश्यन्ति रक्षितं द्रविणं यथा।।

एवमेव शान्ति पर्वण्यपि –इन्द्रियैर्नियतैर्देही धारा भिरिव तर्प्यते।

धारणा–

देशबन्धचित्तस्य धारणा।

अर्थात् नाभिचक्रे, हृदयपुण्डरीके, मुर्ध्नि, नासिकाग्रे, जिह्वाग्रे, इत्यमेवमादिशु देशेषु बाह्ये वा विषये चित्तस्य वृत्तिमात्रेण बन्ध इति धारणा।

महाभारते धारणाविषये भीष्मवर्पणि प्राप्यते– सम्प्रेक्ष्य नासिकाग्रं स्वं दिषश्चानवलोकयन्।

ध्यानम्–

तत्र प्रत्ययैकतानता ध्यानम्।

अर्थात् तस्मिन् देशे ध्येयावलम्बनस्य प्रत्ययस्यैकतानता सदृशप्रवाहः प्रत्ययान्तरेणापरामृश्टो ध्यानम्।

ध्यानविषये महाभारते प्रायशः सर्वेशु पर्वसु उल्लेखं प्राप्यते– यथा आश्वमेधिकपर्वणि–

एवं सततमुद्युक्तः प्रतीत्मा न चिरादिव।

आसादयति तद् ब्रह्म यद् दृष्टवा प्रधानवित्।।

एवमेव शान्तिपर्वणि– पूर्वं ध्यानपथे स्थाप्य नित्ययोगेन शाम्यति।।

समाधिः–

तदेवार्थमात्र स्वरूपशून्यमिव समाधिः।

महाभारते समाधिजन्ययोगानुभवानां वर्णनं प्राप्यते। यथा– आश्वमेधिकपर्वणि उक्तम्–

चितं चित्तादुपागम्य मुनिरासीत संयतः।

यच्चितं तन्मयोऽवष्यं गुह्यमेतत् सनातनम्।।

उपसंहार – महाभारतस्याध्ययनेन ज्ञायते यत् तस्मिन् काले योगस्य विकासमभूत्। पतञ्जलिविरचितयोगसूत्रे येशां योगाष्टाङ्गानां वर्णनं लभते तेशां विवेचनं महाभारते अनेकेशु पर्वसु प्राप्यते।

1. महाभारत, 1.62.53
2. पातञ्जलयोगसूत्रम्, 1.2
3. तदेव, 2.29
4. महाभारतम्, 3,2,18
5. तदेव, 211.20
6. महाभारतम्, 6.26.61
7. पातञ्जलयोगसूत्रम्, 2.30

8. महाभारतम्, 1.11.3
9. तदेव, 7.192.38
10 तदेव,13.114.2
11. महाभारतम्, 149.25
12. तदेव, 12.162.10
14. योगसूत्रव्यासभाष्य, 2.30
15. पातञ्जलयोगसूत्रम्, 2.30
16. महाभारतम्, 14.126.15
17. तदेव, 12.221.11
18. योगसूत्रव्यासभाष्य, 2.30
19. महाभारतम्, 12.7.40
20. पातञ्जलयोगसूत्रम्, 2.32
21. महाभारतम्, 5.14.4
22. तदेव, 3.200.82
23. महाभारतम्, 13.108.11
24. तदेव, 5.40.13
25. तदेव, 3.13.88
26. तदेव, 3.259.13
27. तदेव, 3.259.17
28. तदेव, 3.313.50
29. पातञ्जलयोगसूत्रम्, 2.46
30. अनुशासनपर्वं दाक्षिणात्यपाठे, पृष्ठे 6017
31. पातञ्जलयोगसूत्रम्, 2.49
32. महाभारतम्, 6.28.29 (श्रीमद्भगवद्गीता, 4.49)
33. महाभारतम्, 3.86.63
34. पातञ्जलयोगसूत्रम्, 2.54
35. महाभारतम्, 15.5.13
36. तदेव, 12.329.50
37. पातञ्जलयोगसूत्रम्, 3.1
38. महाभारतम्, 6.30.13
39. पातञ्जलयोगसूत्रम्, 3.2
40. महाभारतम्, 14.19.47
41. तदेव, 12.195.20
42. पातञ्जलयोगसूत्रम्, 3.3
43. महाभारतम्, 14.51.27

भूपेंद्र सिंह, S/O श्री संतलाल
गांव बनमंदोरी तहसील भट्टू कलां
फतेहाबाद 125053
8901602163

डॉ० केशवदेव शर्मा की रचनाओं में अभिव्यक्त सामाजिक संवेदना

प्रो० विष्णु कुमार अग्रवाल, प्रताप सिंह शाक्य

सारांश

बहुमुखी प्रतिभा के धनी साहित्यकार डॉ० केशवदेव शर्मा का गद्य–पद्य साहित्य अपने समय की संवेदनाओं का प्रतिबिम्ब है। अपने बाल्यकाल से उन्होंने समाज की विकराल समस्याओं को न केवल अनुभव किया है, अपितु नजदीक से उन्हें जिया और भोगा भी है। ग्राम्य जीवन की कठिन जिन्दगी, आर्थिक तंगी, बदहाली, गरीबी, अमीरों द्वारा गरीबों का शोषण, फटेहाल जिन्दगी, लाचारी और विवशता, अशिक्षा, अन्धविश्वास, जादू–टोना से घिरी जिन्दगी को समझा और अनुभव किया है। अन्याय और शोषण के विरूद्ध आक्रोश की भावना उन्हें पारिवारिक संस्कारों के रूप में विरासत में मिली है। शोषित–उपेक्षित और वंचित लोगों के प्रति उनकी सहानुभूति रही है। राजनीतिक स्वार्थपरता, अवसरवाद और भावनात्मक शोषण को उन्होंने अनुभव किया है। सुधार सभी चाहते हैं, पर सुधरने के लिए कोई तैयार नहीं है; नौकरी सभी को चाहिए, पर काम नहीं। धर्म, जाति और क्षेत्र की संकीर्ण मानसिकता ने मानव समाज को बुरी तरह से झकझोर रखा है। ऐसी अनगिनत भाव–संवेदनाएँ हैं जो रचनाकार डॉ० केशवदेव शर्मा की रचनाओं में यत्र तत्र सर्वत्र विद्यमान हैं।

अपनी रचनाओं के प्रारम्भ में वे अपनी रचनाओं में निहित भाव–संवेदनाओं की ओर न केवल इशारा करते हैं, अपितु विस्तार से उनकी व्याख्या विवेचना भी करते हुए दिखाई पड़ते हैं। 'साठ बरस सौ रंग' कविता संग्रह के प्रारम्भ में 'अपनी बात' के अंतर्गत उन्होंने लिखा है, ''मेरा प्रस्तुत काव्य–संग्रह 'साठ बरस सौ रंग' भी कुछ ऐसी ही भावभूमि पर चित्रित है, जहां हमने अपनी आजादी के साठ वर्षों में तरह–तरह के सपनों को बुना और तार–तार किया है। इसमें संकलित कविताओं के माध्यम से मैंने मानव–मन की अंतश्चेतना को उन सच्चाईयों के साथ जोड़ने का प्रयास किया है, जिनके बिना उसकी मानवता का व्यापक स्वरूप नहीं उभर सकता। आज के आदमी के सामने समस्याओं का अंबार लगा हुआ है, उसकी बेचैनी और अकुलाहट बढ़ती जा रहा है। आर्थिक संपन्नता, हिंसा, लूट, अपराध और आतंक को बढ़ावा देती नजर आ रही है। राजनेताओं की राष्ट्र के प्रति संवेदनहीनता ने जनता को सोचने के लिए विवश कर दिया है। प्रकृति का संरक्षण और विनाश एक नयी समस्या बन गया है। विविध धरातलों पर अंसुतलन की तूफानी हवाएं भयावह होती जा रही हैं। मानव की स्थिति एक मशीनी–यंत्र ही बनकर रह गई है। कहने का मतलब है कि समाज, संस्कृति, शिक्षा, राजनीति, धर्म–चिंतन, ज्ञान–विज्ञान और दैनिक–जीवन–शैली में जिस प्रकार का बदलाव आया है, उससे जो बीज–भाव मानस पटल पर उभरे उन्हें रूप प्रदान करने का प्रयास इन कविताओं में किया गया है।[1]

डॉ० राजानन्द ने रचनाकार के व्यक्तित्व और कृतित्व पर युगीन संवदेनाओं और संस्कारों के प्रभाव को स्वीकार करते हुए लिखा भी है, ''काव्य में कवि का व्यक्तित्व भी होता है और 'युग–व्यक्ति' भी। व्यक्ति होने के नाते जहाँ उसकी काव्यानुभूति निजीपन लिये हुए होती है, वहाँ सामाजिक इकाई होने की वजह से वह अपने युग की संवेदना, युग के संस्कार आदि का धारणकर्त्ता भी होता है। इसीलिए विशिष्ट युग के कवियों में सामान्य या समान प्रवृत्तियाँ, समान स्वभाव के संस्कार और एक प्रकार की खास संवेदना मिलती है। और इस तरह समय के संदर्भ में, किसी भी युग के सम्पूर्ण काव्य में से एक ऐसा व्यक्तित्व उभरता हुआ या रचना प्राप्त हुआ 'दीखता है जो वास्तव में उस युग का काव्य–व्यक्तित्व' कहा जा सकता है।[2]

मनुष्य स्वभावतः सामाजिक प्राणी रहा है और कहा भी गया है। वह स्वयं के लिए कम और समाज के लिए अधिक जीता रहा है। इसका कारण है कि मनुष्य की पहचान उसकी सामाजिकता में है और अगर समाज से उसे बहिष्कृत या उपेक्षित कर दिया जाए, तो उसके लिए उसी का जीवन बोझिल और चिंताग्रस्त बन जाता है। मानव अपने प्रारम्भिक दौर से ही समाज को विकसित, सुशिक्षित और सुसंस्कारित बनाने की दिशा में प्रयत्नशील रहा है, जिसे लेकर समाज शास्त्र में भी व्यवहार आचरण के आधार पर विवेचन, विश्लेषण किया जाता रहा है। केवल इतना ही नहीं, मानव एक ओर दूसरों से सहयोग की अपेक्षा करता है, तो दूसरी ओर वह दूसरों की सहायता भी करना चाहता है। इसी में उसकी सामाजिकता या सामाजिक संवेदनाएँ अर्न्तनिहित रहती हैं। प्रसिद्ध समाजशास्त्री कैलाशनाथ जेटली ने लिखा है, ''मनुष्य का अस्तित्त्व है, तो समाज का अस्तित्त्व अनिवार्यतः है। मनुष्य और समाज एक–दूसरे से जुड़े हुए हैं। व्यक्ति और समाज में सौम्य सम्बन्ध है, इसलिए कहा गया है कि जहाँ कहीं जीवन है, वहाँ समाज भी है।''[3]

समाज को प्राणी की उच्च्व जैविक क्षमता की उत्पत्ति बताते हुए डॉ० गौरीशंकर भट्ट ने लिखा है, ''समाज प्राणी की उच्च्व जैविक क्षमता की उत्पत्ति है, जिसके कारण वह पर्यावरण के साथ सामाजिक अनुकूलन करने में समर्थ होता है अर्थात् मनुष्य अपनी योग्यताओं का पूर्ण उपयोग अकेले में रहकर नहीं कर पाता। उसके आसपास का वातावरण एवं परिस्थितियाँ प्रभावित करती हैं, जिसके साथ उसे तादात्म्य बिठाना पडता है। जिसके फलस्वरूप उसके सम्बन्ध एक से अनेक जनों से होते हैं। इस प्रकार समाज का अंग बनकर ही जीता है।''[4]

मानव की सामाजिक संवेदनाओं को उसकी पारिवारिक जातिपरक सोच, धर्म–मान्यताएँ, लिंग चिंतन, आर्थिक अमीरी–गरीबी, संतान–सम्बन्ध और रिश्ते–नाते प्रमुखता से प्रभावित करते हैं। मनुष्य चाहकर भी इन सम्बन्ध व्यवहारों के प्रभाव से मुक्त नहीं रह सकता या नही रह पाता। चाहे–अनचाहे किसी न किसी रूप में उसकी संवेदनाएँ समाज सम्बन्धों से अपने पराएपन का भाव बोध भी ग्रहण

करती हुई दिखाई देती हैं। विवेच्य रचनाकार डॉ० केशवदेव शर्मा की रचनाएँ भी समाज के विविध सम्बन्ध–पहलुओं से प्रभावित रही हैं, परन्तु उनका जातीय चिंतन तथाकथित उच्च जाति और निम्न जातिपरक न होकर मानव जाति चिंतन से ओत–प्रोत रहा है। उनकी दृष्टि में मानव जाति ही श्रेष्ठ जाति है। वर्तमान दौर में जाति भेद के नाम पर घृणा और प्रतिशोध की जो हवा बह रही है, उससे वे आहत दिखाई देते हैं। उनका विश्वास है कि दुनिया में अगर कोई जाति है, तो केवल और केवल मानव जाति है, शेष सभी मानव ने अपनी सोच और सुविधा के अनुसार स्थापित और स्वीकार की हैं। धार्मिक–उन्माद, हिंसा और कट्टरता को भी उन्होंने समाज के लिए घातक माना है।

डॉ० केशवदेव शर्मा के उपन्यासों में सामाजिक सद्भाव के ताने–बाने को छिन्न–विच्छिन्न करते जातिवादी रंगों को आक्रोश भरा स्वर मिला है। वे मानते हैं कि सामाजिक समरसता को जातिवाद के जहर से कड़वा बनाने में वर्तमान राजनीतिक परिवेश का भी पर्याप्त योगदान रहा है। 'अहसास' उपन्यास में उनकी समसामयिक समस्याओं से प्रभावित भाव–संवेदना अवलोकनीय हैं, ''बेटी! तुम नहीं जानती आज हमारा देश और समाज धर्म और जाति के नाम पर अंधा हो गया है। एक तरफ भूखे–नंगे लोग हैं, उनकी किसी को भी परवाह नहीं है। पर मंदिर–मस्जिद का सहारा लेकर लोग कुर्सी की ओर भाग रहे हैं। एक भाई दूसरे भाई को मरवा रहा है। असलियत तो यह है कि ये सभी राजनेता एक ही थाली के चट्टे–बट्टे हैं। एक आता है दूसरे की बुराई करता है। जाति का नाम लेकर लोगों को लड़ा रहा है। ये राजनेता खुद आपस में क्यों नही लड़ते। अगर ये हमारे इतने ही हितैषी हैं तो पहले स्वयं को उस स्तर पर लाना चाहिए। ढोंगी है ढोंगी। कुर्सी मिल जाती है तो समाजवादी लोहिया के शिष्य बन जाते हैं और यदि कुर्सी छिन जाती है तो ऊँच–नीच का नाम लेकर लोगों को भड़काते हैं। अब तो बात यहाँ तक बढ़ गयी हैं कि यहाँ तक कहते नहीं थकते कि अरे इन्होंने बहुत खाया है, अब छिन रहा है तो इन्हें दुख लगता है। बेटी जरा इस तरह के जाति–जहर फैलाने वालों से यह तो पूछो कि तुम क्या थे, किसको खिलाया था, पहले तुम अपना पेट तो भर लो। स्वयं भूखे हो और प्रचार करते हो कि हमने तो बहुत खिलाया। शर्म आनी चाहिए इस तरह के जहर उगलने वालों को, और भी न जाने वो उस दिन क्या–क्या कहती रहीं थीं, पर मेरी समझ में कुछ नहीं आया। मैं तो बस यों ही कहानी की तरह सुनती रही।''[5]

इसी तरह अन्य उपन्यास 'दरिन्दे और दरिन्दगी' में भी वर्तमान जाति आधारित संकीर्ण सोच को आइना दिखाते हुए जनभावना के माध्यम से लिखा है, ''यह अकेले रामलाल का बेटा नहीं शहीद हुआ, समूचे देश की जनता का लाल अपनी माँ की रक्षा करते–करते मातृभूमि पर शहीद हो गया। इस भीड़ के सैलाब में कोई तो ऐसा नहीं दिखा जो कह रहा हो जाट मरा है, ब्राह्मण मरा है, ठाकुर मरा है, वैश्य या पंजाबी, हिन्दू मरा है या मुसलमान बिहारी या हरियाणवी। बस बार–बार एक ही नारा गूँज रहा है– भारत माँ का लाल शहीद हो गया।''[6]

इसी तरह लिंग–भेद के आधार पर स्त्री और पुरुष में भेद करना, प्रगति अवसरों में पक्षपात करना आक्रोश को जन्म देता है। अमीरी–गरीबी भी समाज में भेद का कारण रही है। अगर एक अमीर आदमी अपनी सम्पन्नता के घमण्ड़ में गरीब किसान के प्रति अमानवीय व्यवहार करता है, या करने का प्रयास करता है; तो वह भी साहित्यकारों की सामाजिक संवेदना को व्यथित और चिंतित करता रहा है। रिश्ते–नाते मनुष्य को समाज के भीतर सही–गलत व्यवहार करने में अवरोध बनते रहे हैं। रिश्तों के मोह में मनुष्य गलत को जानता और समझता हुआ भी गलत को गलत नहीं कह पाता। इससे संवदेनशील मनुष्य भावुक ही नहीं होता, उसका अर्न्तमन भी पीड़ा से भर जाता है। बरबस उसके मनोभाव साहित्य में रच बस जाते हैं। समाज की समस्याएँ उसकी अपनी समस्याएँ बन जाती है।

'जाति–मर्म' शीर्षक कविता में कवि ने समसामयिक समाज के भीतर जाति को लेकर जिस तरह का घृणा और प्रतिशोध का वातावरण बना हुआ है, उसे लेकर उन्होंने आक्रोश भरे प्रश्न खड़े करते हुए लिखा है–

जाति लड़ाई बुरी नहीं है, जाति का मतलब समझो तब।
हानि लाभ मकसद पाने, जाति–द्वेष भाव बरजो अब।
–0–0–0–0–0–0–0–0–
कौन बड़ा कौन है छोटा, इसकी तह कीरत जाओ सब।
भेदभाव की आग छोड़कर, मानव बस मानव पाओ अब।
–0–0–0–0–0–0–0–0–
किसकी छीनी, किसकी तानी, किस जाति का दम्भ दिखाते हो।
मानव–जाति मर्म तुम्हीं छीन लिया, जाति–भूल जाति खम्भ बिकाते हो।[7]

आज जिस तरह समाज के भीतर सम्बन्धों में भय, अविश्वास, धोखा, छल–कपट, दिखावा पनपा हुआ है, उसे लेकर भी कवि की संवदेनाएँ पीड़ा और चिंता से भरी रही हैं। 'सम्बन्ध–धुंध' शीर्षक कविता में अपना आक्रोश व्यक्त करते हुए उन्होंने लिखा है–

सम्बन्धों की अंध धुंध में
नाम ख्याति रलमल गयी है
खुद खोद खाई गिर रहा
दलदला बालू अब जलमयी है।

पूछता ये कौन रागी राग भूला
खोल परतें अब मैसेज डायरी
भ्रष्ट भिष्टा खा रहे इंसान देखो
खाक गाएँ क्या शेर–ओ–शायरी।[8]

समाज में शिक्षा, संस्कृति के विकास के साथ अपेक्षा की जाती है कि विचारों में उदारता का भाव विकसित हो, लेकिन आज 21वीं सदी में शिक्षित नारी भी अंधविश्वास से मुक्त नहीं हो पाई है। ऐसा लगता है कि अंधविश्वास, जादू–टोना और लोकाचार के नाम पर पूजा–विधान के नाम सामाजिक व्यवस्था पर उसकी मजबूरी है। जानते हुए भी दिखावा करना उसकी भाव संवेदना में शामिल हो गया है। कवि के शब्दों में–

पढ़ी–लिखी है शिक्षित है नारी
फिर भी अन्धविश्वास से रहती मारी
कदम–कदम जीत सफलता सारी
रह जग अंधकार से हारी हारी।
जाने सब पर कुछ नहिं माने
खुद तपती घर खुशियां लाने
पूजा करती जाने अरू अनजाने
मन में पाले दिखती अजब तराने।[9]

डॉ० केशवदेव शर्मा ने सामाजिक सम्बन्धों के नाम पर विश्वास की पहचान मित्रता सम्बन्ध को लेकर भी बदले विचारों को शब्द रूप प्रदान किया है। 'मित्रता' शीर्षक कविता में वे कहते हैं कि आज मनुष्य ने स्वार्थों के वशीभूत होकर मित्र–सम्बन्ध को कलंकित कर दिया है–

मित्र भाव मघुरता अब गायब
स्वारथ डूबा विश्वासी मन तोड़ा
जाने अनजाने भूल भूलते देखो
साथ चले पर साथ न जोड़ा।

–0–0–0–0–0–0–0–

सम्बन्ध सगे सब हुए पराए
घर अपना कहते अंधकार भरा
निर्विकार चिर निद्रा जनु सोए
राग–विराग तज सम भार धरा।[10]

इसी तरह डॉ० केशवदेव शर्मा ने जन सेवा को मानव समाज का नेक धर्म बताते हुए लिखा है कि भलमनसाइत मनुष्य का स्वभाव है, जो प्रकृति प्रदत्त और ईश्वरीय देन है। मिलजुलकर हम बड़ी से बड़ी मुसीबत से छुटकारा पा सकते हैं। दुष्ट लोगों से बचने की प्रेरणा उनके शब्दों में–

जन सेवा आधार बना है, नेक नीयती शिक्षा भगवान।
मिल–जुल विपदा मुक्ति, स्वर सुन वेद पुरान सुजान।
दुर्जन साथ मित्र न कीजिए, भल नित देवे मीठे बेर।
नित नीम निबोरी खाईये, मुँह कड्वा मधु देवे फेर।[11]

अर्थात् स्वार्थ हित में दुष्टों से मित्रता नहीं करनी चाहिए। भले ही वे कितना ही लालच क्यों न दें। सज्जन पुरुष का कड़वा व्यवहार नीम के फल की तरह बताया है, जो प्रारम्भ में तो अच्छा नहीं लगता लेकिन बाद में मधुर लगता है।

आर्थिक बदहाली से प्रभावित कृषक, श्रमिक, मजदूर जीवन को लेकर डॉ० केशवदेव शर्मा की सामाजिक संवदेनाएँ सहानुभूति के साथ–साथ तीखी और आक्रोश भरी रही हैं, जिसका कारण है कि उन्होंने इन संवदेनाओं को यथार्थ के धरातल पर जिया, भोगा और परखा है। 'बंजारा–शतक' में संकलित 'शोषण, दीन–दशा, धन–लोलुप स्वार्थी, इंसानियत, मौत, सच क्या है, कृषक–दशा, जैसी अनेक कविताएँ लिखी हैं, जिनमें अमीरी–गरीबी से प्रभावित जन–जीवन की सोच उजागर हुई है। 'दीन–दशा' शीर्षक कविता की निम्न पंक्तियाँ अवलोकनीय हैं–

दीन दुःखी इस दुनिया में, कब कौन किसी को भाते हैं।
जैसे आते इस दुनिया में, उसी पांव वे जाते हैं।।[12]

गरीबों के प्रति झूठी सहानुभूति रखने वालों को ललकारते हुए 'भाव तंरग सतसई' में लिखते हैं–

खेतों खलिहानों बात कर रहे, महल अटारी रंगीन रोशनी सोने वाले।
इत्र फुलैल रेशमी चादर पर्दे, हवा हवाई हमदर्दी वंशज रोने वाले।।
करें दिखावा दिल तन घायल, उपहास हँसी दलवीर हैं हँसते।
शतरंजी चालें इंकलाबी बोली, भोले भाले कृषकवीर हैं फँसते।।
घडियाली आँसू सहानुभूत स्वर, अवसर स्थापन खोज रहे।
मरा जिया कौन जग, अफरातफरी मौसम मौज अहे।।
माना हितचिंतक सच्चे हो, सुख सुविधा महलों परित्याग करो।
हो संग्रह जीते मानवता गाते, इच्छित राग छुपा क्यों आग भरो।।[13]

लूट, रिश्वत, भ्रष्टाचार, स्वार्थपरता ने भी वर्तमान समाज की संवेदनाओं को प्रभावित किया है। इसी तरह भुखमरी, महामारी, नशा–प्रवृति और युद्ध मानसिकता ने भी सामाजिक जीवन को कठिनाईयों और मुसीबतों की ओर धकेला है; इन सभी भाव संवदेनाओं को लेकर भी कलमकार डॉ० केशवदेव शर्मा मानवीय सोच को बल प्रदान करने का प्रयास करते दिखाई पड़ते हैं। जहाँ तक संतान–सम्बन्धों में दया, प्यार, ममता, करुणा और लगाव का प्रश्न है, उसमें भी वे भावुकता के साथ अपनी वाणी को शब्द रूप देने में सफल रहे हैं। वर्तमान समाज सम्बन्धों के अपेक्षा उपेक्षा के दौर से गुजर रहा है। माता–पिता, भाई–बहन जैसे सम्बन्ध भी इस भाव संवेदना से अछूते नहीं रह पाए हैं। 'बालिका' शीर्षक कविता की निम्न पंक्तियों में उनके इन विचारों को देखा जा सकता है–

मम्मी मम्मी कह निज इच्छा पूरी
हंस–हंस जाती कह सब कुछ सह
ममता उसकी नयनों सहज परसती
दिलदरिया दुःख मोती चुपचुप बह।
भूल भटक गर भाई हाथ लगाता
धरती अंबर सिर तान उठाती वह
भूकंप धरा हो खड़ा लरज लरजता
क्रोधानल भृकुटि जान जलाती वह।[14]

निष्कर्षतः बीसवीं–इक्कीसवीं सदी के हिन्दी साहित्यकार डॉ० केशवदेव शर्मा की गद्य–पद्य रचनाओं में भारतीय समाज की संवदेनाएँ जीवंत हो उठी हैं। समाज के विविध स्तरों पर हो रहे नित–प्रतिदिन के परिवर्तन उनके साहित्य के प्रमुख कथ्य विषय रहे हैं। समाज की पीड़ा, घुटन, संत्रास, आक्रोश, स्वार्थी सोच, संघर्ष का स्वर उनकी कविता, उपन्यास और कहानियों में उजागर हुआ है।

संदर्भ–सूची

1. साठ बरस सौ रंग, अपनी बात, डॉ० केशवदेव शर्मा, पृष्ठ संख्या–11
2. संवेदना के बिम्ब, डॉ० राजानन्द, पृष्ठ संख्या 13
3. समाज दर्शन, डॉ० कैलाश नाथ जेटली, पृष्ठ संख्या – 28

4. भारतीय संस्कृति का समाजशास्त्रीय अध्ययन, गौरीशंकर भट्ट, पृष्ठ संख्या – 40
5. अहसास (उपन्यास) डॉ० केशवदेव शर्मा, पृष्ठ संख्या 18–19
6. दरिन्दे और दरिन्दगी (उपन्यास), डॉ० केशवदेव शर्मा, पृष्ठ संख्या – 98
7. लोकराज पानी भर रहा है (कविता संग्रह) डॉ० केशवदेव शर्मा, पृष्ठ संख्या – 92
8. समय बोलता है (कविता संग्रह) डॉ० केशवदेव शर्मा, पृष्ठ संख्या 35
9. समय बोलता है (कविता संग्रह) डॉ० केशवदेव शर्मा, पृष्ठ संख्या 95
10. संवाद (कविता संग्रह) डॉ० केशवदेव शर्मा, पृष्ठ संख्या 108
11. भाव तरंग सतसई (कविता संग्रह) डॉ० केशवदेव शर्मा, छन्द संख्या 19 से 21
12. बंजारा शतक (कविता संग्रह) डॉ० केशवदेव शर्मा, पृष्ठ संख्या 38
13. भाव तरंग सतसई (कविता संग्रह) डॉ० केशवदेव शर्मा, छन्द संख्या 696, 697, 699, 700
14. साठ बरस सौ रंग (कविता संग्रह) डॉ० केशवदेव शर्मा, पृष्ठ संख्या 131

प्रो० विष्णु कुमार अग्रवाल
प्रोफेसर एवं अध्यक्ष–हिंदी विभाग,
शासकीय स्नातकोत्तर उत्कृष्ट महाविद्यालय, मुरैना (जीवाजी विश्वविद्यालय,ग्वालियर)

प्रताप सिंह शाक्य
सहायक प्राध्यापक एवं शोध छात्र–हिंदी विभाग,
शासकीय स्नातकोत्तर उत्कृश्ट महाविद्यालय, मुरैना (जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर)

देवनागरी लिपि : वैज्ञानिकता और मानकीकरण

विजय कुमार संदेश

सारांश

भारतीय संविधान के भाग 17(1) के अनुच्छेद 343 में स्पष्ट उल्लेख है कि 'भारत संघ की राजभाषा हिंदी और उसकी लिपि देवनागरी होगी।'[1] भाषा–शास्त्री डॉ० रामस्वरूप खरे ने संकेत किया है कि इस लिपि का उद्भव ब्राह्मी (लिपि) से हुआ है।[2] ब्राह्मी का प्राचीनतम रूप ईसा से पांच सौ वर्ष पूर्व से लेकर तीन सौ पचास ई० तक है। यानी, सिंधु घाटी सभ्यता के परिपक्व काल में यह अपने पूर्ण अस्तित्व में थी। सम्राट अशोक के शिलालेख में आज भी उसके प्रमाण मौजूद हैं। प्रख्यात भाषाविद् श्री वासुदेव शरण अग्रवाल का मानना है कि सम्राट अशोक के समय ईसवी पूर्व तीसरी शताब्दी में ब्राह्मी लिपि राष्ट्रीय लिपि के रूप में मान्यता प्राप्त थी। अशोक ने अपने शिलालेखों को इसी लिपि में खुदवाया था। किंतु, इसे आजतक पूरी तरह से पढ़ा नहीं जा सका है। समय के अंतराल में ब्राह्मी लिपि के दो भेद हुए। उत्तर भारत में उत्तरी शैली और दक्षिण भारत में दक्षिण शैली विकसित हुई। उत्तरी शैली से देवनागरी, बंगला, गुरुमुखी जैसी लिपियाँ विकसित हुईं तो दक्षिणी से तमिल, तेलुगु, मलयालम और कन्नड़ का विकास हुआ। समय के साथ चौथी–पांचवीं शताब्दी में उत्तरी लिपि से गुप्त लिपि भी विकसित हुई, जो गुप्तकाल की प्रमुख लिपि थी। बाद में इसे कुटिल या सिद्धमूलक या कुटिलाक्षर कहा गया। कालांतर में कुटिल लिपि से चार लिपियाँ विकसित हुईं– पश्चिम में अर्धनागरी (शारदा, लहँदा, गुरुमुखी, गुजराती, महाराष्ट्री), पूर्व में पूर्व नागरी (मैथिली, बंगला, उड़िया, असमिया और कैथी), दक्षिण में नंदिनागरी (पल्लव लिपि, तमिल, तेलुगु, कन्नड़ और मलयालम) और मध्य देश में सामान्य नागरी का विकास हुआ।

विषय प्रवेश :

समय के अंतराल में सामान्य नागरी ही देवनागरी के रूप में प्रतिष्ठित हुई। पर, इसके नामकरण के संबंध में मतभेद है। कुछ विद्वान इसे गुजरात के नागर ब्राह्मणों से संबंधित होने के कारण नागरी मानते हैं तो कुछ इसकी व्युत्पत्ति 'नगर' से बतलाते हैं। कुछ का तर्क है कि पाटलिपुत्र को नगर और चंद्रगुप्त द्वितीय को देव कहा जाता था। अतः उनका मत है कि देवनगर में प्रचलित होने के कारण ही इसकी संज्ञा 'नागरी' दी गई है। कुछेक का कहना है कि तांत्रिक मंत्रों में कुछ चिह्न बनते थे जो 'देवनगर' कहलाते थे। इन्हीं देवनगर चिह्नों से कुछ वर्णाकृतियों के उत्पन्न होने के कारण इसका नाम देवनागरी हो गया। अभिप्राय यह कि देवताओं की प्रतिमाओं के बनने के पूर्व उनकी उपासना सांकेतिक चिह्नों द्वारा होती थी, जो कई प्रकार से त्रिकोणादि यंत्रों के मध्य में लिखे जाते थे और वे यंत्र 'देवनागर' कहलाते थे। उन देवनागरों के मध्य में लिखे जानेवाले अनेक प्रकार के सांकेतिक चिह्न कालांतर में अक्षर माने जाने लगे, इसी कारण उनके सांकेतिक चिह्नों को देवनागरी की संज्ञा दी गई। इस तरह 'देवनागरी लिपि निरंतर विकसित होती गयी और वर्तमान में यह एक समृद्ध लिपि के रूप में प्रसिद्ध है।'[3]

उल्लेख्य है कि अपने देश में वर्तमान में राष्ट्रभाषा हिंदी के साथ–साथ संस्कृत और अन्य आधुनिक भाषाओं जैसे– बंगला, असमी, उड़िया, मराठी के लिए भी देवनागरी लिपि का ही थोड़े–बहुत परिवर्तन के साथ प्रयोग होता है। इसी तरह भारत के पड़ोसी देश नेपाल की राजभाषा नेपाली के लिए जिस लिपि का प्रयोग होता है, वह देवनागरी ही है। भारत के हिन्दी भाषी प्रदेशों (उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्यप्रदेश, राजस्थान, हरियाणा, दिल्ली, उत्तराखण्ड और झारखण्ड) के काम–काज की लिपि देवनागरी है। अतः यह कहा जा सकता है कि देवनागरी लिपि का उपयोग अभी कई राज्यों और भाषाओं में हो रहा है। अनुमान है कि सातवीं–आठवीं शताब्दी में इसका प्रथम रूप विकसित हुआ। राजा जयभट्ट के शिलालेख में इसके प्रमाण मिलते हैं। डॉ० गौरी शंकर हीराचंद ओझा ने लिखा है कि 'ग्यारहवीं शताब्दी की नागरी लिपि वर्तमान नागरी से मिलती–जुलती है और 12वीं शताब्दी से वर्तमान नागरी बन गई है। 12वीं शताब्दी से लेकर अद्यतन यह नागरी लिपि बहुधा एक ही रूप में चली आ रही है।'[4] अतः यह स्वीकार किया जा सकता है कि ब्राह्मी के आरंभिक अक्षर बदलते–बदलते आज की देवनागरी के रूप में सामने आ गए हैं। यह अवश्य है कि ब्राह्मी से इतर देवनागरी लिपि ने भी अपनी आवश्यकताओं के अनुरूप नए–नए वर्ण/अक्षर विकसित किये, जो ब्राह्मी में नहीं थे। उदाहरणार्थ, देवनागरी का शून्य (0) अंक को देखा जा सकता है। ब्राह्मी में पहले शून्य (0) अंक नहीं था। वहाँ सौ, हजार आदि के लिए अलग–अलग लिपि संकेत थे। देवनागरी ने शून्य (0) का ईजाद कर भाषा और अंकों के क्षेत्र में युगांतकारी परिवर्तन ला दिया। इसी तरह हिन्दी का ड़ और ढ़ देवनागरी की देन है। ब्राह्मी में इसके लिए कोई ध्वनि–संकेत नहीं है। उल्लेख्य है कि भारत के पड़ोसी श्रीलंका, नेपाल, तिब्बत, म्यंमार, जावा, सुमात्रा, लाओस, कंबोडिया, मंगोलिया, थाईलैंड जैसे देशों में जो लिपियाँ प्रचलित हैं, वे सभी ब्राह्मी मूल से ही विकसित हैं। यही कारण है कि इन देशों के लिपियों के चिह्न देवनागरी से मिलते–जुलते हैं।

वैज्ञानिकता :

इसीलिए आज देश और विदेश की बहुत बड़ी आबादी (नेपाल, बंगलादेश, मॉरीशस, फीजी, गुयाना, त्रिनिडाड) का एक बहुत बड़ा भाग देवनागरी लिपि का उपयोग करता है। यह एक पूर्ण वैज्ञानिक लिपि है। इसकी वैज्ञानिकता की प्रशंसा केवल भारतीय ही नहीं बल्कि विदेशी भाषाविद् भी करते हैं। देश–विदेश के लिपि विशेषज्ञों ने स्वीकार किया है कि विश्व की अन्य अनेक लिपियों में देवनागरी ही एक ऐसी सुव्यवस्थित और वैज्ञानिक लिपि हैं, जिसका कोई जोड़ नहीं है। इसमें जो लिखा जाता है, वही पढ़ा जाता है। इसकी वर्तनी निश्चित एवं अविवादपूर्ण है। इसमें अंग्रेजी या अन्य भाषाओं की तरह वर्तनी संबंधी कोई संकट नहीं है। इसमें एक ध्वनि के

लिए एक ही चिह्न निर्धारित है तथा अंग्रेजी की तरह देवनागरी लिपि में अवैज्ञानिकता नहीं है। देवनागरी लिपि की वैज्ञानिकता के पक्ष में निम्न तर्क दिए जाते रहे हैं–

1) देवनागरी आक्षरिक लिपि है :

देवनागरी अपनी आक्षरिकता के कारण सीखने में अत्यंत सरल व स्पष्टता के लिए अपेक्षाकृत बेहतर है। इस लिपि में यांत्रिक सौकर्य एवं सौंदर्य विद्यमान है। भाषा वैज्ञानिकों की राय है कि आशुलेखन (Short Hand) के जन्मदाता पिट्समैन ने देवनागरी से प्रेरित होकर ही आशुलिपि का आविष्कार किया था। लिपि मर्मज्ञ डॉ० डेविड डिटगर ने देवनागरी की वैज्ञानिकता पर रीझते हुए लिखा है कि 'देवनागरी इज वन ऑफ दी मोस्ट परफैक्ट सिस्टम्स ऑफ राइटिंग।

2) वर्णों में स्वर–व्यंजन की क्रमपूर्ण व्यवस्था :

इस लिपि में वर्णों (अक्षरों) के क्रम में पूर्ण वैज्ञानिकता बरती गई है। पहले क्रमानुसार स्वरों (अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ, अं और अः) को रखा गया है। इसमें भी पहले ह्रस्व और बाद में दीर्घ स्वर हैं। स्वरों की ध्वनि कंठ से श्वास के रूप में सीधी निकलती है। इसके उपरांत व्यंजनों का क्रम है। व्यंजनों को भी सात वर्गों (कंठ्य, तालव्य, दंत्य, ओष्ठ्य, अर्धस्वर, अंतस्थ और उष्म) में रखा गया है। व्यंजनों की एक विशेषता स्पर्श और अनुनासिक का विभाजन भी है। डॉ० परमानंद पांचाल लिखते हैं कि 'मात्राओं की दृष्टि से नागरी लिपि की वर्णमाला बड़ी वैज्ञानिक है। इसमें ह्रस्व और दीर्घ का भेद सुस्पष्ट है।'[5] इसके विपरीत दूसरी लिपियों में स्वर एवं व्यंजन लिपियों का कहीं भी क्रम–निर्धारण नहीं है। जैसे अंग्रेजी के रोमन लिपि में स्वर जिन्हें अंग्रेजी में Vowel कहा जाता है, भिन्न–भिन्न स्थानों पर लिखे जाते हैं और उसके बीच–बीच में व्यंजनों (Consonents) का समावेश रहता है।

3) एक ध्वनि के लिए एक लिपि चिह्न (वर्ण/अक्षर) का प्रयोग :

विदेशी भाषाविद् देवनागरी की प्रशंसा इसलिए भी करते हैं कि इसमें जो लिखा जाता है वही पढ़ा जाता है। ध्यातव्य है कि विश्व की अधिकांश भाषाओं की ध्वनियों में पर्याप्त लिपि चिह्न का अभाव है। रोमन में चालीस से ऊपर की ध्वनियों के लिए मात्र छब्बीस लिपि चिह्न ही हैं। इसी से उसमें 'Aghan' जैसे शब्द को अघन या अगहन दोनों पढ़ा जा सकता है। इसी तरह 'क' वर्ण के लिए 'K' और 'C' दोनों का उपयोग होता है। सर्कस (Circus) जैसे शब्द को कोई चाहे तो 'किर्कक', 'किर्कस', 'कर्कस' जैसे ध्वनियों से भी उच्चरित कर सकता है। यह दोष देवनागरी में नहीं है। इसी तरह उर्दू की लिपि फारसी लिपि पर आधारित है। इस भाषा में एक वर्ण 'ज' के लिए 'जे, जुवाद, जोए और जाल' जैसे ध्वनि–संकेत हैं। किस शब्द के लिए 'ज' का कौन–सा ध्वनि संकेत होगा, यह स्पष्ट नहीं है। यह प्रयोक्ता के ज्ञान पर निर्भर है। यह एक बड़ी खामी है। देवनागरी लिपि में ध्वनि और लिपि के बीच जो सामंजस्य है, वह अद्भुत है।

4) लेखन व उच्चारण में स्पष्टता व सरलता :

देवनागरी लिपि का एक महत्वपूर्ण गुण या वैशिष्ट्य यह है कि यह यथा लिखित तथा उच्चरित है। इसमें एक ध्वनि के लिए एक ही लिपि चिह्न है। अन्य लिपियों खासकर अंग्रेजी के रोमन लिपि में लिखने के बाद उसके उच्चारण में कभी–कभी भ्रम उत्पन्न होता है। अंग्रेजी के दो शब्द Psychology और Knowledge उदाहरणार्थ यहाँ प्रस्तुत हैं। इन शब्दों के उच्चारण में 'P', 'K' और 'd' गायब है। अतः सीखने वालों के लिए हिंदी सरल व आसान है क्योंकि देवनागरी का कोई वर्ण 'मूक' नहीं है।

5) देवनागरी की समृद्ध और परिपूर्ण वर्णमाला है :

देवनागरी की वर्णमाला अत्यंत समृद्ध और पूर्ण है। इसमें कुल 52 वर्ण हैं, जो विभिन्न ध्वनियों को संसूचित करने में सक्षम हैं। इसमें प्रयोग किया जानेवाला प्रत्येक वर्ण एक शिरोरेखा से जुड़ा होता है, जो उसकी पहचान को बनाए रखता है। देवनागरी अपने लचीलेपन के कारण नई ध्वनियों को भी अपने अनुरूप स्वीकार कर लेती है, जबकि दूसरी ओर अंग्रेजी के रोमन में 'श', 'ष', 'च', 'ड़', 'ढ', 'ध' आदि के लिए कोई वर्ण नहीं है। इसी तरह भ, फ, ध, ठ जैसे वर्णों को दो वर्णों के संयुक्त रूप के द्वारा लिखा जाता है। इस दृष्टि से देवनागरी विश्व की समृद्ध और पूर्ण लिपियों में एक है।

इतने सारे गुणों के बावजूद देवनागरी में भी कुछ खामियां है, जिसके सुधार के लिए समय–समय पर अनेक प्रयास किए गए हैं। पहला प्रयास लोकमान्य तिलक ने अपने पत्र 'केसरी' के द्वारा वर्ष 1904 में किया था। तबसे लेकर सन् 1926 तक उन्होंने देवनागरी के 190 फॉंट (Type) तैयार कर लिए थे, जिन्हें तिलक फॉंट कहा जाता था। बाद में काका कालेलकर ने 'अ' की बारहखड़ी का सुझाव दिया जो काफी समय तक प्रचलित रहा। सन् 1935 में हिंदी साहित्य सम्मेलन और 1945 में नागरी प्रचारिणी सभा ने भी कुछ महत्वपूर्ण सुझाव दिए थे। बाद में, देश की आजादी के बाद आचार्य नरेन्द्र देव की अध्यक्षता में देवनागरी की एकरूपता के लिए एक समिति बनी, जिसमें सुधार के निम्नलिखित सुझाव दिए गए–

1) अ की बारहखड़ी का प्रयोग बंद किया जाए।
2) स्वर की मात्राएँ थोड़ा दाहिनी ओर हटाकर लगाये जायें।
3) अनुस्वार और पंचमाक्षर की जगह केवल बिंदी () का ही प्रयोग हो।
4) अ और झ जैसे दो रूपवाले वर्णों का एक ही रूप मान्य हो।

इन सुझावों और संशोधनों के बावजूद देवनागरी की गुणवता में कुछ कमियाँ रह गई, जो निम्न हैं और जिनमें संशोधन की आवश्यकता अभी भी बनी हुई है। उदाहरणार्थ,

1) देवनागरी अक्षरात्मक लिपि होने के कारण इसके वर्णों में स्वर और व्यंजन मिले हुए हैं। इसलिए संयुक्त व्यंजन बनाते समय व्यंजनों को आधा लिखा जाता है। लेकिन इसमें भी कहीं–कहीं दोष है। 'कर्म' या क्रम लिखने पर 'र' अपने मूल रूप में नहीं है।

2) कुछ वर्णों में दो ध्वनियों का प्रतिनिधित्व मिलता है। यथा– क्ष, त्र और ज्ञ आदि।

3) कुछ ध्वनियाँ ऐसी हैं जिनका आज उच्चारण प्रायः नहीं के बराबर होता है या उसका उच्चारण रूप बदल गया है। 'ष' और 'ऋ' का उच्चारण क्रमशः 'श' और 'रि' की तरह होता है।

4) देवनागरी में वर्णों की बहुलता के कारण आधुनिक तकनीक (मुद्रण व टंकण) में दिक्कतें आती हैं। इसका कारण यह है कि स्वर–व्यंजन के सभी रूपों को टंकण मशीन में सुविधानुसार रखना

मुश्किल काम है।

5) देवनागरी से लृ, ऋ, जैसे अनावश्यक वर्णों को हटा देना चाहिए। इसमें 'इ' की मात्रा पहले लगती है जबकि उच्चारण बाद में होता है।

6) देवनागरी में वर्ण–संयुक्त के लिए कोई निश्चित नियम नहीं है।

इसके बावजूद यह कहना संगत प्रतीत होता है कि कुछ कमियों और खामियों के बावजूद देवनागरी दुनिया की श्रेष्ठ लिपियों में अग्रगण्य है। डॉ० धीरेन्द्र वर्मा ने इसकी भविष्यवाणी करते हुए कहा था कि "निश्चित है कि अपने देश में निकट भविष्य में शत–प्रतिशत साक्षरता हो जाएगी और ऐसी स्थिति में देश की अस्सी फीसदी जनता देवनागरी लिपि का प्रयोग करने लगेगी।" डॉ० परमानंद पांचाल तो स्पष्ट लिखते हैं कि 'देवनागरी लिपि विश्व की सर्वाधिक वैज्ञानिक लिपि है, जिसमें विश्व नागरी बनने की सभी संभावनाएँ निहित हैं।'[6] वैश्वीकरण के दौर में अपनी वैज्ञानिकता के कारण देवनागरी लिपि विश्व लिपि का स्वरूप धारण करेगी, ऐसी आशा की जा सकती है।

मानकीकरण :

भाषा के मूर्त्त रूप में लिपि की प्रतिष्ठा है। इसी से किसी भाषा के लिखित रूप को लिपि कहा जाता है। प्राचीन मान्यताओं पर यदि विश्वास करें तो यह ईश्वर की सृष्टि है और भारतीय धर्म– आख्यानों में इसे ब्रह्माकृत कहा गया है। शायद यही कारण है कि प्राचीन भारतीय लिपि का नाम 'ब्राह्मी लिपि' है। किंतु, यह सच नहीं है। सच तो यह है कि यह लिपि पूरी तरह मनुष्य की रचना है। उसे अपने मन में उठे भावों और विचारों को स्थायित्व देने की आवश्यकता महसूस हुई तो उसने लिपि का ईजाद किया, धीरे–धीरे मौखिक भाषा को आड़ी–तिरछी रेखाओं, बिंदुओं के द्वारा अंकित करने का प्रयास किया और उसमें वह आद्योपांत सफल हुआ। लिपि का विकास पहले चित्रलिपि, फिर भावलिपि और अंत में ध्वनि लिपि के रूप में हुआ। चित्रलिपि और भावलिपि के कई रूप आज भी प्राचीन गुफाओं के भितिचित्रों में मिलते हैं। चीनी और जापानी भाषा को आज भी चित्रलिपि में ही लिखे जाने का विधान है। देवनागरी लिपि का वर्तमान रूप 12वीं शताब्दी के आस–पास से मिलता है। किंतु, भाषाशास्त्रियों ने शोध एवं सर्वेक्षण के आधार पर निष्कर्ष दिया है कि इसका प्राचीनतम रूप सातवीं–आठवीं शताब्दी में मौजूद था और इसका उद्भव ब्राह्मी लिपि से हुआ है। देवनागरी लिपि में निरंतर विकास और परिवर्तन होता रहा है। इस कारण विकास क्रम में उसके वर्णों के स्वरूप में अंतर आया है। भाषा–वैज्ञानिक मानते हैं कि इस विकास क्रम में नागरी ने कई लिपियों से भी प्रभाव ग्रहण कर खुद को संवारा है। उदाहरण के लिए बिंदु या अनुस्वार का प्रयोग फारसी के प्रभाव के कारण है। अनुस्वार के ध्वनि–संकेत के रूप में देवनागरी में पंचमाक्षर थे। संस्कृत आदि प्राचीन भाषाओं की लिपि में अनुस्वार की जगह पंचमाक्षर ही लिखे जाते थे।

देवनागरी के मानकीकरण का प्रयास आधुनिक युग में तब शुरू हुआ जब लोकमान्य तिलक ने 1904 में, देवनागरी फॉंट की शुरूआत की। बाद में काका कालेलकर, बाबू श्यामसुंदर दास, गोरख प्रसाद और श्री निवास जैसे भाषाशास्त्रियों ने बीसवीं शताब्दी के दूसरे–तीसरे दशक में, हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग में काका कालेलकर की अध्यक्षता में यह सुझाव दिया गया था कि हिन्दी, मराठी और गुजराती के लिए एक ही लिपि देवनागरी हो। इसके प्रभावस्वरूप 1941 में कुछ भाषाविदों ने 'लिपि सुधार समिति' नामक लिपि सुधार संगठन बनाया। इसके चार वर्ष बाद नागरी प्रचारिणी सभा (1945) ने भी देवनागरी लिपि की खामियों को दर्शाते हुए और उसमें संशोधन का सुझाव देते हुए उसके मानकीकरण के प्रयास किये। देश स्वतंत्र होने के बाद आचार्य नरेन्द्र देव की अध्यक्षता में नागरी लिपि समिति ने सन् 1947 में कुछ सुझावों के तहत देवनागरी लिपि के मानकीकरण का प्रयास किया। वर्ष 1953 के लखनऊ सम्मेलन में डॉ० राधाकृष्णन की अध्यक्षता में इस दिशा में कुछ ठोस कदम उठाये गए। इन सुझावों के आलोक में केन्द्रीय शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा राज्यों के शिक्षा मंत्रियों के सम्मेलन देवनागरी लिपि के लिए कुछ सुधारों के साथ मानक रूप प्रस्तुत किए गए, जिसमें कहा गया कि जिन वर्णों से भ्रम उत्पन्न होता है, उसका एक मानक रूप (ध, भ, छ, ख आदि) हो। इसके बाद वर्ष 1966 में केन्द्रीय शिक्षा मंत्रालय ने देवनागरी वर्णमाला का एक मानक रूप प्रस्तुत किया। तद्नन्तर, देवनागरी लिपि की संशोधित व परिवर्धित वर्णमाला प्रकाशित की गयी। वर्तमान में भारत सरकार की वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग ने देवनागरी लिपि की एकरूपता या मानकीकरण के लिए मानक वर्णमाला स्वीकृत की। यही वर्णमाला आज राष्ट्रभाषा हिंदी के लिए स्वीकृत है।

निष्कर्ष :

आज मानक हिंदी की देवनागरी लिपि में ध्वनियों की संख्या 59 है जिसमें 12 स्वर, 47 व्यंजन सहित अनुनासिक और विसर्ग ध्वनियां सम्मिलित हैं। यह सुखद है कि विश्व की सभी भाषाओं की प्रचलित सभी ध्वनियां देवनागरी में वर्तमान है। स्वर एवं व्यंजनों के क्रमशः मूल, दीर्घ, स्वर तथा अल्पप्राण, महाप्राण और घोष–अघोष में बांटकर इसकी वैज्ञानिकता को और पुष्ट किया गया है। शब्द–संरचना, वाक्य–संरचना और पद–संरचना का विधान देवनागरी की अन्यतम उपलब्धि है। अतः कहा जा सकता है कि मानक लिपि की दृष्टि से देवनागरी विश्व की श्रेष्ठ ही नहीं श्रेष्ठतम लिपि है।

संदर्भ :

1. टंडन, एम० पी०, भारत का संविधान, इलाहाबाद लॉ एजेंसी, युनिवर्सिटी रोड, इलाहाबाद (उ०प्र०), 1978, पृ० 530.
2. खरे, रामस्वरूप, भाषा विज्ञान, सरस्वती प्रकाशन, कानपुर, 1985, पृ० 134.
3. सेंगर, अनुराधा (सं०), देवनागरी लिपि तथा हिन्दी का मानकीकरण, केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, भारत सरकार, पृ० 14.
4. ओझा, गौरी शंकर हीराचंद, भारतीय प्राचीन लिपिमाला, खामा प्रकाशन, दिल्ली, 1952, पृ० 70.
5. पांचाल, परमानंद, हिन्दी भाषा : प्रासंगिकता और व्यापकता, हिन्दी बुक सेंटर, दिल्ली, 2016, पृ० 312.
6. पांचाल, परमानंद, हिन्दी भाषा : विविध आयाम, हिन्दी बुक सेंटर, दिल्ली, 2012, पृ० 220.

विजय कुमार संदेश

अध्यक्ष (पूर्व),

पीजी० हिन्दी विभाग,

मार्खम कॉलेज, हजारीबाग, झारखण्ड

मो० : 9430193804

Email : sandesh.vijay@gmail.com

ईश्वर की मौत – असंगघोष

डॉ0 बाबू जोसफ

सारांश

अंबेड़करवादी विचारधारा से प्रभावित होकर भारतीय साहित्य में जो नये साहित्य विमर्श शुरु हूए हैं उनमें एक महत्वपूर्ण विमर्श है दलित विमर्श। दलित विमर्श पर चर्चा करते समय असंगघोष का नाम स्वाभाविक रूप से उभर जाता है। समकालीन कविता में असंगघोष की एक जबर्दस्त उपस्थिति है। उनकी कविता का मूल स्वर जाति एवं वर्ण– व्यवस्था से पीडित दलित जनता की वेदना है। उनकी कविताओं में कथ्य एवं शिल्प की इतनी विविधता है जो उनके भोगे हुए यथार्थ की कठोरताओं को व्यंजित करती है। असंगघोष एक ऐसे कवि हैं जो कविता के लिए हमेशा नयी नयी जगह ढूँढ़ते हैं। कविता उनके लिए किसी पहनावे के समान या आभूषण के समान नहीं है। असंगघोष कविता सृजन को एक मोर्चा, जिम्मेदारी, चुनौती, आन्दोलन और प्रतिरोध के हथियार के रूप में मानने वाले कवि हैं। इसलिए कवि–कर्म उनके लिए जोखिम भरा काम है। शायद उनकी कविताएँ इसलिए जोखिम भरी हैं ताकि उन्हें अपने जीवन में कोई रसानुभूति महसूस नहीं होती, उनके बचपन में कोई अठखेलियाँ नहीं होतीं, उनकी जवानी में कोई दीवानी मौजूद नहीं होती, बल्कि इनके स्थान पर बराबर चुनौतियाँ, संघर्ष और हर जगह निन्दा और बेइज्जती की दीवारें पार करनी थीं। वे कविता के लिए एक नए जनपद की तलाशी करते हैं जो उत्पीड़ित लोगों का समाज है। लेकिन अब उत्पीड़ित लोग पहले के समान खामोश नहीं हैं, उनके मुंह से भी आवाज निकलने लगी है। वे भी अब साँस ले रहे हैं। असंगघोष ने इसलिए अपने एक काव्य संकलन को "अब मैं साँस ले रहा हूँ " जैसा शीर्षक दिया है। 'ईश्वर की मौत' असंगघोष की एक महत्वपूर्ष काव्य कृति है। ईश्वर की मौत' काव्य संकलन में कवि ने सर्वाधिक साहस एवं जुझाः मन के साथ धर्म और ईश्वर की जकड़बन्दियों पर तीखी टिप्पणी की है।

उनकी कविताओं की एक विशेषता यह है कि उनकी कविताएँ पाठकों से खुद कुछ बोलती हैं। असंगघोष जाति की बू पर ज्यादा चिन्तित है। ' यह सही है कि जाति व्यवस्था के रहते, आज के मनुष्य में घृणा और द्वेष अधिक कारगर होकर अपनी विकृतियों के साथ उपस्थित होते हैं जिसके कारण ही जीवन में असहयोग, विषमता और मनोगत अनेक विकृतियाँ पैदा हो जाती हैं। जिसके लिए कवि का आक्रोश उत्पन्न होना जायज ठहरता है और वह इन दुर्भाग्यपूर्ण व्यवहारों का, जायजा लेने को मजबूर होता है, अतः उसका प्रतिरोध भी ठीक लगता है।' मलयज के इस कथन की सच्ची तस्वीर हमें 'जाति की बू' शीर्षक कविता में मिल जाती है – 'बन्द दरवाजे की बगल में गाँधी टोपी लगाए स्टूल पर अकड़कर बैठा यह सेफेद कपड़ों में लिपटा आदमी कभी अर्दली, कभी दरबान, कभी चपरासी कभी भृत्य कहलाता है।' असंगघोष की कविता में कहीं चेतावनी का स्वर है तो कहीं अनुरोध की पुकार है, कहीं डर की अभिव्यक्ति है तो कहीं दीन क्रन्दन की अनुगूँज है, कहीं यथार्थ की कठोरता है तो कहीं संवेदना की नरमी है। कहीं उनकी कविता में अत्याचारों के खिलाफ आक्रोश है तो कहीं दुनिया के तमाम अंधकार को दूर करने की तीव्र इच्छा है। इसलिए उन्हें दूर से आता हुआ वह नरभक्षी भेड़िया साफ दिखाई दे रहा है। 'जला दो मशाल' कविता में उन्होंने लिखा है – 'उसे थोड़ा और पास आने दो फिर जला दो मशालें इस भयावह रात में व्याप्त घने अंधेरे को दूर करने अपनी मशालें जला दोध ताकि रोशनी में साफ दिखाई दे सक चमकते नुकीले दाँतों, औरध खतरनाक मंसूबों के साथ वह आदमखोर'। कवि की उम्मीद है कि इन मशालों की रोशनी में जग के सामने नंगा होने से कब तक बचेगा वह नरपिशाच। सदियों से दलित समाज के लोगों को सवर्ण समाज के लोगों के द्वारा अमानवीय व्यवहार भोगना पड़ा। भारतीय समाज में सबसे निचले पायदान पर खड़े लोग पढ़े लिखे होने पर भी इंसान के रूप में नहीं, बल्कि जाति एवं वर्ण के नाम पर जाना जाता है। 'हम ही ध्वस्त करेंगे' कविता में कवि ने धर्म, ईश्वर और जाति के नाम पर हो रहे तमाम अत्याचार एवं शोषण को बेनकाब करने की कोशिश की है 'इंसानों की गणना में हर बार मेरा नाम छूट जाता है मैं इंसान नही ढेड़, चमार, भंगी पासी ह क्यों छूट जाता हूँ जानवरों की गणना के बीच भी मेरा नाम शुमार नहीं है, मैं असुर जो हूँ, दोपाया। हम जानवरों से भी गए–गुजरे क्यों हैं'? लेकिन अब कवि में इन सबको ललकारने की हिम्मत आ गई है, इसलिए वे कहते हैं कि तुम्हारी थोपी वर्जनाएँ, तुम्हारे खड़े किए सारे अवरोध हम ही अपने सींगों से ध्वस्त करेंगे। जातिगत विषमताओं के कारण जहाँ इंसान को इंसान नहीं समझा जा रहा है, वहाँ कवि का आक्रोश और भी तेज मुखरित होता है – 'तुम्हारे लिए हम सिर्फ पासी थेध कोरी थे भंगी थे चूहड़े थे चमार थे'। कवि ने अनुभव किया है कि हम अछूत थे, इसलिए हम गाँव से, चौपाल से, तालाब से, कुएँ से और हर जगह जहाँ तुम्हारा जोर था, वहाँ से हम बाहर थे। 'हम हिन्दू कब थे' ? कविता में कवि ने मानवीय अत्याचारों की खुली अभिव्यक्ति की है – 'हम अछूत थे हमें अपने आने की सूचना लाठी पलट देनी थी कमर के पीछ झाड़ू बाँध चलना था थूकने के लिए भी गले में हांडी लटकानी थी ताकि तुम अबड़ा न जाओ हमारी छाया स हमारे पदचिन्हों स हमें छूकर बहती हवा स जमीन पर गिर हमारे थूक से तुम अबड़ा ना जाओ अबड़ाने से तुम्हारा धर्म भ्रष्ट ना हो'। 'कब्र' शीर्षक कविता में कवि के आक्रोश का स्वर और भी कटु हो जाता है। कवि की चेतावनी है कि पुश्त दर पुश्त मैं ही खोदता रहा कब्रें, हर आकार की, छोटी बड़ी कब्र, ऐसे ही तुम्हारी कब्र भी मैं ही खोदूँगा जल्दी, तुम बस अपने कफन का इंतजाम करो। मेरे हाथ में गेती, कुदाल और फडुआ है, तुम्हारी कब्र मुझे ही खोदनी है, इसलिए अपने सारे औजार लिए तुम्हारे सपनों में लगातार तुम्हारी कब्र खोदने मैं आता ही रहूँगा। कवि इस बात को लेकर सचेत है कि तुम्हारी काली करतूतें कभी नहीं बन्द होंगी, इसलिए कवि इस संकल्पना को लेकर

बैठता है कि 'तुम्हारे विरुद्ध अपना प्रतिरोध कभी खत्म होने नहीं दूँगा.. यही प्रतिरोध, ताकत है मेरी'। इसलिए कवि की उम्मीद है कि मेरी वाणी से तुम्हारी सारी करामातें पस्त हो जाएँगी और मेरी लेखनी की धार तलवार जैसी तेज होती जा रही है। उनके दोगलापन से कवि अच्छी तरह वाकिफ है, इसलिए कवि को यह मालूम हुआ है कि तुम्हारी आवाज कोयल दृसी मीठी है, किन्तु कपट से भरी हुई भी है। तुम पेरासाइट हो, परजीवी हो और हमारा खून चूसने के लिए चमगादड़ों की मानिंद हमारी पीठ पर लदे हो। इस सभ्य समाज में भी जाति का बंधन ढीला नहीं पड़ रहा है। आज कहीं जातिगत आरक्षण खत्म करने की बात उठ रही है। कवि ने अपनी 'जाति खत्म करो पहले' कविता में इस बात की विडम्बना का पर्दाफाश किया है – 'जातिगत आरक्षण को ध खत्म करो.. कैसे करे खत्म ? तुम नरश्रेष्ठ बने बैठे हो हजार साल से, तुम ही बने बैठे होध पीठाधीश्वर मंडलेश्वरध महामंडलेश्वर'। सारा गन्दा काम और ऊँची जाति के लोगों की सारी सेवा–सुश्रुषा सदियों से इन लोगों को करना पड़ता है, जिस पर कवि का गहरा क्षोभ इस तरह फूट पड़ता है 'महामूर्खों सबसे पहले अपना जन्मनाध आरक्षण छोड़ो, जातियों को खत्म करो... खत्म करनी ही होगी जाति जो आदमी का आदमी रहने ही नहीं देती। कवि यह महसूस करता है कि यह हमारे समय का सबसे खराब दौर है, जिससे हम गुजर रहे हैं, लेकिन कवि का यह भी एहसास है कि हमारे पुरखों ने निश्चित ही इससे भी भयावह दौर से देखे होंगे। जाति के नाम पर जितनी बुराईयां समाज में चलती हैं, उनकी निन्दा करते हुए कवि 'पाखण्ड' कविता में कहते हैं– 'पांव पड़ने–पड़ान पाँव पुजने–पुजाने की सनातन परम्परा है तुम्हारी संस्कृति में, तुम कन्याओं से औरतों से बड़े ठाट से अपने पाँव पुजवाते हो उनके सिर परध अपना पाँव धर अपनी श्रेष्ठता पर गंवाते हो'। कवि यह भी जानता है कि हमारे दिनों पर विपत्ति के बादलों का घना अँधेरा छाया हुआ है, इसलिए तुम्हारी ही शह पर यह सारा अत्याचार होता आया है, तुम्हारी ही शह पर हर किसी गांव में एक दलित स्त्री सरेआम नग्न कर भरे बाजार घुमाई जाती है, फिर तुम्हारे ही गुरगों के द्वारा सामूहिक बलात्कार के बाद पत्थर पटक, डायन बताकर उसकी नृशंस हत्या की जाती है। यह सारा अत्याचार सिर्फ तुम्हारी ही शह पर होता आया है। सदियों से अत्याचार सहते –सहते अब दलित वर्ग के लोगों में भी नयी ऊर्जा आयी है। अब वे सबकुछ चुपचाप सहन करने वाले नहीं रह जाते हैं। वे बागी बनना पसन्द करते हैं। इसलिए कवि ललकार के साथ कहते हैं – 'अब बन्द करोध अपनी कुटिलता अपना घिनौना खेल वरना इन हाथों नेध हथियार उठाना और चलाना सीख लिया हैध हमें अब बीहड़ सेध कोई खौफ नहीं है हम आतंकी के बजाय बागी बनना पसन्द करेंगे'। 'ईश्वर' नामक कविता में कवि कहते हैं कि मुझे तुम्हारी सोच और यहाँ तक कि तुम्हारे धर्म से भी नफरत होती है क्योंकि अगर सच्चे अर्थों में ईश्वर मनुष्य के पक्ष में होता तो वह मन्दिर के बाहर का यह वाक्य जरूर पढ़ लेता – ' शूद्र मन्दिर में प्रवेश न करें'। इस तरह कवि ने अपनी कई कविताओं में ईश्वर की निरुपायता का चित्रण करने के साथ साथ मनुष्यता को बचाने का कठिन श्रम किया है।

असंगघोष की कविताओँ में धर्म और जाति को लेकर सच्चा विमर्श है, इसलिए उनकी कविता में जाति और धर्म को उखाड़ फेंकने की सशक्त कामना प्रकट हुई है। 'हाँ, हम हैं चमार' कविता में कवि मेहनत दृमजूरी करने वाले लोगों का पक्ष लेकर कहते हैं कि हममें से एक मरे जानवर का चमड़ा उतारता है तो दूसरा उस दुर्गंधाते चमड़े को पकाता है। तीसरा इस पके चमड़े को काट–पीट कर तेर पाँवों के लिए जूते बनाता है। इस बात को लेकर कवि के मन में गर्व है कि हम मेहनत कर कमाते हैं, जबकि तू हमारी भूख पर कुदृष्टि रख हमला करता है। इस नाजुक स्थिति में भी कवि अपना आत्मविश्वास खोने के लिए तैयार नहीं होता। उनका अटूट विश्वास है कि मैं कभी हारा नहीं, कभी भीतर से टूटा नहीं। तुम्हारे हर अत्याचार के बाद पहले से कहीं अधिक मजबूत होता हुआ अपनी ताकत को बटोरता रहा। मेरा मजबूती मुझे यह अहसास कराती है कि मैं कमजोर नहीं हूँ। अपनी सारी ताकत बटोरकर तुम्हारे खिलाफ खुला विद्रोह करने केलिए मैं खड़ा हूँ। इस तरह इस संकलन की अनेक कविताओं में कवि ने बेडियों से मुक्ति की उम्मीदों के गीत गाए हैं। असंगघोष के 'ईश्वर की मौत' संकलन की कविताओं में जाति और धर्म की पाखण्डी हरकतों को उखाड़ फेंकने की कामना प्रकट हुई है। इस संकलन की 'सीढ़ियाँ कब हटा रहे हो', 'ईश्वर', 'मैं बागी बनूँगा', 'हाँ, हम हैं चमार', 'सुनो न्यायमूर्तियो', 'वो नहीं आएगा बाहर', 'तुम छोड़ सकोगे', 'ईश्वर की मौत', 'मरघट', 'नहीं जोड़ना हाथ', 'ईश्वर से सवाल'आदि कविताओं में भी कवि ने जाति, वर्ण तथा धर्म के नाम पर होने वाले तमाम प्रकार के शोषण–तन्त्र, धूर्तता, अन्याय, उत्पीड़न, असमानता, अस्पृश्यता, अनाचार एवं खोखली आदतों का पर्दाफाश करने की कोशिश की है। असंगघोष की कविता में जातिवाद, वर्ण–व्यवस्था, गुलामी, धार्मिक पाखण्ड आदि के खिलाफ विद्रोही चेतना है। इसमें शोषण एवं असमानता से मुक्ति की कामना के साथ साथ दलितों को न्याय मिलने की प्रखर माँग भी है। उनकी कविता में कलात्मकता से ज्यादा यथार्थ की कठोरताओं को महत्व मिला है। ये कविताएँ मानवीय संवेदनाओं को जरूर झकझोरती हैं। असंगघोष ने अपनी कविताओं के लिए एक नए सौन्दर्यशास्त्र को रचा है, इसलिए उनकी कविता की अन्तर्वस्तु अन्य कवियों से एकदम भिन्न है।

डॉ0 बाबू जोसफ
(पूर्व अध्यक्ष एवं सह आचार्य, हिन्दी विभाग,
के. ई. कालेज मान्नानम, केरल)
वड़क्कन हाऊस, कुरविलंगाडु पोस्ट, कोट्टायम जिला
केरल– 686633
मोब. 9447868474

साहित्य, समाज और मीडिया

काजल

सारांश

साहित्य और मीडिया किस प्रकार एक दूसरे से जुड़े है. इस पर विचार करने से पहले हम साहित्य क्या है?साहित्य की हमारे समाज मे क्या उपयोगिता हैं?मीडिया किस प्रकार साहित्य के प्रसार में सहायक है? इन पर चर्चा करेंगे' 'साहित्य समाज का दर्पण है।' यह सुना तो जाता है, 'किंतु ऐसी क्या परिस्थितियाँ हैं, जिनसे हम साहित्य को समाज का एक दर्पण कहते हैं। प्रायः लेखक अपने साहित्य का विषय या तो अपने आस–पास के वातावरण से लेता, अर्थात् घटित हुई घटनाओं से प्राप्त ज्ञान को आधार बनाता है। साहित्य एक ऐसा नियोजन, ऐसा माध्यम हैं, जो किसी एक विशेष जाति या संप्रदाय को लक्षित नही करता, बल्कि संपूर्ण समाज के प्रति कल्याण की भावना रखता है। साहित्य के माध्यम से हमारे चिंतन करने मे भी परिवर्तन आता है।

मीडिया का सामान्यतः अर्थ– समाचारपत्र, पत्रिकाओं, टेलीविजन रेडियो इंटरनेट आदि माना जाता है। आधुनिक परिवेश में मीडिया एक प्रभावशाली रूप हैं, जो सूचनाओं का आदान–प्रदान का कार्य बखूबी निभाता है। साधारणत सूचनाओं को एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुंचाना या संप्रेषित करना ही संचार मीडिया कहलाता है। मानव मे एक वृत्ति विद्यमान हैं कि मानव संचार किये बिना नहीं रहता। संचार करना मानव की एक सहज वृत्ति है। यह मानव की मूलभूत आवश्यकता है। इसी प्रकार साहित्य को चरम उत्कर्ष पर पहुंचाने के लिए मीडिया भी एक मूलभूत जरूरत है।

आदिकाल से वर्तमान काल तक आदिकाल में मीडिया की भूमिका :–

आदिकाल में मीडिया की भूमिका चित्रात्मक शैली ने अपना लिया था। आदिकाल में चित्रों के माध्यम से ही विचारो का संप्रेषण होता था किंतु धीरे– धीरे समय के परिवर्तन के कारण संचार की शैली मे भी परिवर्तन होने लगा। यही शैली आज इंटरनेट तक पहुँच गई। अंतः संपूर्ण मानव जाति संचार की एक लंबी श्रृंखला से जुड़ा हुआ है। अर्थात् व्यक्ति निरंतर संचार की प्रक्रिया से प्रभावित होता रहता है। जिस प्रकार मानव के लिए आदिकाल से ही रोटी, कपड़ा, वायु, प्रकाश मूलभूत आवश्यकता है, उसी प्रकार आज के समय मे मीडिया भी एक मूलभूत आवश्यकता हो गई है। मानव मीडिया के बिना अपने आपको अधूरा महसूस करता है।

मीडिया का आदिरूप प्रिंट मीडिया यानि समाचारपत्र व पत्रकारिता का हैं। वैशविक पत्रकारिता का इतिहास लगभग 59 ई पूर्व रोम से आरंभ माना जाता है। मीडिया को मानव की अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम माना जाता है। मीडिया का स्वरूप इतना व्यापक है, वह विश्व के प्रत्येक स्तर पर अपनी भूमिका निभाता हुआ नजर आता है। मानव का जीवन मीडिया के साथ गहराई से जुड़ा हुआ है। आज के युग में मीडिया का अर्थ है– दो स्थलों को जोड़ने का 'साधन' । ये दो साधन स्रोत और लक्ष्य है। स्त्रोत का अर्थ, जहां से सूचना प्राप्त होती है, और लक्ष्य का अर्थ– सूचना ग्रहण करने वाला। मीडिया का रूप इतना सशक्त हो गया है कि वह प्रत्येक विधा में अपनी अहम् भूमिका निभाता हुआ दृष्टिगत होता है।

साहित्य और समाज पारस्परिक संबंध– साहित्य की हमारी समाज में क्या उपयोगिता रही है। प्रायः हमसे इस बात को लेकर चिंतन करते हैं। साहित्य के माध्यम से हम किस प्रकार समाज की भलाई में योगदान कर सकते हैं अभी हाल ही में साहित्य को बालपन के पाठ्यक्रम मे भी जोड़ने की चर्चा की जा रही हैं, आखिरकार उन सभी निर्णयों के पीछे क्या–क्या कारण ही सकते हैं। प्राचीन समय में हम वेद, पुराण, श्रुतियां, उपनिषदों, महाकाव्य, ग्रंथों का अध्ययन करने के लिए काफी कश्मकश करनी पड़ती थीं इतनी मेहनत करने के पश्चात् हमे बहुत ही दुर्लभ साहित्य प्राप्त होते थे। प्राप्त होते भी थे तो किसी की भाषा– शैली को समझने में मुश्किलों का सामना करना पड़ता था अनेक ग्रंथ तो संपूर्ण रूप से प्राप्त भी नहीं होते थे। साहित्य में यदि किसी भी प्रकार की कोई त्रुटि होती थी, तो उसको सुधारने में अनेक पड़ावों का सामना करना पड़ता था। ऋषि–मुनि पेडो की छालो पर अपने ग्रंथों की रचना करतें, फिर उनका संग्रह करते थे, लेकिन फिर भी कभी–कभी प्राकृतिक आपदा के कारण वे छिन्न भिन्न हो जाते थे। किंतु आज का समय विज्ञान का है। आज पूरा विश्व हमारी मुट्ठी में हैं। मानो मुट्ठी खोलो, सब कुछ हमारे समदा है, हम किसी भी विषय को अपने आप से अलग महसूस नहीं करते। वर्तमान काल में हम एक क्लिक करने पर सारी जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। यह हमारे लिए बड़े ही सौभाग्य की बात हैं। कि हम ऐसे समय में उत्पन्न हुए हैं कि इतनी सुविधाएं प्राप्त है।

इंटरनेट की मुख्य कड़ी– मीडिया :– इंटरनेट से पहले इथरनेट का आगमन हुआ था। यह तो स्वाभाविक है जब किसी साधन में कोई त्रुटि होती हैं, तो उसके पर्याय मे दूसरे साधन का जन्म होता है। इंटरनेट ने हमारी दूरियो को कम कर दिया। आज के विकसित मीडिया में संपूर्ण विश्व को एक ग्राम की संज्ञा दे दी है। जिससे हमारी **''वसुधैव कुटुम्बकम्''** की विचारधारा सफल हो रही हैं। इस भूमंडलीकरण में केवल मीडिया ही एकमात्र ऐसा साधन हैं, जो अपनी अहम् भूमिका अदा कर रहा है। जिससे प्रत्येक व्यक्ति, वह चाहे विश्व के किसी भी कोने में हो अपने – आपको एक दूसरे के निकट महसूस करती है। आज शिक्षा, व्यापार वाणिज्य, चिकित्सा, प्रशासन, सुरक्षा, वित्तीय– संस्था, विज्ञान–तकनीक आदि में मीडिया का महत्त्व बढ़ता ही जा रहा है। इंटरनेट का सबसे अधिक लाभ – मीडिया उठा रही है। वर्तमान में एक स्थल की घटना को हम लाइव दिखाकर लोगो को तुरंत उसकी सूचना दे सकते, यह केवल इंटरनेट के माध्यम से ही

संभव हो पाया है। यह कार्य पहले E-mail के द्वारा किया जाता था, आज यह कार्य मीडिया द्वारा किया जा रहा है।

जिस प्रकार प्रत्येक विचार वस्तु के दो पहलु होते हैं, एक लाभदायक और दूसरा दुखदायक। दोनी ही पहुलओ की चर्चा आवश्यक होती है, हम किसी एक पहलू के आधार पर किसी निर्णय पर नहीं पहुंच सकते। इंटरनेट के द्वारा समाज पर गलत प्रभाव भी पड़ा है, और अच्छा भी। आज की युवा पीढ़ी जहां इसका अपनी शिक्षा में प्रयोग कर रहा है, तो उसके दुष्प्रभाव के कारण अपनी शिक्षा को नष्ट भी करता नजर आता है।

साहित्य और इंटरनेटः– साहित्य और इंटरनेट दोनो इस प्रकार एक दूसरे से जुड़े हुए है मानों इंटरनेट तो साहित्य की वैशाखी हैं। दोनो एक–दूसरे पर आश्रित हैं। हिन्दी साहित्य के प्रचार– प्रसार में इंटरनेट की अहम भूमिका रही है। आज हम इंटरनेट के माध्यम से साहित्य से बड़े ही सहज रूप से अवगत हो सकते हैं। साहित्य हमारे आस– पास के वातावरण से ही निर्मित होता है। साहित्य के माध्यम से मानव अपने आपको सांस्कृतिक समारोहो एवं आयोजनो से जोड़ा रहता है। आदिकाल मे लोग साहित्य का श्रवण रेडियो, आकाशवाणी के माध्यम से करते थे, लेकिन अब उनके श्रोता नही रहे। श्रव्य माध्यम के पश्चात् जैसे ही श्रव्य–दृश्य माध्यम जैसे टेलीविजन का प्रवेश हुआ तो लोग इसकी और अधिक आकर्षित हुए। उसका असर कार्यक्रमों पर भी पड़ा है। इलेक्टरानिक मीडिया के बढ़ते प्रभाव ने सामाजिक जन–जीवन को गहराई से प्रभावित किया है, क्योंकि साहित्य जनता की चितवृत्ति का संचित प्रतिबिम्ब है। इसीलिए सामाजिक परिवर्तन ने मानव समाज और साहित्य की दिशा और दशा पर व्यापक प्रभाव डाला।

आज के आधुनिक युग में लेखक सीधे अपने विचारों, रचनाओं और पुस्तकों को इंटरनेट के माध्यम से प्रकाशित करता है, जिससे वह अपनी त्रुटियो को समझ नही पाता, पहले लेखक अपनी किताबो को संपादको, प्रकाशकों के पास भेजता था, तत्तपश्चात् यद्यपि कोई त्रुटि होती तो प्रकाशक उसे वापिस भेजता, जिससे कोई भविष्य में गलती न हो पायें, एक दृष्टिकोण से यह सही भी था। साहित्य व्यक्तिगत हित–अहित की भावना से ऊपर उठकर सामूहिक हित साधना के लिए संकल्पबद्ध होता है।

साहित्यकार के पास भविष्य की प्रति एक अन्वेषी दृष्टि होती है। मीडिया में जहाँ वर्तमान पर दृष्टि होती हैं, वही साहित्यकार इन घटनाओं को व्यापक स्तर पर महसूस कर भविष्य की सम्भावनाओं को उद्घाटित करता है। ''एक अच्छे साहित्यकार के पास एक आध्यात्मिक दृष्टि होती है जो कि समस्या की अनन्त गहराई से होकर गुजरने वाली किरण– रेखा की तरह वह तथ्य साहित्यकार के मानसलोक की नैसर्गिक प्रभा से प्रभामंडित होकर बाहर आता है। अगर पत्रकार की दृष्टि सत्य पर होती है तो कहा जा सकता है कि साहित्यकार के पास सत्यम, शिवम्, सुन्दरम् की एक समन्वित दृष्टि होती है। जो किं दुर्लभ है।''

हम आज इंटरनेट पर साहित्य की विभिन्न विधाओं से अवगत हो सकते है। आज इंटरनेट पर साहित्य के रूप जैसे महाकाव्य, खंडकाव्य, दृष्यकाव्य ,नाटक, शॉर्ट फिल्म दर्शायी जाती है। टेलीविजन, इंटरनेट पर सोशल मीडिया के माध्यम से हम महाभारत, रामायण जैसे धार्मिक ग्रंथ भी देख सकते हैं। इन ग्रंथों के माध्यम से बच्चो को एक अच्छा वातावरण, आदर्श, शिक्षा, आर्य समाज की संस्कृति से परिचित करा सकते हैं जिसके परिणामस्वरूप बच्चे आज 'जय श्री राम' कहना भी सीख रहे हैं। पूर्व में लिखा गया साहित्य इंटरनेट के माध्यम से आज भी जीवित हैं। तुलसी, कबीर, सूर, मैथिलीशरण गुप्त, गुरुनानक आदि महान विचारको द्वारा लिखे गए ग्रंथों से हम इंटरनेट और मीडिया के माध्यम से परिचित होते है, साथ ही उनके विचारों, उनके चिंतनों को अपने जीवन में सत्यापित भी कर सकते है। समाज को दिशा देने में, मनुष्य को सही रास्ते पर अग्रसर करने लिए मीडिया और इंटरनेट की अहम भूमिका रही है।

सोशल मीडिया के माध्यम से साहित्य का समाज पर प्रभाव – आज सोशल मीडिया एक प्रचारक का कार्य कर रहा है। आज की युवा पीढ़ी सोशल मीडिया से ही जुड़ी है। सोशल मीडिया पर युवा अपने विचारों की टिप्पणी करते हैं, साथ ही राजनीतिक समस्याआ की उनसे तुलना करते हैं। राजनीतिक समस्याओं का समाधान साहित्य के रास्ते पर टूटने का प्रयास करते हैं। इस सोशल मीडिया का राजनीतिक पार्टी भी खूब लाभ उठा रही है। लेकिन ऐसा नहीं कि हर समय सोशल मीडिया से साहित्य का प्रचार एक सफल आधार पर हो। कई बार लोग अधूरा ज्ञान के कारण साहित्य के तथ्य आत्मसात न हो कर उसका दोषपूर्ण अर्थ समझते हैं। जैसे कि जब भी किसी महिला के चरित्र पर उगुली उठाई जाती है, तो प्रायः सीता माता का उदाहरण दिया जाता है कि लोगों ने तो सीता के चरित्र पर भी उग्गुली उठाई थी सतयुग में, ये तो फिर भी कलियुग हैं। इसी प्रकार मैथिलीशरण गुप्त जी ने 'साकेत' मे उपेक्षित उर्मिला पर ग्रंथ लिखा। यशोधरा, साकेत, **'साकेत में उपेक्षित उर्मिला'** आदि विषय समाज को नारी विषय पर सही चिंतनशील हेतू लिखे गए। जिससे समाज का सही मार्गदर्शन हो सके। टविटर जैसे मंचो में शब्दों की सीमा मे अपनी बात को चुस्त और कम से कम शब्दों में कहने के अभ्यास को संभव बनाया है। सोशल मीडिया के माध्यम से लोग बिना डरे अपनी बात कह सकते, बड़े–छोटी प्रतियोगिता में भागीदारी, बिना रोक टोक के, अपनी विषय–वस्तु को प्रस्तुत करना करोड़ों लोगों को नई ताकत प्रदान करना, आदि की हिम्मत दी है। सोशल मीडिया ने साहित्य रचना करने का व्यापक विषय प्रदान किया है। मानव प्रतिदिन इतनी परिस्थितियों से अवगत होता है कि वह प्रतिदिन नए चिंतन के आसमंजस्य से गुजरता है। साहित्य का इस प्रकार अपना एक अलग संसार है, जहाँ जीवन कभी विराम नही पाता।

हिंदी साहित्य के **'आचार्य रामचन्द्र शुक्ल'** ने स्वयं यह स्वीकार किया है कि साहित्य, विशेषकर गद्य–साहित्य के विकास में देश के विभिन्न भागों से प्रकाशित पत्र–पत्रिकाओं के माध्यम से जो साहित्य जागरण हुआ, उससे भाषा के विकास तथा साहित्य के निर्माण को बहुत प्रोत्साहन मिला। भारतेंदु हरिशचंद्र जी ने खड़ी बोली को पत्रों –पत्रिकाओं का माध्यम बनाने के लिए प्रयास किया। आगे चलकर

महावीर प्रसाद द्विवेदी जी ने व्याकरणिक त्रुटियों के सुधार मे अपना योगदान दिया। इस प्रकार समाचार पत्रों की भाषाओं में सुधार आया। साहित्य और पत्रकारिता के धनिष्ठ संबंधों का परिचय हमें उपन्यास सम्राट 'प्रेमचंद' के 'हंस', पंडित माखनलाल चतुर्वेदी की 'प्रभा', महाकवि प्रसाद की 'इंदू' से मिलता है। इसी प्रकार अज्ञेय, धर्मवीर भारती, बालमुकुन्द गुप्त, रामवृक्ष बेनीपुरी, रघुवीर सहाय आदि अनेक साहित्यकारों ने पत्रकारिता को नये आयाम दिये । आज से आने वाले युग में भी मीडिया के विकसित रूप की चुनौती का सामना करने के लिए साहित्यकार तैयार है।

सोशल मीडिया के कारण आज साहित्य का विषय भी परिवर्तित होता जा रहा है। साहित्यकार प्रायः वह रचना करता है जो अपने आस–पास के वातावरण मे अनुभव करता है। सोशल मीडिया के महत्त्व को नजरअंदाज करके हम आगे नही बढ़ सकते, क्योंकि साहित्य मे मीडिया की अहम भूमिका रही है।

साहित्य अपने पाठको – श्रोताओं के विवेकीकरण पर जोर देता है, केवल सूचनात्मक ज्ञान से संतुष्ट का होकर, वह तथ्यों की जड़ तक जाता हैं। जैसे आज कल जो मीडिया में स्त्री का वर्णित चरित्र है वह चरित्रहीन या फैशनेबल बताया जा रहा है किंतु साहित्य में ऐसा नहीं होता, साहित्यकार के पास व्यापक दायरा होता है, वह सभी समस्याओं से व्यक्तिगत होकर ही उसे साहित्य के ढांचा में ढालता हैं। साहित्य को सामाजिक मान्यता तभी मिलती है, तब वह समाज के विभिन्न वर्गों में समन्वय और सद्भाव की बात करें। साहित्यकार नैतिक मूल्यों से आबद्ध होकर ऐसी कोई भी बात नहीं कर सकता जो मानव आर्दशों के विपरीत हो अपनी व्यापित, स्थायी उत्तम, परमतत्व, संग्रहणीय बनाए रखने के लिए साहित्य रसज्ञता का गुण बनाए रखती है। मनोरंजन के संबंध यदि विचार किया जाए तो यह सभी वर्गों के लिए आवश्यक है, चाहे वो मीडिया ही या साहित्य किंतु मनोरंजन से ना तो साहित्य का कार्य सधता है ना ही मीडिया का। इसलिए अपनी उपस्थिति को सार्थक बनाए रखने के लिए, जहां साहित्य मीडिया से सहयोग की उपेक्षा रखती हैं, वही मीडिया अपनी प्रमाणिकता बनाए रखने के लिए साहित्य के साथ की आशा रखती है। मीडिया अपने सहयोग के कार्य संबंध में वह पूँजीपतियो के पास जाते हैं, वे उनकी मदद तो करते हैं, किंतु वे चाहते है कि मीडिया हमारे बारे मे सकरात्मकता तथ्य को ही दिखाए। इस प्रकार मीडिया भी बाध्य है। साहित्यकार भी मीडिया से ही प्रभावित होता है।

निष्कर्ष :– अतः स्पष्ट हैं कि आधुनिकता के इस समाज में साहित्यकार अपने दर्शकों, श्रोताओं तक केवल सूचनाएं प्रेषित करने मीडिया केवल का माध्यम मात्र बन कर रह गई है। विमर्श के नाम पर वह तंत्र–मंत्र का खेल खेल रही है। वह खुद को केवल मनोरंजन उद्योग के नाम से प्रचारना चाहती हैं। मीडिया साहित्य के केवल उसी पक्ष को दिखाती है, जो केवल मनोरंजनकारी हैं, जिससे समाज मे उनके दर्शक बड़े वह गहन तथ्य, शिक्षा संबंधी सीख, आत्मविश्वास बढाने वाली विचार धारा को नकारती जा रही हैं। गंभीर साहित्य टेलीविजन और अखबार दोनों से गायब होता जा रहा है। किंतु पक्के आत्मविश्वास वाले लोग इसकी भरपाई इंटरनेट के माध्यम से करने का प्रयास करते है। लेकिन फिर भी हमें यह याद रखना चाहिए कि मीडिया, साहित्य और समाज ये तीनों अन्योन्याश्रित हैं, उनके बीच अटूट सा बंधन है।

संदर्भ सूची

1 KashKashyap.wordpress.com

2. साहित्य कुञ्ज – अन्तरजाल पर साहित्य प्रेमियों की विश्राम स्थली

3. राजकिशोर, (संपादक) मीडिया और हिन्दी साहित्य, किताब घर प्रकाशन नई दिल्ली 2009, पृ.39

4. अर्जुन तिवारी, हिन्दी पत्रकारिता और भावात्मक एकता, 236

5. प्रतिमा वर्मा, पत्रकारिता और साहित्य, पृ– 181

Kajal

Email -kajalthakran9780@gamil.com

Ph. No. 999412022

Address- Vill.Dulhera,(Jhajjar)Haryana

Pin code 124507

साहित्यिक पत्रकारिता के शिखर पुरूष– डॉ० धर्मवीर भारती

प्रवीण भारद्वाज

सारांश

साहित्य और पत्रकारिता एक दूसरे के पूरक तो हैं ही, साथ ही पत्रकारिता एक दर्पण के सदृश हैं जिसमें अपना बिम्ब देखकर साहित्य न केवल समृद्ध होता है, अपितु अपने आप को परिमार्जित करने का सतत् प्रयास करता रहता हैं। भारत में हिन्दी साहित्य को पत्रकारिता से सम्बद्ध करने का श्रेय मूलतः भारतेन्दु हरिश्चन्द्र को जाता हैं। उनके अथक प्रयासों के द्वारा खड़ी बोली के विकास के साथ ही साहित्य और पत्रकारिता का संबंध अटूट हो गया। स्वतंत्रता संघर्ष के समय प्रकाशित होने वाले पत्र–पत्रिकाओं के माध्यम से ही साहित्यकार और लेखक अपनी क्रान्तिकारी और ओजपूर्ण रचनाओं के माध्यम से जनमानस में स्वतन्त्रता की चिंगारी फूँक सके। साहित्यिक पत्रकारिता देश को स्वतन्त्र कराने के महायुद्ध में अपना विशद महत्व रखती है। स्वतन्त्रता के पश्चात् जिन साहित्यकारों का रूझान पत्रकारिता की ओर अधिक हुआ, धर्मवीर भारती उनमें शीर्ष पर हैं। अपनी विलक्षण साहित्यिक प्रतिभा, अप्रतिम लेखन शैली और सजग पत्रकारिता की भावना के कारण उन्होंनें 'धर्मयुग' को न केवल उच्च साहित्यिक पत्रिका का स्थान दिलाया अपितु स्वयं को भी एक सजग और प्रतिभाशाली लेखक–पत्रकार के रूप में स्थापित किया। अनेक राष्ट्रीय और अतंर्राष्ट्रीय साहित्य पुरस्कारों से सम्मानित डा. भारती स्वातंत्र्योन्तर भारत में साहित्यिक पत्रकारिता के शीर्ष पुरूषों में से एक हैं जिनकी विलक्षण लेखनी का स्पर्श पा कर पत्रकारिता न केवल गौरवान्वित हुई अपितु उसे एक उच्च आयाम प्राप्त हुआ।

बीज शब्दः–

साहित्यिक पत्रकारिता, धर्मयुग, समालोचक, राजनैतिक शून्यता, विवराणत्मक, वर्णनात्मक, प्रगतिशील विचारधारा, समृद्ध भाषा, जनमानस।

प्रस्तावनाः–

विश्व साहित्य के इतिहास में साहित्य और पत्रकारिता का साथ एवम् संबंध प्रगाढ़ और अक्षुण्ण रहा हैं। प्रारम्भ से ही दोनों को एक दूसरे का पूरक कहा जा सकता हैं। विश्व पटल पर हालाँकि साहित्यिक पत्रकारिता का उदय उस समय रोचक ढंग से हुआ जब पेरिस के एक डॉक्टर रेनाडो ने अपने चिकित्सालय में सन् 1632 ई. में रोगियो के मनोरंजन के लिए एक साप्ताहिक पत्रिका आरंभ की जो रोगियों को मानसिक रूप से स्वस्थ और आशावादी बनाने हेतु रोचक घटनाओं, मनोरंजक कहानियो और अलौकिक घटनाओ से भरी रहती थी। धीरे धीरे यह पत्रिका आम जनमानस मे भी काफी लोकप्रिय हुई। डॉ० रेनाडो से प्रेरणा पा कर पेरिस के ही सांसद डेनिस 'द सैलो' ने सन् 1680 ई० में एक साहित्यिक पत्रिका आरंभ की। जर्नल 'द सैवेंत्रासे' नामक यह पत्रिका विश्व की पहली साहित्य और समालोचना पत्रिका मानी जाती हैं। इसके पश्चात् शनैः शनैः साहित्य और पत्रकारिता का संबंध निकट से निकटतम होता चला गया और .करीब .करीब विश्व की सभी समृद्ध भाषाओ में पत्र–पत्रिकाओं के माध्यम से साहित्य को प्रश्रय और प्रोत्साहन मिलने लगा।. हिन्दी की साहित्यिक पत्रकारिता आधुनिक हिन्दी साहित्य का वो स्वर्णिम पृष्ठ है जिसने न केवल भाषा को समृद्ध होने का अवसर दिया अपितु गद्य और पद्य समेत साहित्य की सभी विद्याओं को अपने आश्रय में पुष्पित और पल्लवित होने का अवसर दिया। हिन्दी में साहित्यिक पत्रकारिता का विधिवत् आरंभ भारत की अन्य अनेक भाषाओं यथा उर्दू, बंगाली, तमिल आदि के पश्चात् भारतेन्दु हरिश्चन्द्र युग के साथ ही माना जाता हैं, क्योकि इससे पूर्व हिन्दी साहित्य मूलतः ब्रज और अवधी भाषाओं में रचा जा रहा था और भारतेन्दु द्वारा खड़ी बोली में **कवि वचना सुधार (1867) हरिशचन्द्र मैगजीन** (1873) और **हरिशचन्द्र चन्द्रिका** (1874) पत्रिकाओं के माध्यम से हिन्दी में साहित्यिक पत्रकारिता का प्रादुर्भाव हुआ जो क्रमशः पं० महावीर प्रसाद द्विवेदी, निराला, मुक्तिबोध, यशपाल, हरिशंकर परसाई औा डॉ० नामवर सिंह जैसे साहित्यकारों और समालोचकों के निपुण भाषा कौशल और प्रखर साहित्यिक दृष्टिकोण के द्वारा समृद्ध और भविष्योन्मुख होती गई। स्वतन्त्रता संग्राम के समय हिन्दी गद्य का निर्माण और विकास उस समय की साहित्यिक पत्रकारिताओं के माध्यम से ही हुआ जैसा कि डॉ० रामविलास शर्मा लिखते है–भारतेन्दु से लेकर प्रेमचन्द्र तक हिन्दी साहित्य की परंपरा में यह बात ध्यान देने योग्य है कि सभी बड़े साहित्यकार पत्रकार भी थे। पत्रकारिता उनके जीवन का अभिन्न अंग बन गई। प्रेमचन्द्र भी एक सफल संपादक थे और 'हंस' के जरिए उन्होनें साहित्यकारों की एक नई पीढी को शिक्षित किया।

स्वतन्त्र भारत में साहित्यिक पत्रकारिता का विकास

स्वतन्त्रता के पश्चात् साहित्य की स्वार्णिम यात्रा पत्रकारिता के सशक्त माध्यम से पलती और निखरती रही और विशुद्ध साहित्यिक पत्रिकाओं यथा 'सरस्वती', 'चाँद', 'आलोचना' 'कल्पना' 'नई कहानी' 'अभिनव कदम' 'अक्षर पर्व' और 'हंस' इत्यादि के माध्यम से गद्य और पद्य के प्रतिष्ठित और नवोदित साहितियकारों के स्वर्णाक्षर जनमानस तक पहुँचाती रही। इनके अतिरिक्त कतिपय ऐसी भी पत्रिकाऐं थीं जिन्हें हालाँकि विशुद्ध साहित्यिक पत्रिकाओं का नाम नहीं दिया जा सकता परन्तु इनका संपादन साहित्यकारों ने किया।. इन बड़े समूह की पत्रिकाओं में 'धर्मयुग' 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' 'ज्ञानोदय' 'कादंबिनी', 'शुक्रवार' और 'वामा' आदि नाम प्रमुख हैं। इन पत्रिकाओं की विशेषता यह रही कि इनमें प्रकाशित होने वाली साहित्यिक सामग्री

अधिक से अधिक पाठकों तक पहुँच पाईं और साहित्य का उद्देश्य तभी सफल और सार्थक माना जाता है जब इसका जुड़ाव और सरोकार आम जनमानस से हो। कुछ लघु पत्रिकाओं ने भी अपना अलग स्थान बनाया जिन्हें विचार परक साहित्यिक पत्रिका का नाम दिया गया। 'नया पथ' 'पहल' और 'समयांतर' जैसी पत्रिकाओं के द्वारा विचार और साहित्य दोनों का संवर्धन और श्रेष्ठ निष्पादन हुआ।

डॉ० धर्मवीर भारती का साहित्यिक पत्रकारिता में योगदान

हिन्दी साहित्य के प्रगतिशील लेखकों में अपना विशिष्ट स्थान रखने वाले डॉ० धर्मवीर भारती यूँ तो एक जमींदार परिवार में जन्मे किंतु उनकी लेखिनी सर्वदा सामंती व्यवस्था और उससे उत्पन्न होने वाली घोर सामाजिक विषमताओं के विरूद्ध लिखती रही। जिस समय साहित्य में 'यथार्थवाद' अपने चरम पर था और जैनेन्द्र तथा यशपाल जैसे लेखक सामाजिक और मानसिक यथार्थ को अपने पृष्ठों पर उतार रहे थे, उसी समय डॉ० भारती 'गुनाहों का देवता' और 'सूरज का सातवाँ घोड़ा' जैसे उपन्यासों के माध्यम से 'विशुद्ध अलौकिक प्रेम' और 'प्लेटोनिक लव' जैसी आदर्शवादी विचारधाराओं को अपने दैहिक सौंदर्य और आकर्षक के प्रति रूझान के माध्यम से चुनौती दे रहे थे। प्रयोगवादी युग का लेखक होने के बावजुद उनके अन्तर्मन में प्रगतिवाद का भी गहरा प्रभाव रहा, जिसका प्रमाण हैं 'अन्धा युग', जिसमें उन्होनें अपनी सशक्त भाषा शैली और अनूठे बिम्बों के माध्यम से दूसरे महायुद्ध के बाद आई राजनैतिक और साहित्यिक शून्यता को महाभारित के पात्रों के माध्यम से मर्मस्पर्शी ढ़ंग से चित्रित किया है। उनके काव्य संकलन 'कनुप्रिया', 'ठंडा लोहा', 'सात गीतवर्ष आद्यान्त' और 'सपना अभी भी' में जीवन के विविध रंग हैं। हर्ष और उल्लास के साथ साथ विषाद और सूनेपन की गहराई कवि के साथ–साथ चलती हैं।. डॉ० भारती यदि अपना पूरा समर्पण साहित्य लेखन के लिए ही अर्पित करते तो निःसन्देह वे भारत के महानतम लेखकों में गिने जाते, लेकिन बहुमुखी प्रतिभा के धनी डॉ० भारती का अन्तर्मन लेखन के साथ साथ पत्रकारिता के क्षेत्र में भी रमता था। उनकी प्रकृति एक यायावर की तरह थी, जो उन्हें एक स्थान पर टिकने नहीं देती थी और भ्रमण करने की उनकी प्रकृति साहित्यिक क्षेत्र में भी नए नए अन्वेषण करने में अत्यन्त सहायक सिद्ध हुई।

'अभ्युदय' नामक साहित्यिक पत्रिका से उन्होनें अपनी पत्रकारिता का श्रीगणेश किया।. प्रयाग विश्वविद्यालय से एम.ए. और पीएच.डी. की डिग्री प्राप्त करने के पश्चात् श्री इलाचन्द्र जोशी के संपादक में प्रकाशित 'संगम' नामक पत्र में उन्होनें सहायक संपादक के रूप में भी कार्य किया। अनके वर्षो तक आपने प्रयाग विश्वविद्यालय में हिंदी प्राध्यापक के रूप में कार्य किया। उल्लेखनीय है कि यहीं उनकी भेंट पुष्पा भारती जी से हुई जो कालांतर में उनकी जीवन संगिनी बनीं। अध्यापन के दौरान ही प्रयाग विश्वविद्यालय से प्रकाशित 'हिन्दी साहित्य कोष' के संपादन में आपने उल्लेखनीय योगदान दिया। 'निकष' और 'आलोचना' नामक दो साहित्यिक पत्रिकाओं का सफल संपादन भी डॉ० भारती ने किया।. जिस प्रकार एक पहाड़ी नदी पर्वतों से अपनी अल्हड़ यात्रा आरंभ करके मैदानी क्षेत्रों में परिपक्वता के साथ बहती हुई अंततः सिन्धु के आगोश में समा जाती हैं, उसी प्रकार डॉ० भारती के लिए टाइम्स ऑफ इंडिया ग्रुप की पत्रिका 'धर्मयुग' वही सिन्धु साबित हुई, जिसका वर्षों वर्ष उन्होनें सम्पादन किया। एक समय था जब 1950 में 'धर्मयुग' का प्रधान संपादक बनने के बाद 'धर्मवीर' और 'धर्मयुग' एक दूसरे के पूरक या यूँ कहें कि पर्यायवाची बन गए थे। 'धर्मयुग' की परिकल्पना 'धर्मवीर' के बिना और 'धर्मवीर' का अस्तित्व 'धर्मयुग' के बिना अधूरा सा लगता था। उनका हर क्षण 'धर्मयुगमय' हो गया था। उन्होनें 'धर्मयुग' को एक साहित्यिक पत्रिका के रूप में उस शिखर तक पहुँचाया जिस पर पत्रिका के अन्य मूर्धन्य साहित्यकार यथा गणेश मंत्री, रविन्द्र कालिया, कन्हैयालाल 'नंदन' और मनोहर 'सरल' जैसे अनेकों लब्धप्रतिष्ठ नाम भी नहीं पहुँचा सके। साहित्यिक पत्रकारिता में जिस प्रकार के श्रेष्ठ उदाहरण डॉ० भारती ने प्रस्तुत किए, वो अन्य लोग नहीं कर पाए। वो धर्मयुग को ही अपना सर्वस्व मानकर उसे ओढ़ते–बिछाते, खाते–पीते और सोते–पहनते थे। सितंबर 1971 में बांग्लादेश युद्ध के दौरान भारती जी मुक्तिवाहिनी सेना के साथ लम्बे समय तक बांग्लादेश में रहे और वहां पश्चिमी पाकिस्तान द्वारा किए गए दुर्दान्त दमनचक्र की जो रिपोर्ट उन्होनें तैयार की, ऐसा डॉ० भारती जैसा साहसी और अन्वेषण–प्रिय पत्रकार ही कर सकता था। उन्होनें युद्ध–घटनाओं और उनके प्रभावों को श्रृंखला–बद्ध तरीकें से छापा और एक संमर्थ लेखक की दृष्टि से युद्ध की विभीषिकाओं और कटु वास्तविकताओं से जनमानस को परिचित कराया। 1974 ई० में उन्होनें मारीशस की यात्रा की ओर वहाँ रह रहे भारतवंशियों पर विस्तृत अध्ययन करके उनकी समस्याओं को 'धर्मयुग' के माध्यम से भारतीय जनमानस तक पहुँचाया। 1978 की अपनी चीन यात्रा के दौरान उन्होनें चीन के बारें में ऐसे अनेक तथ्य प्रस्तुत किए जिनसें भारतवासी अनभिज्ञ थे। खोजी पत्रकार डॉ० भारती को अपना आदर्श मानते हैं। उन्होनें 'यात्रा–चक्र' नामक यात्रा संस्मरण में यूरोप के देशों के सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक जीवन के बारें में विस्तार से लिखा हैं।

जहाँ डॉ० भारती के संस्मरणों में विवरणात्मक शैली का लेखन है वहीं उनकी युद्ध–संबंधी रिर्पोट्स में वर्णनात्मक शैली का लेखन है, जिसमें वो विस्तार से संघर्षो के कारणों और नियति का उल्लेख हर एंगल से करते हैं। उनकी भाषा शैली परिभार्जित खड़ी बोली रही। प्रगतिशील विचारधारा के प्रतिनिधि लेखक होने के कारण उन्होनें किसी विशेष भाषा शैली को नहीं अपनाया अपितु संस्कृत, अंग्रेजी, उर्दू और देशज भाषा और मुहावरों का खुल कर प्रयोग किया।

उनकी यही सधुक्कड़ी भाषा शैली धर्मयुग के पाठकों को बहुत भाती थी और यही पत्रिका के.राष्ट्रीय अंतर्राष्ट्रीय विस्तार का एक प्रमुख कारण भी थी।

भारत सरकार ने उन्हें 1972 में 'पदम्श्री' से संम्मानित किया। इसके अतिरिक्त उन्हें 'अंधा–युग' के लिए संगीत नाटक अकादमी द्वारा सर्वश्रेष्ठ नाटककार सम्मान, भारत भारती पुरस्कार, गणेश शंकर विद्यार्थी पुरस्कार, व्यास पुरस्कार और न जाने कितने पुरस्कारों से सम्मानित किया गया।. साहित्यिक पत्रकारिता को उच्चतम शिखर तक ले जाने वाले लेखकों में धर्मवीर भारती एक विशिष्ट स्थान रखते हैं।

संदर्भ ग्रन्थः–

1. तीसरा सप्तक– अज्ञेय (संपादक)–1959, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन वाराणसी
2. पत्रकारिता एवं विकास संचार– प्रो. अनिल कुमार उपाध्याय– भारती प्रकाशन, वाराणसी
3. हिन्दी पत्रकारिता–कृष्ण बिहारी मिश्र–(2004)–भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन–दिल्ली
4. भारत की समाचार–पत्र क्रांति (2004) भारतीय जनसंचार सस्थान प्रकाशन–नई दिल्ली
5. कविता के नए प्रतिमान–डॉ० नामवर सिंह–राजकमल प्रकाशन–दिल्ली
6. महावीर प्रसाद द्विवेदी और हिन्दी नवजागरण–रामविलास शर्मा, राजकमल प्रकाशन
7. हिन्दी साहित्यिक पत्रकारिता के 150 वर्ष–कृपाशंकर चौबे– ूणिपदकपेंउंलण्बवउ
8. धर्मवीर भारती–व्यक्तित्व एवम् कृतित्व–डॉ० रश्मिशील–उत्तरप्रदेश हिन्दी संस्थान, हिन्दी भवन लखनऊ–(2018)
9. हिन्दी पत्रकारिता के सिद्धान्त–आर.सी. त्रिपाठी–अशोक प्रकाशन–दिल्ली (2005)
10. पत्रिकाऐं–धर्मयुग के अंक, साप्ताहिक हिन्दुस्तान, दिनमान, सारिका, वामा, हंस
11. ई–लिंक& hi-mi-wikipedia-org.

प्रवीण भारद्वाज

हिन्दी शोधार्थी, रबीन्द्रनाथ टैगोर

विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

51

शोध अध्ययन में परिकल्पना एवं उसकी प्रासंगिकता

डॉ0 हनुमान प्रसाद मिश्र

सारांश

ब्रह्माण्डीय विकास एवं सृजन का सबसे विलक्षण प्राणी मानव ही है। अपने प्रादुर्भाव के शीघ्र उपरान्त मानव ने अपने उन्नत स्नायुमण्डल तथा मानसिक क्षमता के बल पर ध्वनियों तथा संकेतों की सहायता से परस्पर संवाद को सहज बना लिया एवं अपने प्रश्नों, जिज्ञासाओं, कठिनाइयों, विचारों व प्रेक्षणों को अभिव्यक्त करने एवं अंकित करने में सफलता प्राप्त कर ली थी। कालान्तर में ज्ञान एवं विवेक मानव जाति के सर्वाधिक शक्तिशाली साधन बन गये। मानव जाति ने अपने ज्ञान, बुद्धि व विवेक के बल पर अपनी सभ्यताओं व संस्कृतियों की रचना को करने में सफलता अर्जित की है, एवं इसे आगे बढ़ाया है। मानव विकास का इतिहास वस्तुतः ज्ञान एवं विवेक के सम्यक उपयोग से जिज्ञासाओं, विभ्रमों तथा समस्याओं का निराकरण करने के प्रयासों का वर्णन कहा जा सकता है। मानव व्यवहार के तीन प्रमुख पक्षों यथा–ज्ञान, भाव व क्रिया में भी ज्ञान की भूमिका व स्थान को सर्वप्रथम व सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। साथ ही अपने चारों ओर घटित होने वाली घटनाओं, समस्याओं तथ्यों एवं समझने उसकी व्याख्या करने का सतत् प्रयास करता रहा है। आधुनिक विज्ञान व प्रौद्योगिकी के विकास के पीछे भी ज्ञान की पिपासा एवं अनुत्तरित प्रश्नों व समस्याओं का समाधान खोजने की जिज्ञासा रही है। अनुसंधान ऐसे ही प्रयासों का सुव्यवस्थित, नियन्त्रित तथा औपचारिक स्वरूप होता है। आधुनिक अनुसंधान प्रक्रिया को भली–भाँति समझने के लिए मानव के द्वारा समय–समय पर प्रयुक्त तार्किक चिन्तन एवं ज्ञानार्जन करने सम्बन्धी विधियों पर दृष्टिपात करना उचित व आवश्यक प्रतीत होता है।

अनुसन्धान कोई ऐसी प्रक्रिया नहीं है जो केवल भरातल पर ही खोजबीन करे। इसमें गहन निरीक्षण मुख्य प्रत्यय है। दूसरा मुख्य विचार समस्या का विशिष्टीकरण है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि अनुसन्धान एक सीमित क्षेत्र में किसी समस्या का सर्वांगीण विश्लेषण है। समस्या का प्रारम्भ विज्ञासा से होता है। जिज्ञासु व्यक्ति हो अनुसन्धान कार्य सफलता से कर सकता है। जिज्ञासा के अभाव में यह क्रिया किसी भी रूप में सम्भव नहीं है। अतः मन में जिज्ञासा का उत्पन्न होना ही अनुसन्धान का मूल आधार है। दर्शन, धर्म, विज्ञान आदि सभी चिन्तनात्मक क्षेत्रों में सन्देह, जिज्ञासा, आश्चर्य आदि के भाव उस क्षेत्र में आगे बढ़ने के प्रथम चरण हैं।

यह बात अवश्य है कि जब तक मन में आश्चर्य, सन्देह, जिज्ञासा या अशान्ति की भावना नहीं आयेगी तब तक दर्शन की समस्याओं पर व्यक्ति का ध्यान नहीं जायेगा। जिस जगत में हम रहते हैं, इसको देखकर सभी के मन में कौतूहल नहीं उत्पन्न होता। ऐसे व्यक्तियों को चिन्तनशील नहीं कहा जा सकता। गोस्वामी तुलसीदास ने इसी प्रकार के व्यक्तियों के विषय में कहा है –

'सबसे भले वे मूढ, जिन्हहिं न व्याप जगत गति।'

उपर्युक्त उद्धरण से यह निष्कर्ष सरलता से निकाला जा सकता है कि केवल दर्शन ही नहीं, ज्ञान–विज्ञान की अन्य शाखाओं में भी आश्चर्य, जिज्ञासा एवं अशान्ति उस क्षेत्र में व्याप्त समस्याओं की खोज के लिए आवश्यक है।

अनुसन्धान को अंग्रेजी में रिसर्च (Research) कहा जाता है। रिसर्च में 'रि' शब्दांश आवृत्ति और गहनता का द्योतक है जबकि 'सर्च' शब्दांश खोज का समानार्थी है। इस प्रकार 'रिसर्च' का अर्थ हुआ प्रदत्तों की आवृत्त्यात्मक और गहन खोज। दूसरे शब्दों में, प्रदत्तों की तह में बैठकर कुछ निष्कर्ष निकालना, नये सिद्धान्तों की खोज करना और उन प्रदत्तों का स्पष्टीकरण करना 'रिसर्च' की प्रक्रिया के अन्तर्गत है।

अनुसन्धान में किसी समस्या का वैज्ञानिक अन्वेषण सम्मिलित है। अन्वेषण की क्रिया इस बात की द्योतक है कि समस्या को अति निकट से देखा जाय। उसकी जाँच–पड़ताल को जाय और उसका ज्ञान प्राप्त किया जाय।

अनुसंधान के प्रक्रम में समस्या के कथन के तुरन्त पश्चात् एक उपयुक्त परिकल्पना की रचना की आवश्यकता होती है। परिकल्पना के अभाव में वैज्ञानिक अध्ययन प्रायः सम्भव नहीं है। इसका कारण यह है कि समस्या का स्वरूप अधिकतर अत्यधिक विषय, विस्तृत तथा विसरित रहता है। इस स्थिति में उसके व्यापक क्षेत्र को घटाना तथा न्यून करना अत्यन्त आवश्यक होता है। जिससे अध्ययन का स्वरूप स्पष्ट सूक्ष्म तथा गहन हो सके। यदि परिकल्पना द्वारा ऐसा नहीं किया जाता है, तब अनुसंधानकर्ता सम्बन्धित समस्या के अध्ययन के लिए इधर–उधर भटकता रहता है और इस प्रक्रिया में अनेक अनावश्यक तथा व्यर्थ के आंकड़े संकलित कर लेता है, क्योंकि परिकल्पना के अभाव में समस्या से सम्बन्धित आवश्यक तत्वों अथवा चरों का उसे स्पष्ट तथा विशिष्ट ज्ञान नहीं होता। इस प्रकार अनुसंधान में परिकल्पना का निर्माण अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है और इससे अनुसंधानकर्ता को तर्क संगत आकड़ों के संकलन में ठीक दिशा मिलती है तथा उपयुक्त वैध व शुद्ध निश्कर्शों के अनुमान में सुविधा एवं सरलता रहती है।

परिकल्पना :

परिकल्पना के लिए अंग्रेजी में हाइपोथीसिस (Hypothesis) शब्द है। हाइपोथीसिस दो शब्दों से मिलकर बना हैं–हाइपो (Hypo) और (Thesis) थीसिस। हाइपों ;भ्लचवद्ध का अर्थ है– सम्भावित और थीसिस ;जीमेपेद्ध का अर्थ है– कथन। इस प्रकार हाइपोथीसिस ;भ्लचवजीमेपेद्ध का अर्थ हुआ–सम्भावित कथन। हिन्दी में परिकल्पना का अर्थ है–किसी परिस्थिति के विशय में विशेश ढंग से किया गया अनुमान। इस प्रकार परिकल्पना एक ऐसा कथन है जिसकी परख अभी होनी है, जिसे सत्यापित करने की आवश्यकता है।

परिकल्पना वे पूर्व कथन हैं जो सत्य सिद्ध किये जा सकते हैं। साथ ही उनकी सत्यता के विशय में शक भी होता है और वे असत्य भी सिद्ध किये जा सकते है।

परिकल्पना की परिभाषाएं :

परिकल्पना की अनेक परिभाषाएँ दी गयी हैं। कतिपय महत्वपूर्ण परिभाशाएँ निम्न प्रकार हैं–

करलिंगर के अनुसार, ''परिकल्पा दो या अधिक चरों के मध्य सम्बन्धो का कथन है।''

जेम्स ई0 ग्रीटन के अनुसार, ''परिकल्पना सम्भावित माना हुआ समस्या का हल होता है जिसकी व्याख्या उस परिस्थिति से निरीक्षण के आधार पर की जा सकती है।''

परिकल्पना के गुण या विशेषताएँ :

- परिकल्पना सामान्यतः अपने अनुसंधान क्षेत्र से सम्बन्धित अन्य परिकल्पनाओं के अनुरूप होती है।
- परिकल्पना ज्ञात तथ्यों पर आधारित होती है तथा इसकी जड़े ज्ञान के वर्तमान सिद्धान्तों में निहित होती है।
- परिकल्पना तार्किक रूप से पुष्ट तथा शोध समस्या से घनिश्ठ रूप में सम्बन्धित होती है।
- परिकल्पना का स्वरूप ऐसा होना चाहिए जिसके अध्ययन के आधार पर अनेक उपयोगी निष्कर्ष उपलब्ध हो सकें।
- परिकल्पना प्रत्ययात्मक दृष्टि से स्पष्ट होती है अर्थात् एक अuछी परिकल्पना के सभी प्रत्ययों का संक्रियात्मक परिभाषीकरण अत्यावश्यक होती है।
- परिकल्पना का स्वरूप यथासम्भव विधि निर्धारित होती है।
- परिकल्पना ऐसी होती है कि के उसके परीक्षण के लिए यन्त्र सरलता से उपलब्ध हो सके।
- परिकल्पना की भाषा भ्रमपूर्ण और जटिल नहीं होती है।
- परिकल्पना प्रमाणित करने योग्य होती है।

परिकल्पना के प्रकार :

मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा के क्षेत्र में शोधकर्ताओं द्वारा बनाये गये प्राक्कल्पनाओं के स्वरूप पर यदि ध्यान दिया जाय तो यह स्पश्ट हो जायेगी कि उसे कई प्रकारों में बांटा जा सकता है। शोध विशेशज्ञों ने प्राक्कल्पना का वर्गीकरण निम्नांकित तीन आधारों पर किया है–

अ– चरों की संख्या के आधार पर –

मनोवैज्ञानिकों ने प्राक्कल्पनाओं का सबसे सरल वर्गीकरण प्राक्कल्पना में निहित चरों के आधार पर किया है। इस कसौटी पर प्राक्कल्पना के मुख्य दो प्रकार बतलाये गये हैं–

साधारण प्राक्कल्पना :– साधारण प्राक्कल्पना वैसी प्राक्कल्पना को कहा जाता है जिसमें चरों की संख्या मात्र दो होती है और सिर्फ इन्हीं दो चरों के सम्बन्ध द्वारा शोध समस्या का एक प्रस्तावित उत्तर दिया जाता है, उदाहरणस्वरूप ''बच्चों की बुद्धि तथा वर्ग उपलब्धि में धनात्मक सहसम्बन्ध होता है।'' इस प्राक्कल्पना में दो चर है अर्थात् बुद्धि तथा वर्ग उपलब्धि जिनके बीच एक खास सम्बन्ध की चर्चा की गयी है। अतः यह एक साधारण प्राक्कल्पना का उदाहरण है।

जटिल प्राक्कल्पना :– जटिल प्राक्कल्पना वैसी प्राक्कल्पना को कहा जाता है जिसमें चरों की संख्या दो से अधिक होती है और उनमें एक खास सम्बन्ध बतलाकर शोध समस्या का प्रस्तावित उत्तर तैयार किया जाता है। जैसे, ''शहर के उच्च सामाजिक–आर्थिक स्तर के लोगों में धूम्रपान करने की प्रवृत्ति देहात के मध्यम, सामाजिक आर्थिक स्तर के लोगों की अपेक्षा अधिक होती है।'' इस प्राक्कल्पना में तीन चर हैं–सामाजिक–आर्थिक स्तर, धूम्रपान की प्रवृत्ति तथा शहरी–ग्रामीण क्षेत्र। इन तीनों चरों में विशेश प्रकार का सम्बन्ध बतलाकर जिस प्राक्कल्पना का उल्लेख किया गया है, वह निश्चित रूप से एक जटिल प्राक्कल्पना का उदाहरण है।

ब– चरों में विशेष सम्बन्ध के आधार :–

कुछ शोध विशेशज्ञों ने प्राक्कल्पना का वर्गीकरण चरों के विशिश्ट सम्बन्धों के आधार पर किया है। जैसे, मैकग्यूगन 1990 ने इस कसौटी के आधार पर प्राक्कल्पना के मुख्य दो प्रकार बतलाये हैं जो निम्नांकित हैं–

सार्वत्रिक प्राक्कल्पना :– इस तरह के प्राक्कल्पना का स्वरूप ही कुछ ऐसा होता है जो निहित चरों के सभी तरह के मानों के बीच के सम्बन्ध को हर परिस्थिति में हर समय बनाये रखता है। जैसे, ''मानव की सीखने की प्रक्रिया पुरस्कार तथा प्रशंसा द्वारा तेजी से होती है'', एक ऐसी प्राक्कल्पना का उदाहरण है जिसमें बतलाया गया सम्बन्ध हर परिस्थिति में हर समय प्रत्येक मानव पर लागू होता है। परन्तु मनोविज्ञान में चूंकि जीव के व्यवहार का अध्ययन किया जाता है और चूंकि व्यवहारों में विभिन्नता होने की संभावना अधिक होती है, इसलिए इस तरह की सार्वत्रिक प्राक्कल्पना की सीमा बंधी हुई होती है।

अस्तित्वात्मक प्राक्कल्पना :– वैसी प्राक्कल्पना को कहा जाता है जो सभी व्यक्तियों या परिस्थितियों के लिए नहीं तो कम–से–कम एक व्यक्ति या परिस्थिति के लिए निश्चित रूप से सही होती है। जैसे, यदि यह प्राक्कल्पना विकसित की जाती है कि 'वर्ग में कम–से–कम एक छात्र तो ऐसा है जिसमें सीखने की प्रक्रिया दण्ड देने से तेजी से होती है।'' तो यह अतित्वात्मक प्राक्कल्पना का उदाहरण होगा। इस ढंग की प्राक्कल्पना के साथ एक दोष यह बतलाया गया है कि यदि वह जांच के बाद सही पाई जाती है तो उसका सामान्यीकरण अन्य व्यक्तियों के लिए नहीं किया जा सकता है और इस तरह से आगे की समस्या शोधकर्ता के लिए बनी ही रह जाती है। ऐसी परिस्थिति में शोधकर्ता एक नहीं बल्कि कई अस्तित्वात्मक प्राक्कल्पनाओं की जांच करता है और तब कहीं जाकर वह सामान्यीकरण करने की अवस्था में पहुंच पाता है।

स– विशिष्ट उद्देश्य के आधार पर :– शोध के विशिष्ट उद्देश्य के आधार पर शोध मनोवैज्ञानिकों ने प्राक्कल्पना को निम्नांकित पांच भागों में बांटा है–

करणत्य प्राक्कल्पना :– व्यवहार के कारणों को नियंत्रित करने तथा उसकी व्याख्या के उद्देश्य के मद्देनजर शोधकर्ता करणत्व प्राक्कल्पना का निर्माण करते हैं। करणत्व प्राक्कल्पना एक ऐसी प्राक्कल्पना होती है जिसके माध्यम से व्यवहार का विशिष्ट कारण या व्यवहार पर पड़ने वाले विशिष्ट प्रभाव की व्याख्या होती है। उदाहरणस्वरूप, शोधकर्ता यह प्राक्कल्पना कर सकता है थकान से अधिगम में ह्रास होता है, तो यह करणत्व प्राक्कल्पना का उदाहरण होगा क्योंकि उसमें अधिगम में ह्रास होने के कारण थकान बतलाया जाता है हालांकि अधिगम में ह्रास होने के कारण मात्र थकान ही नहीं होता है।

वर्णनात्मक प्राक्कल्पना :– व्यवहार के बारे मे पूर्वकथन तथा उसका वर्णन करने के ख्याल से शोधकर्ता वर्णनात्म्क प्राक्कल्पना का निर्माण करता है। वर्णनात्म्क प्राक्कल्पना वैसे प्राक्कल्पना को कहा जाता है जो व्यवहार की व्याख्या उसकी विशेषताओं या उस परिस्थिति जिसमें वह होता है, के रूप में करता है। इस तरह का प्राक्कल्पना शोधकर्ता को व्यवहार के गुणों की पहचान करने में मदद करता है और उसे पूर्वकथन करने में भी मदद करता है।

शोध–प्राक्कल्पना या कार्यरूप प्राक्कल्पना :– शोध प्राक्कल्पना से तात्पर्य वैसी प्राक्कल्पना से होता है जो किसी घटना या तथ्य के लिए बनाये गये विशिश्ट सिद्धान्त से निकाली गयी अनुमिति पर आधारित होती है। शोधकर्ता इस विश्वास के साथ इस तरह की प्राक्कल्पना का प्रतिपादन करता है कि वह यथार्थ है क्योंकि वह एक सिद्धान्त पर आधारित होता है। शोधकर्ता की तमन्ना यही रहती है कि शोध के परिणाम द्वारा उसकी शोध प्राक्कल्पना की संपुष्टि हो जाय, हालांकि कभी–कभी उसकी यह तमन्ना पूरी नहीं हो पाती है।

शोध प्राक्कल्पना की अभिव्यक्ति दो ढंग से की जा सकती है–दिशात्मक अभिव्यक्ति तथा अदिशात्मक अभिव्यक्ति। उदाहरणस्वरूप, मान लिया जाय कि कोई शोधकर्ता व्यक्तियों के दो समूहों में बुद्धि में अन्तर का अध्ययन करना चाहता है जिसके लिए वह शोध प्राक्कल्पना इस तरह बनाता है–समूह 'अ' समूह 'ब' से बुद्धि में श्रेष्ठ है।'' इस शोध प्राक्कल्पना के लिए वह वैकल्पिक प्राक्कल्पना दो तरह से तैयार कर सकता है ''समूह 'अ' तथा समूह 'ब' की बुद्धि एक समान है।' या ''समूह 'ब' बुद्धि में समूह 'अ' से श्रेश्ठ है या समूह 'अ' बुद्धि में समूह 'ब' से श्रेष्ठ है।' पहली प्राक्कल्पना अदिशात्मक ढंग से अभिव्यक्त की गयी है क्योंकि इसमें समूह 'अ' तथा समूह 'ब' में अन्तर की कोई दिशा का उल्लेख नहीं है। परन्तु दूसरी प्राक्कल्पना दिशात्मक ढंग से अभिव्यक्त की गयी है क्योंकि इसमें समूह 'अ' तथा 'ब' के अन्तर में एक दिशा पर बल डाला गया है। आदिशात्मक प्राक्कल्पना को द्वि–पार्श्व प्राक्कल्पना तथा दिशात्मक प्राक्कल्पना को एक–पार्श्व प्राक्कल्पना भी कहा जाता है।

नल प्राक्कल्पना :– नल प्राक्कल्पना शोध प्राक्कल्पना के ठीक विपरीत होती है। जैसा कि नाम से ही स्पश्ट है, यह एक तरह से उल्लेखित चरों के बीच प्रभाव नहीं की प्राक्कल्पना होती है। दूसरे शब्दों में, नल प्राक्कल्पना वह प्राक्कल्पना है जिसके द्वारा हम चरों के बीच कोई अन्तर नहीं होने के सम्बन्ध का उल्लेख करते है। शोधकर्ता जब कोई शोध प्राक्कल्पना बनाता है तो साथ–ही–साथ ठीक उसके विपरीत ढंग से नल प्राक्कल्पना भी बना लेता है और उसकी तमन्ना यही रहती है कि शोध के परिणाम द्वारा नल प्राक्कल्पना अस्वीकृत हो जाय ताकि वह विश्वास के साथ शोध प्राक्कल्पना को स्वीकृत करके उस दिशा में एक निश्चित निश्कर्श पर पहुंच सके। जैसे, उपर्युक्त शोध प्राक्कल्पना के लिए नल प्राक्कल्पना इस प्रकार होगी, ''व्यक्ति सूझ द्वारा प्रयत्न तथा भूल की अपेक्षा जल्दी नहीं सीखता है।''

सांख्यिकीय प्राक्कल्पना :– सांख्यिकीय प्राक्कल्पना से तात्पर्य वैसी प्राक्कल्पना से होता है जिसमें सांख्यिकीय जीवसंख्या के बारे में विशेश सम्बन्ध की उक्ति होती है तथा जिसे शोधकर्ता अपने प्राप्त आंकड़ों के आधार पर स्वीकृत या अस्वीकृत करना चाहता है। सांख्यिकीय प्राक्कल्पना का अर्थ समझने के लिए यह आवश्यक है कि सांख्यिकीय जीवसंख्या का तात्पर्य समझा जाए। सांख्यिकीय जीव संख्या एक ऐसी जीवसंख्या है जो व्यक्तियों की भी हो सकती है या कुछ चीजों की भी हो सकती है।

परिकल्पना तथा उसके कार्य :

यहाँ यह स्पष्ट ही है कि वैज्ञानिक अध्ययन के लिए उत्तम परिकल्पना की रचना अत्यन्त महत्वपूर्ण तथा आवश्यक होती है। इसका कारण यह है कि वैज्ञानिक अध्ययन में परिकल्पना की रचना का विशेष महत्व होता है व परिकल्पना से अध्ययन कार्य को विभिन्न प्रकार की सुविधाएँ मिलती हैं।

ब्राउन तथा घिशैली के अनुसार परिकल्पना के उपयोग से प्रायः निम्नलिखित कार्य रहते है :

- परिकल्पना एक व्याख्या के रूप में
- परिकल्पना अनुसंधान का प्रेरक
- परिकल्पना पद्धति विकास में सहायक
- परिकल्पना प्रायोगिक प्रविधियों के मूल्यांकन की कसौटी के रूप में
- परिकल्पना एक संगठनात्मक शक्ति के रूप में
- समस्या के क्षेत्र को सीमाबद्ध करना
- तर्क–संगत आंकड़ों के संकलन में सहायता
- चरों में विशिश्ट सम्बन्धों की जानकारी
- वैज्ञानिक निश्कर्शों व तथ्यों की जानकारी
- सिद्धान्त की रचना में सहाय

ब्राउन तथा घिशैली के अनुसार एक परिकल्पना निम्नलिखित स्थितियों में प्रमाणित मानी जाती है :

- जबकि सम्बन्धित समस्या का पर्याप्त उत्तर उपलब्ध हो जाता है।
- जबकि समस्या का उत्तर संयोगजन्य कारकों से बहुत ऊपर होता है।
- जबकि समस्या परिकल्पना को रचना के समय निश्चित व निर्धारित विश्वास के स्तर पर प्रमाणित हो जती है।

- ऽ जबकि प्राप्त निश्कर्शों के आधार पर एक घटना से सम्बन्धित चरों के द्वारा व्याख्यात्मक क्षमता उपलब्ध हो जाती है।
- ऽ जबकि प्राप्त तथ्यों के आधार पर भविश्यकथन की क्षमता प्राप्त हो जती है। 6. जबकि तुलनात्मक रूप से अन्य परिकल्पनाओं की अपेक्षा उस पर
- ऽ परिकल्पना से प्राप्त तथ्यों को अधिक श्रेश्ठ माना जाता है।

परिकल्पना की प्रासंगिकता / उपयोगिकता

अनुसंधान कार्य के दौरान परिकल्पना निर्माण के सम्बन्ध में ये प्रश्न प्रायः सामने आते हैं। प्रथम, अनुसंधान कार्य में परिकल्पना की आवश्यकता क्या पड़ती है?एवं द्वितीय, क्या प्रत्येक प्रकार के अनुसंधान कार्यों में परिकल्पना का निर्माण करना अनिवार्य होता है? यह दोनों प्रश्न अत्यन्त महत्त्वपूर्ण तथा गहन निहितार्थ वाले हैं जिनके सम्बन्ध में सम्यक ढंग से विचार करना उचित व आवश्यक ही है। वस्तुतः किसी भी अनुसंधानकार्य को वैज्ञानिक विधि से सम्पादित करने में परिकल्पना की एक आवश्यक महत्त्वपूर्ण व अपरिहार्य भूमिका रहती है। परिकल्पना के अभाव में अनुसंधानकर्ता के लिए अपने कार्य की व्यवस्थित रूपरेखा बनाना एवं किसी तार्किक निष्कर्ष पर पहुँचना अत्यन्त कठिन होता है। आधुनिक युग में परिकल्पना के अभाव में वैज्ञानिक विधि के द्वारा किसी व्यवस्थित तथा औपचारिक अनुसंधान कार्य करने की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। वस्तुतः ज्ञान सृजन की आधुनिक विधि वैज्ञानिक तर्क पर आधारित होती है जिसमें परिकल्पना की पुष्टि से ही नवीन ज्ञान का सृजन व उसकी स्वीकार्यता सम्भव होती है।

दार्शनिक, ऐतिहासिक व विवेचनात्मक प्रकृति के अनुसंधान कार्यों में भी अनुसंधानकर्ता अपनी समस्या के निरूपण के उपरान्त किसी–न–किसी परिकल्पना के अनुरूप कार्य करता है। कभी–कभी परिकल्पना के परीक्षण के लिए मात्रात्मक तरीकों (Quantitative Measures) के उपलब्ध न होने के कारण गुणात्मक या प्रसांगिक (Textual) प्रकार के अनुसंधानों में परिकल्पना को स्पष्ट रूप में वर्णित करन व आनुभाविक ढंग से परीक्षण करना सम्भव नहीं होता है। ऐसी स्थिति में प्रायः अनुसंधानकर्ता परिकल्पना को अपनी कार्य योजना में अंकित न करके उसे मानसिक परिप्रेक्ष्य (Mental Perspective) के रूप में स्वीकार करता है। उदाहरण के लिए किसी ऐतिहासिक स्थल का उत्खनन करने सम्बन्धी अनुसंधान कार्य में अनुसंधानकर्ता पहले से यह परिकल्पित नहीं कर पाता है कि उत्खनन में उसे क्या–क्या सामग्री प्राप्त होगी। परन्तु उत्खनन स्थल का चयन करते समय निश्चित रूप से उसका अनुमान होता है कि यह एक प्राचीन ऐतिहासिक स्थल है तथा इस स्थल के उत्खनन से कुछ पुरातत्वीय सामग्री अवश्य मिलेगी। अनुसंधानकर्ता का यह अनुमान ही उसकी अनुसंधान परिकल्पना है जो उसे भावी अध्ययन के लिए निर्देशित करती है।

अनुसंधान का में परिकल्पना निर्माण की आवश्यकता, सार्थकता तथा महत्त्व को निम्न बिन्दुओं के रूप में लिखा जा सकता है–

- ऽ परिकल्पना अनुसंधान कार्य को प्रारम्भ बिन्दु (Starting Point) प्रदान करती है।
- ऽ परिकल्पना अनुसंधान कार्य को दिशा–निर्देशित (Directed) करती है।
- ऽ परिकल्पना अनुसंधान कार्य के क्षेत्र को सीमित व व्यावहारिक (Practicable) बनाती है।
- ऽ परिकल्पना अनुसंधान कार्य को विशिष्ट तथा केन्द्रित (Focused) बनाती है।
- ऽ परिकल्पना अनुसंधान कार्य को सार्थक तथा औचित्यपूर्ण (Justified) बनाती है।
- ऽ परिकल्पना अनुसंधान कार्य के प्रारूप (Design) निर्धारण में उपयोगी होती है।
- ऽ परिकल्पना अनुसंधान कार्य में विश्वसनीय प्रदत्त (Reliable Data) पाने में सहायक होती है।
- ऽ परिकल्पना अनुसंधान कार्य को मितव्ययी (Economic) बनाती है।
- ऽ परिकल्पना पूर्वकथन (Prediction) प्रस्तुत करने में सहायक होती है।
- ऽ परिकल्पना तथ्य स्थापना (Fact Establishment) में सहायक होती है।

संदर्भ :

- ऽ गुप्ता प्रो0 एस0पी0, अनुसंधान संदर्शिका शारदा पुस्तक भवन इलाहाबाद, पृ0सं0 1
- ऽ राय, पारसनाथ, सी0पी0 अनुसंधान परिचय लक्ष्मी नरायन अग्रवाल पृ0सं0 18
- ऽ कपिल, डॉ0 एच0के0 अनुसंधान विधियां (व्यवहारपरक विज्ञानों में) एच0पी0 भार्गव बुक हाउस आगरा, पृ0सं0 35 एवं 47–49
- ऽ भटनागर, डॉ0 आर0पी0, डॉ0 ए0पी0, डॉ0 अनुराग, शिक्षा अनुसंधान, आर0 लाल बुक डिपो मेरठ, पृ0सं0 71–72 एवं 76

डॉ0 हनुमान प्रसाद मिश्र
असि0 प्रोफेसर
शिक्षक शिक्षा विभाग

भारतीय अर्थव्यवस्था और शिक्षा पर भूमंडलीकरण के प्रभावों का अध्ययन

डॉ0 संजय गौतम, अमित कुमार

सारांश

प्रस्तुत शोध अध्ययन भारतीय अर्थव्यवस्था पर भूमंडलीकरण के प्रभावों के अध्ययन के संदर्भ में हैं। इस शोध अध्ययन में विकासशील समाज में भूमंडलीकरण की प्रक्रिया ने बाजार व अर्थव्यवस्था की सहकारी शक्तियों ने शासन की समस्याओं को तो जन्म दिया है साथ ही स्कूल परिप्रेक्ष्य अर्थात शिक्षा जगत में भी परिवर्तन ला दिया है। भूमंडलीकरण सामान्यतः एक ऐसी अवधारणा होनी चाहिए थी कि पूरे विश्व में एक संस्कृति विकसित हो जो पूरे भूमंडल को एक विश्वग्राम में परिवर्तित कर सारी दुनिया के मनुष्य– मात्र के कल्याण के लिए प्रतिबद्ध होती है। इस रुप में हमारे श्वसुधैव कुटुंबकमश्की धारणा के अनुकूल होता जिसमें विश्व मानवता के कल्याण की कामना विद्यमान है। किंतु आज वर्तमान रूप में भूमंडलीकरण एक ऐसी धारणा है जिसका मूलाधार बाजार, बाजारवाद और उपभोक्तावाद है। पूरी दुनिया को अपने बाजार के रूप में परिवर्तित कर विश्व की सर्वोच्च–श्सुपरश्शक्ति अमेरिका अपने रूप में ढालकर सांस्कृतिक दृष्टि से अपना बनाने, आर्थिक दृष्टि से अपने व्यस्त पदार्थों कि संपूर्ति के लिए पूरे विश्व को एक रंग में रंगने के संकल्प को कार्य रूप दे चुका है, पूरा विश्व उसके द्वारा परिकल्पित माल संस्कृति बनकर रह गया है। यह भूमंडलीकरण एक प्रकार से पूरी दुनिया का अमेरिकीकारण है जो सारे देश की स्थानिक संस्कृति, शिक्षा व्यवस्था आदि को अपने रंग में रंग डालने की सफल कूटनीतिक है। जिसके कारण पूरा विश्व उसकी चपेट में आ चुका है। एक प्रभंजन के प्रवेग से अमेरिकी अर्थनीतियां और तथाकथित भूमंडलीय संस्कृति चारों अपना पसारा पसार चुकी है। भूमंडलीकरण का प्रभाव भारतीय अर्थव्यवस्था एवं शिक्षा व्यवस्था पर भी पूर्ण रुप से दृष्टिगोचर होता है। भूमंडलीकरण ने पूरे विश्व के किसी भी क्षेत्र को नहीं छोड़ा है।

वर्तमान में भूमंडलीकरण का प्रभाव भारतीय अर्थव्यवस्था एवं शिक्षा के क्षेत्र को पूरी तरह से अपने में समाहित कर लिया है और शिक्षा के रूप में चिकित्सा, इंजीनियरिंग, सूचना प्रौद्योगिकी, कंप्यूटर प्रबंधन जैसे कई क्षेत्रों में बड़ी तेजी से अपनी प्रकृति चमक दमक से प्रभावित कर रहा है।

मुख्य बिन्दु

भारतीयअर्थव्यवस्था, भूमंडलीकरण, शिक्षा, उदारीकरण, निजीकरण, आर्थिक मंदी, अमेरिका विकसित राष्ट्र।

प्रस्तावना–

भारत में भूमंडलीकरण अवधारणा का सूत्रपात सन् 1991 में तत्कालीन वित्त मंत्री मनमोहन सिंह द्वारा किया गया था। मनमोहन सिंह ने 1991 के आर्थिक सुधारों के दौरान वित्त मंत्री के रूप में कार्य किया। वे पी वी नरसिम्हा राव सरकार में वित्त मंत्री थे। कुछ लोग इसे मात्र थी अवधारणा समझते हैं, तो कुछ इसे उदारीकरण अथवा निजीकरण की अवधारणा के रूप में देखते हैं। भूमंडलीकरण जो कि अंग्रेजी शब्द ग्लोबलाइजेशन का हिंदी अनुवाद है। भूमंडलीकरण को परिभाषित करने वाले विचार मुख्यतः तीन तरह के रहे हैं–

1–यह आधुनिकीकरण की प्रक्रिया का अगला चरण है।

2–कुछ विद्वान यह मानते हैं कि सन् 1980 के दशक के पश्चात से अमेरिका जैसे विकसित राष्ट्र ने आर्थिक मंदी से उबरने और अपने उत्पादों की बिक्री हेतु विश्व के अन्य देशो की अर्थव्यवस्था में हस्तक्षेप करने की दृष्टि से उदारीकरण की नीति मुक्त उदार व्यवस्था, विश्व अर्थव्यवस्था तथा प्रौद्योगिकी के एकीकरण की नीति के सहत प्रारंभ की उसी के परिणाम स्वरुप भूमंडलीकरण का जन्म हुआ।

3–यह नई प्रक्रिया नहीं है अपितु 17 वीं शताब्दी से ही दुनिया में निवेशवाद के रूप में प्रारंभ हुई जिसके अगुआ इंग्लैंड एवं फ्रांस जैसे देश रहे। इस प्रकार आज जब यह स्थापित हो चुका है कि किसी भी विचार, वस्तु सेवा पद्धति अथवा सिद्धांत को विश्वव्यापी बनाना ही उस विचार, वस्तु सेवा पद्धति अथवा सिद्धांत का भूमंडलीकरण कहलाता है।

वस्तुतः 'भूमंडलीकरण एक व्यापक अवधारणा है जो विश्व के समस्त समाज की संरचना के समस्त पक्षों की शक्तियों के सहारे पश्चिम के अथवा सुविधा संपन्न विकसित राष्ट्रों के प्रभुत्ववादी उद्देश्यों को पूरा करने की एक महत्वाकांक्षी प्रक्रिया है। किसी समाज की अर्थव्यवस्था, राजनीति, तकनीकी संस्कृति एवं शिक्षा को प्रभावित करती है।'

भूमंडलीकरण के स्वरुप को परिभाषित करते हुए डॉ दीपिका गुप्ता लिखती हैं कि भूमंडलीकरण विकास की वह अवस्था मानी जा सकती हैं जिसमें सामाजिक, आर्थिक व सांस्कृतिक आदान –प्रदान राष्ट्र राज्य सूची कृत्रिम सीमाओं एवं नियंत्रण के रूप में विश्व स्तर पर होता है। वैश्विकरण की भूमि पर खींची हुई राष्ट्र राज्यरूपी कृत्रिम सीमाओं पर आधारित राजनीति इकाई से भिन्न उभरती हुई सांगठनिक इकाई के संदर्भ में देखा जा सकता है और भूमंडलीकरण उन सभी प्रक्रियाओं की ओर इंगित करता है जिसमें विश्व के लोगश्एकल विश्व समाजश्के रूप में संगठित हो रहे हैं।'

वर्तमान में जिस भूमंडलीकरण का शोर सर्वाधिक हो रहा है उसका प्रवेश भारत में 1990 –91 में हुआ और इसके पक्ष –विपक्ष में लोग खड़े होने लगे हैं। इसका सर्वाधिक खतरनाक प्रभाव हमारी शिक्षा पर पड़ा। इस संदर्भ में श्री रमेश अनुपम ने अपने एक लेख में उन खतरों का उल्लेख करते हुए लिखा है कि भूमंडलीकरण के नाम पर, विश्वग्राम वैविध्य या अनेकता की संस्कृति को नष्ट कर एक ही सांस्कृतिक प्रतिमान बनाए जाने की बात कही जा सकती है। अमेरिकन पश्चात संस्कृति द्वारा हमारी संस्कृति का मूल्यांकन किया जा रहा है। हमारी संस्कृति को नष्ट करने की सुनियोजित कोशिश चल रही है। यह एक तरह से बौद्धिक सांस्कृतिक हमला है। भूमंडलीकरण के नव्य आधुनिक पैरोकार यह जानते हैं कि किसी देश

को आर्थिक या राजनैतिक रुप से पराजित करने से पहले इसे बौद्धिक रुप से, सांस्कृतिक रूप से पराजित करने की जरूरत सबसे पहले पडती है।

आज के विश्व समाज में यह अपरिहार्य वास्तविकता का रूप लेती जा रही है। विश्व समाज का कोई अंग इससे बच नहीं पा रहा है। इसके मूल में सूचना तकनीकी का धमाकेदार के साथ आगमन तथा जैव तकनीकी का तेजी से प्रसार। भूमंडलीकरण के आगमन के परिणाम स्वरुप भौतिकता की ओर रुझान तेजी से बढ़ा है। देशो में भी सुखोपयोग के साधनो कार, बंगला, सौन्दर्य प्रसाधन में लिप्त शहरी लोग देश की गरीबी को छुपाने का प्रयास कर रहे हैं। वस्तुतः विश्व भौतिकता की ओर इतना आगे बढ़ गया है कि अब वापसी मुश्किल है—अतरू अब इस दिशा में बढ़ना ही एकमात्र रास्ता है।

भूमंडलीकरण सामाजिक परिवर्तन की वह प्रक्रिया है, जिसमें भौगोलिक एकता सांस्कृतिक सीमाएं सिकुड़ रही हैं। सीमाओं के सिकुड़ने की पृष्ठभूमि में हैं तीव्रगामी संप्रेषण एवं परिवहन के साधन।

भूमंडलीकरण आज केवल उस आर्थिक प्रक्रिया तक ही सीमित नहीं है, जिसमें विभिन्न देशों की अर्थव्यवस्थाएं वैश्विक बाजार की ओर उन्मुख है तथा बहुराष्ट्रीय तथा वैश्विक वित्तीय संस्थाओं द्वारा नियंत्रित हैं ।अब यह एक सांस्कृतिक प्रक्रिया का रूप ले रही है, जो इलैक्ट्रोनिक मीडिया आदि के माध्यम से पश्चिम की भौतिकवादी, पूंजीवादी संस्कृति के जाल में पूरे विश्व को आवृत कर रही है।

आज हम एक ऐसे संक्रमण काल इस समय में जी रहे हैं जिसमें पुरातन से छुटकारा और नए का ग्रहण हमसे हो नहीं पा रहा है। यह नया और नई जीवन दृष्टि है क्या, इसी सोच में समकालीन चिंतना, विचारणाहलकान है। चहुंओर भूमंडलीकरण —वैश्वीकरण, ग्लोबीकरण का जो शोर है वह इसी चिंता का मूर्त रूप है जिसने हमारे वैचारिक जगत और जीवन पद्धति में एक अभूतपूर्व परिवर्तन उपस्थित कर दिया है। भूमंडलीकरण और वैश्वीकरण दोनों ही आज ग्लोबलाइजेशन, ग्लोबीकरण के लिए सर्वस्वीकृत शब्द है। इस दिग्भ्रमित स्थिति ने हमारे साहित्य कलाओं को भी व्यापक रुप में प्रभावित किया है। भारतीय अर्थव्यवस्था और शिक्षा पर भूमंडलीकरण की प्रभावित का चरित्र सदैव से सर्वग्राही तथा सर्वसमावेशी रहा है, सदियों से आते अनेक आक्रांता अपने साथ जिस सांस्कृतिक विरासत को लेकर आते रहे, वह भारतीय अर्थव्यवस्था एवं शिक्षा को प्रभावित कर भारतीय संस्कृति के सागर में समाकर एकमेक होती रही।

किन्तु आज मुख्य अंतर यह आया कि हमारे पैर इस भूमंडलीय आंधी में टिक नहीं पा रहे हैं। आंधी या अंधड़ तो आकर एक वेग से निकल जाता है,सब कुछ में से काफी कुछ को उखाड़ते झिंझोड़ते और कुछ को पूरी तरह ध्वस्त करते हुए किंतु यह वैश्वीकरण दुनिया को समदृष्टि से समतल,एकमेक, करने के इरादे से जहां गया है,पूरी तरह जमकर बैठ गया है, अपने सर्वग्रासी डेनों को पूरी तरह पसारकर। प्रौद्योगिकी और तकनीक की अभूतपूर्व प्रगाति, सूचना—क्रांति का तीव्र विस्फोट, कम्प्यूटर और मोबाइल के क्षेत्र में अपूर्व क्रांतिकारी परिवर्तनों, विज्ञापन के मायावी जगत से प्रोत्साहित उपभोक्तावाद, विपणन—प्रबंधन की नित नई युक्तियों ने हमारा समाजार्थिक, राजनीतिक तथा धार्मिक परिवेश ने हमारे ऊपर इन स्थितियों को पूरी तरह थोप दिया है। उन्मुक्त,खुले, बाजार की अर्थनीति और व्यवस्था ने उपभोग का विराट मायाचक्र रच अकूत धन—संम्पत्ति आयत्त करने का ऐसा आत्मघाती स्वप्न वर्तमान मनुष्य को दे डाला है जिसके लिए वह किसी भी प्रकार के साधन अपनाने को त तत्पर है। राष्ट्रीय और वैयक्तिक दोनों स्तरों पर हम अपने को उधारजीवी विकास—प्रक्रिया में पड़ा पाते हैं।साथ ही उदात्त और श्रेष्ठ के प्रति हमारी निष्ठा निरंतर ह्वासशील स्थिति को प्राप्त होती चली गई। येन—केन प्रकारेण लक्ष्य तक पहुंचने की हड़बड़ाहट हमें जीवन के सभी क्षेत्रों में शार्ट—कट की संस्कृति में ढाल रही है। इसलिए आज भूमंडलीकरण हमारे विचार—जगत में एक सतत चिंता का रूप धारण कर गया है। प्रख्यात समाजशास्त्री प्रो० श्यामचरण दुबे[1] इन स्थितियों के प्रति अपनी चिंता इस रुप में प्रकट करते हैं।

समकालीन भारतीय समाज तीव्र संक्रमण के दौर से गुजर रहा है। परिवर्तन की आंधियां कई दिशाओं से आ रही हैं—एक ओर आधुनिकीकरण की अनिवार्यता है। दूसरी ओर परंपरा के आग्रह हैं। पश्चिम की आर्थिक और तकनीकी सहायता अपने साथ वहां की जीवन शैली और मूल्य ला रही है, जिन्हें अपनी जड़ से कटे भारतीय आधुनिकता समझकर बिना तर्क के अपना रहें हैं। इस अंधानुक्रमण ने एक नई चिंता को जन्म दिया है—अपनी अस्मिता और पहचान खोकर एक आकृतिविहीन भीड़ की गुमनामी में खो जाने की। हमारी संस्कृति अनुकरण की भोगवादी लिप्सावादी संस्कृति बन गई है। आर्थिक उदारता, खुलापन और भूमंडलीकरण संसार —भर में एक अपसंस्कृति फैला रहे हैं। हमें इस प्रवृत्ति के असहाय दर्शक मात्र बनकर रह गए।

भूमंडलीकरण की अवधारणा हमारी संस्कृति के लिए कोई नई बात नहीं है, तत्संबंधी हमारी पारंपरिक अवधारणा श्वसुधैव कुटुम्बकमश्के प्रकल्प में पूरे विश्व समुदाय को एक कुटुम्ब, एक कुल ,मानने का प्रबल आग्रह रहा है किंतु भूमंडलीकरण की शब्दावली का वैश्विक गांव—ग्लोबल —विलेज—हमारी इस विश्व मानवता वादी धारणा से बिल्कुल अलग है। वैश्विक गांव की मानता का आर्थिक पक्ष—बाजार तथा बाजार वाद—इसे हमारी पुरातन मान्यता से पूरी तरह अलग कर एक प्रच्छन्न और अघोषित आक्रमण का रूप दे डालता है। वैश्वीकरण का यह आर्थिक पक्ष इसे नव साम्राज्यवाद का रुप प्रधान करता है। सुनियोजित विधियों, क्रिया—कलापों और अनेकानेक युक्तियों से यह मिथ्या भ्रम संपूर्ण विश्व में प्रचारित और स्थापित कर दिया गया है। कि भूमंडलीकारण के अंतर्गत बाजार का अंग बन जाना ही विकास का एकमात्र मार्ग है। प्रसिद्ध वैज्ञानिक शिक्षाविद् प्रो. यशपाल[2] ने भी विचार किया है कि वर्तमान में यह वैश्वीकरण हमारे प्राचीन सांस्कृतिक आदर्श से किस प्रकार भिन्न है, भूमंडलीकरण का अर्थ यह नहीं है यह नहीं है कि यह सब लोगों के लिए बराबर है। इसमें श्वसुधैव कुटुम्बकम जैसी बात बिल्कुल नहीं है। भूमंडलीकरण एक ऐसी स्वेच्छाकारी प्रक्रिया है जिसके नियमों का पालन हमें करना पड़ेगा और हम सबको उसके पीछे चलना पड़ेगा। ये यह भी तय करेंगी कि हमारी स्थितियां कैसी होंगी। उन्हें कैसी होनी चाहिए। आपको अनुकूलित किया जाएगा।

शिक्षा पर भूमंडलीकरण के प्रभाव

शिक्षा सीखने —सिखाने के लिए प्रक्रिया है, सीखने —सिखाने की

यह प्रक्रिया शिक्षार्थी के चारों ओर व्याप्त वातावरण में चलती है। यह वातावरण मुख्यतरू पारिवारिक, सामुदायिक, राष्ट्रीय होता है। शिक्षा के प्रथम अध्याय का प्रारम्भ माता–पिता एवं परिवार से होता है। अगला अध्याय समुदाय में और शेष अध्याय प्रान्तीय, राष्ट्रीय वातावरण से संबंधित अध्याय हैं और आज के परिप्रेक्ष्य में एक और प्रमुख अध्याय जुड़ गया है और यह है, विश्व अध्याय अंतरराष्ट्रीय अध्याय जिसने वैश्वीकरण के प्रभाव से पूर्व सभी अध्यायों को गौण कर दिया है।

क्योंकि परिवार, समुदाय, राष्ट्र सभी को इसने अपने अंदर समाहित कर लिया है। जिसके उदाहरण के लिए इलेक्ट्रॉनिक प्रौद्योगिक–टीवी, कम्प्यूटर आदि के प्रभाव से यह अपना शैक्षिक प्रभाव बाल्यकाल से शिक्षार्थियों पर जमाने लगा है।

यद्यपि यह निर्विवादित तथ्य है कि भूमंडलीकरण का सर्वाधिक लागू शिक्षा जगत को ही हुआ है और वह भी उच्च शिक्षा के क्षेत्र में मुक्त विश्वविद्यालय, दूरस्थ शिक्षा, इंटरनेट आदि माध्यम जो शिक्षा के प्रसार चलाए जा रहे हैं, भूमंडलीकरण का ही प्रभाव है, इलेक्ट्रॉनिक संचार ने दुनिया को एक सूत्र में बांध दिया है। सेटैलाइट क्रांति ने कंप्यूटर क्रांति का मार्ग प्रशस्त किया है। कंप्यूटर ने दुनिया को एक ग्राम अथवा विश्व ग्राम में परिवर्तित कर दिया है। इंटरनेट के चमत्कार से ई शिक्षा, ई–बैंकिंग, ई–कॉमर्स, ई–लर्निंग का विकास एवं विस्तार आज दुनिया की वास्तविकता हैं। इसने समय एवं दूरी को समाप्त कर दिया है। दुनिया के किसी भी कोने में बैठा व्यक्ति किसी दूसरे कोने में बैठे व्यक्ति को शिक्षण प्रशिक्षण प्रदान कर सकता है।माध्यम होता है ई– शिक्षा, इससे अध्यापक एवं विद्यार्थी अपने ज्ञान को ताजा बनाए रखने के साथ–साथ ज्ञान के क्षेत्र का विस्तार भी कर सकते हैं।

भूमंडलीकरण का सबसे अधिक दिखाए देने वाला प्रभाव स्कूली शिक्षा से औपचारिक केंद्रों पर दिखाई देता है। आज विद्यालय अर्थात शिक्षण संस्थान किन्हीं जीवन मूल्यों आदर्शों एवं ज्ञान के नहीं है।ये व्यवसाय के केंद्र हैं। यह स्थिति पूर्व प्राथमिक से लेकर उच्च एवं व्यावसायिक शिक्षा तक है। विदेशों से आयी नीतियां, जैसे–शिशु गृह, दिवस, देखरेख केंद्र, प्राथमिक विद्यालय एवं व्यावसायिक शिक्षण संस्थानों को खोलने के पीछे मुख्य उद्देश्य पैसा कमाना है। इन संस्थानों में देखरेख,कौशलों, क्रियाकलापों पर ज्यादा ध्यान नहीं दिया जाता है जहां तक की वांछित मानवीय संसाधन के रूप में शिक्षक तक भी उपलब्ध नहीं हैं और अगर हैं भी तो अप्रशिक्षित। शिक्षा संस्थानों की तेजी से बढ़ती संख्या की पृष्ठभूमि में वैश्वीकरण एवं आधुनिकीकरण के प्रभाव से आया पैसा कमाने का भौतिकवादी उद्देश्य हैं जिसकी पूर्ति ये संस्थान माता– पिता एवं शिक्षार्थियों को भौतिक सुख–सुविधा प्रदान करते हैं जिससे राष्ट्र व समाज का कोई हित नहीं होता।[3]

वैश्वीकरण के कारण ही विदेश की संस्थाएं हमारे देश में तेजी से प्रवेश करती आ रहीं हैं। इसके पीछे आम जनता की मानसिकता यह है कि इनसे प्राप्त प्रमाण पत्र अधिक श्रेष्ठ है। विदेशों में शिक्षा पाना व शिक्षण कार्य करना भूमंडलीकरण के प्रभाव स्वरुप है। कुछ क्षेत्रों में, जैसे –साफ्टवेयर इंजीनियर, जिनकी कार्य दक्षता के अनुसार श्रम शक्ति भारत जैसे देश में कम मिलती हैं जिससे वह विकसित देशों में पलायन कर जाते हैं। साथ ही कुछ बहुराष्ट्रीय कंपनियां जो कि भूमंडलीकरण का परिणाम है। प्रशिक्षित व्यक्तियों को अधिक वेतन पर कार्य दे रही हैं। इस सबके परिणाम स्वरुप शिक्षा का स्वरुप बदला है उस शिक्षा की ओर लोग ज्यादा आकृष्ट हो रहे हैं जो बहुराष्ट्रीय कंपनियां, विदेशों में रोजगार दिलाएं क्योंकि विदेशी कंपनियों में काम करना, सामाजिक प्रतिष्ठा देने वाला बन गया है।[4]

आज प्रारंभिक शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा एवं व्यावसायिक शिक्षा के क्षेत्रों में धनी देशों के अंतरराष्ट्रीय वित्तीय संसाधनों (विश्व–बैंक) द्वारा ऋण उपलब्ध कराया जा रहा है।ऋण के साथ ही ये अपनी ऐसी शर्ते रखते हैं कि ये शैक्षिक, योजनाएं, कार्यक्रम इनके निर्देशानुसार चलते हैं और ये अपने नियंत्रण के द्वारा इन योजनाओं के राष्ट्रीय स्वरुप को लुप्त कर देते हैं जैसे देश के प्रारंभिक शिक्षा के सार्वजनिकीकरण के लिए चलाए जा रहे कार्यक्रम सर्व शिक्षा अभियानश्के लिए अमेरिका, ब्रिटेन, यूरोपीय आयोग एवं विश्व बैंक ने 100 करोड़ डॉलर का ऋण इस योजना के 2003–2006 के चरण के लिए उपलब्ध कराया था और उसके बाद भी कराया।[5] सारांश यह है कि वैश्वीकरण की प्रक्रिया ने देश की सरकार अर्थात देश की 15–20 प्रतिशत आबादी को जो देश के संचालन में जीवन के सभी क्षेत्रों में मुख्य भूमिका अदा करती है अपने से शिकंजे में कस लिया है। जाने अनजाने में भूमंडलीकरण की आड़ में ये लोग देश की समस्त शिक्षा प्रणाली का पश्चिमी करण, विदेशीकरण कर रहे हैं।

विगत बीस –इक्कीस वर्षों में जिस रुप में भूमंडलीकरण की यह प्रक्रिया तीव्र हुई है, उसका आधार वाशिंगटन कान्सेसियस है जिसके प्रणेता अंतर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्री अध्ययन संस्थान इंस्टिट्यूट फॉर इंटरनेशनल इकोनॉमिक्स के प्रसिद्ध अर्थशास्त्री जॉन विलियमसन थे। उन्होंने अपने संस्थान में प्रसिद्ध अर्थशास्त्रियों को संगोष्ठी में नियंत्रित कर विचार मंथन के लिए आमंत्रित किया जिसमें उन्होंने पश्चिम के सवाल रास्तों को उनकी अर्थव्यवस्था तथा स्थितियों और ऋण की निरंतर बढ़ती से उबारने के लिए एक ऐसा दस सूत्रीय कार्यक्रम प्रस्तावित किया जिसके विषय में सम्मिलित राष्ट्रों के प्रतिनिधि एक रुप, आम राय, बना सकें। इसका प्रस्ताव करने वाला वाशिंगटन कौन सा वाशिंगटन है, इसकी व्याख्या स्वयं प्रोफेसर विलियमसन ने इस रूप में की है। इस शोध पत्र का वाशिंगटन दोनों हैं–कांग्रेस प्रशासन के वरिष्ठ अधिकारियों का राजनीतिक वाशिंगटन तथा तकनीकी विशेषज्ञों, अंतरराष्ट्रीय वित्तीय संस्थानों, अमेरिकी सरकार के वित्तीय निकाय, फेडरल रिजर्व बोर्ड तथा शीर्ष चिंतकों (थिंक –टैंक) का वाशिंगटन।[5]

हमारे प्रधानमंत्री तथा प्रसिद्ध अर्थशास्त्री डॉ. मनमोहन सिंह ने वैश्वीकरण को अवसर और चुनौती के रूप में मानते हुए कहा कि ज्ञान की अर्थव्यवस्था थे विकास ने विज्ञान और प्रौद्योगिकी पर आधारित उत्पादों के लिए नए बाजार का मार्ग प्रशस्त किया है। क्या हम इस प्रक्रिया को प्रोत्साहित करने के लिए कुछ कर रहे हैं? हमें भूमंडलीकरण को शर्तिया जितने वाला खेल बनाना होगा। वैश्वीकरण की चुनौतियों से हम कैसे निपटते हैं और इसके विविध अवसरों का कैसे उपयोग करते हैं, यह विश्व के अन्य देशो से हमारे संबंधों को आधार प्रदान करे जा। अपने इसी भाषण में डॉ मनमोहन सिंह ने इस बात पर मन दिया हे कि कुछ भी समय में भारतीय अर्थव्यवस्था ने अपने को आर्थिक विकास की एक नई मंजिल तक एक नई शक्ति का रूप

दिया है,एक दशक पूर्व किसने सोचा होगा कि भारत सॉफ्टवेयर सेवाओं का बड़ा निर्यातक बनकर उभरेगा और ब्रेन ड्रेन के स्थान पर श्ब्रेन गेन की नई प्रक्रिया उभरेगी।[6]

निष्कर्षः

भारतीय अर्थव्यवस्था और शिक्षा पर भूमंडलीकरण के प्रभाव के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि भारतीय अर्थव्यवस्था के इस एकीकरण को मूर्त रूप देने में तकनीकी, व्यापारिक उन्नति तथा पूंजी के उन्मुक्त प्रवाह से और तेजी आती है। व्यापार , प्रौद्योगिकी आदि के कारण जन समाज की बड़ी संख्या का उन्नत राष्ट्रों में प्रवास व्यापार के अंतरराष्ट्रीयकरण को और अधिक विकासमान स्थिति में ला देता है। विभिन्न ज्ञान अनुशासनों ने अपने– अपने परिप्रेक्ष्य में भूमंडलीकरण को लक्षित कर परिभाषित करने का प्रयत्न किया है। पूंजी निवेश क्षेत्र में इसे पूंजी को अपने घरेलू बाजारों से अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र में विभिन्न बाजारों में निवेश इट कर अधिकाधिक लाभ अजित करने का अवसर माना है जिसका प्रभाव भारतीय अर्थव्यवस्था एवं शिक्षा पर भी पड़ा है। शिक्षा का पूर्णतः भौतिकीकरण कर दिया गया है। शिक्षा के उद्देश्य वैयक्तिक समृद्ध भौतिक जीवन जीने तक सिमट गए हैं। कुल मिलाकर यह कहा जा सकता हैकि खुले बाजार वाली भूमंडलीकरण की प्रक्रिया ने शिक्षा का भी वैश्विक बाजारी करण कर दिया है जिसके प्रभाव से समाज का धनी वर्ग, पश्चिमी देशों व वहां की संस्कृति का अनुयायी होता जा रहा है।

संदर्भ ग्रंथ–

1. श्यामचरण दुबे, समय और संस्कृति पृष्ठ –131–134
2. प्रो. यशपाल,उद्धृत अक्षर पर्व, मार्च 2004,नरेन का लेख।
3. दि वाशिंगटन ऑफ दिस पेपर इज बोथ द पॉलिटिकल वाशिंगटन ऑफ कांग्रेस एंड सीनियर मेंबर्स ऑफ द एडमिनिस्ट्रेशन एंड द टेक्नोक्रेटिक वाशिंगटन ऑफ द इंटरनेशनल फाइनेंसियल इंस्टिट्यूट ऑफ द इकोनॉमी एजेंसीज आफ द यू.एस. गवर्नमेंट द शॉर्ट हिस्ट्री ऑफ द वाशिंगटन कान्सेसियस फ्राम द वाशिंगटन कान्सेसियस टूवडर्स ए न्यू ग्लोबल गवर्नेन्स, शीर्षक शोध पत्र से बार्सिलोना, 24–25 सितम्बर–2004.
4. सच्चिदानंद सिंहा, भूमंडलीकरण की चुनौतियां, भूमिका।
5. डॉ. मनमोहन सिंह, 25 फरवरी 2017 को नई दिल्ली में दिए गए भाषण से उद्धृत (दैनिक भास्कर–26 फरवरी 2017)।
6. वही।

शोध निर्देशक

डॉ0 संजय गौतम

शोध–छात्र

अमित कुमार

53

गिजुभाई बधेका का जीवनवृत्त एवं उनके कर्तृत्व पर एक विहंगावलोकन

डॉ0 गायत्री प्रसाद सिंह, सुभाष

सारांश

बाल जगत के पारखी शिक्षाशास्त्री गिजुभाई बधेका का जन्म चित्तल सौराष्ट्र (गुजरात) में 15 नवम्बर 1885 को हुआ था। गिजुभाई का वास्तविक नाम गिरजाशंकर भगवान जी बधेका था, लेकिन इस पूरे नाम की अपेक्षा लोग उन्हें गिजुभाई कहकर ही पुकारते थे। इनके पिता जी का नाम भगवान दास जी तथा माता जी का नाम काशीबा देवी था। इनके माता–पिता अत्यंत धार्मिक विचार के थे। गिजुभाई पर भी माता–पिता के धार्मिक विचारों का प्रभाव पड़ा। सम्पन्न व प्रतिष्ठित परिवार में जन्म लेने के कारण गिजुभाई की शिक्षा सही दिशा में हुई। गिजुभाई राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के सच्चे अनुयायी तथा समकालीन थे। गाँधी जी की ही तरह गिजुभाई में भी सभी को साथ लेकर चलने की पक्की निष्ठा थी। पाँच वर्ष की आयु में सरस्वती पूजन के साथ उन्हें पढ़ने के लिए बल्लभीपुर की प्राथमिक पाठशाला में भेजा गया किन्तु धूलभरी पाठशाला में वहाँ चारों तरफ मार–पीट, डाँट–डपट तथा भय का साम्राज्य था। अपने बचपन की यातनापूर्ण विद्यालयी शिक्षा का इनके मन–मस्तिष्क पर गहरा प्रभाव पड़ा। आगे चलकर उन्होंने कहा– ''घोडों के अस्तबल जैसी धूलभरी पाठशालाओं तथा भय दिखाने वाले इन–बाल कतल खानो की नीवों को बारूद से उड़ा दो, इन्हे नेस्तनाबूद कर दो।

इसके बाद मामा के पास जाकार भावनगर में गिजुभाई ने हाईस्कूल में प्रवेश लिया। 12 वर्ष की आयु में 1897 में गिजुभाई का प्रथम विवाह हरिबेन के साथ हुआ। तत्पश्चात् उन्होंने उच्च शिक्षा में प्रवेश लिया। इस समय इन्हें नौकरी भी करनी पड़ी। इसी बीच पत्नी के दिवं•त हो जाने के उपरान्त 1906 में जड़ीबेन के साथ •िजुभई का द्वितीय विवाह हुआ।

गिजुभाई मैट्रिक परीक्षा पास करके 1907 में पूर्वी अफ्रीका चले गये और 1909 में भारत वापस आकर बम्बई में एक सेठ के घर नौकरी शुरू की। 1910 में बम्बई में कानून की पढ़ाई प्रारम्भ की और 1913 में कानून की डिग्री प्राप्त करने के बाद वे बढ़वाण कैम्प में हाईकोर्ट प्लीडर बन गये।

गिजुभाई वकालत में भी खूब मन लगाकर और केस की बारीकियों का अध्ययन करके मुकदमें में बहस करते थे, झूठ फरेब से असन्तुष्ट थे जिसके कारण वकालत में उनका मन अधिक दिनों तक नहीं लग सका।

इसी बीच गिजुभाई 1915 में भावनगर में स्थित श्री दक्षिणा मूर्ति भवन के कानूनी सलाहाकार बने। 1916 में 31 वर्ष की अवस्था में गिजुभाई इस संस्था के आजीवन सदस्य बन गये और वकालत छोड़ दिया। इस संस्था द्वारा एक बाल भवन चलाया जाता था जिसका नाम था विनय भवन, इसी विनय भवन के आचार्य के रूप में गिजुभाई ने कार्य प्रारम्भ किया। दक्षिणामूर्ति विद्यार्थी भवन में विनय भवन के आचार्य के रूप में चार वर्ष तक कार्य करने के बाद गिजुभाई ने 1920 में दक्षिणामूर्ति भवन में 2.5 वर्ष से 6 वर्ष के बच्चों के लिए एक बाल मन्दिर का निर्माण किया तथा पूरी तरह बाल शिक्षा के प्रति समर्पित हो गये। इस क्षेत्र में उन्होंने अनेक नये–नये प्रयोग किए। 1922 में भावनगर में तख्तेश्वर महादेव मन्दिर के समीप टेकड़ी पर मन्दिर का नया भवन बनवाया गया जिसका उद्घाटन पूज्या कस्तूरबा गांधी के कर कमलों से सम्पन्न हुआ।

गिजुभाई शिक्षा के सन्दर्भ में मारिया माण्टेसरी के विचारों से प्रभावित हुए। बाद में माण्टेसरी संघ की स्थापना करते हुए 1925 में भावनगर में प्रथम माण्टेसरी सम्मेलन हुआ तथा 1928 में गिजुभाई की अध्यक्षता में अहमदाबाद में द्वितीय माण्टेसरी सम्मेलन हुआ।

गिजुभाई अगस्त 1920 से जून 1936 तक छोटे–छोटे बच्चों के साथ रहकर तन्मयता से उनकी सेवा करते रहे। उन्होंने बाल–मन्दिरों को एक मन्दिर माना और बालकों को उस मन्दिर का देवता। बच्चे को देवता मानो 'बालदेवो भव' उनका नारा था। स्वयं को उन बच्चों के मन्दिर के देवता का पुजारी बनाया और एक सच्चे भक्त की तरह बालकों की उपासना करते रहे, उनकी सेवा करते रहे, उन्हें अच्छा जीवन बिताने की कला सिखाते रहे। बालकों में उन्होंने अपने इष्टदेव के दर्शन किये। बच्चों के सुख में सुखी और दुःख में दुखी होते रहे।

बालदेवो भव के मन्=दृ'टा गिजुभाई ने बाल–मन्दिर को उल्लासमय बना दिया। वहां के वातावरण में रस घोल दिया। खेल खेलना, गाना गाना, काम करना, बजाना, गरबा नृत्य करना, रास रचाना, कविता पाठ करना, कहानी कहना, अभिनय करना, प्रहसन व नाटक की योजना बनाना, लिखना, पढ़ना, बगीचा सजाना, फूल–पौधे लगाना, क्यारी बनाना, धूमना, प्रकृति दर्शन करना आदि वहाँ के क्रियाकलाप थे और इन सबसे बालक सेवा, परोपकार, त्याग, सहयोग, समाज सेवा आदि का पाठ पढ़ते थे। इन सब कार्यों में गिजुभाई साथ–साथ रहते, बताते ,सिखाते और बच्चों को प्यार से कार्य में लगाते थे। उनके इस गुण के कारण बच्चे उन्हें 'मूँछों वाली माँ' के रूप में मानते थे, प्यार करते थे और आदर देते थे।

गिजुभाई शिक्षा के क्षेत्र में पदार्पण करने के बाद उनकी अदालत अब माता–पिता, परिवार विद्यालय बन गया और उन्होंने उन सुकुमारमति बालकों की वकालत करने का बीड़ा उठाया जो अपने परिवार में कुछ कह नहीं पाते थे और बहुत से बच्चों को अपने माता–पिता के अत्याचारों को सहन करना पड़ता था। बच्चों के दुःख का यहीं अन्त नहीं था उन्हें विद्यालय में पढ़ाई के नाम पर डाँट–फटकार तथा हिंसा का शिकार होना पड़ता था। इन सबके विरूद्ध माता–पिता व शिक्षकों की अदालत में उन्होंने बालकों के पक्ष में

वकालत की और बच्चों की शिक्षा पर गम्भीर चिन्तन किया, प्रचुर साहित्य का निर्माण किया और बालकों के जीवन को सुखमय बनाने का भरसक प्रयास किया।

1937 में गिजुभाई को राजकोट की जनता ने सम्मानित किया तथा गिजुभाई ने 1938 में राजकोट में अन्तिम अध्यापन मन्दिर की स्थापना की।

शिक्षा के क्षेत्र के इस कर्मठ कार्यकर्ता व नायक का 54 वर्ष की आयु में 23 जून, 1939 को निधन हो गया। बालकों के एक प्रबल समर्थक, साथी एवं उन्नायक के निधन से बालकों की शिक्षा की अपूरणीय क्षति हो गयी।

इक्कीसवीं सदी का आगाज हो चुका है। देश स्वतंत्रता की स्वर्ण जयन्ती मना चुका है– चतुर्दिक 'सबके लिए शिक्षा' 'जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम' और 'सम्पूर्ण साक्षरता अभियान' की चिल्ल– पों मची हुई है। शिक्षा में आमूल–चूल परिवर्तन के बड़े–बड़े दावे ठोंके जा रहे हैं। इस सारे हो–हल्लों के मध्य खड़े अध्यापक राष्ट्र की मुख्य धारा से कटते जा रहे हैं। प्राथमिक विद्यालय के स्तर से लेकर विश्वविद्यालय तक के अध्यापकों में निराशा व कुंठा के भाव व्याप्त हैं। शिक्षा का भविष्य अन्धकारमय प्रतीत हो रहा है, क्योंकि अध्यापक जैसे पवित्र कर्म पर निराशा और निरीहता की काली आँधी छाने लगी है। शिक्षा के क्षेत्र में परिस्थितियाँ अत्यन्त तेजी के साथ बिगड़ती जा रही हैं। ऐसी विकट परिस्थितियों में शिक्षण और छात्रों के प्रति उत्साह महसूस करने वाले अध्यापकों की संख्या बहुत कम है और ऐसे जो भी अध्यापक हैं वह नमन के पात्र हैं। यह सवाल दीगर है कि ये अध्यापक किन कारणों से अपने पेशे के प्रति प्रतिबद्धता और ईमानदारी कायम रख पाने में कामयाब रह सके हैं। महत्त्वपूर्ण बात यह है कि ऐसे अध्यापक भी परीक्षा के दबाव, पाठ्यक्रम की जड़ता और तबादले के भय से मुक्त रहकर नहीं जी सकते। अपने देश में शिक्षा का साहित्य प्रचुर मात्रा में उपलब्ध नहीं है। खेद का विषय यह है कि एक औसत अध्यापक यदि उत्साहित होना चाहे तो प्रेरणा व मार्गदर्शन प्राप्त करने को कहाँ जाए? अध्यापकीय दृष्टिकोण से विद्यालय का यथार्थ प्रस्तुत करने वाला शिक्षा साहित्य अपने देश में नहीं के बराबर है। ऐसे माहौल में ''गिजुभाई ग्रन्थ माला'' का हिन्दी में सुरूचिपूर्ण प्रकाशन एक साहसिक कार्य है।

गिजुभाई ने वर्तमान परिवेश को देखते हुए अत्यन्त सरल भाषा में शिक्षा के यथार्थ को प्रस्तुत किया है। वह अध्यापकों की विवशता व लाचारी से अच्छी तरह वाकिफ थे। पाठशाला की बंजर भूमि में बच्चों की यातना उनसे नहीं देखी गयी और यही विवशता उनके शैक्षिक प्रयासों एवं शैक्षणिक लेखन का स्रोत बनी।

बाल शिक्षा के लिए समर्पित गिजुभाई बच्चों के सच्चे हमदर्द तथा मसीहा थे। उन्होंने शिक्षा सम्बन्धी जो भी प्रयोग किया उसे लिपिबद्ध भी किये। इस तरह गिजुभाई ने शिक्षा सम्बन्धी विपुल साहित्य की रचना की। वे प्रयोग वीर शिक्षक होने के साथ–साथ बाल साहित्य के प्रणेता भी थे। उन्होंने गुजराती भाषा में 200 से अधिक बाल साहित्य लिखकर सारे गुजरात के बच्चों को स्वाध्याय के लिए प्रेरित किया तथा गुजराती में लगभग ढाई–तीन हजार पृष्ठों का बाल साहित्य की रचना की। गिजुभाई की अमृत वर्षा करने वाली लेखनी से लिखी गयी छोटी–बड़ी गुजराती पुस्तकें कम ही समय में बहुत लोकप्रिय हुईं और माता–पिता, शिक्षक–शिक्षिकाओं सभी के लिए वरदान सिद्ध हुईं। शिक्षकों को बाल–शिक्षण के नूतन सिद्धान्तों एवं विधियों का प्रशिक्षण देने के लिए उन्होंने अध्यापन मन्दिर स्थापित किया और शिक्षकों, अभिभावकों तथा बच्चों के लिए अलग–अलग पुस्तकें लिखीं।

'दिवास्वप्न' बालशिक्षा के मुक्त और मौलिक स्वरूप का चित्रण करने वाली एक अनूठी कृति है। 12 मार्च, 1931 को 'दिवास्वप्न' की प्रथम कृति प्रकाशित की गयी, जिसका हिन्दी अनुवाद 1934 में स्व0 काशीनाथ त्रिवेदी ने प्रकाशित किया। जिसकी पाँचवी आवृत्ति 1962 में भावनगर से प्रकाशित की गई। उसके बाद यह अद्वितीय पुस्तक विस्मृति के अँधेरे में खो गयी और उसका पुनरुद्धार हुआ गिजुभाई के जन्म शताब्दी के वर्ष 1985 में, जब 'पलाश' नामक मध्य प्रदेश की एक शैक्षिक पत्रिका ने गिजुभाई पर एक विशेषांक निकालकर सम्पूर्ण 'दिवास्वप्न' एक ही अंक में प्रकाशित किया।

प्राथमिक शिक्षा का एक व्यापक नवाचार मध्य प्रदेश में 1992 में 'शिक्षक समाख्या परियोजना' के नाम से यूनीसेफ एवं मध्य प्रदेश शासन के संयुक्त निर्णय से चलाया गया और प्रयोगों के आधार पर शिक्षकों को क्षमतावान या उनका सुदृढ़ीकरण करने का पहला प्रयास मध्य प्रदेश में प्रशिक्षणों की प्रचलित पद्धति से हटकर किया गया जो 1997–98 तक चला। जिसका प्रभाव मध्य प्रदेश की प्राथमिकशाला में आज भी विद्यमान है। गिजुभाई पहले ऐसे व्यक्ति थे, जिन्होंने ढाई–तीन साल से लेकर छः साल के बच्चों की शिक्षा का पहला बाल–मन्दिर की रचना की और वहाँ स्वयं आचार्य का काम किया। उसी से प्रेरित होकर उन्होंने प्राथमिकशाला में नवाचार की यह परिकल्पना की, जो 'दिवास्वप्न' में मास्टर लक्ष्मीशंकर के माध्यम से सार्थक हुई।

'शिक्षकों से' और 'ऐसे ही शिक्षक' इन दोनों पुस्तकों में शिक्षक क्या है, कैसा है, क्या करें और आदर्श शिक्षक में कौन–कौन से गुण होने चाहिए तथा बालकों के प्रति उसके क्या दायित्त्व हैं आदि से सम्बन्धित प्रश्नों को गिजु भाई ने रखा और स्वयं उत्तर देने की कोशिश की है। गिजुभाई शिक्षकों को समाज से अलग नहीं देखते थे इसलिए उन्होंने बालकों, शिक्षकों, शिक्षकों की समस्याओं के साथ माता–पिता की समस्याओं तथा उनके समाधान पर भी अपने विचारों को प्रस्तुत किया है और शिक्षा को विराट परिप्रेक्ष्य में देखने की कोशिश किया है।

गिजुभाई का जीवन एक प्रकार से शिक्षामय जीवन था। उन्होंने बालकों की शिक्षा के लिए अपने आपको इस प्रकार समर्पित कर दिया कि बच्चे–बच्चियाँ उनके लिए बाल देवता समान हो गये और यही बाल–मन्दिर में रहकर उन्होंने 'बाल देवो भव' के मंत्र का उद्घोष किया। बच्चों की सामर्थ्य क्षमता एवं प्रयोगशीलता में दृढ़ विश्वास के कारण वह कहते थे– ''बालकों ने मुझे प्रेम देकर नया किया, नयी जिन्दगी दी। उन्हें सिखाने में सच पूछें तो मैंने ही सीखा। उनका

अवलोकन करते–करते मुझे ही आत्मावलोकन का अवसर मिला। उन्हें नीचे से ऊपर ले जाते हुए साथ–साथ मैं भी ऊपर चढ़ता गया। उनका गुरु होने के बावजूद मैंने उनका गुरुत्व देख लिया।''

निष्कर्षः

गिजुभाई पूरे दिल से बच्चों के व्यक्तित्व का सम्मान करते थे तथा बाल जीवन की समस्याओं को अत्यन्त गहरायी से देखते, परखते, समझते और उनका समाधान करते थे इसी कारण बच्चे प्रेम और आत्मीयता के कारण उन्हें 'मूँछों वाली माँ' कहते थे। गुजराती में मूँछाली बा।

संदर्भः

1. पाण्डेय, राम सकल रू ममता चतुर्वेदी रू "उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक" अग्रवाल पब्लिकेशन्स आगरा, सातवा संशोधित संस्करण–2013–14
2. शमारू ऊषा, गिजुभाई का शिक्षा दर्शन, परिप्रेक्ष्य न्यूपा वर्ष 2005, अंक 2 अगस्त।
3. पाठक, पी0डी0रू ''शिक्षा में प्रयोग एवं चिन्तन'' श्री विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा–2 द्वितीय संशोधित संस्करण–2015,
4. डॉ0 राम शकल पाण्डेय– ममता चतुर्वेदीरू उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, पृ0 274, अग्रवाल पबिलकेशन्स आगरा, सातवां संशोधित संस्करण–2013–14,
5. गिजुभाई, (अनुवाद रामनरेश सोनी) ''माटेसरी पद्धति सर्जना शिवबाड़ी रोड–वीकानेर–334003 पुनर्मुद्रण–2019

शोध–निर्देशक

डॉ0 गायत्री प्रसाद सिंह

पूर्व ऐसो0 प्रोफेसर–शिक्षाशास्त्र विभाग

बयालसी पी0जी0 कॉलेज, जलालपुर, जौनपुर।

शोध–छात्र

सुभाश

(शिक्षाशास्त्र)

बयालसी पी0जी0 कॉलेज, जलालपुर,

जौनपुर।

पर्यावरण संरक्षण हेतु भारत में उठाये गये कदम

डॉ0 पूजा

सारांश

भारतीय सभ्यता और संस्कृति विश्व की प्राचीनतम संस्कृति और सभ्यताओं में से है। भारतीय संस्कृति में आरम्भ से ही प्रकृति के सभी कारकों–गृह, नक्षत्र, पृथ्वी, वायु, जल, अग्नि, भूमि और वनस्पति की पूजा–अर्चना की जाती रही है। पेड़–पौधे समुद्र नदियों, पशु–पक्षियों एवं अन्य प्राकृतिक उपादानों को भारतीय परिवश में ईश्वर का रूप माना गया है। वर्तमान समय में भारत में पर्यावरण संरक्षण के लिए अनेक कानून और नियम बनाये है। जिनका हमें पर्यावरण की सुरक्षा के लिए सख्ती के साथ पालन करना होगा।

शोध पत्र– भौतिक एवं सास्कृतिक दशाओं का सम्पूर्ण योग जो मानव के चारों ओर व्याप्त होता है। उसे प्रभावित करता है, "पर्यावरण" कहलाता है। पर्यावरण शब्द 'परि' तथा 'आवरण' दो शब्दों से मिलकर बना है। मैकाइवर ने पर्यावरण को इस प्रकार परिभाषित किया है– "पृथ्वी का धरातल और उसकी सारी प्राकृतिक दशायें, प्राकृतिक संसाधन, भूमि, जल, पर्वत मैदान, खनिज पदार्थ, पौधे, पशु, सम्पूर्ण प्राकृतिक शक्तियाँ जो पृथ्वी पर विद्यमान होकर मानव जीवन को प्रभावित करती हैं पर्यावरण के अन्तर्गत आती है।"

पर्यावरण के अन्तर्गत वायुमण्डल नदियाँ, झीलें, जलप्रताप, समुद्र, वन, पौधें, रेगिस्तान, पर्वत व मैदान इत्यादि समाहित है। जिनको निर्वाह के लिए अनेक रूपों (प्राण वायु तक) में आवश्यकता परिलक्षित होती है।

आदिकाल से ही मानव एवं प्रकृति का अटूट सम्बन्ध रहा है। सभ्यता के विकाश में प्रकृत्ति ने महत्व पूर्ण भूमिका निभाई है। विकाश के आरम्भिक चरण में कोई भी जीवधारी या मनुष्य सर्वप्रथम प्रकृति के साथ अनुकूल होने का प्रयास करता है, इसके पश्चात धीरे–2 प्रकृति में परिवर्तन करने का प्रयास करता है। परन्तु अपने विकास क्रम में मानव की बढती भौतिक वादी महत्वाकांक्षाओ ने पर्यावरण में इतना अधिक परिवर्तन ला दिया है कि मानव और प्रकृति के बीच का संतुलन जो पृथ्वी पर जीवन का आधार है, धराशायी होने के कगार पर पहुँच गया है। साथ ही मानव की अदूरदर्शी विकास प्रक्रियाओं ने विनाशात्मक रूप धारण कर लिया है। 970 के दशक में ही यह अनुभव किया गया कि वर्तमान विकाश की प्रवृत्ति असुंलित है एवं पर्यावरण की प्रतिक्रिया उसे विनाशकारी विकाश में परिवर्तित कर सकती है।

संयुक्त राष्ट्र संघ ने मई 1969 की रिपोर्ट में पर्यावरण असंतुलन पर गंभीर चिंता व्यक्त की कि मानव जाति के इतिहास में पहली बार पर्यावरण असंतुलन का विश्व व्यापी संकट खडा हो रहा है। पर्यावरण नीति में भी इस तथ्य को स्वीकार किया गया है कि गलत उत्पादन एंव उपभोग ही पर्यावरण असन्तुलन के मुख्य कारण है।

विश्व व्यापी पर्यावरण की समस्या को देखते हुए गाँधी जी ने अपनी पुस्तक "द हिंद स्वराज" में कहा है कि लगातार हो रही खोजों के कारण पैदा हो रहे उत्पादों और सेवाएं मानवता के लिए खतरा है। उन्होंने वर्तमान सभ्यात को अंतहीन इच्छाओं और शैतानिक सोच से प्रेरित बताया।

सुप्रसिद्ध लेखक बीरन्द्र कुमार बरनवाल का यह कथन गौरतलब है "गाँधी ने अपनी आधी सदी से अधिक चिंतन के दौरान यह सिद्ध करने का अनवरत प्रयास किया कि लगातार धरती के पर्यावरण के विनाश की कीमत चुकाकर अन्धाधुन्ध औधोगीकरण आर्थिक दृष्टि से भी निरापद नही है।"

21 वी शताब्दी में विश्व भर में "पर्यावरणीय चेतना" के प्रति जागरूकता बढी। यद्यपि भारतीय सभ्यता में आरम्भ से ही पर्यावरण को सुरक्षित रखने की जागरूकता थी। वैदिक काल तथा वैदिक काल के बाद का इतिहास इस तथ्य का साक्षी है। "स्वयं वेदों में जल, पृथ्वी, वायु, अग्नि, वनस्पति, अंतरिक्ष के प्रति असीम श्रद्धा व्यक्त की गई है इनमे देवत्व का अंश विद्यमान होने की बात कही गयी है। हमने अनेका अनेक परम्पराओं का निर्माण कर वनस्पतियों एंव पेड–पोधो को संरक्षण भी प्रदान किया है। जैसे ऑवले के वृक्ष का नवमी तिथि पर पूजन व फल का भोजन में प्रयोग किसी विशिष्ट दिन पर तुलसी अथवा नीम, विवाह और गृह शान्ति में पीपल, केला एंव शमी के वृक्षों की पूजा आदि धर्म शास्त्रों मे वर्णित है"

ऋग्वेद में कहा गया है" हमारी देवी नदियाँ हमारी रक्षा के लिए दयामय बनी रहें। वे हमें पीने के लिए जल प्रदान करती है और हम पर आनन्द और खुशियाँ बरसाती रहें। हमारी बहुमुल्य निधियों और मानव की भी विद्याता है नदियों! हम तुम्हारे अरोग्यकर जल के आकांक्षी है।

भारत में पर्यावरण संरक्षण के लिए उठाये गये कदमः

भारत के संविधान में उल्लिखित है कि यह राज्य का कर्तव्य है कि वह पर्यावरण के संरक्षण एंव रख–रखाव के लिए तथा देश के वनों एवं वन्य जीवन की सुरक्षा के लिए कार्य करे। पर्यावरण की चर्चा राज्य के नीति निर्देशक तत्वों एवं मौलिक अधिकरों के अन्तर्गत भी की गयी है। भारत में सर्वप्रथम 1948 में सरकार का ध्यान पर्यावरण संरक्षण पर गया, व फैक्ट्री अधिनियम अस्तित्व में आया। यह सबसे पहला कानून था जिसमें श्रमिकों की पर्यावरणीय परिस्थितियों पर ध्यान दिया गया। भारत में पर्यावरण वाद तथा कानूनों के संहिताकरण का एक लम्बा इतिहास रहा है। इसमें भारतीय दंड संहता (IPC) दण्ड प्रक्रिया संहिता (CrPC), 1905 का बंगाल स्मोक न्यूसेंस एक्ट, भारतीय परिवहन अधिनियम, भारतीय वन अधिनियम अघोग अधिनियम, वन संरक्षण अधिनियम द मार्केट शिपिंग एक्ट प्रमुख है।

भारत में 1980 में पर्यावरण विभाग की स्थापना की गई जो

राष्ट्र को स्वस्थ पर्यावरण की सुनिश्चिता प्रदान करता है। यही पर्यावरण विभाग 1980 से "पर्यावरण तथा वन विभाग'' के नाम से जाना जाता है। 1985 भोपाल गैस काण्ड के तुरन्त बाद 1986 में" पर्यावरण संरक्षण अधिनियम बनाया गया। भारत सरकार द्वारा बनाये गये कुछ अधिनियम निम्न है– जल अधिनियम (प्रदूषण पर नियंत्रण एवं रोकथाम) 1974 इस अधिनियम द्वारा जल प्रदूषण में कमी लाने एवं इसके संरक्षण के लिए संस्थागत ढाँचा, तैयार किया गया। इसी अधिनियम क तहत प्रदूषण नियन्त्रण बोर्ड का गठन किया गया।

जल उपकर अधिनियम 1977ः यह अधिनियम स्थानीय प्राधिकरणों एवं उद्योगों द्वारा प्रयोग किया जाने वाले जल पर शुल्क अथवा कर की उगाही का प्रबंधन करता हे। भारत में नदी जल संरक्षण के लिए राज्य सरकारों को वित्तीय सहायत देकर केन्द्र सरकार ने एक राष्ट्रीय नदी संरक्षण योजना बनाई है जिसका उदेश्य प्रदूषण रोक–थाम योजनाओं को लागू कर देश में स्वच्छ पानी के प्रमुख स्त्रोतो के पानी की गुणवत्ता में सुधार लाना है।

वायु अधिनियम 1981– यह वायु प्रदूषण के नियंत्रण के लिए बनाया गया। यह अधिनियम 'केन्द्रीय बोर्ड' को उस सम्बन्ध में क्रियान्वयन की शक्तियाँ प्रदान करना है।

परमाणु ऊर्जा अधिनियम 1982– यह अधिनियम रेडियो धर्मी अपशिष्ट से संबन्ध रखता है। सन् 1985 में भारत सरकार ने केन्द्रीय गंगा प्राधिकरण की स्थापना की जिसका उदेश्य न केवल गंगा में गिरने वाली 87 करोड 30 लाख लीटर गंदगी रोकना था, बल्कि उसे ऊर्जा के उत्पपान में प्रयुक्त करने के लिए बुनियादी ढांचे का विकास करना भी था।

पर्यावरण संरक्षण अधिनियम 1986–यह केन्द्रिय सरकार की पर्यावरण की गुणवत्ता में सभी स्रोत्रों से होने वाले प्रदूषण के नियंत्रण के संबंध में शक्तियाँ प्रदान करता है।

हानिकारक अपंशिष्ट प्रबंधन अधिनियम 1989– इसका उदेश्य हानिकारक अपशिष्टों के प्रबंधन को नियंत्रित करना है।

जल दायित्व बीमा अधिनियम 1994– यह अधिनियम हानिकारक पदार्थों के रख–रखाव के दौरान हुई दुर्घटना से प्रभावित लोगो को तत्काल राहत के उदेश्य से बनाया गया हे।

सन् 1991 में इको मार्क योजना बन एवं योजना वन एवं पर्यावरण मंत्रालय द्वारा आरम्भ की गई, जिसका उदेश्य उन पर्यावरण अनुकूल उपभोक्ता उत्पादों को लेवल करना है जो भारतीय मानव केन्द्र की गुणवत्ता आवश्यकताओं के अतिरिक्त कुछ पर्यावरण परिणामों का भी अनुकरण करते हैं ।

सन् 1993 में भारत सरकार द्वारा एक यमुना नदी की स्वच्छता कायम रखने तथा उसे स्नान श्रेणी के स्तर तक लाने के लिए यमुना कार्य योजना बनायी गयी।

राष्ट्रीय पर्यावरणीय न्यायाधिकरण अधिनियम 1995– यह अधिनियम किसी हानिकारक पदार्थों द्वारा व्यक्ति संपत्ति तथा पर्यावरण को पहुँची क्षति के लिए मुआवजा व सहायता देने के उदेश्य से बनाया गया है।

राष्ट्रीय पर्यावरण अपील– प्राधिकरण अधिनियम 1997– यह उन क्षेत्रों के सम्बन्ध में अपील की सुनवाई करता है जहाँ पर्यावरण संरक्षण अधिनियम के तहत अद्योगों के निर्माण प्रतिबंध लगाया गया है या जिन्हें कुछ हिदायतें दी गई हैं पर्यावरण की सुरक्षा कर देश की आबोहवा को साफ–सुथरा एवं स्वच्छ बनाने हेतु राष्ट्रव्यापी हरित भारत अधिनियम की शुरूआत 15 अगस्त 2007 से की गई है।

भारत में विभिन्न पंच वर्षीय योजनाओं के तहत पर्यावरण संरक्षण के उपाय किये जाते रहे हैं। भारत में बन एवं पर्यावरण संरक्षण के लिए समय–समय पर अनेक आन्दोलन भी चलाये गये जिनमें से कुछ प्रमुख आन्दोलन हैः

चिपको आन्दोलन– प्राण जाये पर वचन न जाये की भावना पर आधारित यह आन्दोलन चमोली स्थान से सन् 1973 में प्रारम्भ हुआ।

अप्पिको आन्दोलन – यह आन्दोलन अगस्त, 1983 में कर्नाटक के उत्तर कन्नड क्षेत्र में शुरू हुआ था, यह आन्दोलन वनों की सुरक्षा के कर्नाटक में पाडूरंग के नेतृत्व मे शुरू हुआ था।

साइलेंट घाटी आन्दोलन – यह आन्दोलन केरल की शांत घाटी में हुआ था ।

जंगल बचाओं आन्दोलन – इस आन्दोलन की शुरूआत बिहार से हुई थी, बाद में यह आन्दोलन झारखंड और उडीसा तक फैल गया कई पर्यावरण विद इस आन्दोलन को राजनैतिक लालच का खेल और लोकलुभावनवाद कहते है ।

नर्मदा बचाओ आन्दोलन – यह आन्दोलन भारत में चल रहे पर्यावरण आन्दोलनों की परिपक्ता का उदाहरण है।

टिहरी बांध विरोधी आन्दोलन – टहरी बाँध विरोधी आन्दोलन उत्तराखंड के प्रमुख आन्दोलनों में से एक है।

नवधान्या आन्दोलनः– नवधान्या का अर्थ है'' नौ बीज यह आन्दोलन महिला केन्द्रित आन्दोलन है जो कि जैविक एवं सांस्कृतिक विविधता के संरक्षण का कार्य कर रहा है। यह आन्दोलन पर्यावरणविद वन्दना शिवा के नेतृत्व में सन् 1987 से चलाया जा रहा है।

भारत में निजी स्तर भी अनेक संगठनों का समूहों ने पर्यावरण संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है, साथ ही छळवे संगठनो ने भी इसमें अपना अमूल्य योगदान दिया है।

भारत संसार के उन थोडे से देशों में से एक जिनके संविधानों में पर्यावरण का विशेष उल्लेख है। भारत ने पर्यावरणीय कानूनों का व्यापक निर्माण किया है तथा हमारी नीतियाँ पर्यावरण संरक्षण में भारत की पहल दर्शाती है। पर्यावरण संबंधी सभी विधेयक होने पर भी भारत मे पर्यावरण की स्थिती काफी गंभीर बनी हुई है। नालें, नदियाँ, झीलें औद्योगिक कचरे से भरी हुई है। वन क्षेत्रों में कटाव लगातार बढ़ता जा रहा है।

निष्कर्षः आज आवश्यकता है सब लोगों को एक जुट होकर पर्यावरण

संरक्षण हेतु सरकार द्वारा चलाये जा रहे कार्यक्रमों योजनाओं में अपना अधिक से अधिक योगदान देने की साथ ही प्रत्येक व्यक्ति को दृढ संकल्प के साथ प्रतिक्षा लेनी होगी कि वह स्वयं पर्यावरण संरक्षण में निजी स्तर पर प्रयास करेगा तथा हर समय अपना प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष सहयोग देगा, तभी हम एक प्रदूषण रहित पर्यावरण की कामना कर सकते है ।

सन्दर्भ–ग्रंथ

1. महात्मा गॉधी की विचारधारा आज भी प्रसांगिक – राकेश शर्मा निशीथ
2. जन सत्ता नई दिल्ली 2 नवंबर 2015
3. वेदों में पर्यावरण सन्तुलन की वर्तमान प्रासंगिकता – प्रेमलता पन्त
4. ऋग्वेद 6, 50, 7 –दयानन्द भाष्य
5. पर्यावरण संस्कृति, प्रदूषण एवं संरक्षण – मिश्र, नित्यानन्द एवं पांडे, शिवचरण
6. भारतीय संस्कृति में पर्यावरण चिंतन – रीता तिवारी

डॉ0 पूजा
सहायक आचर्या
हिन्दी विभाग
जैन कन्या पाठशाला (पी0जी0) कॉलेज
मु0नगर (उ0प्र0)
ईमेल–poojabislahindi@gmail.com

विदापत नाच में लोक जीवन

रागनी कुमारी

सारांश

प्रस्तुत शोध आलेख के माध्यम से रेणु के रिपोर्ताज विदापत नाच में लोक–जीवन का चित्रण किया गया है। रेणु ने उत्तरी बिहार के पिछड़े समाज के लोगों की स्थिति का वर्णन इस लोक नृत्य के माध्यम से किया है। रेणु की कहन शैली ने इस विधा को कहानी जितना रोचक बना दिया है।

मुख्य भाग / विषयवस्तु

फणीश्वरनाथ रेणु हिन्दी साहित्य में अपना एक विशिष्ट स्थान रखते हैं। यह विशिष्टता उनकी रचनाओं में विद्यमान आंचलिकता है। स्थान विशेष के भौगोलिक और सांस्कृतिक वर्णन उनकी रचनाओं को 'आंचलिकता' प्रदान करते हैं। रेणु उपन्यासकार, कहानीकार, संस्मरणकार के रूप में तो प्रतिष्ठित है ही, उनका महत्त्व एक सशक्त रिपोर्ताज लेखक के रूप में भी है।

रिपोर्ताज गद्य की अत्याधुनिक विधा है। इसका विकास द्वितीय विश्वयुद्ध के समय पाश्चात्य प्रभाव से हुआ। 'रिपोर्ताज' फ्रांसीसी भाषा का शब्द है। इसका अंग्रेजी पर्याय 'रिपोर्ट' माना जाता है। रिपोर्ताज का अभिप्राय किसी घटना, खबर का आँखों देखा हाल का यथा तथ्य वर्णन है जिसमें सम्पूर्ण विवरण दृश्यमान हो जाता है। जबकि वास्तविक घटना का यथातथ्य चित्र उपस्थित करना रिपोर्ट कहलाता है।

रिपोर्ताज में लेखक किसी घटना की साहित्यिक शैली में कलात्मकता के साथ इस प्रकार प्रभावशाली विवरण प्रस्तुत करता है कि घटना अपनी पूरी जीवन्तता के साथ पाठक के समक्ष प्रस्तुत हो जाती है।

रेणु हिन्दी के श्रेष्ठ रिपोर्ताज लेखक हैं। उन्होंने इस विधा की न सिर्फ शुरुआत की बल्कि इसे सफलता के शिखर तक पहुँचाया। रेणु ने सबसे अधिक बाढ़ पर रिपोर्ताज लिखें। पूर्णिया, सहरसा, जैसी उत्तरी बिहार में कई जिले हैं जहाँ नेपाल के हिमालयी क्षेत्रों से आने वाली नदियों द्वारा बार–बार जल प्लावन होता रहता है, और यह ऐसा विषय था जिस पर आँखों देखा हाल रेणु घंटो सुनाते रह सकते थे।

'विदापत नाच' रेणु का पहला रिपोर्ताज था। जो 1945 में 'विश्वामित्र' पत्रिका में प्रकाशित हुआ था। रेणु ने इस रिपोर्ताज के माध्यम से उत्तरी बिहार के जन–जीवन का चित्रण किया है। 'विदापत नाच' हो या कोई भी लोक नृत्य हो, उसमें उस अंचल विशेष के जन–जीवन की पूरी–की–पूरी तस्वीर देखी जा सकती है, तथा वहाँ के जन–जीवन की प्रत्येक भाव–भंगिमा, कार्य व स्थिति आदि का सूक्ष्मतम रेखांकन भी देखने को मिलता है। जन–जीवन में व्याप्त सुन्दरता–असुन्दरता, शिक्षा–अशिक्षा, स्वस्थता–अस्वस्थता, व्यवसाय तथा व्यसन का उसमें समावेश रहता है। अगर बात रेणु के साहित्य की करें, तो उसमें 'बिहार' के अंचल विशेष के जन–मानस में प्रचलित एवं प्रतिष्ठित परम्परागत, मान्यताएँ, रूढ़ियों, रीति – रिवाज, तीज – त्यौहार, धार्मिक – अधार्मिक, विश्वास– अविश्वास – अंधविश्वास, आडम्बर, टोने – टोटके, शकुन – अपशकुन, भूत – प्रेत आदि की धारणाएँ तथा मानवीय मन के विविध विकारों का स्वार्थ, ईर्ष्या, द्वेष, घृषा, उपेक्षा विशेष रूप से निम्न–जाति के जन–मानस की गहन पीड़ा, दर्द, हर्ष, उत्साह, स्नेह, प्रेम, आह्लाद व उन्माद आदि की समग्र स्थितियों एवं छवियों के लिए वहाँ के अर्द्धनग्न, दलित, उपेक्षित जन–जीवन की मैली–कुचैली जिन्दगी की सारी हालत का चित्रण देखने को मिलता है। उनकी रचनाएँ जन–मानस की सच्ची तस्वीर है, और मानवीय पीड़ा का विषद, गहन व यथार्थ चित्रण। यह चित्रण पात्रों के माध्यम से सहज ही उजागर हो पाया है। रेणु का रिपोर्ताज 'विदापत नाच' भी इसका एक सशक्त उदाहरण है।

लेखक के कथनानुसार 'विदापत नाच' की उत्पत्ति दरभंगा में हुई ऐसा अनुमान किया जाता है।''[1] लोगों का ये भी मानना है कि मध्ययुगीन मिथिला के किर्तनियाँ नाटक और असम के अंकिया नाच दोनों का मिला–जुला रूप है 'विदापत नाच'। मंच और अभिनय की परम्परा में असमिया अंकिया नाट का अधिक प्रभाव है। बिहार के लोकनाट्यों पर असम और कलकत्ते की सांस्कृतिक छाप को देखा जा सकता हैं। इसका कारण है इन क्षेत्रों में रोजगार के पर्याप्त साधनों का अभाव। मजदूर पूर्व के क्षेत्रों की ओर आजीविका की तलाश में जाते थे। वहाँ से जब ये वापस अपने घरों को लौटकर आते होंगे, तो इन्होंने धीरे–धीरे वहाँ की संस्कृति को आत्मसात कर लिया होगा, और 'विदापत नाच' के रूप में अपना एक नाट्य रूप अपनी जमीन पर तैयार किया होगा। ऐसा हम मान सकते हैं।

'विदापत नाच' एक लोक नृत्य है इस नृत्य की प्रस्तुति के लिए बहुत ज्यादा साजों–सामान की आवश्यकता नहीं होती है। नृत्य में कुछ गिने–चुने लोगों की ही आवश्यकता होती है। रेणु के अनुसार इस नृत्य का एक पात्र विकटा महत्त्वपूर्ण किरदार है। उसका साथ देने के लिए कुछ सहायक गवैये और दो–चार सहायक नर्तक। वाद्य–यंत्रों में मृदंग और कुछ मंजीरा (झाल) इन कुछ जरूरी और सीमित संसाधनों द्वारा इसकी प्रस्तुति की जाती है। ग्रामीण क्षेत्रों में अभावग्रस्त जीवन जीते–जीते लोग कम–से–कम संसाधनों के साथ भी जीवन के इन छोटे–छोटे पलों को जिन्दादिली के साथ जीने में अभ्यस्त हो जाते हैं। इन सीधे–सादे और मेहनतकश लोगों से दुनिया को बहुत कुछ सीखने की आवश्यकता है।

इस नृत्य में कलाकारों के चुनाव के लिए कोई खास प्रक्रिया नहीं होती। ''विदूषक के चरित्र को निभाने वाला कलाकार चेहरे पर कालिख पोतकर घुटने तक की तंग पतलून और हाथ में थुथनिदार छड़ी लेकर विकटा बन सकता है। विकटा के किरदार में अंग–भंग व्यक्ति को सर्वश्रेष्ठ कलाकार माना जाता है। विकटा का साथ देने वाले नर्तकों में उम्रदराज नर्तक को महत्त्व दिया जाता है।''[2] जीवन के विद्यालय में वक्त और परिस्थितियों की चोट इन्हें तराशने का काम

करती हैं, इन्हीं परिस्थितियों का अनुभव इन्हें इनके किरदार को निभाने में पारंगत बनाती हैं। इन्हें किसी श्रेष्ठ संस्थान से नृत्य विधा में पारंगत होने की आवश्यकता नहीं।

'विदापत नाच' की रचना 1945 में हुई थी। इस समय देश गुलामी की जंजीरों में जकड़ा हुआ था। लोग आजादी के लिए संघर्ष कर रहे थे। अंग्रेजों के अत्याचार चरम पर थे। इस समय समाज के लोग किसी जाति धर्म विशेष के लिए नहीं बल्कि एकजुट होकर अपने देश को स्वतंत्र कराने के लिए अपने प्राणों की आहुति देने को भी तैयार थे। इसके बावजूद इस देश का एक वृहद अछूत अन्त्यज समझा जाने वाला अस्मितावादी वर्ग देशी सामंतो, जागीरदारों और भूस्वामियों का गुलाम था। उनके द्वारा लगातार इनका शोषण किया जा रहा था। इन पर अत्याचार किए जा रहे थे। सरकार खेतों पर लगान वसूलती थी। सरकार जितनी मालगुजारी माँगती थी। उससे कहीं अधिक करीब–करीब दुगुना रकम जमींदारों और तालुकेदार लगान के रूप में किसानों से वसूलते थे। गरीबी, प्लेग, भुखमरी और अकाल के बावजूद किसानों से लगान वसूला जाता था। 'विदापत नाच' में जब नर्तक राधा का किरदार निभाते हुए मान–अभिमान का भाव जताकर कहता है– ''माधव तजि के चललौ विदेश।''[3] उस समय कृष्ण का अभिनय कर रहे विकटा के समक्ष वास्तविक जीवन की विषमता मूर्त होकर नाच उठती है और वह कहता है–

''नहीं बरसत अदरा (आर्द्रानक्षत्र) नहीं अशेराज
चारों दिशा देखैछि बुढ़ियाक केश
माछ काहू सब गेल पताल
अब कि पड़त सखि महा अकाल
दिन भर खटि के एक सेर धान
एकरा से कैसे बचत परान
छोड़ू–छोड़ू सजनि जाइहि बिदेश... आदि।''[4]

आर्द्रा नक्षत्र के शुरु होते ही बारिश की बूंदो से जलती और तपती धरती को ठंडक मिलती है जो धरती पर जीवन के लिए, कृषकों के लिए कृषि में सहयोगी होती है। यही वो समय है जब धान की बुवाई और रोपाई का समय होता है। इन पंक्तियों में विकटा अपनी चिन्ता जाहिर करते हुए कहता है कि आर्द्रा नक्षत्र में भी बरसात नहीं हुई। इस साल महाअकाल पड़ने की सम्भावना है। बिकटा के माध्यम से उत्तरी बिहार के किसानों की समस्याओं को रेखांकित किया गया है। इन किसानों को मौसम की दोहरी मार झेलनी पड़ती है। बारिश हुई तो बाढ़ की विभिषिका और अगर ना हुई तो सुखे से त्रस्त इन किसानों को खाने तक के लाले पड़ जाते हैं। लोग दाने–दाने को तरसेंगे। सुखा पड़ने से खेतों में काँटेदार पौधे उग आते हैं। हालात ऐसे हो जाते हैं कि मनुष्य तो मनुष्य जानवरों को भी खाने के लिए घास–फूस नहीं। ऐसी परिस्थितियों में इन्हें लगातार खटते रहने पर भी, इनके हिस्से इतना अनाज भी नहीं आ पाता, जिससे की ये अपने परिवार का पेट भर सके। आजीविका की इस समस्या से निपटने के लिए विदेश जाकर धर कमाने के सिवा इनके पास दूसरा कोई उपाय नहीं है।

इन क्षेत्रों में व्यवसाय का मुख्य स्त्रोत खेती ही है। ये खेती बड़े किसानों के कब्जे में है। पिछड़े समाज के लोग तो भूमिहीन मजदूर के रूप में इन जमींदारों के यहाँ मजदूरी करते हैं, या काश्तकार के रूप में खेती भी करते हैं तोखेती अच्छी ना होने से इनका गुजारा तक नहीं हो पाता है, लगान देना पड़ता है सो अलग। अगर लगान देने में देर हो जाए तो इनको मारना, पीटना, गाली–गलौच देना जमींदारों के लिए आम बात थी, साथ ही इनसे इनका खेत भी छिन लिया जाता। जमीन्दारों और उनके कारिन्दों के अत्याचारों के बारे में बताते हुए बिकटा अपना दुख सुनाता है–

''हे नैक जी
हूँ।
अब हमरों सूनूँ
बाप रे।
बाप रे कौन दुर्गति नहीं भेल
सात साल हम सूद चुकाओल
तबहू, उदिनं नहीं भेलो।
कोल्हुक बरद सन खटलौ रात–दिन
करज बाढ़त हि गेल
थारी बेंच पटवारी देलियेन्ह
फटक नाथ गिरधारी।''[5]

वंचित समाज से आने वाले लोगों के पास रहने के लिए घर तक नहीं होता। घास–फूस के घरों में रहते हैं। सुख–सुविधाओं के नाम पर टुटी–फूटी झोपड़ी और कुछ बर्तन। फसल इतनी मात्रा में होती नहीं या मजदूरी भी इतनी ही मिलती है कि किसी तरह दो जून की रोटी नसीब हो जाये, वहीं बहुत है। इस तरह अनाज रखने के लिए भण्डारघर की आवश्यकता ही नहीं पड़ती। साधारणतया इनका रहन–सहन दयनीय ही होता है। घर में कोई आवश्यकता आ पड़ने पर ये मजदूर किसान महाजनों से कर्ज लेकर अपनी जरूरतें पूरी करते हैं। कर्ज दिन–दूनी रात–चौगुनी बढ़त करते जाता है। ये मजदूर गरीब से और गरीब होने को विवश होते हैं। साल–दर–साल ये जैसे–तैसे करके सूद चुकाने के लिए दूसरे जमीन्दार से कर्ज लेते हैं। इतना ही नहीं इनकी सन्तानें भी इस कर्ज के बोझ तले जिन्दगी गुजारती है। घर में माल–असबाब के तौर पर जो कुछ बर्तन होते हैं, कई बार इन्हें बेचने तक की नौबत आ जाती है। फिर भी ये कर्ज के भार से उऋण नहीं हो पाते। इस तरह ये अपने महाजनों के यहाँ बंधुआ मजदूर बनकर पीढ़ी–दर–पीढ़ी खटते हुए इनकी जिन्दगी गुजर जाती है।

भारतीय जन–जीवन या समाज का आधार जाति या जाति–प्रथा रही है। शुरू से ही भारतीय समाज की यह अविभाज्य प्रवृत्ति रही है जो जातिगत व्यवस्था पहले गुण–कर्म के आधार पर तय होती थी। उसका आधार धीरे–धीरे संकीर्ण होता चला गया और जाति व्यवस्था वंशगत हो गई। समाज में होने वाले धार्मिक तथा मांगलिक कार्यों में भी जाति का वर्चस्व दिन–प्रतिदिन बढ़ता ही गया। इसके परिणामस्वरूप हमें समाज में विभाजन, विषमता देखने को मिलती है। समाज विकृत हो गया, जातियों में तनाव, स्पर्धा, विरोध के स्वर मुखर हो उठते हैं। ऊँच, नीच, छुआछूत की भावना समाज में घर करने लगती है। 'विदापत नाच' के शुरुआत में ही रेणु समाज की इस विकृतियों का वर्णन करते हैं– निम्न स्तर के लोगों की चीज रह गई है। तथाकथित भद्र समाज के लोग इस नाच को देखने में अपनी हेठी

समझते हैं। गाँवों में बड़े किसानों का अपना–अपना मजदूर टोला होता है। ये दलित वर्ग के लोग होते हैं। इनके घर गाँव के किनारे बनाए जाते हैं। जिससे कहीं आते जाते ये सामने न पड़े। उच्च जात कहे जाने वाले इस समाज में इनके उठने बैठने वाली जगहों पर दलितों का आना–जाना मना था। ये युगों–युगों से पीड़ित, दलित और उपेक्षित समाज है। जिसके साथ जानवरों की तरह व्यवहार किया जाता था।

गाँवों में रहने वाले लोगों की वेश–भूषा साधारण होती है। उनके पहनावें में ग्रामीण झलक देखने को मिल जाती है। पुरुष धोती, कुर्त्ता, गंजी, गमछा तथा औरतें साड़ी चोली। इनमें से अगर समाज के उस तबके की बात करें जिसके पास खाने तक को पैसे ना हो वो अपने कपड़ों और आभूषणों पर पैसे खर्च करेंगे। ये उम्मीद कोई करे भी तो कैसे। उन्हें तो साधारण कपड़े भी नसीब नहीं होते। रेणु 'विदापत नाच' में नर्तकी की वेशभूषा का उल्लेख करते हुए लिखते हैं– "लाल सालु की घाँघरी और पीतल काँसे के गहनों का साज पर्याप्त समझा जाता है। जब नर्तक उसे पहन कर नाचने लगता है तो गंदी घाँघरी फूल की तरह खिल उठती है और उसमें बसी हुई दुर्गंध निकलकर चारों ओर फैलने लगती है।"[6] इन वस्त्रहीन दयनीय समूदाय के पास वेशभूषा के नाम पर यहीं है। औरतें अपने घरों में काम करते हुए एक कपड़ा कमर में लपेट कर काम चला लेती हैं। लाज और शर्म तो देखने वाले की आँखों में होना चाहिए ना कि इन स्त्रियों के तन को ढके कपड़ों में। बच्चे सर्दी हो या गर्मी नंगे बदन ही रहते हैं। इन लोगों के पास सभ्य समाज की तरह कपड़े और गहने भले ही ना हो लेकिन इनके पास नैतिकता मान–मर्यादा का आवरण जरूर है जो इन्हें मनुष्य बनाये रखता है। चेथरू गुसाँई जी को वर्षों पहले जमीन्दार झूठी गवाही देने को कहता है तो वह गृहहीन होना स्वीकार कर लेता है लेकिन झूठी गवाही नहीं देता।

बड़े–बुजुर्गों के लिए इनके मन में मान–सम्मान का भाव इन्हें इनकी सभ्यता और संस्कृति से जुड़े होने का प्रमाण है। समाजी नायिका से कहता है कि जब तुम पुआल पर सोई हुई थी, और अपनी झोपड़ी में अकेली थी, उस समय बिकटा उसके पास आया था। यह सुन कर वहाँ बैठी युवतियाँ हँसती–मुस्कुराती है और अधेड़ औरतें उन्हें लाज–शरम की दुहाई देती हुई– कृत्रिम क्रोध प्रकट करती है। जबकि उनके अन्दर भी अर्द्धमृत भावनाएँ थोड़ी देर के लिए ही जग जाती हैं, पर शर्म के मारे वो खुल कर हँस नहीं पाती।

निष्कर्ष

दलितों, पिछड़ों, पीड़ितों के प्रति हमारे लेखकों के भाव उनकी रचनाओं में व्यक्त हुए है प्रेमचन्द से लेकर रेणु या उनके समकालीन रचनाकार सबने समाज में उत्पीड़ित जाति और वर्गों के कठिन जीवन का यथार्थ चित्रण करने की कोशिश की है लेकिन ये कोशिश किन्हीं मायनों में कमतर रही है जिसका परिणाम हम दलित साहित्य के रूप में एक नवीन साहित्यिक धारा के जन्म के रूप में देख सकते हैं। हम सबको मिलकर सिर्फ कथनी तौर पर नहीं बल्कि करनी के तौर पर इनका साथ देना होगा, ताकि इस मिले–जुले बहुलतावादी भारतीय समाज में सब प्रगति कर सके। तभी डॉ. अम्बेडकर के रचनाकार और प्रगतिशील समाज का निर्माण होगा।

आधार ग्रंथ

1. सं. भारत यायावर, रेणु रचनावली–4, विदापत नाच, राजकमल प्रकाशन, प्रथम संस्करण–1995, पृष्ठ 21
2. वही, पृष्ठ 25–26
3. वही, पृष्ठ 25
4. वही, पृष्ठ 24,25
5. वही, पृष्ठ 21,22
6. वही, पृष्ठ 21

संदर्भ ग्रंथ

1. डॉ. पुष्पा जतकर, रचनाकार रेणु, वाणी प्रकाशन, प्रथम संस्करण–1992
2. डॉ. रामचन्द्र तिवारी, हिन्दी का गद्य साहित्य, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 9वां संस्करण–2014

रागनी कुमारी
शोधार्थी
हिंदी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय
दिल्ली–110007
मो.न. 7678304627
ई.मेल– ragani.sakarwar@gmail.com
निवास– विजय नगर, दिल्ली–110009

नासिरा शर्मा के कथा साहित्य में व्यक्त सामासिक संस्कृति

डॉ0 पूजा

सारांश

हिंदी साहित्य के समकालीन कथा साहित्य में नासिरा शर्मा एक महत्वपूर्ण स्थान रखती है। समकालीन कथा लेखिकाओं में इनके लेखन का फलक विस्तृत एवं बहुआयामी है। इनकी रचनाओं में हिन्दू–मुस्लिम समाज की अभिव्यक्ति प्रभावोत्पादक ढंग से हुई है। इनकी रचनाओं में विभिन्न जाति, समुदाय वर्ग एवं वर्ण की भी संघर्षशीलता स्थापित हुई है। इनका कथा साहित्य जीवन के यथार्थ को बड़ी सच्चाई के साथ पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करता है। लेखिका ने भारत में भावात्मक एकता के साथ–साथ मिश्रित सांस्कृतिक परम्पराओं का भी सूत्रपात किया है। साझा संस्कृति को लेखिका ने अपने लेखन के साथ–2 अपने व्यक्तिगत जीवन में भी चरितार्थ किया है।

शोध पत्र

भारत गंगा यमुना संस्कृति का उद्‌गम स्थल रहा है। यहाँ सभी धर्मों और संस्कृतियों का सम्मान किया जाता रहा है। ''संस्कृति के चार अध्याय'' पुस्तक में दिनकर अपने लेखकीय निवदन में लिखत है। ''उत्तर–दक्षिण, पूर्ण–पश्चिम, देश में जहाँ भी हो हिन्दू बसते है, उनकी संस्कृति एक, एवं भारत की प्रत्येक क्षत्रीय विशेषता हमारी इसी सामासिक संस्कृति की विशेषता है। तब हिन्दू और मुस्लमान है, दो देखने में अब भी दो लगते है। किन्तु उनके बीच सांस्कृतिक एकता विद्यमान है, जो उनकी भिन्नता को कम करती है।'' सामाजिक संस्कृति यह पद भारतीय संविधान के हिन्दी अनुवाद से उद्धत है। यहाँ यह पद अंग्रेजी के कम्पोजिस्ट कल्चर के लिए भी प्रयुक्त होता है। दरअसल इस पद पर थोड़ा और विचार करना होगा, समास का अर्थ होता है योग या मेल। समासिक का अर्थ है। मिलकर एक हो जाने वाली। जब दो या दो से अधिक संस्कृतियाँ मिलती। तब दो प्रकार की क्रियाएँ होती है। संस्कृतियों के कुछ ऐसे तत्व होते है, चाहे वह धर्म भावना हो, कला रूचि हो साहित्य परंपरा हो या भाषा हो जो मिलने वाली विभिन्न संस्कृतियों में समान रूप से स्वीकार हो जाते है। उन तत्वों का अजनबीपन जाता रहता है। दूसरी और कुछ ऐसे तत्व भी होते है, जो कभी संस्कृतियों में समान रूप से स्वीकृत नहीं होते है। वे विभिन्न संस्कृतियों में अलग–2 या तो बने रहते है या कालान्तर में विलीन हो जाते है। व्यापक रूप से जो विभिन्न तत्व सभी संस्कृतियों में स्वीकृत हो जात है, यदि उनके परिणाम और प्रकार अनुकल हुए तो वे कुल मिलाकर एक अपेक्षाकृत नई संस्कृति चेतना को रूप देते है, जिसे हम समासिक सांस्कृतिक चेतना कह सकते है।

संस्कृति व्यक्ति चेतना की सम्यक क्रियाशीलता का सामाजिक तथा समासिक रूप है। व्यक्ति चेतना समाज द्वारा स्वीकृत होकर समाज चेतना बन जाती है और सामाजिक संस्कृति को रूप देती है। अनेक सामाजिक संस्कृतियों का जब योग होता है, उनका ऐसा मिलन होता है। जिसमें बहुत दूर तक दोनों या अनेक संस्कृतियाँ मिलकर एक हो जाए सामासिक संस्कृति का स्वरूप सामने आता है। साहित्य के ऊपर संस्कृतियों की सामासिकता का प्रभाव पड़े बिना नहीं रहता इसलिए संप्रति साहित्य वह सहज साधन है, जिसमें द्वारा सामाजिक संस्कृति के प्रमुख तत्वों को हम एक सीमा तक समझने का प्रयत्न कर सकते है इसी समासिक संस्कृति को आगे बढ़ाने का कार्य समकालीन कथाकार नासिरा शर्मा कर रही है। इन्होंने अपने कथा साहित्य में हिन्दू मुस्लिम संस्कृति की अभिव्यक्ति प्रभावात्मक ढंग से की है। लेखिका ने सांस्कृतिक परम्पराओं का सूत्रपात किया है। अपनी पुस्तक ''राष्ट्र और मुसलमान'' में वह लिखती है ''हिन्दुस्तान अनेक धर्मों का संगम है। सारे धर्मों को यदि कोई थोड़ा–बहुत जानता होगा, तो इस नतीजे पर पहुँच जाएगा कि सभी में कुछ न कुछ साझा है।'' नासिरा शर्मा एक संवेदनशील एवं सजग लेखिका है उन्होंने अपने साहित्य में साम्प्रदायिक सौहार्द को बढ़ावा देने की बात की है वे लिखती है ''हिन्दु धर्म इतना तंग नहीं, जा मुसलमान को खड़े होने की जगह न दे और न इस्लाम धर्म इतना कट्‌टर है, जो एक हिन्दू का अपने में जगह न दे पाए।'' वे अपने संस्मरण में लिखती है ''दरअसल हिन्दुस्तान की अंखंडता ऐसी ही चाहतों से बनी एक सोच की कडी है, जो अनजाने ही आपको साझा संस्कृति की आदत डाल देती है। अपने संस्मरण में लेखिका अपने बेटे के विषय में लिखती है।'' ''भारतीय संस्कृति का साझा संस्कार जो वह पूरे माहौल से ले रहा था, उसकी सीधी तालीम मैं नहीं दे रही थी, मगर जो हमारे आसपास था उससे वह एक ऐसा सिलसिला बना रहा था, जिसमें अपना पराया नहीं था।'' रूकावट और संकीर्णता नहीं थी। सरहद के आर–पार की दोनों दुनियाँ उसकी अपनी थी।''

साझा संस्कृति पर अपने जीवन में घटित ऐसी ही एक घटना का याद करते हुए लेखिका लिखती है। ''अम्मा ने मुझे वहाँ चलने को कहा और बोली, राम जी अगर मज़हर को ठीक कर देंगे, तो मैं क्यों न जाऊ। शक्तिपीठ के हर हिस्से में बरमेश्वर के साथ जाकर उन्होंने दुआ माँगी। दूर खड़ी मैं सोच रही थी कि माँ का दिल, हर विचार, वाद, धर्म, विश्वास से बड़ा है।'' सामासिक संस्कृति के साथ–साथ अपने कथा साहित्य में अपनी लेखिनी के माध्यम से साकार किया है। अपनी कहानी सरहद के उस पार' के किया है कि सबसे बड़ा धर्म मनुष्य का मनुष्य बने रहने में है। दंगें के समय जब मोहल्ले के कुछ लड़के हिन्दू लड़की को उठाकर ले आते है तो रेहान उनसे मारपीट करता है और कहता है ''इस वक्त मेरे तन बदन में उतनी ही आग लगी है जितनी तुम्हारी बहन को किसी हिन्दू के घर में इस हाल में देखकर लगती।'' रेहान उन लड़कों की पिटाई करते हुए कहता है। ''मेरे जीते जी इस मोहल्ले में किरपी जालिम औरंगजेब की पैदाइस नहीं हो सकती। तारीख दोबारा मेरे सामन नहीं दोहराई जाएगी वरना...। अपनी कहानी इन्सानी नस्ल के माध्यम लेखिका ने एक नई नस्ल की कल्पना की है जो सभी धर्मों से अलग इन्सानों की नस्ल होगी। कहानी के पात्र नबाव और सविता के माध्यम से लेखिका ने यही संदेश दिया है। लेखिका की

कहानियाँ साम्प्रदायिकता और विरामपरस्ती के स्थान पर मानवीयता क तन्तुओं की खोज करती है।

नासिरा जी ने अपनी औपन्यासिक कृतियों के जरिये भी हिन्दु–मुस्लिम भाई–चारे की ही बात की है। दोनों संस्कृतियों के माध्यम से सद्भाव दिखलाया है। उन्होंने अपने लेखन में इंसानियत को हमेशा हर मज़हब से ऊपर रखा है। इसी गंगा–जमुनी संस्कृति की उदारता को दृष्टिगत रखते हुए नासिरा शर्मा अपने उपन्यास अक्षयवट में लिखती है। ''विजपादशमी का पर्व पूरे भारत में मनाया जाता है। मगर जो एकता इलाहाबाद में दिखायी देती है, वह कहीं और नहीं। जीवन का एकाकीपन इन्हीं उत्सव में टूटता है।'' इसी क्रम में वे पुनः कही है। ''इलाहाबाद के लिए दशहरा केवल धार्मिक पर्व भर नहीं है। यह स्थानीय परिवेश से निकली एक ऐसी अभिव्यक्ति है जो अपनी ही बोली–बानी में इंसानी दुख का ब्यान करती है। आम आदमी से मिलती जुलती उसकी व्यथा है... इसलिए राम लीला की चौकियाँ देखने इलाहाबाद के आस–पास के नगर और कस्बे का हर व्यक्ति लालायित रहता है, चाहे वह किसी धर्म–विचार वर्ग का हो।'' इसी तरह कुइयाँजान उपन्यास का नायक डॉ0 कमाल इंसानियत की सेवा में हमेशा तत्पर दिखायी देता है। दूसरी जन्नत उपन्यास में फरीद इसी सद्भाव की बात को राना को समझाता है।

ठीकरे की मँगनी उपन्यास की नायिका महरूब अपने आचरण व व्यवहार से हमेशा हिन्दू–मुस्लिम सद्भाव को पेश करती है। वह गणपत काका के घर कीर्तन में सम्मिलित होकर प्रसाद प्राप्त करती है। वह जब हेडमास्टर बनती है तो स्कूल में राष्ट्रीय पर्वों के अलावा धार्मिक आयोजनों पर रोक लगाती है। वह कहती है मैं विद्यालय को दानिश और विधा को घर समझती हूँ। उन्हें ज्ञान देना, इल्म देना हमारा काम है, न कि यह बात बताना कि कौन किस मजहब और जात से है।'' पारिजात उपन्यास भी इसी साम्प्रदायिक सद्भाव की मिसाल है। वह तो गंगा–जमुनी संस्कृति से सराबोर करता हुआ पारिजात से परीजाद की खोज करता है। रोहन और रूही का परिवार, उनके पारिवारिक रिश्ते व प्रेम वर्तमान समाज के लिए एक आदर्श की भाँति है। उपन्यास में हिन्दु–मुस्लिम दोनों की तीज–त्यौहारों से आनंदित होता हुआ सम्पूर्ण इलाहाबाद और लखनऊ दिखाई देता है।

निष्कर्ष रूप से नासिरा शर्मा का लेखन हिन्दी साहित्य में सामासिक संस्कृति का उदाहरण है। उनके लेखन में भारतीय सामासिक संस्कृति की झलक दिखलाई देते है। अपने लेखन के माध्यम से लेखिका ने मानवता के धर्म को सर्वोपरि बताया है।

सन्दर्भ–ग्रंथ

1. रामधारी सिंह दिनकर– संस्कृति में चार अध्याय
2. भारतीय संविधान– धारा 351
3. नासिरा शर्मा– राष्ट्र और मुसलमान, पृ0सं0 68
4. वहीं पृ0सं0–198
5. वहीं पृ0सं0–180
6. वहीं पृ0सं0–172
7. वहीं पृ0सं0–
8. नासिरा शर्मा– सरहद के उस पार, पृ0सं0 34
9. वहीं पृ0सं0 34
10. नासिरा शर्मा– अक्षयवट
11. वहीं
12. नासिरा शर्मा– ठीकरे की मंगनी
13. नासिरा शर्मा– पारिजात

डॉ0 पूजा
सहायक आचार्या
हिन्दी विभाग
जैन कन्या पाठशाला (पी0जी0) कॉलेज
मु0नगर (उ0प्र0)
ईमेल–poojabislahindi@gmail.com

नासिरा शर्मा के कथा साहित्य में व्यक्त सामासिक संस्कृति

सलिता

सारांश

'गोदान' उपन्यास मुंशी प्रेमचन्द द्वारा लिखित एक कालजयी उपन्यास है जिसमें बीसवीं शताब्दी के रुढ़िवादी समाज का जीवंत चित्रण किया है 'गोदान' में कृषक जीवन का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करते हुए दिखाया गया है कि एक किसान किस प्रकार अपने परिवार के पालन–पोषण के लिए साहुकारो व जमीदारों के शोषण का शिकार होता है और अपना सम्पूर्ण जीवन भय व निराशा के साथ गुजारता है।

'गोदान' उपन्यास में यह भी बताया गया है कि कैसे एक भारतीय किसान अपनी छोटी–छोटी जरूरतों के लिए साहूकारों से ऋण लेता है और हमेशा उस ऋण को चुकाने में अपना सम्पूर्ण जीवन गुजार देता है। इस उपन्यास में न केवल साहूकार बल्कि जमीदार, मील के मालिक, पेशेवर वकील, राजनेता आदि सब लोग अनपढ़ और नासमझ किसानों का शोषण करते है। 'गोदान' उपन्यास में लेखक ने न केवल हमारे समाज की कुंठा, निराशा व ऋण ग्रस्तता आदि का बहुत ही सुंदर चित्र प्रस्तुत किया है और साथ ही साथ यह भी बताने का प्रयास किया है कि भारतीय किसान साहुकारो के चंगुल में फसकर कर्ज का शिकार होता है और अपने परिवार का पेट पालने की चिंता में ही अपना सम्पूर्ण जीवन व्यतीत कर देता है।

वास्तव में प्रेमचन्द जी कलम के सिपाही हैं जो समाज में व्याप्त बुराइयों से संघर्ष करते हुए दिखाई देते है। जहां तक गोदान उपन्यास की बात है तो यह एक ऐसा उपन्यास है जिसमें समाज में व्याप्त अनेक बुराइयों का समावेश है। लेखक समाज में अपनी लेखनी के माध्यम से परिवर्तन लाना चाहता है वह अपने उपन्यास के पात्र 'होरी' के माध्यम से यह बताना चाहते हैं कि किस प्रकार समाज में व्याप्त समस्याएं होरी जैसे किसानों के लिए दमन व शोषण का साधन बन गई है।

'गोदान' उपन्यास की मूल समस्या पर यदि विचार किया जाए तो वह समस्या है ऋण की समस्या। यह एक ऐसी समस्या है जिससे किसान जीवन भर जुझता है और मृत्यु के बाद उसका परिवार उस समस्या को झेलता है। समाज का मेरुदंड किसान कितना शिथिल और जर्जर हो गया है यह कही न कही गोदान में प्रत्यक्ष देखने को मिलता है। यह उपन्यास न केवल होरी की कथा कहता है अपितु उस काल के हर भारतीय किसान की आत्मकथा सुनाता है। होरी जो कि जीवन भर मेहनत करता है, अनेक कष्ट सहता है केवल इसलिए कि उसकी मर्यादा की रक्षा हो सके फिर भी वह अपनी मर्यादा बचा नही पाता और परिश्रम के तप में अपने जीवन को ही होम कर दे देता है।

'गोदान' को कृषक जीवन और संस्कृति का महाकाव्य माना गया है। भारतीय किसान के संघर्ष तथा उसकी त्रासदी की कहानी इस उपन्यास में निहित है। एक जगह होरी के माध्यम से प्रेमचन्द अपनी विवशता को दर्शाते हुए नजर आते है और कहते भी है कि:–**"जब दुसरे के पांवो तले अपनी गर्दन दबी हुई हो तो उन पाँवो को सहलाने में ही कुशल है।"** होरी जैसे किसानों को जमीदार राय साहब दोनों हाथों से लूटते है। इस समय में लगान, बेगार, नजराना, शगुन आदि न जाने कितनी ही प्रथाएं है जिसके माध्यम से किसानों को लूटा जाता है। जरूरत पड़ने पर जब वे किसान साहूकारों से ऋण लेते है और इस ऋण का ब्याज लगातार बढ़ता जाता है। इस मूल, ऋण व ब्याज को चुकाते–चुकाते उनका सम्पूर्ण जीवन बीत जाता है पर वह ऋण अदा नहीं कर पाते है। उनका शोषण करने वाला केवल जमीदार राय साहब ही नहीं बल्कि दातादीन, झिंगुरी सिंह, सहुआइन दुलारी, नोखे राम आदि अनेक ऐसे व्यकित हैं जो लगातार होरी का शोषण करते हैं। गांव में अकेला होरी ही कर्जदार नहीं है बल्कि गाँव के अन्य किसान भी इसी प्रकार ऋण के बोझ से दबे हैं। ऋण को चुकाने की चिंता केवल होरी की ही नहीं है बल्कि उस जैसे अनेक किसानों की भी है। लेखक कहता है कि:–**''उसे संतोष था तो यही कि यह विपत्ति अकेले उसी के सिर पर न थी। प्रायः सभी किसानों का यही हाल था।''** परन्तु किसानों की इस ऋण समस्या को प्रेमचंद ने मुख्यतः होरी के माध्यम से स्पष्ट किया है। होरी इस ऋण से इतना घिर जाता है कि उसे अपनी बेटी तक को रामसेवक जैसे प्रोढ़ को 200 रु लेकर विवाह करने के लिए विवश होना पड़ता है।

इस प्रकार 'गोदान' उपन्यास में प्रत्येक समस्या के मूल में यही ऋण की समस्या दिखाई देती है। एक अन्य समस्या भी इसमें चित्रित होती है वह है शोषण की समस्या। उस समय जमीदारी प्रथाओं में शोषण अपने चरमोत्कर्ष पर था। दीन–हीन व बेबस व्यक्ति का चारों तरफ शोषण होता है। यही शोषण झेलता है होरी। होरी एक गरीब व ईमानदार किसान है परन्तु सभी उसका शोषण करते हैं। होरी के अतिरिक्त धनिया, हीरा, शोभा सिलिया आदि सभी का किसी न किसी रूप में शोषण होता है। इसका मूल कारण है इनकी रुढ़िवादी मर्यादाओं का बंधन और उनकी धर्म के प्रति अंध भक्ति। कृषक हर मौसम चाहे सर्दी हो या गर्मी, आंधी हो या तूफान सबकुछ सहकर खेतों में अन्न उपजाता है परन्तु उसका अन्न घर पहुचने से पहले खेतों से ही उठ जाता है। गाँव के जमीदार, पंडित, पटवारी, दरोगा आदि सभी उसको लूटते है। इस लूट को रामसेवक एक स्थान पर बताता भी है कि:–**"थाना पुलिस कचहरी सब हैं हमारी रक्षा के लिए लेकिन रक्षा कोई नहीं करता। चारो तरफ लूट है। जो गरीब, बेबस है, उसकी गर्दन काटने के लिए सभी तैयार रहते हैं।''**

होरी की समस्याओं को चित्रित करना ही इस उपन्यास की मूल भावना नही रही है बल्कि होरी जैसे अन्य किसान जो उन सभी समस्याओं से जुझते है उसे भी कहीं न कहीं उपन्यास में उभारा गया है। 'गोदान' में कर्ज व मुनाफे की दुनिया में जो भेद प्रकट किया इससे पहले भेद कहीं नहीं मिलता है। इसमें एक तरफ जमीदारी प्रथा का प्रतीक राय साहब, मिल मालिक खन्ना, मेहता आदि की दुनिया है तो दूसरी और होरी, धनिया, गोबर, शोभा, हीरा आदि की दुनिया है। इन दोनों वर्गों का बेजोड़ चित्र प्रेमचंद जी ने प्रस्तुत किया है। एक के बिना

दूसरे के अस्तित्व की कल्पना नहीं की जा सकती है। सम्पूर्ण उपन्यास में होरी के जीवन की आर्थिक व सामाजिक परिस्थितियों का वर्णन किया गया है। अपनी स्थिति का वर्णन होरी भोला से निम्न कथन के माध्यम से करता है :–**"अनाज तो सब का सब खलियान में ही तुल गया जमीदार ने अपना लिया, महाजन ने अपना लिया मेरे लिए पांच सेर अनाज बच रहा है। यह भूसा तो मैंने रातों–रात ढोकर छिपा दिया था नहीं तो तिनका भी न बचता जमींदार तो एक ही है पर महाजन तीन–तीन हैं।''** इस प्रकार फसल की जितनी भी पैदावार होती है वह तो कर्ज के रूप में जमीदारों या महाजनों के पास चली जाती है और किसान सारे साल का खर्च कैसे चला पाएगा यह एक सवाल ज्यों का त्यों खड़ा रह जाता है।

'गोदान' में चित्रित कृषक वर्ग परिश्रमी होने के साथ–साथ भाग्यवादी भी हैं। इसी भाग्य वादिता को समस्या के रूप में देखा जा सकता है। हर समस्या को भाग्य का परिणाम मानकर अपना लेना अर्थात् हर सही या गलत घटना को भाग्य से जोड़कर देखना इस उपन्यास में चित्रित किसानों की महत्वपूर्ण समस्याओं में से एक है। होरी जहाँ परिश्रमी है वही भाग्यवादी भी है। जब हीरा के द्वारा उसकी गाय को जहर दिया जाता है तो उसे अपने कर्मो का फल मानकर स्वीकार कर लेता है कि गाय का सुख उसके भाग्य में नहीं है। होरी हर समस्या को अपनी नियति या पूर्व जन्मो से जोड़कर देखता है। एक जगह उसके कथन से यह स्पष्ट हो जाता हैः–**"छोटे बड़े भगवान के घर से बनकर आते हैं, सम्पति बड़ी तपस्या से मिलती है। उन्होंने पूर्व जन्म में जैसे कर्म किए है, उनका आनन्द भोग रहे है कुछ नहीं।"** कृषक जीवन के महाकाव्य के रूप में जाना जाने वाला उपन्यास गोदान में प्रेमचन्द्र जी ने भारतीय ग्रामीण जीवन की आत्मा को सशक्त अभिव्यक्ति प्रदान की है। इसी कारण डॉ. गंगाप्रसाद 'विमल' ने इसे ग्रामीण जीवन की समस्याओं का 'महाकाव्य' और 'गीता' की उपाधि दी है। 'गोदान' में होरी की तरह प्रत्येक किसान पुराने विचारों व सस्कृति को मानने वाला था। इस कारण होरी गाय जैसे पशु को पवित्र मानता है। जब होरी के पास गाय आ जाती है तो परिवार के प्रत्येक सदस्य की खुशी देखते ही बनती है। इसी खुशी के संदर्भ में प्रेमचंद जी लिखते हैः–**"होरी का परिवार फूला, नहीं समा रहा है, विशेषकर होरी, क्योंकि उसकी जो चिर संचित अभिलाषा पूर्ण हुई है। गाय बहुत सुन्दर और अच्छी थी यह समाचार सारे गाँव में आग की भांति फैल गया।''**

इस उपन्यास में किसानों के अभिसप्त जीवन की समस्या का बड़ा मार्मिक चित्रण किया गया है। जहाँ कृषक जीवन की दीन दशा तथा उच्चवर्गीय समाज की विभत्स्तापूर्ण उच्च दशा की विषमता को निम्न कथन से दर्शाया गया हैः–**"यहाँ तो जो किसान है, वह सबका नरम चारा है पटवारी को नजराना और दस्तूरी न दे तो गाँव में रहना मुश्किल।जमींदार के चपरासी और करिन्दों का पेट न भरे तो निबाह न हो थानेदार और कानिसिटिबिल तो जैसे दामाद है।''** कृषक वर्ग के जीवन में आने वाली कठिनाई का प्रेमचंद जी ने शुरू से अन्त तक बढ़े सुन्दर ढंग से निर्वाह किया है। होरी की पत्नी धनिया अपने विवाह के बाद के कृषक जीवन का वर्णन करती हुई अपने अनुभव बताती है कि **''चाहे कितनी ही कतर ब्योंत करो कितना ही पेट–तन काटो, चाहे एक एक कौड़ी लो, दाँत से पकड़ी मगर लगान से मुक्त होना मुश्किल है।''** इस लगान वसूली की समस्या को भी कृषक वर्ग की समस्या के रूप में उभारा है प्रेमचन्द जी ने इस उपन्यास के माध्यम से यहाँ एक स्थान पर महाजन के कर वसूली करने पर होरी के मन की व्यथा दिखलाई पड़ती है और उसकी गूंज हमें सुनाई देती है जैसेः–**''ठाकुर जी ठीक ही तो कहते है जब हाथ में रूपय आ जाए तो गाय ले लेना तीस रुपए का कागद लिखने पर पचास रुपए मिलेंगे और तीन–चार साल तक न दिये गए, तो पूरे सौ हो जाएंगे। पहले का अनुभव यह बता रहा था कि कर्ज वह मेहमान है, जो एक बार आकर जाने का नाम नहीं लेता।''**

अपने उपन्यास के माध्यम से प्रेमचन्द जी ने भारतीय किसानों में व्याप्त धर्म के प्रति अंध भक्ति को दर्शाया है और उनके जीवन में धर्म और ब्राह्मण का महत्व इतना अधिक है कि जो उनके लिए शोषण का कारण बनता है। होरी की अंधभक्ति हमें इन शब्दों में दिखाई देती हैः–**"अगर ठाकुर या बनिये के रूपये होते, तो उसे ज्यादा चिन्ता न होती, लेकिन ब्राह्मण के रूपये, उसकी एक पाई भी दब गयी, तो हड्डी तोड़कर निकलेगी।"**

निष्कर्ष रूप से हम कह सकते है 'गोदान' उपन्यास का आरम्भ जिस करुण गाथा से होता है उसका समापन भी उसी करुण गाथा से हो जाता है। मुंशी प्रेमचन्द जी ने भारतीय कृषक वर्ग के हर क्षेत्र में हो रहे शोषण को उजागर कर इस उपन्यास को जीवंत रूप दिया है।

संदर्भ ग्रन्थ सूचीः–

1. माया अग्रवाल, गोदान एक विवेचन।
2. डॉ. कृष्ण देव भक्तरी, प्रेमचन्द जी की उपन्यास कला का उत्कर्ष।
3. मुंशी प्रेमचन्द, गोदान।

सलिता,
प्राध्यापिका
फतेह चदं महिला महाविद्यालय, हिसार (हरियाणा)
सम्पर्क सूत्रः 9466873668, 9466055942

मकान नंः ए–69
न्यू कैंपस, जी.जे.यू.एस. एंड टी. हिसार
पिन कोड 125001

खगोल विज्ञान और ज्योतिष

सौरभ कुमार

सारांश

ज्योतिष शास्त्र में सितारों की प्रमुख भूमिका होती है। ज्योतिष में सत्ताईस तारे हैं यह वेदों से ज्ञात होता है। प्रत्येक तारे के लिए एक संगत देवता होता है। प्रत्येक नक्षत्र के साथ एक विशेष योग जुड़ा होता है। वेदों में भी तारों के गुणों की व्याख्या की गई है। चार वेदांग ज्योतिषों में से प्रत्येक में ऋग, यजुर, साम और अथर्व–सितारों के विभाजन और संख्या का उल्लेख किया गया है। जन्म, संपत, विपत, क्षेम, प्रत्यारम् साधको, वड़ा, मैत्र, परममित्र ये नौ सितारे हैं जिनकी गणना किसी व्यक्ति के जन्म नक्षत्र (जन्म नक्षत्र) से की जाती है।.

ब्रह्मांड में असंख्य तारे हैं। लेकिन चार वेदों में – अधिक विशेष रूप से अथर्वण वेद एक व्यक्ति द्वारा किए जाने वाले उपचारात्मक उपायों के लिए केवल सत्ताईस को गिना जाता है। यह एक खगोलीय सिद्धांत है, जिसे आगे चलकर ज्योतिष में लागू किया जाने लगा। इन सत्ताईस तारों को तीन श्रेणियों में बांटा गया है। पहली श्रेणी जन्म से शुरू होती है और परम मैत्र पर समाप्त होती है। दूसरा और तीसरा क्रमशः अनुजन्म और त्रिजन्म से प्रारंभ होता है। यह खगोल विज्ञान और ज्योतिष के बीच चौराहे का बिंदु है।

अथर्व वेद मुख्य रूप से एक व्यक्ति के लिए उपचारात्मक उपायों से संबंधित है। पूरे विश्व के लिए नहीं। सितारों का प्रायश्चित के लिए लिए गए देवता से सीधा

संबंध है। ज्योतिष में सितारों की अहम भूमिका होती है। इस प्रकार ज्योतिष ने इन सिद्धांतों को अथर्व वेद से आत्मसात किया । इस दुनिया में हम कई प्राकृतिक घटनाओं से रूबरू होते हैं।

उनमें से कुछ इस प्रकार हैं–

अधिकतावर्षा– (अतिवृत्ति)

●सूखा– (अनवृष्टि)

● संकरमिकारोग& ¼महामारी½ मू"ाकों से परे'ाानी

परेशानीकीट– (सलबा पीड़ा) पृथ्वीभूकंप– (बुकअंबम)

ज्वालामुखी– (अग्नि पर्वतम)

गड़गड़ाहट– (असनी पदम)

उच्चज्वार–भाटा (समुद्र कोपम)

ये घटनाएँ हमारे ग्रहों के सभी जीवों को परेशान करती हैं केवल मनुष्य को ही नहीं। कलाविनम या खगोल विज्ञान इन सभी को लाता है। उपरोक्त का स्रोत ग्रहों का गोचर हैमनुष्य के अलावा अन्य जीवित प्राणियों के लिए इन परिवर्तनों के प्रभाव का उल्लेख करने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि वे प्रकृति के साथ सद्भाव में रहते हैं, क्योंकि उनके पास छठवीं इंद्रिय नहीं है। लेकिन मनुष्य प्रकृति के साथ तालमेल नहीं बिठा पाता। वह कभी–कभी प्रकृति की प्रवृत्ति के विरुद्ध कार्य करता है। इस प्रकार ऋषियों ने मनुष्य के अलावा अन्य जीवित प्राणियों पर खगोल विज्ञान के प्रभाव की व्याख्या करने की जहमत नहीं उठाई। लेकिन ऋषियों ने मनुष्य और उसके भविष्य पर ग्रहों की चाल के प्रभाव पर विस्तार से चर्चा की। इस विज्ञान को ज्योतिष के रूप में जाना जाने लगा। मनुष्य के अलावा, जीवित प्राणी जन्म परिवर्तन और मृत्यु से गुजरते हैं। इस प्रकार उनका जीवन काफी हद तक प्रकृति द्वारा शासित होता है। उनके पास कोई बुद्धि नहीं है। इसलिए वे कभी प्रकृति के खिलाफ नहीं जाते। अतः उनका पूरा जीवन पूर्व निर्धारित योजना के अनुसार प्रकृति द्वारा निर्धारित होता है। ये प्राणी प्रकृति के नियमों के अनुसार जीते और मरते । लेकिन मनुष्य सामान्य रूप से अपने जीवन की योजना के अनुसार प्रकृति को बदलने का प्रयास करता है। प्रकृति की योजना कई बार उसकी प्रकृति के विरुद्ध जाती है, जो उसके मन द्वारा निर्देशित होती है। मनुष्य का मन उसे विचार देता है। वह प्रकृति के विरुद्ध जाने की कीमत पर भी अपने विचारों को लागू करने का प्रयास करता है। सूखा एक प्राकृतिक घटना है। इसे अनवरिष्टी के नाम से जाना जाता है। यह कुछ ग्रहों की चाल के कारण है। यह खगोल विज्ञान में समझाया गया है। वेदों ने सूखे के उपाय के रूप में करिरैष्ठी का उल्लेख किया है। यह खगोल विज्ञान और वेदों के बीच की कड़ी का उदाहरण है।

में पुत्र हमें कुछ ऐसे जोड़े मिलते हैं जो निःसंतान हैं। वेद संतानहीनता के उपाय के रूप कामेष्ठि यज्ञ का विधान करते हैं। यदि यह संस्कार पचास वर्ष की आयु पार कर चुके दंपत्ति के लिए निर्धारित किया जाता है, तो उस समय तक दोनों बच्चे पैदा करने में असमर्थ हो जाते हैं। यह अनुष्ठान तब व्यर्थता में एक अभ्यास बन जाएगा। यह पता लगाने के लिए कि जोड़ों को गर्भधारण करने में कठिनाई होगी हमें ज्योतिष की आवश्यकता है। यह ज्योतिष और वेदों के बीच की कड़ी का एक उदाहरण है।

जानवरों की भावनाओं की भी एक सीमा होती है। जब उन्हें पानी नहीं मिलता है,तो वे उन जगहों पर चले जाते हैं जहाँ पानी होता है। इसी प्रकार हम ऐसे पक्षियों को पाते हैं जो अपने अस्तित्व के लिए अधिक अनुकूल देशों में प्रवास करते हैं। पक्षियों की वृत्ति प्रकृति द्वारा नियंत्रित होती है। इस प्रकार खगोल विज्ञान जानवरों और पक्षियों के जीवन को नियंत्रित करता है। वे ज्योतिष से संबंधित नहीं हैं। मनुष्य की कार्यप्रणाली ऐसी है कि वह अपने स्वार्थ के लिए धर्म का नाश करने से नहीं हिचकिचाता। इसे ठीक करने के लिए ऋषियों ने ज्योतिष का प्रचार किया। रोग और मृत्यु को दूर करने के लिए, इन घटनाओं के आगमन के समय को पहले से जानना आवश्यक है। इसके लिए ज्योतिष की आवश्यकता है।

ज्योतिष संस्कृति और पर्यावरण के अधीन है। इस प्रकार भारतीय ज्योतिष कुछ संशोधनों के अधीन अन्य देशों पर लागू होगा। वैद्यम और कालत्र दोष जैसी अवधारणाएं भारत से परिचित हैं। लेकिन जिन देशों में ये अवधारणाएं मौजूद नहीं हैं, वहां आवश्यक संशोधनों को ध्यान में रखते हुए ज्योतिष के सिद्धांतों को लागू किया जाना चाहिए। फलभाग (ज्योतिष के फल) ग्रहों की स्थिति के परिणामों से संबंधित हैं और ये ऋषियों के कार्य हैं। यह वैदिक चिंतन का उप–उत्पाद है। भारतीयों (भारतीयों) के दैनिक जीवन की नींव वैदिक चिंतन में है। मनुष्य के विचार या तो सुख या दुख की ओर ले जाते हैं। व्यक्तियों के विचार वैदिक चिंतन के अनुरूप थे। मानव विचार थे का अंत या तो खुशी या दुख है। फलभाग में ऋषियों ने जो घोषित किया है वह व्यक्ति के दृष्टिकोण से खुशी या दुःख के रूप में माना जाता है। विधवापन,

वैवाहिक दोष, अंतर्जातीय विवाह, संतानहीनता, संतान अरिष्ट, आत्म विद्या प्राप्ति, प्रव्रज्या योग, रोग संप्राप्ति, असलिपथ मरणम (बिजली लगने से मृत्यु), विष प्रयोग, आत्मा हत्या, दरिर्घम, चौर्यम (चोरी), मानुष विक्रमम मातृ पितृ त्यागम, ब्रुनाहत्या अच्छी और बुरी अवधारणाओं के कुछ उदाहरण हैं जिनका मूल वैदिक विचार में है। नास्तिक चतुर्विध पुरुषार्थ (जीवन के चार छोर) धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष हैं। यह अवधारणा वेदों के लिए विशिष्ट है। भारतीय इस सिद्धांत के अनुसार अपना जीवन व्यतीत करते हैं। इन चारों वस्तुओं की प्राप्ति में आने वाली बाधाओं को ज्योतिष के माध्यम से जाना जा सकता है और दूर करने का उपाय भी। इसलिए, ज्योतिष पूर्ण रूप से भारतीयों पर लागू होता है। फिर निम्न श्रेणी के लोग ज्योतिष के परिणामों का नहीं कर पाएंगे। एक ने कर्म को छोड़ दिया है जिसके जीवन में कोई नियम या कानून नहीं है। जिसके पास जीवन के उद्देश्य के रूप में केवल अर्थ और काम है। जो पशु प्रवृत्ति में रहता है। जो वेदों, शास्त्रों, पुराणों और इतिहास के मतों को स्वीकार नहीं करता। लोगों के उपरोक्त समूहों को ज्योतिष से कोई लाभ नहीं मिलता है। ज्योतिष केवल उन लोगों के लिए फायदेमंद है जो जीवन के नियमों और विनियमों में दृढ़ विश्वास रखते हैं। ज्योतिष का काम है भविष्य का अनुमान लगाना। भविष्य में होने वाली संभावित अच्छी चीजों की खोज में सोचना और भविष्य के नुकसान से बचने के लिए ज्योतिषीय सिद्धांतों का प्रमुख लाभ है। इस प्रकार यह उस व्यक्ति के लिए अत्यधिक उपयोगी है जो एक सिद्धांतवादी जीवन व्यतीत करता है। वृद्धि के कारण दीर्घायु और संशोधन खगोल विज्ञान द्वारा निर्धारित किए जाते हैं। किसी व्यक्ति के विचार के कारण सुख और दुख ज्योतिष द्वारा निर्धारित किए जाते आयुर्वेद दो प्रकार की बीमारियों से संबंधित है। शारीरिक और मानसिक। प्रोगा का अर्थ है रोग, जो दुरू ख का पर्याय है। रोग निवृत्ति या बीमारी का इलाज खुशी का पर्याय है। विदेशी आहार से बेहतर देसी जड़ी–बूटी और देशी आहार बीमारियों को दूर करने में सक्षम है। दक्षिण भारत के लोग चावल के साथ सहज हैं जबकि उत्तर भारत के लोग गेहूं के साथ सहज हैं। उसी प्रकार सरसों का तेल स्वास्थ्य के लिए अनुकूल है और उत्तर भारत में बड़े पैमाने पर उपयोग किया जाता है, जबकि दक्षिण भारत में यह रोग का कारक है। इस प्रकार, आयुर्वेद को देसाध्याम (किसी विशेष स्थान के लिए अनुकूल) और देशाचारम (विशेष स्थान के लोगों की आदतें) के सिद्धांत का उपयोग करके लागू किया जाना है। इस प्रकार भूगोल आयुर्वेद और ज्योतिष दोनों के लिए प्रासंगिक है। ज्योतिष और आयुर्वेद दोनों ही जीवन की चार प्रमुख वस्तुओं के अधीन हैं। धर्म,अर्थ, काम और मोक्ष। ये दोनों विज्ञान जीवन की सात्विक पद्धति को निर्धारित करते हैं। आयुर्वेद और ज्योतिष दोनों का एक सामान्य उद्देश्य है और दुःख को रोकना। सुख को बढ़ावा देना एक महत्वपूर्ण क्षेत्र जहां आयुर्वेद ज्योतिष का समर्थन करता है वह बच्चों के जन्म के संबंध में है। संताना अरिष्ट, संतानाभाव और विकलांग बच्चों के जन्म को ज्योतिष द्वारा भविष्यवाणी की जा सकती है। यदि आयुर्वेद द्वारा बताए गए उपायों को ईमानदारी से लागू किया जाए तो ज्योतिष द्वारा की गई अनिष्टकारी भविष्यवाणी को सफलतापूर्वक दूर किया जा सकता है। प्रत्येक संशोधन के लिए एक कारण होना चाहिए। ज्योतिष में हर परिणाम की भविष्यवाणी के लिए एक निमिथाकरण होना चाहिए। जब वह निमिथकर्ण अनुपस्थित होगा तो कोई प्रतिकूल परिणाम नहीं होगा। खगोल विज्ञान में भी निमिथकरण की अनुपस्थिति परिणाम को विफल कर सकती है। घने बादल छा सकते हैं। लेकिन हवा के अभाव में किसी स्थान विशेष पर वर्षा नहीं होगी। कारण प्रभाव की ओर ले जाता है। परिणाम उत्पन्न करने के लिए समवयाकरण (प्रत्यक्ष कारण), असमव्याकरण (अप्रत्यक्ष कारण) और निमिथकरण (कुशल कारण) सभी की आवश्यकता होती है। यहां तक कि जब सामवाया और असमवायकरण उपस्थित होते हैं, निमिथकर्ण की अनुपस्थिति परिणाम को निष्फल कर देती है। उदाहरण के लिए, बीज समवयाकरण है, पृथ्वी असमवयाकरण है और वर्षा निमिथाकरण है। इस प्रकार यदि पति की कुंडली के अनुसार पति दीर्घायु होता है, जो कि विधवापन के लिए एक निमिथाकरण है, तो विधवा होने का परिणाम स्त्री नहीं हो सकता। दोनों कुण्डलियों में संतान योग हो सकता है लेकिन संभोग करना निमिथकर्ण है। धन योग कुंडली में उपस्थित हो सकता है लेकिन उपयुक्त प्रयासों के अभाव में फलीभूत नहीं होगा। कुण्डली से यह पता चल सकता है कि व्यक्ति उच्च पद प्राप्त करेगा और प्रसिद्ध होगा लेकिन यहाँ फिर से इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए कड़ी मेहनत और अथक प्रयास की आवश्यकता है। रसोई घर में खाना पकाने के लिए आवश्यक सब्जियाँ और अन्य सभी सामग्री हो सकती है, लेकिन यदि रसोइया अनुपस्थित है, तो भोजन कभी तैयार नहीं होगा। चीजों (चौतन्य) को सक्रिय करने के लिए शक्ति की आवश्यकता होती है और यह वह है जिसकी हम अब निमिथकर्ण के बैनर तले चर्चा कर रहे हैं और इसकी अनुपस्थिति काम को पूर्ववत सुनिश्चित करेगी, भले ही उस कार्य के लिए आवश्यक अन्य सभी चीजें उपलब्ध हों।

टिप्पणियाँ और संदर्भ

1) रक्षत्येनम तु बुधयोगः (मुद्राक्षेश, च 1, प्रस्तावना, विदुषक वचनम)

2) पुरुषार्थ चिंतामणि, पृष्ठ 433)

3) "यदुपचितम अन्य जन्मनि शुभसुबं तस्य कर्मनाः पक्तिम व्यांचयति शास्त्रम एतत् तमासी द्रव्यनि दीपा एवष (प्रसना मार्ग, च 1, वे 36)

4) पापम करामेथी दासदा (अष्टांग हृदयम, सूत्रस्थानम, अध्याय प् वे 22)

5) अथापरम दिव्यः (वराहमिहिर होरास्त्रम, पृष्ठ

सौरभ कुमार

शोध छात्र सह सहायक प्राध्यापक

फेकू महतो संस्कृत महाविद्यालय,

छपकि बेगूसराय (बिहार)

पिन–851131 मो– 9934432395

Email id:& spatel- bihar@gmail-com

जनपद बलिया के नगरीय विकास एवं विस्तार पर परिवहन मार्गों का प्रभाव तथा वर्तमान समस्याएं । खरडीहा पीजी कालेज गाजीपुर

जागृति विश्वकर्मा, डॉ रत्न प्रकाश द्विवेदी

सारांश

किसी भी नगर के विकास के लिए तथा उसके समय के साथ निरंतर वृद्धि के लिए परिवार मार्गों का सुलभ सुगम्य होना अति आवश्यक है ।

विश्व की जितनी भी विकसित नगर एवं फली –फुली प्राचीनकाल के नगरीय सभ्यता थे उसमें सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण भूमिका सड़क मार्ग का ही रहा है । परिवहन अर्थव्यवस्था के विकास के लिए महत्वपूर्ण कारक है । परिवहन विभिन्न प्रदेशों के बीच

संबंधों का प्रतीक है । किसी दो प्रदेशों के बीच मांग तथा उसकी आपूर्ति और आवागमन की सुविधा परिवाहन मार्ग के कारण ही संभव होता है ।

प्रस्तावना–जिस प्रकार हमारे मानव शरीर को संचालित करने के लिए रक्त की नाड़ियों की जरूरत है। उसी प्रकार हमारे मानवीय जीवन तथा अर्थव्यवस्था को चलाने के लिए सड़क मार्गों और परिवहन साधनों की आवश्यकता अति जरुरी है ।

किसी भी राष्ट्र के विकसित होने के लिए परिवहन मार्गो का दुरुस्त होना चाहिए , जिस प्रदेश या राष्ट्र का परिवहन मार्ग विकसित है वह राष्ट्र या प्रदेश को प्रगतिशील होने से कोई नहीं रोक सकता है । वर्तमान में जनपद बलिया में भी परिवहन मार्गो का विकास तेजी से हुआ है तथा कई मार्ग जो जनपद के विकास करने के लिए अति महत्वपूर्ण होंगे नगर के कायाकल्प के लिए जरूरी होंगे प्रस्तावित हैं ।

उद्देश्य– जनपद बलिया के नगरीकरण एवं विस्तार पर परिवहन मार्ग की भूमिका क्या है वर्तमान के परिपेक्ष्य में ।

1. नई सड़कों के बनने से मार्गों में चौड़ीकरण और सुधार कार्य होने से बलिया के नगरी क्षेत्र तेजी से बाह्य क्षेत्रों की ओर विस्तार कर रहें हैं जिससे नगरों में विकेंद्रीकरण की प्रवृत्ति देखने को मिल रही है ।
2. नगरीय विकेंद्रीकरण का प्रभाव अन्य छोटे कस्बाई केन्द्रों पर भी पड़ेगा तथा अन्य छोटे केंद्रों में भी सतत रूप से सड़कों के चौड़ीकरण तथा लगातार सुधार में इनका भी विकेंद्रीकरण हो रहा है इस सबका प्रभाव पुरे जनपद के दृष्य को आज बदल कर रख दिया है इनका अध्ययन सामिल है ।
3. जनपद के अन्य क्षेत्रों में भी इसका विभिन्न दृष्टिकोणों से प्रभाव होगा जैसे लोगों की जीवनशैली में बदलाव उपभोग के नए आयाम आदि का अध्ययन शोध–पत्र में सामिल किया गया है ।
4. परिवहन मार्गों की वर्तमान समस्याओं पर एक विवरण प्रस्तुत किया जाएगा जिसका मुख्य उद्देश्य है जनपद बलिया की इन समस्याओं पर ध्यान आकर्षित करना जो इस शोध–पत्र में सामिल है ।
5. जनपद बलिया के मुख्य नगर तथा अन्य गौड़ नगर कस्बाई क्षेत्रों में आज परिवहन मार्गों के लगातार सुधार से कैसे इसमें बदलाव आ रहें हैं इसका अध्ययन इस शोध पत्र में सामिल है ।

शोध विधि––प्रस्तुत शोध पत्र को पुरा करने के लिए औलोकनात्मक तथा वर्णात्मक विधि का प्रयोग किया गया है तथा साथ ही आवश्यकता अनुसार कुछ आंकड़ों का प्रयोग किया गया है ।

अध्ययन क्षेत्र– अध्ययन क्षेत्र में बलिया जनपद के मुख्य नगर तथा कस्बाई नगरों को सामिल किया गया है ।

लगभग एक दशक पूर्व जनपद बलिया एक बहुत पीछड़ा हुआ जिला हुआ करता था । लेकिन इन दसकों से करीब 2010 और 2011 से जिले की सड़क तथा रेला मार्गों में तीव्रता से प्रगति हुई है । इससे पहले जनपद की सड़कें वन लेन हुआ करती थी और सड़कों की हालत भी बहुत ज्यादा खराब थी । 2014 के बाद जनपद की प्रत्येक सड़कों को वन लेन से टू लेन किया जाने लगा तथा इनकी चौड़ाई भी बढ़ाई गई । जिस कारण नगर का विकेंद्रीकरण तीव्र गति से चौड़े और मुख्य मार्गों के सहारे होने लगी है । अब नगर का फैलाव धीरे–धीरे मुख्य मार्गों के सहारे कस्बाई इलाकों में बढ़ रही है ।

जैसे कि नगर की उत्पत्ति के बाद नगर की क्रमिक विकास एवं विस्तार सतत रूप से चलना एक समान्य प्रकिया है ।

प्रायरू प्रत्येक नगर की विकास भी प्रारंभिक अवस्थाओं में किसी न किसी नाभिक केंद्र का योगदान रहता है।इसका सर्व प्रमुख कारण अभिगम्यता तथा परिवहन मार्गों का होता है ।

जहां से नगर का विकास प्रारंभ होता है उसके बाद नगर के विकास में कई नाभिक केंद्र अपना–अपना योगदान देने लगते हैं तथा जैसे–जैसे परिवहन मार्ग की सुविधा उत्पन्न होने लगी है , सड़कों का विकास सड़कों की चौड़ाई बढ़ने लगती है नगर का विकास तथा विस्तार सतत एवं कार्मिक रूप से होने लगता है ।

साथ ही उस नगर विशेष में कुछ क्रियाओं का विशिष्टिकरण भी होने लगता है ।

वर्तमान में यह तथ्य जनपद बलिया में भी अभिलक्षित हो रही है ।

जनपद बलिया में 6 तहसील और कस्बाई क्षेत्र हैं , जिसका नगरीय विस्तार तेजी से हो रहा है , इसका एक मुख्य कारणों में से है सड़क मार्ग में सुधार और चौड़ीकरण का होना ।

जनपद बलिया में 2001 में में 9 कस्बाई क्षेत्र थे , जिनका तेजी से विस्तार तथा विकास हो रहा है तथा वतर्मान में यहां 12 कस्बा हो गए हैं , जिसका मुख्य कारण तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या और मुख्य सड़कों के चौड़ीकरण तथा मरम्मत कार्य है । इन कस्बाई केंद्रों में आकर मुख्य तथा गौड़ सड़क मार्गों का संगम होता है । जिससे एक नगर की पुरी आवश्यक दशाएं उपस्थित हो गई है । इन केन्द्रों की जनसंख्या भी उत्तरोधर बढ़ती जा रही है तथा सड़क मार्गों का लगातार विकास हो रहा है । यहां पर 12 कस्बा हैं , जो एक नगरीय नाभिक केन्द्रों में उभर रहे हैं ,जिसका नाम निम्नलिखित है ।

जनपद मुख्यालय बलिया (नगरपालिका)

रसड़ा (नगरपालिका)

चितबड़ागांव गांव(टाउन एरिया)

रेवती
बांसडीह (टाउन एरिया)
सिकंदरपुर
सहतवार (टाउन एरिया)
बेल्थरा रोड (टाउन एरिया)
मनियर,
बैरियां ,
रतसड़कला ,
बहेरी

उपर्युक्त क्षेत्र एक आदर्श नगरीय केन्द्र बन चुकें हैं । जिनकी उत्पति परिवहन मार्गों का संगम बिन्दु है ।

बलिया नगर – जनपद बलिया का मुख्य नगर बलिया है यह,एक नगरपालिका है तथा जनपद का सबसे बड़ा नगर है । जो पुरे जिले का मुख्यालय भी है । इसके नाभिक केन्द्रों को देखा जाए तो इसकी उत्पत्ति को देख शहीद पार्क का केन्द्र है यहां कई सड़कों का जंक्शन प्वाइंट है जहां पर एक शहीद पार्क है । उसको चौक भी कहा जाता है ।

सिनेमा रोड
आर्य समाज रोड
लोहा पट्टी
गुदरी बजार रोड
स्टेशन चौक रोड
काशिम बजार रोड

यानी पुरे 6 सड़कें आकर एक जगह मिलती है । यह तारा प्रतिरूप में विकसित हुआ है तथा पुरे जनपद का मुख्य केन्द्र है ।

जहां प्रत्येक रोड एक कार्यात्मक विषेशीकर के कारण विकसित हुआ है ।

इससे यह प्रतित है कि यहां कई सड़कों के जंक्शन प्वाइंट होने के कारण यह बलिया नगर का , नाभिक केन्द्रबिंदू है तथा सीबीडी है । जहां से नगर का जन्म तथा विकास और विस्तार की सुरुआत हुई , यहां मुख्य रूप से व्यापारिक दुकानें पाई जाती हैं । रेडीमेड कपड़े , बर्त ठीक इसि प्रकार अन्य छोटे कस्बाई नगरों का भी विकास एवं विस्तार तेजी से हो रहा है । जैसे रसड़ा , बांसडीह, सिकंदरपुर ,चितबड़ागांव गांव(टाउन एरिया)रेवती ,बांसडीह (टाउन एरिया),सहतवार (टाउन एरिया),बेल्थरा रोड (टाउन एरिया),मनियर, बैरियां ,रतसड़कला आदि गौड़ नगरी क्षेत्र ।

जिले के विकास के लिए प्रस्तावित नए मार्ग

ग्रीन फील्ड एक्सप्रेस – गाजीपुर से मांझी तक बनने वाला ग्रीन फील्ड एक्सप्रेस–वे जिले के विकास को दोगुना कर देगी ,यह एक्सप्रेस–वे जनपद बलिया के दो तहसील तथा 98 गांवों से होती हुई गुजारेगी । पुराने मार्ग छ.भ् 31 स्थान पर अब गांजीपुर से मांझीघाट कर चार लेन के ग्रीन फील्ड एक्सप्रेस–वे का निर्माण होगा । इसके निर्माण के बाद यह एनएच–31 का स्थान ले लेगा. पुराने एनएच–31 को स्टेट के हवाले कर दिया जाएगा. ग्रीन फील्ड एक्सप्रेस–वे लगभग 118 किमी लंबा होगा और ये गोरखपुर–वाराणसी एनएच 29 पर गाजीपुर के जंगीपुर के पास से निकलेगा ।

पूर्वांचल एक्सप्रेस–वे लिंक रोड – बलिया ग्रीनफील्ड एक्सप्रेस–वे को पूर्वांचल एक्सप्रेस–वे से लिंक करने के लिए 23.700 किमी लंबा लिंक एक्सप्रेस–वे भी बनाया जाएगा. इसका भी रूट तय हो गया है. ये ग्रीनफील्ड एक्सप्रेस–वे से बलिया का पाहतीखा से निकलेगा. एकौनी, शाहपुर, बढ़वलिया से गाजीपुर जनपद के मुहम्मदाबाद तहसील के शाहपुर, देवाजीत, पलिया, मानसपुर, खालीपुर, भरौली होते हुए पूर्वांचल एक्सप्रेस–वे में मिल जाएगा.

हल्दिया से वाराणसी जलमार्ग – जो बलिया जनपद से होते हुए वाराणसी होते हुए जाता है जहां पर क्रूज , और व्यापारिक माल वाहक नावें चलाई जाएगी ,उजियार घाट और कोरंटाडीह दो घाट बनाया जाएगा जहां जहाजे आकर ठहरेंगी माल उतारना और चढ़ाना यहां से किया जाएगा साथ ही यात्रियों को भी यहां से यात्रा के लिए स्टापेज विकसित होगा । घाटों का उद्देश्य घाटों को व्यापारिक केंद्र और पर्यटन स्थल के रूप में विकसित करना है ,क्योंकि इन स्थानों पर क्रूज आकर रुकेंगे जिससे कि यह घाट व्यापारिक केंद्र के रूप में विकसित होगा. साथ ही पर्यटक भी आएंगे. । बनारस और हल्दिया के बीच क्रूज चलेगी जिसका स्टॉपेज पॉइंट उजियार घाट होगा जहां पर क्रूज़ आकर रुकेंगी. व्यापारिक केंद्र के विकसित हो जाने पर पर्यटकों का आगमन होगा. पर्यटक को किसी प्रकार की असुविधा ना हो इसके लिए घाटों पर स्टाल लगाई जाएगी साथ ही जर्जर हो गए भवनों का पुनर्निर्माण किया जाएगा । जिससे जिले आय बढ़ेगी और जनपद का विकास होगा अतः यह जल मार्ग बलिया जनपद के विकास के लिए बेहद लाभकारी होगा ।

जनपद में परिवहन तथा परिवहन मार्गों से संबंधित विभिन्न समस्याएं ।

1. **मोटर वाहनों में तेजी से वृद्धि**– वर्तमान में जिले के लोगों में जैसे–जैसे आय बढ़ रहें हैं निजी वाहनों की खरीद में भी वृद्धि बढ़ रही है । जिससे वर्तमान सड़क मार्गों को चौड़ा करने का लाभ नहीं मिल रहा है । वर्तमान में जनपद बलिया में वन लेन की सड़कों को 2 लेन में तेजी से किया गया पर वाहनों की संख्या में उतरोतर वृद्धि के कारण यह टू लेन की चौड़ी सड़कें कम पड़ रही है ।

2. **जनपद में जाम की समस्या**– अन्य नगरों की भांति ही जनपद में भी जाम की समस्या दिन प्रति दिन गहरी होती जा रही है ,आज से कुछ दसक पहले जाम की समस्या बहुत कम थी पर वर्तमान में सड़कों पर घनघोर जाम की समस्या बनी हुई है । शहर में मात्र एक फ्लाईओवर है, लेकिन इसका भी निर्माण ऐसे हुआ है कि इसका खास प्रयोग नहीं हो पाता है। त्योहारों के मौसम में जाम की समस्या और भयानक हो जाती है जिसका कारण है सड़क मार्गों की चौड़ाई में कमी बढ़ती हुई जनसंख्या के बढ़ोतरी । एक और मुख्य कारण है । निजी तथा कमर्सियल वाहनों का शहर में तेजी से बढ़ोतरी और आवागमन का होना ।

3. **सड़कों का डैमेज होना**– वर्तमान जनपद में सड़कों का विकास तो हुआ पर आज भी सड़कें बहुत लम्बी अवधि तक नहीं टिक पाती है , कुछ ही सालों में सड़कें टूट फूट जाती है सड़कों पर गड्ढों के हो जाने से सदैव समस्याएं होती रहती है । बरसात के मौसम में

सड़कों पर पानी लग जाने से यह और भी ज्यादा खतरनाक हो जाती है , जिसकी वजह से आवागमन प्रभावित होता है तथा इधन की भी खपत ज्यादा होते हैं सबका दुर्घटना में भी खराब सड़कों के कारण वृद्धि होती जा रही है । आदि तमाम पत्रकार की समस्याएं आज भी बरकरार है जो परिहन मार्गों की मुख्य समस्याओं में आती है ।

4. मार्ग अतिक्रमण की समस्या— सड़क मार्गों पर अतिक्रमण वर्तमान की बहुत बड़ी समस्या है । जनपद के हर एक नगर, टाउन विकासखण्ड आज यह समस्या से जुझ रहा है । सड़कों पर विभिन्न प्रकार की दुकानों का अतिक्रमण ढेला ,खमचा ,आदि के का अतिक्रमण हो गया है । जिले में कोई ठोस पार्किंग की व्यवस्था ना होने के कारण आटो, टैक्सी का स्टैंड मुख्य मार्गों पर ही लगता है। जिससे आए दिन सड़कों पर भीड़ और जाम लगा रहता है । जनपद मुख्यालय बलिया में सबसे ज्यादा अतिक्रमण सिनेमा रोड ,स्टेशन चौक रोड ,हास्पीटल रोड ,कासिम बजार रोड ,ओवर ब्रिज के नीचे आदि स्टेशन रोड पर अतिक्रमण की समस्या बेहद गहरी है , तथा प्रशाशन के लिए एक चुनौतीपूर्ण कार्य हो गया है । क्योंकि इनके लिए स्थाई या अस्थाई कल्पिक व्यवस्था अभी तक प्रशाशन की तरफ से नहीं मुहैया कराया गया है ।किंग की समस्या बेहद गंभीर है ।

निष्कर्ष— अर्थात निष्कर्ष यही निकलता है कि किसी भी नगरों के विकास और विस्तार के लिए सबसे पहली आवश्यकता दशाएं सड़क या रेल मार्गों की ही होती है , जैसे क्रमवार देखें तो सबसे पहले एक दो मकान बनते हैं , फिर उन मकानो को सेवाएं देने के लिए दुकान विकसित होने लगते हैं । जहां पर लगातार जनसंख्या वृद्धि होती है तथा जनसंख्या द्वारा वस्तुओं की मांग भी बढ़ने लगती है और मांग की सुगमता से आपुर्ति करने के लिए परिवहन मार्गों ,तथा रेल मार्गों का दुरुस्त होना आति आवश्यक होता है । बलिया जनपद भी अब सड़क और रेल मार्ग में लगातार विकास कर रहा है जिससे यहां पर नगरों का विकास तो हो रहा है , नगर का तेजी से मुख्य सड़क मार्ग के किनारे दुकानों और आवासों का विकेंद्रीकरण भी हो रहा है ।

संदर्भ ग्रंथ सूची —

- गर्ग एच.एस नगरीय भूगोल पृष्ठ संख्या 32—33
- ***Saxena H.M*¼ 2018½ *transport geography***
- बैष्णव डॉ अखिलेश (2021) परिवहन भूगोल
- कुमार गणेश पाठक (2021) बलिया का भूगोल
- सिंह जगदीश एवं सिंह के.एन (2013—14) आर्थिक भूगोल के मूल तत्व
- बलिया सांख्यिकी पत्रिका 2001 , 2011
- बलिया गैजिटीयर ।

शोध निर्देशक

डॉ0 रत्न प्रकाश द्विवेदी

शोध छात्रा

जागृति विश्वकर्मा

भूगोल विभाग

खरडीहा पीजी कॉलेज ,

गाजीपुर

पण्डितराज जगन्नाथ के अनुसार रस विरोध एवं परिहार

Anju Bala

सारांश

भूमिका :

संस्कृत के साहित्यशास्त्रियों ने काव्य को दो भागों में विभक्त किया है, ,क दृष्य और दूसरा श्रव्य । दष्य काव्य को देखने से और श्रव्य काव्य को सुनने से सहृदय सामाजिक को जिस लोकोत्तर आनंद का अनुभव होता है, उसे साहित्याचार्यो ने रस कहा है । इस सम्प्रदाय के संस्थापक के रूप में महर्षि व्यास तथा भरतमुनि को माना जा सकता है । महर्षि व्यास अग्निपुरा.ा में कहते हैं कि –

'वाग्वैदग्ध्यप्रधानेऽपि रस ,वा= जीवितम् ।'

इसी प्रकार आचार्य भरतमुनि ने भी अपने प्रसि) ग्रंथ 'नाट्यशास्त्र' में रस के विषय में कहा है कि –

'तत्र विभावानुभावव्यभिचारिसंयोगाद् रसनिष्पत्तिः ।'

अर्थात् विभाव, अनुभाव व संचारीभाव के संयोग से रस की निष्पत्ति होती है । आचार्य आनन्दवर्धन ने भी रस को ध्वनि मानकर काव्य की आत्मा ध्वनि स्वीकार की है । आचार्य मम्मट ने भी रस का स्वरूप करते हुए कहा है कि लोक में रति आदि रूप स्थायी भाव के जो कार.ा, कार्य और सहकारी कार.ा होते हैं, वे यदि नाटक या काव्य में प्रयुक्त होते हैं तो क्रमशः विभाव, अनुभाव और व्यभिचारिभाव कहलाते हैं । उन विभावादि से व्यक्त वह स्थायी भाव 'रस' कहलाता है ।

रस का अर्थ :

रस शब्द रस् धातु से 'घञ्' प्रत्यय करके निष्पन्न हुआ है । यह धातु आस्वाद इस अर्थ में प्रयुक्त होती है । जैसे –'रस्यते इति रसः ।'

अर्थात् जिसका आस्वाद किया जा, वह रस है ।

रसों की संख्या : रसों की संख्या के सम्बन्ध में आचार्यों में बहुत मतभेद रहा है । रस का सर्वप्रथम वर्णन करने वाले भरतमुनि ने नाट्यशास्त्र में रसों की संख्या आठ मानते हए कहा है कि –

"शृंगारहास्यकरुणा, रौद्रवीरभयानकाः ।
बीभत्सादभुत संज्ञौ चेत्यष्टौ नाट्ये रसा स्मृताः ।।"

काव्यप्रकाशकार मम्मट ने भी शांत रस को मानते हुए रसों की संख्या नौ मानी है –

'निर्वेदस्थायिभावोऽस्ति शान्तोऽपि नवमो रसः ।'

पण्डितराज जगन्नाथ ने रसगंगाधर में शांत रस को स्वीकार करते हुए रसों की संख्या नौ मानी है ।

'शृंगारः करुण शान्तो रौद्रो वीरोऽद्भुतस्तथा ।
हास्यो भयानकश्चैव, बीभत्सश्चेति ते नव ।।'

रस विरोध :

जब कोई रस किसी अन्य रस के साथ व.िीत होने पर उसके आस्वादन में बाधा उत्पन्न करता है तो वहां दोनों रसों में परस्पर विरोध की स्थिति उत्पन्न हो जाती है, इस स्थिति को काव्य में रस विरोध कहते हैं । इन रसों का आपस में किसी रस के साथ विरोध तथा किसी के साथ अविरोध होता है । जिस प्रकार वीर–शृंगार, शृंगार–हास्य, वीर–अद्भुत, वीर–रौद्र में परस्पर अविरोध है और शृंगार – बीभत्स, शृंगार – करुणा, वीर – भयानक, शांत रौद्र, शान्त – शृंगार में परस्पर विरोध है ।

विरोध होने का अर्थ यह है कि ,क रस के परिपाक के समय दूसरे विरोधी रस का वर्णन रस भंग कर देता है । ऐसी स्थिति में प्रकृत रस की अभिव्यक्ति में विरोधी रस बाधक बन जाता है। एक रस दूसरे रस को अनास्वाय बना देता है और सुन्दोपसुन्द न्याय से दोनों रस नष्ट हो जाते हैं ।

सुन्द और उपसुन्द की कथा महाभारत में आती है। ये दोनों सहोदर भाई थे । ब्रह्मा जी के वरदान से दोनों ही अवध्य हो गए,, केवल अपने भाईयों में से एक–दूसरे को मार सकते थे, जिसकी कोई संभावना नहीं थी, परंतु भावी की गति प्रबल होती है, किसी सुन्दर अप्सरा पर दोनों आसक्त हुए, जिससे दोनों में बैर उत्पन्न हुआ और उसके लि, दोनों आपस में लड़कर मर मिटे । इस तरह दोनों के समान बलशाली होने के कार.ा आपस में लड़कर नष्ट हो जाने के ढंग को 'सुन्दोपसुन्द' न्याय कहते हैं ।

रस विरोध दो प्रकार का होता है –

1. स्थिति–विरोध
2. ज्ञान–विरोध

(1) स्थिति विरोध :

किसी एक अधिकरण में दोनों का न रह सकना स्थिति–विरोध कहलाता है जिस प्रकार नायक में वीर रस विद्यमान है तो उसमें भयानक रस नहीं रह सकता । इस प्रकार वीर और भयानक का एक ही अधिकरण (नायक) में रहना स्थिति–विरोध है ।

(2) ज्ञान–विरोध :

एक विषय के ज्ञान से दूसरे विषय के ज्ञान का बाधित हो जाना ज्ञान–विरोध है । यथा नायिका के विषय में यदि यह ज्ञान हो कि 'यह गम्या है' तो उसी के विषय में 'यह अगम्या है' यह ज्ञान बाधित हो जाता है अर्थात् दोनों विरोधी ज्ञान ,क ही समय में ,क ही विषय के प्रति नहीं हो सकते, यही ज्ञान–विरोध है ।

परिहार :

पण्डितराज जगन्नाथ द्वारा इन रस विरोध के परिहार के निम्नलिखित उपाय बताए, गए, है –

स्थिति विरोध का परिहार :

दोनों विरोधी रसों को एक अधिकरण से बाहर निकालना स्थिति विरोध का परिहार है । उदाहरण –

कु.डलीकृतकोद.ड–दोर्द.डस्य पुरस्तव ।
मृगारातेरिव मृगाः, परे नैवावतस्थिरे ।।

कोई कवि राजा की चापलूसी करता है –

हे राजन् ! यु) में जब आपने कान तक खींच कर कुण्डल के समान गोल किये हुए धनुष को हाथ में लिया, तब आपके आगे शत्रु उसी तरह नहीं ठहर सके, जिस तरह सिंह के आगे मृग नहीं ठहरते

अर्थात् धनुष लेकर यु) में आपके जाते ही भय के मारे शत्रु भाग खड़े हु, । यहां नायक में 'वीर' और प्रतिनायक में 'भयानक' रस का वर्णन किया गया है, जो भिन्न अधिकरण में स्थिति होने से दोषाधायक नहीं है ।

ज्ञान–विरारेध का परिहार :

ज्ञान–विरोध का परिहार करते हुए पण्डितराज जगन्नाथ कहते हैं कि दो विरोधी रसों के मध्य में किसी तीसरी अविरोधी रस का वर्णन करने पर ज्ञान–विरोध समाप्त हो जाएगा अर्थात् जिन दो रसों में परस्पर विरोध है उनके मध्य में कोई तीसरा रस अविरोधी हो, वर्णित कर दिया जाए तो ज्ञान–विरोध का परिहार हो जाता है। जिस प्रकार दो विरोधी व्यक्तियों के मध्य में सन्धि कराने वाले तीसरे व्यक्ति की उपस्थिति होना ।

उदाहरण :

'सुरा(नाभिराश्लिष्टा व्योम्नि वीरा विमानगाः।
विलोकन्ते निजान् देहान्, फेरूनारीभिरावृत्तान्।।''

अर्थात् (यु) में मरे हुए) देवागनाओं से आलिति आकाश में (स्वर्ग की ओर) विमान से जाते हुए वीर, मादा सियारों से धिरे हुए अपने शरीरों को देख रहे हैं । यहां देवा(नाओं को आलम्बन मान कर श्रृंगार–रस और वीरों के मृतक शरीरों को आलम्बन मानकर बीभत्स–रस की प्रतीति होती है और ये दोनों रस परस्पर विरू) है, अतः इन दोनों के मध्य में तदुभयाविरोधी वीर–रस का निवेश किया गया है । यद्यपि वीर–रस व्यन्जक शब्द यहां नहीं हैं, तथापि स्वर्ग लाभ की बात से उनका आक्षेप हो जाता है ।

प्रस्तुत पद्य के प्रारंभ में पहले श्रृंगार रस का आस्वादन होता है फिर वीर रस का तदुपरान्त द्वितीयार्ध में वीभत्स रस का आस्वादन होता है । इस प्रकार श्रृंगार और वीभत्स इन दो विरोधी रसों के मध्य दोनों के अविरोधी वीर रस का आस्वादन होने से ज्ञान–विरोध का परिहार हो जाता है ।

पण्डितराज जगन्नाथ दूसरे प्रकार से रस–विरोध का परिहार करने की युक्ति बताते हैं –

यदि दो रसों में परस्पर भाव अर्थात् पोष्य–पोषक भाव हो तो विरु) होने पर भी उन दोनों में विरोध नहीं होता क्योंकि यदि विरोध हो, तब भाव ही न बने । इसी तरह जहां कोई ,क रस मुख्य हो और उसके से रस हों जो परस्पर विरोधी कहे जाते हो तो वहां भी उन अभूत रसों में विरोध उसी प्रकार नहीं होता, जिस प्रकार किसी ,क राजा के परस्पर विरोधी सेवकों में वह नहीं होता अर्थात् विरोध दो स्वतंत्रों में ही हो सकता है और जब स्वतन्त्रता नहीं तो दोनों ही एक तीसरे के है । तब उनमें विरोध कैसा?

उदाहरण :

'प्रत्युद्गता सविनयं सहसा सखीभिः,
स्मेरैः स्मरस्य सचिवैः सरसावलोकैः।
मामद्य मन्जुरचनैर्वचनैश्च बाले!
हा लेशतोऽपि न कथं वद सत्करोषि।।''

यह सामने मृत पड़ी हुई नायिका के प्रति नायक की उक्ति है – हा बाले ! बोलो, आज तुम, सखियों के साथ शीध्र सामने विनयपूर्वक उपस्थित होकर कामभाव को ज•ाने वाली, विकसित तथा सरस चितवनों से और सुन्दर रचना वाले वचनों से, मेरा कुछ भी सत्कार क्यों नहीं कर रही हो?

प्रस्तुत पद्य में नायिका रूप आलम्बन में नायक की रति, अश्रुपातादि अनुभाव और आवेग, विषाद आदि सन्चारीभावों से अभिव्यक्त होते हैं और इन्हीं सामग्रियों से अर्थात् अश्रुपातादि से नायक का शोक भी व्यक्त होता है । रति और शोक में परस्पर विरोध है तथापि यहां करुण रस की प्रधानता है । रति तो उसका पोषक होने के कारण है । अतः रति और शोक में अभाव सम्बन्ध होने से विरोध का परिहार हो जाता है । प.डितराज ज•न्नाथ तीसरे प्रकार से रस विरोध का परिहार करते है –

जब दो विरोधी रस तीसरे (अंगी) रस के अंग बन जाए तो उनमें विरोध समाप्त हो जाता है ।

उदाहरण –

'उत्क्षिप्ताः कबरीभरं, विवलिताः पार्श्वद्वयं न्यक्कृताः,
पादाम्भोजयगं रुषा परिहृता दूरे.ा चेलान्चलम्।
गृह्णन्ति त्वरया भवत्प्रतिभट मापालवामभ्रुवां,
यान्तीनां गहनेषु कण्टकचिताः के के न भूमीरुहाः।।

कोई कवि राजा की चाटुकारिता करता है कि – हे राजन् ! आपके शत्रुभूत राजाओं (जो आपके भय से सपरिवार जंगल में भाग, है) की जंगल में जाती हुई स्त्रियों की बड़ी दुर्दशा होती है, कौन ऐसे कंटीले वृक्ष है जो उनसे छेड़छाड़ नहीं करते । उन स्त्रियों के द्वारा ऊँचे कि, जाने पर वे वृक्ष केश–नाश को पकड़ लेते हैं टेढ़े कि, जाने पर दोनों बगलों को नोच लेते हैं, नीचे कि, जाने पर दोनों चरण–कमलों को चूम लेते हैं और दूर हटा देने पर भी झट से वस्त्रों के छोर को ही पकड़ लेते हैं ।

प्रस्तुत पद्य में समासोक्ति अलंकार है । यहां प्रस्तुत वृक्षों के व्यवहार से अप्रस्तुत कामी पुरुषों के व्यवहार का ग्रहण हो रहा है । इन दोनों व्यवहारों में से प्रथम अर्थात् वृक्षों के व्यवहार से करु.ा रस की तथा द्वितीय अर्थात् कामी पुरुष के व्यवहार से श्रृंगार रस की अभिव्यक्ति हो रही है । इन दोनों रसों में परस्पर विरोध होते हुए भी विरोध समाप्त हो रहा है, क्योंकि ये दोनों रस यहां राज विषयक रतिभाव के अंग बनकर आ, है, प्रधानता यहां राजविषयक रति की है और ये विरोधी रस उसके पोषक बनकर आ, हैं, अतः विरोध का परिहार हो गया अन्य प्रकार के रस विरोध के विषय में प.डितराज जगन्नाथ कहते हैं –

जहां समान विशेषगों के द्वारा दो विरु) रस अभिव्यक्त हो जो हैं, वहां भी उसका विरोध निवृत्त हो जाता है –

उदाहरण –

'नितान्त यौवनोन्मत्ता गाढ़रक्ताः सदाहवे।
वसुन्धरां समालि(य शेरते वीर! तेऽरयः।।'

अर्थात् हे वीर राजन् ! तुम्हारे शत्रु यौवन में अत्यंत उन्मत्त बने हुए, यु) में गाढ़े रक्त से लथपथ हुए (प्रगाढ़ अनुराग वाले) वसुन्धरा का (नायिका का) आलिंगन करके सो रहे हैं । यहां शत्रुओं के मरणाद्योतक विशेषणों से पहले करुण रस की अभिव्यक्ति हो रही है, तत्पश्चात् उन्हीं विशेषगों से श्रृंगार रस की अभिव्यक्ति हो रही है, परंतु यहां करु.

ा और शृंगार में विरोध इसलिए नहीं है कि वे दोनों समान विशेषगाों से अभिव्यक्त हो रहे हैं ।

निष्कर्ष :

सहृदय सामाजिक को काव्य से रस का आस्वाद होता है, परंतु काव्य में जब विरोधी रस के कार.ा प्रकृत रस के आस्वाद में बाधा आती हैं तब रस विरोध की स्थिति उत्पन्न हो जाती है । अतः काव्य में प्रकृत रस के आस्वाद को निरंतर बनाये रखने के लि, काव्य में विरोधी रसों का निबन्धन इस प्रकार से किया जा, कि उसमें विरोध का परिहार हो जा, । अतः काव्य में दो विरोधी रसों को पृथक्–पृथक् अधिकर.ा में स्थापित करना, दो विरोधी रसों के मध्य तीसरे अविरोधी रस की स्थापना करना, रसों का पोष्य–पोषक भाव में निबन्धन और दो विरोधी रसों का तीसरे रस के अं• रूप में निबन्धन करना आदि रसविरोध के उपयुक्त परिहार हैं ।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1– अग्निपुराणम्: महर्षि व्यास प्रणीत, व्याख्याकारः आचार्य शिवप्रसाद द्विवेदीः चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली

2– काव्यप्रकाश : श्री मम्मटाचार्य प्रणीत व्याख्याकार : डॉ॰ ज्योत्स्ना मोहन प्रकाशक : नाग प्रकाशक, दिल्ली । संस्करण : 1995

3– नाट्यशास्त्र : आचार्य भरत प्र.ाीत व्याख्याकार : डॉ॰ ,न॰ पी॰ उण्णी प्रकाशक : नाग प्रकाशक, दिल्ली संस्करण : 1998

4– रसगंगाधर : पण्डितराज जगन्नाथ प्रणीत व्याख्याकारः पणिडत मदनमोहन झा प्रकाशक : चौखम्बा विद्याभवन वाराणसी । संस्करण 2013

– अग्निपुराण 337 वां अध्याय, पृ॰ 733

– नाट्यशास्त्र, षष्ठाध्याय, पृ॰ 158

– नाट्यशास्त्र, षष्ठाध्याय, पृ॰ 154

– काव्यप्रकाश, चतुर्थोल्लास, पृ॰ 778

– रसगंगाधर, प्रथमानन, पृ॰ 132

– रसगंगाधर, प्रथमानन, पृ॰ 195

– रसगंगाधर, प्रथमानन, पृ॰ 196

– रसगंगाधर, प्रथमानन, पृ॰ 199

– रसगंगाधर, प्रथमानन, पृ॰ 202

– रसगंगाधर, प्रथमानन, पृ॰ 205

Anju Bala
M.Phil, Skt Grammar
anjurohal7898@gmail.com
संस्कृत, पालि ,वं प्राकृत विभा•
कुरुक्षेत्र= विश्वविद्यालय,
कुरुक्षेत्र

61

भीष्म साहनी के उपन्यासों में स्त्री चेतना

डॉ० सुनीता कुमारी

सारांश

भीष्म साहनी नई कहानी दौर के यशस्वी कथाकार हैं भीष्म साहनी ने सोलह वर्ष की उम्र में लिखना शुरू कर दिया था ये उस दौर के कहानी लेखन में सक्रिय हो चुके थे जब नई कहानी आन्दोलन के त्रयी–मोहन राकेश, कमलेश्वर और राजेन्द्र यादव की कहानी चर्चा के केन्द्र में थी। उनकी पहली कहानी 'अबला' शीर्षक से इंटर कॉलेज की पत्रिका 'रावी' में छपी थी। उनकी दूसरी कहानी 'नीली आँखें' जो अमृतराय के संपादन में हंस में छपी थी। उन्हें उनकी कहानी 'चीफ की दावत' से कथाकार के रूप में मान्यता मिली। भीष्म साहनी ने अपनी रचनाओं में नारी के चरित्र की आन्तरिक वृतियों का उद्घाटन कर उसमें यथार्थ का रंग भरने का प्रयास किया है। वर्तमान परिस्थिति में विभिन्न समस्याओं से जूझने वाली नारी का वास्तविक रूप या नवीन चेतना के तहत उसका मनोवैज्ञानिक स्वरूप ईर्ष्या, घृणा, प्रेम तथा वासना का स्पष्ट चित्रण इन पात्रों में मिलता है।

भीष्म साहनी ने हिन्दी साहित्य को सात महत्वपूर्ण उपन्यास दिए। झरोखे (1967) कड़ियाँ, (1970), तमस (1973), बसन्ती (1980), मय्यादास की माड़ी (1988), कुन्तो (1993) नीलू नीलिमा, नीलोफर (2000)। भीष्म साहनी ने अपने सभी उपन्यासों में स्त्री पात्र रचे हैं पर उनमें विविधता बहुत कम है उनके स्त्री पात्रों में परिवर्तन या विद्रोह की सुगबुगाहट तक नहीं है सभी स्त्री–पात्र पचासवें दशक के रोते–झींकते आम भारतीय स्त्री पात्र हैं।

इनके प्रमुख उपन्यास तमस जिसका प्रकाशन वर्ष 1973 है इसमें लेखक ने हिन्दुओं, मुसलमानों और सिक्खों के पारस्परिक वैमनस्य के कारणों, परिणामों और इनसे सम्बन्धित अनेक संदर्भ प्रस्तुत किए हैं। 'तमस' उपन्यास में यूँ तो स्त्री पात्र बहुत कम है लेकिन जो भी हैं वे मानवीय और संवेदनशील हैं। हरनाम हिंस और बन्तों को शरण देनेवाली मुस्लिम परिवार की स्त्री, रिचर्ड की पत्नी लीजा, नात्थू की पत्नी सभी बहादुर हैं वे सभी एक–दूसरे की बहादुरी को जगाती है। राजो हरनाम सिंह की पत्नी बन्तों की जान बचाती है। औरतों का एक पूरा जत्था कुएँ में कूदकर आत्महत्या करता है लेकिन यहाँ स्त्रियों का कुएँ में धलांग लगाना पलायन नहीं है– आत्म बलिदान का यह निर्णय स्त्री चेतना का सशक्त उदाहरण है इस सम्बन्ध में यह उदाहरण समीचीन है– ''प्रवेश करने पर गुरूद्वारे के बायीं ओर स्त्रियाँ–बैठी थीं, सभी ने दुपट्टे से मुँह–सिर लपेट रखा था, सभी के चेहरे दमक रहे थे, सभी की आँखों में कुरबानी का नूर चमक रहा था कि सिख इतिहास की लम्बी श्रृंखला में वह भी एक कड़ी है जो एक संकट के समय अपने पुरूखाओं ही की भाँति आत्मबलिदान के लिए मैदान में उतर रहा है।''1 इनके दूसरे उपन्यास 'बसन्ती' में स्त्री की विवशता का चित्रण किया गया है। राजस्थान में सूखा पड़ने पर बहुत से लोग दिल्ली आकर राजमजदुरी का काम करने लगे, इन्हीं में से एक बसन्ती है, जो रमेश नगर के घरों में चौका–बर्तन करने का काम करती है। बूढ़े, लंगड़े बुलाकी को बेचे जाने का वह मौन विरोध करती हुई अपने प्रेमी दीनू से विवाह कर लेती है, लेकिन वह दीनू एक दिन उसे गर्भवती कर अपने दोस्त बरडू के हाथ तीन सौ रूपए में बेचकर गाँव चला जाता है। बसन्ती का पिता चौधरी उसे सूरी साहब के यहाँ से पकड़कर जबरन उसका विवाह साठ वर्षीय लंगड़े दर्जी बुलाकी राम से कर देता है, इस तरह गर्भवती बसन्ती बुलाकी की पत्नी बन जाती है, प्रेम स्त्री को भावात्मक सम्बल प्रदान करता है जिसके कारण कोई भी स्त्री बड़े फैसले करना भी स्वीकार कर लेती है। बसन्ती विवाहित होने के बाद भी पूर्व प्रेमी दीनू के घर आ जाती है, उसके पूरे परिवार का बोझ उठाती है। दीनू का बच्चा जब बीमार पड़ता है तो उसकी जी–जान से सेवा करती है लेकिन दीनू कभी–भी बसन्ती का अहसान नहीं मानता और अन्ततः अपनी पत्नी और बच्चे को लेकर गाँव चला जाता है। इस तरह हम देखते हैं कि बसन्ती स्त्री के रूप में जन्म लेने के तमाम अभिशाप झेलती है। चौदह साल की बसन्ती चौका–बर्तन करके पैसे कमाती है लेकिन घर में माता–पिता का प्यार रामू को मिलता है क्योंकि वह घर का इकलौता बेटा है। तमाम परिस्थितियों को झेलने के बाद भी उसमें जीवन के प्रति आस्था है। वर्तमान सामान्य नारी के समान वह हारकर आत्महत्या या जिंदगी से भागना नहीं चाहती है। अकेली रहकर वह परिस्थितियों का मुकाबला करती है। उसकी गम्भीरता जिजीविषा उसे हर विपरीत परिस्थिति में उबार लेती है। भीष्म जी स्वयं बसन्ती के बारे में कहते हैं– ''दरअसल इस लड़की के चरित्र ने मुझे ज्यादा प्रभावित किया। मुसीबतों के बीच जिन्दगी को खिलवाड़ समझना, टूट नहीं जाना, अपने स्वभाव की आन्तरिकता को, जो बचपन और अल्हड़ता उसमें है, उसे बनाये रखना जीने का जो भाव है, मौत की स्थितियों में भी उसे मरने नहीं दिया।''[2] बसन्ती सम्पूर्ण नारी जाति को यह सीखाती है कि किस प्रकार सम्पूर्ण ताकत को बटोरकर किस प्रकार संघर्षों से लड़कर जीवन को आगे बढ़ाना है। भीष्म साहनी की इस नायिका बसन्ती में जहाँ स्वतंत्र जीवन जीने की लालसा भीतर तक है वहीं भरा–पूरा जीवन जीने की दुर्निवार आकांक्षा भी। उसे मैले–कुचैले दिशाहीन जिन्दगी को जीते देख बड़ी कोफ्त होती थी। बसन्ती में जीवन है और जीवन की अभिव्यक्ति के जो रास्ते उसने देखे हैं, उसमें जो प्रबल था वह पहली राह खुलते ही अधीरता वश चल पड़ी। ठहरकर विचार करने की स्थितियाँ भी नहीं थी क्योंकि अगर ठहर जाती है तो खुद को बूढ़े बुलाकी के घर पाती।''[3] वह वैयक्तिक और सामाजिक स्तर पर व्यवस्था के विसंगतियों के विरूद्ध खड़ी होती है। वह नए मूल्यों की स्थापना के लिए संघर्ष करती है वह पुरातन जड़ मूल्यों के विरूद्ध विद्रोह करती है। पूंजीवादी व्यवस्था के दुहरे मूल्यों से टकराती है– डॉ0 खगेन्द्र ठाकुर ने इस संदर्भ में लिखा है– ''बसन्ती का चरित्र हिन्दी कथा–साहित्य में सर्वथा नवीन है क्योंकि उसने नये यथार्थ की उपज को पहचाना है और अपनी गम्भीर कला से रंगकर उसे प्रस्तुत किया है। बसन्ती का चरित्र हिन्दी–कथा

साहित्य को उनकी महत्वपूर्ण देन है।''[4]

भीष्म साहनी के उपन्यासों में मूल्यों का परम्परागत स्वरूप नहीं मिलता है और वे आदर्श मूल्यों को अनावश्यक आरोपित करने के भी पक्षधर नहीं है। मानवीय संवेदना और मानवीय मूल्यों के अन्वेषक के रूप में हमारे सामने आते हैं। उनका स्पष्ट मानना है कि ''वही साहित्य कालजयी और श्रेष्ठ होता है जो साहित्य जिन्दगी की कोख में से निकलकर आये। तभी वह विश्वसनीय हो पाता है। ऊपर से निष्कर्ष थोपने से न तो साहित्य सृजन होता है और न ही किसी विचारधारा का प्रचार–प्रसार होता है।''[5]

नीलू–नीलिमा नीलोफर की नीलिमा में अपनी बेचैनी केन्द्रित कर भीष्म साहनी उसे नए युग की आत्मनिर्भर स्वाभिमानी जुझारू स्त्री के रूप में प्रस्तुत करना चाहते हैं। इसलिए आत्मदाह के असफल प्रयास के बाद उसका कायांतरण बेहद अस्वाभाविक एवं नाटकीय ढंग से किया गया। पहले मेरे साथ घटनाएँ घटती थी मैं उन्हें झेलती थी, उनके अनुरूप अपने को ढालती थी। पर अब कभी–कभी मेरे किए पर भी घटनाएँ घटने लगी हैं कर्त्ता की हैसियत में आने के बाद नीलिमा अपने व्यवहार और स्वर में आए परिवर्तन को देख स्वयं हैरान है और मुदित भी ''मैंने देखा है नीलू, जितना अधिक हम अपने दुख और क्लेश के बारे में सोचते हैं, उतना ही हमें अपने पर रहम आने लगता है और उतने ही अधिक हम दयनीय बनते चलते हैं।''[6]

इस उपन्यास के दो प्रमुख पात्र के रूप में नीलू और नीलिमा को प्रस्तुत किया गया है। वास्तव में शीर्षक से तीन मुख्य पात्रों के नाम तो लगते हैं लेकिन नीलोफर के घर में बुलाये जाने वाला नाम ही है नीलू। साहनी जी ने दो संघर्षरत युवतियों नीलू और नीलिमा के जरिए बिल्कुल अलग–अलग दिशाओं में अन्तर्जातीय प्रेम तथा विवाहोपरांत संघर्षों से जूझने वाली नारी की कहानी प्रस्तुत की है। नीलू दिल्ली के महाविद्यालय के छात्र के रूप में हमारे सामने आती है सदा हँसती–मुस्कराती, सबसे हिल मिल रहने वाली तथा विकट परिस्थितियों से संघर्ष करने के लिए तैयार रहती है। वह जानती है कि अलग धर्म के लड़के के साथ सम्बन्ध परिवार वाले कभी भी स्वीकार नहीं करेंगे इसलिए अपने प्रेम को साकार करने हेतु तुरन्त सुधीर के साथ भाग जाती है और मन्दिर में जाकर शादी कर लेती है जिससे नीलू को दोनों परिवार की नाराजगी का शिकार होना पड़ता है। साहनी जी ने प्रस्तुत उपन्यास में दो भिन्न प्रकार के प्रेम सम्बन्ध तथा प्रत्येक भिन्न परिस्थिति में सम्भाव्य समस्याओं को प्रस्तुत की है। एक ओर नीलू अपने प्रेम को बचाने के लिए कुछ भी करने को तैयार हो जाती है तो दूसरी ओर नीलिमा अपने पिता जी और दादी माँ को खुश करने के लिए अपने प्रेम सम्बन्ध को त्यागने तक के लिए तैयार हो जाती है और पिता जी के दोस्त के पुत्र से शादी कर लेती है। मानसिक संघर्ष ही नहीं उसे शारीरिक यंत्रणा भी झेलनी पड़ती है। नीलिमा को अपमानित करना, पीटना, गालियाँ देना ये सभी अधिकार उसके पति सुबोध को प्राप्त है, क्योंकि वह नीलिमा का पति है और भारतीय समाज की पारिवारिक व्यवस्था में पति द्वारा की गई शारीरिक एवं मानसिक हिंसा जायज है। सुबोध द्वारा नीलिमा के साथ शारीरिक हिंसा करने से पिता परेशान है पर नीलिमा की दादी की नजर में यह बात ज्यादा चिंताजनक नहीं है वह अपने बेटे को समझाती है– ''स्त्री पराधीन होती है, बेटा। तुम नई रोशनी के लोग हो तुम्हें कोई क्या समझाये। तुम बराबरी की बातें करते हो पर बेटा, बराबरी नाम की कोई चीज नहीं होती। एक–दूसरे को आँखें दिखाने से कुछ नहीं होता। घर में रहेगी तो भी उसका दर्जा माँ का तो होगा, घरवाली का भी होगा, पर बराबरी का नहीं होगा। तलाक लेगी तो भी उसी की मिट्टी पलीद होगी।''[7] और माँ ने फिर से बेटे की कलाई पर हाथ रखते हुए कहा था– ''लड़की की जून ही अभागी जून होती है, उसे बहुत कुछ भोगना–सहना पड़ता है।''[8] नीलिमा की दादी अपने जीवन की बिडम्बना के बारे में बताते हुए कहती है– ''तेरे बाप ने ही मुझे मेरे मायके भेज दिया था और पूरे तीन साल तक मेरी खोज–खबर नहीं ली थी।''[9]

शादी के बाद नीलिमा कुण्ठा की जिंदगी जीती है। नीलिमा का जीवन तो उत्पीड़न का पर्याय ही बना हुआ है– लेखक कहते हैं– ''उसी क्षण उसकी (सुबोध) नजर नीचे फर्श पर पड़ी। पास में खड़ी नीलिमा नंगे पाँव खड़ी थी। यह चप्पल पहनकर क्यों नहीं आई। नंगे पांव चली आई हो। सुबोध का पारा तेज हो गया वह बौखला उठा, नंगे पांव चली आई हो। वर्मा जी के घर?और छूटते ही जोर का थप्पड़ नीलिमा के गाल पर दे मारा''[10] इस उपन्यास में स्त्री जीवन की दुरूहस्थितियों का अंकन हुआ है। उपन्यास के अन्त में नीलिमा अपने पत्र में स्त्री जीवन की दुखद स्थिति के बारे में लिखती है– ''यो तो स्त्री का जीवन ही नाटकमय होता है। पैदा होती है तो भी नाटक इन्तजार बेटे का हो रहा होता है, पहुँच बेटी जाती है। सभी की आशाओं पर पानी फेरती हुई। मुबारक देने वाले कम होते हैं, दम–दिलासा देने वाले अधिक। लड़की बड़ी होने लगती है तो भी नाटक–सुन्दर निकलेगी या असुन्दर? लड़की का जन्म भी नाटक, उसका विवाह भी नाटक, जिस घर में ब्याह कर जायेगी, उस घर में उसका भविष्य कैसा होगा?जीवन के हर मोड़ पर नाटक होते रहेंगे।''[11]

निष्कर्ष :

इस तरह हम देखते हैं कि भीष्म साहनी के उपन्यासों की स्त्रियाँ पितृसत्तात्मक समाज में स्त्री की प्रामाणिक तस्वीर पेश करती है, बदलाव की माँ तो नहीं करतीं पर ऐसे कई सबाल खड़े करती हैं जिनके उत्तर खोजे जाने हैं साथ ही वर्तमान समाज में किस प्रकार नारी को यातनाओं से गुजरकर हारे बिना, साहस के साथ, आत्मनिर्भर होकर पितृसत्तात्मक समाज से लड़कर जीवन बिताना है यह संदेश भी प्रस्तुत करती है।

संदर्भ सूची

1. भीष्म साहनी – तमस, पृ. 171
2. मेरे साक्षात्कार, भीष्म साहनी, पृ. 77
3. नया पथ : भीष्म साहनी विशेषां, अप्रैल–सितंबर, संयुक्तांक, 2015, पृ. 145 (उड़ान की तैयारी लेख से)
4. डॉ0 खगेन्द्र ठाकुर, सिजीविषा और व्यवस्था का टकराव, आलोचना जनवरी, मार्च, अप्रैल–जून, 1983, पृ. 65
5. भीष्म साहनी, आज के अतीत, नई दिल्ली, राजकमल प्रकाशन, 2003, पृ. 267
6. भीष्म साहनी, नीलू नीलिमा–नीलोफर, पृ. 194
7. भीष्म साहनी, नीलू नीलिमा नीलोफर, पृ. 135
8. वही, पृ. 134 9. वही, पृ. 133

डॉ० सुनीता कुमारी

सहायक प्राध्यापक

विश्वविद्यालय हिन्दी विभाग

राँची विश्वविद्यालय,

राँची मो0 : 9470368260

भारती के उपन्यासों में विवाह–सम्बन्ध : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ० कृष्णा हुड्डा

सारांश

समाजिक संस्थाओं में विवाह का स्थान सर्वोपरि है। सुव्यवस्थित रुप से सृष्टि को संचालित करने, पारिवारिक जीवन को मधुर बनाने तथा सामाजिक जीवन में काम भावना को पवित्रता का आकार प्रदान करने का श्रेय विवाह को ही है।[1]

विवाह की पद्धति आधुनिक पद्धति नहीं, परम्परागत एवं सनातन पद्धति है। हमें अनेक ऐतिहासिक पुरुषों के विवाह का विवरण पुराणों आदि ग्रन्थों से मिलता है। 'श्रीमद्भागवत पुराण' में कृष्ण और रुक्मणी के, 'श्री रामचरितमानस' में राम और सीता के, महाभारत में अर्जुन और सुभद्रा के विवाह का प्रसंग मिलता है। इससे सहज ही निष्कर्ष निकलता है कि विवाह की पद्धति कोई नवीन नहीं है। डॉ० स्वर्णलता का कथन है– ''विवाह अति प्राचीन सार्वभौम संस्था है, जो प्रत्येक मानव समूह में पायी जाती है''।[2]

विवाह के माध्यम से स्त्री और पुरुष के सम्बन्धों को जोड़ा जाता है। विवाह स्त्री और पुरुष के पवित्र और नाजुक सम्बन्धो को स्थिर रख सकता है। विवाह को धार्मिक संस्कार माना गया है। एक अटूट सामाजिक बन्धन भी है। शास्त्रीय विधान के अनुसार विवाह के माध्यम से माता–पिता भी अपनी लड़की का हाथ लड़के को सौंपकर लड़की की ओर से सभी चिंताओं से मुक्त हो जाते हैं। प्रत्येक माता–पिता अपने बच्चों का विवाह–सम्बन्ध स्थापित करके निश्चित हो जाते हैं। मिथिलापुर के राजा जनक का उदाहरण स्पष्ट है। जब सीता के स्वयंवर में उपस्थित राजा–महाराजा लोग धनुष को न तोड़ सके तो जनक की निराशा और चिंता वर्णनातीत थी।

परम्परागत वैवाहिक पद्धति के अनुसार वधू को स्वयंवर चुनने की स्वतन्त्रता दी जाती थी। उस समय वधू की इच्छा को दबाकर पारिवारिक सदस्य या अभिभावक अपनी इच्छा से वर का चुनाव नहीं करते थे। किन्तु अब भारतीय समाज में अभिभावक ही वर या वधू की इच्छा की उपेक्षा कर अपनी इच्छानुसार चुनते हैं। यद्यपि बहरहाल समाज में काफी परिवर्तन देखने को मिलता है तथा बच्चे अपनी पसन्द से जीवनसाथी चुन रहे हैं।

वैवाहिक सम्बन्धों के अन्तर्गत वर्तमान समाज में परिलक्षित होता है कि अभिभावक अपनी इच्छा से तो सम्बन्ध जोड़ते हैं, वे वर पक्ष की सम्पन्नता और विपन्नता को दृष्टि में रखकर भी कन्याओं को विवाह सूत्र में बांधने का निर्णय लेते हैं। धन वर पक्ष या वधू पक्ष के अन्य अवगुणों पर पर्दा डाल देता है। इसके कारण विवाहोपरान्त पति और पत्नी के पारिवारिक जीवन में समस्यायें उत्पन्न हो जाती हैं। धर्मवीर भारती के दोनों उपन्यासों का अध्ययन करने के बाद ऐसी ही विवाह सम्बन्धी समस्यायें सामने आती हैं। भारती ने 'सूरज का सातवां घोड़ा' में जमुना नामक पात्रा को उठाकर इस समस्या का उल्लेख किया है। उपन्यास के आरम्भ में उन्हीं के शब्दों में यह समस्या इस रुप में उजागर होती है। 'कहानियां पढ़ते–पढ़ते और सिनेमा के गीत याद करते–करते जमुना बीस बरस की हो गयी और भगवान की माया देखो जमुना का कहीं ब्याह ही तय नहीं हुआ'।[3]

मध्यमवर्ग में विवाह एक गंभीर समस्या बनती जा रही है। अपने बच्चों का ठीक समय पर तथा अच्छा विवाह करना प्रायः हर माता–पिता की इच्छा होती है। लेकिन जमुना अनपढ़ होने के कारण उसके विवाह के लिए काफी धन चाहिए जो उसके माता–पिता के पास नहीं था। इसी कारण अनमेल विवाह की समस्या सामने आती है। अनमेल विवाह कई प्रकार के होते है; जिनमें प्रमुख है –आयु की असमानता; जिससे जमुना प्रभावित हुई। धनाभाव तथा अशिक्षित होने के कारण जब बहुत दिनों तक कहीं भी जमुना का विवाह तय नहीं होता तो मजबूर होकर उसके पिता उसका विवाह एक वृद्ध धनवान तथा तिहाजू व्यक्ति से कर देते हैं। वह वृद्ध कुछ दिन बाद जमुना को अतृप्त छोड़कर परलोक सिधार जाता है। जमुना अपनी तृप्ति के लिए अपने नौकर रामधन का सहारा लेती है। लेखक के शब्दों में– ''जमुना निम्नमध्यवर्ग की एक भयानक समस्या है। आर्थिक नींव खोखली है, उसकी वजह से विवाह, परिवार, प्रेम सभी की नींव खोखली है।'' [4]

अनमेल विवाह का दूसरा रुप है–प्रवृतिगत वैषम्य। इस समस्या से 'गुनाहों को देवता' की पात्र सुधा व पम्मी तथा 'सूरज का सातवां घोड़ा' का तन्ना तीनों ही गहरे जुड़े हैं। सुधा चन्दर से कहती है कि वह किसी से शादी नहीं करना चाहती। तन्ना जमुना से प्यार करता है। उसी से विवाह करना चाहता है। लेकिन समय की मार देखिये कि कोई भी सफल नहीं होता। सुधा का विवाह उसकी इच्छा के विरुद्ध कैलाश बाबू से कर दिया जाता है। लड़का बहुत अच्छा है लेकिन दोनों की प्रवृति भिन्न है। दोनों एक–दूसरे को समझ नहीं पाते। सुधा का कहना है– ''आजकल वह बहुत ध्यान रखते हैं, लेकिन वे मुझको समझ नहीं पाये। सारे सुख और सारी आजादी के बीच मैं कितनी असंतुष्ट हूँ।'' [5]

सुधा भावुक प्रवृति की है। वह भावनात्मक सम्बन्ध को ही सब कुछ मानती है, जो चन्दर और उसके बीच थे। वह जीवन के वासनात्मक पहलू से घबरा उठती है। अतः कैलाश के प्रति मन से अपना समर्पण नहीं कर पाती। अन्त तक दोनों का वैवाहिक जीवन असफल रहता है। यही बात कैलाश चन्दर से कहता है, '' इन जैसी लड़कियों के लिए तुम कोई कलाकार या कवि या भावुक लड़का ढूंढते तो ठीक था। मेरे जैसा व्यावहारिक और नीरस, राजनीतिक इसके लिए उपयुक्त नहीं है। घर भर इनसे बेहद खुश है.... लेकिन मैंने जो सोच रखा था वह मुझे नहीं मिल पाया।'' [6]

दूसरी ओर 'सूरज का सातवां घोड़ा' का पात्र तन्ना जमुना से विवाह करना चाहता है। उसके पिता लोभवंश उसकी शादी एक ऐसी लड़की से कर देते हैं, जो तन्ना से ज्यादा पढ़ी–लिखी तथा घमण्डी है। यह विवाह तन्ना की इच्छा के विरुद्ध होता है। लड़की अपनी धनवान माँ की इकलौती सन्तान है। वह तन्ना को अपने योग्य

नहीं पाती। एक बच्चा होने के बाद वह तन्ना से गन्दी छिपकली से भी ज्यादा नफरत करती है। अन्तिम समय में जब तन्ना अपने घर की आर्थिक तथा अपनी मानसिक समस्याओं से संघर्ष करते हुए टूट जाता है तब उसकी सास आकर ये कहते हुए 'जब कमर में बूता नहीं था तो भांवरें क्यों फिरायी थी'[7] तन्ना को बहुत लज्जित करती है। धन के आधार पर होने वाले विवाह का अन्त ऐसा ही होता है।

अनमेल विवाह से तलाक की समाया सामने आती है। भारती जी ने 'गुनाहों के देवता' की पात्र पम्मी के माध्यम से इस समस्या को उठाया है। पम्मी एक मुस्लिम लड़की है जो विवाहित है। प्रवृतिगत वैषम्य के कारण उसके अपने पति से तलाक ले लिया है। कारण वह चन्दर को इस प्रकार बतलाती है–'मेरा पति मुझे बहुत चाहता था। लेकिन मैं विवाहित जीवन के वासनात्मक पहलू से घबरा उठी। मुझे लगा मैं आदमी नहीं हूँ......एक नफरत थी मेरे मन में'[8]

अनमेल विवाह का कारण कई बार धोखा भी होता है। बिनती इसका शिकार है। बिनती (सुधा की बुआ की बेटी) का विवाह जिस लड़के से होने जा रहा था, वह इन्टर फेल था तथा बाऐं हाथ की उंगलियां गायब थी। धोखे से उन्होनें लड़के को बी०ए० पास बताया था। डॉ० शुक्ला इस बात पर बिगड़े तथा बिनती को भड़वे से उठवा लिया। यहाँ लेखक ने समस्या का अच्छा समाधान दिखाया है।

भारती जी 'गुनाहों का देवता' उपन्यास में अविवाह की समस्या को भी उठाते हैं। उनके कुछ पात्र विवाह करना ही नहीं चाहते। इसी को अविवाह की संज्ञा दी गयी है। उपन्यास के पात्र चन्दर–सुधा, विनती और पम्मी (जो विवाहित है)–सभी अविवाह के पक्ष में है। यह सब इनके संवादों से ही पता चल जाता है। सुधा कॉलेज के दिनों में अपनी सहेली गेसू से कहती है–''गेसू अगर हम लोगों को भी शादी–ब्याह के झंझट में ना फंसना पड़े.... तो कितना मजा आ जाए। मैं तो सोचती हूँ गेसू कभी ब्याह ही न करुँ। हमारे पापा का ध्यान कौन रखेगा?''[9] इसी उपन्यास की पात्रा पम्मी विवाह का विरोध चन्दर से इन शब्दों में करती है–''कपूर, मैं सोच रही हूँ अगर यह विवाह संस्था हट जाय तो कितन अच्छा हो...''।[10] यही नहीं चन्दर और सुधा को विवाह ना करने की सलाह देती है। चन्दर तथा बिनती विवाह का विरोध करते हैं। सुधा चन्दर से विवाह करने को कहती है तब चन्दर का यह कहना–''नही सुधा, शादी नहीं करनी है मुझे।''[11] बिनती का विवाह टूटने पर उसका भी विवाह से विश्वास उठ जाता है। डॉ० शुक्ला उसके बाद चन्दर को बिनती के लिए कोई गैर जात का अच्छा सा लड़का देखने को कहते हैं। बिनती दृढ़ स्वर में इसका विरोध करती है– ''मामा जी आप मुझे जहर दे दीजिये लेकिन मैं शादी नहीं करुंगी। क्या आपको मेरी दृढ़ता पर विश्वास नहीं?''[12]

अन्त में सुधा के विवाह के बाद, बिनती का ब्याह टूटने पर डॉ० शुक्ला का भी आदर्श बदल जाता है। उन्ही के शब्दों में– ''चन्दर इस महीने भर में मेरा सारा विश्वास हिल गया। सुधा का विवाह कितनी अच्छी जगह किया, मगर सुधा पीली पड़ गई। कितना दुख हुआ देखकर और बिनती के साथ यह हुआ। सचमुच यह जाति–विवाह सभी परम्परायें बहुत ही बुरी हैं....इन्हें तो काट फेंकना चाहिये।'' [13]

धर्मवीर भारती ने प्रेम–विवाह और दाम्पत्य जीवन की विविध समस्याओं को ध्यानपूर्वक चित्रित किया है। ये सभी समस्याऐं केवल भारती के उपन्यासों के पात्रों की न होकर पूरे समाज की है। आज समाज का प्रत्येक व्यक्ति इन समस्याओं से घिरा है। एक साहित्यकार अपने साहित्य में समाज को ही प्रस्तुत करता है।

सन्दर्भ

1. डॉ० सीता राम झा, भारतीय समाज का स्वरुप, पृ० 139
2. डॉ० स्वर्णलता, स्वातन्त्रोत्तर हिन्दी उपन्यास साहित्य की समाज शास्त्रीय पृष्ठभूमि, पृ० 139
3. डॉ० धर्मवीर भारती, सूरज का सातवां घोड़ा, पृ० 26
4. डॉ० धर्मवीर भारती, सूरज का सातवां घोड़ा, पृ० 47
5. डॉ० धर्मवीर भारती, गुनाहों का देवता, पृ० 225
6. डॉ० धर्मवीर भारती, गुनाहों का देवता, पृ० 283
7. डॉ० धर्मवीर भारती, सूरज का सातवां घोड़ा, पृ० 61
8. डॉ० धर्मवीर भारती, गुनाहों का देवता, पृ० 103
9. डॉ० धर्मवीर भारती, गुनाहों का देवता, पृ० 41
10. डॉ० धर्मवीर भारती, गुनाहों का देवता, पृ० 103
11. डॉ० धर्मवीर भारती, गुनाहों का देवता, पृ० 65
12. डॉ० धर्मवीर भारती, गुनाहों का देवता, पृ० 237
13. डॉ० धर्मवीर भारती, गुनाहों का देवता, पृ० 237

डॉ० कृष्णा हुड्डा,
प्रोफेसर, भाषा एवं हरियाणवी संस्कृति विभाग,
चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय,
हिसार, हरियाणा।

अरुणोदय महाकाव्य में शिल्प–विधान

डॉ० कमलेश कुमारी

सारांश

महाकाव्य का वर्ण्य विषय महान होता है, जिसके विस्तृत काव्य फलक पर उदात्त भावों के बेलबूटे जगमग करते रहते हैं, उनका छायांकन तो उदात्त शिल्प रूपी कैमरे द्वारा ही संभव हो सकता है। महाकाव्य के उदात्त भावों की अभिव्यंजना उदात्त भाषा शैली द्वारा ही श्लाघनीय मानी जा सकती है। उदात्त भाषा का प्रभाव श्रोता के मन पर प्रत्यय के रूप में नहीं पड़ता, वरन् भावों के रूप में पड़ता है। गरिमामय वाणी सर्वदा और सब प्रकार से हमें मानो मंत्रमुग्ध करके उस तत्व पर विजयनी होती है, जिसका लक्ष्य होता है। अनुनय एवं परितोष।[1]

महाकाव्य की भाषा में परिपक्व शब्द विधान होता है। उसमें शब्द सवाक् होते हैं... प्राणवत्ता से पूर्ण रहते हैं। भाषा को ओदात्यविहीन शब्दों से गरिमाहीन नहीं होने देना चाहिए। अर्थात् नीरस, बचकाने, अस्पष्ट खोखले, असंयत, हीन शब्दों से भाषा को व्यर्थ ही बोझिल, गर्मीली नहीं बनाना चाहिए।

सामंजस्यपूर्ण शब्द–योजना के साथ स्थान, घटना, परिस्थिति की दृष्टि से अलंकार योजना सहज परितोष एवं आह्लाद का कारण बनती है। अलंकार निरपेक्ष एवं यत्नज नहीं होने चाहिए, कला का चमत्कार प्रदर्शित करने के लिये उनका प्रयोग त्याज्य है। महाकाव्य छंदबद्ध एवं मुक्तछंद दोनों में प्रणीत किया जा सकता है। उसकी कथावस्तु को सर्गों अथवा खंडों में विभाजित किया जाना चाहिए, जिनकी संख्या निर्धारित करना न्यायोचित नहीं। यह तो कवि की कथावस्तु और उसके सैविध्य पर अवलंबीन है। शैली के लिये स्पष्टता, सजीवता, लालित्य की आवश्यकता तो है लेकिन सबसे बड़ी बात है ओचित्य की रक्षा। महाकाव्य का शिल्प–विधान मानव शरीर की भाँति औचित्य पर निर्भर है। शैलीगत अव्ययों को सुव्यवस्थित होना महाकाव्य की अविकल प्रभविष्णुता के लिये नितान्त आवश्यक है।[2] जिस प्रकार शरीर के अंगों में अलग–अलग रहने पर कोई विशेषता नहीं होती, किन्तु सब मिलकर एक समग्र और संपूर्ण शरीर की रचना करते हैं, इसी प्रकार उदात्त शैली के तत्वों को यदि एक–दूसरे से अलग कर दें तो उनके साथ ओदात्य भी इधर–उधर बिखर जाता है, किन्तु जब उन सबको मिलाकर एकान्वित कर दिया जाता है और सामंजस्य की एक श्रृंखला में बांध दिया जाता है तो उनमें अपनी वर्तुलता के कारण एक प्रकार की गरिमा उत्पन्न हो जाती हैं।

शिल्प–विधान की दृष्टि से ''अरुणोदय'' में कुछ खटकने वाले बातें हैं। भाषा, वाक्य विन्यास तथा कथानक की गरिमानुसार शैली को नहीं अपनाया गया है। कहीं–कहीं शब्द चयन भी नहीं हैं। दुष्यन्त को समझाते समय कवि ने 'महामंत्री' के स्थान पर 'मंत्री' शब्द का प्रयोग किया है।

मंत्री के जब दूत अनेकों
खाली लौटे,
मंत्री ने तब स्वयं पहुंच
सब कुछ समझाया।[3]

आगे चलकर 'मंत्री' के लिए 'सचिव' शब्द का प्रयोग किया गया है–

राजा रसना की मूठ हिला
गुस्से से बोला
लगा सचिव को अंबर में ऐरावत डोला[4]

मंत्री और सचिव का अन्तर बहुत स्पष्ट है। यही नहीं, कवि फिर 'महामात्य' शब्द का प्रयोग करता है–

किसलिए तुम
महामात्या[5]

एकाध स्थल पर वाक्य विन्यास भी महाकाव्योचित नहीं लगता जैसे–

उन्मुक्त प्रणय का
पहला पहला स्वाद चखा था[6]

इसी प्रकार कवि द्वारा प्रयुक्त 'महतारी' शब्द––

निश्चित है यह सत्य
सब कहीं
नारी है महतारी[7]

को महाकाव्योचित नहीं कहा जा सकता। स्थानीय या क्षेत्रीय बोली का प्रयोग भी काव्य– सर्जना के उत्स में कहीं–कहीं लय भंग करता है। यथा––

ज्यों चिरैया
चंचु में भर अन्न का कण
घोंसले को आए फुर।[8]

इसी प्रकार ढरकी कीच, ओट, घनीला जमावडा, रीत, अतव, घनेरा, अच्छाई, धुमैला, उजास, चिट, घोंगडा, रूट रोमांत (रोम से अंत तक) ठौर, मटौला, मानुख, तुझहित आदि का प्रयोग महाकाव्योचित नहीं है।

ये बालाएँ थी नहीं अपनी कलियां
अम्बर से मानों ढरकी थीं।[9]

पक्षी को आखिर
धरती पर ठौर खोजना पड़ता[10]

तुमने जो
रानियों का
जमावड़ा कर रखा है।[11]

कोयलों की वह कूक
बुलबुलों की वह चिट[12]

भाषा के स्तर पर काव्यात्मकता एवं लाक्षणिकता लाने के लिये कवि ने मुहावरों का सुष्ठु प्रयोग किया है। यथा–

तुझहित तोड़ ताऊंगा नभ के तारे
फूल समझकर झेलूंगा जग के अंगारे।[13]
काला कर डाला।[14]
तुमने कण्व का उज्जवल मुँह
काला कर डाला।[15]

स्वर्ण–लोभ में सत्ता सम्मुख गिरवी रख दी
सामाजिक मर्यादा की लुटिया
तुमने ले दक्षिणा दुबो दी।[16]
माँ की आँखों का तारा।[17]
जब–जब उठे कोई समस्या हाथ मलते भागते हैं।[18]

'अरूणोदय' की अलंकार–योजना पर विहंगम दृष्टि डालने से ज्ञात होता है कि डॉ० गुप्त ने कहीं भी अलंकारवादी कवि होने की चेष्टा नहीं की। चकाचौध, दिखावा उनके काव्य का उद्देश्य नहीं है। उन्होंने अलंकारों की महत्ता को समझते हुए सावधानीपूर्वक अलंकारों का सहज–स्वाभाविक प्रयोग किया है। उनकी उपमाएँ और उत्प्रेक्षाएँ सुन्दर बन पड़ी हैं।

उपमा का शाब्दिक अर्थ है– सादृश्य, समानता, तुल्यता अथवा सामने रखकर मापना। जहाँ प्रस्तुत वस्तु (उपमेय) की रंग, रूप, गुण व अप्रस्तुत वस्तु (उपमान) से समानता दिखाई जाये, वहाँ उपमा अलंकार होता है। यथा–

कुन्द कलिका–सी सुकोमल बालिका
शुक्ल पक्षी चाँद–सी बढ़ने लगी।[19]

यहाँ पर शकुन्तला उपमेय है और चन्द्रमा उपमान

टिका हुआ था मोहक मुख हिरनी के तन पर
जैसे पूनम का चंदा सावन के घन पर
हिरनी से थी लिपी बाँहें हिम–सी गोरी[20]

यहाँ शकुन्तला का मोहक मुख उपमेय है और पुनम का चन्द्रमा उपमान है। शकुन्तला की बाँहें उपमेय तथा हिम उपमान है। शकुन्तला की गौरवर्णिता भी स्पष्ट हुई है। जहाँ उपमेय में उपमान के आरोप की संभावना की जाए, वहाँ उत्प्रेक्षा अलंकार होता है। गुप्त जी ने 'अरुणोदय' में शोकग्रस्त शकुन्तला के लिये कहा है–

वन की निष्पाप हवा भी
मानो ठगी गई थी।[21]

रूपक का अर्थ है– रूप का आरोप। आरोप एक वस्तु का दूसरी वस्तु में इस प्रकार रखने को कहते हैं, जिससे दोनों में किसी प्रकार का अन्तर न रह जाए। रूपक अलंकार का प्रयोग गुप्त जी के महाकाव्य में विभिन्न स्थलों पर हुआ है। बालिका शकुन्तला कोपाकर कम्पन की प्रसन्नता को व्यक्त करते हुए कवि लखते हैं।

बालिका पाकर हृदय शतदल खिला ।
स्नेह जल से भीग हर पल्लव हिला ।[22]

इसी प्रकार जब राजा दुष्यन्त को शकुन्तला के प्रति आसक्त देखकर मंत्री उन्हें समझाते हैं तो राजा दुष्यन्त कहते हैं–

आज पहली बार
यह दुष्यन्त लगता पा सका है।
मित्र जीवन धना[23]

उपर्युक्त पंक्तियों में हृदय उपमेय में शतदल उपमान का दुष्यन्त के जीवन उपमेय में धन उपमान का आरोप किया गया है।

पुनरुक्ति का अर्थ होता है – एक ही उक्ति का सोद्देश्य पुनरावर्तन। जहाँ एक ही उक्ति की अभिव्यक्ति को मार्मिक एवं रोचक बनाने के लिये पुनरावृत्ति हो, वहाँ पुनरुक्ति, अलंकार होता है। श्री गुप्त कृत 'अरुणोदय' में इस प्रकार के अनेक चित्र देखने को मिलते हैं। उदाहरणार्थ –

घर घर घर घर सारा जंगल कंपाता
राजा का रथ बढ़ता आता धूल उड़ाता।[24]

वर्णों की सरस एवं सोद्देश्य आवृत्ति को अनुप्रास कहते हैं 'अरुणोदय' में अनुप्रास के अनेक उदाहरण मिलते हैं। यथा–

हो बसन्त का गीत, संग नव खिली कलिका।
भंवरा चाहे रस उड़ उड़ नित नयी बयी का।[25]

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि 'अरुणोदय' के कवि की भाषा, सरल और सुबोध है। वह प्रवाहमान, अलंकृत और मुहावरेदार है। छन्दबद्धता होते हुए भी लयात्मक है। अधिकांशतः भाषा तुकान्त है, नाटकीय है तथा भावुक स्थलों की अवतारणा महाकाव्योचित है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. डॉ. सावित्री सिन्हा, पाश्चात्य काव्यशास्त्र की परम्परा, पृ. 48
2. डॉ. निलम उद्दीन, स्वतन्त्र हिन्दी महाकाव्य. पृ. 44
3. गुलाबराय काव्य के रूप, प्रतिभा प्रकाशन मान्दर, दिल्ली, 1947, पृ0. 42
4. वही, पृ. 42
5. सत्यदेव चौधरी एवं शान्ति स्वरूप गुप्त, भारतीय एवं पाश्चात्य काव्यशास्त्र, अशोक प्रकाशन, दिल्ली, 1978, पृ. 43
6. वही, पृ. 42
7. वही, पृ. 39
8. वही, पृ. 38
9. नगेन्द्र, काव्य में उदात्त तत्व, राजपाल प्रकाशन दिल्ली, दिल्ली संस्करण, 1958, पृ. 6
10. वही, पृ. 10
11. वही, पृ. 43
12. वही, पृ. 77
13. गुलाबराय काव्य के रूप, प्रतिभा प्रकाशन मान्दर, दिल्ली, 1947, पृ. 34
14. वही, पृ. 77
15. वही, पृ. 77
16. वही, पृ. 47
17. वही, पृ. 38
18. वही, पृ. 48
19. सत्यदेव चौधरी एवं शान्ति स्वरूप गुप्त, भारतीय एवं पाश्चात्य काव्यशास्त्र, अशोक प्रकाशन, दिल्ली, 1978, पृ. 24
20. वही, पृ. 26
21. वही, पृ. 32
22. डॉ. ओमप्रकाश गुप्त, अरुणोदय स्तारवीयन पब्लीकेशन्स गाँधी नगर, दिल्ली–31, पृ. 20
23. वही, पृ. 44
24. वही, पृ. 24
25. वही, पृ. 29

डॉ० कमलेश कुमारी
सह–प्राध्यापक,
हिंदी विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर
महाविद्यालय,
हिसार

गढ़वाल हिमालय में अप्सराओं सम्बन्धी लोक विश्वास और लोकगीत

डॉ0 डी0 एस0 भण्डारी

सारांश

गढ़वाल हिमालय में अप्सराओं आछरियों सम्बन्धी अनेक लोक विश्वास हैं। आछरियों सम्बन्धी लोक विश्वास यहां लोककण्ठ व लोकगीतों में व्यक्त होते हैं। आछरियों के प्रति आदर और देवत्व का भाव लोक में व्याप्त है। ऊंचे पर्वत शिखर और मनोहारी जलाशय इनके विश्राम स्थल माने जाते हैं। टिहरी जनपद के अंतर्गत खैट का डांडा इनका अधिवास माना जाता है। अन्य स्थानीय देवी–देवताओं के अनुसार ही नृत्यमयी पूजन पद्धति से इनका पूजन किया जाता है प्रस्तुत शोध आलेख में आछरियों सम्बन्धी लोक विश्वास और लोकगीतों का विवेचन किया गया है।

भारत में शक्ति पूजा की परंपरा मानव इतिहास से भी पुरानी है ऋग्वेद में मात्र स्वरूपा मां शक्ति को आदित्य कहा गया है।[1] यह शक्ति सभी देव शक्तियों की जननी है यह अपने उपासकों की आत्माओं को अपनी कृपा दृष्टि से मुक्त करती है। इससे भी आगे बढ़कर कहा गया है कि इस संपूर्ण चराचर जगत में जो कुछ भी दृश्य मान है एवं अदृश्य है, व्यक्त है और अव्यक्त है वह सब शक्ति का ही स्वरूप है इस महा शक्ति की पूजा यहां विभिन्न नामों व रूपों में की जाती है। शास्त्र सम्मत नामों के अतिरिक्त यहां अनेक स्थानाधारित नामों से भी पूजा जाता है। शक्तिपीठ के रूप में बद्रीनाथ का उल्लेख किया गया है अनेक धर्म ग्रंथों में उल्लेखित अठ्ठारह शक्तिपीठों में हंस तीर्थ श्रीशैल और कौंच पट्टन गढ़वाल में ही स्थित है केदारनाथ का नाम भी शक्तिपीठ के रूप में लिया जाता है इसी प्रकार से श्रीशैल ग्रिंगो पीठ चंद्रपुर पंडारक वन 53043 स्वर्गीय पीठ में नाक मंदिर आदि उल्लेखनीय है। डॉक्टर चातक कहते हैं कि पुराणों में जिस क्षेत्र को श्री क्षेत्र कहा गया, वह क्षेत्र गढ़वाल में ही स्थित है।[2]

गढ़वाल हिमालय में भारत के अन्य भागों की भांति मातृका पूजन किया जाता है। अनेक इतिहासकारों ने उल्लेख किया है कि हड़प्पा और मोहनजोदड़ो सम्बन्धी तथ्यों में भी मातृका पूजन के संकेत मिले हैं। डॉ वासुदेवशरण अग्रवाल ने मृच्छकटिका नाटक में मातृका देवी के लिए बलि का उल्लेख किया है।[3] गढ़वाली लोकगीत सांस्कृतिक अध्ययन में डॉक्टर गोविन्द चातक कहते हैं, अनेक मातृकाओं में श्री भी एक मातृका थी। गढ़वाल के श्रीनगर कमलेश्वर में भी श्री मातृका का ही रूप दिखाई देता है। गढ़वाली लोक साहित्यकारों के साथ ही यहां की संस्कृति के मर्मज्ञ भी मातृकाओं को आछरियों से संबद्ध करते हैं। यहां के कई भागों में आछरी और कई भागों में मान्त्री शब्द का प्रयोग किया जाता है। यह शब्द अलग अलग हैं लेकिन यह एक ही भावना को व्यक्त करते हैं। आछरियों, मांत्रियों के सम्बन्ध में सर्वमान्य लोक विश्वास है कि वह पर्वतों में पर निवास करती हैं। द हिंदू ऑफ हिमालयाज में बेरेमेन ने कहा है कि सुरकंडा के निकट एक मान्त्री का डांडा नामक पर्वत शिखर है, जहां मन्दिर बना है, तथा वहां ओखलें मूसले हैं उनको उपहार में दी गई चूड़ियां पैसे, शीशे, कंगी और अन्य पूजन सामग्री दिखाई देती है। अपनी मनोकामना पूर्ण करने और अच्छी फसल के लिए बकरे की बलि देने का भी उल्लेख भी उनके द्वारा किया गया है।[4] एटकिन्सन ने भी सोलह मांत्रियों का उल्लेख करते हुए कहा कि भारत नेपाल और तिब्बत में इनका पूजन किया जाता है। इनका अधिवास खैट का डांडा माना जाता है।[5]

अनेक लोक गीतों में सात बैणी आछरी के रूप में इनका यशोगान किया गया है। आछरी शब्द को सीधे अप्सरा शब्द से जोड़ा जाता है। सामान्यतया लोक में यह विश्वास प्रचलित है कि जो स्त्री–पुरुष अतृप्त लालसाओं को लिए अकाल मृत्यु को प्राप्त होते हैं, तब उनकी आत्माएं भटकती हैं। उन्हें शांति नहीं मिलती है। अविवाहित कन्या की आत्मा को आछरी कहा जाता है। ऐसा विश्वास है कि आछरियां स्त्रियों के शरीर में प्रवेश कर उन्हें पीड़ित करती हैं। लोक विश्वास है कि वह पुरुषों को पीड़ित नहीं करती वरन उनका का हरण कर लेती है। गढ़वाली लोक गीतों में ऐसे अनेक प्रसंग दिखाई देते हैं जीतू बगड़वाल का आख्यान सबसे चर्चित आख्यान है,जो आज भी लोककंठ में सुरक्षित है।[6] जीतू बगडवाल ने धन्य रोपण के लिए शुभ मुहूर्त निकाला और उसकी विवाहिता बहन शोभिनी के हाथों से धन्य रोपण के लिए कहा गया। शोभिनी की ननद भरूणा से जीतू का प्रेम प्रसंग था, और वह सोबनी को धन्य रोपण के लिएन्यूतने के बहाने भरुणा से मिलने चला गया। उसकी मां ने मना किया, अनेक अपशकुन हुए परंतु वह नहीं माना और अपनी नौ सुरी मुरली को लेकर जंगल डांडे रास्ते गया, जहां छाया में बैठकर उसने बांसुरी बजाई और आछरियों ने उसका हरण कर दिया। पक्षियों संबंधी लोकगीतों में उन्हें रावण की बेटियां भी कहा गया है, जिन्हें भगवान शंकर को अर्पित किया गया था। कुछ लोकगीतों में कृष्ण की पूर्व जन्म की गुजरिया भी कहा गया है। आज इनसे पीड़ित होने पर उनकी नृत्य मई पूजन पद्धति से पूजन किया जाता है। सामान्य रूप से उनके प्रति आदर का भाव व्यक्त करते हुए पीड़ित व्यक्ति को मुक्त करने के लिए उनसे प्रार्थना की जाती है तथा उन्हें अनेक प्रकार के प्रलोभन दिए जाते हैं। प्राचीन साहित्य में भी प्रेतात्मा के तथ्य को स्वीकार किया गया है आछरियों को भी अतृप्त प्रेतात्मा स्वीकार किया गया है। इसी कारण उन्हें विविध भांति के उपहार देकर संतुष्ट करने का प्रयत्न किया जाता है। जंगलों में जहां बुरांश के फूल खिलते हैं, डंडोली का फूल खिलता हो वहां नव युवतियाँ अकेले नहीं जाती हैं,जाएंगी तो जोर–जोर से हंसेगी, नहीं अधिक तेज आवाज में बात नहीं करेंगे। सामान्यतः घसियारी जैसे गीत गाती है गीत नहीं गाएंगी, बुरांस के फूल नहीं तोडेंगे, पेड़ पर नहीं जाएगी जंगल में यदि कुछ खाना हो तो पहले आछरियों के नाम पर रखेंगी तेज रंग के कपड़े नहीं पहनेगें और विशेष रूप से लाल। सामान्यत ऐसे लोक विश्वास और लोक वर्जनायें प्रचलित हैं जब अतृप्त आत्मा से पूछा जाता है कि किस कारण उनके द्वारा परेशान किया गया जा रहा है, तब वह आत्मा उपरोक्त वर्जना को तोड़ने की बात करती है। यह लोक विश्वास आज भी है कि यदि वर्जनाओं को तोड़ा तो आछरियां पीड़ित करेंगी।[7]

आछरियों का पूजन कर समस्त पूजन सामग्री और आत्मा द्वारा जो उपहार मांगे गए हैं उन्हें साथ लेकर पुजारी और अन्य जंगल या पर्वत शिखर की ओर जाते हैं। वह पर्वत शिखरों मे ही ऐसी पूजा संपन्न होती है इस पूजा की एक अन्य विशेषता देखी जाती है कि अन्य पूजाएं जैसे सुबह शाम या रात में संपन्न होती है। यह पूजा सूर्य ढलते समय होती है सूर्य अस्त होने से पूर्व समस्त पूजन सामग्री को पूजन स्थल पर पहुंचाया जाता है तब पूजा संपन्न की जाती है कुछ स्थानों पर दुर्गा नवरात्रों की भांति आछरियों की पूजा किये के उदाहरण मिलते हैं।

गढ़वाली कुमाऊँनी लोकगीतों में फूलों के प्रति अपार ममता और पवित्रता का भाव व्यक्त हुआ है। कहा गया है कि रायमासी का फूल कैलाश पर खिलता है और शिव पार्वती के सिर पर शोभायमान होता है। रवाई जौनपुर के एक गीत में बुराँस के संदर्भ में यही बात कही गई है, इसी प्रकार अनेक बागवानों जब फूल खिलतें हैं तब इन पर देवत्व का आरोपण किया जाता है,और लोक में ऐसा विश्वास किया जाता है कि बसंत ऋतु के समय जब यह फूल खिलते हैं तो आछरियों इन्ही फूलों को अपना निवास स्थान बना लेतीहैं।

अनेक लोक गीतों मे नौ बहिनें आछरी और सात बहिने भराड़ी का उल्लेख मिलता है।

अनेक लोक गीतों मे उनके रूप यौवन का वर्णन भी मिलता है।

आँखि होली आम जसि फड़की,
नकतोड़ी जॉनल भंकोरी।
ओंठड़ी डालिमा सी बीज।

अनेक लोक गीतों मे वर्णन आया है कि वह रावण की पुत्रियांहैं।

जब मंदोदरी की संतान नहीं हुई तो वह शिवजी के पास गई उनके वरदान से आछरियां हुई, लेकिन कलान्तर मे मंदोदरी ने इन्हे समुद्र मे डुबो दिया परन्तु वह वहाँ भी उत्पात मचाने लगी। इसके बाद शिव के वरदान से ही वह पूजित मानी जाती हैं।

जावा बेणीयों आछरियों अपना घर,
तुम होली रावण की कन्या,
मथुरा की गुजरी,
तुम रख्यान बेणीयों अपनों मान।

इस संबंध मे जो नृत्य गीत हैं उनको रासी कहा जाता है।

रासो नृत्य गीत लास्य का सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत करता है इन गीतों मे आछरियों सम्बन्धी लोक विश्वास उनका परिचय, उनके प्रति आदर भाव व्यक्त होता है।

सुवा पंखी त्वे साड़ी देल्यू,
त्वे संणी लाटी मैं गेंणा देल्यू,
सतनाजु त्वे तवेकु देजू देलु,
सांकरी तवेकु मैं समुण देल्यू,
झिल मिल त्वे कु ऐना देलु।

निष्कर्ष

गढ़वाल हिमालय की अप्सरा आछरियों सम्बन्धी मान्यताओं को शाक्त परंपरा से भी जोड़ा जाता है। कई क्षेत्रों में दुर्गा सप्तशती का पाठ करवा कर उनके कोप को शांत करने का प्रयत्न किया जाता है। यहां यह लोक विश्वास प्रचलित है कि यह किसी प्रकार से कोई अनिष्ट नहीं करती हैं तथा देवी स्वरूप में ही इनकी पूजा–अर्चना की जाती है, यदि कोई कन्या इनसे पीड़ित है तो विवाह के बाद इनका पूजन किया जाना आवश्यक माना जाता है। टिहरी गढ़वाल के प्रताप नगर विकासखंड में स्थित खैट पर्वत इनका अधिवास माना जाता है और यह स्थान अब नए शक्तिपीठ के रूप में प्रसिद्ध हो रहा है

डॉ0डी0एस0 भण्डारी
विभागाध्यक्ष हिन्दी
बालगंगा महाविद्यालय सेन्दुल
केमर टिहरी गढवाल
उत्तराखण्ड
9917699690,8126543239
drbhandari1970@gmail.com
राणा भवन, निकट जल संस्थान
चमियाला, टिहरी गढवाल।
पिन–249125

डॉ0 हरिशरण वर्मा के नाटकों में संस्कृति का नैतिक पक्ष

डॉ0 संगीता वर्मा

सारांश

आधुनिक युग में सामाजिक व पारिवारिक नैतिक मूल्य दिन प्रतिदिन बदल रहे है। डॉ हरिशरण वर्मा ने भी अपने नाटकों में बदलते नैतिक मूल्यों को भारतीय संस्कृति के बदलते नैतिक मूल्यों को अभिव्यक्त किया है। डॉ हरिशरण वर्मा कृत नाटक 'अपर्णा' में नैतिक मूल्यों को बदलते हुए दर्शाया गया है। अर्थात प्राचीन काल में रिश्ता निश्चित करते समय केवल खानदान व परिवार को देखा जाता था । लड़की को देखने के लिए कोई नहीं जाता था। बेटी का पिता लड़का देखने जाता था यदि लड़की व लड़के के परिवार वालों पसन्द आ गये तो लड़की का पिता वही पर लड़के वालो को बता दिया करता था, और अपनी लड़की का सम्पूर्ण परिचय दे दिया करता था। दोनों पक्षों की सहमति से लड़की का पिता उसी समय लडके को कुछ पैसे व बताशै व मिठाई मंगवाकर रोका अर्थात सगाई कर दिया करता था। लड़की का कोई देखने नही जाया करता था।

परन्तु आज भारतीय संस्कृति के विपरीत हो रहा है जो नैतिकता के विरुद्व है। आज लडके के साथ–साथ उसके परिजन भी लडकी को देखने जाते है और लडकी लम्बाई, मोटाई, शिक्षा आदि के साथ–साथ लडके का पूरा परिवार लडकी का इस प्रकार से साक्षात्कार लेता है जैसे बहूॅ नही भारतीय सेना मे सैनिक की भर्ती की जा रही हो। बहू का चुनाव होना या न होना यह सब लडके वालों पर निर्भर करता है। डॉ. हरिशरण वर्मा ने इसी नैतिकता का चित्रण अपने नाटक अपर्णा में किया है–

कृष्णाः उन्होंने अभी कोई फैसला नही किया।

शिवम्: मैने अधिक पूछताछ की नहीं

अपर्णाः कमरे में प्रवेश करती हुई क्या करेंगे आप अधिक पूछताछ करके आपको तो बस मेरी शादी करनी है। बोझ बन गई हूॅ ना आपके लिए। नही रख सकते घर में। क्या रोटी नही दे सकते मुझे। मैं स्वयं कमाकर खा लूॅगी।

कृष्णाः नहीं बेटी नहीं, ऐसा न कहो।

अपर्णाः क्यों न कहॅू। मैं अभी उनसे पूछकर आ रही हूॅ।

कृष्णाः किससे

अपर्णाः पवनलाल जी से, जो अभी मुझे नाप–तोल रहे थे। उन्हें यह रिश्ता मंजूर नहीं है। तुमने मुझे दुकान पर रखी वस्तु समझ लिया है। ग्राहक आए,देखे नापे–तोले और फिर खोट बताकर चला जाए। मै घर छोडकर जा रही हूॅ मॉ।

कृष्णाः आखिर क्या खोट है तुममे क्यो किया उन्होंने तुम्हार रिश्ता अस्वीकार।

दरवाजे पर घंटी की आवाज

इस प्रकार आज आधुनिक युग में नैतिक मूल्य बदल रहे है। एक लडका न जाने कितनी लड़कियों को देखता है और नापसन्द कर देता है। एक लड़की को न जाने कितने लडके व उनका परिवार देखने के लिए आता है और फिर नापसन्द कर देते है। इसका लडकियो पर कुंप्रभाव पड़ता है। लडकिया स्वयं अपनी सुन्दरता शिक्षा पर संदेह करने लगती है। इस प्रकार से आधुनिक युग मे समाज के नैतिक मूल्य बदल रहे है।

बदलते नैतिक मूल्यों में आज का युवा वर्ग भी पीछे नहीं रहा। अतीत काल में युवा वर्ग स्कूल या विद्यालय की बजाय गुरुकुल में शिक्षा ग्रहण करता था। वहॉ उसका एक ही उददेश्य होता था, शिक्षा ग्रहण करना, समाज व देश का अच्छा नागरिक बनकर समाज व देश की सेवा करना। वह अपने अभिभावको व माता–पिता से झूठ बोलकर उनसे अपने ऐश के लिए पैसे नही मागंता था, आवश्यकता पड़ने पर उतना ही पैसा लेता था जितनी आवश्यकता होती थी।

आधुनिक युग के युवा वर्ग का नैतिक मूल्यो का पतन हो चुका है, शिक्षा की जगह ऐश अधिक करता है और पढाई की ओर कोई विशेष ध्यान नही देता, बल्कि अपने माता–पिता को मूर्ख बनाकर अनेक प्रकार की फीस के नाम पर पैसा ऐठता रहता है, और उस पैसे को गलत कार्यो में अपने मित्रों के साथ बर्बाद कर देता है। डॉ हरिशरण वर्मा कृत नाटक अपर्णा के पंकज छात्र द्वारा बदलते नैतिक मूल्यों का चित्रण किया गया है

पंकजः डैडी, आज मुझे स्कूल की फीस व टयूशन की फीस के लिए 2500 रुपये चाहिए।

पवनः स्कूल के फीस लेकिन बेटा स्कूल की फीस तो हम दे आए थे, और याद आया टयूशन की फीस तो मैंने कल दे,दी थी।

पंकजः डैडी। आप भी क्या क्या छोटी–छोटी बातों, को पूछते हैं। वह तो अंग्रेजी के टयूशन की थी, आज गणित के ट्यूशन की फीस देनी है ना।

पवनः ठीक है, परन्तु तुम्हारी पढाई तो ठीक चल रही है।

पकजः आप चिन्ता न करें, मैं अपनी कलाश में फस्ट ऑउगा फर्स्ट।

पवनः ठीक है बेटा यह लो 2500 सौ रुपये पंकज 2500 रुपये अपने पिता श्री से झूठ बोलकर ले जाता है और उस पैसे का अपने मित्रों के साथ शराब व पार्टी में खर्च कर देता है। पंकज का नैतिक पतन इतना हो चुका है कि वह अपने जन्म दिन एक बार नही अनेक बार मनाता है और झूठ बोलकर पिता से पैसे ले जाता है–

पंकजः डैडी, आज मुझे अपने जन्म दिन की पार्टी के लिए 10000 रुपये चाहिए, दोस्तो को पार्टी देनी है।

पवनः लेकिन बेटा, जन्मदिन तो तुम्हारा पिछले हफते था फिर आज पार्टी क्यो

पंकजः और डैडी आप भी क्या छोटी–छोटी बाते पूछते है। कुछ दोस्त उस दिन रह गए थे ना।

पवनः अच्छा अच्छा ये लो। हॉ तों बताओ तुम्हारा बी.ए. का रिजल्ट कब आयेगा।

पकंजः बस एक दो दिन में आने वाला है डैडी।

पवनः स्वकथन मैं अपने बेटे को अच्छा पढने व इसकी हर प्रकार की इच्छा को पूरा करेन के लिए हर प्रकार का छल–कपट करे रहा हॅ इसे पास करना प्रभु। पकंज पिता से झूठ बोलकर 10000 रुपये ले जाकर मित्रों के साथ शराब में खर्च कर देता है। आधुनिक युग की युवा पीढी का नैतिक पतन इतना गिर चुका है कि पकंज का बी.ए. का परीक्षा परिणाम आ चुका है और पंकज को ज्ञात है किवह फेल हो गया है , परन्तु उसके पिता के द्वारा पूछे जाने प रवह पिता से सच्चाई छिपा जाता है यह है आधुनिक युग की नई पीढी का नैतिक पतन।

पवनः बेटा सुना हे आज बी.ए. का रिजल्ट आ गया, क्या तुमने देख लिया।

पंकजः अरे डेडी बस तुम चिन्ता मत करो मुझे भला कौन फेल कर सकता है।

पवनः तुझे इतना विश्वास है।

पकंजः हा डैडी।

पवन अपने कार्यो में इतना व्यस्त रहता है कि उसे अपने बेटे पंकज की ओर ध्यान देने का समय ही नहीं है बस केवल इतना ही पता है कि बेटा बी.ए. में पढ़ रहा है । वह जितने पैसे मांगता है उसे दे देता है, और बेटे का नैतिक पतन इतना हो चुका है किवह अपने पिता के साथ विश्वासघात करता है। मित्रों के साथ शराब पीता है आवारागर्दी करता है, समाज का एक बदनाम व्यक्ति है। दसवी में तीन बार फेल हो चुका है। परन्तु हर बार पिता को धोखा देता हैं और सच्चाई नही बताता। एक दिन पवन को अपने बेटे की सच्चाई का पता चल जाता है। वह भी बेटे के द्वारा नही बल्कि बाहर वालों के द्वारा। उस समय पिता की क्या स्थिाति हुई होगी यह एक विचारर्णिय प्रश्न है। यथा

पवनः रात को दस बजे घर आता है पडोस के मकान के सामने भीड. लगी है कुछ शोर हो रहा है (स्वयं कथन में भीड कैसी है। मै भी तो देखू। भीड के अन्दर जाकर) और भाई भीड कैसे लगी है।

एकः तो ये भी आ गए। जैसे उन्हें कोई पता ही नहीं है।

दूसराः भला इन्हें पता कैसे हो गया । दो नम्बर की कमाई जो आती है, तो बेटा तो फिर तमाशा करेगा ही।

पवनः क्या बक रहे हो। तुम लोग

एकः बक नही रहे है। ।अपनी ऑखों से देख ले।

पवनः पवन में आगे जाकर देखता है ये तो पकंज है, क्या हुआ ये जमींन में क्यो पड़ा है।

दूसराः अजी इन्हें भला जानने की कहॉ फुरसत है। नम्बर दो की कमाई तो शराब में ही जाती है।

एकः तभी तो बेटा आवारा, गुंडा, शराबी बना फिरता है।

दूसराः तभी तो मैट्रिक में तीन बार फेल हो चुका है।

पवनः गुस्से से चुप हा जाओ तुम झूठ बोल रहे हो। मेरा बेटा बी.ए.में पढ़ता है और आज इसकी परीक्षा का परिणाम आने वाला था।

एकः बी.ए. और यह, खूब लोगों को धोखा देते हो।

दूसराः ये जानकर भी अनजान बनते है, बी.ए. में और इनका बेटा। नही अपने बेटे से तो पूछो।

पवनः पंकज को उठाकर घर लाता है और उसे होश के लाने का प्रयास करता है, होश के आने पर पंकज क्या ये सच है कि तुम रोज शराब पीते हो।

पंकजः नशे में डेडी भला क्यो न पीउ। आप मालदार जो है।

पवनः क्या तुम मैट्रिक में तीन बार फैल हो चुके हो

पंकजः हा डैडी (नशें में)

इसका अर्थ यह हुआ कि आज तक पंकज अपने पिता से झूठ बोलता रहा है कि वह बी.ए. मैं पढ़ता है।

आधुनिक युग के नवयुवको का नैतिक पतन इतना अधिक हो चुका है, जिस बेटे की पढ़ाई व उसके खर्चो का पूरा करने के लिए पवन रिश्वत लेकर पाप करता रहा। आज उसका बेटा गुंडा, बदमाश, आवारा व शराबी बन गया। पवन और पंकज जैसे लोग जो ठोंकरे खाकर भी ना संभले तो आगे इनकी किस्मत।

डॉ0 हरिशरण वर्मा कृत नाटक वचन में भारतीय संस्कृति के नैतिक मूल्यों को बदलते हुए अच्छी प्रकार से चित्रित किया है। अधिकांश लडकों या लड़कियों की शादी अपनी जाति माता व नानी – दादी के गोत्रों को छोड़कर आता–पिता की सहमति से की जाती थी, परन्तु आज नैतिक मूल्य बदल गये हैं। आज की युवा पीढ़ी इन सब बातें र्ला नहीं मानती वह महाविद्यालयों या विश्वविद्यालयों मे शिक्षा ग्रहण करते समय ही अपनी इच्छा से अपना जीवन साथी तलाश करके प्रेम विवाह में अधिक विश्वास करते हैं। प्रेम करते समय तथा प्रेम के उपरान्त बिना किसी जाति बंधन माने, एक–दूसरे शादी का वचन दे देते हैं जबकि माता–पित इसका विरोध करते है, परन्तु युवा वर्ग इस जाति–पाति के बंधन को नहीं मानता। डॉ0 वर्मा जी के नाटक बचन है उसी नैतिकता को बदलती मलन का चित्रण किया है

हरिशंकरः नितिन यहाँ पर रोज दिन में दो–चार लोग रिश्ते वाले आ जाते है, क्या जवाब दूँ उनको, कब तक उनका (जेब से बुरा फोटो निकालकर नितिन की ओर करता है) ले यो फोटो देख ले, जो लड़की पसन्द हो बता उस से तेरा रिश्ता कर देंगे।

नितिन : नहीं पिता जी मैंने ये फोटो नहीं देखने ।

हरिशंकरः ये फोटो नही देखने, परन्तु क्यों।

नितिनः क्योंकि मैंने अपने लिए लड़की पसन्द कर ली है।

हरिशंकर : (आश्चर्य से) लड़की पसन्द कर ली है।

मीनाः लड़की पसन्द कर ली है। कौन है वह लड़की ।

नितिनः प्रिया। मेरे साथ ही पढ़ती है।

मीनाः अच्छा प्रिया नाम है उसका परन्तु क्या वह सुन्दर और गुणवान

नितिनः हाँ मम्मी, बहुत सुन्दर और गुणवान है। हमेशा उसने यूनिवर्सिटी टॉप की है।

यहाँ तक तो माता पिता शादी करने के लिए तैयार है, परन्तु उनके मन में जाति को लेकर संदेह पैदा हो जाता है। इसलिए नितिन से प्रिया की जाति और और धर्म के विषय में पूछते हैं–

हरिशंकरः परन्तु उसका गाँव, धर्म, जाति क्या है?

नितिनः पिता जी वह गरीब और दलित परिवार की लड़की है

हरिशंकरः (गुस्से से) क्या कहा दलित परिवार से है।

नितिनः जी पिता जी ।

हरिशंकरः (क्रोधित होकर) तुमने यह सोचा भी कैसे तुमने मैं अपने घर में क्या दलित परिवार की बहू लाऊँगा

नितिन की माता जी बेटे के इस निर्णय से परेशान है क्योंकि हिन्दुओं के यहाँ शादियाँ अपनी जाती में ही की जाती है। यदि दूसरी जाति के में शादी कर ली जाती हो तो वह परिवार समाज की दृष्टि में गिर जाता है। फिर जिनका बेटा अच्छा पढ़ जाता है वे लोग अच्छे दहेज की इच्छा रखते है। मीना भी अपने बेटे का उच्च शिक्षा प्राप्त अच्छे होने पर अच्छा धन की लालसा रखती है।

मीनाः बेटा तूने ये क्या सोचा। तू मेरा इकलौता बेटा है। हमने सोचा था. बड़ी धूम धाम से तेरा विवाह करेंगे। किसी अच्छे ब्राह्मण परिवार से बहू लाएंगे, जो अच्छा दान दहेज लाएगी।

नितिन के पिता के पहले से ही नितिन का रिश्ता 50 लाख में निश्चित रखा है। नितिन के पिता का भी नैतिक पतन चुका है क्योंकि वे एक अयोग्य लड़की को 50 लाख में योग्य लड़ने के साथ शादी करना चाहते हैं—

हरिशंकरः तुम्हें पता भी है. सुखबीर सिंह दिल्ली वाले 50 लाख का रिश्ता लेकर आए थे, और मैंने उनसे हाँ भी कर दी है।

नितिनः परन्तु पिता जी उनकी लड़की कितनी पढी हुई है।

हरिशंकरः आठवीं पास है, घर का सब काम कर लेती है, तेरी माँ का खूब हाथ बटाएगी।

नितिनः लेकिन पिता जी, मुझे शिक्षित जीवन साथी चाहिए, जिसे मैं प्रेम करता हूँ और जो मुझे प्रेम करती हो। हम दोनों दूसरे से प्रेम करते हैं। एक – दूसरे को समझते हैं। प्रिया से अच्छा मेरे लिए कोई जीवन साथी नहीं हो सकता

निष्कर्षः

वस्तुतः कहा जा सकता है कि डॉ वर्मा जी के नाटक वचन में समाजिक मूल्यों के परिवर्तन होने का संजीव चित्रण किया है। अतित में शादी समाज का एक सांस्कृतिक परिवारिक कार्य था, परन्तु आज के युग में एक व्यापार का कार्य करता है। माता–पिता अन्तरजातीय प्रेम–विवाह के विरुद्ध है। क्योंकि इस प्रकार के विवाह में दहेज की मोटी रकम संभव प्रतीत नहीं होती। माता–पिता की इच्छा है कि लड़के की अच्छे धनवान परिवार से शादी होनी चाहिए, जो शादी में अच्छा दहेज लाए जबकि लड़के की इच्छा है की बिना दहेज अन्तरजातीय शिक्षित प्रेमिका से विवाह होना चाहिए।

कहा जा सकता है कि डॉ0 हरिशरण वर्मा के नाटक बदलते सांस्कृतिक नैतिक मूल्यों से परिपूर्ण है। विस्तार भय के कारण सभी का उल्लेख करना संभव नहीं है।

संदर्भः

1. डॉ0 हरिशरण वर्मा के नाटक – संग्रह अभिनन्दन, नाटक अपर्णा पृ0 44–45
2. वही पृ0 46–47
3. वही पृ0 47
4. वही पृ0 47
5. वही पृ0 48
6. डॉ0 हरिशरण वर्मा के, संस्कार एवं अन्य नाटक, नाटक वचन पृ0 59–60
7. वही पृ0 59–60
8. वही पृ0 60
9. वही पृ0 60

डॉ0 संगीता वर्मा

सहायक प्रोफेसर हिन्दी

इंस्टीटयुट ऑफ ला एण्ड रिसर्च

जसाना, फरीदाबाद,

हरियाणा

महाकवि कालिदास कृत अभिज्ञानशाकुन्तलम् में सौंदर्य वर्णन

बलजीत सिंह

सारांश

संस्कृत साहित्य विश्व का सबसे विशाल साहित्य है। अनेक ऐसे कवि हुए हैं जिन्होंने अपनी कृतियों के माध्यम से न सिर्फ मानवीय समाज को ज्ञान देकर आपस में जोड़ा बल्कि उनको विभिन्न प्रकार के काव्यों के सौंदर्यीकरण से भी अवगत करवाया है। उनमें से व्यास, भास, कालिदास, भवभूति, भारवि, दण्डी, जैसे अनेक कवि हुए हैं। महाकवि कालिदास का जो सौंदर्य अपनी रचनाओं में वर्णित है वह अद्वितीय, अकल्पनीय है। महाकवि कालिदास की अभिज्ञानशाकुंतल विश्व–प्रसिद्ध कृति है। इसके सौंदर्यता के कारण ही महाकवि कालिदास को भारत का शेक्सपियर कहा जाता है। इस रचना में नायक सौंदय, नायिका सौंदर्य, प्रकृति सौंदर्य, आश्रम सौंदर्य आदि अनेक सौंदर्य की अनुभूति हमें होती है। ऐसे तो सुंदरता का आनन्द एक साधारण व्यक्ति भी उठा पाता है लेकिन जो महाकवि ने अपनी मानसिक कल्पना से इसमें वर्णन किया है वैसा कहीं नहीं मिलता। यही कारण है कि काव्यों की सुन्दरता में वृद्धि करने के लिए महाकवि आज भी अपनी अमिट छाप हम जैसे साधारण जन के मस्तक पटल पर स्थापित किए हुए हैं।

मुख्य–शब्द : कालिदास, अभिज्ञानशाकुन्तल, गेटे, दुष्यन्त, शकुन्तला, ऋषि दुर्वासा, सोमतीर्थ, आचार्य कण्व, हिरण शावक, आकाशगंगा, नक्षत्र।

अभिज्ञानशाकुन्तलम् महाकवि कालिदास का विश्व विख्यात एक ऐसा अप्रतिम नाटक है जिसका अनुवाद लगभग सभी विदेशी भाषाओं में भी हो चुका है। संस्कृत विद्वानों में यह उक्ति प्रसिद्ध है –

"काव्ययेषु नाटकं रम्यं तत्र रम्या शकुंतला।
तत्रापि च चतुर्थोऽङ्कस्तत्र श्लोकचतुष्टयं ।।"

अर्थात् काव्य में नाटक सबसे सुन्दर होते हैं। उनमें सर्वाधिक सुन्दर अभिज्ञानशाकुन्तलम् नाटक है तथा अभिज्ञानशाकुन्तलम् में भी चतुर्थ अंक एवं चतुर्थ अंक में भी चार श्लोकों का अधिक महात्म्य है। यह एक ऐसा नाटक है जिसमें महाकवि ने काव्य सौंदर्य, प्रकृति सौंदर्य, शकुन्तला– दुष्यन्त का सौंदर्य तथा श्रृंगार एवं करुण रस का एक बेजोड़ रचना की है। जर्मन विद्वान् गेटे ने अपने शब्दों में शाकुन्तल नाटक की प्रशंसा इस प्रकार की है:–

"वासन्तं कुसुमं फलं च युगपद् ग्रीष्मस्य सर्वं च यद्,
यच्चान्यन्यमनसो रसायनमतः सन्तर्पणं मोहनं।
एकीभूतमभूतपूर्वमथवा स्वर्लोकभूलोकयो–
रैश्वर्यं यदि वाञ्छसि प्रिय सखे! शाकुन्तलं सेव्यताम्।।"

अर्थात् वसन्त ऋतु के सम्पूर्ण फल और फूल तथा ग्रीष्म ऋतु के सम्पूर्ण फल–पुष्प और जो कुछ भी मन को औषधि की तरह संतृप्त और मोहित करने वाला है। स्वर्गलोक और भूलोक दोनों के अभूतपूर्व एकत्रित ऐश्वर्य को हे प्रिय मित्र! यदि तुम एक स्थान पर देखना चाहते हो तो 'शाकुन्तल' का सेवन करो। वैसे तो महाकवि ने अनेक प्रकार के सौंदर्य का वर्णन अभिज्ञानशाकुंतलम् में किया है लेकिन हम इस शोधपत्र में प्रकृति, शकुन्तला–दुष्यन्त के अप्रतिम सौंदर्य के बारे में विस्तार से जानेंगे।

प्रकृति सौंदर्य:– महाकवि प्रकृति प्रेमी है। उनकी सभी रचनाओं में प्रकृति का वर्णन मिलता है। ग्रीष्म ऋतु से प्रारम्भ इस नाटक में बताया गया है कि इस ऋतु में शीतल जल से स्नान करना अच्छा लगता है। फूलों की खुशबू से चारों और वातावरण सुगंधमय रहता है। छायादार वृक्षों में निद्रा तथा दिन का अन्तिम प्रहर बहुत रमणीय बतलाया गया है।[1] जब राजा दुष्यन्त और उनका सूत रथ पर हिरन का पीछा करते हैं तो प्रकृति की सुन्दरता का वर्णन कुछ इस तरह कवि द्वारा प्रस्तुत किया जाता है कि जो वस्तु देखने में छोटी है वो रथ के वेग से विशाल लगने लगे जाती हैं। जो टूटी हुई वस्तुएं हैं वो जुड़ी हुई सी प्रतीत होती हैं तथा जो स्वभाव से जो टेढ़ी वस्तु है वह नेत्रों को सीधी प्रतीत होती है।[2] सोमतीर्थ से लौटे आचार्य कण्व जब अपने शिष्य से समय के बारे पूछते हैं तो उनका शिष्य आसमान की ओर देखकर प्रभात वेला का अनुमान लगाता है। वह कहता है कि प्रातः कालीन बेरों के वृक्षों पर ओस लाल वर्ण से युक्त है। मृग अपने शरीर में जम्हाई ले रहा है तथा मयूर रात्रि शयन कुटिया की छत को छोड़ रहा है।[4]

शकुन्तला की विदाई के समय भी सभी वृक्ष–वनस्पतियां आदि श्रृंगार के लिए मांगलिक रेशमी वस्त्र, चरणों के लिए महावर रस तथा अनेक आभूषण प्रदान करते हैं। जिससे प्रकृति सौंदर्य अत्यधिक अद्वितीय दिखलाई पड़ता है। शकुन्तला के पति–गृह जाने के समय ऋषि कण्व तपोवन के वृक्षों और लताओं को सम्बोधित करते हुए कहते हैं–

"पातुं न प्रथमं व्यवस्यति जलं युष्मास्वपीतेषु या
नादत्ते प्रियमण्डनापि भवतां या पल्लवम् ।
आद्ये वः कुसुमप्रवृत्तिसमये यस्याः भवत्युत्सवः
सेयं याति शकुन्तला पतिगृहं सर्वैरनुज्ञायताम् ।।"

अर्थात् जो शकुन्तला वृक्षों के जल पीने से पहले कभी भी प्रथम जल नहीं ग्रहण करती थी। जो फूलों का शौक रखते हुए भी फूलों को नहीं तोड़ती थी। सर्वप्रथम जिसको पुष्पोत्पत्ति के अवसर पर उत्सव होता था। वह आज पति के घर जा रही है सब वनस्पति आज्ञा दो। दूसरे उदाहरण के रूप में बताया है कि मृगों ने कुशा घास उगल दिए हैं। मयूरों ने नृत्य करना छोड़ दिया है। वृक्षों ने आंसू रूपी पत्तों को गिरा दिया है। अन्तिम बार फिर अपनी बहन रूपी वन ज्योत्स्ना से आलिंगन करके कहती है– अरी वन ज्योत्स्ना ! आम के साथ रहने वाली तुम बाहर निकली भुजाओं से मेरा आलिंगन करो। आज से मैं तुमसे दूर हो जाऊंगी। 'वन ज्योत्स्ने ! आम्रसंगतापि...... भविष्यामि।'

एक हिरण शावक शकुन्तला के वस्त्रों में पुत्रवत् लिपट रहा है जिसे माता–हीन होने पर सावँक के द्वारा पालन– पोषण किया गया था तथा घास से चोटिल होने पर इंगुदी का तेल लगाने का वृतांत

बताया गया है। सप्तम अंक में मातली द्वारा राजा दुष्यन्त को आकाश मार्ग का परिचय तथा आकाश–गंगा वर्णन, नक्षत्र तथा धूल रहित प्रवह नामक वायु के मार्ग का वर्णन अति सुन्दर ढंग से महाकवि द्वारा प्रस्तुत किया गया है।[10] इस प्रकार हम कह सकते हैं कि प्रकृति के समस्त रूपों के चित्रण में कालिदास ने बहुत सुन्दर वर्णन किया है।

शकुन्तला सौंदर्यः– मुख्य पात्र नायिका शकुन्तला का स्थान सर्वोपरि है। प्रकृति के संरक्षण में उसके सौंदर्य का विकास हुआ है। उसके इसी सौंदर्य पर राजा मुग्ध हो जाता है। जिसका वर्णन महाकवि ने ऐसा किया है कि इस अगर आश्रम में रहने वाले इस जन का इतना सुन्दर रूप है तो वास्तव में वन की लताओं ने उपवन की लताओं को गुणों में मात दे दी है। यथाः–

"शुद्धान्तमिदं वपुराश्रमवासिनो यदि जनस्य।
दूरीकृताः खलु गुणैरुद्यानलता वनलताभिः।।[11]

राजा दुष्यन्त कहते हैं कि ऋषि कण्व उन्हें तपस्या **के योग्य बनाना चाह रहे हैं लेकिन यह तो नीलकमल के पत्ते के समान है और ऋषि इससे शमीलता को काटना चाहा रहा है। यथाः–**

"इदं किलाव्याजमनोहरं वपुस्तपः क्षमं साधयितुं य इच्छति।
ध्रुवं स नीलोत्पलपत्रधारया शमीलतां छेतुमृषिर्व्यवस्यति।।"[12]

महाकवि ने शकुन्तला को एक ऐसे कमल की भांति प्रस्तुत किया है जो कई से लिपटा हुआ है। चंद्रमा की तरह मलिन होता हुआ भी सुंदर प्रतीत होता है।[13] कवि प्रकृति प्रेमी हैं तो सुन्दरता का वर्णन वृक्षों, पल्लवों, शाखाओं से उपमा देना उनकी चतुर्यता को दर्शाता है। यथाः– शकुन्तला के अधर किसलय के समान लाल वर्ण के हैं। भुजाएं लता की मृदुल शाखाओं के समान हैं। जैसे पुष्प अपनी ओर लुभावने होते हैं वैसे ही शकुन्तला के अंग हैं।[14] प्रथम अंक में भ्रमर का बहुत सुन्दर वर्णन किया गया है कि वह बार–बार शकुन्तला के पास आकर जैसे कोई रहस्यमयी बात कर रहा हो। डरी हुई शकुन्तला अपने हाथों से भ्रमर को दूर करने का प्रयास किया जा रहा है।[15]

एक अन्य जगह शकुन्तला के सौंदर्य के बारे में बताया गया है कि ऐसी सुन्दर आकृति मानवी स्त्रियों में उत्पन्न हो ही नहीं सकती। क्योंकि चंद्रमा आदि दिव्य ज्योति पृथ्वी से उत्पन्न नहीं होती।[16] राजा दुष्यन्त ने भी सौंदर्य की मूर्ति उनको कहा है और शिकार प्रेमी राजा अब इसलिए बाण नहीं चला पाता क्योंकि मृगों के नेत्र शकुन्तला के नेत्रों से मिल रहे है।[17] शकुन्तला विधाता की सबसे सुन्दर रचना है। जैसे विधाता ने सर्वप्रथम चित्र बनाया फिर उसमें प्राण डालें। उसके बाद उसमें सम्पूर्ण विश्व का सौंदर्य समाविष्ट कर दिया। इस प्रकार अद्वितीय सुन्दर शकुन्तला की सृष्टि हुई ।[18] कालिदास ने शकुन्तला के बारे में बताया है कि उसका निर्दोष सौंदर्य न सुंघा हुआ फूल के समान है। नाखूनों से ने काटा हुआ कोमल पता है। बिना बिंधा हुआ रत्न तथा जिसके रस का आस्वाद किसी भी प्राणी द्वारा नहीं किया गया हो ऐसा नवीन मधु है जो अखंडित फल है। जैसेः–

"अनाघ्रातं पुष्पं किसलयमलूनं कररुहै
रनाविद्धं रत्नं मधु नवमनास्वादितरसम् ।
अखण्डं पुण्यानां फलमिव च तद्रूपमनघं,
न जाने भोक्तारं कमिह समुपस्थास्यति विधिः।।"[19]

दुष्यन्त के राज दरबार में जब शकुन्तला अपने बंधुजनों के साथ जाती है तब राजा उसे शापवश पहचान नहीं पाते। लेकिन उनके सौंदर्य को देखकर कहते हैं कि जैसे पीले पत्तों के बीच में कोंपल की सुन्दरता साफ नहीं दिखाई देती वैसे ही यह कौन है जो तपस्वियों के मध्य घुंघट किए हुए है।[20]

दुष्यन्त सौंदर्यः– अभिज्ञानशाकुन्तलम् का मुख्य पात्र नायक पुरुवंशीय राजा दुष्यन्त है। कोई भी कवि अपने नायक में सब प्रकार के गुणों और सौंदर्य को देखना चाहता है। उसी प्रकार महाकवि ने भी संसार के सम्पूर्ण पुरुषत्व सौंदर्य का वर्णन राजा दुष्यन्त में समाहित किया है। जिस प्रकार एक राजा में प्रकृति प्रेमी, सुडौल, शक्तिशाली, श्रृंगार, वियोग, वीर रस तथा अपने कर्तव्य का पालन आदि गुण होने चाहिए उसी प्रकार महाकवि ने अभिज्ञानशाकुन्तलम् में प्रदर्शित किया है। नाटक में राजा दुष्यन्त को काले मृग का पीछा करते हुए ऐसे दिखाया गया है जैसे पिनाक को हाथ में धारण किए हुए साक्षात् शिव ही हो। यथाः–

"कृष्णसारे ददच्चक्षुस्त्वयि चाधिज्यकार्मुके।
मृगानुसारिणं साक्षात् पश्यामीव पिनाकिनं।।"[21]

जहां कालिदास ने नारी सौंदर्य में कोमलता आदि गुणों की महत्ता को स्वीकारा है, वहीं पुरुष की सुन्दरता में भी शारीरिक हृष्ट–पुष्ट आदि को माना है। राजा शिकार करने से लगातार धनुष की प्रत्यंचा खींच रहा है, जिससे उसके सीने का अग्रभाग कठोर हो गया है। सूर्य की किरणों को भी सहन करने वाला हो गया है। इतना विशाल शरीर है कि अनेक दिनों तक वन में रहने से दुर्बलता आ जाने पर भी उसके लक्षण दिखाई नहीं दे रहे हैं। राजा को पर्वत पर विचरण करने वाले हाथी के समान महाकवि ने सुन्दर वर्णन किया है। यथाः–

''अनवरतधनुर्ज्यास्फालनक्रूरपूर्व,रविकिरणसहिष्णु स्वेदलेशैरभिन्नम्।
अपचितमपि गात्रं व्याप्तत्वादलक्ष्यं, गिरिचर इव नागः प्राणसारं बिभर्ति।।"[22]

द्वितीय अंक में ही कालिदास ने शिकार के कारण से हल्के शरीर की चर्बी घटने से परिश्रमी शरीर का वर्णन किया है। यहां बताया है कि राजा जीवों की क्रोध एवं भय के चित्त को जानने वाला हो गया है। अब राजा के बाण और भी ज्यादा अपने लक्ष्य पर जाने वाले हो गए हैं। यथाः–

"मेदश्छेदकृशोदरं लघु भवत्युत्थानयोग्यं वपुः,
सत्वानामपि लक्ष्यते विकृतिमच्चितं भयक्रोधयोः।
उत्कर्षः सः च धन्विनां यदिषवः सिध्यन्ते लक्ष्ये चले,
मिथ्या ही व्यसनं वदन्ति मृगयामीदृग्विनोदः कुतः।।"[23]

तपस्वियों के मुख से भी कालिदास जी ने दुष्यन्त की प्रशंसा करते हुए कहा है कि राजा सम्पूर्ण पृथ्वी का पालन करने वाला है। जिस प्रकार दरवाजा किसी घर की रक्षा करता है उसी प्रकार नगर की अर्गला के समान राजा की भुजाएं प्रत्यंचा चढ़ाए हुए रक्षा कर रही है। यथाः–

"नैतच्चित्रं यदयमुदधिश्याम सीमां धरित्री–
–मेकः कृत्स्नां नगरपरिघप्रांशुबाहुर्भुनक्ति।

आशंसन्ते सुरसमितयः सक्तवैरा हि दैत्यै–
रस्याधिज्ये वपुषि विजयं पौरुहूते च वज्रे ।।"[24]

शकुन्तला से प्रेम हो जाने पर राजा की कामदेव द्वारा सताने की स्थिति का अलौकिक वर्णन किया गया है। राजा शकुन्तला की याद में प्रत्येक रात्रि जाग रहा है। आंखों से लगातार आंसुओं के गिरने से राजा के हाथ कंगन की कांति कुछ फीकी सी हो गई है।[25] शकुन्तला को दुर्वासा ऋषि के शाप के कारण से राजा पहचानने की भूल कर देता है और धीवर से प्राप्त अपनी अंगुलियों से जब शकुंतला को याद करता है तो राजा वैराग्य से युक्त हो जाता है। कालिदास ने यहां वियोग श्रृंगार का ऐसा सौंदर्य प्रस्तुत किया है कि जैसे साक्षात छवि ही सामने आ गई हो। शकुन्तला को याद करते हुए राजा के बारे में बताया गया है कि राजा ने अब श्रृंगार करना बंद कर दिया है। उसका कंगन ढीला हो गया है। संपूर्ण रात्रि जागरण के कारण से आंखों में भारीपन दिखाई पड़ता है। जैसेः–

"प्रत्यादिष्टविशेषमण्डनविधिर्वामप्रकोष्ठोच्छ्लयं,
बिभ्रत्काञ्चनमेकमेव वलयं श्वासोपररक्ताधरः।
चिन्ताजागरणप्रतान्तनयनस्तेजोगुणादात्मनः,
संस्कारोल्लिखितो महामणिरिव क्षीणोपि नालक्ष्यते।।"[26]

संक्षेप में कहा जाए तो कालिदास ने नाटक में सौंदर्य का अप्रतिम वर्णन किया है। शकुन्तला के सौंदर्य का वर्णन विधाता की "आद्या दृष्टि" है। जिस प्रकार एक नायक सर्वगुण संपन्न होता है उसी प्रकार महाकवि ने संपूर्ण सौंदर्य राजा दुष्यन्त में व्याप्त किया है। तो इस प्रकार शकुन्तला के प्रकृति प्रेमी होने का वर्णन न केवल बाह्य अपितु अंतःकरण से भी महाकवि ने सौंदर्यता का वर्णन है। कालिदास के लिए प्रकृति एक सजीव अभिव्यक्ति है, जो जीवन से अनुप्राणित होकर मानव समाज के सभी सुखों और दुःखों में भागीदारी दिखाती है। अभिज्ञान शाकुन्तल विश्व अनुपम एवं अद्वितीय रचना है। इसके सौंदर्य व प्रेम कला पक्ष की जितनी प्रशंसा की जाए कम है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. अभिज्ञानशाकुन्तलम् : सम्पादक डॉ॰ परमानंद गुप्त, वेदप्रकाश वेदालंकार, पृ॰ 3
2. अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 1/3
3. अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 1/9
4. अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 4/2
5. अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 4/5
6. अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 4/9
7. अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 4/12
8. अभिज्ञानशाकुन्तलम् : सम्पादक डॉ चन्द्रशेखर शर्मा, डॉ॰ जितेन्द्र कुमार पृष्ठ संख्या ख–85
9. अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 4/14
10.अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 7/6–7
11.अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 1/15
12.अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 1/16
13.अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 1/17
14.अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 1/18
15.अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 1/20
16.अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 1/22
17.अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 2/3
18.अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 2/9
19.अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 2/10
20.अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 5/4
21.अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 1/6
22.अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 2/4
23.अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 2/5
24.अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 2/15
25.अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 3/11
26.अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 6/6

बलजीत सिंह
सहायक प्राध्यापक (संस्कृत)
राजकीय महाविद्यालय आदमपुर (हिसार)
e-mail: evidsingla@gmail.com

67

वर्तमान शैक्षिक स्थिति का अध्ययनः भारतीय प्राथमिक शिक्षा के संदर्भ में

डॉ0 प्रताप सिंह राना, नसरीन फातिमा

सारांश

किसी भी राष्ट्र का आर्थिक विकास उस राष्ट्र में उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों के साथ–साथ मानवीय संसाधनों निर्भर करता है। मानव संसाधन प्रकृति की एक सर्वोत्तम रचना है। शिक्षा के द्वारा मानव में ऐसी योग्यता एवं क्षमता का विकास होता है, जिससे वह उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों का अनुकूतम स्तर पर उपयोग करने में सक्षम होता है। मनीषियों का मानना है कि शिक्षारूपी भवन के निर्माण के लिए उत्तम संस्कारों का सुदृढ़ चारित्रिक आधार आवश्यक है।

शिक्षा व्यक्ति और समाज का बुनियादी आधार है। अपने औपचारिक और अनौपचारिक रूप में शिक्षा विकास की एक सतत प्रक्रिया है, जो व्यक्ति, समाज और संस्थाओं को स्वरूप प्रदान करती है। अनौपचारिक शिक्षा का कोई निश्चित स्वरुप नहीं होता, वह संस्थानिक ढांचे से मुक्त होती हैं, पर औपचारिक शिक्षा का अपना एक संस्थानिक स्वरूप होता है। अपनी दोनों ही रूपों में शिक्षा समाज से प्रभावित होती है और समाज को प्रभावित भी सकती है। शिक्षा की शक्ति अद्भुत है, वह बदलाव का साधन है और सांस्कृतिक विरासत में संरक्षण की प्रेरणा भी है। यदि शिक्षा बदलाव का माध्यम नहीं बनेगी तथा समाज में विकास की विवेचनात्मक सोच और दृष्टि विकसित नहीं करेगी, तो वह अपनी सामाजिक उपयोगिता खो देगी। साथ ही यदि शिक्षा, ज्ञान, सांस्कृतिक विरासत और धरोहरों को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक नहीं पहुंचाएगी, तो समाज अपनी जड़ों से कट जाएगा तथा उसकी इतिहास की समझ और सभ्यता का बोध समाप्त हो जाएगा। प्रस्तुत शोध पत्र 'वर्तमान शैक्षिक स्थिति का अध्ययन :भारतीय प्राथमिक शिक्षा के संदर्भ में'प्रस्तुत किया गया है।

शब्द संकेत–

प्राथमिक शिक्षा एवं उसकी वर्तमान स्थिति, N.C.E.R.T., भारतीय संविधान।

प्रस्तावना–

शिक्षा मानव विकास सूचकांक का एक प्रमुख कारक है। शिक्षा के माध्यम से ही मनुष्य अपना सर्वांगीण विकास करने में सफल हो सकता है। भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात से ही राष्ट्रीय सरकारों ने मानव विकास के सूचकांकों में अपनी स्थिति को सुधारने हेतु विभिन्न प्रकार की योजनाओं को आरंभ किया जिनके माध्यम से गरीबी, कुपोषण एवं अशिक्षा जैसी गंभीर समस्याओं को दूर करने के प्रयास किए गए। इन प्रयासों के दौरान यह बात स्पष्ट रुप से सामने आयी कि मानव विकास सूचकांक के अधिकतम संकेत में शिक्षा की भूमिका अत्यंत प्रभावशाली है। शिक्षा के माध्यम से ही समाज के हर क्षेत्र में जागरुकता बढ़ाई जा सकती है जिसका स्पष्ट प्रभाव हमें यहां व्याप्त सामाजिक समस्याओं को दूर करने में प्राप्त हो सकेगा। विद्यालीय शिक्षा समाज के सर्वांगीण विकास के लिए अत्यधिक आवश्यक है। प्राथमिक शिक्षा के रूप में यह शिक्षा जहां समाज को निरक्षरता से साक्षरता की ओर बढ़ाती है वहीं दूसरी ओर माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक शिक्षा छात्रों में समाज के प्रत्येक पहलू को गंभीरता से समझने का अवसर देती है एवं उन्हें आने वाले समय में रोजगार चयन की कठिन प्रक्रिया को सुलझाने की ओर अग्रसर करती है। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि मानव विकास के प्रभावी निष्पादन शिक्षा एक अनिवार्य तत्व है।

शिक्षा का तात्पर्य केवल सीखना, ज्ञान प्राप्त करना या विद्या ग्रहण करना ही नहीं है। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने शिक्षा को परिभाषित करते हुए लिखा है कि'शिक्षा से मेरा अभिप्राय बालक एवं मनुष्य के शरीर, मस्तिष्क एवं आत्मा के सर्वांगीण एवं सर्वोत्तम अंश की अभिव्यक्ति से है।'

'शिक्षा जन्म से प्रारंभ होकर मृत्यु तक चलने वाली एक सतत प्रक्रिया है।'बालक के जन्म लेने से पूर्व और जन्म के काल के बाद भी सीखने की प्रक्रिया परिवार में मां के आंचल से ही प्रारंभ हो जाती है, तत्पश्चात परिवार, पास –पड़ोस, मित्र एवं समाज की विभिन्न संस्थाओं से बालक के शैक्षिक ज्ञान में अभिवृद्धि होती है।

सत्रहवीं शताब्दी में अंग्रेजों का हमारे देश में आगमन हुआ। इससे पहले भारतीय शिक्षा प्रणाली मूल्यों, नैतिकता तथा धार्मिकता पर आधारित थी। प्रायः सभी कालों में शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य मोक्ष एवं आध्यात्मिकता की प्राप्ति था।

प्राचीन काल के विद्वानों ने सामाजिक, राजनैतिक व आर्थिक जीवन के मूलभूत सिद्धांतों को एक व्यापक प्रणाली के रूप में प्रस्तुत किया और इसे धर्म की संज्ञा दी। इसलिए प्राचीन काल में शिक्षा भी धर्म से ही निर्देशित होती थी। धर्म ने ही भारत में साहित्य को जन्म दिया तथा धर्म ने ही शिक्षा का स्वरुप निर्धारित किया था। वास्तव में प्राचीन भारतीय शिक्षा भी धर्म की ही देन है। वेदों को भारतीय जीवन दर्शन का स्रोत माना जाता है। वैदिक काल में शिक्षा दो भागों में विभक्त थी–परा और अपरा। इसमें से परा विद्या अर्थात अलौकिक विद्या को अपरा विद्या से श्रेष्ठ समझा जाता था। वैदिक कालीन शिक्षा के प्रमुख उद्देश्य इस प्रकार निर्धारित थे कि व्यक्ति जीवन के सर्वोच्च लक्ष्य मोक्ष की प्राप्ति कर सकती। वैदिक कालीन शिक्षा के प्रमुख उद्देश्य नैतिक चरित्र का विकास, पवित्रता एवं धार्मिकता का विकास, मनुष्य में विभिन्न जीवन मूल्यों का विकास आदि मनुष्य को धार्मिकता एवं आध्यात्मिकता की ओर प्रेरित करते थे। बौद्ध कालीन शिक्षा में आध्यात्मिकता पर जोर न देकर नैतिकता पर अधिक बल दिया गया था। बौद्ध कालीन शिक्षा की भांति ही मुस्लिम कालीन शिक्षा भी धार्मिकता पर आधारित थी। इस्लाम धर्म के अनुयायी भी ज्ञान को निजात (मुक्ति) प्राप्त करने का साधन मानते थे।

इसके पश्चात भारत में सन् 1600 ई० ईस्ट इंडिया कंपनी की स्थापना हुई। शुरू में इसका उद्देश्य व्यापार करना था किंतु 1757 में प्लासी का युद्ध एवं 1765 में बक्सर के युद्ध के पश्चात् ईस्ट इंडिया कंपनी ने राजनैतिक रूप धारण कर लिया। अपनी राजनैतिक सत्ता को स्थायी बनाने के लिए कंपनी ने अपना ध्यान भारतीय शिक्षा की ओर आकर्षित किया। कंपनी ने ईसाई मिशनरियों को भारत बुलाया

और उन्हें शिक्षण संस्थाएं खोलने के लिए प्रोत्साहित किया, जिससे भारतीयों में ईसाई धर्म का प्रचार हो सके। 1792 में चार्ल्स ग्राण्ट ने भारतियों के लिए शिक्षा –प्रसार की आवश्यकता को जोरदार ढंग से प्रतिपादित किया।

उसकी धारणा थी कि अंग्रेजी साहित्य तथा विज्ञान की शिक्षा प्राप्त करने से उपरांत भारतियों की पुरानी विचारधारा में परिवर्तन आएगा और वे सरलता से ईसाई धर्म के अनुयायी बन जायेंगे। 1835 में लॉर्ड मैंकाले ने अरबी–फारसी एवं संस्कृत साहित्य की अवहेलना करते हुए एवं अंग्रेजी साहित्य को उत्कृष्ट बताते हुए उसने कहा कि एक अच्छे यूरोपीय पुस्तकालय की एक अलमारी का साहित्य भारत व अरब के संपूर्ण साहित्य के समान महत्व रखता है।

भारतीयों को अंग्रेजी भाषा के माध्यम से शिक्षित करने का समर्थन करते हुए उसने कहा कि–"हमें एक ऐसे वर्ग को बनाने का प्रयास करना चाहिए जो हमारे एवं हमारे द्वारा शासित लाखों लोगों के बीच दुभाषिए का काम कर सके तथा जो रंग व रूप में भारतीय हों परंतु रुचि, विचार, आदर्श, एवं बुद्धि में अंग्रेज हों। इससे अंग्रेजों ने मन, मस्तिष्क एवं दोहा से भारतीयों को अंग्रेज बना दिया और उन्हें उस शिक्षा से दूर कर दिया जो उन्हें मूल्य ईश्वराधीन एवं नैतिकता आदि तत्वों से जोड़े रखती थी।

N.C.E.R.T. ने SOCIAL, MORAL AND SPIRITUAL VALUES–नामक एक पुस्तिका प्रकाशित की जिसमें 83 मूल्यों की एक सूची दी गयी है, जिनके आधार पर सामाजिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों की चर्चा की गयी है। वे मूल्य निम्नलिखित हैं–दूसरों के सांस्कृतिक मूल्यों की सराहना, सार्वभौमिक प्रेम, एकात्मकता, अस्पृश्यता विरोध, सत्य, समाज सेवा, नागरिकता, सहिष्णुता, चिंतन, दूसरों की चिंता, सत्यता, आत्मनिर्भरता, दूसरों का ध्यान, न्याय, स्वाध्याय, दल–कार्य, मानवतावाद, स्वसमर्थन, समय की पाबंदी, सहायता, आत्मविश्वास, दल–भावना, ईमानदारी, स्व–सम्मान, पृच्छाभाव, कृतज्ञता, स्व–सहायता, धर्मनिरपेक्षता, सज्जनता, स्वानुशासन, सहानुभूति, दूरदर्शिता, सामाजिक न्याय, समाजवाद, स्वतंत्रता, सादा जीवन, देश भक्ति, वफादारी, वृद्धावस्था का सम्मान, शांति, मित्रता, दूसरों का सम्मान, अहिंसा, समानता, नियमितता, राष्ट्रीय चेतना, सहनशीलता, साधन सम्पन्नता, नेतृत्व, अनुशासन, आत्म–नियंत्रण, राष्ट्रीय एकता, धर्म, निष्कपटता, धर्म –परायणता, जिज्ञासा, शुचिता, दया, साहस, स्वास्थ्यकर जीवन, दयालुता, स्वच्छता, भक्ति, पहल, सामाजिक उत्तरदायित्व का भाव, शिष्टाचार, राष्ट्रीय जन संपत्ति का महत्व, अच्छे –बुरे में भेद, सामान्य लक्ष्य, करुणा, संयम, ज्ञान की खोज, समय का सदुपयोग, आज्ञा पालन, राष्ट्रीय समाकलन, साथी भावना, अच्छा आचरण, शारीरिक कार्य का सम्मान, व्यक्ति का महत्ता, प्रजातांत्रिक निर्णय लेना, सहयोग, सामान्य अच्छाई, अखण्डता, N.C.E.R.T. के इन 83 मूल्यों को पांच भागों में बांटा गया है–

1. सदाचार –28
2. सत्य–8
3. शांति–12
4. प्रेम–8
5. अहिंसा–27

गांधीवादियों का तर्क है कि वर्तमान भारत में सर्वाधिक प्रभाव महात्मा गांधी का है। उनकी दृष्टि से भारत में गांधीजी द्वारा प्रतिपादित एकादश व्रत–1–सत्य, 2–अहिंसा, 3–अस्तेय, 4–अपरिग्रह, 5–ब्रहमचर्य, 6–अस्वाद, 7–अभय, 8–अस्पृश्यता निवारण, 9–कायिकश्रम, 10–सर्व धर्म समभाव और, 11–विनम्रता को ही मूल्यों के रूप में शिक्षा दी जानी चाहिए।

अध्ययन के उद्देश्य–

प्रस्तुत शोध पत्र के अध्ययन के उद्देश्य प्रमुख हैं–

1–वर्तमान प्रारंभिक शिक्षा पाठ्यक्रम के अंतर्गत मूल्य आधारित आध्यात्मिक शिक्षा के अंशों का ध्यान करना।

2–वर्तमान शैक्षिक स्थिति का प्राथमिक शिक्षा के संदर्भ में अध्ययन करना।

3–प्राथमिक शिक्षा में मूल्य– आधारित, आध्यात्मिक शिक्षा प्राप्त कर रहे छात्रों पर होने वाले प्रभाव का अध्ययन करना।

4–ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड के अनुसार प्रत्येक विद्यालय में एक कक्षा में एक शिक्षक अनुपात से शिक्षक की नियुक्ति की बात कही गई साथ ही साथ जहां पर यह सम्भव न हो वहां कक्षा शिक्षक की व्यवस्था की जाए का अध्ययन करना।

प्राथमिक शिक्षा एवं उसकी वर्तमान स्थिति–

संपूर्ण विश्व में प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य बनाने का प्रचलन 19वीं शताब्दी के मध्य से ही प्रारंभ हो गया था। सर्वप्रथम इस दिशा में सफल प्रयास 1842में स्वीडन में हुआ। इसके बाद यह कार्य 1852 में संयुक्त राज अमेरिका ने किया। नार्वे ने 1860 में प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य किया। इंग्लैंड ने इसके बाद 1870में यह कार्य किया। यूरोप के कुछ छोटे–छोटे देशों जैसे हंगरी, पुर्तगाल, स्विट्ज़रलैंड ने 1905में प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य किया। रूस ने भी लाल क्रांति के बाद प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य कर दिया था। इस समस्त देशों में प्रायः 7–14 वर्ष तक के बच्चे अनिवार्य रूप से शिक्षा प्राप्त करते हैं।

अगर वर्तमान शैक्षिक स्थिति का अध्ययन भारतीय प्राथमिक शिक्षा के संदर्भ में किया जाए तो भारतवर्ष में अनिवार्य शिक्षा की दिशा में सर्वप्रथम प्रयास बड़ौदा नरेश महाराजा सयाजी राव गायकवाड़ ने 1892 में किया। इसके बाद बिट्ठन भाई पटेल के प्रयासों से 1917 में पटेल कानून के अंतर्गत मुंबई नगर निगम क्षेत्र में प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य किया गया। इसके पश्चात तो कई राज्यों में कार्य प्रारंभ कर दिया गया परंतु इस क्षेत्र में कोई विशेष प्रगति नहीं हुई। N.C.R.T. नई दिल्ली के 6वें सर्वेक्षण 1996 के अनुसार देश में केवल 50 प्रतिशत क्षेत्रों में जिसमें 73 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती थी, जिनमें प्राथमिक विद्यालय थे इनमें से अधिकांश में वे न्यूनतम सुविधाएं उपलब्ध नहीं थीं जो कि शिक्षा प्राप्त करने के लिए आवश्यक समझी जाती थीं।

शिक्षा ही राष्ट्र प्रगति एवं कल्याण का माध्यम हो सकती है। देश व समाज का हित जितना शिक्षा से हो सकता है उतना किसी अन्य स्रोत से नहीं हो सकता है। भारत में राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली का विकास करने के लिए शिक्षा के संपूर्ण क्षेत्र की जांच की जानी

आवश्यक है क्योंकि शिक्षा प्रणाली के सभी अंग एक दूसरे पर प्रभाव डालते हैं।

वर्तमान में वैज्ञानिक युग की असामान्य परिस्थितियों में हमारे देश को एक ऐसी शिक्षा की आवश्यकता है जो प्रजातंत्र और समाजवाद के विकास में सहायक हो। इसे कोठारी आयोग ने भी स्वीकार किया है "राष्ट्रीय विकास के नवीन युग के साथ प्रजातंत्र पर निर्मित स्वाधीनता केवल प्रशासन की प्रणाली मात्र ही नहीं बल्कि जीवन की एक प्रणाली है। लोगों को समुचित जीवन स्तर प्रदान करना तथा निर्धनता दूर करना इनका संकल्प है।

भारत सरकार ने 1986 में शिक्षा की चुनौती के नाम से नई शिक्षा नीति की घोषणा की। इस नीति में प्राथमिक शिक्षा को प्रथम वरीयता देते हुए 14 वर्ष तक की आयु के सभी बच्चों के सार्वजनिक नामांकन व नियमित शिक्षा प्राप्ति तथा शिक्षा की गुणवत्ता में पर्याप्त सुधार पर बल दिया गया। जिसके लिए अनेक प्रकार की सुविधाएं जैसे बच्चों को अपनी गति से पढ़ने का अवसर, पूरक उपचारात्मक अनुदेशन व बच्चों को किसी भी एक कक्षा में एक से अधिक वर्ष तक न रोका जाना तथा बच्चों की सुविधानुसार विद्यालय समय व छुट्टियों का निर्धारण राधे दिए जाने की सुविधा प्रदान करने की व्यवस्था है। विद्यालयों में बड़े–बड़े हवादार प्रकाशयुक्त कक्ष, खिलौने, श्यामपट्ट,मानचित्र, चार्ट एवं अन्य अधिगम सामग्री तथा प्राकृतिक सुंदर मनोहारी वातावरण की व्यवस्था होनी चाहिए।

ऑपरेशन ब्लैकबोर्ड के अनुसार प्रत्येक विद्यालय में एक कक्षा में एक शिक्षक के अनुपात से शिक्षक की नियुक्ति की बात कही गयी साथ ही साथ जहां पर यह सम्भव न हो वहां कक्षा शिक्षक की व्यवस्था की जाए। इस हेतु मॉनीटर प्रणाली पुनः विकसित की जाए। कामगार बच्चों तथा मध्य में विद्यालय छोड़ने वाले बच्चों के लिए निरौपचारिक का व्यापक व क्रमबद्ध कार्यक्रम प्रारंभ हो जाने से शिक्षा में अपव्यय और अवरोधन की समस्या समाप्त हो सकती है और प्राथमिक शिक्षा का विकास सुनियोजित ढंग से प्रारंभ हो सकता है।

"भारतीय संविधान में वर्णित यह तथ्य कि 6–14 वर्ष के विद्यार्थियों की शिक्षा अनिवार्य रूप से हो सके। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात निरंतर इस हेतु प्रयास हो रहा है, परंतु दुर्भाग्य है कि इस लक्ष्य को हम आज तक नहीं प्राप्त कर सके। इसके साथ ही यह कि सुनिश्चित हो कि सन 1990 तक 11 वर्ष की आयु के सभी बच्चे पांच वर्ष की विद्यालयी शिक्षा प्राप्त कर सकें तथा 1995 तक 14 वर्ष के बालकों को निः शुल्क व अनिवार्य शिक्षा उपलब्ध करा दी जाए। पूर्व प्रधानमंत्री स्वर्गीय राजीव गांधी द्वारा क्रियान्वित की गती राष्ट्रीय शिक्षा नीति अपने अंतिम लक्ष्य को नहीं प्राप्त कर सकी।

भारतीय शिक्षा व्यवस्था में प्राथमिक शिक्षा का महत्वपूर्ण स्थान है जो शिक्षा व्यवस्था का प्रथम सोपान है। इसे शिक्षा की बुनियाद भी कहा जा सकता है। प्राथमिक शिक्षा समाप्त करने के पश्चात विद्यार्थी माध्यमिक शिक्षा में प्रवेश करते हैं। भारत के भाग्य का निर्माण इन्हीं कक्षाओं में होता है। विज्ञान, कला और शिल्प पर आधारित इस दुनिया में शिक्षा ही लोगों की खुशहाली, कल्याण और सुरक्षा के स्तर निर्धारित करती है। किंतु देखने में प्रायः यह आता है कि इस समय प्राथमिक शिक्षा का स्तर दिनों दिन गिरता जा रहा है। प्राथमिक शिक्षा की बुनियादी सुविधा का भी अभाव है, जिससे प्राथमिक विद्यालय आज अप्रासंगिक हो जाने के कारण विद्वानों ने बच्चों की शिक्षा हेतु नर्सरी विद्यालय की स्थापना पर विशेष बल दिया है।

राष्ट्रीय जीवन के साथ जितना घनिष्ठ संबंध प्राथमिक शिक्षा का है उतना माध्यमिक या उच्च शिक्षा का नहीं। जनसाधारण की शिक्षा ही राष्ट्रीय प्रगति का मूल आधार है।

वर्तमान लोकतंत्रीय व्यवस्था में संपूर्ण देश में शिक्षा के प्रथम स्तर की शिक्षा प्राप्ति के लिए प्राथमिक विद्यालयों की स्थापना की गई है। जहां कक्षा 1–8 तक की शिक्षा प्रदान की जाती है। इसके लिए निशित अनुपात में विद्यालय भवन एवं उपकरणों के साथ विद्यार्थी और शिक्षकों की सुनिश्चित व्यवस्था की गई हैं। इन प्राथमिक विद्यालयों में आवश्यकतानुसार क्रमशः पाठ्यक्रम के अनुरुप योग्य शिक्षकों की नियुक्ति की व्यवस्था है। शासन की ओर से आवश्यक वित्तीय सहायता एवं अन्य सुविधाएं मुहैया करायी जाती हैं। फिर भी समूचे प्रांत में प्राथमिक विद्यालयों से वांछित परिणाम प्राप्त नहीं हो पा रहे हैं। यही कारण है कि आधुनिक परिवेश में लोगों का झुकाव प्राथमिक विद्यालयों से कम होता जा रहा है परिणामस्वरुप विकास के इस युग में साथ में विद्यालयों की अनेक नवीन एवं परिष्कृत प्रथा प्रचलित हो रही है आज पूरे देश में प्राथमिक शिक्षा के लिए विभिन्न प्रकार के संस्थाएं शिक्षा प्रदान कर रही हैं, जिनका विभाजन दो रूपों में किया गया है–1–शासन द्वारा संचालित परिषदीय प्राथमिक स्कूल, 2–व्यक्तिगत संगठन द्वारा संचालित प्राथमिक स्कूल।

प्रत्येक बालक आत्म–परिष्कार का सबसे सशक्त साधन विद्यालयी वातावरण ही होता है क्योंकि व्यक्ति के विकास में बचपन से किशोरावस्था और तरुण होने तक तीन प्रकार की अंतः प्रेरणाएं कार्य करती हैं–1–स्वतंत्रता, 2–उत्तेजना, 3–जीवन दर्शन का निरुपण। इसने भी स्वतंत्रता की सबसे महत्वपूर्ण भूमिका होती है।जिसका वास्तविक सदुपयोग ही बालक को एक पूर्ण व्यक्ति बना सकता है।एक बालक के लिए यह कार्य उसके अपने पारिवारिक वातावरण और प्राथमिक शिक्षा संस्थान के माध्यम से ही पूर्ण हो सकता है।

वर्तमान समय में किसी भी राष्ट्र के जीवन व उसके अस्तित्व के लिए उसे एक निश्चित भू–भाग, विशाल जनसमूह, स्वशासन तथा स्वयं की भाषा संस्कृति आदि अनेक तत्वों की आवश्यकता होती है, परंतु इन सबके बावजूद भी विश्व में उसकी पहचान सबसे बढ़कर उनके अपने चरित्र के आधार पर ही की जा सकती है उसका नैतिक चरित्र जितना उदार, उच्च आदर्शोन्मुख, व्यापक और शिक्षा परक होगा, विश्व या मानव समाज राष्ट्रीय समूहों के मध्य वह उतना ही प्रतिष्ठित अनुकारणी और समृद्धि माना जाएगा। अतः उत्तम राष्ट्रीय चरित्र का विकास हर प्रकार से जागरुक रह कर किया जाना चाहिए। वर्तमान परिदृश्य में इस पावन कार्य की पूर्ति शिक्षा के प्रथम स्तर की शिक्षण संस्थाओं से ही संभव हो सकती है क्योंकि प्राथमिक स्तर पर विद्यार्थियों में जिस चरित्र की

भावना विकसित हो जाएगी वह आजीवन वर्धित होती रहेगी।

निष्कर्ष –

भारत के संदर्भ में जो कुछ भी देश में श्रेष्ठ है उसके प्रति श्रद्धावान, आस्थावान बन जाएं, राष्ट्रीय गौरव और प्रतिष्ठा के लिए सर्वथा सजग हो जाएं प्राथमिक विद्यालयों के माध्यम से शिक्षा की नींव देते समय आदर्श, चारित्रिक मूल्यों, कर्मठता, ईमानदारी, दृढ़ संकल्प, धर्मनिरपेक्षता, त्याग, सहिष्णुता, लोकतंत्रिकता, राष्ट्रीय एकता, सामाजिकता, राष्ट्र के प्रति सजकता, शिक्षा प्रसार में निष्ठा, राष्ट्रीय संस्कृति एवं भारतीय जीवन दर्शन में आस्था एवं विश्वास, मातृभाषा से प्रति अनुराग आदि गुणों के प्रति विद्यार्थियों को जागरुक करना। प्राथमिक स्तर पर विद्यार्थियों का मन ,मस्तिष्क, कोमल एवं सद– प्रवृति वाला होता है। अतः किसी भी प्रकार के शिक्षा इस स्तर पर अधिक प्रभावशाली हो सकती है। जिस प्रकार मकान बनाते समय उसकी नींव को महत्व दिया जाता है। क्योंकि जितनी अधिक नींव की मजबूती होगी, उतना ही मकान मजबूत होगा। उसी प्रकार शिक्षा ग्रहण करने में प्राथमिक शिक्षा की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। वर्तमान शैक्षिक स्थिति का अध्ययन भारतीय प्राथमिक शिक्षा के संदर्भ में औपचारिक शिक्षा व्यवस्था की प्रथम चरण को प्राथमिक शिक्षा कहा जाता है। प्राथमिक स्तर पर विद्यार्थी किसी शिक्षा संस्थान में नियमित रुप से विद्या अध्ययन आरंभ कर देता है सामान्यतः कक्षा एक से कक्षा पांच तक की शिक्षा को प्राथमिक शिक्षा की संज्ञा दी जाती है।

संदर्भ ग्रंथ–

1. डॉ० अमरनाथः प्रकाशित लेख,'प्राथमिक शिक्षा का भयावह परिदृष्य "दैनिक जागरण 13 दिसंबर 1998 (साप्ताहिक)
2. एजूकेशन एंड नेशनल डेवलपमेंट रिपोर्ट ऑफ द एजूकेशन कमीशन, एन.सी.ईआर.टी.1971 पृष्ठ–168
3. डॉ ० रामशकल पाण्डेय –भारतीय शिक्षा और शिक्षा नीति, पृष्ठ 86
4. जी०एस०डी०(प्रारंभिक शिक्षा पृष्ठ–1)
5. प्रो० रमन बिहारी लालः भारतीय शिक्षा और उसकी समस्याएं, रस्तोगी पब्लिकेशन मेरठ, 2005–06 पृष्ठ–सं०02
6. जी०ओ०आई०(1986), राशि शिक्षा नीति 1986 मानव संसाधन विकास मंत्रालय भारत सरकार, नई दिल्ली।

डॉ0 प्रताप सिंह राना
शोध निर्देशक
भगवन्त विश्वविद्यलाय, अजमेर,
राजस्थान, भारत।

नसरीन फातिमा
शोध छात्रा
भगवन्त विश्वविद्यलाय, अजमेर,
राजस्थान, भारत।

भारतीय अर्थव्यवस्था और शिक्षा पर भूमंडलीकरण के प्रभावों का अध्ययन

डॉ0 संजय गौतम, अमित कुमार

सारांश

प्रस्तुत शोध अध्ययन भारतीय अर्थव्यवस्था पर भूमंडलीकरण के प्रभावों के अध्ययन के संदर्भ में हैं। इस शोध अध्ययन में विकासशील समाज में भूमंडलीकरण की प्रक्रिया ने बाजार व अर्थव्यवस्था की सहकारी शक्तियों ने शासन की समस्याओं को तो जन्म दिया है साथ ही स्कूल परिप्रेक्ष्य अर्थात शिक्षा जगत में भी परिवर्तन ला दिया है। भूमंडलीकरण सामान्यतः एक ऐसी अवधारणा होनी चाहिए थी कि पूरे विश्व में एक संस्कृति विकसित हो जो पूरे भूमंडल को एक विश्वग्राम में परिवर्तित कर सारी दुनिया के मनुष्य– मात्र के कल्याण के लिए प्रतिबद्ध होती है। इस रुप में हमारे श्वसुधैव कुटुंबकमश्की धारणा के अनुकूल होता जिसमें विश्व मानवता के कल्याण की कामना विद्यमान है। किंतु आज वर्तमान रूप में भूमंडलीकरण एक ऐसी धारणा है जिसका मूलाधार बाजार, बाजारवाद और उपभोक्तावाद है। पूरी दुनिया को अपने बाजार के रूप में परिवर्तित कर विश्व की सर्वोच्च–श्सुपरश्शक्ति अमेरिका अपने रूप में ढालकर सांस्कृतिक दृष्टि से अपना बनाने, आर्थिक दृष्टि से अपने व्यस्त पदार्थों कि संपूर्ति के लिए पूरे विश्व को एक रंग में रंगने के संकल्प को कार्य रूप दे चुका है, पूरा विश्व उसके द्वारा परिकल्पित माल संस्कृति बनकर रह गया है। यह भूमंडलीकरण एक प्रकार से पूरी दुनिया का अमेरिकीकारण है जो सारे देश की स्थानिक संस्कृति, शिक्षा व्यवस्था आदि को अपने रंग में रंग डालने की सफल कूटनीतिक है। जिसके कारण पूरा विश्व उसकी चपेट में आ चुका है। एक प्रभंजन के प्रवेग से अमेरिकी अर्थनीतियां और तथाकथित भूमंडलीय संस्कृति चारों अपना पसारा पसार चुकी है। भूमंडलीकरण का प्रभाव भारतीय अर्थव्यवस्था एवं शिक्षा व्यवस्था पर भी पूर्ण रुप से दृष्टिगोचर होता है। भूमंडलीकरण ने पूरे विश्व के किसी भी क्षेत्र को नहीं छोड़ा है।

वर्तमान में भूमंडलीकरण का प्रभाव भारतीय अर्थव्यवस्था एवं शिक्षा के क्षेत्र को पूरी तरह से अपने में समाहित कर लिया है और शिक्षा के रूप में चिकित्सा, इंजीनियरिंग, सूचना प्रौद्योगिकी, कंप्यूटर प्रबंधन जैसे कई क्षेत्रों में बड़ी तेजी से अपनी प्रकृति चमक दमक से प्रभावित कर रहा है।

मुख्य बिन्दु

भारतीय अर्थव्यवस्था, भूमंडलीकरण, शिक्षा, उदारीकरण, निजीकरण, आर्थिक मंदी, अमेरिका विकसित राष्ट्र।

प्रस्तावना–

भारत में भूमंडलीकरण अवधारणा का सूत्रपात सन् 1991 में तत्कालीन वित्त मंत्री मनमोहन सिंह द्वारा किया गया था। मनमोहन सिंह ने 1991 के आर्थिक सुधारों के दौरान वित्त मंत्री के रूप में कार्य किया। वे पी वी नरसिम्हा राव सरकार में वित्त मंत्री थे। कुछ लोग इसे मात्र थी अवधारणा समझते हैं, तो कुछ इसे उदारीकरण अथवा निजीकरण की अवधारणा के रूप में देखते हैं। भूमंडलीकरण जो कि अंग्रेजी शब्द ग्लोबलाइजेशन का हिंदी अनुवाद है। भूमंडलीकरण को परिभाषित करने वाले विचार मुख्यतरू तीन तरह के रहे हैं–

1–यह आधुनिकीकरण की प्रक्रिया का अगला चरण है।

2–कुछ विद्वान यह मानते हैं कि सन् 1980 के दशक के पश्चात से अमेरिका जैसे विकसित राष्ट्र ने आर्थिक मंदी से उबरने और अपने उत्पादों की बिक्री हेतु विश्व के अन्य देशो की अर्थव्यवस्था में हस्तक्षेप करने की दृष्टि से उदारीकरण की नीति मुक्त उदार व्यवस्था, विश्व अर्थव्यवस्था तथा प्रौद्योगिकी के एकीकरण की नीति के सहत प्रारंभ की उसी के परिणाम स्वरुप भूमंडलीकरण का जन्म हुआ।

3–यह नई प्रक्रिया नहीं है अपितु 17 वीं शताब्दी से ही दुनिया में निवेशवाद के रूप में प्रारंभ हुई जिसके अगुआ इंग्लैंड एवं फ्रांस जैसे देश रहे। इस प्रकार आज जब यह स्थापित हो चुका है कि किसी भी विचार, वस्तु सेवा पद्धति अथवा सिद्धांत को विश्वव्यापी बनाना ही उस विचार, वस्तु सेवा पद्धति अथवा सिद्धांत का भूमंडलीकरण कहलाता है।

वस्तुतः 'भूमंडलीकरण एक व्यापक अवधारणा है जो विश्व के समस्त समाज की संरचना के समस्त पक्षों की शक्तियों के सहारे पश्चिम के अथवा सुविधा संपन्न विकसित राष्ट्रों के प्रभुत्ववादी उद्देश्यों को पूरा करने की एक महत्वाकांक्षी प्रक्रिया है। किसी समाज की अर्थव्यवस्था, राजनीति, तकनीकी संस्कृति एवं शिक्षा को प्रभावित करती है।'

भूमंडलीकरण के स्वरुप को परिभाषित करते हुए डॉ दीपिका गुप्ता लिखती हैं कि भूमंडलीकरण विकास की वह अवस्था मानी जा सकती हैं जिसमें सामाजिक, आर्थिक व सांस्कृतिक आदान –प्रदान राष्ट्र राज्य सूची कृत्रिम सीमाओं एवं नियंत्रण के रूप में विश्व स्तर पर होता है। वैश्विकरण की भूमि पर खींची हुई राष्ट्र राज्यरूपी कृत्रिम सीमाओं पर आधारित राजनीति इकाई से भिन्न उभरती हुई सांगठनिक इकाई के संदर्भ में देखा जा सकता है और भूमंडलीकरण उन सभी प्रक्रियाओं की ओर इंगित करता है जिसमें विश्व के लोगश्एकल विश्व समाजश्के रूप में संगठित हो रहे हैं।'

वर्तमान में जिस भूमंडलीकरण का शोर सर्वाधिक हो रहा है उसका प्रवेश भारत में 1990 –91 में हुआ और इसके पक्ष –विपक्ष में लोग खड़े होने लगे हैं। इसका सर्वाधिक खतरनाक प्रभाव हमारी शिक्षा पर पड़ा। इस संदर्भ में श्री रमेश अनुपम ने अपने एक लेख में उन खतरों का उल्लेख करते हुए लिखा है कि भूमंडलीकरण के नाम पर, विश्वग्राम वैविध्य या अनेकता की संस्कृति को नष्ट कर एक ही सांस्कृतिक प्रतिमान बनाए जाने की बात कही जा सकती है। अमेरिकन पश्चात संस्कृति द्वारा हमारी संस्कृति का मूल्यांकन किया जा रहा है। हमारी संस्कृति को नष्ट करने की सुनियोजित कोशिश चल रही है। यह एक तरह से बौद्धिक सांस्कृतिक हमला है। भूमंडलीकरण के नव्य आधुनिक पैरोकार यह जानते हैं कि किसी देश को आर्थिक या राजनैतिक रुप से पराजित करने से पहले इसे बौद्धिक रुप से, सांस्कृतिक रूप से पराजित करने की जरूरत सबसे पहले पडती है।

आज के विश्व समाज में यह अपरिहार्य वास्तविकता का रूप लेती जा रही है। विश्व समाज का कोई अंग इससे बच नहीं पा रहा है। इसके मूल में सूचना तकनीकी का धमाकेदार के साथ आगमन तथा जैव तकनीकी का तेजी से प्रसार। भूमंडलीकरण के आगमन के परिणाम स्वरुप भौतिकता की ओर रुझान तेजी से बढ़ा है। देशो में भी सुखोपयोग के साधनो कार, बंगला, सौन्दर्य प्रसाधन में लिप्त शहरी लोग देश की गरीबी को छुपाने का प्रयास कर रहे हैं। वस्तुतः विश्व भौतिकता की ओर इतना आगे बढ़ गया है कि अब वापसी मुश्किल है—अतरू अब इस दिशा में बढ़ना ही एकमात्र रास्ता है।

भूमंडलीकरण सामाजिक परिवर्तन की वह प्रक्रिया है, जिसमें भौगोलिक एकता सांस्कृतिक सीमाएं सिकुड़ रही हैं। सीमाओं के सिकुड़ने की पृष्ठभूमि में हैं तीव्रगामी संप्रेषण एवं परिवहन के साधन।

भूमंडलीकरण आज केवल उस आर्थिक प्रक्रिया तक ही सीमित नहीं है, जिसमें विभिन्न देशों की अर्थव्यवस्थाएं वैश्विक बाजार की ओर उन्मुख है तथा बहुराष्ट्रीय तथा वैश्विक वित्तीय संस्थाओं द्वारा नियंत्रित हैं ।अब यह एक सांस्कृतिक प्रक्रिया का रूप ले रही है, जो इलैक्ट्रोनिक मीडिया आदि के माध्यम से पश्चिम की भौतिकवादी, पूंजीवादी संस्कृति के जाल में पूरे विश्व को आवृत कर रही है।

आज हम एक ऐसे संक्रमण काल इस समय में जी रहे हैं जिसमें पुरातन से छुटकारा और नए का ग्रहण हमसे हो नहीं पा रहा है। यह नया और नई जीवन दृष्टि है क्या, इसी सोच में समकालीन चिंतना, विचारणा हलकान है। चहुंओर भूमंडलीकरण —वैश्वीकरण,ग्लोबीकरण का जो शोर है वह इसी चिंता का मूर्त रूप है जिसने हमारे वैचारिक जगत और जीवन पद्धति में एक अभूतपूर्व परिवर्तन उपस्थित कर दिया है। भूमंडलीकरण और वैश्वीकरण दोनों ही आज ग्लोबलाइजेशन, ग्लोबीकरण के लिए सर्वस्वीकृत शब्द है। इस दिग्भ्रमित स्थिति ने हमारे साहित्य कलाओं को भी व्यापक रुप में प्रभावित किया है। भारतीय अर्थव्यवस्था और शिक्षा पर भूमंडलीकरण की प्रभावित का चरित्र सदैव से सर्वग्राही तथा सर्वसमावेशी रहा है, सदियों से आते अनेक आक्रांता अपने साथ जिस सांस्कृतिक विरासत को लेकर आते रहे, वह भारतीय अर्थव्यवस्था एवं शिक्षा को प्रभावित कर भारतीय संस्कृति के सागर में समाकर एकमेक होती रही।

किन्तु आज मुख्य अंतर यह आया कि हमारे पैर इस भूमंडलीय आंधी में टिक नहीं पा रहे हैं। आंधी या अंधड़ तो आकर एक वेग से निकल जाता है,सब कुछ में से काफी कुछ को उखाड़ते झिंझोड़ते और कुछ को पूरी तरह ध्वस्त करते हुए किंतु यह वैश्वीकरण दुनिया को समदृष्टि से समतल,एकमेक, करने के इरादे से जहां गया है,पूरी तरह जमकर बैठ गया है, अपने सर्वग्रासी डेनों को पूरी तरह पसारकर। प्रौद्योगिकी और तकनीक की अभूतपूर्व प्रगाति, सूचना—क्रांति का तीव्र विस्फोट, कम्प्यूटर और मोबाइल के क्षेत्र में अपूर्व क्रांतिकारी परिवर्तनों, विज्ञापन के मायावी जगत से प्रोत्साहित उपभोक्तावाद, विपणन—प्रबंधन की नित नई युक्तियों ने हमारा समाजार्थिक, राजनीतिक तथा धार्मिक परिवेश ने हमारे ऊपर इन स्थितियों को पूरी तरह थोप दिया है। उन्मुक्त,खुले, बाजार की अर्थनीति और व्यवस्था ने उपभोग का विराट मायाचक्र रच अकूत धन—संम्पत्ति आयत्त करने का ऐसा आत्मघाती स्वप्न वर्तमान मनुष्य को दे डाला है जिसके लिए वह किसी भी प्रकार के साधन अपनाने को त तत्पर है। राष्ट्रीय और वैयक्तिक दोनों स्तरों पर हम अपने को उधारजीवी विकास—प्रक्रिया में पड़ा पाते हैं।साथ ही उदात्त और श्रेष्ठ के प्रति हमारी निष्ठा निरंतर ह्रासशील स्थिति को प्राप्त होती चली गई। येन—केन प्रकारेण लक्ष्य तक पहुंचने की हड़बड़ाहट हमें जीवन के सभी क्षेत्रों में शार्ट—कट की संस्कृति में ढाल रही है। इसलिए आज भूमंडलीकरण हमारे विचार—जगत में एक सतत चिंता का रूप धारण कर गया है। प्रख्यात समाजशास्त्री प्रो० श्यामचरण दुबे[1] इन स्थितियों के प्रति अपनी चिंता इस रुप में प्रकट करते हैं।

समकालीन भारतीय समाज तीव्र संक्रमण के दौर से गुजर रहा है। परिवर्तन की आंधियां कई दिशाओं से आ रही हैं—एक ओर आधुनिकीकरण की अनिवार्यता है। दूसरी ओर परंपरा के आग्रह हैं। पश्चिम की आर्थिक और तकनीकी सहायता अपने साथ वहां की जीवन शैली और मूल्य ला रही है, जिन्हें अपनी जड़ से कटे भारतीय आधुनिकता समझकर बिना तर्क के अपना रहें हैं। इस अंधानुक्रमण ने एक नई चिंता को जन्म दिया है—अपनी अस्मिता और पहचान खोकर एक आकृतिविहीन भीड़ की गुमनामी में खो जाने की। हमारी संस्कृति अनुकरण की भोगवादी लिप्सावादी संस्कृति बन गई है। आर्थिक उदारता, खुलापन और भूमंडलीकरण संसार —भर में एक अपसंस्कृति फैला रहे हैं। हमें इस प्रवृत्ति के असहाय दर्शक मात्र बनकर रह गए।

भूमंडलीकरण की अवधारणा हमारी संस्कृति के लिए कोई नई बात नहीं है, तत्संबंधी हमारी पारंपरिक अवधारणा श्वसुधैव कुटुम्बकमश्के प्रकल्प में पूरे विश्व समुदाय को एक कुटुम्ब, एक कुल ,मानने का प्रबल आग्रह रहा है किंतु भूमंडलीकरण की शब्दावली का वैश्विक गांव—ग्लोबल —विलेज—हमारी इस विश्व मानवता वादी धारणा से बिल्कुल अलग है। वैश्विक गांव की मानता का आर्थिक पक्ष—बाजार तथा बाजार वाद—इसे हमारी पुरातन मान्यता से पूरी तरह अलग कर एक प्रच्छन्न और अघोषित आक्रमण का रूप दे डालता है। वैश्वीकरण का यह आर्थिक पक्ष इसे नव साम्राज्यवाद का रुप प्रधान करता है। सुनियोजित विधियों, क्रिया—कलापों और अनेकानेक युक्तियों से यह मिथ्या भ्रम संपूर्ण विश्व में प्रचारित और स्थापित कर दिया गया है। कि भूमंडलीकारण के अंतर्गत बाजार का अंग बन जाना ही विकास का एकमात्र मार्ग है। प्रसिद्ध वैज्ञानिक शिक्षाविद् प्रो. यशपाल[2] ने भी विचार किया है कि वर्तमान में यह वैश्वीकरण हमारे प्राचीन सांस्कृतिक आदर्श से किस प्रकार भिन्न है, भूमंडलीकरण का अर्थ यह नहीं है यह नहीं है कि यह सब लोगों के लिए बराबर है। इसमें श्वसुधैव कुटुम्बकम जैसी बात बिल्कुल नहीं है। भूमंडलीकरण एक ऐसी स्वेच्छाकारी प्रक्रिया है जिसके नियमों का पालन हमें करना पड़ेगा और हम सबको उसके पीछे चलना पड़ेगा। ये यह भी तय करेंगी कि हमारी स्थितियां कैसी होंगी। उन्हें कैसी होनी चाहिए। आपको अनुकूलित किया जाएगा।

शिक्षा पर भूमंडलीकरण के प्रभाव

शिक्षा सीखने —सिखाने के लिए प्रक्रिया है, सीखने —सिखाने की यह प्रक्रिया शिक्षार्थी के चारों ओर व्याप्त वातावरण में चलती है। यह

वातावरण मुख्यतरू पारिवारिक, सामुदायिक, राष्ट्रीय होता है। शिक्षा के प्रथम अध्याय का प्रारम्भ माता–पिता एवं परिवार से होता है। अगला अध्याय समुदाय में और शेष अध्याय प्रान्तीय, राष्ट्रीय वातावरण से संबंधित अध्याय हैं और आज के परिप्रेक्ष्य में एक और प्रमुख अध्याय जुड़ गया है और यह है, विश्व अध्याय अंतरराष्ट्रीय अध्याय जिसने वैश्वीकरण के प्रभाव से पूर्व सभी अध्यायों को गौण कर दिया है।

क्योंकि परिवार, समुदाय, राष्ट्र सभी को इसने अपने अंदर समाहित कर लिया है। जिसके उदाहरण के लिए इलेक्ट्रॉनिक प्रौद्योगिक–टीवी, कम्प्यूटर आदि के प्रभाव से यह अपना शैक्षिक प्रभाव बाल्यकाल से शिक्षार्थियों पर जमाने लगा है।

यद्यपि यह निर्विवादित तथ्य है कि भूमंडलीकरण का सर्वाधिक लागू शिक्षा जगत को ही हुआ है और वह भी उच्च शिक्षा के क्षेत्र में मुक्त विश्वविद्यालय, दूरस्थ शिक्षा, इंटरनेट आदि माध्यम जो शिक्षा के प्रसार चलाए जा रहे हैं, भूमंडलीकरण का ही प्रभाव है, इलेक्ट्रॉनिक संचार ने दुनिया को एक सूत्र में बांध दिया है। सेटैलाइट क्रांति ने कंप्यूटर क्रांति का मार्ग प्रशस्त किया है। कंप्यूटर ने दुनिया को एक ग्राम अथवा विश्व ग्राम में परिवर्तित कर दिया है। इंटरनेट के चमत्कार से ई शिक्षा, ई–बैंकिंग, ई–कॉमर्स, ई–लर्निंग का विकास एवं विस्तार आज दुनिया की वास्तविकता हैं। इसने समय एवं दूरी को समाप्त कर दिया है। दुनिया के किसी भी कोने में बैठा व्यक्ति किसी दूसरे कोने में बैठे व्यक्ति को शिक्षण प्रशिक्षण प्रदान कर सकता है।माध्यम होता है ई– शिक्षा, इससे अध्यापक एवं विद्यार्थी अपने ज्ञान को ताजा बनाए रखने के साथ–साथ ज्ञान के क्षेत्र का विस्तार भी कर सकते हैं।

भूमंडलीकरण का सबसे अधिक दिखाए देने वाला प्रभाव स्कूली शिक्षा से औपचारिक केंद्रों पर दिखाई देता है। आज विद्यालय अर्थात शिक्षण संस्थान किन्हीं जीवन मूल्यों आदर्शों एवं ज्ञान के नहीं है।ये व्यवसाय के केंद्र हैं। यह स्थिति पूर्व प्राथमिक से लेकर उच्च एवं व्यावसायिक शिक्षा तक है। विदेशों से आयी नीतियां, जैसे–शिशु गृह, दिवस, देखरेख केंद्र, प्राथमिक विद्यालय एवं व्यावसायिक शिक्षण संस्थानों को खोलने के पीछे मुख्य उद्देश्य पैसा कमाना है। इन संस्थानों में देखरेख,कौशलों, क्रियाकलापों पर ज्यादा ध्यान नहीं दिया जाता है जहां तक की वांछित मानवीय संसाधन के रूप में शिक्षक तक भी उपलब्ध नहीं हैं और अगर हैं भी तो अप्रशिक्षित। शिक्षा संस्थानों की तेजी से बढ़ती संख्या की पृष्ठभूमि में वैश्वीकरण एवं आधुनिकीकरण के प्रभाव से आया पैसा कमाने का भौतिकवादी उद्देश्य हैं जिसकी पूर्ति ये संस्थान माता– पिता एवं शिक्षार्थियों को भौतिक सुख–सुविधा प्रदान करते हैं जिससे राष्ट्र व समाज का कोई हित नहीं होता।[3]

वैश्वीकरण के कारण ही विदेश की संस्थाएं हमारे देश में तेजी से प्रवेश करती आ रहीं हैं। इसके पीछे आम जनता की मानसिकता यह है कि इनसे प्राप्त प्रमाण पत्र अधिक श्रेष्ठ है। विदेशों में शिक्षा पाना व शिक्षण कार्य करना भूमंडलीकरण के प्रभाव स्वरुप है। कुछ क्षेत्रों में, जैसे –साफ्टवेयर इंजीनियर, जिनकी कार्य दक्षता के अनुसार श्रम शक्ति भारत जैसे देश में कम मिलती हैं जिससे वह विकसित देशों में पलायन कर जाते हैं। साथ ही कुछ बहुराष्ट्रीय कंपनियां जो कि भूमंडलीकरण का परिणाम है। प्रशिक्षित व्यक्तियों को अधिक वेतन पर कार्य दे रही हैं। इस सबके परिणाम स्वरुप शिक्षा का स्वरुप बदला है उस शिक्षा की ओर लोग ज्यादा आकृष्ट हो रहे हैं जो बहुराष्ट्रीय कंपनियां, विदेशों में रोजगार दिलाएं क्योंकि विदेशी कंपनियों में काम करना, सामाजिक प्रतिष्ठा देने वाला बन गया है।[4]

आज प्रारंभिक शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा एवं व्यावसायिक शिक्षा के क्षेत्रों में धनी देशों के अंतरराष्ट्रीय वित्तीय संसाधनों (विश्व–बैंक) द्वारा ऋण उपलब्ध कराया जा रहा है।ऋण के साथ ही ये अपनी ऐसी शर्ते रखते हैं कि ये शैक्षिक, योजनाएं, कार्यक्रम इनके निर्देशानुसार चलते हैं और ये अपने नियंत्रण के द्वारा इन योजनाओं के राष्ट्रीय स्वरुप को लुप्त कर देते हैं जैसे देश के प्रारंभिक शिक्षा के सार्वजनिकीकरण के लिए चलाए जा रहे कार्यक्रम सर्व शिक्षा अभियानश्के लिए अमेरिका, ब्रिटेन, यूरोपीय आयोग एवं विश्व बैंक ने 100 करोड़ डॉलर का ऋण इस योजना के 2003–2006 के चरण के लिए उपलब्ध कराया था और उसके बाद भी कराया।[5] सारांश यह है कि वैश्वीकरण की प्रक्रिया ने देश की सरकार अर्थात देश की 15–20 प्रतिशत आबादी को जो देश के संचालन में जीवन के सभी क्षेत्रों में मुख्य भूमिका अदा करती है अपने से शिकंजे में कस लिया है। जाने अनजाने में भूमंडलीकरण की आड़ में ये लोग देश की समस्त शिक्षा प्रणाली का पश्चिमी करण, विदेशीकरण कर रहे हैं।

विगत बीस –इक्कीस वर्षों में जिस रुप में भूमंडलीकरण की यह प्रक्रिया तीव्र हुई है, उसका आधार वाशिंगटन कान्सेसियस है जिसके प्रणेता अंतर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्री अध्ययन संस्थान इंस्टिट्यूट फॉर इंटरनेशनल इकोनॉमिक्स के प्रसिद्ध अर्थशास्त्री जॉन विलियमसन थे। उन्होंने अपने संस्थान में प्रसिद्ध अर्थशास्त्रियों को संगोष्ठी में नियंत्रित कर विचार मंथन के लिए आमंत्रित किया जिसमें उन्होंने पश्चिम के सवाल रास्तों को उनकी अर्थव्यवस्था तथा स्थितियों और ऋण की निरंतर बढ़ती से उबारने के लिए एक ऐसा दस सूत्रीय कार्यक्रम प्रस्तावित किया जिसके विषय में सम्मिलित राष्ट्रों के प्रतिनिधि एक रुप, आम राय, बना सकें। इसका प्रस्ताव करने वाला वाशिंगटन कौन सा वाशिंगटन है, इसकी व्याख्या स्वयं प्रोफेसर विलियमसन ने इस रूप में की है। इस शोध पत्र का वाशिंगटन दोनों हैं–कांग्रेस प्रशासन के वरिष्ठ अधिकारियों का राजनीतिक वाशिंगटन तथा तकनीकी विशेषज्ञों, अंतरराष्ट्रीय वित्तीय संस्थानों, अमेरिकी सरकार के वित्तीय निकाय, फेडरल रिजर्व बोर्ड तथा शीर्ष चिंतकों (थिंक –टैंक) का वाशिंगटन।[5]

हमारे प्रधानमंत्री तथा प्रसिद्ध अर्थशास्त्री डॉ. मनमोहन सिंह ने वैश्वीकरण को अवसर और चुनौती के रूप में मानते हुए कहा कि ज्ञान की अर्थव्यवस्था थे विकास ने विज्ञान और प्रौद्योगिकी पर आधारित उत्पादों के लिए नए बाजार का मार्ग प्रशस्त किया है। क्या हम इस प्रक्रिया को प्रोत्साहित करने के लिए कुछ कर रहे हैं?हमें भूमंडलीकरण को शर्तिया जितने वाला खेल बनाना होगा। वैश्वीकरण की चुनौतियों से हम कैसे निपटते हैं और इसके विविध अवसरों का कैसे उपयोग करते हैं, यह विश्व के अन्य देशो से हमारे संबंधों को आधार प्रदान करे जा। अपने इसी भाषण में डॉ मनमोहन सिंह ने इस बात पर मन दिया हे कि कुछ भी समय में भारतीय अर्थव्यवस्था ने अपने को आर्थिक विकास की एक नई मंजिल तक एक नई शक्ति का रूप दिया है,ष्एक दशक पूर्व किसने सोचा होगा कि भारत सॉफ्टवेयर सेवाओं का बड़ा निर्यातक

बनकर उभरेगा और श्ब्रेन ड्रेन श्के स्थान पर श्ब्रेन गेनश्की नई प्रक्रिया उभरेगी।[6]

निष्कर्ष –

भारतीय अर्थव्यवस्था और शिक्षा पर भूमंडलीकरण के प्रभाव के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि भारतीय अर्थव्यवस्था के इस एकीकरण को मूर्त रूप देने में तकनीकी, व्यापारिक उन्नति तथा पूंजी के उन्मुक्त प्रवाह से और तेजी आती है। व्यापार , प्रौद्योगिकी आदि के कारण जन समाज की बड़ी संख्या का उन्नत राष्ट्रों में प्रवास व्यापार के अंतरराष्ट्रीयकरण को और अधिक विकासमान स्थिति में ला देता है। विभिन्न ज्ञान अनुशासनों ने अपने– अपने परिप्रेक्ष्य में भूमंडलीकरण को लक्षित कर परिभाषित करने का प्रयत्न किया है। पूंजी निवेश क्षेत्र में इसे पूंजी को अपने घरेलू बाजारों से अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र में विभिन्न बाजारों में निवेश इट कर अधिकाधिक लाभ अजित करने का अवसर माना है जिसका प्रभाव भारतीय अर्थव्यवस्था एवं शिक्षा पर भी पड़ा है। शिक्षा का पूर्णतः भौतिकीकरण कर दिया गया है। शिक्षा के उद्देश्य वैयक्तिक समृद्ध भौतिक जीवन जीने तक सिमट गए हैं। कुल मिलाकर यह कहा जा सकता हैकि खुले बाजार वाली भूमंडलीकरण की प्रक्रिया ने शिक्षा का भी वैश्विक बाजारी करण कर दिया है जिसके प्रभाव से समाज का धनी वर्ग, पश्चिमी देशों व वहां की संस्कृति का अनुयायी होता जा रहा है।

संदर्भ ग्रंथ–

1. श्यामचरण दुबे, समय और संस्कृति पृष्ठ –131–134
2. प्रो. यशपाल,उद्धृत अक्षर पर्व, मार्च 2004,नरेन का लेख।
3. दि वाशिंगटन ऑफ दिस पेपर इज बोथ द श्पॉलिटिकल वाशिंगटन ऑफ कांग्रेस एंड सीनियर मेंबर्स ऑफ द एडमिनिस्ट्रेशन एंड द टेक्नोक्रेटिक वाशिंगटन ऑफ द इंटरनेशनल फाइनेंसियल इंस्टिट्यूट ऑफ द इकोनॉमी एजेंसीज आफ द यू.एस. गवर्नमेंट द शॉर्ट हिस्ट्री ऑफ द वाशिंगटन कान्सेसियस फ्राम द वाशिंगटन कान्सेसियस टूवडर्स ए न्यू ग्लोबल गवर्नेन्स, शीर्षक शोध पत्र से बार्सिलोना, 24–25 सितम्बर–2004.
4. सच्चिदानंद सिंहा, भूमंडलीकरण की चुनौतियां, भूमिका।
5. डॉ. मनमोहन सिंह, 25 फरवरी 2017 को नई दिल्ली में दिए गए भाषण से उद्धृत (दैनिक भास्कर–26 फरवरी 2017)।
6. वही।

डॉ0 संजय गौतम
शोध निर्देशक
भगवन्त विश्वविद्यालय, अजमेर,
राजस्थान, भारत।

अमित कुमार
शोध–छात्र
भगवन्त विश्वविद्यालय, अजमेर,
राजस्थान, भारत।

69

प्राचीन एवं आधुनिक काव्य शास्त्रियों के ''काव्य–लक्षण''

दीपमाला

सारांश

काव्य शब्द कवि + श्यय प्रत्यय कर वना है। मेदिनी कोश के अनुसार 'कवेरिद कर्म भावो श्यय्'[1]। लोकोन्तरवर्णानानिपुणं कविकर्म काव्यम। अर्थात लोकोत्तर वर्णन में निपुण व्यक्ति को कवि और उसके कर्म को काव्य कहते हैं।

लक्षण शब्द लक्ष धातु से घय प्रत्यय कर वना है। जिसका अर्थ ऐसा तत्व जिसके द्वारा लक्षणीय वस्तु को लक्षित किया जा रहा सके। किन्तु काव्य के प्रसंग में जिस लक्षण शब्द का प्रयोग किया है । उसका अर्थ भिन्न है लक्ष्य भूत पदार्थ की कोई ऐसी विशेशता जिसमें अव्याप्ति या अतिव्यप्ति दोश न हो और जो नामोल्लेख इत्यादि व्यवहार साधक उपायों से भिन्न हो ।

काव्य स्वरूप के प्रतिपादन प्राक्काल से प्राय दो विचार धाराऐं दृश्टि गोचर होती है। उनमें व्यास,दण्डी,जयदेव एवं पण्डित राज जगन्नाथ आदि अनेक आचार्य 'शब्द' को काव्य मानते हैं। तो भरत, भामह, हेमचन्द्र,रूप्श्क, वाग्भटट विद्याधर इत्यादि आचार्य शब्द अर्थ की समश्टि को काव्य मानते है।

आचार्य भरत ने नाटयशास्त्र ग्रन्थ में नाटय और काव्य में कोई भेद न करके नाटय कला का विवेचन किया है। इन्होंने स्पश्टत काव्य का कोई लक्षण नहीं दिया। काव्य कला की प्रशस्ति करते हुए लिखा है–

मृदुललितं पदाढयं गूढं भाब्दार्थहीनं,
जनपदसुख बोध्यं युक्तिमन्नृव्ययोज्य्म।
वहुकृतर समार्ग सन्धि सन्धान्ययुक्तं,
सं भवन्ति भुाभ काव्यं नाटक प्रेक्षाकाणम।

इस कव्य को लक्षण नहीं माना जा सकता है। क्योंकि यह काव्य ही केवल प्रशस्ति है, उसके स्वरूप के उद्घाटन कृत काव्य–लक्षण के आधार पर यह कहा जा सकता है कि काव्य वह शब्दार्थ समूह है जो दोशरहित होकर अलंकार गुण और रस युक्त हो तथा अभिनय का अंग बन सके। भरतमुनि के अनन्तर अलंकार शास्त्र के प्रथम आचार्य भामह ने काव्य लक्षण देते लिखा है।

भाब्दार्थौ साहितौ काव्यम।[2]

अर्थात शब्द और अर्थ मिलकर ही काव्य होता है। शब्दार्थ सहित भाव से इनका तात्पर्य उक्तिवैचित्रपूर्ण रचना से है। उसकी सत्ता में काव्य गुण, अलंकार आदि विभिन्न तत्वो सुशोभित हो पाता हैं। भामह ने काव्य लक्षण में निर्दोश पदो के प्रयोग पर बल देकर शब्द और अर्थ आश्रित बहिरंग दोशों का तथा युक्त लोकस्वभावेन अर्थात स्वभाविकता से कहते हुए रस दोशों से बचने का संकेत दिया।

आचार्य दण्डी ने भामह कृत काव्य लक्षण का परिश्कार करते हुए काव्य को दो खण्डों में विभाजित किया है । काव्य शरीर और आत्मा। इनके काव्य के अनुसार अभीश्ट अर्थो से युक्त पदावली ही काव्य का शरीर है।

'भारीर तावदिश्टार्थ व्सवच्छिन्ना पदावली।''[3]

भारतीय संस्कृति के अनन्त भण्डार से अन्पत्म 'अग्निपुराण' के अनुसार गुणयुक्त दोशों से रहित, स्फूटित होते हुए अलंकरों से युक्त, इश्टार्थ–सम्पन्न पदों वाला संक्षिप्त वाक्य 'काव्य' कहलाता है।[4] प्रस्तुत काव्य दण्डी के काव्य–लक्षण से पूर्ण रूपेण समासनता रखता है। दणी ने जिसे 'पदावली' काहा है, उसे यहाँ संक्षिप्त वाक्य कहा है। रीति सिद्धान्त के प्रवर्तक **आचार्य वामन** ने काव्य में गुण और अलंकार की महत्ता प्रतिपादित की है।

''काव्य□ाब्दोऽयं गुणलंकार संस्कृतयोः भाब्दार्थयोः वर्तते।[5]

वामन की विचारधारा भिन्न है, वे अलांकर को काव्य का अनित्य धर्म स्वीकार करते हुए रीति और गुण को ही काव्य की 'आत्मा' स्वीकार करते हैं।

आचार्य रूद्रट ने भामहकृत काव्य लक्षण का अनुकरण करते हुए शब्द और अर्थ का काव्य माना है।

''ननु भाब्दार्थौ काव्यम्''[6]

इस प्रकार रूद्रट की दृश्टि में दोश से रहित, अलंकारों से भूशित तथा सरस शब्दार्थ ही काव्य है।

रुद्रट के परवर्ती **आचार्य आनन्दवर्धन** ने सहृदय हृदय को आह्लादित करने वाले शब्दार्थमय रचना ही 'काव्य' है। इनके अनुसार जहाँ शब्द और अर्थ क्रमशः अपने अर्थ और स्वरूप को गौण बनाकर अन्य अर्थ को प्रकट करते हैं। उस काव्य विशेष को 'ध्वनि' कहते हैं।

यत्रार्थः शब्दों वा तमर्थमुपसर्पनीकृत स्वार्थौ।
व्यक्ङ्क्तः काव्यविशेषः सध्वनिरिति सुरिभिः कथितः।[7]

राजेश्वर ने गुणविशिष्ट व अलंकार से अलंकृत वाक्य को काव्य का लक्षण
स्वीकार किया है।

गुणवदलंकृतं व्याक्यमेव काव्यम्[8]

वक्रोक्तिजीवितकार आचार्य कुन्तक ने कवि के कर्म को काव्य कहाँ है।[9] आहह्लाद कारक वक्र (विचित्र) कवि व्यापार से युक्त रचना में व्यवस्थित शब्द और अर्थ दोनों ही काव्य कहलाते हैं।

शब्दार्थौ सहितौ वक्र कविव्यापार शालिनी ।
बन्धे व्यवस्थितौ काव्यं तदित्हह्लाद कारणि।।[10]

आचार्य महिमभट्ट ने विभावादि संयोजनात्मक उस व्यापार को काव्य कहते है, जिसमें अनिवार्यतः रसाभिव्यक्ति होती है।[11] रस की प्रधानता को ही काव्य का लक्षण मानने वाले आचार्यों में इनका नाम सर्व प्रथम आता है।

आचार्य क्षेमेन्द्र ने औचित्य को काव्य का मूल तत्व स्वीकार करते हुए काव्य लक्षण किया, उनके मत में 'औचित्य' ही रस सिंह काव्य का जीवन है।[12] 'सरस्वती काण्ठाभरण' के रचयिता भोज ने काव्य–लक्षण का निर्धारण करते हुए कहा है कि जो दोष रहित गुण सहित व अलंकारों से अलंकृते और रस से युक्त हो, वह काव्य है, तथा उस

काव्य की रचना करने वाला कवि कीर्ति व प्रीति को प्राप्त करता है।

निदोषं गुणवत्काव्यमलंकारैरलंकृतम्

रसान्वितं कृतिः कुर्वन् कीर्ति प्रीति च वंदति।[14]

आचार्य मम्मट ने भामह से लेकर अपने समय तक प्रचलित सभी काव्य लक्षणों का समन्वय प्रस्तुत किया। उनके अनुसार नित्य दोष रहित, सगुण और सामान्यतः अलंकार युक्त व कहीं–कहीं अलंकार विरहित शब्द और अर्थ काव्य होते हैं।

तददोषौ शब्दार्थौ सगुणावनलंकृति पुनः क्वापि।[15]

1. शब्दार्थौ तत्– मम्मट ने काव्य प्रकाश में कहा है कि ऐसे शब्द और अर्थ काव्य है जो दोषों से रहित है (माधुर्यादि) गुणों से युक्त है और चाहे कहीं अलंकार रहित भी है।

ऊपर कारिका में दिया है कि अलङ्कृतिः अलंकार नास्ति अलङ्कृति ययोः तवी (शब्दार्थो अनलङ्कृति अर्थात ऐसे शब्द और अर्थ जिसमें अलंकार योजना न हो शब्द और अर्थ दो मिलकर काव्य है काव्यस्य शब्दार्थी शरीरम् शब्दार्थ युगल को ही काव्य कहा गया है। सहदयाहह्लाद कारिका अथवा रस व्यञ्जकता आदि शब्दार्थ युगल में ही तथा काव्य श्रुत, काव्य पठित एवं काव्य पठित एवं काव्य बुद्धम इत्यादि व्यवहार से भी शब्दार्थ युगल काव्य कहलाता है।

2. अदोषौ– यह शब्दार्थ युगल का विशेषण है आचार्य मम्मट के विचार में दोष रसादि के आकर्षक या विधायक होते हैं। गुणों का अभाव मात्र ही दोष नहीं है। इसका अभिप्राय यह है कि कोई कवि कृति सहृदयों के सहय को आहलादित करती है, किन्तु उसमें कोई शास्त्रोक्त दोष भी है। परन्तु वह दोष काव्यत्त्व का विधातक नहीं है, इसलिए मम्मट ने अदोषता को बताया।[16]

3. सुगणौ– मम्मट ने काव्यप्रकाश में माधुर्यादि गुणों को शब्दार्थ निष्ठ माना है, इसलिए इन्होंने सगुणता को शब्दार्थ युगल का विशेषण बताया है। मम्मट ने कहा है कि गुण रसनिष्ठ होते है और यह शब्द और अर्थ के धर्म कहे जाते हैं। दूसरी तरफ इन्होंने बताया कि सगुणौ विशेषण से शब्दार्थ साहित्य रूप काव्य की सहृदयाह्लादकता अथवा रसाभिव्यंजकता भी प्रकट होती है। जहाँ शब्दार्थ युगल वस्तुतः गुणों के अभिव्यंजक होते हैं, वहाँ रस के भी अभिव्यंजक होते हैं, क्योंकि गुण रस के धर्म होते हैं और रस सदा वाङ्गमय ही हुआ करता है। इस प्रकार से मम्मट का सगुणौ विशेष ही उपयुक्त है।

4. अनङकृति पुनः क्वापि– मम्मट ने काव्य में अस्फुटता शब्द का इसलिए प्रयोग किया कि अलंकारों की स्फुटता काव्यत्व के लिए अनिवार्य नहीं है। कहीं–कहीं अलंकारों की स्फुटता काव्यत्व के लिए अनिवार्य नहीं है। कही–कहीं अलंकारों के स्फुट न होने पर भी काव्य ही होता है, क्योंकि मम्मट ने सगुणता और अदोषता को काव्य में लिया है, जिसका अभिप्राय यह निकलता है कि कहीं पर यदि स्फुट अलंकार की प्रतीति नहीं भी होती है। फिर भी शब्दार्थ साहित्य में अदोषता एवं सगुणता के रहने में काव्यत्व स्वीकार करना ही पड़ता है।

आचार्य हेमचन्द्र ने भी दोषरहित, गुणसहित और प्रायः अलंकृत शब्द अर्थ को ही काव्य स्वीकार किया है।

अदोषौं सगुणौ सालङ्कारौ च शब्दार्थौ काव्यम्।[17]

वाग्भट्ट प्रथम ने भी दोष रहित, गुण सहित और प्रायः अलंकार से अलंकृत शब्द अर्थ को काव्य को ही काव्य स्वीकार किया है।

शब्दार्थौ निर्दोष सगुणौ प्रायः सालंकारौ काव्यम्।[18]

वाग्भट्ट द्वितीय ने भी श्रेष्ट शब्द व अर्थ से गुम्फित, प्रसादादि गुणों और चित्रादि शब्दालंकारों एवं उपमादिक अलंकारें से विभूषित और स्फुट गौणी आदि रीतियों तथा श्रृंगारादि रसो से युक्त शब्दार्थ रचना को काव्य माना है।

साधुशब्दार्थसंदर्भगुणांलकार भूषितम् स्फुटरीतिरसोपेतं काव्य कुर्वीत कीर्त्तये[19]

चन्द्रलोक के प्रणेता **जयदेव** ने कुछ भिन्न शब्दावली में काव्य लक्षण करते. हुए कहता है कि श्रुतिकटु आदि दोषों से रहित, अक्षर सहित आदि लक्षणों से समन्वित, पाञ्चाली आदि रीति से युक्त श्लेष प्रसाद आदि गुणों से शोभित अनुप्रास व उपमादि अलंकारों से युक्त व श्रृंगार आदि रसों तथा अभिधा आदि वृत्तियों से सहित शब्द काव्य है।

निर्दोषा लक्षणवती सरीतिर्गुण भूषणा ।

साढलंकारसानेक वृत्तिर्वाक् काव्यनागभाक।।[20]

साहित्यदर्पणकार विश्वनाथ ने प्राचीन आचार्यों की परम्परा से प्राप्त काव्य लक्षणों का अनुसरण न करके नवीन काव्य लक्षणों की रचना की है, जो अत्यन्त संक्षिप्त होते हुए भी महत्त्वपूर्ण है। उनके अनुसार रसात्मक वाक्य ही काव्य है।

वाक्यं रसात्मकं काव्यम् ।[21]

केशव मिश्र के मत में सुख–विशेष को करने वाला रसादि से युक्त वाक्य काव्य है।

काव्य रसादिद्वाक्यं श्रुतं सुखविशेषकृत[22]

आचार्य पण्डितराज जगन्नाथ ने रसगंगाधर में रमणीय अर्थ के प्रति प्रतिपादक शब्द को काव्य स्वीकार किया है।

रमणीयार्थप्रतिपादकः शब्दः काव्यम्[23]

पण्डितराज के अनुसार रमणीय अर्थ जिसमें लोकोत्तर अहलाद की प्राप्ति होती हैं और लोकोत्तर का तात्पर्य है। आह्लाद में रहने वाला चमत्कारत्व जाति, जिसका अनुभव सहृदय सामाजिक को होता है।

आचार्य विश्वनाथ देव काव्य लक्षण में दोषा भावत्व, गुणत्व और अलंकारत्व इत्यादि का उल्लेख नहीं करते हैं उनका कहना है कि जिस काव्य के श्रवण मात्र से बह्मानन्द सदृश आनन्द की अनुभूति होती है, उसे काव्य कहते हैं।

जायते परमानन्दो ब्रह्मानन्द सहोदरः ।

यस्य श्रवणमात्रेण तद्वाक्यं काव्यमुच्यते।।[24]

इस काव्य लक्षण में श्श्रवणामात्रेणश पद के सन्निवेश से ऐसा प्रतीत होता है। कि आचार्य शब्द की काव्य मानेन के पक्षधर है। इसी मन्तव्य को स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि कवि के द्वारा सम्पाद्य वस्तु को ही काव्य कहा जा सकता है और कवि कामिनी, चन्द्र, चन्द्रिका इत्यादि अर्थो का निर्माण नहीं करता। ये अर्थ तो ब्रह्म निर्मित है। अतः कविनिर्वेद पद रचना से काव्यत्व सम्भव है। इस प्रकार शब्द समूह रूप वाक्य ही काव्य है।

विद्याधर के अनुसार लक्षण

विद्याधर ने प्रभुसम्मित, मित्रसम्मित एवं कान्तासम्मित शास्त्रों के तीन प्रकारों को स्वीकार करते हुए काव्य को कान्तासम्मितशास्त्र माना है, जबकि वेद आदि शास्त्रा प्रभुसम्मित तथा इतिहास और पुराण आदि

मित्र सम्मित होते हैं।

ध्वनिप्रधानं काव्यं तु कान्तासम्मितमीरितम्,[25]
शब्दार्थी गुणतां नीत्वा व्यंजना प्रवणं यतः ।।

विद्यानाथ के अनुसार–

गुणालंकार सहिती शब्दार्थी दोषवर्जितौ
गद्य पद्य भयमयं काव्यं काव्यविदो विदुः।।[26]

अर्थात गुण, अलंकार से युक्त, दोषों से रहित शब्दार्थ ही काव्य कहलाता है। विद्यानाथ ने मम्मट के काव्य लक्षण को पूर्णतः स्वीकार कर लिया।

नरसिंह कवि के काव्य–लक्षण में– ''कवि समयानुरोधेन निबद्धौ शब्दार्थो काव्यम्'' इस सूत को सन्निवेष किया है।[29]

यह परिभाषा काव्य लक्षण की उत्प्रेक्षा काव्य की प्रशस्ति अधिक प्रतीत होती है। नरसिंह कवि मात्र कमनीय शब्द अथवा कमनीय अर्थ को काव्य नहीं स्वीकारते। उनका मन्तव्य यह है कि कुसुमसौरभान्याय से शब्द और अर्थ मिलकर अहलाद जनक होते हैं। कवि समयानुरोध पद के समावेश से शब्दमारत्र प्रधान वेद और अर्थमात्र प्रधान पुराणादि में अतिव्याप्ति नहीं होती है, क्योंकि वेद व पुराण कविसमयानुरोधी नहीं होते। उनका है कि शब्दार्थ के साधारण होने पर भी कवि समयानुरोध से रचित होने पर काव्य में चमत्कार उत्पन्न होता है और उसमें काव्यत्व आ जाता है।

नरसिंह कवि के काव्य लक्षण में अलंकार गुण, रस, इत्यादि का स्थान तो स्पष्ट नहीं होता किन्तु उन्होंने कवि समय एवं कवि सम्प्रदाय में प्रचलित मान्यताओं के अतिरिक्त व्यजना व्यापार का भी समावेश किया है। इससे स्पष्ट होता है कि वे ध्वनि मार्ग के उपासक रहे हैं। आगे चलकर आचार्य नरसिंह कवि ने सरस शब्दार्थ को स्पष्टतया काव्य कहा है।

यल्लोकोत्तरवर्णनानियुणस्य कवेः सरस
शब्दार्थ सघटनात्मकं कर्म तत् काव्यम्[28]

यहाँ यह स्पष्ट होता है कि कवि समयानुरोध पद से आचार्य का आग्रह विशेष रूप से सरस शब्दार्थ से रहा है। नरसिंह कविराज विश्वनाथ के अभिमत के अधिक समीप जान पड़ते हैं।

आचार्य शर्मन के अनुसार काव्य लक्षण–

सालङ्कारगुणौ काव्यं शब्दार्थो दोषवर्जितौ
तथा कवीमां समयानुरोधेन निबन्धितम्[29]

अर्थात कवि समयानुरोध के साथ दोषरक्षित, गुणयुक्त एवं सालंकार शब्दार्थ को काव्य कहते हैं।

विद्याराम के अनुसार काव्य में चमत्कारो उत्पत्ति रम एवं अलंकार से ही आती है। श्अनघश का अर्थ होता है। शब्दार्थ का दोषहीन होना इस प्रकार दोष रहित सरस, सगुण एवं सालंकार शब्दार्थ गुम्फन को काव्य कहते हैं।

अत्र चमत्कारकरत्वं रसालंकारयुक्तत्वम्
अनघत्वं दोषरहितत्वम्।[30]

इस परिभाषा पर भोजराज का प्रभाव स्पष्ट रूप से प्रदर्शित है। आचार्य भोज ने भी दोषरहित, अलंकार युक्त, गुणवत और रसवत वाक्य को काव्य कहा है।

अच्युत राम 'मोडक' दोषरहित एवं गुणयुक्त शब्दार्थ युगल को काव्य कहते हैं।

तत्र निर्दोषशब्दार्थगुणवन्ते सति स्फुटतम्
गद्यादिबन्धरूपत्वं काव्य सामान्य लक्षणम्[31]

अत्युत्र राम काव्य में निर्दोषता को आवश्यक मानते हैं उनका कहना है कि यदि काव्य में एक भी दोष है तो उसका सगुण एवं सालकार होना व्यर्थ है।

दौषे सति गुणः किं वा किं वालंकारणैरिप।
अतो निदोषसादगुण्यमेवाद्रियतां बुधैः।।[32]

आचार्य सोमेश्वर शर्मा एवं आचार्य बदरीनाथ[34] झा सहृदयाहृदय को अहलादित करने वाले शब्दार्थ युगल को काव्य कहते हैं। आचार्य छज्जुराम शास्त्री जी रमणीयता सम्पन्न शब्दार्थ युगल को काव्य कहते हैं।

रम्पं शब्दार्थ युगलं काव्यमस्माभिरिष्यते।[35]

रमणीयता से तात्पर्य अलौकिक (लोकोत्तर) आनन्दजनकता है यह रमणीयता उच्चारण प्रति उच्चारण द्वारा तथा अर्थज्ञान द्वारा सहृदयजनों को लोकोत्तर आनन्द प्रदान करती है। अलौकिकत्व का अर्थ आनन्दयुक्त चमत्कार ही है। इस प्रकार आचार्य छज्जूराम के अनुसार काव्य का परिष्कृत लक्षण चमत्कार विशिष्ट शब्दार्थ युगता ही होता है। अन्य लक्षणों की भांति यहाँ भी आचार्य ने काव्य में चमत्कारोत्पादक किन्तु दोष, गुण एवं अलंकारों का निरूपण अवश्य किया है। अतः कहा जा सकता है कि आचार्य छज्जूराम शास्त्री जी को निर्दोष, सगुण एवं सालंकार शब्दार्थ का काव्यत्व ही मान्य है।

आचार्य हरिदास सिद्धान्त वागीश भी काव्य लक्षण में निर्दोषत्व, सगुणत्व इत्यादि पदों का समावेश नहीं करते हैं, उनके अनुसार मनोहारी शब्दार्थ समूह को काव्य कहते हैं।

मनोहारिणौ शब्दार्थो काव्यम्[36]

यहाँ शब्द पर से क्रिया पद का भी आभास हो जाता है। अतः काव्य का परिष्कृत लक्षण है श्मनोहारी शब्दार्थ घटित वाक्य आचार्य हरिदास के अनुसार मनोहारित्व का तात्पर्य है– सहृदयों को को अहलादित करने वाला तत्व और वह रस. माधुर्य, अलंकार सौन्दर्य एवं भाव वैचित्र्य इत्यादि ।

आचार्य रेवा प्रसाद द्विवेदी की परिभाषा दार्शनिक पृष्टि भूमिको रेखांकित करती है। उनकी मान्यता में काव्य स्थूल नहीं है, अपितु भावात्म एवं ज्ञानात्मक है तथा उसका अर्थ स्वरूप है। इस प्रकार काव्य ज्ञानरूप है और शब्द ज्ञान बाह्य है अर्थात् शब्द उसके अन्तर्गत नहीं आता है।

काव्यस्य ज्ञानरूपत्वे शब्दत्वं नोपपद्यते।[37]

उनका मानना है कि यदि शब्द से ज्ञान रुपता का अभाव होता है तो वह काव्यस्वरूप नहीं हो सकता है। उनका यहाँ तक कहना है कि जिस प्रकार पेय रस के लिए कोई पात्र उपाधि के लिए होता है उसी प्रकार शब्द ज्ञान काव्य का उपाधि मात्र है। शब्द काव्य कला का बाह्य

मात्र है। उसे काव्य कहना मात्र लाक्षणिक है जैसे बिना शरीर के आत्मा नहीं रह सकती उसी प्रकार शब्द भी काव्य के लिए अतिआवश्यक है, किन्तु वह काव्य नहीं हो सकता है।

आचार्य रेवा प्रसाद मात्र अलंकृत अर्थ के ज्ञान को काव्य कहते हैं। इस प्रकार वे शब्द को काव्य मानते हैं न अर्थ को और न शब्दार्थ उभय को ही उनके अनुसार विज्ञान (विशिष्ट प्रत्यय) मात्र ही काव्य है।

सन्दर्भ

1. काव्य प्रकाश 1/2 वृत्तिभाग
2. काव्यालङ्कार 1/16
3. काव्यदर्श : 1/10
4. अग्निपुराणम् 337/2–7
5. काव्यालङ्कार सूत्रवृत्ति 1/1/1 वृत्ति
6. काव्यालङ्काकर : 2/1
7. ध्वन्यालोक : 1/13
8. काव्यमीमांसा, पृ० 65
9. कवेः कर्म काव्यम् – वक्रोक्तिजीवितम् 1/2 की वृत्ति
10. वक्राक्तिजीवितम् 1/7
11. कविव्यापारो हि विभावादि संयोजनात्मना रसाभि व्यकत्यव्याभिचारी काव्युच्यते (व्यक्ति विवेक, पृ०101)
12. औचित्यं रससिद्धस्य स्थिरं काव्यस्य जीवितम् (औचित्यविचार चर्चा, कारका 3)
13. काव्य प्रकाशः प्रथम उल्लास पृ०सं० 20
14. चन्द्रालोक : 1/7
15. साहित्यदर्पणः 1/3

दीपमाला

शोधच्छात्रा,

डॉ राम मनोहर लोहिया

अवध विश्वविद्यालय

अयोध्या,

उत्तर प्रदेश

वास्तु शास्त्र में शिलान्यास

डॉ0 दिनेश चन्द्र शुक्ल

सारांश

इस सम्पूर्ण सृष्टि में प्रायः छोटे–छोटे कीट पतंगों से लेकर मनुष्य–पर्यन्त प्रत्येक प्राणी प्रकृति के अटूट नियमों से आबद्ध होकर दुःख की निवृत्ति और आत्यन्ति कसुखानुभूति के लिए निरन्तर चेष्टा करता रहता है।अपनी इन्हीं सुखों की उपलब्धि हेतुविविध सुख सामग्रियों के संग्रह में संलग्न रहताहै।सुख की इन्हीं सामग्रियों में गृहनिर्माण भी एक महत्वपूर्ण वस्तु है और यही कारण है कि प्रत्येक जीवमात्र अपने अनुरूप निवास स्थान बनाकर सुखमय जीवन निर्वाह करना चाहता है।वास्तु रत्नाकर में कहा गयाहै कि गृहस्थ के सम्पूर्ण श्रौत तथा स्मति कर्म बिना गृह के सिद्ध नहींहोतेहैं–

''गृहस्थस्य क्रियाः सर्वा न सिद्धयन्तिगृहंबिना।''[1]

गृह के 2 ही प्रमुख अंग हैं–निर्माण और प्रवेश।

वास्तु शास्त्र में शिलान्यास निर्माण के अन्तर्गत आता है।वास्तु–शास्त्र में भू–परीक्षण के पश्चात् जब दिक् साधन, शल्यो द्धार इत्यादि के उपरान्त खात खनन सम्पूर्ण क्रिया सम्पन्न हो जाती है तो शिलान्यास की प्रक्रिया सम्पन्न की जातीहै।वास्तु विन्यास बिना पूजन के सम्पन्न नहीं होती है।

वास्तु सौख्यम मेंगर्ग के मत का वर्णन करते हुए कहा गया है कि शिलाविन्यास काल में समुद्र से उत्पन्न रत्न, सुवर्ण सर्वबीज, सुगन्धि पदार्थ इत्यादि रखना चाहिए–

शिला विन्यास कालेतु सम्भा रांश्चोप कल्पयेत्।
समुद्र जा निरत्ना निसुवर्णं रजतं तथा।।[2]

मयमतम् में वर्ण न है कि भवन के शिलान्यास का विधान शुभ–मुहूर्त लग्न होरा से युक्त रात्रि में करनी चाहिए।

सुमुहूर्तेसुलग्ने च होरा करणसंयुते।
रात्रौ गर्भ महन्ये व स्थापये च्चतु रिष्टकम्।।[3]

शिलान्यास पूजन के सन्दर्भ में विश्व कर्म प्रकाश में कहा गया है कि चाँदी के कच्छ पको स्थापित करके पूजन करने से भूगर्भ के भीतर उत्पन्न होने वाली आर्द्रता, शीतलता, रुद्रता आदि से बचाव होता है।इसके अतिरिक्त कलशपात्र में स्वर्ण तथा सर्वगन्ध औषधि रखकर शिलान्यास वाली भूमि के भीतर रखने का भी विधान है–

तत्र कुंभंनिवेश्यादौहेमगर्भफलैर्युतम्।
सर्वधान्ययुंतसर्वगन्ध सर्वौधैर्युतम्।।[4]

मयमतम् में ताम्रपात्र रखने का विधान है तथा उसका चौड़ाई के प्रकार का भी वर्णन प्राप्त है–

ताम्रभाजनविस्तारंपञ्चधापरिकीर्तितम्।
रत्निद्वादशपड़क्त्यष्टचतुरङ्गुलमानतः।।[5]

शिलान्यासकरते समय गर्तमें 25 या 9 कोष्ठो का विधान है तथा वर्णन है कि उस पात्र में वास्तुदेवों को स्थान देना चाहिए–

उपपीठपदेदेवास्तस्मिनपात्रे तुसम्मताः।
रजते नः वृषः सूर्येवज्री हाटकनिर्मितः।।[6]

मयमतम् में वर्णन है कि उन देवों के स्थान व स्थिति को विधि पूर्वक ज्ञात कर चारों दिशाओं में सुवर्ण आयस, ताम्र व चाँदी के स्वास्तिक रखने चाहिए–

शिलान्यास हेतुगर्त की दिशा–

शिलान्यास हेतु गर्त खनन की दिशा का निर्धारण प्रायः किया जाता है।इस हेतु सर्व प्रमुख राहु मुख का विचार किया जाता है और जहाँ राहु का मुख होवहाँ शिलान्यास हेतुगर्त खनन नहीं करना चाहिए। राहुमुख का विचारप्रायः किसी भी निर्माण चाहे वह देवालय हो या जलाशय हो या गृह, सभी प्रकार के गर्त खननमें करना चाहिए। राहुमुख का विचार प्रायः इस तालिका द्वारा स्पष्ट किया गया है–

	ईशान	**वायण्य**	**नैर्श्रदत्य**	**आग्नेय**
देवालय	मीन, मेष, वृष, सूर्य	मिथुन, कर्क, सिंह, सूर्य	कन्या, तुला, वृश्चिक, सूर्य	धनु, मकर, कुम्भ, सूर्य
गृहारम्भे	सिंह, कन्या, तुला, सूर्य	वृश्चिक, धनु, मकर, सूर्य	कुम्भ, मीन, मेष, सूर्य	वृष, मिथुन, कर्क, सूर्य
जलाशयारम्भे	मकर, कुम्भ, मीन, सूर्य	मेष, वृष, मिथुन, सूर्य	कर्क, सिंह, कन्या, सूर्य	तुला, वृश्चिक, धनु, सूर्य
खात की दिशा	वायव्य	नैऋत्य	आग्नेय	ईशान

गर्त खनन की प्रक्रिया में राहु का कुंभ जिस दिशा में हो उसी दिशा में गर्त खनन का कार्य करना चाहिए।

शिलान्यास के पूजन के पश्चात् नन्दा, भद्रा, जया, रिक्ता तथा पूर्णा इन पाँच ईटों को स्थापित करना चाहिए–

नन्देनन्दय वा सिष्ठेवसुभिश्चहितप्रजे।
भद्रेकाश्यपदायादेपूजनंभद्रमावह।
जयेभार्गवदायादेप्रजानांभद्रमावह।
रिक्तेत्वंरिक्तदोषहनेसिद्धिभवितप्रदेशुभे।
पूर्णेडङ्गिरसदायादेपूर्णकामाः प्रजाः कुरु।।
तद्देवस्थानभावज्ञैरानीतानिनिधापयेत्।
हेमायस्ताम्ररूप्यैश्च स्वस्ति कानि चतुर्दिशि।।[7]

इसी के साथ हीज बगर्भ में इस सभी सामग्रियों को रख लियाजाय तो धूप, दीप, गन्ध, पुष्पाक्षत, दूर्वा, भक्ष्य भोज्या दिपदार्थों से विधिवत पूजाकर के प्रथमशिला अग्निकोण में स्थापित करना चाहिए तथा अन्य शिलायें प्रदक्षिणा क्रम से रखना चाहिए–

दक्षिण पूर्वे कोणे कृत्वापूजां शिलांन्य से त्प्रथमाम्।
शेषाः प्रदक्षिणे नस्तम्भाश्चैवं समुत्थाप्याः।।[8]

वास्तुसौख्यम् मेंगर्ग के मत का वर्णन करते हुए कहा गया है क्षी रोदन से पूर्ण कुम्भ को प्रत्येक कोण में रखना चाहिए–

क्षीरोदनंपूर्णकुम्भान् कोणे–कोणे प्रदापयेत्।।[9]

शिलान्यास का कार्य करके ऐसा विधान है कि स्थापित

अच्छी प्रकार के उस गर्त को ढके ताकि उसके भीतर की पूजित सामग्री सम्पूर्ण तया सुरक्षित रहे। मयमतम् में वर्णन हैकि शिलान्यास के भीतर की सामग्री को प्रत्यन पूर्वक सुरक्षित रखना चाहिए।उसे मिट्टी इत्यादि से भरकर धरातल को समतल रखना चाहिए।किसी पदार्थ के कम होने से अथवा गर्भन्यास न होने से वह गर्भ सभी प्रकार के विपत्तियों का कारण बनता है–

सर्वद्रव्यैस्तुसम्पन्नंगर्भंतत् सम्पदांपदम्।
द्रव्यहीनसम्पन्नंगर्भं सर्वविपत्करम्।।[10]

मयमतम् में कहा गया है कि गृहस्वामी को सम्मानित बुद्धिमान एवं वास्तुशास्त्र के ज्ञाता स्थपति को शुद्ध जलपान कराकर गृहस्वामी को रात्रि में उपवास करना चाहिए–

पीत्वा शुद्ध पयोरात्रावुपोज्याधि वसेन्ततः।
स्थपतिः शास्त्रावत् प्राज्ञः सूत्रग्राह्यादिसेवितः।।[12]

इसमे एक और विशेष बात उल्लिखित है,वह यह है कि चारो ंदिशाओं मेंसुवर्ण, आयस् ताम्र व रजत द्वारा जो स्वास्ति क बनाया जाता है वह विशेष चिन्हों से युक्त होना चाहिए–

स्वस्तिका निचतु र्दिश्नु हे मायस्ताम्र रूप्यकैः।
सर्वेषामपिसामान्य मे तच्चिहै स्तु लक्ष्यते।।

इस प्रकार से वास्तुशास्त्र में शिलान्यास की विधि सम्पन्न की जातीहै।

संदर्भ ग्रन्थ सूची–

1. वास्तु रत्नाकर पृ0 02
2. वास्तु सौख्यम् चतुर्थ भागः श्री कमलाकान्त शुक्ल कृत
3. मयमतम् 12/101
4. विश्व कर्म प्रकाशः श्लोक 87
5. मयमतम् 9/105
6. मयमतम् 9/107
7. मयमतम् 9/117
8. वास्तु सौख्यम् चतुर्थ भाग 107 श्लोक
9. वास्तु सौख्यम् चतुर्थभाग पृ0 31, श्री कमला कान्त शुक्ल कृत
10.मयमतम् 12/2
11.वास्तु सौख्यम् चतुर्थ भाग पृ0 32, श्री कमला कान्त शुक्ल कृत
12.मयमतम् 12/22

डॉ0 दिनेशचन्द्र शुक्ल
असि0प्रोफेसर
संस्कृत विभाग
महात्मागांधीकाशीविद्यापीठ
वाराणसी
मो0 नं0 – 9415373033

71

The Philosophy of the Indian Constitution: Respect for Human Values

Dr. Mamta Rani

Abstract

Man is a social animal, as Aristotle said. He can survive in the society with the cooperation of his fellow beings. There is a need of cooperation in various fields like social, economic and political. Although man is a social animal and cannot live without his fellow beings still there is a factor of selfishness in his nature. This negative aspect of his nature plays an important role in increasing evils in the society. Only the human values can protect the society from these social evils. Every religion of the society is based on human values. Not only the religion but all the constitutions in the world are forced to accept the philosophy of Humanism which is based on human values. The constitution of India is also totally based on human values. Dr. B.R. Ambedkar played a vital role to accommodate human values in the constitution.

Key Words: Humanism, Human Values, Constitution and Preamble.

Importance and Objective of the Study

The study is most significant in the present complex society which is paralyzed due to various evils. The study is emphasized on the adherence of human values enshrined in the Indian Constitution. The paper entitled 'The Philosophy of the Indian Constitution.: Respect for Human Values' presented a detailed analysis of the philosophy accommodated in the Indian Constitution. The main objective of the study is to analyze the human values enshrined in the preamble of the Indian constitution for the dignity of individual and unity of the nation.

Human Values and the Constitution of India

The constitution of India contains the values that are the universal and democratic values in the modern age. Constitution is the supreme law of the country. The constitution of the Indian Republic is not a product of political revolution but of the research and deliberations of eminent representatives of the people who sought to improve the existing system of the country. They had the great philosophy to overcome the problems laying the society. And the philosophy faithfully reflected in the preamble of the constitution which summaries the aims and objects of the constitution based on human values;

We, THE PEOPLE OF INDIA, having solemnly resolved to constitute India into a
SOVEREIGN SOCIALIST SECULAR DEMOCRATIC REPUBLIC and to secure to all its citizens;
JUSTICE, Social, Economic and Political;
LIBERTY of thought, expression, Belief, faith and worship;
EQUALITY of status and opportunity and to promote among them all;
FRATERNITY assuring the dignity of the Individual and the unity and Integrity of the Nation;
IN OUR CONSTITUENT ASSEMBLY this twenty-sixth day of November, 1949, do
HEREBY ADOPT, ENACT AND GIVE TO OURSELVES THIS CONSTITUTION.

Sovereign state means that Indian state has independent authority. Sovereignty is the supreme, uncontrollable and absolute power of the state to legislate on any subject and that it is not subject to the control of any other state and external power.

Socialist world was added to the preamble of Indian constitution by the 42nd Amendment Act in 1976. The goal of the Indian policy of socialism was ensured by added the word 'socialist' in the preamble. The principal aim of socialism is to eliminate inequality of income and status of life. Therefore, the constitution of India does not seek to abolish private property altogether but seeks to put it under restraints so that it may be used in the interests of the nation, which includes the upliftment of the poor people.

Secular state means that the state protects all religions equally and does not itself uphold any religion as the state religion. The objective of the Indian secularism has been expressed by added the word secular in the preamble by 42nd Amendment Act 1976. The attitude impartiality towards all religions of secular state is secured by the Indian Constitution by several provisions (Article 25-28) under the freedom of religion in the chapter IV of fundamental rights:

- There shall be no state religion in India.
- The state will not compel any citizen to pay any tax for the promotion of any particular religion.
- No religion instruction shall be provided in any educational institution which was funded by the state.

There is no religion above the humanism. Dr. Ambedkar aptly said about the religion that "I like the religion that teaches liberty, equality and fraternity."

Democratic state means that the people have the authority to elect their representatives. As Abraham Lincoln said, "Democracy is the government of the people, by the people and for the people." As a form of government, the Indian democracy is a representative (Indirect) democracy and in our constitution there is no provision of direct democracy such as 'Referendum' or 'Initiative'. Democracy is not only a form of government; it is an attitude of respect and reverence towards fellowmen. The preamble of the Indian Constitution envisages not only a democratic form of government but also a democratic society infused with spirit of Justice, Liberty, Equality and Fraternity.

India is not only a democratic state but it is also a republic state. **Republic** means that the head or president of the state elected by the people in a direct or indirect method. A republic form of government is in which power is held by the

people and their elected representatives and who is not selected on the basis of heredity which is found in the monarchy.

The spirit of **Justice** is incorporate in the preamble of the constitution of India. The Indian constitution makers were aware about the need of justice in the Indian system. There have been so many evidences in the history to prove that without the existence of justice, a civilized society cannot exist. Justice means to give every people what they deserve. Article 14 to 16 of the Indian Constitution reflects the concept of Justice. Provisions of free legal aid and equal justice are also explained in the article 39A in the directive principles of the state policy. It is the duty of the state to provide equal opportunities to all the citizens to ensure the justice in the society. Article 38 and 39 of the constitution of India explain 'Distributive Justice'. It means appropriate distribution of resources among those who are needy.

Constitution of India defines three types of Justice: Social, Economic and Political. Social Justice demands equal opportunities to every Citizen without any discrimination based on caste, religion, race, sex, birth, and place. Social justice is based on social equality.

Economic Justice is also a part of social justice Economic Justice ensures the economic equality in the society. No one can be deprived from any opportunity on the basis of economic status. Economic justice means eradication of poverty by the equal distribution of resources.

Political justice provides equal political opportunities and rights to every citizen without any discrimination such as right to vote, right to contest elections; right to form political parties and right to criticize the government. Political status of any citizen should not give any advantage to him. Every law should be equally applicable on him irrespective of his political status.

Every citizen of India guaranteed **liberty** in the preamble of Indian constitution. Democracy is directly connected with the idea of liberty. The preamble is committed for the liberty of citizens which gives them liberty of thought, expression, belief, faith and worship. Articles 19 to 22 of fundamental rights are also committed for freedom and liberty. Articles 25 to 28 are provide the right to freedom of religion to all the citizens of the state. The preamble and fundamental rights of the Indian constitution also committed for **equality**. Every Indian citizen guaranteed equality of status and opportunity without any discrimination such as caste, religion, sex, birth place etc. Rights have no meaning if they cannot be enjoyed equally by the citizens. Articles 14 to 18 of fundamental rights enjoin the state not to discriminate with the citizen. The rule of law ensures the equal protection of all citizens before law. **Fraternity** is also sought to be promoted by ensuring equal rights to all citizens. Dr. B.R. Ambedkar said that, “Fraternity is the principle which gives unit and solidarity of social life.” It protects the dignity of individual and unity and integrity of the Nation.

Conclusion

All the Constitution in the world are based on human values and drafted to achieve, equality, liberty, justice and fraternity which are the four pillars of democracy. Even the charter of U.N. is drafted on the basis of humanism. The philosophy of Indian constitution is also based on these human values. No doubt, the Indian Constitution is a value loaded document which success is depends on the values of citizen of the country.

References

- A. Chakravarty, ***Humanism and Indian Thought***, Madras University Press, 1965.
- A.R. Desai, ***Social Background of Indian Nationalism***, Popular Prakashan Ltd., 2005.
- Durga Das Basu, ***Human Right in Constitutional Law***, Deep & Deep Publications, 1999.
- Durga Das Basu, ***Shorter Constitution of India***, Lexis Nexis Publishers, 2021.
- Dr. P.K. Agrawal, & Dr. K.N. Chaturvedi***, Constitution of India***, Prabhat paperbacks, 2017.
- H.R. Khanna, ***Making of the India's Constitution***, Eastern Book Agency, 2010.
- Granville Ausin, ***The Indian Constitution: Cornerstone of a Nation***, Oxford University Press, 1999.
- M.D. Reja Ahammad & Amalesh Kr. Pradhan (ed.), ***Working of the Indian Constitution: A Critical Study***, Anu Books Publishers, 2021.
- Samarditya Pal, ***India's Constitution: Origin and Evolution***, Lexis Nexis Publishers, 2017.
- Subhash C. Kashyap***, Constitution of India-A Handbook for Students***, Vitasra Publishing Pvt. Ltd., 2019.

Dr. Mamta Rani
Associate Professor,
Department of Political Science
SJK College, Kalanaur (Rohtak)

Patriarchal System and Rural Women Empowerment

Dr. Kiran Sharma

Abstract

The status of Indian women has seen many ups and downs from the ancient time to the present day. Rural women's empowerment in India is heavily dependent on various factors like patriarchal system, educational status, social status and age. Among all these factors, the strong impact of patriarchal structure is generally seen in rural areas. This is of particular concern, since much of India is rural despite the high rate of urbanization and expansion of cities. Rural women as opposed to women in urban cities, face inequality at much higher rate and in all spheres of life. Due to rapid urbanization and lack of economic opportunities in rural areas of the country, rural women are the most vulnerable to violence and abuse, and are deprived of their basic human rights. Thus, the paper is an attempt to find out the causes which hinder rural empowerment and to see how the patriarchal system is affecting rural women empowerment. The paper will also ponder over on some significant issues which can be quite fruitful for rural women empowerment.

Patriarchy is a social and ideological construct which considers men (who are patriarchs) as superior to women. Patriarchy imposes masculinity and feminists character stereotypes in society which strengthen the iniquitous power relations power relations between men and women. The findings indicate that by countering patriarchy, women experience greater psychological empowerment. Deep level impact on social transformation will take place only when the concept of patriarchy is shaken and conditions supporting eve empowerment are created for women to experience psychological empowerment. Depowerment of women is linked to the belief and practice of patriarchy which subjugates women at various levels- political, economic, social and cultural. According to Walby, patriarchy is composed of six factors which are sources of exploitations and interdependent in nature. They are the household, paid employment, the state, male-on-female violence, sexuality and cultural institutions. The household refers to domestic environment where the housewife and her contribution is running the home are under-valued and looked down upon. Paid employment describes patriarchal relations on the job and refers to women being granted worst jobs and being paid less than men for the same job. Sexuality means that in a patriarchal set up, heterosexuality is and should be a norm. Other sexual preferences are seen as violation of patriarchal norms and therefore liable to be punished by society. It justifies the objectification of women. The cultural institutions represent the patriarchal relations in cultural institutions and regulate the behavior of women in public places. For e.g. - their dress code in public places, and free movement in society.

As empowered woman believes that she can adequately cope with events, situations and the people she confronts. Empowerment as a construct has the notion of the power embedded in it. Power in this motivational sense refers to an intrinsic need for self-determination or a belief in personal self-efficacy. Competence or self-efficacy is a belief is one's capability to perform work activities with skill. Self-determination is a sense of choice in initiating and regulating actions.

Patriarchal beliefs and practices de-power women. Rural women feel powerless when they believe they are unable to cope with the physical and social demands of the environment. Empowerment initiatives by the feminist's movement, the state, and non-governmental (NGO) may create conditions favouring eve empowerment. But the rural women still may not necessarily feel empowered. For example, a rural woman may have the freedom to move around and earn a livelihood but may not have control over the money earned by her. It would be still managed by the patriarchs in the family. Therefore, there is a distinction between creating conditions conducive for empowerment and experience of environment. Psychological empowerment a motivational construct and is present within the individual. Since empowerment is a measure of overcoming patriarchal beliefs and practices, it would enable rural women to experience control and choice on domestic matters.

The impact of the patriarchal structure can be seen in rural and urban India although women's empowerment in rural India is much less visible than in urban areas. This is of particular concern, since much of India is rural despite the high rate of urbanization and expansion of cities. Rural women, as opposed to women in urban settings, face inequality at much higher rates, and in all spheres of life. Rural women who have some level of education have higher decision-making power in the household and the community. Moreover, the level of women's education also has a direct implication on maternal mortality rates, and nutrition and health indicators among children. Among rural women, there are further divisions that hinder women's empowerment. The most notable ones are education levels and caste and class divisions. Women from lower castes are particularly vulnerable to maternal mortality and infant mortality. They are often unable to access health and educational services, lack decision-making power, and face higher levels of violence. Discrimination against women in most parts of India emerges from the social and religious

construct of women's role and their status. As such, in many parts of India, women are considered to be less than men, occupying a lower status in the family and community, which consequentially restricts equal opportunity in women and girls access to education, economic possibilities and mobility. Decisive measures have to be taken in order to further the process of women empowerment and ensure that the goals for gender equality are met. This is of utmost importance if we are to reach the other development goals facing the developing nations.

Works Cited:-

1. A.S. Altekar, *The Position of Women in Hindu Civilization,* New Delhi: Motilal Banarsidas, 1962.
2. J.Fiedmann, Empowerment *: The Politics of Alternative Development.* Cambridge, M.A: Blackwell Publishers Chamber, 1992.
3. K.Millett, *Sexual Politics,* New York: Avon Books.
4. S.Walby, *Theorising Patriarchy,* Oxford, London: Basil Blackwell.
5. Sushila Aggarwal, *Status of Women,* Jaipur; Printwell Publishers, 1988.
6. J.M. Everrette, *Women and Social Change in India,* New Delhi: Heritage Publishers, 1972.

Dr. Kiran Sharma
Associate Prof. of English
Govt.P.G College for Women,
Rohtak (Haryana)

Role of ICT in Higher Education in India

Dr. Govind Prakash Acharya

Abstract

Information and communication technology (ICT) now a days has almost become an inseparable part of every sector be it education or industrial sector, related to one's life. The students now are spending a lot of their time using the ICT or internet facilities. Students are making use of search engines, e-books, virtual lectures, online databases for collecting educational material. As ICT brings forward countless of benefits which enables the students with the right skill and outlook to stay ahead in the race. During the last two decades even higher education institutions have invested heavily in information and communication technologies (ICT). As ICT tools act as source of help for teachers and for the students as well. This works is an effort to evaluate the role of Information and Communication Technology resources in bringing changes in academic performance of students. Information and Communication Technology (ICT), like in all other walks of human life, has revolutionized the education landscape in the country by addressing the three fundamental challenges of access, equity and quality. The role of ICT in imparting education is increasing by the day in view of its effectiveness and has virtually changed the definition of education. It has bridged the gaps and overcome several shortcoming of the conventional system of education.

ICT in the area of higher education, its strengths as a supplementary medium of education and what is required to harness its potential to the maximum and derive optimum benefit out of it for imparting easily accessible, affordable and quality higher education. We are witnessing changes in the way higher education is taught and in the way student learn.

Introduction:

The adequate planning for the optimum utilization of the scarce resources, needs creation of fairly large databases for formulation, implementation and monitoring of Education research programmes. The development of databases and the information systems relating to these would require inputs from various sources, and their processing and timely disseminations will be useful for the planners, policy-makers, development programmes, research, administration and other coordinating agencies. Computers with their capacity to store large amounts of information, ability to retrieve pieces of required information and its processing and dissemination of information on computer networks have opened up vast potentialities for agricultural development.

Informatics is the study of the application of computers and statistical techniques for the management of information. It is also defined as the science of information. It is often, though not exclusively, studied as a branch of computer science and information technology and is related to database, ontology and software engineering technologies have in fact converged to Information and Communication Technology (ICT) which is defined as the technologies involved in collecting, processing, storing, retrieving, disseminating and implementing data and information using microelectronics, optics, telecommunications and computers. In the wake of rapidly growing Internet connectivity, accessing world-wide information, on any desired aspect and providing the same at the click of a button on the desktop along with the e-mail facility already replacing the postal communication all around the world coupled with the internet telephony, web-portals with discussion forums, on-line chatting, video conferencing etc., the world has really bridged the gap in terms of the reach. The use of multimedia technology has made the interactions through computers livelier with images, video clips and stereo-sound capability. ICT provides access to the latest updated information on a particular technology clearly outlining the benefits of adopting that technology through multimedia graphics and video-clips. It is well recognized that the computer images and video clips of actual application of agriculture technology can have far greater impact on the minds and psyche of the people, uneducated man than the textual description of the technology.

Globalization and technological changes have created a new global economy powered by technology, fuelled by information and driven by knowledge. The emergence of this new global economy has serious implications for thenature and purpose of educational institutions. As the access to information continues to grow rapidly, schools and colleges cannot be contented with the limited knowledge to be transmitted in a fixed period of time. Information and communication technologies (ICTS) which include radio and television, as well as newer digital technologies such as computers and the Internet have been proven as potentially powerful tools for educational change and reform. When used appropriately, different ICTs can help expand access to education, strengthen the relevance of education to the increasingly digital workplace, and raise educational quality by helping make teaching and learning into an active process connected to real life. The introduction of ICT in the last two decades or so in India has brought about enormous changes in every sphere of life. This new digital technology has become inevitable and essential and it promises revolutionary benefits for the present and future. But along the way it also poses certain challenges which need to be addressed holistically in

effective ways in order to keep pace with the rest of the world and ensure a robust system.

Today higher education is considered as an important form of investment in higher resource development. The ICT policy in higher education aims at preparing youth to participate creatively in the growth of a knowledge society leading to all educational development of the nation and global competitiveness. The implementation of ICT in higher education has profound for the whole education system. The use of ICT in the higher education helpful in developing open and distance learning system at very large, which is very important in increasing access higher education and improving its reach to the any part of the country. ICT would definitely help our nation to be at a higher stratum.

USE OF ICT IN INDIAN EDUCATION SYSTEM

ICT is a very important part of the teaching learning process. ICT helps in the globalization of the economy and that of the information. India being a developing country, the need for ICT in education becomes even more crucial. It is seen that many students cannot complete their study due to many reasons such as social responsibilities, time factor, etc. Due to all these factors, need for online, distant and ICT based education system arises. The use of ICT not only helps in easy and effective learning but also helps to improve the technological development of a teacher.

The use of ICT based learning facilitates learning anywhere, anytime. It also helps in quick grasping of the subject and makes learning interesting, simpler and effective. It also helps improve the responsiveness of students. ICT facilitates giving live and practical examples to make students understand the concept better and makes complex concepts easily understandable.

Role of ICT in higher education for developing communication skills :

Being able to communicate effectively is perhaps the most important of all life skills. It is what enables us to pass information to other people, and to understand what is said to us. You only have to watch a baby listening intently to its mother and trying to repeat the sounds that she makes to understand how fundamental the urge to communicate is.

Communication, at its simplest, is the act of transferring information from one place to another. It may be vocally (using voice), written (using printed or digital media such as books, magazines, websites or emails), visually (using logos, maps, charts or graphs) or non-verbally (using body language, gestures and the tone and pitch of voice). In practice, it is often a combination of several of these.

Figure shows : ICT helps in develop communcation skill in teaching learning process.

Educational Media and Tools :

1. Television

Television is one of the most important means of communication and entertainment. Millions of people watch television in their homes to connect themselves to the rest of the world. Television brings pictures along with sounds from different parts of the world to people in their homes. Communication satellites in space relay television pictures around the world. The transfer of communication signals as electromagnetic waves through air made the development of television possible. Several scientists contributed to the development of television. The first mechanical television system was demonstrated by John Logie Baird in 1926. V. K. Zworykin invented the first television camera tube and demonstrated the first practical television system in 1929. Many experiments in broadcasting were done in 1930. The world's first public television service was started by BBC in 1936.

Television first came to India named as 'Doordarshan' in 1959. The first telecast started in 1959 in New Delhi. After a gap of 13 years, a second television station was established in Mumbai in 1972. The Ramayana and Mahabharata were the first programs telecasted through Doordarshan. In 1992 government liberated the broadcasting rules and many private channels came. Now there are hundreds of channels in the cable network like Sony TV, Zee TV, Star Plus, NDTV India, Sahara Network etc. Live telecast using OB Van became a new trend to report important issues. Zee TV was the first private owned Indian channel to broadcast over cable. Now the LCD Television Sets came into the Market. It offers more clarity in the video and audio. Content of the channels Public Television in India has some social objectives like national integration, preservation of ecological balance, stimulation of agricultural activities, and also to promote interest in sports and games.

2. Radio

A radio is a device that transmits messages using radio waves. Radio waves can transmit sound, video and data through the air. It is one of the most important and popular modes of communication today. Most communication devices use radio waves to transmit words, music, codes and other signals. Broadcasting is the most familiar use of radio. Radio broadcasts transmit music, news, discussions, interviews, advertisements, cultural and sports events.

The radio was invented by the Italian inventor, Guglielmo Marconi. He was the first to successfully transmit radio signals across a distance of 1.6 km in 1895. In the next few years, he used his radio device to send signals across the Atlantic Ocean.

Radio Broadcasting began in India with the formation of a private radio service in Madras in 1924. In

1936, the Indian broadcasting unit had been renamed as All India Radio (AIR). National Integration was the aim of the AIR after Independence. There are AM, SW, MW, and FM type of broadcasting. FM broadcasting introduced in Madras in1977 and later in Jalandhar in 1992 and now common in Kerala like Radio Mango, Club FM etc.

3. Newspapers

A newspaper is a daily or weekly publication of news and articles. It also consists of opinions, local news of public interest and advertisements.

A newspaper is a disposable publication, usually published on low cost paper known as newsprint. Newspapers give a lot of information at a low price and in a small space. They have certain advantages over the other mediums of communication such as television, radio and magazines. Newspapers cover more detail in comparison to television and radio. The first printed newspaper was published in 1605.

The first Newspaper in India is the Bengal Gazette, later renamed as Hicky's Gazette. Now there are Times of India, The Hindustan Times, The Indian Express, Punjab Kesari, DNA, Dainik Bhaskar, Rajasthan Patrika etc.

4. Electronic

Electronic media means the media which can be operated by electricity, but in large sense, is the electronically transferred data. Internet, Email, Fax, Mobile are some examples. This is considered as the era of electronic media, such as internet. Social Network is the one of the best utilities of the internet.

Internet: Internet is an electronic communication network that connects million of computers. Internet shares information globally and is also known as mother of all networks. It was first developed in the United States of America by two universities that were working on the same contract and wanted to share their data.

The original internet was known ARPANet and had four interconnected computers. Sending emails, chatting, blogging and browsing are the most common activities on internet today.

Email: Email is an electronic message, usually a text message sent from a person by a computer to another person/s to another computer/s. The messages are sent between computers that are connected to the internet. Emails can be sent automatically to a large number of addresses in a few seconds.

Fax: Fax is an electronic device that transmits messages and pictures over telephone lines. Fax is the abbreviation for facsimile. Facsimile in Latin means 'make similar' that is 'make a copy'. The fax machine looks like a photocopier machine. It is used in several offices to send and receive messages. The fax machine is connected to a telephone.

Fax machines are used in newspaper and news services. People send stories, information and pictures to the relay stations through fax. They are also used in banks, offices, business companies and law firms to send copies of documents to other offices and clients.

Mobile: Mobile phones allow wireless communication between people. Mobiles or cellular phones are small electronic devices that are long range, movable, wireless phones. They enable people to communicate in a wide area anytime. Mobile phone communication is different from cordless telephone communication.

A cordless telephone is connected to a specific base station and has a limited range. On the other hand, mobile phones have an unlimited range that connects people around the world.

Fibre Optics: Fibre Optics Communication is communication through fibre optics cables and wires. In Fibre Optics Communication, data is transmitted in the form of light. Thin, hair like filaments of glass or silica transmits data over long distances. Fibre optics communication can transmit large amounts of information at a high speed. It uses the principle of total internal reflection. According to this principle, light that is transmitted into a glass cable reflects back to the covering on the sides of the cable. This enables the light to travel around corners.

Fibre optics technology is used for internet communication as it sends information digitally. Telephones use fibre optics. Fibre optics is also used by doctors in medical imaging. They enlarge the areas of diagnosis using special scopes with the help of fibre optics. Fibre optics is also used in safety inspections by engineers and mechanics.

Satellite Communication: Satellite communication is the communication of data and information through satellite.

A satellite is a celestial object that revolves around a planet in an orbit. Artificial satellites are manufactured and stationed in space for telecommunication. Satellite communication is nowadays useful in our lives. Television and radio programmes, weather reports, telephone calls and dish networks are made possible by satellite communication.

Communication satellites are artificial satellites. They receive signals from radio and television stations and send them back to Earth. They are located high above the Earth in space. This allows them to send the radio waves to anywhere on the earth. They provide a wide variety of communication services like television broadcasting, mobile communication, ships and airplane communication etc.

SOME USEFUL ICT TOOLS

There are many popular and commonly used ICT tools like projectors, smart boards etc. with which we are all familiar with but this paper gives a brief listing of some very useful but not much popular ICT based tools, technologies and platforms that offer a wide range of services to train teachers and make teaching more effective and more interesting. Below is a brief introduction of such Tools, technologies and platforms:

Google Groups

Google group is a common platform provided by Google wherein educators and other people of interest create and/or join groups. The group members share topic of a common interest and discussions are made on the topic by the group members. Members can be added to the group by selecting the JOIN Members options. Similarly, we have Yahoo groups too that provides similar facility but it is a platform provided by Yahoo to facilitate e-learning.

Google Docs

In Google Docs we can create new docs, presentation, spreadsheet, form or folder. Is a web-based online platform provided by Google to create and edit documents and it is free of cost. This is a helpful tool for sharing notes and other related content of study with students. It offers control over who can edit the docs. This feature is provided in Google Drive.

Slide Share

Slide share is an application suite provided by LinkedIn. The group contains professional content like presentations, infographics, videos and documents. Its users can upload files in private or public way. Here we get a wide range of educational content.

MOOCS

MOOCS (Massive Open Online Curses) is an online course structure that is reshaping the web of higher education system at a fast pace. It is an emerging online teaching methodology which is based on the philosophy of convictism.

Online lectures and Webinars

Online lectures and webinars and lectures enable multiple users to participate in lecture and other webinars based on the internet. It removes the geographical boundaries and many people can join the webinar. It helps many users to collaborate on a shared "whiteboard". It also enables users to share the text and applications from their screen with the user.

National Knowledge Network

National Knowledge Network is a Government of India initiative that enables collaborative research and development activities amongst all the institutions connected with the NKN. It also enables advanced distant education courses in the field of science and engineering, medical etc. It acts as a connection link between the different sectors for research. The total number of schools connected with National Knowledge Network is 1669 as mentioned on the website of National Knowledge Network as on September 2018. It aims at establishing a strong, secure and reliable connectivity network that connects all the knowledge and research institutions in the country via high bandwidth network. Its main aim is to build a platform that supports collaborative research to fulfil the need for a national platform in the country wherein highly trained professionals and research scholars share their ideas, knowledge content. In the coming years it will act as a central critical infrastructure to evolve as a knowledge society. It will help research scholars and students from diverse parts of the country to work together in the field of research and to strengthen human development in critical and emerging areas.

National Teacher Platform

NTP is a Government of India initiative that hosts educational resources and tools to help teachers in schools by providing teacher training courses, teaching resources such as lesson plans, concept videos, worksheets etc. This also provides facility of offline availability of resources to teachers on their Smartphone, tablets and other related devices anytime anywhere.

Udemy

It is a worldwide online platform for teaching with over 2 million students and 13000 courses that helps in designing robust classes that includes PPT files, robust lectures, audio video files and many more. This platform is completely free for instructors and they may offer courses with or without payment.

Teachers Pay Teachers

It is an online platform where teachers share their teaching videos, learning kit, lesson plans, teaching guide, audios and lectures with other teachers either on paid basis or free of cost. It is a very good platform where teachers get a chance to learn from other teachers. If there is a charge involved, teachers get royalty on the money earned.

Virtual Classroom & E-Lectures

It provides a platform for online e-class which involves use of computers, internet and other multimedia devices like home theatres, audience response technologies etc. Projectors, smart tables, digital textbooks and computers are the widely and most commonly used Smart classroom devices. In virtual classroom participants can raise hands, answer polls or take test. Students are able to whiteboard and screencast when given rights by the instructor, who sets permission levels for text notes, microphone rights and mouse control.

Social Networks

Social networking sites are virtual communities for people interested in a particular subject or just to "hang out" together. Members communicate by voice, chat, instant message, video conference, and blogs, and the service typically provides a way for members to contact friends of other members. Group webpages, blogs and wikis allow learners and educators to post thoughts, ideas, and comments on a website in an interactive learning environment.

Webcams

Webcams and webcasting have enabled creation of virtual classrooms and virtual learning environment.

Role of I.C.T Higher Education

The Information and Communication Technology (ICT) is an umbrella term that includes any communication

device or application, encompassing: radio, television, cellular phones, computer, and network hardware and software, satellite systems and so on, as well as the various services and applications associated with them, such as videoconferencing and distance learning. When such technologies are used for educational purposes, namely to support and improve the learning of students and to develop learning environments, ICT can be considered as a subfield of Educational Technology. ICTs in higher education are being used for developing course material; delivering content and sharing content; communication between learners, teachers and the outside world; creation and delivery of presentation and lectures; academic research; administrative support, student enrolment etc.

In the current society people have to access knowledge via ICT to keep pace with the latest developments. In such a scenario, education, which always plays a critical role in any economic and social growth of a country, becomes even more important. Education not only increases the productive skills of the individual but also his/her earning power. It gives them a sense of well being as well as capacity to absorb new ideas, increases their social interaction, gives access to improved health and provides several more intangible benefits. The various kinds of ICT products available and having relevance to education, such as teleconferencing, email, audio conferencing, television lessons, radio broadcasts, interactive radio counselling, interactive voice response system, audiocassettes and CD ROMS have been used in education for different purposes.

Today ICTS - including laptops wirelessly connected to the Internet, personal digital assistants, low cost video cameras, and cell phones have become affordable, accessible and integrated in large sections of the society throughout the world. It can restructure organizations, promote collaboration. increase democratic participation of citizens, improve the transparency and responsiveness of governmental agencies, make education and health care more widely available, foster cultural creativity, and enhance the development in social integration. It is only through education and the integration of ICT in education that one teaches students to be participants in the growth process in this era of rapid change. ICT also allows for the creation of digital resources like digital libraries where students, teachers and professionals can access research material and course material from any place at any time. Such facilities allow the networking of academics and researchers and hence sharing of scholarly material. This avoids duplication of work.

In absence of ICT, most of the responsibility of teaching and learning lies on the teachers. However, can transfer the with the help of ICT one responsibilities to the students so that they can self manage. It helps to individualize the teaching or guidance method as per the student's need. It also boosts the confidence level and the self-esteem of the students who acquire the ICT skills through the process of being exposed to such kind of learning also puts forth the view that ICT-based registration, evaluation, and administration help to link different levels of information and facilitate an overall view of the whole educational setup. It facilitates the evaluation and examination of the learning process and results by the students and the parent's in a flexible and convenient way. The globalization process has also created a large market of offshore students. To reach them, information technology is the only convenient medium, which can offer education as a service. It increases education provision substantially and can contribute to mass education. It also creates competition among the institutions for providing education and hence improves the quality.

Information and communication of technology (ICT) has emerged as a boon in each aspects of life in past twenty years. The use of ICT in higher education field has changed the way traditional learning into digital media learning. ICT created more students learning and provided quality education in effective manners to learners as well as students. ICT succeeded in education as it provided a variety of information and learning environment to solve complex problems with world class examples. Besides this it has become mentors for the students so as to grow rapidly in today's competitive environment. Anytime learning has replaced traditional delivery of educational programs. ICT connects students and teachers to the world and give a platform to learn and share knowledge and innovative ideas for learning practices. Due to affordable and capable technologies it created pool of students, experts, teachers to make learning process easy. This paper analyses the role of ICT in higher education in 21st century and how it impacted educational practice and the way of learning in higher education systems. ICT has become a strong agent of change for teachers as well as for students. This paper explores the changes which has taken place in education system.

ICT plays a vital role in the process of Higher education. This procedure makes students able to understand the particular topic effectively and easily

India has a demographic advantage and to emerge as the global power by harnessing this potential, it requires new innovative techniques to strengthen its existing education system. The last few decades have bolstered the higher education system due to the swift advancements in Information and Communication Technology (ICT). The increasing use of information and communication technologies (ICTS) has brought positive changes to teaching and learning at all levels of higher education systems. Education is a very socially oriented activity and quality education has traditionally been associated with strong teachers having high degrees of personal contact with learners. This paper is an attempt to explore the role and impact of ICT in higher education. The use of ICT in

education not only improves classroom teaching learning process, but also provides the facility of e-learning. The need of the hour is to pay attention to the ICT implementation in educational system in more effective way so that we can impart accessible, affordable quality education leading to improved academic achievement of students.

ROLE OF ICT IN RESEARCH

Applications of ICTs are particularly powerful and uncontroversial in higher education's research function. Four areas are particularly important: The steady increases in bandwidth and computing power available have made it possible to conduct complex calculations on large data sets. Communication links make it possible for research teams to be spread across the world instead of concentrated in a single institution. The combination of communications and digital libraries is equalizing access to academic resources, greatly enriching research possibilities for smaller institutions and those outside the big cities. Taking full advantage of these trends to create new dynamics in research requires national policies for ICTs in higher education and the establishment of joint information systems linking all higher education institutions. The application of ICTs in academic research has grown steadily in the past 10 to 15 years in both developing and developed countries, although there are wide variations in usage both within and between countries and regions. The most straightforward use of ICTs in research is in data processing. The unprecedented growth in bandwidth and computing power provide opportunities for analyzing/processing huge amounts of data and performing complex computations on them in a manner that is extremely fast, accurate and reliable. Computer data processing not only frees researchers from the cumbersome task of manually analyzing data but more importantly facilitates quick and accurate analysis of huge amounts of data from national samples or even multi-national samples covering tens of thousands of respondents. Another important dimension of ICTs in research is the use of online full text databases and online research libraries/virtual libraries which libraries which are the direct outcome of the growth in telecommunications networks and technology. These databases and libraries provide researchers with online access to the contents of hundreds of thousands of books from major publishing houses, research reports, and peerreviewed articles in electric journals.

Conclusion

This paper gives a brief overview about the recent tools, technologies, platforms and online services to facilitate e-learning and teaching using ICT. There are many initiatives take up by the Government of India and other national and global organizations and institutions to make teaching effective and interesting by making use of ICT's and by providing a platform where teachers, researchers, research scholars and students may share their educational resources, ideas, and enter into a discussion to facilitate easy and effective learning.

There is a great need to make more and more use of such tools, technologies and platforms to make the Indian education system better and to facilitate research. The use of such ICT tools and technologies will not only help students learn complex topics easily, generate more interest in students but will help in the technological growth and overall development of the teachers as well. With this teachers will not only be restricted to the traditional course material but learn new concepts and become familiar with the global advancements in teaching strategies and the course curriculum.

References :

1. Vijay Aggrawal, "Educational Technology", Retrieved September 20, 2018.
2. International Journal of Business and Industrial Marketing, Vol. 1, no. 4, pp. 78087, 2015.
3. Deepali Tyagi and Sujeet Kumar Mishra, "Neo-ICT and Pedagogy symbiosis in Teacher Education Programmes for Next Generation Teachers." University News, Vol. 50, No. 24, pp. 17-19, June 2018.
4. Information a and Communication Technologies in Teacher Eudcation : A Planning Guide. http: // unesdoc. unes co.org/ images /0012/ 001295 /129533e.pdf
5. www.udemy.com
6. www.advisor2u.com for e-learning and online course materials.
7. google scholar
8. nkn.gov.in
9. www.mhrd.gov.in
10. www.slideshare.net

Dr. Govind Prakash Acharya

(Asso. Professor (Agri.)

SGG Govt. College, Banswara

M :9460545836 /

Email : gpacharya.6@gmail.com

74

Socio-economic Characteristics Of Universities And Colleges Sports Persons Of Hisar

Dr. Satbir Singh Sanga

Abstract

Aim of study was to find out Socio-economic characteristics of universities and colleges sports persons of Hisar, due to recently drastic changes in society in respect of socio-economic characteristics. A sample of 160 sports persons was selected from universities and colleges of Hisar between age group of 17 to 25 years on random selection basis. A five scale questionnaire was developed by researcher for collection of data. The reliability and validity of scale was checked through test-retest method and validity and reliability was found 98%. Thus, collected data was arranged, tabulated and presented in percentage form to find out results on educational, occupational, economical, social, cast and socio-economic characteristics among sports persons of Hisar. The conclusion of results predicts that 96.87% of sports persons have lower and middle characteristics of Education. Only 3.13% sports persons confirmed the higher characteristics of education. It concluded that majority of sports persons of Hisar were found with less interests and motivations of higher education. Occupational, economical, social and socio-economic characteristics among Hisar sports persons were dominated by middle group sports persons followed by higher and lower group. Almost 75% of sports persons were found from middle group in relation to these characteristics where as higher group sports persons were found slightly better than lower group in these characteristics. Out of 160 subjects 107 (66.88%) were found from upper casts where as 22 (13.75) and 31 (19.37%) were found from lower and middle caste respectively. So, it can be safely concluded that sports persons of Hisar were found with less interest towards higher education and a large number of them were found from upper casts, where as one third sports persons of Hisar were found with mediocre economic, social, occupational and socio-economic characteristics.

Key words : *Educational, Economic, Social, Occupation, Cast and Socio-economic characteristics.*

Introduction

The group of people with in a society who possess the same economic status, the term was first widely used in the early 19th century, following the industrial and political revolutions of the late 18th century. The most influential early theory of class was the Karl Marx, who focused on how one class controls and direct the process of productions while other classes are direct producers and the providers of services to the dominant class. The relation between the classes were thus seen as antagonistic. Max Weber emphasized the importance of political power and social status or prestige in maintaining class distinctions.

Socio-economic status is a weak and inconsistent indicator of participation in games and sports activity. The socio-economic status gradients do exist in children attitude towards physical activities and sports, students from low economic status group are less inclined towards games and sports, whereas middle and upper socio-economic status students participate in these activities as per their desire and prevailing situations.

Status and specific socio-economic level influence the choice of sport in which students participate. Coakley and White (1992) support this notion as they suggest that individuals decision to participate in physical education activity and sports are shaped by a complex dynamic, in which economic factors, class, gender, parental, peer influences, leadership and locality interact. Therefore, it is logical to assume that people of upper and upper middle classes may be inclined to participate in sports such as Golf, Tennis and Polo than that of middle and lower economic classes, whereas, students in lower economic classes may be more likely to participate in team sport such as Football, Basketball and Baseball etc.

The present investigation is significant in the manner that it will try to present clearly those socio-economic conditions which determine the failure or success of sports persons along with motivation of participation. The results of the study may be able to put forward, few guidelines for the coaches, parents, teachers, educationists and the trainees who are future of our society and country.

Purposes

To determine the educational, occupational, economical, social, cast and socio-economic characteristics of sports persons of Hisar.

Methodology

Study was conducted on 160 sports persons (Male & Female) hailing from different colleges and universities within the jurisdiction of Hisar District between the age group of 17 to 25 years selected on random selection basis. Only sports persons who had at least participated in a university or State championship of any game were selected as sample.

Tools used : Self developed questionnaire of five-scale is developed by researchers. Socio-economic status scale

developed by Kapoor and Kochar was modified by investigator as per local situations, keeping in view the over all socio-economic development of Hisar district now a day. The reliability and validity of questionnaire was checked and confirmed through test, retest methods. It was found significant at 0.98° of significance. Questionnaire was employed for collection of data. Purposes, methods and instructions regarding the administration of test were explained cleared to subjects along with their doubts.

Collection of data : In this way data was collected, arranged, tabulated and systematically presented in the percentage method, interpreted and analyzed.

RESULTS AND DISCUSSION

The result and discussion of study presented as under :

Table-1 : Showing educational characteristics among sports persons of Hisar

Sr. No.	Educational Characteristics		
	Name of Group	No. of Sports Person	Percentage
1.	Lower Group	89	55.62
2.	Middle Group	66	41.25
3.	High Group	05	3.13

Table 1 predict that out of 160 subjects 89 (55.62%) found less interested in higher studies and 66 subjects (41.25%) student interest level in education was found at mediocre level. Only 05 (3.13%) subjects were found with higher level of educational characteristics.

The reason of this may be that sports persons have sufficient resources regarding sports, acquire recognition through sports and avail opportunities for job through sports, so they sustain their more interest in sports. Only 5 (3.13%) of sports persons fall in higher educational group which is more intellectual group than other groups. They have better knowledge and resources, they channalize their energies on advance courses. This causes an adverse effect on their active participation in sports.

The above results of study are supported by Dolly and Usha (2010) they conducted a study on Kurukshetra University players and revealed the same results.

Table-2 : Occupational characteristics among sports persons of Hisar

Sr. No.	Occupational Characteristics		
	Name of Group	No. of Sports Person	Percentage
1.	Low Group	19	11.87
2.	Middle Group	123	76.88
3.	High Group	18	11.25

Table 2 predict that 19 (11.87%) subjects were found with low occupational background, whereas 123 (76.88%) and 18 (11.25%) subjects were found with medium and high occupational back ground respectively. Occupation directly related to economic background of a family. Low occupational group subjects have poor economic status which effect their participation in sports. Mediocre group subjects and high group subjects have sufficient resources and sound economic background, which provide them better facilities for participation in sports. They can purchase sports kit and equipments as per need of their game, which boost their confidence for actively participation. Sports talent schemes and sports hostels also encourage medium group occupational background sports persons for mass participation. They sweat more for more awards and economic assistance. Scholarship and awards to outstanding sports persons also enhance the participation of medium occupational group subjects. Study conducted by Gupta, S.K. (1986) supported above results of study. He found a positive correlation between sports participation and economic background of participants.

Table-3 : Economic characteristics among sports persons of Hisar

Sr. No.	Economic Characteristics		
	Name of Group	No. of Sports Person	Percentage
1.	Lower Group	10	06.22
2.	Middle Group	110	68.75
3.	High Group	40	25.00

Table 3 scores shows that out of 160 subjects of study 110 (68.75%) subjects were found with medium economic characteristics, whereas 10 (6.22%) and 40 (25.00%) were found with low and high economic characteristics respectively.

Review of literature support that sufficient and better economic facilities enhance motivation and self concept of students for participation in sports. Low economic position of students have less motivation and inferiority complex in them which reduces their participation in sports. High economic position of a student generate so many other opportunities of their interest with superiority complex, which keep them away from mass participation. This group of students participate in costly games and sports such golf, lawn tennis and shooting etc. Baljit Singh (1996) conducted a study on socio-economic status of Haryana sports persons and found that 80% of sports persons of Haryana were found with medium economic characteristics.

Table-4 : Social characteristics among sports persons of Hisar

Sr. No.	Social Characteristics		
	Name of Group	No. of Sports Person	Percentage
1.	Lower Group	16	10.00
2.	Middle Group	112	70.00
3.	High Group	32	20.00

Results of Table 4 predict that out of 160 subjects 112 (70.00%) subjects were found middle social group characteristics, whereas this level among lower and higher group was found 16 (10.00%) and 32 (20.00%) respectively.

Lower group subjects are deemed as ritualistic and

traditional. They are not so conscious about their future and not having facilities of participation in active sports. Parents motivation and day to day needs also keep them away from participation in sports. Middle and higher background social groups, have progressive social environment, resources and they were motivated and socially supported for participation in sports. Higher group social characteristics subjects have so many other options for their future plans which reduces their active sports participation. Om Parkash (1988) conducted a study on physical fitness and social status of Haryana sports persons and found that major portion of Haryana sports persons was found from middle social status families.

Table-5 : Cast characteristics among sports persons of Hisar

Sr. No.	Cast Characteristics		
	Name of Group	No. of Sports Person	Percentage
1.	Lower Group	22	13.75
2.	Middle Group	31	19.37
3.	High Group	107	66.88

Table 5 shows that out of 160 subjects 107 (66.88%) were found with upper cast status where as 22 (13.75%) and 31 (19.37%) subjects were found with low and medium cast status respectively.

The subjects from lower and lower-middle cast status have poor esteem, poor self concept and motivation due to which they hesitate from participation in sports. Their cast characteristics of occupational preferences also keep them away from education and active participation in sports. Sports persons from higher cast status have better self-concept, self-esteem, motivation and family support so they participate in sports open heartedly. They want to improve their prestige and status through sports performances. Medal won by Indian sports persons in the recently held Commonwealth games and Asian games and study conducted by Boora, J.S. (2000) support the results of Table 5. He conducted a study on socio-economic status of Haryana sports persons found that 90% of Elite Sports persons of Haryana were found from upper caste status.

Table-6 : Socio-economic characteristics among sports persons of Hisar

Sr. No.	Socio-Economic Characteristics		
	Name of Group	No. of Sports Person	Percentage
1.	Lower Group	16	10.00
2.	Middle Group	112	70.00
3.	High Group	32	20.00

Table 6 reveals that out of 160 subjects 112 (70.00%) subjects were found from medium economic status families of society, where as low economic and higher economic status subjects were determined 16 (10.00%) and 32 (20.00%) respectively.

The lower, socio-economic group have poor education status, low economic condition, poor social status and low self esteem which effect their whole heartedly participation in sports. Inferiority complex, lack of motivation and family support also keep them away from sports. The higher group has superiority complex with higher motivation for their future. Other fields of interests attract them more inspite of sports. Professional education is preferred by them. Even participants from this group participate in costly sports, such as Golf, Lawn tennis and shooting.

The subjects of medium economic status have more positive sports environmental conditions and resources for participation in less costly games such as Judo, Boxing, Wrestling, Kabaddi, Volleyball, Handball and Football etc. so major section of sample was found from medium economic status background families. The results of table confirmed by Boora, J.S. (2000) study, who found major portion of sports persons in his study from medium economic status groups.

Discussion On Hypothesis

It was hypothesized that there would be found differences among educational, occupational, economical, social, cast and socio-economic characteristics of sports persons of Hisar district. The results on findings of study confirmed a respectable difference among various characteristics of district Hisar sports person. Thus, the hypothesis of study is confirmed and accepted.

Conclusion

In conclusion of results of study it was found that 97% sports persons were found with less educational interests and backgrounds. Cast characteristics of sports persons of Hisar district shows dominance of higher casts whereas occupational, social, economical and socio-economic characteristics of district Hisar sports persons were dominated by medium group characteristics bearers.

References

1. Baljit Singh (1996) A Comparative Study of Anxiety Level and Socio-Economic Status of Sports and Non-Sports Persons.
2. Baljit Singh (2009) Principal of physical education, Sports Publications, New Delhi.
3. Boora, J.S. (2000) A comparative study of physical fitness and socio-economic of Haryana Agriculture University teams participants in inter university tournaments.
4. Davis, G.S. (1970) An investigation of relationship between socio-economic status of fifth grade pupil in romen to city, U.S.A., completed research in Health and Physical Education.
5. Graneau, R.S. (1973) Sports social inequalities and ideology. Sports and Social order, California, Addison wisely, p. 162.
6. Gupta, S.K. (1986) Socio-Economic Correlations of

Participation in Sports, SNIPES Journal, Vol. 9, No. 4, p. 17-27.

7. Jasper, J.A. (1967) The relationship of socio-economic status and physical fitness of selected sixth grade girls Sioux fools, South Mkpta, completed Research in Health, Physical Education and Recreation, 9; p. 104.
8. John, W.L. (1969) The study of sports and social mobility, in Grald S. Kenyon (ed.) Sociology of Sports, Chicago Athletics Institute, p. 110-119.
9. Kapoor and Kochar (1971) National psychological centre, Manual for Social Economic Status, Agra.
10. Om Parkash (1988) A comparative study of physical fitness and socio-economic status among wrestlers of Haryana at various level of participation.
11. Pontheus, NA and Barker, D.G. (1965) Relationship between socio-economic status and physical fitness measures, Research Quarterly, I; pp. 464-467.
12. Ved Parkash (1985) A study of relationship between intelligence, scholastic achievement, personality traits and achievement in sports at different level of socio-economic status.

Dr. Satbir Singh Sanga
Associate Professor, Govt. College,
Hisar

"Raja Ram Mohan Roy And The Abolition Of Sati System In India"

Dr. Santosh Kumar Sharma

Abstract

Raja Ram Mohan Roy was hailed as the father of Indian Renaissance. Nineteenth Century India witnessed a remarkable transformation in the Social ideas in the History of India. Age old 'Sati system', ie, burning of Widow in her dead husband's funeral pyre which existed in India was abolished due to the effort of Raja Ram Mohan Roy He was the founder of Brahmo samaj and he also played a vital role in the abolition of Polygamy and Child marriage in India.

KEYWORDS

Raja Ram Mohan Roy, Sati System, Brahma Samaj, Lord William Bentick, Samavad kaumud.

1.Introduction

India made tremendous progress both religious and social field in the19th century.Raja Ram Mohan Roy was hailed as the father of Indian renaissance. Raja Ram Mohan Roy decided to reform Hindu society from its all irrational observance and evil customs. He opposed all discrimination and evil practice against women. He was the founder of Brahmo Samaj. The Brahmo Samaj teaches about monotheism. Raja Ram Mohan Roy welcomed western education. Raja Ram Mohan Roy gain more popularity through his activities for the abolition of Sati. The relevance of present study is that access the awareness of people regarding Raja Ram Mohan Roy. It is also useful to have clear evidence about the influence of Raja Ram Mohan Roy in the Indian social scenario. These movements played an important role in creating culture consciousness and confidence among the people. Raja Ram Mohan Roy was the great personality of modern India. The abolition of Sati is one of the most significant turning point is the social history of modern India. Raja Ram Mohan Roy's contribution to modern India also needs special reference. They abolish child marriage and polygamy.

He started a campaign for the abolition of 'Sati System' in which wife of the dead burned herself in the funeral pyre of her husband. He also condemned polygamy, denounced casteism,advocated the right of Hindu widows to remarry etc. With his active persuasion Lord William Bentick,the then Governor General of British India passed the famous Regulation XVII in1829 that situated Sati as illegal and punishable by courts. Raja Ram Mohan Roy warmly advocated the introduction of western education in India. And thus he become a pioneer of English Education in India and of Enlightened journalism in his country. He himself founded and edited a Bengali journal called the "Samvad Kaumudi".For the spread of his ideologies he Started Brahmo Samaj

in 1828 A.D. Raja Rammohan Roy did not want the Indians to imitate the West. He based his teachings on the philosophy of the Vedas and Upanishads and tried to bring about a synthesis of the Vedic religion and the Christian humanism. This very synthesis formed the basis of the Ramakrishna Math which was later formed by Swami Vivekananda. Raja Rammohan Roy focused the attention of the British Government to such demands as appointing Indians to higher posts. He protested against restrictions on the freedom of the press. His social reforms made him the "first modern man" in India.

2.RAJA RAM MOHAN ROY AND ABOLISION OF SATI SYSTEM IN INDIA

Raja Ram Mohan Roy was born in to a Bengali Brahmin family in year 1772. His family background displayed religious diversity – his father Ramkanta was a vaishnative. His mother Tarinidevi was from a shivaite family. This was unusual vaishnavite did not commonly marry shaivite at that time.

Raja Ram Mohan Roy started his formal education in the village Pathshala, where he learned Bengali and some Sanskrit and Persian. Later he said to have studied Persian and Arabic from a madrass in Patna.When he was hardly 15, he wrote a pamphlet in Bengali in which he denounced idol-worship which he asserted was not recognized in the Vedas. He travelled far and wide and thus able to gather a lot of experience and learning. The Raja fought for the freedom of the press. He himself founded and edited a Bengali journal called the Samvad kaumudi which was one among the earliest Indian newspaper.

The central figure in this social awakening was Raja Ram Mohan Roy,who is rightly regarded as the first leader of Modern India[2 (Chandra, 2009)].Ram Mohan Roy was moved by deep love for his life for their social, religious, intellectual and political regeneration. The upper classes were selfish and often scarified social interest to their own narrow interest. He was a great personality in the modern India. Ram Mohan Roy had love and respect for all kind of traditional philosophical system. He was basically a profical philosopher. In particular he wanted his countrymen to accept the rational and scientific

approach all the principles of human dignity and social equity of all men and women. He also wanted the introduction of modern capitalism and industry in the country. He was also well-acquainted with Jainism and other religious movement and sects of India. In 1809 he wrote in Persian his famous work "Gift of monotheist[s]" in which he put forward weighty argument against belief in many God and for the worship of single God

Raja Ram Mohan Roy was essentially a democrat and a humanist. He was a very well-read man. He studied oriental languages like Arabic, Persian and Sanskrit and attained proficiency in European languages like English, French, Latin, Greek and Hebrew. In his religio-philosophical social outlook, he was deeply influenced by the monotheism and anti-idolatry of Islam, deism of Sufism, the ethical teaching of Christianity, liberal and rationalist doctrines of the West. In 1803, he published a Persian treatise called *Tuhfat-ul-Muwahidin* or 'A Gift to Monotheists' wherein he explains his concept of monotheism. He was deeply concerned with the eradication of social evils like sati, child marriage, polygamy etc. He wholeheartedly supported the Governor-General Lord William Bentick when the letter enacted legislation abolishing sati in 1829.

Ram Mohan Roy's demand that the abolition to company's trading right and removals of heavy export duties on Indian goods. He was the great personality in the world. Raja Ram Mohan Roy was in the nature of the prepared of this country for political advancement in the future. By removing the social and religious evil he prepared the India for political consciousness. He was undoubtedly the pioneer in this field and no wonder has been rightly called the father of Indian nationalism.

As an Educationist Raja Ram Mohan Roy had his own way of action and ideas. The main contribution and performance of Raja Ram Mohan Roy can be listed below:-

- Raja Ram Mohan Roy believed education to be an implement for social reform.
- In 1817, in collaboration with David Hare, he set up the Hindu College at Calcutta.
- In 1822,Raja Ram Mohan Roy founded the Anglo-Hindu school, followed four years later in 1826 by the Vedanta College; where he insisted that his teachings of monotheistic doctrines be incorporated with "modern, western curriculum.".[24]
- In 1830, he helped Rev. Alexander Duff in establishing the General Assembly's Institution (now known as Scottish Church College), by providing him the venue vacated by Brahma Sabha and getting the first batch of students.
- He supported induction of western learning into Indian education.
- He also set up the Vedanta College, offering courses as a synthesis of Western and Indian learning.

•The Brahmo Samaj

The Brahmo Samaj played a notable role in the Indian renaissance. The Trust deed executed in 1830 explained the object of the Brahmo Samaj as "The worship and adoration of the Eternal, unsearchable Immutable being who is author and preserver of the Universe". The Samaj declared its opposition to idol worship, Priest hood and Sacrifices of any kind. The worship was performed through prayers and meditation and readings from the Vedas and the Upanishads.

The Brahmo Samaj was the earliest movement of the modern type in India which was greatly influenced by modern western ideas. Raja Ram Mohan Roy was the founder of Brahmo Samaj at Calcutta in the yeat 1828. It was one of the most influential religious movements4 (Farqur, 1915) which is responsible for the making of modern India and it was started at Calcutta. On 20 august 1828 by Raja Ram Mohan Roy and Debendranath Tagore as reformation of the prevailing Brahmonism of the time and began the Bengal Renaissance of the 19th Century pioneering all religious, social and educational advance of the Hindu Community in the 19th Century. Its Trust

Deed was made in 1830 Formalizing its inception and it was duly and publicly inaugurated in January 1830 by the consecration of the First house of prayer now known as the Adi Brahmo Samaj from the Brahmo Samaj springs Brahmoism the most recent of legally recognized religions in India and Bangladesh reflecting its foundation on reformed spiritual Hinduism with vital elements of Judeo Islamic faith and practice

The ideals of Brahma Samaj Can bediscussed below:-

- The ideals of Brahmo Samaj have their origin in the synthesis of the Vedic religion and the Christian humanism.
- It advocated that there is one God, who is present everywhere, and is without shape and form. His worship lies in intense devotion.
- It believed in the brotherhood of man and treated all men as equal. It started a magazine entitled Samvad Kaumudi, to teach people love of mankind.
- It supported the introduction of English in schools with the belief that the study of English would open the door to modern sciences.
- It condemned social evils such as casteism, untouchability, child marriage and the Sati system. It was due to the efforts of Raja Ram mohan Roy that Lord William Bentick abolished Sati system in 1829 by

declaring it an offence.

- It advocated freedom of the press and condemned any restriction imposed on it by the Government.
- It supported widow-remarriage and the education of girls. Raja Ram mohan Roy was the first to agitate for getting women their rightful place.

Brahmo Sabha

On 20 August 1828 the first assembly of the Brahmo Sabha was held at the North Calcutta house of Feringhee Kamal Bose. This day was celebrated by Brahmos as Brahmostab. These meeting were open to all Brahmins and there was no formal organization or theology as such.On 8 January 1830 influential progressive members of the closely related Kulin Brahmin clan of Tagore and Roy Zaminder family mutually executed the Trust Deed of Brahmo Sabha for the first Adi Brahmo Samaj on Chitpore Road, Kolkata, India with Ram Chandra Vidyabagish as first resident superintendent On 23 January 1830 or 11th Magh, the Adi Brahmo premises were publicly inaugurated. This day is celebrated by Brahmos as Maghotsab.In November 1830 Ram Mohan Roy left for England6 (W.Jones, 2003).With Rammohan's departure for England in 1830, the affairs of Brahmo Sabha were effectively managed by Dwarakanath Tagore and Pandit Ram Chandra Vidyabagish, with Dwarakanath instructing his divan to manage affairs. Weekly services were held consonant with the Trust directive, consisting of three successive parts: recitation of the Vedas by Telugu Brahmins in the closed apartment exclusively before the Brahmin members of the congregation, reading and exposition of the Upanishad for the general audience, and singing of hymns. The reading of the Vedas was done exclusively before the Brahmin participants as theorthodox Telugu Brahmin community and its members could not be persuaded to recite the Vedas before Brahmins and non-Brahmins alike.

By the time of Rammohan's death in 1833 near Bristol, attendance at the sabha dwindled and the Telugu Brahmins revived idolatry. The zamindars, being preoccupied in business, had little time for affairs of sabha, and flame of sabha was almost extinguished7 (Sarkar, 1906)

Abolition of sati system.

Sati was an ancient Hindu custom, according to which a wife immolate herself at the funeral pyre of husband. In 1811 Roy witnessed his brother's widow being burned alive on her husband's funeral pyre. Three years later he retired and concentrated on complaining against the practice of woman dying as Sati. Raja Ram Mohan Roy was the first Indian to protest from against this custom. Raja Ram Mohan Roy was strictly opposed this system of Sati. He advocated that this was completely against the women's right to live in the society as a human being8 (Basham, 1975). Thus he challenged the age old evil practice of Sati. It is said that once Raja Ram Mohan Roy had to witnessed his beloved sister in law's death on the funeral pyre if his brother. This incident crushes his mind. This personal experience thus termed as a fuel for his activities against the evil social custom of sati. During those days Raja Ram Mohan Roy tried his level best to stop and banned this custom of sati. He tried a lot to make people enlighten against Sati system. Thus at last im the year 1829 lord William Bentick banned Sati by law. Thus Raja Ram Mohan Roy's effort was full filled. Tremendous changes took place in the Indian society and Hindu religion is being considered. It can be considered as a turning point in Social history of India. Raja Ram Mohan Roy's effort behind this rightly made him able to assume the title as the father of Indian Reissuance.

A widow was not allowed to remarry, nor was she able to turn to religious learning and hence lived a black and barren life. The pain that Sati endures on the pyre was less painful of an experience than the torture she must endure physically and emotionally as a widow. She was separated from social world of the living and considered to be "cold sati". She was only allowed to wear rags and was treated by her family and member of society as an impure, polluted being. The prohibition in which she is unable to adorn herself was considered Justifiable done for the widow's "own interest. The efforts of Raja Ram Mohan Roy finally became a blessing to Indian Women who can live for their own child after the death of their husband.

3.Conclusion

Raja Ram Mohan Roy is a great historical figure who put laudable effort to transform India and decreed to defy the age old Hindu tradition The central figure in this awakening was Raja Ram Mohan Roy who is rightly regarded as the first great leader of modern India. He undertook a lot of social reform to charge the society and worked to uplift the status of women in India. Raja Ram Mohan Roy tried to spread the message of Monotheism of in Religion. He was also a great scholar who translated many books, religious and philosophical works and scriptures into Bengali and also translated Vedic scripture into English. Raja Ram Mohan Roy is hailed as the' father of Indian Renaissance'. Raja Ran Mohan Roy was strictly against to the social evils like Sati, child marriage caste Rigidity etc. Ram Mohan Roy's impact on modern Indian history was a revival of the pure and ethical principles of the Vedanta school of philosophy as found in the Upanishads. He preached the unity of God, made early translations of Vedic scriptures into English, co- founded the Calcutta Unitarian Society and founded the Brahma Samaj.

Raja Ram Mohan Roy's contributions to modern India also need special reference. He was the pioneer who tried to

made tremendous progress in the socio- religious field of 19 th century. The abolition of Sati is one most significant turning point in the social History of modern India.His area of influence was very wide suchn as socio-political and religious arena, In generally we can concluded that Raja Ram Mohan Roy was a great men of Indian History and he is the torch bearer of Indian Renaissance. Rabindranath Tagore said, "Raja Rammohan Roy inaugurated the modern age in India. He was the father of Indian Renaissance and the prophet of Indian nationalism." One of his greatest achievements is the uplift of the position of women in India. First of all, he tried to give women proper education in order to give them better social status in society. His effort in the abolition of Sati made him immortal as a social reformer.

References

- Basham, A. L (1975). A Cultural History Of India, Oxford University Press.
- Chandra, B. (2009). History of Modern. Orient Blackswan.
- Farqur, J. N. (1915). Modern Religious Movement In India. Newyork: The Macmillan.
- Mahajan, V. D. (1987). History Of Modern India. State Mutual Book & Periodical Service, Limited,.
- Majumdhar, P. C. (1984). Main Currents Of Indian History. New Delhi: Starting PUblishers Pvt.Ltd.
- Sarkar, H. C. (1906). History Of Brahmo Religion.
- Sasthri, S. (1911). HIstory of Brahmo Samaj. Calcutta.
- W.Jones, K. (2003). Socio-religious reform movement in British India. In K. W.Jones, The New Cambridge History Of India. New York: Cambridge University Press.

Dr. Santosh Kumar Sharma

M.COM, PGDIM MAT.MGMT.MBA, LLB, LLM WITH PhD.

H.NO. 5113 SECTOR-3 FBD-PIN CODE 121004

Mo.-9899882948-

santosh.sharma2013@gmail.com

76

Secularism: The Soul of the Indian Constitution

Dr. Sudeep Kumar

Abstract

Accordingly to the Indian Constitution, the State is independent, socialist, secular, and democratic. In the context of the historical evolution of Indian polity, the term "secular" has a special importance. In fact, it is crucial, especially in light of the present-day political realities on the ground. Without being founded on the secularism principle, democracy cannot exist, much less prosper, in a varied society like ours with a variety of religions, creeds, and cultures. "Secularism and democracy are the twin pillars of our state, the very foundation of our society," [1] as the late Smt. Indira Gandhi put it.

Scientifically speaking, a secular state is one in which all citizens are treated equally and in which no social or religious distinctions are used to exercise political rights. The general definition of secularism, however, is 'tolerance of all religions with specific focus on the protection of minorities and preservation of communal peace.'[2] Secularism's commonly held definition falls far short of its scientific definition. However, the foundation of secularism rests on two fundamental principles

1: Keep politics and religion separate.

2. Accepting that religion is purely and only a matter for people' private affairs and has no bearing on the government.

Secularity: What It Means And How It Works

The term "secularism," which has its roots in Western nations, refers to the separation of the state from the church, which grants the government a position of religious neutrality while also preserving the freedom of all individuals to practise any religion they choose. The term "secular" is occasionally used to contrast with the term "religious." This has occasionally caused people to conclude that secularism is opposed to religion, although generally speaking, it is meant to mean divorced from all religions or religion having no bearing on the management of governmental affairs, not that it is hostile to religion. The phrase has not been used in an anti-religious meaning in India, but rather to promote equality of treatment and prohibit prejudice against any Indian person based on their faith. According to Ashish Nandi, the term "secularism" used in this context is "Indianism," which neither the Oxford English Dictionary nor the Webster's Dictionary recognise. However, due to long-term usage, India now views all religions with same regard, and the term "secular" is associated with religious tolerance in India. As Dr. Radhakrishnan emphasised, 'Secularism does not imply atheism, a lack of belief in God, or even a focus on worldly pleasures. It states that it emphasises the universality of spiritual ideals, which can be attained in a number of different methods.'[3] Secularism in Indian culture refers to giving every faith the same respect. To paraphrase Dr. Radhakrishnan once more:

"We hold that no one religion should be given preferential status, or unique distinction, that no one religion should be accorded special privileges in national life, or internation- al relations, for that would be a violation of the basic principles of democracy and con- trary to the best interest of religion and government.......No group of citizens shall arrogate to itself rights and privileges which it denies to others. No person shall suffer any form of disability or discrimination because of his

religion but all alike should be free to share to the fullest degree in the common life. This is the basic principle involved in the separation of church and state."[4]

Donald Eugene Smith offers the following working description in his well-known book India as a Secular State:"The secular state is a state which guarantees individual and corporate freedom of religion, deals with the individual as a citizen irrespective of his religion, is not con- stitutionally connected to a particular religion nor does it seek either to promote or interfere with religion."[5]

When the concept of a secular state is examined more closely, it becomes clear that it encompasses three separate but related sets of relationships between the state, religion, and the individual. These three sets of relations are: 1.The State and religion; (separation of state and religion).

2. Religion and the individual (freedom of religion); 3. The State and the individual (citizenship);

India, which is a multireligious culture, does not fit the Western definition of secularism, which implies anti-religious philosophy.

The late Smt. Indira Gandhi stated it well:

"Secularism is neither a religion nor indifference to religion, but equal respect for all religions. Without this, there is no future for the country."[6] Even Western authors have endorsed this point of view. For instance, Harvey Cox has emphasised that secularism does not exclude religion but, rather, encourages peaceful coexistence between all religions. It's crucial to keep in mind that in a secular government, the state has no role in religion.

The Secularism Concept: The Heritage Of Indian Culture And Tradition

Additionally, it must be remembered that secularism is not a foreign idea introduced by the West to India. As a result of the push provided by changes in social, economic, and political life, it arose out of its prior history of a broad and widespread movement in and feelings that emerged thoughts gradually from the mingling of various groups and societies. Indian culture has become "composite," which refers to the mixing of several distinct aspects into an unified whole. In mediaeval India, the Sufi and Bhakti movements greatly aided in

fostering a sense of community among the members of various groups. Khwaja Moinuddin Chisti, Baba Farid, Kabir, Guru Nanak, Dadu, Tukaram, and Mira Bai were the movement's major luminaries and made significant contributions to the growth of composite culture that were truly unattainable except through a governmental or administrative framework. There is much to be read and comprehended in Guru Nanak's enigmatic statement, "There is no Hindu and no Muslim," as he did not see any difference between men. The secular mindset and viewpoint have always been characterised by a spirit of tolerance. Ashoka's renowned Twelfth Rock Edict on Religious Tolerance contains echoes of it. It achieved success during the rule of Akbar, a liberal emperor who was aware of the dangers of religious conflict and attempted to foster national unity through his catholic eclecticism and secular policies. His promotion of "Din-e-Illahi" (Divine Faith) and "Peace with all" (Sulh- i-Kul) was done in a secularist manner. Our protracted struggle for freedom has enhanced and reinforced this spirit. The constitution that Pandit Motilal Nehru prepared in 1928 as the head of the illustrious Nehru Committee that served as the basis for the Constitution of India contained the following particular clause on secularism:

"4. (XI) There shall be no state religion for the commonwealth of India or for any province in the com- monwealth, nor shall the state, either directly or indirectly, endow any religion or given each religion any preference or impose any disability on account of religious beliefs-or religious status........"[7]

The Nature Of Secular State: Gandhi And Nehru's Approach

Jawahar Lal Nehru and Mahatma Gandhi were the main proponents of secular ideology in India. The foundation of Nehru's secularism was his dedication to scientific humanism with a progressive perspective on the course of history. Gandhi, however, based his secularism on a dedication to the brotherhood of religious communities based on their respect for and pursuit of truth.

The idea of the secular state has been a major cause for Jawahar Lal Nehru to advocate. In fact, the establishment of India as a secular state may eventually be regarded as 'one of his greatest achievements,'[8] in Chester Bowles' words. ' Nehru is particularly concerned with converting India from a "Caste-ridden society," where communalism poses a serious threat to all the principles he adores, to one in which religious influences are not allowed to enter politics. A national state that is basically secular and has residents of various faiths and political persuasions.[9] He has stated that religion is OK when used to uphold values and ethics, but that mixing it with politics is bad.[10]

The opinions of Mahatma Gandhi, who Nehru himself once defined as 'basically a man of religion, a Hindu to the innermost depths of his soul,'[11] appear to be directly at odds with those expressed in this statement. Gandhi stated in a well-known excerpt from his autobiography:

"I can say without the slightest hesitation, and yet in all humility, that those who say that religion has nothing to do with politics do not know what religion means."[12]

The master and disciple, Gandhi and Nehru, approached the issue of the connection between religion and politics from very different perspectives, but in terms of the fundamental nature of the Indian State, their positions weren't that dissimilar. Gandhi was a genuinely devout man who believed that all religions had merit and truth, and he believed that any political affiliation based only on religious allegiance was worse than undemocratic.[13] Nehru, who calls himself an agnostic, stated that he has 'no desire to interfere with anyone's belief,' but he strongly opposes any attempts to establish 'a complete structure of society...by giving it religious sanction and authority.'

He also said that he wants a state that "protects all religions, but does not favour one over others and does not itself adopt any religion as the state religion."[14] Therefore, it is simple to understand why Gandhi and Nehru, despite possibly having different motivations, were so opposed to the idea of partition in general. Nehru also described the Constituent Assembly's decision to declare Pakistan an Islamic Republic in November 1953 as a "mediaeval conception totally opposed to any democratic conception."[15]

The Constitution's Basic Outlines Of Secularism

Our Constitution has embraced a system of political philosophy that disapproves of all forms of religious belief and worship and accepts the idea that public education and other matters of public policy should be conducted without the inclusion of religious elements.

The Supreme Court provided an explanation of the Indian Constitution's secular nature.

"There is no mysticism in the secular character of the State. Secularism is neither anti- God nor pro-God, it treats alike the devout, the antagonistic and the atheist. It eliminates God from the matters of the State and ensures that no one shall be discriminated against on the ground of religion."[16]

The Supreme Court ruled in S. R. Bommai v. Union of India that "secularism" is a fundamental aspect of the constitution and that politics and religion cannot be combined.

The following Articles of the Constitution establish the fundamental principles of secularism:

1. Preamble: It is true that neither Articles 25 nor 26 nor any other Preamble Article of the Constitution contain the word "secular" in its original form.[17] The Preamble of the Constitution was changed by the Constitution (Forty-second Amendment) Act of 1976, which replaced the words "Sovereign Democratic Republic" with "Sovereign, Socialist, Secular, Democratic Republic."[18]

2. No State Religion: India will not have a "state religion."[19] The state will neither create its own religion nor grant any specific religion special favours. From this, it follows that

(i) No citizen will be required to pay taxes by the state in order

to support or maintain a specific religion or religious institution (Article 27),[20]
(ii) No educational institution that receives all of its funding from the State may offer religious instruction;
(iii) No student at a school recognised by the state or receiving state funding may be forced to receive religious instruction without their own or their guardian's consent. This rule applies even if religious instruction is provided in those schools. In other words, while religious instruction is completely outlawed in state-owned educational institutions, it is allowed in denominational institutions with the caveat that it must not be forced upon people of other religions. (Article 28)
3. Conscience Freedom: Every person is guaranteed the right to profess, practise, and spread his or her own religion,[21] subject only to:
(I) to limitations established by the government for the sake of public order, morality, and health (so that the freedom of religion cannot be exploited to perpetrate crimes or other anti-social activities, such as the practise of infanticide, and the like);
(ii) to state-imposed guidelines or limitations on any commercial, financial, political, or other secular activity that may be connected to a particular religion but does not actually affect the right to freedom of conscience;
(iii) to social reform initiatives and opening up Hindu religious institutions with a public mission to all Hindu classes and groups,
In India, a person has the freedom to not only have any kind of religious belief but also to live according to its dictates and to communicate its teachings to others, subject to the restrictions listed above. (in Article 25)[22]
4. Freedom to Manage Religious Affairs: Every religious group or denomination is guaranteed the following rights, in addition to the freedom of the individual to profess, practise, and spread his religion:
(i) to create and sustain institutions for philanthropic and religious purposes;
(ii) to do its own business regarding religious matters;
(iii) owning and acquiring both movable and immovable property, as well as
(iv) managing that property in compliance with the law. (The article 26)
5. Equality before the Law: Article 14 guarantees everyone's right to equal protection under the law. The concept of secularism is broadened as much as feasible by Article 15, which forbids discrimination on the basis of religion, race, caste, sex, or place of birth. Article 16(1) reiterates that there will be no discrimination based on religion, race, caste, sex, descent, place of birth, or residency, and ensures equal opportunity to all citizens in areas of public employment.
6. Cultural and Educational Rights: Several cultural and educational rights are protected by Articles 29 and 30. Article 29 ensures the right to preserve any group of citizens who live in any area of the nation and have their own unique language, script, or culture. Article 30 states that "all minorities shall have the freedom to create and run educational institutions of their choice, whether based on religion or language."[23]
Following is how the Supreme Court summarised the true meaning of secularism as it pertains to the Constitution in M. Ismail Faruqui v. Union of India (Ayodhya case):
"It is clear from the Constitutional scheme that it guarantees equality in the matter of all individuals and groups irrespective of their faith emphasising that there is no religion of the State itself. The Preamble of the Constitution read in particular with Articles 25 to 28 emphasises this aspect and indicates that it is in this manner the concept of secular is embodied in the constitutional scheme as a creed adopted by the Indian people has to be understood while examiningthe constitutional validity of any legislation. The concept of secularism is one facet of the right to equality woven as the central golden thread in the fabric depicting the pattern of the scheme in our Constitution."[24]

Secularity In Activity

In actuality, we have adopted a secular political system. As many as four of the thirteen Indian presidents since the Constitution's implementation in January 1950 have been non-Hindus, including three Muslims (Dr. Zakir Hussain, Fakhruddin Ali Ahmed, and A.P.J. Abdul Kalam), a Sikh (Giani Zail Singh), and one Hindu (Vijaya Dev). Three Muslims have held the position of Chief Justice of India; one of them, Mr. M. Hidayatullah, served as Vice-President for a term. Air Chief Marshal I.H. Lateef, a Muslim, also served in that capacity as head of the air force, With the exception of Jammu and Kashmir, which has always had a Muslim as its Chief Minister, there have always been multiple Muslim ministers at the federal level and in the majority of the states, some of which even had Muslim chief executives. There have also been numerous Muslim governors, vice chancellors, innovators in the fields of science and technology, ambassadors, and other positions.
Although it is frequently criticised, the Indian system is non-discriminatory. Otherwise, how could the Parsis, the smallest of minorities, have given the nation its first Field Marshal as well as a Chief of the Naval and Air Forces? Two Christians served as naval chiefs, two Sikhs led the air force, and one Anglo-Indian (a tiny minority) was the IAF chief. In the army, they have representation that would be the envy of any other group.
Similar to the arts, minorities such as Muslims, Christians, Sikhs, and others have contributed some exceptional sportsmen to the nation in the five and a half decades since independence, whether it be in hockey, cricket, football, tennis, or any other sport, athletics, boxing, or horsemanship. They will fill entire columns with names. Players from the minority community have long held the position of captain in sports where the team's leadership has some significance, such as cricket.

Although there are no constitutional provisions governing sports or the arts, the overall absence of discrimination in the nation ensures that talent and
performance will be given fair consideration and that no one will be held back because of their religion. If there aren't enough members of minorities applying for jobs, taking competitive exams, and competing for positions, even the constitutional provisions won't be much use.

In other words, opportunity equality is assured. However, there should always be people to benefit from the numerous opportunities provided by the state. In the case of the chiefs of the three defence services that we have mentioned, the requirements are very strict, and candidates must pass a number of selection processes. If they do not put in the necessary effort to pass the various tests and possess the leadership qualities that will propel them to the top, secularism will not be of any assistance to them. However, if there was no secularism, which is the absence of discrimination based only on a person's religion, you can be dismissed or surpassed by a less qualified member of a specific group.

References:

1.B. L. Fadia, Indian Government and Politics, Agra, 2013, p. 112
2. Ibid, p. 112
3. Ibid, p. 112
4. Ibid, p. 112-113
5. Ibid, p. 113
6. Ibid, p. 113
7. Ibid, p. 113
8. Chester Bowles, Ambassador's Report, New York 1954, p. 104
9. Donald E. Smith, Nehru And Democracy , Calcutta 1958, p. 147
10. Speech in Lok Sabha , September 17, 1953
11. Jawahar Lal Nehru, The Discovery of India, New York , 1946, p. 365
12. M. K. Gandhi, An Autobiography, Ahmedabad, 1948, p. 615
13. Nixon George, Gandhian spirituality and it's Relevance Today, academia.edu
14. B. L. Fadia, Indian Government and Politics, p. 114
15. The Hindu , November 16, 1953, p. 1
16. B. L. Fadia, Indian Government and Politics, p. 114
17. D. D. Basu, Introduction To The Constitution Of India, Noida, 2015 , p. 131
18. Ibid, p. 139
19. Ibid, p, 131
20. Ibid, p, 131
21. Ibid, p, 133
22. Ibid, p, 131
23. Ibid, p, 135
24. B. L. Fadia, Indian Government and Politics, p. 116

Dr. Sudeep Kumar
Assistant Professor (Political Science)
D.A.V. College, Pehowa (Kurukshetra)
Mail I'd - gahlawat.sudeep8@gmail.com
Mob. No. 9416293686

77

Artificialintelligence In Education

Dr. Swaty

Abstract

The use of Artificial Intelligence (AI) is now observed in almost all areas of our lives. Artificial intelligence is a thriving technology to transform all aspects of our social interaction. Artificial intelligence (AI) is gaining significance in all the sectors of the economy and hence in education too. In education, AI will now develop new teaching and learning solutions that will be tested in different situations. Educational goals can be better achieved and managed by new educational technologies. Artificial Intelligence has proven its role as a game changing factor in number of fields, causing transformations unimaginable in the past. Using Artificial Intelligence (AI), expert systems can be designed to interact with the world through capabilities like visual perception, speech recognition and intelligent behaviour that we would think of as essentially human. It examines the learning implications of frequently evolving technologies on the methods and extent of learning as well as teaching. AI gives opportunities to education services to become easily accessible at an extraordinary speed, not only inside the class but also outside the classroom. This study attempted to find out how the concept of artificial intelligence can be applied in teaching and learning in education and benefitsassociated with AI in education.The optimistic use of AI in class is strongly recommended by teachers and students. But every teacher is more adapted to new technological changes than students and can contribute to the more effective implementation of AI in Education (AIED).

Keywords: *Artificial Intelligence (AI), Education, Artificial intelligence in Education (AIED), Applications, Automation.*

Introduction

Artificial intelligence (AI), generally expressed by the general public as the ability of machines or computers to think and act as humans do, represents the efforts towards computerized systems to imitate the human mind and actions (Wartman & Combs, 2018). In this respect, the basic definition of artificial intelligence can be expressed as the skilful imitation of human behaviour or mind by tools or programs (Mohammed & Watson, 2019). According to Timms (2016), it may be an illusion of the current structure to think that artificial intelligence will come within the computer format used at home. It could get into our lives within different functions and shapes.The concept of AI can be hard to understand, especially when trying to think about how it can be applied to education as well as many other sectors of society. In December 2015, the Getting Smart ***AskAboutAI*** researchbegan and over these two years, they have identified over 100 applications of AI to life in areas such as recreation, transportation, education, healthcare and gaming to name just a few. The campaign focused on AI in regard to three objectives - employment, ethics and education. How can AI be beneficial for different industries, what are some of the uses, what are the benefits and risks associated with it, and of greater personal interest, what are the possibilities for AI in education.

According to Getting Smart's **AskAboutAI** report**,** the notion behind AI is that machines canexhibit human intelligence. The concept of **machine learning** started in 1956 byJohn McCarthy and is whenalgorithms are used to interpret data and take some action or to complete a task. AI, at its base, iscomputer code that displays some form of intelligence, learning, and problem solving in whathas been referred to as a super intelligence. It is the development of computers that can complete tasks which normally require human intelligence; however, it learns on its own and continues to improve on past iterations. AI becomes smarter, knowledge grows, and it expands the realm of possibilities for society.

Society has dramatically shifted from traditionally living conditions driven society to the present knowledge society where creativity and inventiveness drives the society. Earlier educational system was characterized where teachers and students physically interacted in the classroom and majority of work is done manually in higher education institutes. But major technological developments in the last 20 years and mostly because of the Internet have changed people view of education and their working and a new concept that has evolved during the last few years is “artificial intelligence”.

It's a well-known fact that education is heavily dependent on human and manual work. This not only increases the operational cost for the educational institutions but also accounts for increase in the errors and slow processing in the field. Educational institutions due to its labour intensive framework will have to spend a big budget on hiring and retaining educators and also in the processing of data in their institutes. Apart from financial loses in the form of salaries of highly qualified personnel's these institutes are also bearing increased amount of effort that institutions put into the admission, learning and success of all their students. Lot of information and efforts are being wasted in educational institutions on repetitive tasks that can be minimized. Hence being a labour sensitive field, it is facing both financial and physical loss. Thus, adoption of artificial intelligence will bring a cheaper and more responsive approach to education industry.

In view of the recent advances in the area of AI and its potential impact on the job opportunity, it has become necessary for every country to prepare an action plan to take the benefits of the opportunity and deal with the challenges. It needs to identify the priority areas for investment in technology development to build AI-based solutions. At the same time, it should also take steps to prepare the workers to take up the new types of jobs which may emerge. It is not possible for any country to keep itself untouched from the impact but it can deal with it well by putting necessary infrastructure and policy in place (U.S. Government, 2016).

Several countries have already formulated their policy for AI (U.S. Government, 2016; House of Commons Science and Technology Committee, 2016; State Council of China, 2017; Government of South Korea, 2017; Benner, 2017). India can't afford to be left behind. It missed the benefits of the first and second industrial revolutions due to political reasons. However, it could gain the benefits of the revolution due to information technology using the talent available in the country. It has not only made wealth by the export of software but could provide jobs to millions of educated people. This advantage is at risk today since most of the companies are automating the processes using AI technology. Therefore, the country has to make it ready to gain from the opportunity and face the challenges due to AI.

In view of the above, it is necessary for India to formulate a well-considered policy. It looks into the way the technology is being used in various countries across the world and examines the status of AI applications in India. It also suggests what need to be done with respect to Applications & Infrastructure; Regulations & Policy; Research & Development; and Human Resource Development.Knowingly or unknowingly, we are using some AI applications / tools commonly in our dailylife.

ARTIFICIAL INTELLIGENCE APPLICATIONS– INTERNATIONALSCENARIO

Communication: Spam filters, powered by AI, streamline the amount of spam appearing in your inbox. As email senders (real or automated) become more careful with selecting words which have not been flagged previously, the filters need to adapt and continue to learn based on words that the user also flags. There is an added component of machine learning in this, in that through the algorithms already in place by the email provider, additional filters are then created.

Travel: Self-driving car is a high-potential application of AI. In Singapore, driver-less bus is being run under trial. So far very few accidents have been reported and the analysis shows that probability of accident with driverless cars is less than human driven cars.If you have taken a ride using Uber, you have experienced Machine Learning, whichis used to predict rider demand and to calculate ETA (Estimated Time of Arrival). The airlineindustry uses AI, since autopilot qualifies as AI, where it is estimated that ? human steeredflight time is only seven minutes of actual flight length.

Social networking: When we use Facebook to share photos, the artificial intelligence is able to detect faces in the image and suggest a name to tag the person. Facebook has continued to add new features as part of its AI Initiative, to generate a more personalized and interactive user experience. Some social media sites, such as Twitter, generate lists of accounts to follow, chats to join, and news feeds of interest based on an analysis of user input and data. Even Google with its cards can provide a variety of personal recommendations based on your search history.

Online Shopping: One that comes to mind quickly is Amazon, and how it suggests items you may be interested in, as a result of your prior searches and order history. Systems are inplace to protect consumers against fraud, with alerts being sent almost simultaneously to anattempted transaction that is not recognized as a typical purchase or located in a non-homebase location. All of this done through AI, which is used for identifying fraudulent transactions.

Cyber Security: The rapid increase in the size and complexity of the virtual world has led to a continuing war between cyber attackers and security service providers. Each side is trying to develop more sophisticated techniques and tools. Cyber space is a dynamic environment where situation keeps on changing rapidly and can't be predicated with certainty. As AI systems have the flexibility to respond to the changing environment, its use in increasing in all the stages in the cyber defence chain viz. early warning, prevention, detection and, response (Wirkuttis&Hadas, 2017).

AI reduces the human intervention by the automation of the processes. The conventional cyber security systems are slow due to the need of human interaction in several steps. As any delay can cause significant damage, it has to be kept at the minimum. The loss is not limited to financial damage only. In case of denial of service attack on a hospital, the access to the health records of the patients is slowed down. This may become fatal for a patient requiring immediate intervention.

With AI technology, it has become possible to create artificial police agents for monitoring the entire network. It uses intelligent agents to do this work. An intelligent agent is an application which has the ability to sense, reason and act autonomously. These agents can interact with each other to collaborate to perform a task. Sufficient number of intelligent agents can be deployed to monitor the network to detect the malicious activities in a decentralized way.

Education: Teachers and students have a wide range of tools available, ranging from GoogleSearches, in which alternate search terms are instantly suggested, citation generators,plagiarism checkers, and even Siri has become a popular tool for searches. An astoundingamount of information generated instantly, far more advanced from thirty

years ago andsociety's reliance on card catalogues, calculators and books.Looking at these common uses in everyday life makes it easier to think about some ways thatArtificial Intelligence can transform classrooms. Earlier educational system was characterized where teachers and students physically interacted in the classroom and majority of work is done manually in education institutes. But major technological developments in the last 20 years and mostly because of the Internet have changed people view of education and their working.

Despite the availability of a large amount of digital learning material, the use of computer based education has remained limited due to lack of the possibility of personalization. A human teacher personalizes the content depending on the needs of the student. Every student has a different level of knowledge and aptitude. Therefore, the same content for every student does not work. If the student has not been able to understand the current topic, the system should not proceed to the next topic. Similarly, if a student already has knowledge of the topic, the content becomes repetitive and the student gets disinterested. Personalization has become possible using AI. Such a system can adapt the content depending on the requirements of the student. It assesses the performance of the student and tailors the content accordingly.

Finance: Chatbot is being used by banks for performing simple tasks such as activation of accounts or balance checking, etc. It helps the customers who are not fully familiar with IT systems and would like to interact in natural language. Chatbot asks the customers questions in natural language and performs the needed tasks. Some investment consulting firms are also using chatbot to interact with the customers. The chatbot asks the customer some questions, which vary from customer to customer, to get the basic information on the needs of the investor and then generates plans based on the market trends, etc. The plans can be reviewed from time to time as and when further information is available. Though this can be done by a human adviser, chatbot performs it quickly and accurately [Yacoub, 2018). State Bank of India, HDFC Bank, ICICI Bank and Axis Bank have started using AI-based applications for providing customer services in India.

Most of the banks have policy of upgrading the IT solutions including AI-based applications for customer service and use of robots in the processes. Earlier applications were limited to providing the customers information in natural language. Now these applications complete some of the banking transactions on behalf of the customers. Some of the governments have adopted policy to promote applications of AI in the banks. For instance, Government of Singapore has announced a grant of $19.9 million for the banks located in Singapore to promote AI and data analytics.

Virtual Assistants: A virtual assistant helps user in performing tasks or perform the tasks on their own in an autonomous way. Several virtual assistants have been developed. The examples are Google'sAssistant, Siri, Cortana, and Alexa from Google, Apple, Microsoft, and Amazon, respectively. User can use natural language to interact with a virtual assistant. As one can also interact with spoken words, an illiterate or blind person can also use it.

Virtual assistants perform a variety of tasks including streaming music, playing audio clips, controlling home devices, managing schedules, purchasing using e-commerce, etc. These assistants are becoming more and more useful due to the advances in natural language processing and speech recognition. This makes it useful to a common person without any specific training.

Healthcare: AI has been used in the domain of healthcare for quite some time. According to a report,there are more than 100 start up companies working on the application of AI in healthcare domain (From Virtual Nurses to Drug Discovery, 2018). Some applications have already been deployed whereas a large number of these are under development in several countries. Using the advances in natural language processing techniques, several conversational applications have been developed. Virtual nurse is an application which is being used in several types of environments. It can perform the tasks which are normally performed by a human nurse. Molly, a virtual nurse developed bythe startup, Sense.ly assists the patients in managing the chronic conditions after the treatment or between the follow-up consultations (Molly,2018).

AI is helping in providing personalized treatment to the patients. Every patient is a different individual and may need a different treatment. Further, a disease may have thousands of subtypes requiring different treatments consisting of a combination of drugs. For instance, it is being realized that cancer has thousands of subtypes and each subtype requires different combination of drugs for effective treatment. On the other hand, pharmaceutical companies rely on large-scale randomized clinical trials for testing new drugs. This limits the number of cases, it would be effective. This is why treatment often requires a trial and error approach. Once we have sufficiently large database of cancer cases, it becomes possible to find cases similar to the case in hand and there is a good probability that the treatment found to be effective in the earlier cases would be effective in the present case too (Tenenbaum &Shrager, 2011).

Looking at these common uses in everyday life makes it easier to think about some ways that Artificial Intelligence can transform classrooms. The technology has numerous applications that are changing the way we learn, making education more accessible to students with computers or smart devices if they're unable to make it to class. Students aren't the only ones who benefit as AI is also helping to automate and speed up administrative tasks, helping organizations reduce the time spent on tedious tasks and increasing the amount of

time spent on each individual student.

Role of Artificial Intelligence In Education

Roll and Wylie (2016) highlight Henry Ford's quote, 'If I had asked people what they wanted; they would have said faster horses.' On the surface, it can be said that educational institutions have become 'faster classes' that produce results in a shorter time. But, will these 'fast classes' continue to do so or require thinking differently in the 21st century? As we go towards the 22nd century, is it sufficient to provide skills, critical thinking, and metacognition skills? Or should we configure new systems that have never been thought of before for the new age? What opportunities can artificial intelligence offer in education that will differentiate people from robots or smart vehicles and help humans keep their emotional and social aspects? Most probably soon, these topics will be the main agenda of policymakers and implementors in the field; actually, there are already discussions asking if AI can truly replace teachers or not (see, Felix, 2020).

Manyika et al. (2017) emphasize that good teachers will continue to exist in the future, teaching classes designed to boost students' affective intelligence, creativity, and communication. In fact, according to these authors, developments in artificial intelligence and automation will actually make 'people more human.' While addressing educational research on artificial intelligence, Haseski (2019) briefly states the results of these studies as follows: the use of artificial intelligence in education will make learning more individual, provide effective learning experiences, enable students to discover their talents, improve their creativity and reduce teachers' workload. That being said, there are opposite ideas as well. Transferring the roles of teachers to computers is seen as a danger in the studies on artificial intelligence (Humble &Mozelius, 2019). To prepare for this future, the task of states and nations is to create a teacher profile that will work with these support structures (Wogu, Misra, Olu-Owolabi, Assibong& Udoh, 2018).

Although artificial intelligence studies in education have attracted a lot of attention in recent times, studies about the theory of general artificial intelligence can be traced back to at least the 14th century, and these studies remerged through the work of Alan Turing in 1937 (Humble &Mozelius, 2019). They are now becoming an important point of academic literature and scientific circles. We see extension of AI studies in organizational management as 'artificial intelligence leadership' has begun to be discussed in the literature (see, Canbek, 2020).

With more usage of artificial intelligence in education, major transformations can be foreseen in the education systems and its processes. Based on the study results, Sekeroglu, Dimililer and Tuncal (2019) stated that artificial intelligence could help teachers improve personalized education for their students. Artificial intelligence can provide access to appropriate and better learning opportunities for excluded people and communities, people with disabilities, refugees, people out of school, and those living in isolated communities (Pedro, Subosa, Rivas, & Valverde, 2019).

Research shows how effective individually tailored approaches can be presented with the support of artificial intelligence techniques and intelligent learning environments (Mohammed & Watson, 2019). Although quality education seems to require the active participation of human teachers, artificial intelligence envisages increasing education and quality at all levels, especially by providing personalization (Grosz & Stone, 2018). Pedro et al. (2019) highlights a dual-teacher model with artificial intelligence in terms of individualized education: teachers spend a lot of time in routine and other administrative tasks, such as repeating frequently, answering questions about many topics, but in-class artificial intelligence-supported assistants (secondary teachers) will reduce the time spent on routine procedures, which will help teachers focus on student guidance and one-to-one communication.

There are huge potential benefits, but there are risks and opportunities for AI education and education. So, we need to diligently and cautiously move into a new learning environment where AI uses to support students and teachers and where we also prepare students for the future in a world where AI plays an ever greater role. There are several important trends in AIED, including intelligent tutor systems, pedagogical agents, smart classroom technologies, and adaptive learning, figure shows the relationship between them, with the provison that AI is currently embedded in technology or not.

Aied System Architecture

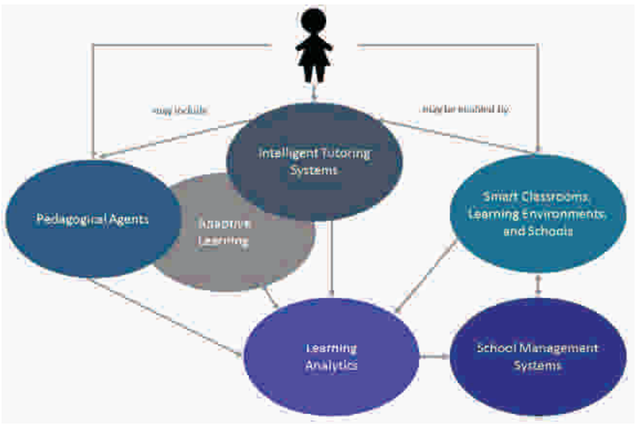

Intelligent Tutoring System

Intelligent tutoring systems (ITS) mimic individual learning humans (Lukin, Holmes, Griffiths and Forcier, 2016). Human learning is widely considered a very effective view of training. The human guides will have a thorough and extensive knowledge of the area for engaging and complex strategies for learning, such as dialogue. More importantly, effective teachers-people have to accurately diagnose the motivation

and knowledge of their students and choose learning activities and goals according to the necessity of students. At the time of completing all tasks, teachers can use frames, tips; tricks and instant feedback to help students at every turn solve problems. Studies have shown that students have not fully used human guides because they rarely ask questions and the guides are not perfect, e.g. in diagnosing misconceptions about students or personalizing their curriculum tasks (Vanlehn, 2011). However, imagine human teachers use it, with intelligent systems that choose pedagogical and didactic strategies, involving students in individualized learning dialogues and improving over time (Baker, 2016).

There are different types of ITS. They are very different in systems and it is necessary to understand that not everything is AI-enabled. It can be different from its content. Some focus on subjects with mathematical rules, some teach reading or writing, and still, others try to teach general topic skills, such as self-paced reading strategies (Kulik and Fletcher, 2016) (Steenbergen and Cooper, 2014. The use of technology in learning is a relatively new area of development communities of computer science, machine learning, and cognitive psychology and sparked debate about ethical issues concerning the collection and use of confidential data, which are particularly vulnerable. In conclusion, it can be said that it can be a useful tool for educators. The important thing is that it is now rarely expressed in schools is what is technically possible. Where they exist in specific areas, they can effectively complement a student's learning inside or outside the class.

Pedagogical Agents

Pedagogical agent (PA) is digital or virtual characters, integrated learning technology to facilitate learning. It builds to incorporate the social, emotional, and motivational part of technology learning (Gulz and Haake, 2006) (Kim and Baulor,2016) and interact with students through natural human (Johnson and Luster, 2016). PA can take different forms and outlines (Herdig and Clarebout, 2011). Most often PA incarnation, which means that students can see on the screen an image of virtual characters or avatars that are realistic or abstract resembling people, characters, animals, or objects. For example, PA characters can be as different as realistic three-dimensional solid-bodied people, two-dimensional cartoon animals, or objects like "Clippy," the Microsoft Office virtual assistant to a paper clip. PA communicates with students through written or oral language.

Recent technological advances have continued to enhance PAs (Johnson and Luster, 2016). Today, virtual humans are often created; advances in affective computing (systems that perceive, interpret, imitate, and even influence human emotions) allow students to acknowledge emotions and adapt to boredom or frustration. the tongue allows PAs to interact in limited interactive dialogues with students. PAs can even be an encapsulated robot to interact with students within the classroom. In the future, everyone can have several personal PA who send him throughout life. Thus, PAs can become very powerful from a technology perspective, even there's a benefit to having a lifelong PA which will remind us of times once we fail.

Smart classrooms, learning environments, and Educational Institutions

"Internet of Things" (IoT) is a term used to describe the growing ability of everyday objects to connect to the internet and communicate with other devices. IoT is important for smart classrooms, smart learning environments, or smart schools (Heinemann and Uskow, 2017). Smart classrooms are defined as technology-rich classrooms with wireless connectivity, personal digital devices, sensors, and virtual learning platforms (Le, Kong and Chen, 2017). An intelligent learning environment expands definition, including a multifunctional flexible physical space accustomed to learn and teach. In training rooms, more individual data collected using sensors within the class, like cameras, microphones, or motion sensors. Students and teachers also can be carried along by sensors to gather data and received by the varsity or establishment. The sensors are often embedded in clothing or other portable items, like RFID (radio frequency identification) attached to the physical body, like smartwatches, armbands, smart glasses, technology testing of the brain, and device medical monitoring.

These examples show that studies are wise in the classroom, learning environments and schools are still in their infancy. Despite the availability of technology and tools for AI, most intelligent classroom applications remain only in the testing and feasibility study phase. The future is smart classes can include full context awareness where each case study identified and possibly supported by real-time adaptive help.

Adaptive learning and learning analytics

Adaptive custom learning and teaching is an important goal of training and is used as the main reason for the development of ITS, PAs, and intelligent classes. While ITS and PAs offer a user interface or embodied agent for learning to support AI, these systems often use an adaptive system running in to serve individual educators for learning activities to students (Benyan and Murray,1993). The educational adaptive learning (also adaptive learning) refers to changing curriculum tasks, the complexity of teaching tasks, or interface on demand of individual students or groups of students. Adaptive approaches to learning focus on the behavior of students, their achievements, and preferences in learning. Adaptive learning is also an important concept in computer science, where algorithms are developed to determine how and when to adapt to the learning environment and/or tasks. For example, ITS goals boost student's competence in the field, may use adaptive training to provide students with prompts so independently

solve more complex tasks.

Adaptive learning is used to gradually withdraw from asking until competence is achieved and more complex tasks are established, so keep students in the zone of nearest development (Arroyo, Woolf, Burelson,Muldner and Tai, 2014). Learning analytics uses human judgment and uses automated data analysis, potentially using artificial intelligence to support it. The training aims to gain skills in education and conditions that can be used to make people's decisions better.

Application And Cases Of Artificial Intelligence In Education

Artificial Intelligence in Education Sector enabled solutions and tools empower teachers and students with a wide area of learning and teaching opportunities in various formats. The technology assists institutions in bringing about significant changes in their processes and designing a curriculum based on knowledge. Here are some of the major applications and use cases of Artificial Intelligence in Education Sector.

Administrative Task Automation: AI's advents have automated much of the administrative tasks that have consequently provided teachers and organizations more time to communicate with students, plan for a class, or concentrate on other essential activities. The technology has allowed the automation of paperwork classification and processing, meaning that teachers and administrators no longer have to do these tasks manually. In the coming years, AI could potentially create more efficient enrolment and admission processes.

Smart Content: The traditional syllabuses were enabled to create customized textbooks through AI. For the benefit of students in all academic grades, these textbooks are being digitally transformed to provide new learning interfaces. For instance, Cram101 employs AI to assist in organising textbook material into a more user-friendly study guide. This makes using chapter summaries, flashcards, and practical exams to study the material simple.

Smart Tutorials: A smart tutoring system allows customized online tutoring that is tailored to the students' learning styles and preferences. Such programs operate according to the student's needs by putting greater emphasis on those topics, reinforcing things students have not learned. It also allows the students at their own pace to work. Smart tutoring programs such as Mastery Learning and Carnegie Learning use cognitive science and AI technology to give post-secondary students customized tutoring and real-time feedback.

Personalized Learning: A number of educational programs have been developed which optimize the learning speed and the instructional method for each learner's needs. These AI-powered apps allow students to customize learning where their teachers give personalized and tailored responses. Teachers can also break down the lessons into smart study guides and flashcards to make it easier for students to understand. Through this, teachers will also be able to teach students based on the skill of an individual student and the challenges they encounter while learning class materials.

Worldwide Learning: The world can now more easily learn any course from anywhere in the world thanks to AI. Through AI systems, software, and assistance, students can take advantage of the advantages of convenient learning at anytime from anywhere in the world. All people, regardless of their language background, can now attend global classrooms by AI-enabled technologies.

For instance, a free PowerPoint add-in called Presentation Translator offers real-time subtitles for the instructor's speech. Additionally, students can hear or read what is being spoken in their own language with the help of voice recognition and translation provided by Azure Cognitive Services.

Benefits Of Artificial Intelligence In Education

AI has the potential to improve both teaching and learning, assisting in the evolution of the educational system for the betterment of both students and teachers. The epidemic, however, fundamentally altered the environment, pushing educators to rely on technology for online instruction. Today, 86% of educators believe that technology should be a fundamental component of education. AI has the potential to improve both teaching and learning, assisting in the evolution of the educational system for the betterment of both students and teachers.

Benefits for Students

By making the educational process more efficient, artificial intelligence can assist students in reaching their objectives. AI can have a big impact on how students learn by giving them access to the relevant courses, enhancing contact with teachers, and giving them more time to concentrate on other aspects of life.

Personalization: The largest trend in education now is personalization. Students now have access to learning packages that are tailored to their own experiences and preferences by the usage of artificial intelligence (AI). AI can adjust to each student's knowledge base, rate of learning, and desired outcomes to ensure they are getting the most out of their education. Additionally, AI-powered programmes can examine students' prior academic performance, spot areas for growth, and recommend courses, opening up several possibilities for a tailored learning environment.

Tutoring: Although it is typical for students to need additional assistance outside of the classroom, many teachers do not have the time to help children after school. In these cases, chatbots and AI tutors are the ideal solutions. Despite the fact that no chatbot can completely take the position of a teacher, AI tools can assist students in honing their skills and strengthening their areas of weakness outside of the classroom. Without the teacher being there all the time to answer questions, they offer a

one-on-one learning experience. In fact, a chatbot using AI can respond to student inquiries in 2.7 seconds on average.

Quick responses: Nothing is more annoying than submitting a question only to receive a response three days later. Every day, repetitious queries are frequently thrown at teachers and faculty. Through conversational intelligence and support automation, AI can quickly provide solutions to students' most frequently asked queries. This saves a tonne of time for teachers and also makes it so that students don't have to spend as much time looking up information or waiting for an answer to their queries.

Universal 24/7 access to learning: ll students may learn at anytime, anywhere, with AI powered tools. Every kid learns at their own rate, and having access to resources around-the-clock makes it simpler for them to figure out what suits them without having to wait for a teacher. Additionally, students from all over the world can receive top-notch education without having to pay for housing or travel costs.

Benefits for Educators

Most teachers and faculty aren't afraid to admit they struggle with time management, which is understandable given the number of tasks on their daily to-do lists. Educators want to spend more time educating students one-on-one, diving into research and continuing their own education, but don't have the availability to do so. AI can help free up educators' time by automating tasks, analysing student performance and closing the educational gap.

Personalization: AI can customise educational programmes for students and teachers alike. AI can provide teachers with a clear image of which courses and classes need to be revaluated by looking into the learning styles and past performance of the pupils. Teachers can design the most effective learning programme for each student thanks to this data. Teachers and lecturers can modify their courses to meet the most frequent knowledge gaps or issue areas before a student falls too far behind by studying each student's unique needs.

Answering questions: With access to a school's entire knowledge base, AI-powered chatbots can answer a variety of generic and repetitive questions students typically ask without involving a faculty member. In bypassing the educator, AI leaves more time for them to focus on lesson planning, curriculum research or improving student engagement.

Task automation: The power of AI can automate even the most tedious activities, such as office work, paper grading, learning pattern analysis, answering general questions, and more. Teachers spend 31% of their time organising courses, marking exams, and performing administrative tasks, according to a Telegraph poll. However, by automating manual tasks, teachers can free up more time to concentrate on teaching fundamental competencies.

Today, AI plays a role in helping students and teachers optimize and automate both learning and teaching tasks. As the AI industry expands, and innovation is at the forefront, we'll see improved learning outcomes for all students and educators.

Conclusion:

Artificial intelligence is the most intriguing of technological advancements of our time. It is used in many segments of our normal lives appear to be growing day by day, and the same has been reported in various studies. In the field of education, AI began to exert its influence, acting as an auxiliary tool to support the teaching and learning process. The current study showed that teachers and students should understand more as it can quickly interpret a student's needs and design an appropriate assessment. It can show students mastery, repeat lessons as needed and quickly design a personalized learning plan for each student. AI could also provide teachers with a virtual teaching assistant. But more than just teachers and students, it can be a way to support parents by involving them in the learning environment of students and providing them with the information they need to help their students be successful when they're not in the classroom.

It also determined that the optimal use of AI technology can produce better results. Several platforms and trends promised the future development of AI education, which is very attractive, and in some cases even inaccessible under certain conditions. However, learning from computer systems is unlikely to be fully capable of replacing human teaching in schools. The future likely holds a lot of possibilities for AI.

References:

1.Wartman, S. A., & Combs, C. D. (2018). Medical education must move from the information age to the age of artificial intelligence. Academic Medicine, 93(8), pp. 1107–1109.

2.Mohammed P.S., & Watson E. N. (2019). Towards inclusive education in the age of artificial intelligence: perspectives, challenges, and opportunities. In: Knox J., Wang Y., Gallagher M. (eds) Artificial Intelligence and Inclusive Education. Perspectives on Rethinking and Reforming Education. Singapore: Springer. https://doi.org/10.1007/978-981-13-8161-4_2

3.Timms, M. J. (2016). Letting artificial intelligence in education out of the box: educational cobots and smart classrooms. International Journal of Artificial Intelligence in Education, 26(2), pp. 701–712, Doi: 10.1007/s40593-016-0095-y

4.http://edition.cnn.com/2006/TECH/science/07/24/ai.bostrom/

5.Yacoub, HuseinNuseibeh. Artificial Intelligence: Opportunities and challenges in finance industry. Gulf News. http://gulfnews.com/business/sectors/banking/ artificial-intelligence-opportunities-and-challengesin- finance-industry-1.1976801 [Accessed February 20, 2018]

6.Sensely, Molly: Virtual Nurse. http://Sense.ly [Accessed February 20, 2018]

7.Roll, I., & Wylie, R. (2016). Evolution and revolution in artificial intelligence in education. International Journal of

Artificial Intelligence in Education, 26(2), pp. 582–599.
8.Felix, C.V. (2020). The Role of the Teacher and AI in Education. Sengupta, E., Blessinger, P. and Makhanya, M.S. (Ed.) International Perspectives on the Role of Technology in Humanizing Higher Education (Innovations in Higher Education Teaching and Learning, Vol. 33), Emerald Publishing Limited, pp. 33–48. https://doi.org/10.1108/S2055-364120200000033003
9.Manyika, J., Chui, M., Miremadi, M., Bughin, J., George, K., Willmott, P., & Dewhurst, M. (2017). A future that works: Automation, employment, and productivity. Chicago: McKinsey Global Institute.
10.Haseski. H.I. (2019). What do Turkish pre-service teachers think about artificial intelligence? International Journal of Computer Science Education in Schools, 3(2), Doi: 10.21585/ijcses. v3i2.55
11.Humble, N., &Mozelius, P. (2019, October). Artificial Intelligence in Education-a Promise, a Threat or a Hype? In European Conference on the Impact of Artificial Intelligence and Robotics 2019 (ECIAIR 2019), Oxford, UK pp. 149–156. Academic Conferences and Publishing International Limited.
12.Wogu, I. A. P., Misra, S., Olu-Owolabi, E. F., Assibong, P. A..& Udoh, O. D. (2018). Artificial intelligence, artificial teachers and the fate of learners in the 21st century education sector: Implications for theory and practice. International Journal of Pure and Applied Mathematics, 119(16), pp. 2245–2259.
13.Canbek, M. (2020). Artificial Intelligence Leadership: Imitating Mintzberg's Managerial Roles. In Business Management and Communication Perspectives in Industry 4.0, pp. 173–187. IGI Global.
14.Sekeroglu, B., Dimililer, K., &Tuncal, K. (2019). Artificial intelligence in education: application in student performance evaluation. DilemasContemporaneos: Educacion, Politica y Valores, 7(1), pp. 1–21.
15.Pedro, F., Subosa, M., Rivas, A., & Valverde, P. (2019). Artificial intelligence in education: Challenges and opportunities for sustainable development. Paris: UNESCO.
16.Grosz, B. J., & Stone, P. (2018). A century-long commitment to assessing artificial intelligence and its impact on society. Communications of the ACM, 61(12), pp. 68–73.
17.Luckin, R., Holmes, W., Griffiths, M., & Forcier, L. B. (2016). Intelligence unleashed: An argument for AI in education.
18.VanLehn, K. (2011). The relative effectiveness of human tutoring, intelligent tutoring systems, and other tutoring systems. Educational Psychologist, 46(4), pp. 197-221.
19.Baker, R. S. (2016). Stupid tutoring systems, intelligent humans. International Journal of Artificial Intelligence in Education, 26(2), pp. 600-614.
20.Kulik, J. A., & Fletcher, J. D. (2016). Effectiveness of intelligent tutoring systems: a meta-analytic review. Review of educational 86(1), pp. 42-78.
21.Ma, W., Adesope, O. O., Nesbit, J. C., & Liu, Q. (2014). Intelligent tutoring systems and learning outcomes: A meta-analysis. Journal of educational psychology, 106(4), pp. 901.
22.Steenbergen-Hu, S., & Cooper, H. (2014). A meta-analysis of the effectiveness of intelligent tutoring systems on college students' academic learning. Journal of Educational Psychology, 106(2), pp.331.
23.Gulz, A., &Haake, M. (2006). Design of animated pedagogical agents—A look at their look. International Journal of Human-Computer Studies, 64(4), pp. 322-339.
24.Kim, Y., & Baylor, A. L. (2016). based design of pedagogical agent roles: A review, progress, and recommendations. International Journal of Artificial Intelligence in Education, 26(1), pp. 160-169.
25.Johnson, W. L., & Lester, J. C. (2016). Face-to-face interaction with pedagogical agents, twenty years later. International Journal of Artificial intelligence in education, 26(1), pp. 25-36.
26.Heidig, S., &Clarebout, G. (2011). Do pedagogical agents make a difference to student motivation and learning? Educational Research Review, 6(1), pp. 27-54.
27.Heinemann, C., &Uskov, V. L. (2017, June). Smart university: literature review and creative analysis. In International Conference on Smart Education and Smart E-Learning pp. 11- 46. Springer, Cham.
28.Li, B. P., Kong, S. C., & Chen, G. (2015). A study on the development of the smart classroom scale. In Emerging issues in smart learning, pp. 45-52. Springer, Berlin, Heidelberg.
29.Benyon, D., & Murray, D. (1993). Adaptive systems: From intelligent tutoring to autonomous agents. Knowledge-Based Systems, 6(4), pp.197-219.
30.Arroyo, I., Woolf, B. P., Burelson, W., Muldner, K., Rai, D., & Tai, M. (2014). A multimedia adaptive tutoring system for mathematics that addresses cognition, metacognition and affect. International Journal of Artificial Intelligence in Education, 24(4), pp.387-426.

Dr. Swaty
Assistant Professor of Commerce
F.L.T.M.S.B.P. G.C.W., Rewari,
Haryana

Major Themes in the Poetry of Philip Larkin

Dr. Roshan Lal

Abstract

Philip Larkin who is known for many of his forms as distinguished poet, Oxford University graduate, unofficial laureate, Librarian of the University of Hull, Honorary Doctor of letters, companion of literature and Jazz critic, has been interpreted and understood differently by different critics. Some critics comprehend the major themes of Larkin's poetry in the form of movement poetry. There are still others who analyse his poetry in terms of the stylistic devices like metaphors, vivid imagery, stark realism, discursive tone, scientific temper and Laconism. His poetry was a reaction against the emotionally surcharged and melancholic poetry of 1930s and 40s. Throughout his life Larkin was charged with the spirit of profound pessimism, seriousness, melancholy, impending death, alienation, dismissive attitude, skeptical outlook, frustration and old age which succeeds him in capturing the obscene of life.

Key Words :- *Movement, death, nihilism, laconism, disillusionment.*

Today Larkin is known for many of his forms : distinguished poet, Oxford University Graduate, unofficial laureate, librarian of the university of Hull, Honourary Doctor of letters, companion of literature and Jazz Critic etc. He is acclaimed as one of the foremost contemporary poets, who is credited with having dominated the poetic stage of 1950s, as he has held the affection and critical esteem of both the critics and readers. Once dismissed as a minor poet, now he has emerged as the finest living poet writing in English. Larkin not only reflects a growing interest in his works but also vindicates the position that he warranted more acclaim than he initially received, especially when it is known that Larkin was intrinsically a serious artist right from his young days.

On the bases of his themes, the meagerness of range and the treatment in simple, colloquial diction, Larkin has been bracketed with the writers of 1950s. The poets identified with the movement writers were those who appeared as a group in D.J. Enright's anthology are the poets of the 1950s like Philip Larkin, Robert Conquest, Thom Gunn, Elizabeth Jennings, Donald Devie, Kingsley Amis, John Wain and John Halloway. The movement writers attacked the modernist poetry for its emphasis on the unconscious and for its diffuse verbiage and archetypal imagery. The poetic principle of movement is best expressed by Philip Larkin. As a poet Philip Larkin has been interpreted and understood differently by different critics. Some Critics comprehend the major themes of Larkin's poetry in the terms of Pessimism and his sense of Nihilism, others interpret his poetry in the form of movement poetry. There are still others who analyse his poetry in the terms of the stylistic devices like metaphors, Vivid imagery, stark realism, discursive tone scientific temper and laconism. But whoever the case may be, the fact remains that Larkin's poetry of 1950s and 1960s was a reaction against the emotionally surcharged and melancholic poetry of 1930s and 40s where the poets like Louis MacNeice, Stephen Spendour etc. have mourned the abrupt demise of the social and moral values of the society.

The poetry of Philip Larkin is a powerful expression of realism, pessimism, agnosticism, despair, death and hope where the idiom used is pregnant with the metaphoric meanings and laconic suggestions and implications.

Death, diseases and old age form the most prominent themes in the poetry of Philip Larkin. As Andrew Motion observes,"In his life it was generally thought that the focus of his interest was death and that was bound his poems together were themes of mortality"[1]

The poem 'Going' is about the approach of death that chills and destroys the consciousness. Larkin did not believe in God. He was an agnostic. Hence death always frightened him. This feeling of fright surrounds the poem from beginning to end, strengthens our belief that Larkin is a poet of unrelenting pessimism as the poet says in 'Going'.

Where has the tree gone, that locked
Earth to the Sky? What is under my hands,
That I can not feel?
What loads my hands down?

Andrew motion also opines that "Dread over coming desire, emptiness swallowing fulfillment sexual anxiety converting in to fear of mortality produced in 'Going'.[2]

Similarly in 'Wants' Larkin desires for death. For him death is the ultimate form of aloneness. The fear of death is the negativism of a depressed and depressing man. Larkin was an unyielding persimist.

Erick Homberger called him,

"The saddest heart in the post was super-market."[3]

'Next Please' is the title that was born out of the personal and physiological deformity of the poet, but the poetic treatment and aesthetic refinement has made it a beautiful piece of 'Black Comedy', where the poet analyses the theme of disillusionment and Death in terms of the human habit of expectation and the death of hope:

Always too eager for the future, we
Pick up bad habits of expectancy.
Something is always approaching; every day
Till then we say.

'Ambulance' is also a poem which reminds us of far from the family love, to lie unreachable, inside the ambulance, for which the traffic makes way to let it go, brings the departing

patient neared the death, and distances him dismally from life. The poet beautifully depicts the image of death in the following lines :-

At last begin to loosen. Far
From the exchange of love to live
Unreachable inside a room
The traffic parts to let go by
Brings closer what is left to come,
And dulls to distance all we are.

The poem 'Toads Revisited' is also one of the effective poem which is the glimpse of Larkin's personality, that is his perennial fear of death. As Andrew Motion summarizes it aptly : "For all its unavoidable tedium, work helps to combat the thought of impending death, and the main reason for this is its very dailiness – the fact that its repetitive structures allow Larkin to feel palpably involved with life."[4] As the poet says,

When the lights come on at four
At the end of another year?
Give me your arm, old toad;
Help me down cemetery Road.

'Explosion' is also a best known poem of Larkin in which the priest sermonizing on the philosophy of death as an extension of life in heave, and the housewives having momentary vision of their husband looking nobler now and coming towards them from heaven. That is why death had lent a special significance to the men who had been killed in the explosion as at the end of the poem the poet says;

'One showing the eggs unbroken'.

In 'Wants' Larking speaks of the desire for death in desperation : "Beneath it all, desire of oblivion ruins."

In many of the discussed poems, "Larkin seems to be attempting to face death without flinching by being conscious of its inexorable approach."[5]

Larkin sees death as the great annihilator; no one in his view, will be around to be either disillusioned or betrayed after death. As 'The old Fools' describes it:

At death, you break up; the bits that were you
Start speeding away from each other for ever
With no one to see.

The theme of death is followed by the theme of pessimism, as Andrew Motion says,

'Larkin has often been called as a hopeless, inflexible pessimist; Larkin's outlook to life is undoubtedly bleak and gloomy; and this gloom is depended by his constant references to the inevitability of death in his poems. Most of the poems written by Larking reflect his disappointment and dismay at the spectacle of the life around him; and he saw himself as a pathetic kind of man and not as a hero capable of rising above his circumstances and above his fear of old age and death. Larkin, as a representative of the movement poets, aimed at depicting the realities of life in all their harshness, starkness and sternness. In this respect he greatly follows Thomas Hardy though he does not put any emphases on chance, accident, and coincidence as being responsible for the misfortunes of life.

The poem entitled 'The Whitsun Weddings' expressed the pessimistic outlook of the poet in which the poet himself seems to be a detached observer. In this poem the poet speaks of a wedding as:

Success so huge and wholly farcical;
The women shared
The secret like a happy funeral;
While girls, gripping their handbags tighter, stared
At a religious wounding. Free at last,
And loaded with the sum of all the saw,
We hurried toward London, shuffling gouts of steam.

The life is a progression, towards decay and destruction which is the recurring theme of Larkin's poetry.

A pessimistic outlook of Larkin is clearly described in the Poem 'Nothing to be said' in which he says that all activities and all cultures are moving slowly towards their death. According to Stephen Regan that the poem 'Nothing to be Said' resorts to be a blatantly amateurish anthropology in its claim that life for all classes of people and all the cultures are ultimately the same, being subject to inevitable extinction. As the poet said in 'Nothing to be Said'

'Mr. Bleaney' picturizes a lonely, old, deprived man who lived in a dreary rented room. The experience of the poet himself and Mr. Bleaney are same. Larkin himself said that I'd imagined that the kind of experience it was based on was the kind of thing that only happened to him. On the whole the poem is a depressing picture, strengthening the opinion that Larkin was an unacceptable pessimistic poet.

"Hours giving evidence
Or birth, advance
On death equally slowly.
And saying so to some
Means Nothing; others it leaves
Nothing to be said.

The poem 'Dockery and Son' thematically concerns the comparatives value of marriage and bachelorhood. In this poem Larkin is trying to say that Dockery having a son is nothing great. We are what we are by destiny ; and do what we may, all leads to old age and then to death. The poem is a dramatic monologue in which a speech is made by a man at a critical moment of his life in which he reveals the innermost secrets of his soul. The authorized biographer of Philip Larkin, Andrew Motion says : "Bitterly funny and grievously melancholic, 'Dockery and Son' is a compressed auto biography. It encapsulates Larkin's views about the effect of his parents on his personality, it reports spiritedly on his undergraduate career, it grimly sketches the attitudes which dominated his adult life".[6]

Larkin was inevitably a pessimist too, and a very

hopeless kind of pessimist but at the same time he has a feeling of isolation and alienation in this world which constitutes the dominant thematic pattern in his poetry. Larkin was a movement poet and like some of the other movement poets, he had an empirical and skeptical outlook on life which is partly a result of a sense of alienation from society and traditional institutions. In most of his poems the speaker is Larkin himself and he keeps himself away from the people and his surrounding. It leads the poet to adopt a dismissive attitude towards people, beliefs and things in his poems. In this way we have seen how Philip Arthur Larkin explores and expresses his major themes like the theme of death, alienation, love, time disillusionment, frustration, old age and pessimism, where the poet making use of vivid imagery, metaphoric expression and Laconism succeeds in capturing the obscene of life by using argumentative language Larkin legitimately qualified himself as a member of the movement school of poetry with a powerful vision of Life.

REFERENCES

1. Andrew Motion, Philip Larkin : A Writer's Life (London : Faber and Faber, 1993), P. 291.
2. Philip Larkin, The Whitsun Wedding's (London : Faber and Faber, 1964), P. 20
3. Cited, Andrew Motion, Larkin (London and New York : Methuen 1982), P. 59
4. Andrew Motion, 'Philip Larkin and Symbolism', in Philip Larkin, ed. Stephen Regan (New York : St. Martins Press, 1997), P. 40
5. Janice Rossen, Philip Larkin : this Life's works (New year : Billing and Sons Ltd. Worcester, 1989), P. 142.
6. Andrew Motion, Philip Larkin : A Writer's Life (London : Macmillan, 1995), P. 112

Dr. Roshan Lal
Assistant Professor of English
JVMGRR College, Charkhi Dadri
Email ID : roshanlaljvm@gmail.com
M.No. : 9466079813

SMART WATER GOVERNANCE : THE NEED OF HOUR

Dr. Bindu

Abstract

The socio-economic development and economic growth, especially in drought prone and desert areas depends upon how wisely water resources are utilized. Water, being a finite resource, plays a key role especially in arid and semi-arid regions in restoring and sustaining the environment including flora and fauna. Water is an essential but scarce resource and therefore consuming and managing each and every drop of water is vital. Since this management involves decisions related to billions of lives and the vast quantities of invigorating resource, usage of technology can be a correct path towards redemption. Technology and innovations can indeed play an essential part in scarcity and safety, efficiency, utility operations, monitoring, treatment, and data analytics related to the water sector and lead India to the path of a smart water future. However, for millions of people in India and worldwide, water is a cause of constant worry in a context as water tables are constantly falling and water quality rapidly diminishing. Also, water is a necessary and irreplaceable resource for economic growth. Another aspect of water that needs to be addressed urgently is the management of wastewater. Therefore, it is a right time to work on the water management part for our sustained future. Water management is not new to the world but in times of deepening water crisis aggravated due to incessant urbanization, increasing population and inconsistent climatic trends, the need of the hour is to resolve the situation of global crisis with local know how and available resources while leveraging technological innovations. Environmental technologies combined with an intelligent, systemic approach to water management can help ensure a sustainable water supply in our economy. Technology and innovations have an essential part to play in scarcity and safety, efficiency, utility operations, monitoring, treatment, and data analytics related to the water sector. In this paper, we are going to explore some of the ways in which technology specifically related to water management, can save our days on this planet and some best practices of the sector prevalent in India which help us to pave our way towards smart water governance. This paper throws light on the steps taken at the national level and has the potential to achieve Sustainable Development Goals.

Keywords : Socio-economic, environmental, monitoring, sustainable, aggravated

Introduction: Water is one of the most essential natural resources for sustaining life. Water is a prime natural stockpile, a basic human need and a treasured national asset. One thing which preceding years have taught us is that the world is a global village where the countries are having similar opportunities and have same challenges to deal with. The recent outbreak of COVID-19 pandemic, an outburst of locusts, and the persistent issue of climate change have substantiated the fact that the world needs to collaborate and fight the global challenges in times ahead. One of such global challenges is water scarcity where, Some 1.1 billion people worldwide lack access to water, and a total of 2.7 billion find water scarce for at least one month of the year, two million people, mostly children, die each year from diarrheal diseases alone, by 2025, two-thirds of the world's population may face water shortages. "Due to the increasing population, the per capita annual availability of water in India, which was 1816 cubic meters (cu m) in 2001, got reduced to 1544 cu m in 2011 which will reduce to 1140 cu m in the year 2050. Any situation of availability of less than 1000 cu m per capita is considered by international agencies as scarcity. By 2030, the country's water demand is projected to be twice the available supply and if business as usual continues, it may imply severe water scarcity for hundreds of millions of people ((Kurukshetra, 2022)". As per the UN report on water and jobs, it has been estimated that half of the world's workforce i.e. about 1.5 billion people are dependent and employed in one of the eight water and natural resources dependent industries. In India, if we don't take this water scarcity seriously, then by 2030, we can lose 6 percent of our GDP due water-related disasters. Therefore, it is a right time to work on the water management part for our sustained future. A good management system may save the quality of water and protect it from deterioration.

Water Governance

The existence and sustenance of mankind depend on water-safe potable water, primarily for drinking and other domestic purposes. As per the UN report on water and jobs, it has been estimated that half of the world's workforce i.e. about 1.5 billion people are dependent and employed in one of the eight water and natural resources dependent industries. In India, if we don't take this water scarcity seriously, then by 2030, we can lose 6 percent of our GDP due to water-related disasters. Water governance broadly means the management and distribution of water whilst maintaining its quality. In order to ensure the sustainable supply of water in a smart format, we need to focus on various points i.e. reduction in non-revenue water and encouraging waste water recycling and reuse etc.

Non revenue water (NRW) is water that has been produced and is "lost" before it reaches the customer. Losses can be all physical and commercial losses due to theft, pipe burst, overflow of reservoirs, unmetered and ill-metered water bill along with unbilled authorized consumption. There are four basic leakage management activities that can be undertaken by water utilities to reduce distribution losses, these are: (i) pressure management; (ii) active leakage control; (iii) speed and quality of repairs and pipe asset management; (iv) maintenance and renewal (ADB, 2010). These steps holistically feature conventional yet necessary steps to manage leakage while reducing physical losses. For the second step of leakage management i.e active leakage control, it is required to introduce some level of technological intervention. Real-time monitoring of water supply infrastructure, by using GIS tools, installing smart devices, and telemetry, offer utilities the scope to take timely action in repairing the leakages and finding out the illegal connections easily, thereby saving millions of liters of water along with time and energy.

Population makes it even more important to devise a circular path of water by using and reusing water in the system. Wastewater can be treated at centralized or decentralized levels depending up on the level of readiness, amount of waste water generated and funds available in the system. Currently, India generates approximately 61,948 MLD of sewage against the treatment capacity of 23,277 MLD i.e. 37 percent of wastewater generated only (CPCB, 2015). Moreover, even the installed sewage treatment plants either do not run at maximum capacity or do not comply with standards prescribed. Hence, there is an urgent need to promote and push economy to inculcate the habit of reusing, recycling and treating wastewater in the system.

India is already on the way ahead in adopting various water sector-related technologies. In the state of Gujarat, viable solutions were explored to conserve water and achieve an ecological balance. Gujarat State today considered as the growth engine of India, witnessed a turnaround from being a water scarce State to water secure State in the first decade of the 21st century. The State transformed by adopting policies, climate-resilient environment-friendly engineering, and strengthening grassroots leadership stand out as an example of sustainable development and offers a path to follow. In the late 1990s, no one had imagined what Gujarat could look like.

Following Gujarat's footsteps, groundwater conservation plan was designed at the national level to carry out community-driven efforts to achieve water security. Under **Atal Bhujal Yojana**, a unique policy initiative was undertaken to empower local communities by ensuring their participation and improving their sense of ownership among all other stakeholders. Under **Pradhan Mantri Krishi Sinchayee Yojana** (PMKSY), farmers are encouraged to adopt water smart irrigation technologies to improve productivity with reduced water wastage. One of the crucial measures undertaken is on improving rainwater harvesting under **'Catch the Rain'** campaign.

'Jal Shakti Abhiyan' was launched as a campaign and mission-mode initiative to make the best of the monsoons and enable water conservation, especially in the 256 identified water-stressed districts. The effort was to make it a **'Jan Andolan'**, a movement of the people. These steps were in the right direction towards truly making water everyone's business' and achieving water security for all.

'Namami Gange' was launched for rejuvenation of the river Ganga and its tributaries by adopting a multi-level and multi-agency approach in four broad categories of pollution abatement, improving flow and ecology, strengthening people-river connect, and research, knowledge and management. With the success of Namami Gange, 13 more rivers have been taken up for rejuvenation and pollution abatement.

Jal Jeevan Mission-Har Ghar Jal, On 15 August 2019, the Prime Minister announced Jal Jeevan Mission (JJM) with the promise of tap water supply to every rural home in the country by 2024. This mission was designed in partnership with States and aimed to ensure long-term assured water service delivery rather than mere infrastructure creation.

Under JJM, **Pani Samitis/VWSCs** are being set up across the 6 lakh rural villages of the country, where they are being empowered to plan, implement, manage their in-village water supply systems by adopting an end-to-end approach involving the four key components, viz. source sustainability, water supply, greywater treatment and reuse and operation & maintenance.

The Swachh Bharat Mission 2.0 focuses on reducing waste production and its suitable treatment, reuse or disposal. The key impact areas of this mission are bio-degradable solid waste, greywater, plastic waste, and faecal sludge management.

The National Project on Aquifer Management biggest of the world's one (NAQUIM), programmes of its kind, envisages the formulation of aquifer management plans to facilitate the sustainable management of groundwater. So far, more than half the total area of the country has been mapped.

Technology also plays an important role in tackling water-related disasters like floods and it is very heartening to see that we as a Nation have deciphered the way to it. The Central Water Commission is collaborating with M/s Google Inc., to provide inundation alerts based on the Flood Forecast available in **Common Alerting Protocol (CAP)** platform

using high-quality digital Terrain Models available with Google using Artificial Intelligence and Machine Learning. The system started functioning in 2018 when inundation alerts were provided for Patna Gandhi ghat forecast stations.

In a similar manner, Odisha is the first State in the country that has implemented an **Early Warning Dissemination System (EWDS)** which aims at establishing a foolproof communication system to address the existing gap of disseminating disaster warning from the State, District and Block levels to communities.

The Government of Kerala has also entrusted the **Kerala State IT Mission (KSITM)** to set up an ICT Platform comprising of Web based backend and a mobile app-based field survey application to document the flood reated damage caused to houses and commercial establishments in affected districts.

Recently, students from IIT Madras have developed an AI-enabled drone that can help authorities provide vital information on people trapped in disaster-hit areas.

There are a number of technologies that can be used for the smart water future . Depending upon the purpose of recycled water, the effluent filtration technology is decided. Besides this, **Advanced Green Techniques (AGTs)** used for wastewater treatment is Bioreactor.

Solutions

Apart from these techniques, there are a number of smart solutions which India can undertake to move towards smart water Governance. Some of these are:

People-Centric Strategy: A bottom-up strategy incorporates the community, gives them a sense of participation, and promotes project accountability.

Rainwater Harvesting: Because rain-fed agriculture predominates in India and the monsoon is the country's main source of rainwater, monsoon-deficient years have the potential to cause economic disruption. As a result, it's necessary to use rainfall as a resource.

Scientific Interventions, such as the gathering of Satellite Data: India is a leader in space technology, and it has a network of satellites with a variety of functions. In the event that there is a shortage of resources in both time and space, these satellites can provide crucial information for planning agriculture's sustainability.

Distribution Canal Network: The Himalayas are a gift to the nation. They not only give the nation a good environment, but they are also a source of perennial rivers that may be used to boost the water supply in various areas.

Inter-basin Transfer of Water: Another approach that has been in the works for a while involves connecting the nation's rivers based on surplus and deficit rivers in order to simultaneously manage the dual issues of floods and droughts.

Agriculture Extension Projects, such as those using Micro-irrigation: Nearly three-fourths of all water used in India is used for agriculture, making it the largest consumer of water in the nation. Water waste brought on by ineffective irrigation techniques like flood irrigation is the issue. Therefore, it is crucial to inform farmers about alternative irrigation techniques like drip irrigation, which not only conserve water but also slow soil erosion.

Involvement of Women: Women are disproportionately affected by the water crisis because they must walk great distances to collect water from neighboring wells or streams. Therefore, it is necessary to include them in all phases of planning, including the design, implementation, management, and upkeep of water supply systems. This will guarantee rural areas' long-term access to water.

Changing one's Diet: Consuming certain foods makes the country's water supply more stressed. For e.g., the poultry industry consumes a large quantity of water in washing, cooling and other related uses. In such a scenario, a switch to a veg diet can be beneficial to the availability of water in the country.

Conclusion

To sustain life on earth in all its totality, water should be carefully managed in its natural habitats. For sustainable development of freshwater resources, it would be important to enable individuals and communities to appreciate their options, evaluate them and then choose the one that is the most appropriate. Water is a major factor in each of the three pillars of sustainable development – economic, social, and environmental. Water, being a finite resource, plays a key role especially in arid and semi-arid regions in restoring and sustaining the environment including flora and fauna. Its vitality for reducing the burden of disease and improving the health, welfare and productivity of human populations and keeping other life forms on earth possible cannot be underestimated or ignored. Technologies give us the leverage to perform tasks that were unimaginable to our past generations. But, the important point to note over here is that technology alone cannot combat the disasters created by our species. They are just a way to mitigate the losses from these catastrophes. If we want to fight back against the challenges of water scarcity and looming water disasters, we have to change ourselves. We have to change our habit to take nature for granted and work as a single unit to make our planet again a giant green and blue beautiful sphere of life.

References

1. Central water Commission Report,(1993), "Reassessment of water resources potential of India", CWC, New Delhi.

2. Civil Services Chronicle (2022), "Water Conservation", Vol.

34, No. 2, pp. 73-74.
3. Jain SK, Agarwal PK and Singh VP (2007), "Hydrology and water resources of India "(Dordrecht, Netherlands: Springer), p.1258.
4.Jain, S. K. (2017), "Water resource management in India". *Curr. Sci*., **113**(7), pp.1211–112.
5. Kumar R, Singh R D and Sharma K D, 2005.Water resources of India; Curr. Sci. 89, pp 794–811.
6. Lal, Bharat (2022), " Water Governance" Yojana, Vol. 66, No. 10, pp. 29-32.
7. Mahapatra, P.K. and Singh, R.D. (2003), "Flood Management in India", J. Natural Hazards, (28), pp.131-143.
8. National Water Policy, (2002), "Government of India, Ministry of Water Resources". New Delhi, April, 2002.
9. Panwar, Narmata (2022), " Smart Water Future", Kurukshetra, Vol. 71, No. 1, pp. 17-20.
10. Peder Hjorth and Nguyen Thi Dan, (1994), "Water management options for urban areas in Asia". Cities Vol. 11, No. 2, pp. 125-130.
11. Rao S. M. and Mamatha P. 2004. Water quality in sustainable water management. Curr. Sci., , 87, pp. 942–945.
12. Srikanth,R.(2009), " Challenges of sustainable water quality management in rural India" Vol. 97, No. 3, pp.317-325.

Dr. Bindu,
Associate Professor of Geography,
Govt. P.G. College for Women,
Rohtak
Email: binduhooda1@gmail.com

80

A Bend In The Ganges: Partition To Communalism As Cultural Aberration

Dr. Dinesh Kumar

Abstract

The canvas of the novel *'A Bend in the Ganges'* (1964) is broad enough to cover the major historical events beginning from the civil disobedience movement till independence. The spirit of the time is thoroughly documented and artistically rendered.The action of the novel starts in 1930 and extends upto the dawn of Independence in Aug, 1947, encompassing a saga getting independence from the British rule and the partition of the country into Hindustan and Pakistan. But before the arrival of the result of partition, hell is let loose in many provinces, cities and villages. Manohar Malgonkar says: "Twelve million people had to flee, leaving their homes; nearly half a million were killed. Over a hundred thousand women, young and old, were abducted, raped and mutilated ".[1]

The novel opens with Mahatma Gandhi's bonfire of the British cloth under the Impact of Swadeshi Movement and with the burning of foreign clothes, but now it is indian cities that are on fire, it is the Hindus and the Muslim who are killing one another in tens of thousands.GianTalwar becomes a follower of Mahatma Gandhi. Debi Dayal, College mate of Gian, Joins terrorist movement directed against the British regime' ShafiUshman, dressed as a Sikh, being leader of the terrorist group starts teasing GianTalwar by ridiculing the Gandhian creed of Non Violence. ShafiUshman says to Gian: "Non-Violence is the philosophy of sheep, a creed for cowards. It is the greatest danger to this country:".[2] His firm belief is that freedom has to be won by sacrifices and shedding tears.

GianTalwar's faith in Non-violence is put on trial as soon as the goes back to his village, konshet. The revenge drama properly begins with Gian's involvement in the family feud between the little house and big house. In the dispute over the piploda land, Hari, his elder brother is killed by Vishnu Dutt. For a while GianTalwar believes like a true follower of Mahatma Gandhi but his keen desire for revenge overcomes this principle and in the very state of revenge he murders Vishnu Dutt.

Debi-Dayal has deliberately cultivated the cult of violence as a menas of achieving the noble end of throwing the Britishers out of India. He becomes a terrorist and hates the British because of a personal reason. It is the traumatic experience of his adolescence, the sight of a drunken Scottish soldier attempting to rape his mother which turned him into a god of vengeance. Debi chooses the path of violence to avenge himself on the British and he joins the terrorist group headed by Shafi Usman.

The Members of this club are totally dedicated to the cause of freedom. All of them eat curry using the meat of both pig and cow and call themselves united members of this club to emphasize oneness of heart despite their differences in their religious background. The oath of initiation is signed by all members in blood, blood drawn from the little finger of the left hand. Malgonkar writes:

"Their meeting always ended with their partaking of a curry made of equal parts of beef and pork, symbolizing the flouting of the scared Impositions of all the religions of India. Hinduism, Sikhism, Islam. The Hindus and Sikhs venerated the cow; she was the go-matra, the Universal mother, the Muslims abhorred the pig as unclean, unholy animal. After eating a dish mode of pork and beef no Hindu, Muslim or Sikh could practise this religion".[3]

Presently, this terrorist movement also known as Ram and Rahim Club is totally dedicated to the cause of freedom despite their different religious background. 'Jai Ram', answered by 'Jai Rahim' is the secret mode of greeting of this club, Their aim is only to get freedom from the tyrannical British rule: "We are all soldiers, soldiers in the army of liberation. Our aim is to free our motherland, India, from the British and we shall not rest till the victory is won".[4]

Debi-dayal, Shafi Usman, Basu and all other terrorist of Ram and Rahim Club work together unitedly for overthrowing the British rule from India. They are of this opinion that the sun set for us a hundred and fifty years ago when the Britisherspossesed India, the sun died on that day. For us the sun will again rise on the day of declaration of freedom for our country. As ill luck would have, the so united members of the said club become the cause of the destruction of one another. Debi-dayal and Shafi Usman work together but proves cause of destruction for each other. The leader of the terrorist group, Shafi Usman, is the most wanted man in the state. All members of 'Hanuman Physical Culture Club' are united under his leadership. A negative force unites all of them by their common hatred for the British and their desire to throw them out of the country as early as possible.

It is highly strange to note that the curry that is supposed to hold the terrorists together which is committed to a single cuase of freedom also fails to keep them united. The curry is like 'amrit' that the Sikhs take from the same pot in Gurudwara to emphasize unanimity and togetherness for the welfare of the masses but the curry of Ram Rahim club proves looser to keep all terrorists united.

This terrorist group is still free from venom of communalism. Under the able guidance of ShafiUshman, the terrorists indulge in burning of government buildings and

wooden sleepers of railway tracks, "dropping fistfuls of sand into their oil tanks".[5] Surprisingly enough, after announcement of the partition, the communal relations of the club marked by lull, co-operation harmony mutual faith etc. turn into communal discord leading to revenge, violence, destruction on one another. All major Characters of the novel like Basu, Debi-Dayal, GianTalwar, Shafi-Usman, Hafiz Khan, Dhan Singh separated by the barrier of communalism. When a military plane is burnt out by Debi-Dayal and Shafi Usman, the latter escapes from the raid of the police indicating the whereabouts of those who belong to Hindus and Sikh communities. Betrayal of Debi-dayal by Shafi Usman symbolizes the parting ways of two communities. Now, the Muslims begin to consider Hindus, and not the British, their enemies. Hafiz says:

"The Hindus have shown that Hindustan is for Hindus. Now we Mulsim have to look after ourselves ..... A new country apart from India. Yes a new nation. Not apart from India, but a part carved out of India that will be wholly Muslim, 'Pure uncontaminated".[6]

Quite clearly, with the political changes in the country, the latent discord among members of the club surfaces, shopping the fragile bond of amity and co-operation. Its true to say that the parallelism between the activities of the different members of the club and the political scenario at the national level is revealed in the novel. On the one hand are the sheep of Mahatma Gandhi described by Nehru as soldiers in the army of liberation with the weapon of truth and non-violence; on the other hand are revolutionaries who are convinced that there is no country in the world which has been able to slave off foreign rule without resorting to war and violence.

The hiatus between these two levels of perception and action thus unfolds the dialects of protest in India and brings out the contradictions resulting from a situation in which communalism emerges as the most pernicious aberration. We notice how gradually communal poison sours lives of the freedom workers and converts them into communal fanatics. Hafiz nurtures the idea that Hindus are the superior race and that after the British leave India, the Muslims would become second rate citizens because of the overwhelming majority of Hindus. Indeed, their relations had become embittered because of Muslim fears of displacement by the rising of Hindu majority.

In this way, the Hindus and Muslim got divided on communal lines. The muslims wanted their own Islamic state while the Hindus cherished the rule of their community in a democratic India. These vey differences of perceptions and aspirations drew the two communities into two separate camps.

Basu shows the face of his wife to Debi-dayal which is burnt with sulphuric acid filled in an electric bulb, the standard weapon of Hindu-Muslim feud in those days. Basu's wife is symbolic of what has happened to the face of India. In view of Muslim fanaticism,Basu Joins the Hindu Mahasabha with his astute insight he forsees the communal violence that is soon to come:

"The moment the British quit, there will be civil war in the country, a great slaughter. Every city, every village, every bustee, where the two communities live side by side, will be the scene of war. Both sides are preparing for it, the Hindus and the Muslims. The Muslim League and the Hindu Mahasabha are both militant".[7]

Importantly enough, after analysing the historic facts critically, it can be said that religious differences were the main root cause of India's slavery and how the British had learnt to take the fullest advantage of these communal differences. Moonis Raza, quoting Nehru, remarks"

"Communalism is essentially a hunt for favour from a third party-the ruling power".[8] Debi Dayal laments: "The British have succeeded in what they set out to do. Set the Hindus and Muslims at each other's threat. What a lovely sight".[9]What startles me to point out that as soon as the communal hatredness between Hindus-Sikhs and Muslims reached its climax, the communal riots start taking place in all over India Debi-Dayal is astonished to find:"Tens of millions of people had to flee, leaving everything behind: Muslims from India, Hindus and Sikhs from the land that was soon to become Pakistan".[10]

The reckless speed with which the partition was accomplished with scant regard for an orderly transfer of population between the two communities led to a communal holocaust. The mutual acrimony between the Hindus and the Muslims threw the freedom movement into the backyard and the focus shifted to bloodbath sparked off by the mass killing of the members of both the communities. The novelist writes vividly about the tragic death of Dhan Singh, Teck Chand's chauffeur and his family:

"The Buick was stopped beyond the bridge, and Dhan Singh's wife and two children were dragged out. They stoned the children to death in front of their parents and then poured petrol over Dhan Singh's hair and beard and bruned him alive. After that they had taken his wife away".[11]

Malgonkar shows how Hindus and Muslims indulged themselves in general massacre and genocide. He conveys the horror of communalism through the metaphor of 'exodus' Trains packed with Muslim refugees, all them killed, arrived in Pakistan with the message, 'A Gift from India'. In turn Muslims sent back train loads of butchered Sikhs and Hindus with the message: 'A present from Pakistan'. The novelist delineates the account of the attack on non-muslim residents of Harnoli, a rich market town in Mianwali district: "more than half the population were massacred and burnt alive. Children were snatched away from their mother's arms and thrown into the boiling oil. Hundreds of women saved their honour by jumping into wells.... Girls of 8 to 10 years of age

were raped in the presence of their parents. The breasts of women were cut and they were made to walk naked in row of five in the bazars of Harnoli."[12]

Debi Dayal also becomes the victim of communal riots. He runs away with Shafi Usman's favourite mistress, Mumtaz, whom he later marries. On his way to his parents who live in Duriabad, he becomes a dazed spectator of the ghastly violence between the Hindus and the Muslims. He is astonished to find:

"Tens of millions of people had to flee, leaving everything behind, Muslims from India, Hindus and Sikhs from the land that was soon to become Pakistan: two great rivers of humanity flowing in opposite directions along the pituflly inadequate road and railways, Jamming, clashing, colliding head-on, leaving their dead and dying littering the landsacpe".[13]

Against this backdrop, it can be said unhesitatingly that the Novel*A Bend in the Ganges* presents disheartening picture of the trauma of partition. It is the bloody communal 'apportionment' which swept the whole country in an unimaginative tragic figure. The brutal actions which took place between two communities were really shocking. The age old friendship turned into fierce enmity. Consequently, this very fierce enmity still exists between the Independent Hindustan and Pakistan.

It can thus be argued that *A Bend in the Ganges* graphically gives detailed description of social and political forces operating in India from 1930 to the eve of freedom in 1947. It scans the progress of freedom struggle under the influence of Mahatma Gandhi and the acceleration of terrorist activities, the drifting apart of all characters and two major communities.

References:

1. Manohar Malgonkar, *A Bend in the Ganges*. New Delhi: Orient, 1946, P-6.
2. Ibid, P -18.
3. Ibid, P-72.
4. Ibid, P -08.
5. Ibid, P -75.
6. Ibid, P -90.
7. Ibid, P-290.
8. Moonis Raza, *Communalism the Dragon's Teeth, in Towards understanding communalism*, Pramod Kumar, ed., Chandigarh, CRRID, 1990, P-126.
9. *A Bend in the Ganges*, P-289.
10. Ibid P-332.
11. Ibid, P-334.
12. DA Low and Howard Brasted: *Freedom, Trauma and Continuities North India and Independence*, New Delhi, Sage, 1998, P-58.
13. *A Bend in the Ganges* P-332.

Dr. Dinesh Kumar
Associate Professor of English
MNS Govt. College, Bhiwani
#3538, Sector-13, HUDA, Bhiwani
Contact No. : 9416630340
e-mail :dineshsharma1254@gmail.com

Water Management And Sustainable Development In India

Dr. Vineet Bala

Abstract

Water management is important for all living creature it is water which makes our planet unique from the other planets. Water is important for all living creatures; it is one of the components of continuing life on earth. For continuing the everyday life and fulfilling the daily needs we require water. In humans from drinking, cooking, washing to generate power we need water. It is necessity of the time that people learn the importance of water. Population of world has already touched the mark of 8 Billion in November, 2022. U.N predicted that by 2080 we will touch the mark of 9.7 Billion. So, naturally it becomes important for us to manage water and find out different ways to save water and use it sustainably. Water is a core of sustainable development. Sustainable development is use of natural resources in such a way in present time that it will not hamper the needs of the future generation. Water management is 6th sustainable development goal out of 17 goals set by United Nation for all the nations to achieve by 2030. We need to manage water not only for future generation but also in today's time water scarcity becoming one of the serious issues all around the world which need to be addressed. Water management is a process of planning, developing, and managing water in such both aspects of quality and quantity. In this paper author will discuss the issues and challenges we are facing in managing water and securing sustainable development. This paper will also explain the various initiatives taken by government in manage water and achieving sustainable development. The sources taken for the study are Composite Water Management Index 2019, Global water quality index 2018, Water Resources Management in India by Dr. Sharad K jain, National Institute of Hydrology, Roorkee. This paper will look up some challenges in managing water and how water management will contribute to sustainable development and to tackle the issues of water management.

Keyword:-

Water management, Sustainable Development, Conservation, Crisis, Flood, India.

Introduction:-

Water is one of the important essentials for continuing life on earth apart from air, soil, sunlight. It is not only important for human beings but for animals and plants too. It is essential for healthy, stable, and sustainable civilization. Water fulfills many needs of living beings like help in providing food, it used in power generation, essential for maintaining climate, important for sustainability of life on earth. Without water imagination of life cannot be possible and it is the component which makes out earth different from the other planet. On earth water is about 71% of the Earth's surface, and the oceans hold 96.5% of all water. Water is present in different resources and forms on earth. The rest of 3.5% water is present in the form of water vapor, rivers, lakes, icecaps, glaciers and in ground. Fresh water is only 2.5% and 0.9% is present in the form of other saline water. Out of 2.5% of fresh water more than half of it present in the form of Glaciers and ice caps and about one third present in the form of ground water. The water present on surface is about 1%. It is very less in amount as compared to the population of the earth. According to the United Nation on 15 November, 2022 earth population has reached to the mark of 8 Billion. It is not going to stop here it will increase more in future, UN predicted that world will reach to the population of 8.5 billion by 2030 and 9.7 Billion by 2080. So, automatically it becomes necessary for the people to manage water. Water management means we manage the water in terms of quantity and quality. Sustainable development means using of natural resources in such a way that they will be left for future generation to use. We fulfill our needs in present but not compromise the needs of future generation. There are many ways to manage water properly like; afforestation, making more ponds and tanks, rainwater harvesting, using sprinkler and drip irrigation method, awareness for save water, household water treatment and many more. Management of water is one of the many sustainable development goals set up United Nation to achieve by 2030. Sustainable development Goal 6 talks about the water and sanitation. Importance of water was first discussed in 1977 Mar del Plata Conference in Argentina where a action plan was formed on "Community water Supply", after that the importance of water was discussed at various platforms. But there are many challenges and issues also in achieving the management of water. The management of water can be done by getting some real time analysis of human consuming water, reports informing government the use of water in their country, reports which give the analysis of the initiatives taken by government to achieve water management and other options which people can explore to do it efficiently. In context of India it become more necessary to manage water India has the 16% of the world's population and 4% of the total fresh water present on earth. India has been taking many initiative to tackle this and many schemes has been announced by many states and we will discuss the performance of the states in this paper.

Review of Literature:-

Water resources management in India by Dr. Sharad K Jain, National Institute of Hydrology, Roorkee

In this it is said that it is the responsibility of the individuals and communities to explore their options, evaluate themselves and then choose the appropriate one. The paper said that water is the important feature of all 3 pillars of sustainable development- social, economic, environment. The paper discussed that India needed to address and resolve the interstate water dispute so, that they will not hinder India's progress in water management and by that water will also not get wasted in that dispute. India required initiating many measures to ensure that her people will have access to clean water and it will fulfill the needs of the present as well as future generation.

Composite water management index 2019

It is said that establishment of this index is one of the landmark achievement in India's water management. In index it is suggested that the states need to put water in their plans while planning their policies. It is recommended in the index that states must need to focus on the region where there is urgent need to focus on water level. It is needed for states to take a holistic view while planning policies.

Objective:-

This paper deals with the water management and its sustainable development. The objectives it deals with are; firstly, it shows the water management situation in India and its history. Secondly, it shows the relation between water management and sustainable development. Thirdly, it deals with the issues and challenges in managing water and its sustainable development.

Methodology and data source:-

Composite Water Management Index 2019

Global Water Quality Index 2018

Chaddha, D.K.(2006), Development and management of ground water resources of India: an Overview. In Groundwater Modelling and Management, edited by N.C. Ghosh and K.D. Sharma, Capital Publishing Company, New Delhi.

Irrigation water management Principles and practice 2nd edition By Dilip Kumar Majumdar.

From Igor Shiklomanov's chapter "World fresh water resources" in Peter H. Gleick (editor), 1993, Water in crisis: A Guide to the World's Fresh Water Resources.

Discussion:-

This paper will discuss the various challenges and issues faces by us in managing water and achieving sustainable development goals. It will explain and see how India is handling the crisis of water management. The various schemes of states in achieving water management their performance will be discussed and what other steps can be taken in this regard. Water is a basic necessity and no living creature can survive without water. The need to manage water is necessary not only because the availability of the fresh water is way less than the needs of the humans but also to use water in such a way that it will be there for the use of future generation as well. It is water which differentiates our planet from the other planets. Water is the reason for the existence of the life on earth. Now, in some region of the world, we started facing the scarcity of water, in some regions we do not have enough water to carry on our day to day activities. In those regions it is required to manage water. The water can be managed by many ways, by harvesting rain water and ground water, using drip irrigation method, developing water saving habits, afforestation. In India water does not only have impact on sustaining life, in fact India needs water to carry on its economic development. India is experiencing a rapid industrialization, development which makes it more necessary for us. Due to establishment of the industries and urbanization in India the surface water of stream flows is getting polluted due to the drainage of chemical waste from the industries and the ground water in India is dropping at alarming rate. Because of the urbanization more and more land is getting a layer of concrete on it which makes it difficult for rain water to recharge the ground water level in India. In 2019 Chennai made headlines when the civic bodies declared 'day zero' as the city ran out of water and all reservoirs dried up. This news not only created headlines in India but it created international headlines, it comes as a blow to the whole world on their mission of achieving sustainable development goals. According to NITI Aayog in 2018, India will face worst crisis related to water. 21 cities of India will run out of ground water by 2020. According to Composite Water management Index report released on June 14, 2018 nearly 600 million Indians are facing high to extreme water stress here more than 40% annually available surface water is used every year and about 200,000 people dying every year due to inadequate access to safe water. It is predicted that the situation is likely to worsen as the demand for water will exceed the supply by 2050. The NITI Aayog suggests taking immediate action to manage water properly. Report also said that if necessary measures will not take then India will lose 6% in its Gross Domestic Product by 2050. It proves that water is impacting the various sectors of India. Since the ancient time India remains an agrarian country most of the people of our country is depend on agriculture to fulfill their needs. The agriculture always has its great contribution in India's GDP, even in present time agriculture hold a good percentage of GDP. The challenges in front of world related to water management is that there is highly uneven availability of water, pollution of fresh water resources, lack of knowledge regarding water management, uncontrolled use of groundwater, inadequate attention to water conservation, water reuse. Same are the challenges which India has in front of it in managing water. In some part of India we have high availability of water that we even face flood in the monsoon and in some region we face drought. So, this highly uneven availability and lack of water need to be tackled and it can be tackled by connecting those regions by building infrastructure. The major issues and challenges in front of India regarding water management are, Alarming decrease in Ground water level, pollution in rivers, wastage of water,

sowing crops that demand high water in those regions where water is taken out from the ground, increasing urbanization at rapid rate, lack of awareness among people, lack of infrastructure. These are some of the major challenges. Water resources of India are Precipitation, and stream flows. India receives rainfall because of the south west and north-east monsoons. India annually receives 1160mm rainfall. Rainfall is one the sources of fresh water in India. India also has abundant stream flows through which we fulfill our needs. Major stream flows in India are Indus River, Godavari, Ganga - Brahmaputra- Meghna Basin, Narmada, Tapi, Krishna, Ravi, Cauvery and many more. Average flow through all the stream flows in India is around 1953 out of which utilizable flow is 690 utilizable water (km^3 / year). Management of water in India has a long history, since ancient time, India has been practicing water management. The King Karikal Chola, who built the Grand anaicut across river Cauvery. Many historical evidences prove that rulers had effective water management systems in their respective kingdoms. The Pandiya Kings constructed check dams across River Vaigai. India has a long history of conserving water and uses it for other purposes like irrigation, use in household chores. Government can learn and use those methods now in present to manage water successfully. And some of the initiatives have been taken by the state governments to handle this situation. According to the Composite Water Management Index, 2019 some successful schemes of India are; Mukhya Mantri Jal Swavlamban Abhiyan, Rajasthan, through this scheme government try to ensure effective implementation of improved water harvestation and conservation initiatives. In this scheme the government identifies the water resources in villages through the use of technology like use of drones and conserves them. Second successful scheme is Neeru-chettu Programme of Andhra Pradesh, the aim of this scheme is to make Andhra Pradesh a drought proof state and reduce economic inequalities through better water conservation practices. It emphasis on improving irrigation and focuses on ensure water supply in drought prone areas. This programme have enabled irrigation access to nearly 2,10,000 acres of land in the state. Third scheme is from Maharashtra namely Jalyukt Shivar Abhiyan, it was launched in 2015-16 with aim to make Maharashtra drought-free by 2019 and make 5000 villages water scarcity free every year. In this scheme they will widen the streams, construct cement and earthen stop dams, work on nullahs and dig more farm ponds. The government will geo-tag the water bodies and uses a mobile application to enable web-based monitoring. It has focus on increasing the ground water levels of 1.5-2 meters. 4th scheme is from Uttar Pradesh namely Jakhni Village, Bundelkhand, the area of Jakhni village of Banda district in Bundelkhand region was facing the migration because of the water scarcity in the area. People from the village migrating to another area, but over the course of 5 years, villagers including Shri Uma Shankar Pandey, construct farm ponds, restore water bodies, collect and utilize grey water, raise water funds and made that area a water self sufficient from the area facing scarcity. These are some of the schemes which were discussed in that Index which are successful schemes. Other states which are facing water scarcity and looking for water management can take inspiration and ideas from these successful examples. Initiatives which needed in water sector to support sustainable water management in India are; Data Monitoring Program, India has a satisfactory data on surface water and ground water but there is need to get more data on the quality of water. By this we will be able to fulfill the both aspect of water management which is quality and quantity. Water conservation is also a initiative needed to be taken in India, in every field where we use water whether in household, for agriculture, industry, there is always a scope for management of water. In agriculture drip and irrigation method can be used to crops. Regular need to check the ground water level in agriculture land area, the pollution level, use of fertilizers in that area and the system for re using rain water. Increase awareness regarding Grey water among the people. Grey water refers to re use domestic waste water; it excludes the waste water from the toilets. Grey water includes sinks, showers, baths, washing machines and dishwashers. Grey water contains less pathogens than the black water and more easy to treat. Need to develop Interbasin water transfer; in this we transfer water from surplus area to a deficit area. It is an old concept but needed in today's time. India also needs to tackle the climate change due to which we all losing our fresh water resources, in summer many lakes were dried and because of the increasing temperature the demand of water are increasing. India can also explore the desalination of Water, we have a huge coastal line and access to saline water, by investing in the research and development related to desalination of water, India's major problem of water can be addressed and solved. There is more need to focus on afforestation, so that the problem of the climate change can be addressed. These are some of the methods which India can take and focus for managing water properly and can sustain its economy.

Suggestions and Analysis:-

Water management is a hot topic in today's time and to make it more efficient it is necessary to aware people about the water management. India is an agrarian society, and since a long period of time population of India is based on agriculture. Farmers in India uses a lot of water for their agriculture purpose and they are drawing water from ground, which eventually lead to decrease in water level in India. Increased use of fertilizers in agriculture polluting the ground water as well as water of rivers. The rapid development of industry sector also contributing in increasing pollution in rivers and raise a new challenge in front of India. There is need to aware people regarding water conservation, grey water treatment,

planting more tress, adopt more sustainable method of using water, re use of water and do less pollution in water bodies. The various initiatives of the government in states and their scheme are contributing in India's goal of sustainable use of water. More investment in research and development will help India in achieving this. Not only India whole world need to invest in research and development related to water management and come with more efficient ways of using water and re use of water.

Result & Discussion:-

This paper discussed how water is one the essentials of life and why there is need for water management now. It explained the several ways of water management and the areas where the need to be done. It shows the relation between the water management and sustainable development and how water management is part managing water. Water is necessity of all living creatures it is impossible to function without water. Water is part of day to day activities, and many steps are taken by the governments the entire world to manage water sustainably. In the paper various successful schemes by various state government of India has been discussed and other states as well as other countries can take motivation and ideas from those schemes. There is need to aware the population and need to focus more on climate change as well to achieve this. Various new ideas and ways need to be explored, Government need to spend more in the research and development of inventing new ways of water management. The whole world in united way can tackle this problem.

References:-

- Composite Water Management Index 2019
- Global Water Quality Index 2018
- Chaddha, D.K.(2006), Development and management of ground water resources of India: an Overview. In Groundwater Modelling and Management, edited by N.C. Ghosh and K.D. Sharma, Capital Publishing Company, New Delhi.
- Irrigation water management Principles and practice 2nd edition By Dilip Kumar Majumdar.
- From Igor Shiklomanov's chapter "World fresh water resources" in Peter H. Gleick (editor), 1993, Water in crisis: A Guide to the World's Fresh Water Resources.

Dr. Vineet Bala,
Associate Professor in Geography,
Vaish College, Rohtak
Mobile no.:- 9416436132
E-mail:- Vineetbala@gmail.com

Breaking The Silence Of Suffering: The Dark Holds No Terror

Dr. Dinesh Kumar

Abstract

The portrayal of women in Indian English Fiction as the silent sufferer and upholder of the tradition and traditional values of family and society has undergone a tremendous change and is no longer presented as a passive character. The depiction of woman as an individual who rebels against the traditional role is still trying to move out of the caged existence. This assertion of Individual self of woman has been portrayed by many novelists like Kamala Markandaya, Anita Desai, Shobha De, NayantaraSahgal etc.

Actually, in olden days the voice of woman used to go unheared in the patriarchal world. Though the world today is still patriarchal and male ordained, but the women have gained legal as well as social liberty to voice their problems and protest against injustices done to them. The women have come to the forefront to over throw all taboos ordained by male dominated society.

Shashi Deshpande, being author of recent decades, understands the women well and she has tried to project the real picture of the middle class educated woman who is financially Independent. But financial freedom is not enough. Family, marriage and social norms bind her completely. Even the patriarchal laws which guarantee her the same quantum of man-woman relationship in the Indian context is so prominent that even the most brilliant and so called forward male is incapable of looking a woman in terms of equality. That is exactly what Deshpande has tried to show the women, ever after resisting the social taboos, want to submit themselves to their conventional role.

My interest in Shashi Deshpande has prompted me to analyse, the real situation of woman through her novel *'The Dark Holds No Terror'* (1980). The present paper focuses on the picture of the protagonist of the novel sarita (Saru) who tries to rebel against the traditional role of a woman. She exposes her passivity, anxiety and confusion and tries to assert her individual soul as totally independent.

'The Dark Holds No Terror' is the first novel of Shashi Deshpandewhich depicts the portrayal of a woman's struggle against the patriarchal society. The present paper deals about the Journey of a female protagonist through different phases of her life. Childhood, adulthood, youth and how she determines to defy exploitation of man dominated society with high spirit. The heroine is determined to transform the sign of darkness into a mere challenge with her strong 'will' power and Indomitable courage.

The Novel projects the life of Sarita (Saru) who is always neglected and ignored in favour of her brother Dhruva. She suffers from gender discrimination right from her birth. She is unwelcomed in the family because the preference of the parents was for a male child as their first born. She is given no importance, no special love and care even on her birthday. On the contrary, she is shocked to see a kind of jubilation in the family on the birthday of her brother Dhruva. She even remembers the naming day of her brother: "They had named him Dhruva. I can remember, even now vaguely, faintly, a state of joyous excitement that had been this naming day."[1]

Actual matter of the fact is that preference of male child is inherent in our patriarchal society. Many a time, it leads to sibling jealousy, as also evident in the novel. The truth is that the desire for a boy is so inherent in our culture that people can go to any extent to achieve their target. Earlier the difference in their upbringing was too stark but now although there is no real difference in upbringing of a girl and a boy(in urban India), the difference still becomes apparent when she is treated as second rate citizen in her own house. When Saru informs her mother that her brother was drowned, her mother instinctively says why did she not drown in his place? There were instances also when she was reminded by her mother again and again that she has to be married off. She is considered to be inferior sex. The orientation of the society may be noted when Saru'smother taunts her sarcastically:

"You are growing up, she would say. And there was something unpleasant in the way she looked at me, so that I longed to run away, to hide whatever part of me she was starting at.You should be careful now about your behavior. Don't come out in your petticoat like that. Not even when it is only your father who's around"[2]

It is beyond any doubt that Sarita's childhood is full of miseries and full of bitter memories. Her mother makes her feel guilty of her brother's death. Saru had seen her brother Dhruva while drowning in the water. She even tried her best to save her brother but all her endeavours proved futile.

Her mother all the time accuses Sarita of the death of Dhruva. The mother says: "You Killed him. Why didn't you die? Why are you alive, when he is dead?"[3]Sarita says: "I didn't. I didn't know. I never saw him"[4].Sarita is unnecessarily held responsible for the death of Dhruva. She puts herself in dock. The guilt haunts her like a ghost. Dhruva's death results in a rejection of her as a child and this curse of rejection pursues her throughout her life.

The first half of the novel deals with the vicious, prejudiced and cruel attitude of a mother who considers her daughter responsible for her son's death. When Saru expresses her wish to stay with mother all her life, her mother says: "You can't. But your brother Dhruva can stay. He is different. He is a boy".[5]

Add to this, Sarita's parents never bother about her education, casting her a desperate feeling of unwantedness. She feels totally ignored and alienated in her own house. She develops hatredness towards mother who every time tries to create obstacle in her path of progress. When Sarita expresses her desire to study medicine while staying at hostel in Mumbai. Sarita's mother turns down the proposal saying "Saru is a girl".[6] But Saru decides to be a doctor and says to mother. "You don't want me to have anything. You don't even want me to live".[7] Thus, her final decision to join the medical college is an act of rebellion which is a step towards liberation from a traditional existence to modern livelihood.

What is more, the first experience of menstruation proves horrible for Sarita. During these three/four days, the mother never allows Sarita to enter the kitchen, puja-room. She is even forced to sleep on straw-mat. A separate plate is provided to her to make her excluded completely. While studying medicine, the hostel life for her proves 'rebirth' into a totally different world where she does not have to feel excluded for those three/four days. In this way, she accepts her womanhood: "Things fell, with a miraculous exact, exactness, into place. I was a female. I was born that way, that was the way my body had to be, those were the things that had to happen to me. And that was that"[8]. Shashi Deshpande focuses on Saru's awareness of her predicament and her wanting to have an independent social image. Simon de Beauvoir in 'The Second Sex' Observes rightly: "One is not born, but rather becomes a woman. It is civilization as a whole that produces this creature which is described as feminine."[9]

Her burning ambition to study medicine is rewarded when she gets a first class in the finals. As her resentment and hatred grow up against her mother. She leaves home and seeks success in Medical college. There she falls in love with a college mate Manohar who is underpaid college teacher and she marries him against her parent's wishes. Her mother being an old, traditional, orthodox woman, does not want her to get married to a person who is from a lower caste. When she comes to know that her daughter is going to marry a man of her choice, the first question that comes out from her is: "What caste is he| I don't know. A Brahmin, of course, not, then cruelly..... his father keep a cycle Shop".[10] In this way, Saru revolts against her parents and marries to Manohar (Manu). She considers him an ideal romantic hero who has come to rescue her from insecure and loveless existence. She finds him recognizing her worth and an individual and admiring the qualities she possesses. Now Saru's desire to escape feminity disappears and she sees herself humbly adoring, worshipping and being given the father lover kind of love.

The first phase of her married life is upto her utmost satisfaction. But slowly & steadily, the social acceptance and recognition, she gains as a doctor, Manu feels irritated when the people greet her and ignore him. He says out of irritation: "I am sick of this place. Let's get out of here soon".[11] He suffers from inferiority complex and psychological upheavalsSarurealises that he does not love her the way he used to earlier. Saru realizes it: " Now I know that it was there it began........... this terrible thing that has destroyed our marriage."[12].

Quite clearly, Shashi Deshpande wants to project that how emancipation and success for a wife in patriarchal Indian society can destroy happiness of a married life. The social acceptance and recognition she gains as a doctor, her husband Manu fails to tolerate people greeting her and ignoring him. The novelist opines:

"When we walked out of the room, there were nods and smiles, murmured greetings and namastaes. But they were all for me There was nothing for him. He was almost totally ignored. And so the esteem withwhich I was surrounded made me inches taller. But perhaps the same thing that made me inches taller, made him inches shorter".[13]

The alarming fact is that the marital discord starts erupting due to Saru's achieved social position and the ascribed position of Manohar. The financial ascendance of Sarita makes Manu inferior being underpaid college teacher. The only way to regain his superiority is through sexual assault upon Sarita. The loving husband during day turns into a rapist at night. Sarita is now 'two-in-one woman' who is the day-time is a successful doctor and at night 'terrified trapped animal' in the hands of her husband. Saru feels so much frightened and humiliated that she even does not speak to him: "And each time it happens and I don't speak, I put another brick on the wall of silence between us. May be one day, I will be walled alive within it and die a slow painful death"[14]. For the world, she is a confident and competent doctor but in reality she is a scared and tortured woman.

Sarita is now so frustrated so depressed and thus finally, decides to go back to her parental house in search of solitude and peace. Outwardly, the reason to come back to her home after fifteen years is to see and serve her ailing father but in reality she is unable to bear the sexual aggression of her husband. She confesses her mental trauma before her father. She now introspects all episodes minutely and ultimately decides to confront the situation courageously. She decides to assert herself and fight her own battle lonely.She has now a quest to explore herself in every crisis of life. She introspects philosophically and concludes that escapism is a ridiculous idea. This is obviously the rise of 'new woman'who now decides to go to her husband's house to confront the situation boldly but judiciously. The novelist, Shashi Deshpande,succeeds in transforming her from a wife to a caretaking philanthropist as she belongs to a noble profession and she is answerable to her patients too.

It can be said unhesitatingly that the novelist explores powerfully the psychological problem of a career

woman and discusses it artistically without crossing the barriers of art. The novel also transcends feminine constraints and raises issues which the human beings in general encounter in their lives. Deshpande's objective is to show that one should take refuge in the self which means here that woman should assert and ascertain herself so that she can overcome or thrash the suppressing forces.

References:

1. Shashi Deshpande, *'The Dark Holds No Terror,* New Delhi: Penguin Books, 1989, P-152.
2. MedakeineBiardear Ed. *'The Anthology of Civilization',* New Delhi: Oxford University Press, 1994, P-46.
3. *'The Dark Holds No Terror'*, 191
4. Ibid, 197
5. Ibid, 40
6. Ibid, 143
7. Ibid, 142
8. Ibid, 143
9. Simon de Beauvoir: *The Second Sex Trans and ed.* by HM Parshley, Pan books, London 1989, P-288.
10. *'The Dark Holds No Terror*, 87
11. IbidP-37.
12. Ibid – 37
13. Ibid - 36
14. Ibid-96
15. Vijay Sheshadri: *Women in the novels of Shashi Deshpande and Margaret Laurence*, New Delhi: Creative Books, 2003.
16. Miralini, Sebastian: *The Novels of Shashi Deshpande in Post-Colonial Argument*. New Delhi: Prestige Books, 2000.

Dr. Dinesh Kumar
Associate Professor of English
MNS Govt. College, Bhiwani
#3538, Sector-13, HUDA, Bhiwani
Contact No. : 9416630340
e-mail : dineshsharma1254@gmail.com

Educational progression and Sustainable Development in India

Dr. Vineet Bala

Abstract

Education is a basic pillar of any society, where the people of the country is educated that country flourishes at a rapid rate in any every aspect whether it is economic, social, and environmental. It is education which transforms the world and took out ancestors from caves to a generation having all the facilities at their door steps. The development of education does not happen overnight it took a lot of time and learning from our past mistakes. In ancient time people get education according to their need and there was a difference in the education of male and female. Male mostly get the education related to defense, warfare, politics and economics. Female mostly get the education related to house chores, some domestic skills and this trend was same all around the world for a long period of time. But with the passage of time, people understand the importance of education and started to give education to girls also. This took time and it develops with it. There are so many others development that happen over a period of time in education. Education is one of the sustainable development goals too. Sustainable development is a development in which we meet the needs of the present without compromising the needs of the future generation. Education is 4th sustainable development goal out of the 17 sustainable development goals set by United Nation to achieve by all the nations of the world by the year 2030. This paper will discuss and present the development of education over a period of time and it will take India as study area of it. It will explain how development of education over a period of time helps in achieving sustainable development. It will explain the impact of educational progression in different aspects whether it is social, economical, and environmental. This paper concludes the ways how the world can become a better place with the development of education and what other steps needed to be taken by us to improve education and how it could reach to every stature of society.

Keywords:- Education, Sustainable development goals, India, literacy, Education Policy, Education System.

Introduction:-

This paper deals with the development of education and its role in sustainable development. It will also explain the effect of development of education on different aspects. Education is one of the 17 sustainable development goals set by The United Nation to achieve by the world by 2030. Education is the basis of the sustainable development. In this paper the development of education is discussed in the context of India, how education is developed in India over a period of time, its effects on various aspects, how it will help in achieving sustainable development. During the time of Independence the literacy rate in India was very low. After that the various commissions were formed to focus on the problems in education system and suggest various ways to improve education sector of India. India also brought National education policy to improve the education system in India. During the Independence time the literacy rate among men and women also has high difference, but with the passage of time the difference between the literacy rate in men and women is decreasing. With the development of Education in India it has its effect on various aspects like economic, social, and environmental. With the increasing literacy rate it contribute in the increase in the economic status of India, it helped in increasing the GDP of India, India was mainly dependent on the agriculture when it got independence. But the developments in education service sector also start to increase, and contribute in India's GDP. It also has its affect on society; equality among men and women is also increased with the development of education. It helped in empowering women in society. Its development also affects the environment, with the education people become more aware for their surrounding and also there is a lot of development in saving environment. More development of education can be done by making it available to each and everyone in the society. More technical and practical knowledge is needed to provide the children. With the practical knowledge the scientific temperament of the children will increase and they will invent various ways to contribute in achieving sustainable development.

Review of Literature:-

Development of Elementary Education in Post-Independence India by Nivedita Bhattacharyya, Assistant Professor of Economics, siliguri Bed. College

This paper discuss about the development in elementary education over a period of time. It explains the various steps taken by the Government to improve education in India. It shows the increasing enrolment rate of students at primary level education. The rate of girl enrolling in schools is higher than boys. Over the period of time the rate of drop also decreased. It discuss about the lack of clarity of government, community and parents about the children's future. It tells us that rural education will remain undermined unless efforts focused on rural children education. It tells us that till the both capital (physical and social) will not addressed the livelihood and economic development of India will not be achievable.

Protection the future: The role of school education in sustainable development _ an indian case study by Colin Bangay, British Council, UK

This paper tried to explore the challenge to Global sustainable development through insight into one education initiative by India. It explains the role of education in order to deliver the

maximum sustainability in sustainable development goals. It suggests focusing on where we are and where we want to be. This paper discussed about the type of education needed to give the children to achieve the sustainable development goals. In this paper the different ways of providing quality education were explored, in order to achieve the goals.

Objective:-

This paper shed light on many aspects of educational progression and has many objectives with which it deals, but this paper mainly deals with 2 objectives.

First, it deals with objective of how the education progress in India, and its history.

Secondly, it deals with the relationship with education progression and sustainable development.

Discussion:-

"Education is key to the global integrated framework of sustainable development goals. Education is at the heart of our efforts both to adapt to change and to transform the world within which we live. A quality basic education is the necessary foundation for learning throughout life in a complex and rapidly changing world"(Irina Bokova, Director General of The United Nations Educational, Scientific and Cultural Organization (UNESCO), in UNESCO 2015:3)

Education is the bases of the sustainable development goals, not just the education; the quality education is also important for achieving sustainable development. Being education is the important pillar of the sustainable development, there will be so many developments in education too over a period of time. Sustainable development means development of the society in such a way that we use our present natural resources in such a way that it will fulfill our today's requirement without compromise the requirements of the future generation. Sustainable development focuses on the holistic development, and on finding different ways of it. The United Nations in the year 2015 announces 17 sustainable developments to be achieved by the world by the year 2030. All goals focus on the holistic development of society, to make their living better, but all these goals are connected to education. Education plays an important role in achieving all the other sustainable development goals because it is the basis of all the other goals, education will help in management of water, found ways of eliminating poverty from the society, finding ways of tackling climate change, save environment, bringing gender equality, providing quality education to everyone all these goals require education as their base, so it can be said that education is the basis of the sustainable development. In this paper it will be discuss how the education is developed over a period of time and the impact of the development of education in different aspect. This paper will explain the development of education and its impact in the context of India.

Education and its development in India

Before the arrival of the Britishers in India, the education in India was given at religious places, and from there children acquire their knowledge. Those religious places were not only the place for worship but also a place of acquiring knowledge. When the Britishers arrived in India they rejected the Indian way of giving knowledge and their way of providing knowledge was imposed on Indians. During the British period the literacy rate in India fell to its lowest point, people were not educated and had not any formal education. When the Britishers leave India, and the people of India got independence, the literacy rate was very low. Many schemes and policies were run by the then Government to increase the literacy rate of India.

Various Schemes by Government to increase literacy rate

The first commission after the independence of India was University Education Commission (1948), this commission was under the chairmanship of Dr. S. Radhakrishnan, this commission needs to make a report on the status of the universities in India and to give suggestions to improve the quality of universities in India. This commission aimed to create universities which provide knowledge and wisdom for a comprehensive development of personalities. It is proposed in the report by the commission is to re-construct of education system in tune with the vision of the Indian education.

Secondary Education Commission (1952)

It was set up under the chairmanship of Dr. A. Lakshmanswami Mudaliar in 1952. The report of this commission tells the education problems of India, it suggested diversifying the high school courses and establishing multipurpose high schools. It also recommended setting up technical schools. In the development of secondary education in India, the role of this commission is very important.

Indian education commission (1964-66)

This commission was set up under the Chairmanship of D.S. Kothari. Popularly known as Kothari commission. The mission of this commission is to advice the government on the evolution of National system of education, and in accordance with the recommendation of the commission, the National Education Policy of 1968 was formulated. This commission suggested the main three aspects a) Internal transformation b) Qualitative improvement and c) Expansion of educational facilities.

National Policy on Education (1968)

This policy was brought on the recommendation of the Kothari Commission. This education policy suggested to compulsory the education for children between the ages of 6 to 14 years. It also recommended giving importance to regional languages and they needed to be encouraged, and the education at secondary level should be in regional language. It also recommended making English the medium of instruction in schools and Hindi to be the national language. It also suggested that Government should promote the Sanskrit because it is the symbol of India's cultural heritage. It is suggested by the policy that Government should spend 6% of its income on education.

This national policy on education faced criticism, it was said that it would be difficult for the students to learn 3 languages.

National Policy on Education (1986)

The main objective of this policy was to provide education to all section of the society, its main focus on the schedule castes, schedule tribe and other backward classes and women. To provide education to them they provide fellowship. It was more focused on providing primary education. It also focused on establishment of Open university by setting up Indira Gandhi National Open University (IGNOU) at Delhi. It also focused on the Information technology in education.

Right to education Act 2009

This act emphasis on the free and compulsory education for the children of age of group 6 to 14 years. This act said that private schools need to reserve 25% seats for the children of disadvantage group. The responsibility of implementing this act on the central, state and local governmental bodies. Central government will bears the 70 percent of the expenses and state government will bear the 30% of the expenses. Beside all the efforts by central and state government education was not reaching to all the sections of the society children after studying at elite schools dropping out after completing their education because of the lack of money. The management and schools find the way to bypass the schemes and take the help of the corruption in this.

National Policy on education (2020)

This education policy was focusing on the early childhood care and education. It suggested that the education should be holistic, integrated, enjoyable and engaging. The new structure was followed in it which is 5+3+3+4. It will break down the present schooling system. It is also focusing on the 3 language policy, and focusing on mother tongue or local language. It suggests focusing on introducing technology at early classes to children, so that they will keep up with the new technologies.

Impact of education on different aspects

These are the development in the education in India since its independence to present. The education has its impact on the different aspect of life too. Its impact is on the economy, society and environment. If we take the economy, since independence India was a agrarian economy, in present too our most of the population is dependent on agriculture, but with the development in education the GDP of India is increased and the standard of living in India has also increased. The service sector contribution in GDP has also increased. In terms of society, the impact of education is huge, the gap between the literacy of men and women was also decreased, along with that the gender quality has increased. The women came out of their houses and started earning, education make women strong, and financially independent. Development in education empowers the women of our society. In terms of environment, with the development of education it can be noticed that the new and more efficient way to save environment was developed. People become more aware regarding the saving of environment and not polluting the surrounding.

Role of education in sustainable development

Education has its important role in achieving sustainable development. Education promotes and encourages sustainable society. Education teaches people to live in harmony with nature. Through education people can be aware for sustainable development. Education develops knowledge about the environment, which make people more responsible towards sustainable development.

Through the development of education the other sustainable development goals can also be achieved as it is the basis of all the sustainable development goals, whether it is eradicating poverty, fighting climate change, bring gender quality and research and development. Education and sustainable development goes hand in hand. With the proper education setting up a society where everyone is happy and has a livelihood is possible. More efforts can be made to develop education more, still in India there is a gap between the literacy rate of men and women and it can be decrease by spreading more awareness, providing fellowships. India need to focus more on practical knowledge than theoretical knowledge, practical knowledge will help to develop the scientific temperament of the children.

Methodology and data source:-

In this paper the secondary data is used for research. The various reports and papers published on this topic are used to for the research.

Data source:-

- Desai, Vaman (2012), Introduction of literacy in India economic growth.
- Jayant Pandurang Nayaka, Sye Nurullah (1974). A student' history of Educational (1800-1973).
- Wade, R. and Parker, J. (2008) Educating for a sustainable world. Paris:UNESCO.
- Sustainable Development begins with education: How education can contribute to the proposed post-2015.
- Government of India (1992), National Policy of Education 1986 (with modification undertaken in 1992) (New Delhi: Ministry of Education.)
- Government of India (2007). Selected Educational Statistics 2005-06, New Delhi.
- Dreze, Jean and Amartya Sen (2002), India: Development and Participation, Oxford University Press, New Delhi.
- Aggarwal, J.C. 1993. Landmarks in the History of Modern Indian Education. Vikas Publishing House Pvt. Ltd. New Delhi.
- Chaube, S.P. 1988. History and Problems of Indian Education. Vinod Pustak Mandir. Agra.
- Keay, F.E. 1972. A History of Education in India. Oxford University Press, New Delhi.
- Chapter-5 of Book The role education in the sustainable development agenda: Empowering a learning society for sustainability through quality education by R. Didham, P.

Ofei-Many Published in 2015.

uggestion and Analysis:-

t paper showed the development of education in India over a period of time. The various commission and policies were discussed in this paper. It is observed in the paper that there is still a lot of improvement in the education sectorit can be achieved by bringing more policies focused on providing quality education. There is need to do more focus on technical education, and need to develop skill among the children, for that India bring New education Policy 2020. Need to improve the ifrastructure of the schools and facilities. There is need to be appointing more teachers and way of teaching needs to be more creative. With these efforts the education can be more developed in India and it will match the international standard of educatin.

Result & Discussion:-

his paper presents the contribution of education in sustainable development and its impact on various aspects. It results that the education is the basis of all the other sustainable development goals, without the help of education all the goals will be dfficult to achieve. Education itself is one of the sustainable development goals. The world needs to focus on the quality of the education for their people. Education which will aware the people and develop their mind to help world to achieve the sustainale development. In context of India, India need to spend more of its GDP on education sector, still there is need to establish more school and it is necessary to mandate education for children. Along with the mandatory education, quality education is needd. It all can be achieved when India will invest more in its education sector. By the development of quality education in India it will impact the growth of India, help India to be a global power and make India which lead the world.

References:-

● Desai, Vaman (2012), Introduction of literacy in India economic growth.

● Jayant Pandurang Nayaka, Syed urullah (1974). A student' history of Educational (1800-1973).

● Wade, R. and Parker, J. (2008) Educating for a sustainable world. Paris:UNESCO.

● Sustainable Development begins with education: How education can contribute to the proposed post-2015.

● Government of India (1992), National Policy of Education 1986 (with modification undertaken in 1992) (New Delhi: Ministry of Education.)

● Government of India (2007). Selected Educational Statistics 2005-06, New Delhi.

● Dreze, Jean and Amartya Sen (2002), India: Development and Participation, Oxford University Press, New Delhi.

● Aggarwal, J.C. 1993. Landmarks in the History of Modern Indian Education. Vikas Publishing House Pvt. Ltd. New Delhi.

● Chaube, S.P. 1988. History and Problems of Indian Education. Vinod Pustak Mandir. Agra.

● Keay, F.E. 1972. A History of Education in India. Oxford University Press, New Delhi.

● Chapter-5 of Book The role education in the sustainable development agenda: Empowering a learning society for sustainability through quality education by R. Didham, P. Ofei-Many Published in 2015.

Dr. Vineet Bala,
Associate Professor in Geography,
Vaish College, Rohtak
Mobile no.:- 9416436132
E-mail:- Vineetbala@gmail.com

Search For Self Identity In Shobha De's Second Thoughts

Dr. Dinesh Kumar

Abstract

The Indian English novel has made a great strides right since its genesis. Beginning with the writings of literary stalwarts like Rabindranath Tagore, Bankim Chandra Chatterjee, it has pedaled fast down the decades to grow by leaps and bounds in terms of bulk, Variety and maturity so much so that it has established a creditable image even in the western world. What is more, the Indian novel in English in pre-independence period mostly remained male dominated for a very few women novelists emerged at the end of the nineteenth century. But during the post-Independence period there appeared a number of women writers on the literary scene.

The emergence of many women novelists live NayantaraSahlgal, Shashi Deshpande, Kamala Das, Anita Desai, Kamala Markandaya, NamitaGokhale, Shobha de etc. have focused their attention on feminine issues. They make woman as the focal point of the Indian English novel bringing man on the periphery. These women novelists have emphasized how the new woman of today has started questioning the age old opression. This very woman tries to emerge strong and independent grasping the freedom now to lead the life she desires and refuses to be suppressed or dominated by patriarchal society.

Shobha De is an eminent Indian novelist. Popularly acclaimed as the *'Queen of Indian Fiction'*. She staged a notable appearance on the Indian Literary scene in 1989 with her best seller *Socialite Evening*. followed by her other interesting and popular novels incidentally all beginning with 'S' – *Starry Nights*, *Sisters*, *Strong Obsession*, *SulturyDays*, *Shapshots*, *Second Thoughts* etc. In all her novels, she has raised the issues pertaining to new woman of India. We see in her novels the categorical emergence of the new woman since she is inclined to defy the moral code prescribed by the orthodoxy and institutions governed and controlled by the patriarchal social system. Her new woman has her own notions about marriage, sex, values of life, economic independence, morality and power sharing in her own independent way and certainly not in tune with the prescriptions as laid down by the patriarchal system. Well aware of her sex potential, De's woman is capable enough to dictate her own terms in various affairs of life.

Almost all novels of shobha De are considered as the 'Protest Novels' against the male dominated Indian society where women are denied the freedom of expression and the freedom of fulfilling their own dreams. A woman, like a man, is born to be free but in reality everywhere she is controlled by man-made norms victimizing her in many ways. The same phenomenon is depicted in portrayal of the protagonist Maya in the novel *'Second Thoughts'* wherein she becomes the victim of marital disharmony.

Maya, the central character of the novel a textile designer from Calcutta, is married to Ranjan Malik, bank Executive of Bombay. But this arranged marriage is doomed to failure because of the entirely different attitude of life. She is fascinated by the glamour of metropolitan city, Bombay "I was looking grate. And you know why? I felt great being in Bombay".[1] But all her expectations and Imaginations collapse when she enters into the reality of married life. She is forced to follow the traditional pattern of life led by woman in India. Even though, her mind wishes to flyover but her wings were tied out within the new environment. In response to her wish to go out on weekends in Bombay, Ranjan says:

> "Sometimes, you talk like such a kid. Life isn't a picnic, you know. And you aren't in Bombay on holiday. As a married woman, you have to learn to deal with responsibilities."[2]

Add to this, Maya is asked to live inside the four walls of the house the whole day without a company. She is not allowed even to talk to neighbours. She feels suffocated in her husbands house. "But... but I have nobody else to talk all day. I am so lonely."[3]Ranjan never cares for Maya's loneliness. His mother is everything for him. Maya being an educated girl always wishes to get a job in metropolitan city like Bombay. When she presents this before Ranjan, he speaks unfavourably and astonishes: "A Job? in Bombay".[4]

In this way we notice that Ranjan doesn't even make a slight attempt to give an importance to Maya's desires. In Indian tradition, marriage is glorified as a holy union of man and woman. It is the turning point and the beginning of a new way of life. But in case of Maya, it is noted that the ides of marriage is shattered because the husband considers her puppet. She suffers from marital disharmony because Ranjan doesn't allow her to take up even a part time Job. He again and again reminds her of tradition. It is because of this traditional attitude and feeling of superiority. Maya finds herself totally ignored and neglected in this meaningless life. But Ranjan never expects that this marginalization will turn her into liberated and emancipated.

Sadly, enough Maya now suffers from marital disharmony. Her husband Ranjan considers her mere object. Its because of Ranjan's feeling of superiority, and his traditional attitude, Maya feels herself trapped in a family whom she discovers as rigidly conservative, indifferent to her desire and not respecting her feelings.She remembers how Ranjanmade his effort to save his money by cutting the freedom of Maya. The novelist writes:

> "Ranjan, of course, had locked the out station phone facility before leaving, saying you won't be needing it. .... I hear there is a lot of misuse there days. And God knows our bills are high enough".[5]

As a feminist writer, ShobhaDe's novels raise a strong protest against the male dominated Indian society where women are denied the freedom to act and live according to their will. Ranjan suggests Maya that she should live at home and if she wants to go anywhere, ask his mother to accompany her. But Maya protests for this proposal. All these irritations make Maya enough bold to crush the traditional outer covering and come out as a modern lady.

It is beyond an iota of suspicion that Maya wants to be an ideal wife but she finds herself trapped in her arranged marriage to a man who proves to be careless, conservative and completely indifferent to her desires, feelings & emotions. When he fails to fulfil her fantasies, she becomes frustrated & depressed. She begins to experience great lonliness in Mumbai. Her emotional, physical and psychological cravings are answered by her neighbourupto her utmost satisfaction.

In this patriarchal society, it is the man who shouts, hurls, abuses, beats and it is the woman who only listens, tolerates, remains passive. But shobhaDe's Maya is different. She is 'new woman' who resists, and fights back. She decides to give second thought of fulfilling her desires by falling in love with Nikhil, a college going neighbour. Now, Conversation within Nikhil is quite relaxing for Maya. She starts ruminating this conversation in her sleepless nights. She starts liking Nikhil so much that she indulges in sexual affair with him. She feels herself the happiest woman when Nikhil comments: "You look like a beautiful garden today"[6] in a parrot green sari with a narrow black woven border. Surprisingly, traditional Indian wife like Maya does dare to indulge in love and sex to another man. However, she has crossed this limit because of the attainment of superiority over her by Ranjan and the love and care for which she was hungry now getting the same from the world of Nikhil. Interestingly, she mentions about her outing with Nikhil:

"I am not sorry. I have no regrets. And if you were to ask me to come out with you again. I probably would. This time with less guilt."[7]

In this way, she finds every thing in Nikhil. She says:

"He was there in my thoughts ..... I awoke with him in my mind's eye. I went to bed thinking of him. Each and every action of mine, even in the nursing home involved Nikhil in some way."[8]

While analysing the character of Maya critically, we find that she is now rebelious and betryaingRanjan by maintaining illegal physical relationship with Nikhil without knowing the fact that he is exploiting and misusing her. She does try to escape from her real life with Ranjan by entering into the world of fantasy with Nikhil putting the mask of a modern woman.

Slowly but steadily, Maya develops a strong affection and fatuation for Nikhil. She keeps waiting eagerly the phone calls of Nikhil. When he calls her, she first uses to put her wife voice but soon we see her finding difficulty to stop her enthusiasm and excitement while talking with him. When maid's boy interrupts their conversation. Maya is too impatient that she somehow wants to get rid of that boy: "Quoting textual lines: "My mind wasn't on the boy's words. My entire being was focussed on the phone and the thoughts that Nikhil would hang up".[9]

But Nikhil is proved as experienced &shrewedBombayite. He exploits this innocent Maya. The reality comes before Maya when his mother informs her about Nikhil's marriage with another girl. All dreams of Maya break down. She feels shattered and shocked. She realizes that "there is no escape route in a tightly organized tradition bound society".[10] She accepts Ranjan again and rejoins him as he is. Maya is a new woman but does not dare third time to go into the world of fantasy and dreams like a traditional Indian woman, She accepts Ranjan.

Critically, Maya, the protagonist, of this novel fails to understand that her sexual freedom is being used and abused by the men like Nikhil. Actually, whenever women, whether circumstantially or ambitiously, disregard morality, they cannot escape disaster and consequent suffering. Although Shobha De has presented women who indulge in free sex, live fashionable and healthy life, yet she in no way seems to support the way of life adopted by these so called modern women. On the contrary, she shows her contempt and dislike for their unethical and socially unacceptable bahviour.

Thus, the novel presents the fusion of tradition and modernity. It represents new Indian Woman's voice of Maya who is in search of self Indentity, seeking liberation in all walks of life but ultimately accepts Ranjan in the traditional Image of Indian wife. She can be portrayed as the very example of the modern woman as she shows courage enough to come out of the traditional norms even if it is by betraying her husband but ultimately she surrenders before Ranjan. Because she has no way but to stick the monotonous

marital relationship with Ranjan. The romance and the bliss in her life is over and she remains a lonely lady forever. The novel not only focuses on the hollowness of Indian marriage but also the hypocrisy and deception in extra marital relationship which cannot be an option to marriage.

Conclusively, the paper can be summarized that the novel is truthful study of contemporary woman's difficulty, plight and confusion in Indian metropolitan society where she is caught in complications and webs of traditional and modern life. The novelist has brilliantly presented the plight of the protagonist in a very skillful language and maneuvering style. She demonstrates realistically that how women in contemporary time are struggling to adjust in a novice set up of matrimony, how they are facing challenges everyday, how their sufferings are breaking them internally which lead them to face various emotional, physical, psychological and mental problems. In the end, the novelist wants to convey that the modern age is the age of transition where there is a call for new women's freedom but still the old patriarchal system is dominant and woman is in search for her identity and she is forced to surrender before the old existing social system as Maya, the heroine has no option but to surrender herself.

References:

1. Shobha De, *'Second Thoughts,* New Delhi: Penguin India, 1996, P-119.
2. Ibid, 37-38
3. Ibid, 41
4. Ibid, 39
5. Ibid, 226
6. Ibid, 63
7. Ibid, 257
8. Ibid, 392
9. Ibid, 147
10. Ibid, 31
11. G.D. Barche: *The fiction of Shobha De JaydipsinghDodiya, ed.*New Delhi, Prestige, 2000
12. Bhaskar Shukla, *Feminism and Female Writers,* Book Enclave, 2007
13. ShantaKrishnaswamy: *The woman in Indian Fiction in English,* New Delhi, Ashish Publishing House, 1984
14. Sonia Ningthoujam: *Traditional Woman versus Modern Woman: A Study of ShobhaDe's Novel.* New Delhi, Prestige Books, 2012.

Dr. Dinesh Kumar

Associate Professor of English

MNS Govt. College, Bhiwani

#3538, Sector-13, HUDA, Bhiwani

Contact No. : 9416630340

e-mail : dineshsharma1254@gmail.com

Psychosocial Impact of Covid-19 Pandemic on Women's Mental State

Ankita

Abstract

The influence of psychosocial factors on the mental state of women is one among the foremost mentioned theme in varied psychological & clinical studies. With the happening of the pandemic, it's currently become even additional vital to know the long impacts of the coronavirus on our body, brain, and mind. Folks with discontinuous sleep as an indicator of the pandemic suffered from insomnia, depression, irritability, domestic violence, stress, and different negative mental state symptoms. Covid-19 pandemic has altered family dynamics. Additional screen time, unfinished routines for operating girls dissolving boundaries between work and personal life altered habits &wedged mental state. The human brain is evolved to measure in social groups & wired for social interactions. Epidemiological studies show alternation in brain chemistry thanks to social isolation, discrimination, financial losses, disrupted sleep & routines, intimate partner's mental state, etc. Pandemic has changed the loving relationships and people are impacted by the adversity of psychosocial factors. Psychological strengths are mostly keen about social determinants like parenting vogue in childhood & emotional attachment, social support, respect, engagement at geographic point, society & family, self-regulation & behavior dominant, and collective effectuality are absolutely related to shallowness ultimately enhances psychological strengths. Adverse aspects of pandemics like job losses or earnings cuts crystal rectifier to economic abuse, gender discrimination, sexual abuse, household workload, the expectation of family members and responsibilities impacted women's mental state negatively. Women having high education, knowledge, skills, and abilities have managed this adversity up to some extent, but moderate competent women were impacted more & faced negative mental health symptoms. Childhood shallowness& high psychological feature competencies provide psychological strength to cope & manage mental state problems from routine stress to the natural disaster-caused negativeimpacts.

Key Words: Mental State, Psychological, Social, Women, Depression, Stress, Shallowness, pandemic, covid-19

Introduction: The World Health Organization (WHO) counseled social isolation as Covid-19 emerged and therefore the Government of India obligatory internment within the first wave. However, within the second wave, the state governmentsobligatory lockdowns as containment measures at the native level. In each things, homestay resulting in infodemic through media, social media & different means that affected the mental state. Within the homestayers population, women suffered from mental state problems accidentally caused by members of the family, job losses, house employment, etc in line with the United Nations Agency, mental state may be a state of well-being within which the individual realizes his or her skills, will deal with the conventional stresses of life, will work fruitfully and productively, and may build a contribution to his or her community. The present study focuses on the impact of assorted psychosocial factors like emotional support, expectations, respect, engagement, economic abuse, behavior management, statutory offence, collective effectuality, discrimination or exclusion, etc. A World study reveals that one woman out of three experience intimate partner violence, that is economic prices vary from1- 4 % of GGDP (García-Moreno et al. 2015). Malhotra S & Shah R. (2015) also examinedthat? married women in India experience domestic violence. Emotional factors like attachment & support are absolutely related to psychological strength that helps in stress & depression brick. Multiple studies conducted on social violence (Antai, D., Oke, A.,Braithwaite, P., & Lopez, G. B. (2014). Natural disasters or in our case, the pandemic makes the pre-existing inequalities or disruptions worse wherever women are disproportionately used psychologically thanks to varied social factors like restricted social support, physical confinements, unemployment, state, economic disruption, and inadequacy of basic provisions (Gearhart S et al.2018)Personal management or dominant one's own behaviors are something that is exercised by people that are high on shallowness, conscious & compassionate. May be there's a desire that this omnipresence ought to return, however what quantity it might be believed that someone can management the event or his/her behavior on events that build things uncontrollable. Attributable to the social group context, we have tendencyto still board a patriarchal society wherever men board dominance and women are simply at the receiving finish all told aspects together with economic abuse &monetary losses. Intimate partner violence has harmful effects on mental state& well-being. A study conducted by Amanda M.Stylianou (2018) showed that economic abuse was unambiguously related to negative mentalstate. Gender discrimination and poor mental state are closely connected. Various clinicalstudies discovered that women United Nations agency reportable sex discrimination, statutory state together with depression over succeeding 3-4 years. This study focuses on the impact of psychological feature competence and therefore the ability to manage negative impacts of psychosocial factors caused by natural disasters on women's mental state. Women being the receiving finish baby-faced additional negative health impacts throughout each covid waves.

Objectives of the Study:

Multiple studies show the association between pandemic and mental state. Emotional well-being and pandemic correlate except for learning the role of psychological strength and social factors in managing stress, depression related problems,

we have a tendency to had to review gender variations. The present analysis in additionally a step to review the impact of disturbance in psychological & social factors thanks to covid-19, particularly that specialize in the mental state of women. The study focuses on the impact of social factors on psychological strengths, and therefore the effectiveness of psychological strength in managing stress & depression to boot, the study focuses on the correlation between direct or indirect impact of academic standing, knowledge, skills, abilities and psychological feature competencies on managing negative mental state problems caused by psychosocial factors that emerged thanks to covid-19 on women.

This study may be a testing of the hypothesis that higher academic level, knowledge, skills, abilities promote psychological strengths resulting in the event of psychological feature competencies that are absolutely associated with brick & managing with mental state problems enforced by psychosocial factors rising thanks to covid-19. To deal with this, the aim of this study was additionally look at the impact of psychological feature competence on managing psychosocial factors and variations in brick & managing skills in pandemic like adverse conditions.

Limitations of the Study:

- The analysis is confined to a restricted space solely.
- Time and resourceconstraint
- Data may be biased from respondents as self-raterbias.

Participants & Design

Four strategies of knowledge assortment were utilized for this study. Face to face interactions & different clinical measures for shallowness like RSES, stress & depression, Questionnaires & Self-Reports, Rating scale for Behavior analysis, Family Counsel. The study sample consisted of feminine shoppers whose age ranged from 20 to 35 years (M = 28.06, SD = 4.23), a total of 260 shoppers having consent for the study. All shoppers baby faced negative mental state problems throughout the pandemic. Shallowness, depression and stress were taken as criterion variables, and psychosocial factors like emotional & social support, respect, affiliation, engagement, efficacy, behavior dominant, economic abuse, expectation, statutory offence and gender discrimination are taken as a prognostic variables, descriptive, regression and co-relational analysis were conducted to search out associations between variables. Participants were divided into two groups supported their academic level, knowledge, skills, abilities and psychological feature competencies assessed by self-reports and different clinicalmeasures.

Summary:

Descriptive statistics and quantity correlations are reportable in tables. Participants United Nations Agency known additional powerfully with emotional support, social support, respect & engagement, collective effectuality and behavior dominant have higher levels of shallowness and lower levels of negative mental state symptoms.

Table 1: Descriptive Statistics and Correlations between Variables for sample cluster higheducation level & high psychological feature competencies

Criterion Variable	Predictor Variable	M	SD	SE	f	p	R^2
Self-esteem	Respect & engagement	5.31	0.93	0.14	0.96	0.346	0.99
	Social support	5.23	0.92	0.14	0.96	0.348	0.99
	Emotional Support	4.06	1.17	0.14	0.94	0.308	0.97
	Collective Efficacy	4.78	1.18	0.13	0.93	0.302	0.97
	Behavior Controlling	5.41	0.87	0.15	0.92	0.352	0.96
Depression	Economic abuse	4.17	1.17	0.13	0.97	0.349	0.99
	Expectations	4.98	1.02	0.12	0.89	0.373	0.94
Stress	Sexual abuse	4.71	1.18	0.14	0.92	0.349	0.98
	Discrimination	4.63	1.17	0.14	0.88	0.358	0.95

Higher values of psychosocial factors associated with shallowness on 7 point rating show higher levels of psychological strength absolutely related to shallowness. Phi coefficient valueand R^2 score shows a high correlation between emotional & social support and shallowness. Respect in relationships & engagement of members of the family with the females in domestic & house works has found high direct correlation with shallowness boosting. Behavior dominant here is taken for self & collective effectuality is taken as a term for the power of the participants to regulate the behavior of members of the family measured through clinical measures/ scale. Woman having high academic level, knowledge, skill, abilities and psychological feature competencies were noted with high shallowness & lower level of negative mental state symptoms. Despite facing disrupting adverse social factors, they need economical brick and managing skills towards negative mental state problems

Table 2: Descriptive Statistics and Correlations between

Criterion Variable	Predictor Variable	M	SD	SE	f	p	R^2
Self-esteem	Respect & engagement	5.43	0.93	0.15	0.94	0.353	0.98
	Social support	5.17	0.92	0.14	0.96	0.357	0.99
	Emotional Support	5.16	0.92	0.14	0.95	0.318	0.96
	Collective Efficacy	4.09	1.18	0.13	0.93	0.323	0.92
	Behavior Controlling	4.76	1.17	0.14	0.94	0.359	0.97
Depression	Economic abuse	5.78	0.95	0.15	0.98	0.359	0.99
	Expectations	5.86	0.95	0.14	0.87	0.387	0.88
Stress	Sexual abuse	5.05	0.91	0.13	0.94	0.356	0.98
	Discrimination	4.93	1.04	0.12	0.91	0.368	0.96

Variables for sample group moderate education level & cognitive competencies

Correlation between emotional & social support and shallowness is high. Respect in relationships & engagement of members of the family with the females in domestic & house works have found high direct correlation with shallowness boosting. Behavior dominant here is taken for self & collective effectuality is taken as a term for the power of the participants to regulate the behavior of members of the family measured through clinical measures/ scale. Woman having moderate academic level, knowledge, skill, abilities and psychological feature competencies were noted with lower shallowness& higher level of negative mental state symptoms. They need baby faced additional difficulties in brick& managing negative mental state problems.

Discussion & Findings:

- Cognitive competent women having upgraded

information, skills and abilities have baby faced less negative mental health related problems despite uncontrollable social stressors and adverse conditions, such women were able to cope and manage such problems easily. Psychosocial factors like emotional support by members of the family&secure attachment with parents in childhood provided them with psychological strength that helped to deal with daily stresses and depression.

- Women having childhood positive & pleasant experiences thanks to secure & emotional attachment with folks have baby-faced less negative mental state problems.
- Women from families having poor psychosocial domestic environments faced more negative mental state problems.
- Housewives who were dependent on husband income, and pandemic made financial losses, were faced more stress and other mental health issues than independent women
- A few women reported unwanted pregnancy related stressproblems.
- Women including unmarried girls having workplace and college/ universities intimate partner relations have faced more stress and negative mental state problems.

Conclusions:

As the brain is wired to connect, lack of social interaction has vie a job in inflicting stress, depression related mental state problems in working women & early adulthood females having intimate partner relations at study/workplace. Majority of woman faced imbalances in hormones & neurotransmitters that are connected with mental health. Higher academic level, knowledge, skills, abilities promote psychological strengths leading to development of psychological feature competencies which are positively related to coping & managing with negative mental state problems enforced by psychosocial factors emerging due to natural disasters like covid-19 that impact mental state negatively. This study reveals that the impact of socialfactors on psychological strength is absolutely related to and affects the psychological featurecompetencies, and therefore the impact of psychological feature competency on managing psychosocial factors andvariations in brick& managing skills in pandemic-like adverse conditions is additionally absolutely connected. The psychosocial impact of covid 19 on woman mental health differs thanks to variations in psychological featurecompetencies.

Suggestions:

- There is need to develop resilience & flexibility from adolescenceage.
- Training to contend with the sensation of self-helplessness and self-burnout ought to be provided fromchildhood.
- Coming out from extremely neglecting mental sufferings habituation and reworking from fussbudget to mortal is extremely vital for developing psychological feature competence.
- Developing a better kevel of dominant behavior with secondary management is required for top shallowness additional is required for the notice of parenting designs.
- Further studies might be conducted on girls authorization at the bottom level, mere engagement in responsibilities is not decent, distribution of responsibilities & developing independence through developing higher-order thinking skills from childhood are the foremost required initiatives.

References:

1. World Health Organization. *Promoting mental health: concepts, emerging evidence, practice (Summary Report)* Geneva: World Health Organization;2004.
2. García-Moreno C, Zimmerman C, Morris-Gehring A, Heise L, Amin A, Abrahams N, *et al*. Addressing violence against women: A call to action. Lancet 2015; 385:1685- 95
3. Malhotra S, Shah R. Women and mental health in India: An overview. *Indian J Psychiatry2015;57: S205-11.*
4. Antai, D., Oke, A., Braithwaite, P., & Lopez, G. B. (2014). The effect of economic, physical, and psychological abuse on mental health: a population-based study of women in the Philippines. *International Journal of Family Medicine,852317.*
5. Gearhart S, Patron MP, Hammond TA, Goldberg DW, Klein A, Horney JA. The impact of natural disasters on domestic violence: An analysis of reports of simple assault in Florida (1999-2007). Violence Gend2018; 5:87-92.
6. Stylianou, A.M. Economic Abuse Experiences and Depressive Symptoms among Victims of Intimate Partner Violence. *J Fam Viol 33, 381–392*(2018)
7. Campbell AM. An Increasing Risk of Family Violence during the Covid-19 Pandemic: Strengthening Community Collaborations to Save Lives. Forensic Science International: Reports, 100089;2020
8. Mburia-Mwalili, A., Clements-Nolle, K., Lee, W., Shadley, M., & Yang, W. (2010). Intimate partner violence and depression in a population-based sample of women: Can social support help? *Journal of Interpersonal Violence, 25*(12),2258–2278.

Ankita
PhD Research Scholar
Tantia University,
Sri Ganganagar (Rajasthan)

The Impact Of Communalism Upon At Tiahosian's*sun Light On A Broken Column*

Dr. Dinesh Kumar

Abstract

Attia'sHosain's*'Sun Ligh on a Broken Column'* (1961) is an autobiographical novel and it is written in retrospective manner and deals with a young woman's personal crisis set against the larger historical background of communal hatredness. The novel sharply brings out the undergoing change, the individual lives suffer a change just as the country's political situation changes. The novel deals with a young woman's personal crisis set against the historical background of the partition of India. The novel depicts how the heroine Laila and other characters bear a drastic change in their life as the country's political situation changes. Laila, the narrator-heroine revolts against the traditional norms of her family and continues to grow and change. Similarly, the country also revolts against its rulers, the Britishers, and undergoes a drastic change.

The narrator-heroine is a 'passive observer' so far as political actions are concerned but she is also a 'central agent' of the personal drama that is enacted against the political background. Laila, being an inquisitive rebel from the beginning, is both an insider and an outsider, a participant and an obnserver. This enables her not only to dramatize the taluqdari way of life in its immediacy but also to contextualize it objectively as an aspect within the broader relief of the contemporary historical milieu.

The novel consists of four parts covering a period of about twenty years in the life of Laila, living sheltered life in an orthodox aristocratic Mulsim family. In the beginning of the novel, politics hardly touches Laila's life. Her first awareness of politics comes when Laila's cousins Asad and Zahid give her information about the political processions. It is a time of Instant political activity and both the Hindus and the Muslims are together in their struggle against the British. Innumerable enthusiastic Hindus and the Muslims are shown participating and shouting slogans for the freedom of the country. The sound of voices comes in chanting unison thus;

"InqulabZindabad, British Raj. Murdabad! Death to British Imperialism... Azad ki Jai! Hail Freedom".[1]

College going youth also take part in this joint Hindu-Muslim political procession. The novelist depicts Nita chatterjee who "dies suddenly as a result of injuries to her brain caused by the blows on the head received during the police LathiCharge".[2] It proves from this joint political procession that the Hndus, the Muslims and the Sikhs made their effort together to oust the British and to preserve their traditions just as the first war of Indian Independence of 1857, Hindus, Muslims, the soldiers and the common citizens, all of them had fought together against the British Imperialism.

Moreover, this political amity between the Hindus, the Sikhs and the Muslims becomes clear from the composition of Laila's family which consits of Hindus, Muslims and christians. For instance, the Englishman, Mr-Free Mantle requests in his 'Will' that he should be buried near his friend Syed Mohammed Hasan, Laila's Babajan. Just as the Ram Lila ground adjacent to the English Cemetry in Sialkot in ChamanNahal'sAzadi symbolizes composite culture, similarly in *Sun Light on a Broken Column*, the graveyard at Hasanpur which gives shelter to the corpses of Muslims and the Christians suggests the atmosphere of communal trust and communal harmony, Laila's uncle Hamid says:

"I always found that it was possible for Hindus and Muslims to work together on a political level and live together in a personal friendship".[3]

Despite this age old cordiality between two communities, we are also aware of the fact that there are accepted differences among close friends. The novelist says: "Ranjit's grandfather did not eat with Babajan, but was his greatest friend".[4] Its because of their different religion, they are not touching each other's food.. This very religion, indeed, injects the poison of communalism into the minds of characters. The novelist asks:

"What can you expect from a religion which forbids people to eat and drink together? when even a man's shadow can defile another, how is real fridnship or understanding possible".[5]

What is more, the communal amity between the Hindus and the Muslims is over shadowed by communal discord. Communal tension starts mounting in the city. Through Hakiman Bua, the novelist narrates vividly;

"Just out side the big Hanuman Ji temple the top of their Tazia stuck in the branch of a peepul tree. ..... The branch of their (Hindus) sacred tree could not be cut without getting the Hindus angry........ Someone began to blow a conch in the temple, though it was known there was a holy procession outside. Some hot blooded persons threw stones at the heaten sounds, and then the fighting began. This kind of mischief spreads like a fire in a field of dry grass".[6]

SarojCawasjee points out the division in the national movement thus: "The secular nationalist under the congress banner is being challenged by the communal nationalist under the Muslim league banner".[7]

The rift among the Muslims becomes wide when the 'secular' Muslim nationalists remained in the congress fold while the 'Communal" Muslims level charges against the congress, terming it as purely Hindu organization. It is declared that the policies of the congress are fraudulent

and deceptive. The communal politics enter even in sophisticated houses and heated arguments between uncle Hamid and his son are seen. It can further be said candidly that the politics of the street has even entered the drawing room and both the father and the son find themselves in opposite camps criticizing each other's favourite party so brutally and sarcastically.

As the movement against the British for freedom touches its peak, the characters of the novel find themselves in opposite camps. Hamid tells saleem sarcastically: "The Muslim League in which you are so interested, I have heard it communal and reactionary by nationalist Muslims".[8] On the contrary, Saleem retorts forcefully and accuses the congress of having anti-Muslims elements, communal hatredness starts taking place among different characters. Saleem is afraid of the Hindus for taking revenge and states:

"The majority of Hindus have not forgotten or forgiven the Muslims for having ruled over them for hundred years. Now they can democratically take revenge."[9]

What is more, Saleem, Like Prabha Rani in Nahal's*Azadi*, has fear in his mind that the Hindu majority may rule over the Muslim minority after getting Independence. The Muslims start crying openly that it would be better to have the stay of the Britishers instead of being ruled by the Hindus. The Muslims have a great fear in their mind that their religio-cultural traditions will come under attack. This fear ultimately becomes the great foundation for the formation of Pakistan.

The novelist AttiaHosian further traces the causes of the growth of communal hatredness and she partially balmes the British and partially the leaders of both communities. Firstly, she discerns the 'Divide and Rule' policy of the British. Asad makes it clear that the British encourage communal riots and teach us to hate each other and love us. Similar views are put by the historian Bipan Chandra when he maintains:

"British rule was solely responsible for communalism or that communalism was basically created or produced by the British policy of Divide and Rule".[10]

It is very axiomatic to opine that the British rulers played, in a Machiavellian way, an important role in the promotion and growth of communal virus between the Hindus and the Sikhs on one hand and the Muslims on the other. Moreover, the novelist does not solely blame the British for generating seeds of communalism but she also holds top most leaders of both communities responsible for it. It is an old adage that Satan cannot enter till he finds flaw. Similarly, the policy of 'Divide and Rule' was invited by the so called leaders.

With the announcement of partition, the exodus of the Muslims to Pakistan and that of the Hindus and the Sikhs to India becomes a common sight. The partition, creates a strange dilemma for 'Ashiana' household . This effect of partition can be noticed when Laila's two cousins Saleem and Kemal for Pakistan and Hindustan respectively. Laila tells us that it is very easy for them there-after to visit the whole world than the home which had once been theirs. Urvashi Butalia says" thousands of families were divided, homes were destroyed, crops left to rot, villages abandoned".[11]

Interestingly, Saleem chooses to leave for Pakistan whereas Kernal decides to stay in India. It appears that saleem opts for Pakistan not for its religious sanctity but because it provides him a better market for his skills. Kernal, Like Laila, opts for India with full knowledge of his uncertain status as a minority community, because he conceives of nationalism emotionally, in terms of one's commitment to the land of the one's birth. Kernal tries to persuade saleem and his wife Nadira to stay back in India, which saleem is not inclined to do. Both Saleem and Nadira are hopefull of having better opportunities to improve their financial position in Pakistan in contrast to India where the Muslims who do not migrate might have to face suspicion, prejudice, even hatredness.

Importantly enough, the partition of united India leads to communal riots, rape, abduction, blood bath, massacre, on both sides of the border. Communal Violence in the train has been pathetically depicted by the novelist. Zahid is killed brutally. Hosain says:

"Full of bright hope and trimuphZahid had boarded the train on that thirteenth day of August which was to take him to the realization of his dreams. On the even of the birth of the country for which he had lived and worked, when it had reached its destination not a man, woman or child was found alive".[12]

It is relevant to pointout that Hosain is impartial while depicting communal fury. She criticizes the Muslim leaders not only for inciting communal hatred and anger against the Hindus but also for running away to Pakistan leaving their coreligionists behind at the mercy of the angry Hindus. The description of a refugee, who loses his whole family in the communal holocaust is heart rending. He shows his hatred towards all Muslims for not helping him and calls them all bloody traitors. Laila also criticizes the Muslims for not helping her at critical junctures. Instead she praises the Hindus for protecting the helpless millions of Muslims left by their opportunistic relations. When Muslims are caught in the communal fury, a section of the Hindus does come to their rescue-Laila rebuffs Zahra by revealing that Sita and other Hindus saved her.

"Where were you, When I sat up through nights, watching village after village set on fire. Do you know who saved me and my child? Sita, who took us to her house, in-spite of putting her own life in danger with ours. And Ranjit, who came from his village...... He drove us back, pretending we were his family, risking discovery and death. What were you doing then? Getting your picture in the papers, distributing

sweets to orphans whose fathers had been murdered and mothers raped".[13]

Love affair of Laila-Ameer and that of SitaKernal is also thwarted in the erupted volcano of partition. The structural and thematic contours of AttiaHosain's*Sun Light on a Broken Column* roughly confirms to a broader pattern discernible in partition fiction. It is, however, one of the few novels where in the story of the three generations is provided with a big canvas to build up the various shades of the socio-political reality. The novel is, thus, a good attempt at showing the bitter fruits of the partition of India.

To cap it all, towards the end of the novel, AttiaHosain projects the fact that despite all-enveloping fury of 'Communal discord', the communal amity between the Hindus and the Muslims has not completely disappeared. She shows this hidden communal amity when saleem comes home after a gap of two years. On his visit to India, Saleem is not only surprised but also feels happy with the warm reception he is accorded by his old Hindu friends.

References:

1. AttiaHosain, *'Sunlight on a Broken column:* New Delhi: Arnold, 1987, P. 162.
2. Ibid, 166
3. Ibid, 234
4. Ibid, 197
5. Ibid, 197
6. Ibid, 75-76
7. SarosCowasjee, '*The partition in Indo-English Fiction, Exploration in Modern indo-Anglian Fiction'*, DhawanR.K. ed., New Delhi, Bahri, 1982, P-25.
8. *'Sunlight on a Broken column*, 233
9. Ibid, 234
10. Bipan Chandra's,*Communalism in Modern India* (New Delhi: Vikas, 1984, p – 238).
11. Urvashi Butalia, *'The other side of Silence voices from the partition of India',* New Delhi: Viking, 1998, P-3.
12. *Sunlight on a Broken Column*, P-310.
13. Ibid, P-304

Dr. Dinesh Kumar
Associate Professor of English
MNS Govt. College, Bhiwani
#3538, Sector-13, HUDA, Bhiwani
Contact No. : 9416630340
e-mail :dineshsharma1254@gmail.com

87

E-commerce: Emerging Trends And Challenges In India Authors

Dr. Geeta Gupta, Dr. Santosh Mittal

Abstract

E-commerce has surged during the pandemic, enabling businesses to survive and thrive. Selling products and services over the internet took on new importance during the COVID-19 pandemic, as business owners and consumers had no choice but to embrace e-commerce.

E-commerce is the process of maintaining relationships and conducting business transactions that include selling information, services, and goods by means of computer telecommunications networks. E-commerce consists of business-to-consumer and business-to- business commerce as well as internal organizational transactions that support those activities. Customers come to the website or online marketplace and purchase products using electronic payments. Upon receiving the money, the merchant ships the goods or provides the service. Electronic commerce has been around since the early 1990s when Amazon just sold books, but today, it's a multibillion-dollar industry – and it has gotten even bigger during the pandemic. E-commerce has not only empowered small businesses by removing geographical barriers and providing a large customer base but also allowed them to deal directly with manufacturers and suppliers, thus reducing the cost of procurement. The purpose of this paper is to contribute to the discourse on E-commerce by further analysing the trends and challenges in an emerging economy

.1.INTRODUCTION:

Ecommerce (or electronic commerce) is the buying and selling of goods or services on the Internet. It encompasses a wide variety of data, systems and tools for online buyers and sellers, including mobile shopping and online payment encryption. Most businesses with an online presence use an online store and/or platform to conduct ecommerce marketing and sales activities and to oversee logistics and fulfilment.

According to eMarketer, in 2022, global retail ecommerce sales will surpass $5 trillion for the first time, accounting for more than a fifth of overall retail sales. And by 2025, total spending will exceed $7 trillion, despite slowing growth. With the wide adoption of the Internet and the introduction of the World Wide Web in 1991 and of the first browser for accessing it in 1993, most e-commerce shifted to the Internet. More recently, with the global spread of smartphones and the accessibility of fast broadband connections to the Internet, much e-commerce moved to mobile devices, which also included tablets, laptops, and wearable products such as watches.

E-commerce has deeply affected everyday life and how business and governments operate. Commerce is conducted in electronic marketplaces and in the supply chains working on the Internet-Web. Consumer-oriented marketplaces include large e-malls such as Amazon, consumer-to-consumer auction platforms such as eBay, multichannel retailers such as L.L. Bean, and many millions of e-retailers. Massive business-to-business marketplaces have been created by Alibaba and other companies. The sharing economy enables more efficient use of resources, as Airbnb does with online rentals of private residences. Almost instantaneous access to services is made available by on-demand platforms, for example, Uber offering transportation, computation and storage resources furnished by cloud service providers, and medical and legal advice. Mass customization of goods sold online, such as garments and vehicles, became common. Electronic currencies (or cryptocurrencies) such as Bitcoin entered into play as the means of settlement. Semipermanent supply chains enable a hub company such as Dell to surround itself with suppliers that perform most production tasks and deliver other goods and services to the central firm.

According to research from consulting firm McKinsey & Company, several online shopping categories are projected to grow more than 35%, including over-the-counter medicine, groceries, household supplies and personal-care products.

2.TYPES OF E-COMMERCE:

Generally, there are seven main models of ecommerce that businesses can be categorized into:

A. Business-to-Consumer (B2C):

B2C ecommerce encompasses transactions made between a business and a consumer. B2C is one of the most popular sales models in the ecommerce context. For example, when you buy shoes from an online retailer, it's a business-to-consumer ecommerce transaction.

B. Business-to-Business (B2B):

Unlike B2C, B2B ecommerce encompasses sales made between businesses, such as a manufacturer and a wholesaler or retailer. B2B is not consumer-facing and happens only between businesses.

C. Consumer-to-Consumer (C2C):

One of the earliest forms of ecommerce, consumer-to-customer ecommerce relates to the sale of products or services between customers. This includes C2C selling relationships, such as those seen on eBay or Amazon.

D. Direct-to-Consumer (D2C):

A newer model of ecommerce, D2C refers to a business that sells products directly to the end customer instead of going through a retailer, distributor or wholesaler. One common example of D2C ecommerce is a subscription-based brand such as Netflix or Dollar Shave Club.

E.Consumer-to-Business (C2B):

C2B reverses the traditional retail model, meaning individual consumers make their products or services available for business buyers. One example of a C2B ecommerce business is iStock, an online store where stock photos are available for purchase directly from different photographers.

F. Business-to-Administration (B2A):

B2A covers the transactions made between online businesses and administrations. An example would be the products and services related to legal documents, social security, etc.

G.Consumer-to-Administration (C2A):

C2A is similar to B2A, but instead, consumers sell products or services to an administration. C2A can include online consulting for education, online tax preparation, etc.

3.the Rising Face Of India's E-commerce Industry:

The breakthrough made by India's e-commerce industry seems to be playing a vital role, leading Indian brands to scale greater heights across the global business landscape. Significantly impacted by the COVID-19 pandemic, the Indian retail industry has got into its fast recovery mode as many retail companies were spotted focusing on taking the e-commerce route in 2022. Some of the key trends that are going to define the growth of India's e-commerce industry are:

A.House of brands and roll-up firms to scale new heights

The emergence of many 'roll-up firms' could be observed where companies invested aggressively in acquiring smaller brands, and many established D2C brands shifted gears to a 'house of brand' approach by launching new labels or acquiring smaller companies. These companies have also invested in building robust operations that help achieve better unit economics and move towards profitability. Over the next years, these companies will work on building brand loyalty and expanding the customer base for their new set of brands. Some companies are also focusing on building sector-agnostic portfolios to improve exclusivity and cater to a wider audience with a diversified product portfolio in place. Going ahead, these brands are eying on expanding their operations to the international markets and companies can be expected to make additional room for newer brands focusing on these markets.

B.Finding the right solution is the key

While the industry observed widespread adoption of technology during 2021, automation was seen as a prominent factor that companies took to tread their growth path throughout 2022, especially amongst the upcoming brands in metropolitan cities. With SaaS making automation affordable and easy to deploy, an increasing number of brands are further lured to use technology across business operations.

More companies, including small sellers, ought to use technology to amplify the pre-purchase and post-purchase experience of consumers. The pre-purchase technology includes solutions that will help brands in reducing customer acquisition costs with automation of target marketing, personalised offers for consumers, addressing consumer concerns through chatbots, and leveraging automated communication tools to help them make a purchase decision.

C.Growing omnipresence of retailers

While 2021 witnessed steady growth in the retail market in India, leading retail brands like Chumbak, GAP, Crocs, TCNS, Bestseller, FabIndia and Bata among others were seen shifting their focus toward an omnichannel approach. According to a recent industry report, the ship- from-store orders showcase climbing numbers with 55.6 percent YoY growth in 2022. Interestingly, offline-focused brands are moving online and investing in building their online presence and amidst the D2C landscape, while online-first brands are now exploring offline channels and setting up stores to ensure connectivity with a larger audience.

As consumers shop across online and offline channels, brands have to be present on all these channels and offer a unified experience to the consumers. While brands continue to deploy omnichannel, the industry can expect to see multiple use cases such as 'ship from store' and 'endless aisle' in 2023. Another interesting omnichannel trend that is anticipated to become big in the coming years is brands partnering with fulfilment providers and leveraging dark stores at various locations to ensure faster order fulfilment.

D.Induction of newer categories

From consumer focus on industry segments like electronics, fashion, apparel and accessories during the pre-pandemic era, the last two years highlighted the spotlight being shifted to segments like beauty and personal care and health and pharma recording remarkable growth and becoming prominent contributors to the overall e-commerce industry. Similarly, over the next few years, newer segments are expected to emerge in the e-commerce industry as more consumers adopt online shopping.

Some of the segments that have shown promising numbers and have garnered the interest of consumers are pet care, baby products, nutraceuticals, home decor, and kitchenware. These segments not only observed inland routes to the ecommerce landscape but have also attracted a lot of interest of investors across the business landscape. The home decor and kitchenware segment witnessed an impressive YoY growth of 59.2 percent in order volumes in 2022 providing a high-rising trajectory for the segment in 2023.

E.Consumers are the real growth driver

With improved internet penetration in India's hinterland and heightened access to smartphones, 2022 witnessed a surge of 50.9 percent and 64.7 percent in order volumes from Tier-II and Tier-III towns, respectively. In the last one year, the growth of ecommerce volumes from Tier-II and III towns in the country outpaced Tier I cities where brands were observed to increasingly focus on the specific needs of the audience in these regions.

In 2023, brands are expected to further dive deeper

into Bharat using specialised marketing strategies to target the rapidly rising online consumer base in these areas. This will also give rise to local sellers and businesses hopping onto the ecommerce bandwagon along with their traditional B&M setups.

F. Made in India, for the world

With the D2C phenomenon gaining momentum over the last two years, many home-grown online first brands have been able to establish a strong presence in the country with consistent profitability and increasing brand loyalty. Many of these companies are now planning to foray into international markets, to further expand their consumer base and take Indian brands to the global map. Some of the key focus markets for these companies are emerging online geographies of the Middle East and Southeast Asia. This will bring international capital to the economy and will boost other Indian brands to expand internationally. The D2C ecosystem may also witness some consolidation with either traditional brands or leading D2C brands making bigger bets by acquiring other D2C businesses in India and international markets to power their fast-paced growth.

4.Challenges For E-commerce In India:

The growth of ecommerce volumes in India is attracting the attention of players around the globe. India, the second most populous country in the world, is home to 1.2 billion people.

To put that number into perspective, consider this: the combined populations of Germany, UK, France, Italy, Netherlands, Belgium, and Greece equal one-fourth the population of India alone! Despite lower per-capita purchasing power, this still makes India one of the most attractive emerging markets for ecommerce. But India is far from being a bed of roses. Here are the top 8 challenges that ecommerce businesses face in India.

·Indian customers return much of the merchandise they purchase online– Ecommerce in India has many first-time buyers. This means that they have not yet made up their mind about what to expect from ecommerce websites. As a result, buyers sometimes fall prey to hard sell. But by the time the product is delivered, they demonstrate remorse and return the goods. Though consumer remorse is a global problem, it is all the more prevalent in a country like India, where much of the growth comes from new buyers. Returns are expensive for ecommerce players, as reverselogistics presents unique challenges. This becomes all the more complex in cross-border ecommerce.

·Cash on delivery is the preferred payment mode– Low credit card penetration and low trust in online transactions has led to cash on delivery being the preferred payment option in India. Unlike electronic payments, manual cash collection is laborious, risky, and expensive.

·Payment gateways have a high failure rate– As if the preference for cash on delivery was not bad enough, Indian payment gateways have an unusually high failure rate by global standards. Ecommerce companies using Indian payment gateways are losing out on business, as several customers do not reattempt payment after a transaction fails.

·Internet penetration is low– Internet penetration in India is still a small fraction of what you would find in several western countries. On top of that, the quality of connectivity is poor in several regions. But both these problems are fast disappearing. The day is not far when connectivity issues would not feature in a list of challenges to ecommerce in India.

·Feature phones still rule the roost– Though the total number of mobile phone users in India is very high, a significant majority still use feature phones, not smartphones. So, for all practical purposes this consumer group is unable to make ecommerce purchases on the move. Though we are still a couple of years away from the scales tipping in favour of smartphones, the rapid downward spiral in the price of entry-level smartphones is an encouraging sign. I expect that the next few quarters will witness announcements of new smartphones in India at the $30-40 price point. That should spur growth in smartphone ownership.

·Postal addresses are not standardized– If you place an online order in India, you will quite likely get a call from the logistics company to ask you about your exact location. Clearly your address is not enough. This is because there is little standardization in the way postal addresses are written. Last mile issues add to ecommerce logistics problems.

·Logistics is a problem in thousands of Indian towns– The logistics challenge in India is not just about the lack of standardization in postal addresses. Given the large size of the country, there are thousands of towns that are not easily accessible. Metropolitan cities and other major urban centres have a fairly robust logistics infrastructure. But since the real charm of the Indian market lies in its large population, absence of seamless access to a significant proportion of prospective customers is a dampener. The problem with logistics is compounded by the fact that cash on delivery is the preferred payment option in India. International logistics providers, private Indian companies, and the government-owned postal services are making a valiant effort to solve the logistics problem. If someone could convert the sheer size of the problem into an opportunity, we might soon hear of a great success story coming out of the Indian logistics industry.

·Overfunded competitors are driving up cost of customer acquisition– The vibrancy in the Indian start up ecosystem over the past couple of years has channelled a lot ofinvestment into the ecommerce sector. The long-term prospects for ecommerce companies are so exciting that some investors are willing to spend irrationally high amounts of money to acquire market share today. Naturally the Indian consumer is spoiled for choice.

5.Conclusion:With the rising expectations of consumers, e-

commerce is becoming a preferred way of shopping, and as companies attempt to heighten their standards for customer service, technology is going to play a key role in the growth of India's retail business in the coming years. The industry also anticipates witnessing new e-commerce models such as voice-enabled shopping, social commerce, WhatsApp commerce, etc. as we move ahead. With Indian brands making a mark in the global market, the ecommerce industry is being seen as a growth driver for the traditional retail in India.

The research works on E-commerce propose good number of variables to be taken care of if marketers need to be successful in this newly business model. The factors which will significantly contribute to the success of the E-Commerce industry and focused upon should be consistency of transaction steps, consistency of Web site design, replacement guarantee, M-Commerce services, consistency of promotions, consistency of in-stock indications, consistency of product variety, location-based services, multiple payment option, right content, shipment option, legal requirement of generating invoices for online transactions, quick Service, T & C should be clear & realistic, the product quality should be same as shown on the portal. The 11 important features in ecommerce is privacy which not only increases competitive advantage but confidence level of the customers. The researches also suggest 18-35 as the good customer age to be promising and to be targeted irrespective of gender for better results. Social media may be a boon for brands and marketers looking to reach target buyers without wasting big bucks on traditional media, but luxury brands have recently found it challenging as unauthorised sellers are luring buyers, most of who fall in to the temptation of getting discounts of up to 50-70% have cropped up using platforms like Facebook, Instagram, Twitter and WhatsApp. Firms must closely monitor such accounts and spend money on legal checks controls.

In a marketplace model, the ecommerce firm provides just the technology platform while sellers on the site own the inventory. Most E-commerce companies have call centres to connect with customers, the pressing need is the initiative to set up call centres to deal exclusively with merchants as increasing the number of sellers in a marketplace becomes the next battlefront in the E-Commerce. The need is 24/7 call centres should be dedicated. The e-commerce industry participants must also understand and address the cultural issues that are unique to the target country and relate to off-site transactional process, the large- scale diffusion and success of such endeavours will be greatly impeded. E-Commerce firms must also find most effective ways to combine the online relationship with the offline relationship, with the idea that the full relationship with the customer is not completewithout considering both online and offline, as well as how they interact. The governments should offer a level field to its E-commerce firms to allow the country's significant development. The thrust on E-Commerce should be to offer a legal framework so that while domestic and international trade are allowed to expand their horizons, basic rights such as consumer protection, privacy, intellectual property, prevention of fraud, etc are highly protected. The banks also need to select suitable security tools and policy to protect itself and its customers.

E-Commerce is a boon for any country- if given right impetus and good environmental framework to prosper can significantly lead to country's progress and development.

6.Implications For Researchers:

Our study, being conceptual in nature, raises a number of opportunities for future research, both in terms of theory development and concept validation. More empirical research will in fact be necessary to refine and further elaborate findings in the area of ecommerce. The study is an eye opener for the researchers who have ample interest in E-commerce. This review paper will offer them the leads towards the better understanding of the key variables of the recent E-commerce platform that is revolutionizing the business.

References:

1)Chanana Nisha and Goele Sangeeta, "Future of e-commerce in India", International Journal of Computing & Business Research, ISSN (Online): 2229-6166

2)Dutta and Dutta (2009) "A Study on Customer Perception towards HDFC Limited" International Journal of Management Sciences and Business Research Volume 2, Issue 4- ISSN (2226-8235)

3)How E-Commerce Fits into Retail's Post-Pandemic Future. Retrieved from https://hbr.org/2021/05/how-e-commerce-fits-into-retails-post-pandemic-future

4)India to surpass US with 402 million Internet by 2016: IAMAI,(2015,Nov. 20) The India Express. Retrieved from http://indianexpress.com/article/technology/tech-news-technology/indiato-have-402-mn-internet-users-by-dec-2015-will-surpass-us-iamai- report/

Dr. Geeta Gupta
Assistant Professor in Commerce
Vaish Mahila Mahavidyalaya,
Rohtak
geetagupta027@gmail.com

Dr. Santosh Mittal
Assistant Professor in Commerce
Vaish Mahila Mahavidyalaya,
Rohtak
drsantoshmittal@gmail.com

Impact of Gst On Indian Economy

Dr. Kanwaljeet

Abstract

In India, the idea of GST was contemplated in 2004 by the Task Force on implementation of the Fiscal Responsibility and Budget Management Act, 2003, named Kelkar Committee. Under the Goods and Service Tax mechanism, every person is be liable to pay tax on output and shall be entitled to enjoy credit on input tax paid and tax shall be only on the amount of value added . The historic GST or goods and services tax has become a reality. The new tax system was launched at a function in Central Hall of Parliament on 1st July ,2017 (Friday midnight). GST, which embodies the principle of "one nation, one tax, one market" is aimed at unifying the country's $2 trillion economy and 1.3 billion people into a common market. Under GST, goods and services fall under five tax categories: 0 per cent, 5 per cent, 12 per cent, 18 per cent and 28 per cent. \. "Inflation will come down, tax avoidance will be difficult, India's GDP will be benefitted and extra resources will be used for welfare of poor and weaker section," Finance Minister Arun Jaitley said at GST launch event in Parliament. The Lok Sabha has finally Passed the Goods and Services Tax Bill and it is expected to have a significant impact on every industry and every consumer. Apart from filling the loopholes of the current system, it is also aimed at boosting the Indian economy. This will be done by simplifying and unifying the indirect taxes for all states throughout India.

Keywords: GST, Indian Economy, Positive Impact , Negative Impact, Central Government, State Government.

Introduction

India is having the most complicated tax structure in the world, especially Indian indirect tax systems. The mechanism of imposing taxes, exemptions, abatements other benefits is different in different states. The existing law has a number of issues of interpretation in various provisions and the category of the products and services. India needs a simple tax structure which can describe the tax mechanism as simple as possible. The basic two drawbacks of existing indirect tax system are cascading effect and non-uniformity of tax collection among states. Introduction of Goods and Service Tax (GST) will compensate those drawbacks. Following are the mainstay of GST:- (1) Removing Cascading Effect: GST removes "Tax on Tax Effect" and provides common national market for Goods and Services. (2) Single Umbrella Tax Rate: GST will harmonize indirect taxes being levied by Union and State Governments. The reference of GST was first made in the Indian Budget in 2006-07 by the then Finance Minister Mr. P. Chidambaram as a single centralized Indirect tax. The Bill was introduced on December 19, 2014 and passed on May 6, 2015 in the Lok Sabha and Passed in Rajya Sabha on 3rd August 2016. The Government wants to implement GST Bill From 1st April 2017. Clause 366(12A) of the Constitution Bill defines GST as "goods and services tax" means any tax on supply of goods, or services or both except taxes on the supply of the alcoholic liquor for human consumption. So GST is a comprehensive tax levy on manufacture, sale and consumption of goods and services at a national level.

Objective Of Study

The study has following objectives:

· To cognize the concept of GST

· To study the features of GST

· To evaluate the advantages and challenges of GST To furnish information for further research work on GST

Benefits Of Gst

Overall reduction in Prices for Consumers

· Reduction in Multiplicity of Taxes

· , Cascading and Double Taxation

· Uniform Rate of Tax and Common National Market

· Broader Tax Base and decrease in "Black"transactions

· Free Flow of Goods and Services

  · Non-Intrusive Electronic Tax Compliance System

  · It will boost export and manufacturing activity, generate more employment and thus increase GDP with gainful employment leading to substantive economic growth. Ultimately it will help in poverty eradication by generating more employment and more financial resources.

Positive Impact of GST

All most every industry body are "fully prepared" for implementation of the new indirect tax regime, while commending the government's efforts towards its rollout. The nationwide GST will overhaul India's convoluted indirect taxation system and unify the over $2 trillion economy with 1.3 billion people into a single market. The medium-term impact of GST on macroeconomic indicators is expected to be extremely positive. Inflation will be reduced as cascading of taxes will be eliminated. Assocham president Sandeep Jajodia said India would move many notches up the global ease of doing ladder by this single, but the most important tax reform in the country.

Negative Impact of GST

India has adopted dual GST instead of national GST. It has made the entire structure of GST 162 complicated in India. The centre will have to coordinate with 29 states and 7 union territories to implement such tax regime. Such regime is likely to create economic as well as political issues. The states are likely to lose the say in determining rates once GST is implemented. The sharing of revenues between the states and

the centre is still a matter of contention with no consensus arrived regarding revenue neutral rate. Pre GST service tax of 15%, which would increase to 18-20% in post GST. Hence, although prices of goods and products can come down, service industry will bear the brunt of higher taxes. Air travel, hotels would become more expensive. Currently, economy class tickets are taxed 6% and non-economy class tickets are charged 9%. Once GST is implemented, it would increase to 18%, thereby leading to direct increase of 9-12% tax on the tickets. Unless the airlines absorb this increase, the additional tax has to be paid by the consumer.

Conclusion

At the end we can say clearly with no doubt that it is the biggest ever change in tax structure of India. There is a fall in prices of Auto Commercial Vehicle, Two wheelers, Small cars, Midsized cars and SUV, essential items, Footwear, Building Materials etc. and education, healthcare are going to be exempted from GST but on the other hand, price of some other goods and services increased after GST like Hotel room rental, Restaurants & fine dining and Branded Apparels. There was threat of inflation before GST rolled out. It can be concluded that GST has been going to be an historical record for its full fledge implementation and hopefully this biggest historical reform will result in ease of doing business in India.

References

[1] Dani S (2016) A Research Paper on an Impact of Goods and Service Tax (GST) on Indian Economy. Bus Eco J 7: 264. doi: 10.4172/2151-6219.1000264

[2] Jaspreet Kaur, (2016) "Goods and service tax (GST) and its impact"International Journal of Applied Research 2(8): pp. 385-387

[3] A Dash , (2017) " A Study on Socio Economic Effect of Demonetization in India ", International Journal of Management and Applied Science (IJMAS) , pp. 13-15, Volume-3,Issue-3

[4] The Economic Times (2009) Featured Articles from The Economic Times

[5] "How GST will impact sectors", http://economictimes.indiatimes.com

[6] "GST-Analysis and Opinions" cleartax.in

[7] "GST impact on economy: Five things to watch out for" hindustantimes.co

Dr.Kanwaljeet

Associate professor

Commerce department

Vaish Mahila Mahavidyalya Rohtak

Workplace Happiness : Is it Attainable ?

Dr. Vaishali Gupta, Dr. Nisha Jain

Abstract

Workplace happiness is not considered as playing games and practicing any kind of sports during someone's business hours. Happiness in the workplace is about people enjoying their everyday tasks, openly collaborating with their colleagues, feeling acknowledged and respected at work, having a healthy work life balance and come home accomplished at the end of the day. Workplace happiness may be achieved through time management, delegation of tasks and developing good working relationships with co-workers. Laughter is important in the workplace. As Robert Orben rightly said, "If you can laugh together, you can work together". It seems plausible that positive work engagement, work environment, income, freedom and work life balance plays a major role in workplace happiness.

Keywords: Workplace happiness, Laughter, Work Life Balance

Workplace happiness is the buzz word of the new millennium with an explosion of research into area of hope, happiness, humour and positive attitude. With restructuring, deregulation, increase in taxes and bank interest rates, outsourcing, technology and globalisation advancement and a greater demand to increase productivity in the workplace affects staff.

By its theoretical definition, work does not incorporate something exciting or something that people look forward to doing. How frequently do you calculated on resigning from your job or perhaps feel that you are not getting paid enough for the over the top efforts that you put in an organisation.

Workplaces that endeavour to balance the daily stresses of a job to motivate workplace happiness can enjoy strong competitive advantages. Cheerfulness and satisfaction are very weird concepts that tend to mean a variety of things to different people. For some, workplace happiness can mean getting excellent pay, other incentives and benefits. For others, its about having a good time at work and having the opportunity to socialise in an organisational environment. For few others, happiness in the workplace is considered directly tied to the professional culture.

Factors influencing workplace happinessIncome

The wage and salary earned by any person is termed as 'Income' (according to Mathur, 2012). A study of income andhappiness by Caporale, Georgellis, Tsitsianis and Yin (2009) confirms that there is a strong connection betweena person's income and their life satisfaction. As per the study of Binswanger, 2006; Paul & Guilbert, 2013 which states that those people who has higherincome are happy, also their happiness level is determined by working hours. "People may not be glad with their jobs if they have long working hours" (Georgellis,Lange, & Tabvuma, 2012).

Parity in income brings happiness among Employees(De Prycker, 2010). Oshio and Kobayashi(2011) contend that individuals with income inequality are less happy. In contrast, Hopkins (2008) states in his study that income disparity can positively have an effect on happiness of some competitive employees who earn moreincome than others. This is because people who are competitive in nature compare their own rewards and others' (Brody, 2010). "If the income is not equal of two different people, they may be happy with higher income" (Hopkins, 2008).

Work engagement

Robin, R.N., Kralj, A., Solt, D.J., Goh, E. and Callan, 2014) rejects the perception of happiness as enjoyment andpositive affect alone and he states that much more is required to be authentically happy. He also proposes that happiness, frequent positive feelings, engagement with others and activity such as work and meaning in life arerequired for fulfillment. This commitment should involve the use of an individual's signature vigor. He advises readjusting on both engagement and meaning in life even as acknowledging the importance of pleasure which hesees it as least important.

Work environment

Happiness is usually described by environmental factors such as regular work, income and relaxation activities. Butsome researchers have claimed that personality is the main determinant of happiness rather than social class, money, relationships, works, recreation religion or other external factor. Researchers have found that there is arelationship between the personality traits and happiness. One of the study states that the sustainable happinessmodel highlight onsubjective well-being which is set by three factors: genetics, individualcircumstances, and activities. Dogl, C. and Holtbrügge, D. (2014). What is the reason behind why some people are happy and others are unhappy at their work? A complete answer is that each one at work are happier if their work contains pleasingfeatures. Each one's characteristics and mental processes encourage the presence of happiness.

Gender and workplace happiness

According to Fisher study (2010), "workplace well-beingcontinuously derived from the employee's experience of dealingwith his or her employer". As a result, this attitudinal construct shapes employee etiquette and positive feelingstowards work ambiance, contemporaries and employer. Erdogan et al. (2012) states that "workplace well-

beingcan be considered as a result of employee satisfaction with their leadership, work atmosphere, job description, jobspecification, career development and more."

Organization's shared value

Mohit, M.A.(2013) proclaimed that to achieve the "happy life" people must work in good companies. Variousresearchers have exhibited that aspects of companies and work are the determinants of job satisfaction, departmental commitment and other types of happiness at work. Researchers have also studied that the environmental patrons to the happiness, at the companies, work and event level.

Purposeful work

Ryff and Keyes (1995): Described "workplace happiness" as one's belief about their work being purposeful andmeaningful" where they nurture a sense of autonomy, acknowledge work-related and individual feedbackpositively, develop productive relationships with company members, and keep evolving self and others.Joy&Sinosh(2016): The study found two dimensions of "psychological well-being", viz."happiness" and "goal", were positively interrelated with each other, and that "employee involvement" had arelatively higher degree of impact on "happiness' dimension in comparison to the 'goal" dimension of"psychological happiness".

Social status

Warr (2007) has described that the basic features associated with happiness, includes the opportunity forpersonal control, using skills, externally generated goals, variety, environmental clarity, contact with others,availability of prosperity, physical well-being, and an esteemed social prestige.

Work life balance

According to Rego and Cunha (2008), "work family conflict reduces both career and life satisfaction andincreases discontent and stress." So if there is a lack of work-family conciliation, it will lead to less capacity as theworkers may see the workplace as less meaningful. "When they perceive propitiation between both roles, theyengage more strongly in work and family roles, meet their needs in both of them, experience less stress whenparticipating in both roles, and obtain high self- confitdence from the expertise they achieve in their family andprofessional lives" (Marks & MacDermid, 1996)

Autonomy

Happiness is the result of an individual's autonomy power or the ability to personally take decisions. The personwho choose working as a choice are happy. Authorities should assign the roles to individuals with discretiondepending on their level of autonomy.

Happiness is a matter of choice

Happiness is a state of mind, from within and is relative to the individual. It is a matter of choice and happiness at work is still feasible regardless of circumstances (Marical, 2011). The power of the mind is a major determinant of our disposition in life. By having a positive mindset, thinking positive thoughts and seeing the positive in situations and in people, we would be able to experience the positives that life has to offer.

Let us now look at some of the issues challenging the happiness of organisations:

Burn-out

Burn-out refers to the long-term exhaustion and diminished interest in work, tasks or occupation and is fast becoming a phenomenon of the workplace. It has several stages that include:

- Physical mental and emotional exhaustion;
- Shame and doubt; cynicism and callousness; and
- The failure, helplessness and crisis

that cost the individual and organisation dearly including the loss of happiness.

In the book,"The Truth about Burn-out", Christina Maslach and and Michael Lieter describe burn-out as "The disconnection between what people are and what they have to do. Burn-out results in the erosion of values dignity and the human spirit". Often many people succeed in the corporate environment while failing miserably at their personal relationships. Further-more there are workers that are often under utilised and wasted in organisations, Never able to showcase their abilities and skills and our court in the corporate prison where there is no escape. They are steeped in hopelessness and our own a fast track towards being burned out.

Stress

Work related stress occurs when employees are presented with demands and pressures they do not match their knowledge, Abilities and training. , usually there is insufficient support from the organisation, Management or peers in little control over work processes. Although work pressure is part and parcel of the modern work environment, it is when that pressure becomes unbearable or unmanageable that it leads to stress which can in turn damage n employee's health and the business' performance. A healthy work environment is one where the pressures on employees are appropriate to their abilities and resources, the amount of control they have over their work in the support they received to accomplish their tasks. An employee's health and happiness include not only the absence of disease but also physical, mental and social well-being (WHO,2011).

Office Politics

Office politics is another issue that eats at workplace happiness. It keeps people from interacting with their Co-workers and disintegrates team work. As office politics increases, criticism and discontent increase affecting the performance of staff and the organisation negatively. In the long run, this course is a brain drain resulting in a loss of corporate knowledge and insight.

Office politics impedes the productivity of individuals in this ultimately the organisation. Ask people spend time in pulling each other down the work environment becomes disempowered and unsupportive.

Diversity With globalisation, workplace diversity is fast becoming a reality in many countries. Managers are now have to create high levels of performance through their cultural issues. The modern workplace is comprised of employees of different races, believes, work attitudes, leadership styles and mindsets towards authority. There is no more of generational diversity in the workplace than there ever has been before and that presents challenges in more areas than one. Perceptual, cultural and language barriers need to be overcome. While diversity training needs to be the part of organisational diversity management plan, a strategy must be created and implemented to foster a culture of diversity that includes every department in function of theorganisation's Diversity training could be used as a tool to mould the organisation's diversity policy.An organisation's success, competitiveness and workforce happiness will depend on its ability tomanage workplace diversity effectively.

Employment Engagement

"Engagement" Includes things like employee morale, confidence in the company, opportunities, rewards, recognition and trust in leadership.

In the 90s, the business catch phrase to employees was "leave your personal problems at the door when you come to work". The problem is that employees are human and often find it difficult to separate their corporate selves from their personal selves this resulted in disengagement as they felt that if the company did not care for them, why should they care for the company?

Matching skills and talents with the right job

One of the keys to workplace happiness includes matching a job and environment with the one's Talents, passions, values and lifestyle. Being happy at the workplace is more than getting a good salary or benefits from the company. It is about finding what it is in our workplace that we can be happy about that in turn will make our job less stressful. If we are happy at work, we will be taking that happiness home.

The cultivation of effective work habits

The cultivation of effect work habits is also important. Due or heavy work schedules, Menu of us are often too preoccupied With goals, tasks, backlogs, etc. Lack of time out can lead to a high level of stress and burn-out. Time management, delegation of tasks and taking action can assist in building our happiness allowing us time to rest And develop good working relationships with Co-workers.

Associating with positive people

Another good habit to cultivate is to be a positive Influence and to associate with positive people. One of the stressors in the workplace includes the relationships we have with the Co workers. Deal with negative people assertively End professionally but associate with positive people. Development practice positive thoughts, words and deeds (Barnes,2011).

Rest and exercise

Believe it or not, adequate rest in exercise is also very important to our happiness. Exercise releases happy chemicals known as endorphins that engender a sense of wellbeing, While a good rest makes us less stressed.

Laughter in the workplace as an option

Good manager should encourage laughter. A happier and positive workplace increases staff retention, productivity and loyalty. As Robert Orben said "If you can laugh together, you can work together".

Laughter relaxes the body and muscles relieving stress and tension, boosts The immune system, generates a sense of well being and happiness. It creates positive perceptions, eradicates overwhelm and enables open communication.

Summary

From the above study we can conclude that employees are our business and we have to keep in mind the work environment should be comfortable for them. Employee needs to be keep in mind that conducting brainstorming sessions, Wellness programs, training programs and mentoring sessions, among employees will increase interest, creativity and innovation which will lead to happiness. Recreation and refreshment facilities, providing flexible working hours, team outings we will definitely help to create a sense of motivation togetherness and happiness at our workplace.

References

- Adhikari, Aaron (2011): Workplace happiness: Is it achievable? Indian Journal of Health and Well-being 2011 (4),666-669.
- Binswanger, M. (2006). Why does income growth fail to make us happier? Searching for the treadmillsbehind the paradox of happiness. The Journal of Socio-Economics, 35, 366-381.http://dx.doi.org/10.1016 /j.socec.2005.11.040
- Brody, L. (2010). On behalf of another: Exploring social value orientation and responses to injustice.Unpublished PhD's thesis. Emory University, United States. C
- Caporale, G. M., Georgellis, Y., Tsitsianis, N., & Yin, Y. P. (2009). Income and happiness acrossEurope: Do reference values matter? Journal of Economic Psychology, 30, 42-51.http://dx.doi.org/10.1016/j.joep.2008. 06.004
- De Prycker, V. (2010). Happiness on the political agenda? PROS and CONS. Journal of HappinessStudies, 11, 585-603. http://dx.doi.org/10.1007/s10902-010-9205-
- Dogl, C. and Holtbrügge, D. (2014) Corporate Environmental Responsibility, Employer Reputation andEmployee Commitment: An Empirical Study in Developed and Emerging Economies. The InternationalJournal of Human Resource Management, 25,

1739-1762.

- Erdogan, B., Bauer, T. N., Truxillo, D. M., & Mansfield, L. R. (2012). Whistle while you work a reviewof the life satisfaction literature. Journal of Management, 38(4), 1038–1083.
- Fisher, C. (2010), "Happiness at work", International Journal of Management Review, Vol. 12 No. 4, pp.384-412.
- Frey, B. S., & Stutzer, A. (2000a). Maximizing happiness. German Economic Review, 1(2), 145-167.http://dx.doi.org/10.1111/1468-0475.00009
- Georgellis, Y., Lange, T., & Tabvuma, V. (2012). The impact of life events on job satisfaction. Journalof Vocational Behavior, 80, 464-473. http://dx.doi.org/10.1016/j.jvb.2011.12.005
- Hopkins, E. (2008). Inequality, happiness and relative concerns: What actually is their relationship?Journal of Economic Inequality, 6, 351-372. http://dx.doi.org/10.1007/s10888-008-9081-4
- Joy, M. M., & Sinosh, P. K. (2016). Employee Engagement-An Empirical Study On Implications ForPsychological Well Being. International Journal of Management, 7(5).
- Kahn, W.A. (1990), "Psychological conditions of personal engagement and disengagement at work",Academy of Management Journal, Vol. 33 No. 4, pp. 692-724.
- Lembregts, C., & Pandelaere, M. (2014). A 20% income increase for everyone? The effect of relativeincreases in income on perceived income inequality. Journal of Economic Psychology, 43, 37-47.http://dx.doi.org/10.1016/j.joep.2014.04.008
- Marks, S. R. & MacDermid, S. M. Multiple roles and the self: A theory of role balance. Journal ofMarriage and the Family 1996; 58: 417-432.
- Mathur, A. (2012). Health expenditures and personal bankruptcies. Health, 4(12), 1305-1316. http://dx.doi.org/10.4236/health.2012.412192
- Mohit, M.A (2013) Quality of life in Natural and Built Environment— An Introductory Analysis. Procedia—Social and Behavioural Sciences, 101,33-43.
- Oshio, T., & Kobayashi, M. (2011). Area level income inequality and individual happiness: Evidence from Japan. Journal of Happiness Studies, 12(4),633-649. http://dx.doi.ord/10.1007/s10902-010-9220-z
- Robinson, R.N., Kralj, A., Solnet, D.J., Goh, E. and Callan, V. (2014) Thinking Job Embeddedness Not Turnover: Towards a Better Understanding of Frontline Hotel Worker Retention. International Journal of Hospitality Management, 36, 101-109
- Ryff, C. D., & keyes, C. L. M. (1995). The Structure of Psychological Well-being revisited. Journal of personality and social psychology, 69(4), 71.
- Warr, P 2009, Work, happiness and unhappiness, book review, Cognitive Behavioural Therapy book review.

Dr. Va

Dr. Vaishali Gupta
Associate Professor
Vaish Mahila Mahavidyalaya, Rohtak
Dr. Nisha Jain
Associate Professor
Vaish Mahila Mahavidyalaya, Rohtak

Over the Counter: A Study of Factors Influencing Purchase Behaviour Of Consumers in Haryana

Dr.Santosh Mittal, ShuchiGoel, Kajal Mittal

Abstract

Purpose – To study factors affecting the intentions to buy OTC medicines in Haryana.

Design/ Methodology/ Approach – a conceptual framework was developed based on consumers purchase behaviour theories and literature review. Exploratory research was conducted and a quantitative approach is adopted by applying AMOS and descriptive statistical tools on the data collected through self administered questionnaires, which were filled by 368 respondents from Haryana.

Findings – the results indicate that all the identified factors have significant influence on intentions to purchase over the counter medicines. OTC medicines are found to be least popular in Haryana.

Key words/ terms – consumers, buying behaviour, OTC, demographicprofiles

1. Introduction

Medicines are the key component of life nowadays in this busy lifestyle and thus dependency upon medicines is also increasing. Market of medicines has also expanded to a large extent in recent years and both consumers and marketers are becoming aware of that. Medicines can be divided as being either prescription (i.e. dispensed upon doctor's prescription) or non-prescription – also known as over-the-counter (OTC) medicines: which do not need a prescription to be dispensed **(RaedaHabash and Hani Al-Dmour et al., 2020)**. Drastic change can be seen the medicine purchasing pattern catalyzed by various factors such as, educational level of people, globalization, govt. schemes such as SarvaShikshaAbhiyan, etc, availability of knowledge, health sector reforms, management of disease and process of rehabilitation by people, changes in lifestyle of people, sociodemographic factors etc. Thus, it can be said that due to these factors people are becoming more conscious and from here, the concept of self medication has started becoming the substitute of prescribed medicines. Though, the term **self medication** is often confused with the term **self care**. Self care involves all those practices performed by anyone regarding issues like hygiene, nutrition, healthy life style, living and social habits, income related issues etc. It is a boarder concept as compared to self medication because this is just a part of self care.

Self medication in the process of treating yourself by medicines without any prescription.Self medication is successful when medication is safe and effective. One must have sufficient knowledge to self medicate any ailments and conditions.

In developing countries like India, lack of adequate health facilities and resources are also the reason for the increment in self medication practices among people **(Jain, Bhaskar, Gupta, Agali, Yadav&Khurana et al.,2016)**. To the best of the researchers' knowledge, a comparative study of factors affecting OTC medicines purchase behaviour of consumers of have not been studied empirically within the Haryana context before. However, detailed studies have done on explaining Drug prescription and self-medication in India **(Greenhalgh et al., 1987)**. Accordingly, this research aims to fill this gap in the literature by developing a conceptual framework to identify the common factors affecting the purchase of non-prescribed (OTC) in Haryana. This study further extends the scope of making comparison between factors affect on purchase of medicines and also allows knowing the preferences of consumers in Haryana. This research aims to address the following questions:

RQ1. What are the common factors affecting the purchase of over the counter medicines in Haryana?

RQ2. Which factor influences the most in case of over the counter purchase of medicines in Haryana?

2. Literature Review And Hypothesis Development

In this study, we used an integrated model of factors affecting the purchase behaviour of consumers regarding OTC medicines in state of Haryana.**Vener, Krupka & Climo (1982)** explains that women use more OTC and social drugs than man and **Guadaganoli and Ward (1998)** explain about importance of participative decision making frompatients' point of view. On the other hand, **Ferreira, Barbosa (2017)** suggests that participative decision-making had no impact on purchase decision of generics, while perceived risk and price consciousness showed predictive power regarding purchase intention of generic drugs.**Sinha&Batra (1999)** explains how price consciousness which is further affected by perceived category risk and price unfairness affects the buying behaviour of consumers and also explain about price quality association. **Figueiras, Cammano&Gestal- Otero(1999)** explains how sociodemographic factors affects the purchase behaviour of consumers of medicines such as gender, job, place etc. It states that self medication is preferred among women and person who live alone and live in large cities and have acute disorders.

In case of OTC advertising can be done through medicine labels, OTC counter advertising, TV commercials etc. while, in prescribed medicine purchase it is assumed that no such need of advertising is required. If you are practicing self medication, advertising plays crucial role **(Esmay, B.S., Wertheimer, Ph.D., 1979)** as the proper description regarding

uses of medicine, possible side effects from the usage, how to measure the effects of that particular medicine, any special caution and warning etc. should be mentioned.

Based upon the above discussion following hypothesis are formulated:

H1A.The common factors have positive influence on buying behaviour of consumers of OTC medicines

H2A.Preferences of consumers are affected by their demographic profiles.

3. Research Methodology

This study is based exploratory research work. The data have been collected through aself administered questionnaire. Consisted 2 sections. The first section had information regarding demographic profiles of respondents and their preference for the kind of medicine purchase i.e. OTC medicines. The other section included statements based questions based upon 5 factors i.e. price consciousness, perceived risk, advertising, social factors, participative decision making (based on consumers relation with OTC dealer.Primary wasanalyzed using SPSS software and AMOS software and statistical measures like CFA test and descriptive statistics have been used to interpret results and respondents of Haryana was chosen for this study. Respondents of all age group living in both rural and urban areas and having different educational qualifications and different income levels were selected, irrespective of their gender. . Total 368 responses were collected while efforts were made to collect data of 390 respondents but due to limited time and adverse situation, target was not achieved.

Table showing demographic characteristics of respondents:

Table 1: Demographic profiles of respondents

S.NO.	Demographic factor		frequency
1.	Gender	male	131
		female	237
2.	Age	Up to 20yrs	102
		20yrs -30yrs	206
		Above 30yrs	30
3.	Income	Up to 25k	135
		25k to 50k	117
		Above 50k	116
4.	Marital status	unmarried	75
		married	293
5.	Residential status	rural	126
		urban	242
6.	occupation	student	258
		business	38
		Employed	48
		others	26

Table 2: Factor related statements for OTC medicines

Statements regarding over the counter purchase of medicines			
factor	code	References	Statements
Price consciousness	P1	(IndrajitSinha, Rajeev Batra ,1999)	Price of medicine influences my decision of purchase from OTC
	P2	(Peter K. Hanigl and Bradley K. Gillespie , 1995)	I prefer to buy from OTC because prescription fees of doctors are high.
	P3	(IndrajitSinha, Rajeev Batra ,1999)	I prefer to buy from OTC because OTC medicines are relatively cheaper
	P4	(IndrajitSinha, Rajeev Batra ,1999)	I prefer to buy from OTC because pres medicines by doctor are branded and thus expensive
Perceived risk	R1	(A. M. Vener, L. R. Krupka& J. J. Climo, 1982)	In my opinion, seriousness regarding my health affects my purchase decision from OTC.
	R2	(Dunnell and Cartwright, 1972; Heller Research Corporation, 1984; Knapp and Knapp, 1972; Knapp et al., 1974; Thomas, 1990).	In my opinion, minor issues need not to be consulted from doctors because they can be dealt easily through OTC medicines
	R3	(Andrew PaddisonKine Olsen)	In my opinion, chances of side -effects of OTC medicines are not so higher. So, I prefer OTC medicines.
Advertising	A1	(Colin P bradley, ArnoldBaz, Rosalind S Tobias, Joyce E Kenkre&Daimond V Dassu, 1998)	Advertising of medicines enhances my purchase decision as I get sufficient knowledge of what to take at minor issues like headache. So, I prefer OTC medicines.
	A2	Wakefield & Inman (2003)	I am sensitive to advertising of medicine. So, I prefer OTC medicines.
	A3	(A. M. VENER AND L. R KRUPKA, 1986)	Active ingredients are clearly indicated on medicines. So, I prefer OTC medicines as it is enough for me to understand what to purchase
	A4	Gregory et al., (2011)	A good communication with OTC dealer encourages me to purchase OTC medicines
Social factors	S1	(Andrew PaddisonKine Olsen)	If I have a good impression about the person behind the counter. Then I will believe him and prefer OTC.
	S2	(Andrew PaddisonKine Olsen)	Family background purchasing influences my decision regarding purchase of OTC medicines.

Model run for OTC medicine purchase:

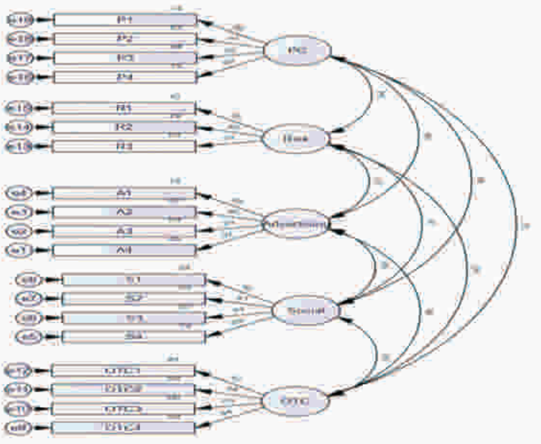

Ata Analysis Technique

In order to analyse the data collected CFA test and AMOS are used. The aim to use factor analysis test is to know the validity, reliability and fitness of the factors identified through review of literature. Model fitness is tested for factors affecting purchase behaviour of consumers of both kinds of medicines. For a good model fit, it is desired that all the major correlations inbuilt in the dataset (with regards to the variables in our model) are taken into consideration and there should not be significant differences between the correlations proposed and the correlations observed. If significant difference occurs between the correlations proposed and the correlations observed, then model is poor fit. Codes were assigned to each factor statements as showed in the above tables. And following

values were obtained:

Parameters obtained as:

S.NO.	PARAMETERS	LIMITS	OBTAINED VALUES
			OTC medicines
1	Chi-square/degree of freedom ($\chi2$/d.f.)	The criterion for acceptance varies across researchers, ranging from less than 2 (Ullmm, 2003) to Less than 3 (Byrne, 2006) to less than 5 (Schumacker& Lomax, 2004).	2.857
2	CFI (Comparative Fit Index)	CFI ≥.90	0.973
3	NFI (Normed Fit Index)	NFI ≥ 0.95	0.959
4	RMSEA (Root mean square error of approximation)	RMSEA< 0.08	0.071

From the values obtained the model s found to fit. The each values observed is under the expected criteria. All the parameters of model fitness i.e. chi square, CFI, NFI and RMSEA are under their respective acceptable limits and thus acceping the hypothesis that the common factors does affect the purchase behaviour of consumers of haryana in case of OTC medicines purchase and the objectives to know about the factors affecting the purchase behaviour is also accompalished.To know the most influential factor in case of OTC medicines purchase mean imputed score of each factor is calculated and to know the preferences level of consumers, descriptive statistcs is used using SPSS software.with the help of these imputed scores the objective to know the most influential factor affecting the purchase behaviour of concumers of Haryana in case of OTC medicines purchase respectively is accompalished and with the help of descriptive stastical analysis the hypothesis to know the affect of demographice factors seprately on consumeres buying behavior is tested. Following tables show mean imputd scores and overall prefernces as well as preferences acc. To different demographic profiles of consumers of Haryana is shown as:

Table 4: Mean imputed scores

Common factors affecting buying behaviour	N	Mean
		OTC
PC	368	1.8442
Risk	368	1.4416
Participative decision making	368	1.9477
Social	368	1.8333
Advertising	368	1.9313
Valid N (list wise)	368	

Table 5: overall preference

		Frequency	Percent	Valid Percent	Cumulative Percent
Valid	OTC	66	17.9	17.9	17.9
	Total	368	100.0	100.0	

Table 6: ranking of preferences according to demographic profiles

S.NO.	Demographic factor	Sub categories	Rank	percentage
1.	gender	Male	OTC medicines	25.95% (34 respondents)
		Female	OTC medicines	13.5%(32 respondents)
2.	occupation	student	OTC medicines	17.44% (45 respondents)
		business	OTC medicines	15.78% (6 respondents)
		employed	OTC medicines	26.08% (12 respondents)
		others	OTC medicines	11.53% (3 respondents)
3.	residential status	rural	OTC medicines	13.49% (17 respondents)
		urban	OTC medicines	20.24% (49 respondents)
4.	marital status	married	OTC medicines	10.66% (8 respondents)
		unmarried	OTC medicines	19.79% (58 respondents)
5.	income	upto25k	OTC medicines	14.07% (19 respondents)
		between 25k-50k	OTC medicines	23.07% (27 respondents)
		above 50k	OTC medicines	17.24% (20 respondents)
6.	age	Up to 20year	OTC medicines	14.70% (15 respondents)
		Between 20 to 30 years	OTC medicines	19.06% (45 respondents)
		Above 30 years	OTC medicines	20% (6 respondents)

In summary, based on the overall analysis, evaluating the data by CFA, AMOS and descriptive statistical analysis, estimates indicated that all the items were appropriate and valid for further statistical analysis and interpretation.

4. Hypothesis Testing And Discussion

Confirmatory factor analysis is used to test the hypothesis i.e.

H1A. The common factors have positive influence on buying behaviour of consumers of OTC medicines

CFA is a statistical procedure which is used to know how well the measured variables represent the number of constructs. In this, researchers can specify the number of factors requires in the data and to know the relation between measured and latent variables. The CFA is used to confirm or reject the measurement theory. The factor analysis involved a 4 step parameters evaluation which includes:

·**Chi square test** which indicates whether the covariance

matrix obtained from the model represents the population covariance and it aso used to generate other fit indices. As shown in table 3, the respective values of chi square or degree of freedom test are 2.857 in case of OTC medicines which are under the acceptance criteria indicating that the model shown above is the fit and ready for further analysis.

·**CFI (comparative fit index)**includes finding discrepancy between the hypothesized model and the observed data. Its value ranges from 0 to 1 and larger values are always better. For OTC medicines purchase its value obtained is .973 which again indicates the fitness of model.

·**NFI (normed fit index)**analyses the discrepancies between chi squared values of the hypothesized and null model. It is an incremental measure of goodness of fit for a staticalmodel and is not affected by no. of parameters in the models. The values are obtained as 0.959 in case of OTC which is again showing the model fitness.

·**RMSEA (Root mean square error of approximation)** assesses how far a hypothesized model is from perfect model. The value of 0.074 indicates acceptable fit. The vales between .05 and .08 are acceptable. While above .08 are marginal and above 1 are poor. The values we obtained from the data are .071 in case of OTC medicines this indicates the positive fitness of our model.

Thus, from the above explanation it is concluded that model is found to be fit and the above hypothesis are accepted. It is also answered that the factors that we identified from the extensive literature review (*Price consciousness*, *Perceivedrisk*, *Advertising, social factors and Participative decision (based on relation with doctor and OTC dealer)* do affect the buying behaviors of medicines consumers in Haryana and thus answering RQ1.

Descriptive statistics is used to study the third hypothesis i.e. H3A. Preferences of consumers are **affected by their demographic profiles.**

· **The mean imputed score** of each factor is calculated separately for OTC medicines purchase as shown in table 4. This is used for knowing the weightage of each factor separately on making the final decision to purchase by consumers. The results obtained from data collected from 368 respondents indicate that Participative decision (based on relation with OTC dealer) is the most influential factor with score of **1.9477.** Importance of participative decision in buying behaviour is also indicated by the study of **Guadaganoli and Ward, 1998.** The least influencing factor is perceived risk with the score of **1.4416** in case of OTC medicines purchase. The result is even supported by the study of **Bradley &Bond (1995)** which states OTC medication safe. And also the study of **Greenhalgh (1987)**, *Drugs which have been withdrawn as dangerous in the West remain popular first line drugs in India*, has found to be supported by this result because of low perception of risk among consumers.

5. Research Contributions And Implications

This research adds to the current body of knowledge in pharmaceutical purchaser behaviour by analyzing the area under discussion in a new setting environment. The factors affecting decision to buy OTC medicines were not actually analyzed before within the Haryana context to the researcher's knowledge. Compared to the related studies in the same field, this study might be more comprehensive about the thoroughly study of common factors regarding purchase behaviour of consumers of medicines in Haryana and about the study of preferences of consumers in Haryana. To the researcher's knowledge it is the first study to consider the effect of demographic profiles on the medicines purchase preferences of consumers and to consider the common factors affecting OTC medicines purchase by people. This research could assist marketing managers and product managers in pharmaceutical companies to recognize better the factors that decide the pharmaceutical consumer's behavior in general and their intentions to buy OTC medicines. This will help them to prepare focused marketing strategies to think about the main determinants of intention to buyOTC medicines, so they can better meet their goals and distinguish themselves from competitors.This would guide the marketers in preparation for their best strategies, areas of focus and domains of development. The study could guide the future researchers to explore beyond a particular state. To explore more, more in depth tests could be applied on the data. Besides this, the study had some limitations such as small sample size and limited time to collect the data.

References

Ferreira, P., & Barbosa, H. (2017). Choice of mandatory prescribed drugs in Portugal: A consumers' perspective

✍Fisk, R. P., Patrício, L., Gruber, T., &Frugone, F. (2011). Uncovering the desired qualities and behaviours of general practitioners (GPs) during medical (service recovery) encounters. *Journal of Service Management*.

✍Cooper, R. J. (2013). Over-the-counter medicine abuse–a review of the literature. *Journal of substance use*, *18*(2), 82-107.

✍Albsoul-Younes, A., Wazaify, M., Yousef, A. M., &Tahaineh, L. (2010). Abuse and misuse of prescription and nonprescription drugs sold in community pharmacies in Jordan. *Substance use & misuse*, *45*(9), 1319-1329.

✍Esmay, J. B., & Wertheimer, A. I. (1979).A review of over-the-counter drug therapy. *Journal of community health*, *5*(1), 54-66.

Vener, A. M., Krupka, L. R., &Climo, J. J. (1982). Drugs (prescription, over-the-counter, social) and the young adult: Use and attitudes. *International Journal of the Addictions*, *17*(3), 399-415.

Vuckovic, N., &Nichter, M. (1997).Changing patterns of pharmaceutical practice in the United States. *Social Science & Medicine*, *44*(9), 1285-1302.

Angevine, E. (1972). The concerned consumer. *Journal of the American Pharmaceutical Association*, *12*(7), 356.

Morgan, P. P., & Cohen, L. (1995). Off the prescription pad and over the counter: the trend toward drug deregulation grows. *CMAJ: Canadian Medical Association Journal*, *152*(3), 387.

Kogan, M. D., Pappas, G., Stella, M. Y., &Kotelchuck, M. (1994). Over-the-counter medication use among US preschool-age children. *Jama*, *272*(13), 1025-1030.

Knapp, D. A., & Knapp, D. E. (1972). Decision-making and self-medication: preliminary findings. *American Journal of Health-System Pharmacy*, *29*(12), 1004-1012.

Sinha, I., &Batra, R. (1999).The effect of consumer price consciousness on private label purchase. *International journal of research in marketing*, *16*(3), 237-251.

Willis, E., & Stafford, M. R. (2016).Health consciousness or familiarity with supplement advertising. *International Journal of Pharmaceutical and Healthcare Marketing*.

Paddison, A., & Olsen, K. (2008).Painkiller purchasing in the UK. *International Journal of Pharmaceutical and Healthcare Marketing*.

Annandale, E., &Riska, E. (2009). New connections: towards a gender-inclusive approach to women's and men's health.

Penner, M. (2017). Practitioner Application: The Effects of Price and Health Consciousness and Satisfaction on the Medical Tourism Experience. *Journal of Healthcare Management*, *62*(6), 417-418.

Bernardini, C., Ambrogi, V., &Perioli, L. (2003). Drugs and non-medical products sold in pharmacy: information and advertising. *Pharmacological research*, *47*(6), 501-508.

Guadagnoli, E., & Ward, P. (1998).Patient participation in decision-making. *Social science & medicine*, *47*(3), 329-339.

Wiedenmayer, K., Summers, R. S., Mackie, C. A., Gous, A. G., Everard, M., Tromp, D., & World Health Organization. (2006). *Developing pharmacy practice: a focus on patient care: handbook* (No. WHO/PSM/PAR/2006.5). World Health Organization.

Dr.Santosh Mittal
Associate Professor
VaishMahilaMahavidyalaya
Rohtak
drsantoshmittal@gmail.com

Shuchi Goel
shuchigoel767@gmail.
VaishMahilaMahavidyalaya
Rohtak

Kajal Mittal
M.Com
B.P.S.MahilaVishwavidyalaya
shuchigoel767@gmail.co
Khanpur

91

Value Education And National Education Policy 2020

Mrs. Kavita Jain

Abstract

This paper presents an overview of VALUE EDUCATION AND NEP 2020 in which there are some points regarding value education and source which help in education and integral part of all religions. VBE has now been made an integral part of the New Education Policy 2020. Let us look at some sources which can help the schools translate the idea into mainstream schooling through regular workshops. Some years back Ministry of HRD had set up National Resource Centers for Value Education (NRCVE) of NGOs from different Religious faiths, including IIT D, IIM L and some well-known and reputed NGO's and there is also a part of NEP which defines the National Education Policy and its policy This National Education Policy envisions an education system rooted in Indian ethos that contributes directly to transforming India, that is Bharat, sustainably into an equitable and vibrant knowledge society, by providing high-quality education to all, and thereby making India a global knowledge superpower.

Value Education

Sources who can help introduce Value Based Education:

VBE has now been made an integral part of the New Education Policy 2020. Let us look at some sources which can help the schools translate the idea into mainstream schooling through regular workshops. Some years back Ministry of HRD had set up National Resource Centers for Value Education (NRCVE) of NGOs from different Religious faiths, including IIT D, IIM L and some well-known and reputed NGO's. These NGO's can be a useful source in helping schools to set up action plans, workshops, material, etc. NCERT should be able to help schools contact them. NCERT has also brought a book "Education for Values in Schools – A Framework". UNESCO has a book: "Learning – The Way of Peace – A Teachers Guide to Peace Education". IGNOU had a DEP-SSA project which brought out a book "Effective Classroom Processes – (a resource book)" in which Unit 7: "Self-development among Teachers and Students", deals with various self-development practices. CBSE has a book on Life Skills Education, Class VI. There are many other sincere NGOs.

The Five Human values are integral part of all Religions:

Inter alia the 5 universal values specifically mentioned in NEP 2020, are "Truth, Peace, Non-violence, Love, Righteous conduct", based on previously identified values in other government reports. These 5 values were being taught by various NGOs and Sai International Centre for Human Values had brought a series of books on various Religions and the Five Human Values. Thus, material on various religions and values is already available; and workshops have been conducted by the various NGOs, for many Principals of Kendriya, Navodaya Vidyalaya, Sainik schools, Army Public schools, IAS and senior Police Officers, etc. Schools can request the NRCVE to help in nurturing the young towards being good, better best, so the children imbibe love for country, it's ideals, values, thru universal prayers. The Supreme Court has also talked of these five values and held that:

Value based education is likely to help the nation fight against all kinds of prevailing fanaticism, ill-will, violence, dishonesty, corruption, exploitation and drug abuse.

Curriculum in schools have to develop key qualities like regularity, punctuality, cleanliness, self-control, industriousness, sense of duty, desire to serve, responsibility, enterprise, creativity, etc.

· Although not the only source, religion is a major source of value generation. What is required is education about religion, their basics, values inherent in them, and comparative study of philosophy of all religions.

UNESCO asks: Are we giving adequate attention to teach peace? Are our schools really interested in producing a peaceful young generation? And remark: Those who want 'war' (consumerism, sex, violence, drugs, lower pleasures and entertainment) prepare the young for war; but those who want peace have neglected training the young for peace.

3. During early childhood, instead of focusing only on ABC, 123, the major focus should be on inculcating good habits, values, discipline, manners, care and concern for each other, being helpful, learning to share, being friendly, doing their duties, clean, simple hygiene. This is the age to imbibe thru' good stories, fun, playful activities, human values of truth, love, ahimsa, righteous conduct, peace, etc. This is also the age of getting into the good habit of starting the day with prayers, being worshipful, experiencing joy of silence, respecting parents, elders, teachers; expressing silent gratefulness and thanks, wishing everyone to be happy, peaceful, joyful, etc.

Childhood care and education is not for learning; but is the time and age for imbibing habits, values, disciplines, punctuality, timekeeping etc., helpful in building character and commitment to being good and doing our duties. Learning is secondary.

4. Freedom of Choice: Of all things and beings in the universe, freedom to choose is the greatest gift, given only to human beings. However, with the gift of freedom of choice comes responsibility. There're no free lunches, and so this 'gift' is a double-edged sword and we must learn to choose wisely and

not foolishly for short-term immediate pleasures. In our traditional culture the very purpose of schooling was to awaken our Viveka, to choose wisely, the long-term good and get established in the habit of daily self-development practices, prayers, meditation, yoga, inspirational-scriptural-studies, worship, etc. to build ability, strength, powers of mind to walk-the-talk; the often difficult path of discipline, ethics, righteous conduct, etc., the 'road less travelled by'.

5. Doing what we want is not freedom, but slavery! It is slavery to our mind, our wants, our desires, which may not be for our long-term good; may not be in accordance with righteous conduct or our swadharma, respective duties!

Freedom really means, not having to do what we want to do. This means, when faced with choices, we've the wisdom to look at various choices, and the freedom to not follow our selfish short-term-pleasure-giving-desires, and then choose that which we feel is long-term good for everyone.

National Education Policy 2020

Introduction

Education is fundamental for achieving full human potential, developing an equitable and just society, and promoting national development. Providing universal access to quality education is the key to India's continued ascent, and leadership on the global stage in terms of economic growth, social justice and equality, scientific advancement, national integration, and cultural preservation. Universal high-quality education is the best way forward for developing and maximizing our country's rich talents and resources for the good of the individual, the society, the country, and the world. India will have the highest population of young people in the world over the next decade, and our ability to provide high-quality educational opportunities to them will determine the future of our country. The global education development agenda reflected in the Goal 4 (SDG4) of the 2030 Agenda for Sustainable Development, adopted by India in 2015 - seeks to "ensure inclusive and equitable quality education and promote lifelong learning opportunities for all" by 2030. Such a lofty goal will require the entire education system to be reconfigured to support and foster learning, so that all of the critical targets and goals (SDGs) of the 2030 Agenda for Sustainable Development can be achieved.

National Education Policy 2020

Education Policy lays particular emphasis on the development of the creative potential of each individual. It is based on the principle that education must develop not only cognitive capacities - both the 'foundational capacities 'of literacy and numeracy and 'higher-order' cognitive capacities, such as critical thinking and problem solving – but also social, ethical, and emotional capacities and dispositions. The rich heritage of ancient and eternal Indian knowledge and thought has been a guiding light for this Policy. The pursuit of knowledge (Jnan), wisdom (Pragyaa), and truth (Satya) was always considered in Indian thought and philosophy as the highest human goal. The aim of education in ancient India was not just the acquisition of knowledge as preparation for life in this world, or life beyond schooling, but for the complete realization and liberation of the self. World-class institutions of ancient India such as Takshashila, Nalanda,Vikramshila, Vallabhi, set the highest standards of multidisciplinary teaching and research and hosted scholars and students from across backgrounds and countries. The Indian education system produced great scholars such as Charaka, Susruta, Aryabhata, Varahamihira, Bhaskaracharya, Brahmagupta, Chanakya, Chakrapani Datta, Madhava, Panini, Patanjali, Nagarjuna, Gautama, Pingala, Sankardev, Maitreyi, Gargi and Thiruvalluvar, among numerous others, who made seminal contributions to world knowledge in diverse fields such as mathematics, astronomy, metallurgy, medical science and surgery, civil engineering, architecture, shipbuilding and navigation, yoga, fine arts, chess, and more. Indian culture and philosophy have had a strong influence on the world. These rich legacies to world heritage must not only be nurtured and preserved for posterity but also researched, enhanced, and put to new uses through our education system. The teacher must be at the centre of the fundamental reforms in the education system. The new education policy must help re-establish teachers, at all levels, as the most respected and essential members of our society, because they truly shape our next generation of citizens. It must do everything to empower teachers and help them to do their job as effectively as possible. The new education policy must help recruit the very best and brightest to enter the teaching profession at all levels, by ensuring livelihood, respect, dignity, and autonomy, while also instilling in the system basic methods of quality control and accountability. The new education policy must provide to all students, irrespective of their place of residence, a quality education system, with particular focus on historically marginalized, disadvantaged, and underrepresented groups. Education is a great leveler and is the best tool for achieving economic and social mobility, inclusion, and equality. Initiatives must be in place to ensure that all students from such groups, despite inherent obstacles, are provided various targeted opportunities to enter and excel in the educational system. These elements must be incorporated taking into account the local and global needs of the country, and with a respect for and deference to its rich diversity and culture. Instilling knowledge of India and its varied social, cultural, and technological needs, its inimitable artistic, language, knowledge traditions, and its strong ethics in India's young people is considered critical for purposes of national pride, self-confidence, self-knowledge, cooperation, and integration.

A good education institution is one in which every student feels welcomed and cared for, where a safe and stimulating learning environment exists, where a wide range

of learning experiences are offered, and where good physical infrastructure and appropriate resources conducive to learning are available to all students. Attaining these qualities must be the goal of every educational institution. However, at the same time, there must also be seamless integration and coordination across institutions and across all stages of education.

The fundamental principles that will guide both the education system at large, as well as the individual institutions within it are: **recognizing, identifying,** and **fostering the unique capabilities of each student,** by sensitizing teachers as well as parents to promote each student's holistic development in both academic and non-academic spheres; **according the** highest priority **to achieving Foundational Literacy and Numeracy** by all students by Grade 3;

flexibility, so that learners have the ability to choose their learning trajectories and programmes, and thereby choose their own paths in life according to their talents and interests;

no hard separations between arts and sciences, between curricular and extra-curricular activities, between vocational and academic streams, etc. in order to eliminate harmful hierarchies among, and silos between different areas of learning; **emphasis on conceptual understanding** rather than rote learning and learning-for-exams;

creativity and critical thinking to encourage logical decision-making and innovation;

ethics and human & Constitutional values like empathy, respect for others, cleanliness, courtesy, democratic spirit, spirit of service, respect for public property, scientific temper, liberty, responsibility, pluralism, equality, and justice;

promoting multilingualism and the power of language in teaching and learning;

life skills such as communication, cooperation, teamwork, and resilience;

focus on regular formative assessment for learning rather than the summative assessment that encourages today's 'coaching culture ';

extensive use of technology in teaching and learning, removing language barriers, increasing access for *Divyang* students, and educational planning and management;

respect for diversity and **respect for the local context** in all curriculum, pedagogy, and policy, always keeping in mind that education is a concurrent subject;

full equity and inclusion as the cornerstone of all educational decisions to ensure that all students are able to thrive in the education system;

synergy in curriculum across all levels of education from early childhood care and education to school education to higher education;

Early Childhood Care and Education: The Foundation of Learning Over 85% of a child's cumulative brain development occurs prior to the age of 6, indicating the critical importance of appropriate care and stimulation of the brain in the early years in order to ensure healthy brain development and growth. Presently, quality ECCE is not available to crores of young children, particularly children from socio-economically disadvantaged backgrounds. Strong investment in ECCE has the potential to give all young children such access, enabling them to participate and flourish in the educational system throughout their lives. Universal provisioning of quality early childhood development, care, and education must thus be achieved as soon as possible, and no later than 2030, to ensure that all students entering Grade 1 are school ready.

ECCE ideally consists of flexible, multi-faceted, multi-level, play-based, activity-based, and inquiry-based learning, comprising of alphabets, languages, numbers, counting, colours, shapes, indoor and outdoor play, puzzles and logical thinking, problem-solving, drawing, painting and other visual art, craft, drama and puppetry, music and movement. It also includes a focus on developing social capacities, sensitivity, good behaviour, courtesy, ethics, personal and public cleanliness, teamwork, and cooperation. The overall aim of ECCE will be to attain optimal outcomes in the domains of: physical and motor development, cognitive development, socio-emotional-ethical development, cultural/artistic development, and the development of communication and early language, literacy, and numeracy.

Foundational Literacy and Numeracy: An Urgent & Necessary Prerequisite to Learning

The ability to read and write, and perform basic operations with numbers, is a necessary foundation and an indispensable prerequisite for all future schooling and lifelong learning. However, various governmental, as well as non-governmental surveys, indicate that we are currently in a learning crisis: a large proportion of students currently in elementary school - estimated to be over 5 crore in number - have not attained foundational literacy and numeracy, i.e., the ability to read and comprehend basic text and the ability to carry out basic addition and subtraction with Indian numerals.

3. Curtailing Dropout Rates and Ensuring Universal Access to Education at All Levels

One of the primary goals of the schooling system must be to ensure that children are enrolled in and are attending school. Through initiatives such as the Sarva Shiksha Abhiyan (now the Samagra Shiksha) and the Right to Education Act, India has made remarkable strides in recent years in attaining near-universal enrolment in elementary education. However, the data for later grades indicates some serious issues in retaining children in the schooling system. The GER for Grades 6-8 was 90.9%, while for Grades 9-10 and 11-12 it was only 79.3% and 56.5%, respectively - indicating that a significant proportion of enrolled students drop out after Grade 5 and especially after Grade 8. As per the 75th round household survey by NSSO in 2017-18, the number of out of school children in the age group of 6 to 17 years is 3.22 crore. It will be a top priority to bring

these children back into the educational fold as early as possible, and to prevent further students from dropping out, with a goal to achieve 100% Gross Enrolment Ratio in preschool to secondary level by 2030. A concerted national effort will be made to ensure universal access and afford opportunity to all children of the country to obtain quality holistic education–including vocational education - from pre-school to Grade 12.

4. Curriculum and Pedagogy in Schools: Learning Should be Holistic, Integrated, Enjoyable, and Engaging

Restructuring school curriculum and pedagogy in a new 5+3+3+4 design

4.1. The curricular and pedagogical structure of school education will be reconfigured to make it responsive and relevant to the developmental needs and interests of learners at different stages of their development, corresponding to the age ranges of 3-8, 8-11, 11-14, and 14-18 years, respectively. The curricular and pedagogical structure and the curricular framework for school education will therefore be guided by a 5+3+3+4 design, consisting of the Foundational Stage (in two parts, that is, 3 years of Anganwadi/pre-school + 2 years in primary school in Grades 1-2; both together covering ages 3-8), Preparatory Stage (Grades 3-5, covering ages 8-11), Middle Stage (Grades 6-8, covering ages 11-14), and Secondary Stage (Grades 9-12 in two phases, i.e., 9 and 10 in the first and 11 and 12 in the second, covering ages 14-18).

The Vision of this Policy

This National Education Policy envisions an education system rooted in Indian ethos that contributes directly to transforming India, that is Bharat, sustainably into an equitable and vibrant knowledge society, by providing high-quality education to all, and thereby making India a global knowledge superpower. The Policy envisages that the curriculum and pedagogy of our institutions must develop among the students a deep sense of respect towards the Fundamental Duties and Constitutional values, bonding with one's country, and a conscious awareness of one's roles and responsibilities in a changing world. The vision of the Policy is to instill among the learners a deep-rooted pride in being Indian, not only in thought, but also in spirit, intellect, and deeds, as well as to develop knowledge, skills, values, and dispositions that support responsible commitment to human rights, sustainable development and living, and global well-being, thereby reflecting a truly global citizen.

Has freedom of choice and equal opportunity to all, produced good political leaders, professionals, business men, workforce, of character? Don't we see that modern education, bereft of spiritual orientation, has given rise to corruption, greed, inefficiencies? Don't we see that stung by modern IQ, 3R's, education, our workforce is no longer getting skilled, but are looking for sarkari jobs, for status, perks, time to laze! Don't we see that 'work is no longer worship'; even organizations now exist for profit to stakeholders, not to solve the problems or serve the genuine needs of society! Thus, VBE is really a MUST.

Conclusion: Implementing Value Based Education is our modern challenge and is an opportunity for Religions to show their ability to work together with academia to create enlightened citizens for the good of the nation. Let politics not divide us into opposing sides!

Mrs. Kavita Jain
Assistant Professor In Comerce
Vaish Mahila Mahavidhyalya, Rohtak
e-mail:-k4kavitajain@gmail.com
Contact No. -9254653008

Sustainable Development, in the Indian Social Context

Dr Renu Rana

Abstract:
Sustainable development is a crucial concept in today's world, particularly in India, where the country's rapid economic growth is putting a strain on its natural resources. This paper aims to examine the concept of sustainable development in the Indian social context, exploring the challenges and opportunities for achieving sustainable development in India. The paper will review the current state of sustainability in India, including the country's efforts to promote sustainable development and identify critical areas where further action is needed. The paper will also analyse the role of various stakeholders, including the government, businesses, and civil society, in promoting sustainable development in India. Finally, the paper will provide recommendations for achieving sustainable development in India, considering the country's unique cultural, economic, and political context.

Introduction:
Sustainable development is a concept that refers to the balancing of economic, social, and environmental objectives for the present and future generations. It involves meeting the needs of the present without compromising the ability of future generations to meet their own needs. The concept of sustainable development was introduced in 1987 in the World Commission on Environment and Development report, also known as the Brundtland Report.

In the Indian context, sustainable development has gained increasing attention in recent years due to the country's rapid economic growth, which has strained its natural resources and the environment. India faces various sustainability challenges, including widespread poverty, rapid urbanisation, declining natural resources, and the effects of climate change. At the same time, India has significant opportunities to promote sustainable development, including its large and growing economy, diverse natural resources, and vibrant civil society.

In response to these challenges and opportunities, the Indian government has taken several steps to promote sustainable development. These efforts include implementing sustainable development policies, investing in renewable energy, and promoting environmentally sustainable practices in various sectors such as agriculture, tourism, and manufacturing. Additionally, civil society organisations, businesses, and local communities are essential in promoting sustainable development in India through environmental education and awareness campaigns, conservation efforts, and community-based sustainable development programs.

Despite these efforts, significant challenges in achieving sustainable development in India still need to be addressed, including a lack of political will, limited resources, and resistance to change. Nevertheless, the country has the potential to become a leader in sustainable development by addressing these challenges and leveraging its strengths in innovative and sustainable practices.

India's current state of sustainability, its challenges and opportunities.
Both challenges and opportunities mark the current state of sustainability in India. On the one hand, India faces significant environmental and social challenges, including widespread poverty, rapid urbanisation, declining natural resources, and the impacts of climate change. For example, the country's rapidly growing population and economy are putting pressure on its natural resources, leading to deforestation, soil degradation, water scarcity, and air pollution.

At the same time, India also has significant opportunities to promote sustainable development. For instance, the country has a large and growing economy, diverse natural resources, and a vibrant civil society, all of which can be leveraged to drive sustainable development. Additionally, India has a rich cultural heritage and a history of innovative and sustainable practices, such as traditional agriculture methods well-suited to the country's climate and soil conditions.

There are significant challenges to achieving sustainable development in India. For example, there needs to be more political will, and resources must be required to implement sustainable development policies and initiatives. This is partly due to economic growth and development prioritisation over environmental and social considerations. Additionally, resistance to change and a lack of awareness about the importance of sustainability can also act as barriers to progress. Another significant challenge is the need for collaboration and stakeholder engagement in promoting sustainable development. The government, civil society organisations, and businesses often work in isolation, resulting in fragmented and ineffective efforts to promote sustainability. Moreover, there needs to be more coordination and cooperation between different levels of government and between government and other stakeholders, which can hinder the implementation of sustainable development initiatives.

Lack of political will is a major challenge in achieving sustainable development in India. Despite the country's significant environmental, economic, and social challenges, many politicians and decision-makers need more will to prioritise sustainability and adopt the policies and

practices necessary to support it. Short-term economic interests and political and ideological differences often drive this lack of political will.

Limited resources, including financial, technical, and human resources, are a significant challenge in achieving sustainable development in India. Many of the country's rural communities and small and medium-sized enterprises need more resources to adopt sustainable practices and fully participate in economic growth. Additionally, the government needs more resources to implement comprehensive sustainability policies and programs at the national, state, and local sustainability policies and programs.

Resistance to change is another significant barrier to achieving sustainable development in India. Despite sustainable development's many environmental, economic, and social benefits, many individuals, communities, and organisations resist change and may resist efforts to adopt new policies and practices. This resistance is often driven by concerns about the costs of uncertainties associated with change and a need to understand the benefits of sustainability.

Despite these challenges, there is a reason for hope. India has a long history of innovation and resilience, and the country has many examples of successful sustainable development initiatives. Additionally, there is growing awareness and concern about the importance of sustainability and increasing efforts to promote sustainable development by various stakeholders, including the government, businesses, and civil society organisations. So, it is essential to address these challenges and build on the country's strengths, including its rich cultural heritage, diverse natural resources, and dynamic civil society.

The role of government, businesses, and civil society in promoting sustainable development

The government is crucial in promoting sustainable development in India, including creating and implementing policies, investing in renewable energy and other sustainable development initiatives, and promoting environmentally sustainable practices in various sectors. Additionally, the government can create a supportive legal and regulatory framework to encourage and facilitate sustainable development. For example, the government can provide tax incentives, subsidies, and other financial support to businesses and organisations that adopt environmentally sustainable practices.

The Indian government has several sustainable development initiatives and policies to promote environmental and social sustainability. Some of the critical initiatives and policies include:

1. National Action Plan on Climate Change (NAPCC): This policy outlines India's strategies to mitigate and adapt to the impacts of climate change. The NAPCC outlines a comprehensive approach to addressing climate change, including measures to reduce greenhouse gas emissions, enhance energy efficiency, and promote renewable energy.

2. Swachh Bharat Mission: Launched in 2014, this initiative aims to clean up the streets, roads and infrastructure of India's cities, towns, and rural areas. The initiative aims to improve public health and quality of life and to create a clean and sustainable environment for all citizens.

3. National Biodiversity Act: This act, passed in 2002, provides a legal framework for the conservation and sustainable use of India's biodiversity. The act requires that the government, businesses, and individuals take steps to conserve biodiversity and establishes a system of penalties for those violating the act's provisions.

4. Make in India: This initiative, launched in 2014, aims to encourage businesses to invest in India and to promote the country's manufacturing sector. The initiative includes a range of measures to support sustainable development, including investment in renewable energy, promoting environmentally sustainable products, and supporting small and medium-sized enterprises.

5. National Solar Mission: This policy, launched in 2010, aims to promote the development and using solar energy in India. The mission aims to increase the use of solar energy in the country and to reduce dependence on fossil fuels.

Businesses also have an essential role in promoting sustainable development in India, which includes incorporating sustainable practices into their operations, such as using renewable energy, reducing waste, and conserving natural resources. Businesses can also contribute to sustainable development by developing and marketing sustainable products and services and engaging in socially responsible practices, such as investing in local communities and supporting environmental initiatives. Moreover, businesses can provide financial and technical support to sustainable development initiatives and can help to raise awareness about the importance of sustainability among consumers and the broader public.

Civil society organisations are also critical actors in promoting sustainable development in India. These organisations raise awareness about the importance of sustainability, advocate for sustainable development policies and initiatives, and mobilise public support for sustainable development. Additionally, civil society organisations can provide education and training to communities and individuals. They can support community-based sustainable development programs, such as conservation efforts, environmental education and awareness campaigns, and sustainable agriculture initiatives.

Impact of globalisation and technological advancements on sustainable development in India

Globalisation and technological advancements have both had a significant impact on sustainable development in India. On the

one hand, these developments have created opportunities for economic growth and increased access to goods, services, and information. Globalisation has boosted economic growth in India, leading to a rise in the standard of living for many citizens. They have also created new challenges for sustainable development, including increased resource consumption, competition for finite resources such as water, land, and energy, environmental degradation, and social inequality.

In addition, globalisation has led to increased competition for jobs, which has put downward pressure on wages and working conditions, making it more difficult for workers to achieve sustainable livelihoods. Technological advancements have also had a significant impact on sustainable development in India. New technologies have improved the efficiency of production processes and created new opportunities for sustainable development, such as the growth of renewable energy technologies. However, they have also created new environmental challenges, such as electronic waste and releasing toxic chemicals into the environment. Additionally, technological advancements have disrupted traditional livelihoods and created new forms of inequality. Those with access to technology have more significant economic growth and success opportunities than those without it.

Globalisation and technological advancements have both had a significant impact on sustainable development in India. While these developments have created new opportunities for growth and progress, they have also created new challenges that must be addressed to achieve a sustainable future.

Role of education, awareness, and public participation in promoting sustainable development in India

Education, awareness, and public participation are crucial elements in promoting sustainable development in India. These elements help create the conditions for individuals and communities to engage in sustainable practices and make informed decisions supporting a more sustainable future.

Education plays a vital role in promoting sustainable development by providing individuals with the knowledge and skills necessary to understand sustainability's complexities and take action to support it. For example, education can help individuals understand the importance of reducing energy consumption, waste, and water conservation. This understanding can, in turn, lead to behaviour change and the adoption of sustainable practices.

Awareness is also an essential aspect of promoting sustainable development, including awareness of sustainability's importance and the steps individuals can take to support it. For example, raising public awareness about the benefits of renewable energy can encourage individuals to invest in and use these technologies, thereby reducing their dependence on fossil fuels. Similarly, raising awareness about the impact of waste on the environment can encourage individuals to reduce their waste and recycle.

Public participation is also critical in promoting sustainable development, including the active involvement of individuals, communities, and organisations in developing and implementing sustainable policies and practices. For example, public participation can help to identify and prioritise sustainability concerns and to develop solutions to address these concerns. In addition, public participation can help build a sense of ownership and responsibility among individuals and communities for the environment and encourage the adoption of sustainable practices.

The interlinkages between environmental, economic, and social sustainability.

In India, environmental, economic, and social sustainability are interlinked and mutually dependent. Addressing one aspect of sustainability often requires attention to the others. For example, economic development that relies on exploiting natural resources may result in environmental degradation, negatively impacting local communities and their livelihoods. Conversely, efforts to conserve the environment can create new economic opportunities, such as ecotourism development, and improve local communities quality of life.

Environmental sustainability in India is critical for maintaining the country's ecosystems' health and providing essential resources for future generations. The government is home to a rich diversity of flora and fauna, and many of its rivers and wetlands serve as important habitats for migratory waterfowl. However, India's rapidly growing population and economy have placed increasing pressure on the country's natural resources, resulting in deforestation, soil degradation, and the depletion of groundwater aquifers. Addressing these environmental challenges will require a multi-faceted approach considering economic and social factors.

Economic sustainability is critical for ensuring the long-term viability of the Indian economy and for improving the standard of living for its citizens. India's economy has experienced significant growth in recent years, driven partly by its expanding manufacturing sector and growing middle class. However, this growth has also led to increased competition for resources and the depletion of natural resources. To ensure long-term economic sustainability, it will be necessary to adopt policies and practices that promote resource efficiency and conservation and develop new economic opportunities based on sustainable principles.

Social sustainability is critical for improving India's citizens' quality of life and addressing social inequalities. Despite India's recent economic growth, poverty remains a significant challenge, and large disparities in wealth and access to resources persist. It will be necessary to adopt policies and practices that promote social equality and ensure that economic growth benefits are shared equitably among the

country's citizens. Additionally, efforts to address environmental and economic sustainability will need to consider the needs and perspectives of local communities, as they are often most directly impacted by environmental and economic changes.

Successful sustainable development initiatives in India

There have been several successful sustainable development initiatives in India, which have helped to demonstrate the benefits of sustainable practices and to encourage the adoption of more sustainable policies and procedures.

One such initiative is the Barefoot College in the state of Rajasthan. The college provides rural communities access to renewable energy and other sustainable technologies and the training necessary to maintain and operate these technologies. This has helped improve rural communities' quality of life and reduce dependence on traditional energy sources like coal and oil. Another successful initiative is the Promotion of Rural Livelihoods program, which provides rural communities access to new economic opportunities and financial services. The program has helped reduce poverty and increase rural communities' economic security while promoting sustainable economic growth.

The Chipko movement began in the 1970s and was one of the first environmental campaigns in India and is widely recognised as a successful example of community-led conservation. The movement was focused on the protection of forests and the preservation of natural resources. It helped raise awareness about the importance of sustainable resource management and encouraged the adoption of more sustainable policies and practices.

Recommendations for promoting sustainable development in India.

To promote sustainable development in India, adopting a more holistic approach that considers the interlinkages between environmental, economic, and social sustainability is essential. This will require greater collaboration, stakeholder engagement, and more effective policy implementation. A more holistic approach to sustainable development in India must consider sustainability's environmental, economic, and social dimensions and recognise the interlinkages between these dimensions. This will require a comprehensive and integrated approach to policy-making and implementation, which considers the trade-offs and synergies between different policies and programs and seeks to optimise the benefits and minimise the costs of sustainable development.

Greater collaboration and stakeholder engagement are also essential to promoting sustainable development in India. This will require government, business, and civil society organisations, as well as individuals and communities, to develop and implement sustainable policies and programs. The participation of a wide range of stakeholders will ensure that the perspectives and needs of different groups are considered and that sustainable development policies and programs are more inclusive and equitable.

More effective policy implementation is also essential to promoting sustainable development in India. This will require substantial and committed leadership and effective governance and management structures to ensure that policies are implemented effectively and that the benefits of sustainable development are realised. It will also require adequate resources, including financial, technical, and human resources, to support the implementation of sustainable policies and programs. In conclusion, promoting sustainable development in India will require a more holistic approach, greater collaboration and stakeholder engagement, and more effective policy implementation. By adopting these recommendations, India can build a more sustainable future and help set an example for other countries.

References:

Japan? AGC Asahi Glass to Present New Experiences with the Feel of Glass Touch at Milan Design Week 2017. (2017). MENA Report, n/a

United States? Global Partnership of Nations Needed to End Inequality, Strife, Secretary-General Tells Policy Forum, Calling Argentina Example of Hope. (2016). MENA Report, n/a.

Provision Of Technical And Human Resources To Support The Implementation Of The Public Utility Service For 2021 [Tender documents? T458735477]. (2020). MENA Report.

Luthra, S., Garg, D., & Haleem, A. (2016). The Impacts of Critical Success Factors for Implementing Green Supply Chain Management towards Sustainability: An Empirical Investigation of Indian Automobile Industry. Journal of Cleaner Production, 121, 142-158.

Sustainable Development - Jagranjosh.com. https://www.jagranjosh.com/general- knowledge/ sustainable - development -1440681127-1

White paper on National Action Plan on Climate Change (NAPCC). https://www.teriin.org/report/white-paper-national-action-plan-climate-change-napcc

Industrial Revolution and the Standard of Living - Library of Economics https://www.econlib.org/library/Enc1/ Industrial Revolution and the Standard of Living. html

EUR-Lex - 32021H2279 - EN - EUR-Lex - Europa. https://eur-lex.europa.eu/legal-content/EN/ TXT/?uri= CELEX: 32021H2279

Dr Renu Rana

Associate Professor,

Dept. of Political science,

Pt. N.R.S. Government College, Rohtak,

Haryana. 124001

Mob: +91-9416692888

Graham Greene's symbolic Presentation of violence and Gangwars in his Major Works

Dr. Sudhir Kumar Yadav

Abstract

This paper intends to analyze the mechanism in which violence and gangwars are reinforced by social standards and cultural beliefs. This paper throws light on the impact of violence and wars on people's physical and mental health as well as their overall well-being. It shows how war dehumanizes man, breaks all human relations and degenerates the noble values of love, faith and charity. This paper highlights how Greene uses violence and war imagery as narrative in his fables.Right from his very first novel, The Man Within, Greene has used violence and wars in their various manifestations as a narrative strategy. However, the gangwar and underworld theme reaches a crescendo in the shrill and chilling action of Brighton Rock. The Power and the Glory uses the symbol of hunting to present the fable of a lonely priest chased by a posse of armed policemen. The Quiet American carries the readers to a real war-theatre.In The Man Within rampant violence associated with gangwar and smuggling is used as a representation of urban culture which is driven by the Darwinian 'struggle for existence and survival of the fittest'. There are conventional allusions to military affairs such as 'fighting his own little battle or the recurrent references to the title itself'. More importantly, Greene has joined the battlefield symbol to individual characters in the story.

Keywords: Gangwar, crescendo, underworld, leitmotif, conventional allusions, battlefield etc.

Introduction

Graham Greene takes great care in establishing the theme of external and internal confrontation in the novel's structure and a few carefully chosen allusions. Having taken care of it easily, he moves on to a larger concern growing out of the theme of isolation and violence, supported by dominant image patterns.Brighton Rockwith its chilling imagery of gangsterism and razorslashes establish the use of violence as a potent narrative strategy. Pinkie Brown, the teenager hit-man out on the road to eliminate a rival,is terrifying in his cold-blooded response to murder and violence.

Two major patterns of imagery support conflict as a basis for this novel's formal and thematic structure. These two interrelated patterns of territory and war demonstrate the way in which Greene distorts the facts of human experience to serve his argument. Sincethese symbols function on several levels in relation to Pinkie, Rose, Ida and Colleoni, we would do well to examine them in order of their increasing complexity.The territorial symbol operates quite explicitly within the context of criminal activity as a means of establishing the boundaries of rival gangs' authority.Thus, when Colleoni's mob killsKite for "trespassing" on their territory of gambling machines, Pinkie's attempt to feel that leadership vacuum and to reaffirm control over the bookmakers whom the gang formerly"protected".Colleoni's strategy of winning Brewer and other bookmakers away from Kite's territory in order to gain absolute control, is seen by Pinkie as both trespassing and a declaration of war. Since Colleoni's gang is very powerful, even the police urge Pinkie to abdicate his authority and either leave Brighton or join Colleoni's monopoly.It suggests a latent political theme of overlapping crime and capitalism.At this point, the territorial image begins to represent spheres of political and economic influence.

Just as Colleoni is at home with wealth and political power,Ida embraces the Brighton of dance halls and cheap restaurants as her "familiar territory".As she begins her hunt for Hale's murderer when a barman tells her that Hale was a stranger to Brighton, she reflects: "A stranger; the word meant nothing to her: there was no place in the world where she felt a stranger.There was nothing with which she didn't claim kinship; the advertising mirror behind the barman's black flashed her own image at her, the beach girls went giggling across the parade; the gongbeat on the steamer for Boulogne---it was a good life. Only the darkness in which the Boy walked was alien to her;she had no pity for something she didn't understand".

Two final allusions demonstrate Greene's extension of this image pattern into a metaphysical statement.His comments that the boundaries of peace haven are water and "salty grass" and that "it was like the last effort of despairing pioneers to break new country".The country had broken them, "suggest the failure of modern society to wrest any gains from life".The images and symbols of war operate at various levels of complexity.The most explicit stage of this pattern's development-gang warfare-can be easily dismissed. The pattern functions more significantly as a means of defining Greene's distaste for Ida and his encouragement of sympathy for Pinkie. The novel can be seen as a vindication of violence in certain circumstances of life.

The Quiet American, a first-hand account of the Vietnam War by an American reporter, Fowler, is replete with imagery which focuses on lack of communication, violence and cruelty.

The imagery of war and destruction, which has persistently stimulated Greene's imagination, occupies a central position in the development of Fowler, for whom armed conflict and sexual love become curiously interwoven. Although, we have seen as far back as It's ABattlefield, personal relationship and warfare have open coincided in Greene's world, the Indochinese war, with its acts of terrorism

and guerilla engagements, functions as a strong focal image for the skirmishes of love and war.

The Sheer horror of war is brought home in Fowler's description of his visit to the 'battlefield' at Phat Diem. Touring the city with a French lieutenant as guide,Fowler is confronted by the aftermath of a recent engagement:

The canal was full of bodies; I am reminded now of an Irish stew containing too much meat.The bodies overlapped; one head, seal-grey, and anonymous as a convict with a shaven scalp, stuck up out of the water like a buoy.There was no blood: I supposed that it was flowed away a long time ago. I had no idea how many there were; they must have been caught in a crossfire, trying to get back, and I suppose every man of us along the back was thinking. “Two can play at that game”. I tootook my eyes away; we didn't want to be reminded of how little we counted, how quickly, simply and anonymously death came.

Shortly after, continuing his description, he indicates the death of the scene's appeal to his imagination:

Another man has found a punt hidden in some bushes down the canal and he worked it to where the lieutenant stood. Six of us got in and he began to pole it towards the other bank, but we ran on shoal of bodies and struck. He pushed it away with his pole,sinking it into thishuman clay, and one body was released and floated up all its length beside the boat like a bather lying up in the sun.

The passages are nauseating, but then, so is war,Greene is trying to shock his audience into an abhorrence for a warthat could lead only to death and destruction.

In the end, even Fowler himself comes to recognize that his journalistic detachment is merely a reflection of Pyle's insensitivity to human suffering. The evening of Pyle's death, he sees “Scaramouch” about which he comments: “it was what they call a film for boys, but the sight of Oedipus emerging with his bleeding eyeballs from the palace of Thebes would surely give a better training for life today”. The appropriateness of such a film to Pyle's naïve heroic aspirations and the way in which such romantic notions provide escape from the reality of human suffering prepare us for Fowler's own recognition scene; “Was I so different from Pyle ?I wondered. Must I too have my foot thrust in the mess of life before I saw the pain ? The training of this recognition is carefully handled, since Fowler has just learned from Granger, the most “unquiet” American, that the latter is grief-stricken by his inability to be with his young son in his struggle against polio”. The comment also sets in perspective Fowler's earlier natively conventional vision of America.

Fowler's recognition that his detachment can be as callous as Pyle's, his involvement as cruel, is further illustrated by his association of warfare with sexual relations.Just as he acknowledges that his presence in the watch tower brought as much suffering to the soldiers as if he had allowed Pyle to turn the stengun upon them, so too he comes to see the pain which his quasi-withdrawal from involvement has caused both Phuong and his wife at home. When Phuong asks if his wife will agree to divorce, he indicts himself severely: “How much you pride; yourself on being degage, the reporter, not the legal-writer, and what a mess you make behind the scenes. The other kind of war is more innocent than this”.

This conjunction of love and warfare recurs in numerous figures:Fowler describes himself on the battlefield “coquetting with death, like a woman who demands to be raped by her lover”; later, he comments on the hidden “field of battle” in the nude painting belonging to the rubber plantation owner's collection of erotica.In developing the conventional association of violence and war,Greeneassigns several functionsto these image patterns. On one level, the patterns help to connect the smaller world of Fowler and Pyle's sexual rivalry with the larger world of guerrilla warfare in Indo-China. On another, these patterns of love and warfare imagery illuminate Flower'scomplex motivation in conspiring with theCommunists to kill Pyle.

Alienated, spiritually deprived, confined to the isolation of self and impelled by gross violent passions, the characters reveal Greene's vision of modern man reduced to a less than human level by a violent warlike political system. Having observed carefully at the function of symbols in Greene's major works, one can see its contribution to his dominant view of man and his predicament in the modern world, the God forsaken planet earth begins to look like a wasteland with full of violence and hostility.

Notes and References

1. The End of the Affair. London: Heinemann and New York: Viking Press,1951.
2. The Quiet American. London: Heinemann,1955, New York: Viking Press, 1956.
3. A Burnt-Out Case. London: Heinemann and New York: Viking Press, 1961.
4. The Man Within. London: Heinemann, Uniform Edition, 1980.
5. It's A Battlefield. London: Heinemann, Uniform Edition, 1980.

Dr. Sudhir Kumar Yadav
Principal
Govt. College Kosli
Email – yadavsudhir45@gmail.com

Human Sensibility and its Distortion in Bernard Malamud's Novel 'The Fixer'

Chitralekha

Abstract

The word 'Sensibility' means 'delicacy of feeling' while 'Distortion' means twisting out of the true, natural, normal or original shape or condition or to reproduce a thing improperly. Bernard Malamud's novel, The Fixer, deals with human sensibility and its distortion. Yakov Shepsovitch Bok, an orphan, the hero of the novel is a Jew. He is a 'Fixer' by calling. He does all kinds of repairs. He belongs to Shetetl, a small town in the pale region of Kursk. He leads quite a beggarly existence in the miserable town. He feels sick of the place and his heart is heavy. He longs to leave the place for Kiev with a view to making his fortune. There is yet another reason of his leaving the place. He has married Raisl, the only daughter child of Shmuel Robinovitch, the peddler. To his ill fortune. Raisl does not conceive in a long span of five and a half year and runs away with some stranger guy.Yakov is now a misogynist out of human sensibility. Yakov tests Raisl on the touchstone of humanism. To him, she is a faithless wife and distrusts her for her infidelity. So, he wants to leave Shtetl. His human sensibility has been distorted a great deal. After Raisl has run away, Yakov's condition is awfully jeopardous and precarious. “His nervousness showed in his movements.”[3] He says to his father-in-law Shmuel that he has little but he does have plans and leaving for Kiev. Shmuel Robinovith, asks him not to take up such a drastic step, but Yakov turns a deaf ear to it. Yakov only says, “I might have waited but she danced off with some dirty stranger, so I've had my fill, thanks”. He feels, “Opportunity in Shtetl for him is dead.”[2] Yakov even now thinks of Raisl and feels depressed. However, he is not devoid of the sense of humanism, though it has been distorted a bit.

While parting, Shmuel draws out of his pocket an embroidered cloth bag, containing phylacteries, a prayer shawl and a prayer book. Raisl has embroidered it. He hands it to Yakov out of affection for his son-in-law and thus giving vent to his humanism. Then he bids Yakov good bye saying, “If you ever see Raisl, tell her. Her father is waiting”. The nag resumes its journey. Yakov roams about the streets for some job to eke. With just a few roubles in his pocket how long would he escape starving? He now realizes that his leaving for Kiev was silly.

Trudging along, Yakov reaches Kiev, the 'Jerusalem of Russia'. He is numb with awe and fear lest he should be recognized as a Jew. “Here he lives in a low-ceilinged cubicle in the heart of the Jewlish quarter in the Padol District. Opportunities here are rare. One day strolling in the Palassky District, Yakov comes upon Nikolai MaximovitchLebedev, a fat Russian, miserable, drunken, lying with his face trodden in the snow, seeking of drink. With the assistance of a slightly built, honey-colour-haired girl, Zinaida Nikolaevna, he drags him up the street. Yakov does it out of 'Human sensibility' for Nikolai. The sense of human sensibility corrodes in him. The girl invites him to call on them when her papa is himself in a better frame of mind. Eventually he decides to go and avail of chance. Zinaida Nikolaevna, wearing an embroidered peasant blouse and shirt with two green ribbons planted into her hair, leads him to Nilolai Maximovitch Lebedev. He expresses his indebtedness to him for saving his life and say, “Now-a-days people are far less concerned about their fellow humans than in times past. Religious feeling has strunk in the world and kindness is rare, indeed”. His behaviour towards Yakov is indicative of his humanism. Nikolai further says, “I have an empty flat on the next storey which needs repair. If you repair it, I offer forty roubles. Notwithstanding you did me the greatest of favours-I might have suffocated in the snow. He looked eagerly at Yakov and asked will you accept?” Nikolai's words are highly obsequious as well as indicative of gratitude for Yakov. Whattroubles the Fixer is that he might be asked to produce his passport, a document stamped 'Religious Denomination Judaic'. Here we note that Yakov and Nikolai both present unique examples of humanism: the former virtually brings an anti-Semite human back from the jaws of death, while the latter offers him the task of repapering for forty roubles.Yakov does an expert job at the flat and the landlord is highly pleased with him.

Nikolai appointed Yakov overseer to manage his brick-kiln enterprise and offered him a comfortable room over the brickyard free of rent. Zina, his young daughter, feels fascinated by the Fixer. He has been a long time without a woman and wonders what it would be like to be in bed with her, he never had a Russian woman. To the girl Yakov appeared to be a big-wig. At night fall, Zina limped up the stairs. She wore blue silk dress, her hair up and encircled with a white ribbon and her cheeks and lips delicately rouged. He thought of getting up to leave. But Zina looked at him and tried to hoodwink and ensnare him in the trap of her advance of sexual love. She groped for him, her body clinging tightly to his. He also embraced her hungrily. He was at first uneasy, then sickened by what he was about to do. Those were the moments of distortion of human sensibility in him. He did not want to be an adulteror, a sense of humanism overpowered him. He thought it unbecoming, indecent, obscene and nasty to do so. She stood naked, and her bosom full. Time danced on. It was a long wait doing nothing. At length Yakov got ready to succumb to her wish. He embraced her warm body, but he felt no stirring of passion to enjoy her sex because of her menstruation. He did

not succumb to the fulfillment of her sexual urge, because he had humanism in him. He had no urge to copulate with her but since he had been away from his wife for long and was hungry for sex, there was a little bit distortion of 'human sensibility' in him. There is little doubt that he would have become her victim had he not seen menstrual blood streaking on her leg. Thus, we see that Yakov had a strong sense of humanism in him, Zina tried her best to allure him. But Yakov stuck to the path of righteousness even in adverse and trying circumstance. This clearly proves him a virtuous man.

As an overseer Yakov discharged his duty most sincerely. One night Serdiuk and Richter, the drivers with their helpers, loaded long wagon-trucks with bricks. Proshko, the foreman, presented him the voucher showing a smaller number of bricks. The Fixer's heart beat badly when he saw the false figures on the paper. His voice was thick with emotion as though the bricks belonged to him, although they belonged to an anti-Semitic Russian. He set a unique example of loyalty in the discharge of his duty. It was surely an act of humanism on the part of Yakov. The landlord raised his salary. Nikolai too did it out of humanism. “Honesty and Humanism, carry their own dividends”.

The next day Yakov heard that a twelve year old Christian boy, Zhenia Golov has been done to death. He had thirty seven wounds made with a thin pointed instrument. It was presented that the boy had been stabled to death possibly for religious purposesand believedthe heinous work was of some Jew. It was sheer religious fanaticism devoid of humanism, and absolute distortion of human sensibility. Russian officials rushed up the stairs asked Yakov who he was. The Fixer readily confessed that he was a Jew but he was innocent. However, he was held responsible for the dastardly crime. Thus, the blame of murder was laid on the head of innocent Yakov, though the boy had been murdered by the lover of his mother, Marfa Valadilnirovna Golov, who also tried to tempt Yakov by her feminine charms. Yakov's only fault was that he was a faultless Jew. Zina also joined the camp of the anti-semites against him. Soon after he was thrust in a dark, underground cell and subjected to severe agonies. To him, prison was a 'Living Hell'. He prayed to the Lord to let light attend him to his grave to seek relief from monotony of grief. The prison-cello completely shattered him. All this bears a clear testimony that there was a total 'Distortion of Human Sensibility' in anti-semites for the innocent Yakov. He very much liked to put an end to his life. But he soon realized “Life is life and there is no sense kicking it into grave.”[4] This was the bed-rock of humanism in Yakov's heart of heart. To add to his spirits, the Investigation Magistrate, Bibikov quietly said to him, 'whatever happens you must have fortitude'. Now Yakov realized his mistake of concealing his caste. Yakov stood apprehensive and frozen against the wall in a sweaty state of unrest. Nikolai in his deposition said that Yakov was a cheat of cheats. He did not tell him that he was a Jew. Zinaida also said that shedetested him because he tried to assault her and attempted to force himself upon her. Thus, Nikolai and Zinaida crossed the confinement of 'Human Sensibility' in their depositions. However, Bibikov, the Investigating Magistrate, went deep into the depth of the matter. He arrived at the inference that Yakov was quite innocent. There was, however, a minor charge against him that he lived in Lukianovsky District which was sacred territory and forbidden to Jews for residence.Bibikov judged things on humanitarian grounds, whilst Grubeshov did on the basis of caste fanatism – an utter 'Distortion of Human Sensibility'.Bibilov gentlysaid to him, “Your case holds an extraordinary interest for me. I went there to submit the evidence I had already gathered and to request that the charges against you be limited, strictly to the matter of your residing illegally in the Lukianovsky District.Instead, I was directed to investigate beyond doubt and produce the evidence to confirm your guilt.”[5]Bibikov pitied Yakov. His statement shows his genuine humanism.

However, Bibikov paid high price for his humanism. He was thrown behind the bars in a cell adjacent to Yakov's. Yakov could not believe his eyes. “It took The Fixer an age to admit it was Bibikov.”[6] Yakov was overwhelmed with confusion and fright. To add to his dismay and horror, there were many indictments against him. First, he was a Hebrew, using false name and living in the Lukianovsky District, forbidden for the Jews. Secondly, he gave his name as Yakov Ivanovitch Dologusher against his real name Yakov Shepsovitch Bok. Thirdly, he attempted physical assault on ZinaidaNikolaevna. Fourthly, he was suspected by Proshko of embezzling from belonging to Nikolai Maximovitch Lebedev. Fifthly, he was seen by Proshko and others chasing the boy. Sixthly, he pursued Zhenia Golov, clasping in his hand a long thin carpenter's knife. Seventhly, he interfered with Zhenia, a bright end perceptive lad, sexually. Eighthly, he offered 40,000 roubles to Marfa Golov to flee across the Austrain Border.He stabbed ZheniaGolov to death. He was wonderstruck to note that they presented such indictment even when they know that the mother and her lover murdered the boy. It was sheer 'Distortion of Human Sensibility' on the part of the anti-Semites.

Raislcame to know that Yakov was in prison. She brought some fruits for himbut the authorities made her leave it at the warden's office. They blackmailed her to urge Yakov to sign a paper. No sooner did Yakov see Raisl, than he felt the weight of the blood in his heart: “As she wept that moved him”. He said to her, “I am not the same man I once was”. Raisel also said, “I am not what I was. After I ran away, I found out I was pregnant. I have given birth to a boy, Chaiml”. The rabbi called the child a bastard. She requested him to father the babe saying, “whoever acts the father is the father”. Her eyes glistened. Then, Yakov signed the confession paper and drew a heavy line

writing, 'Every word is a lie'. Thereafter, Yakov was taken back to his solitary cell. He was chained to the wall again. If fact, there cannot be a worse Distortion of Human Sensibility than this.

In the end, Yakov's friends sent the lawyer Julius Ostrousky of the Kiev Bar to him, he said to Yakov, "you are not alone. I would be honoured to be in your place". He informed that Shmuel Robinovitch was dead. He also told Yakov that they had an affidavit from Sofya Shiskovsky in his favour. Yakov was further informed that most of the intellectuals held that Marfa Golov and her lover committed the murder. As such, if thejudge were honest, he could free him very soon. His lawyer was Suslov Smirnov, a Ukrainian by birth, who was in his youth anti-semite but had now become a vigorous defender of the rights of Jews.

On the day of his trial, Yakov was not locked in chains and sat within rarefied air. The lawyer, Ostrolesky and another a reformed Ukrainian anti-semite, would defend him. The fog was thinning a little. Newspapers were printing articles casting doubts on the accusation. Some lawyers were openly blaming Marfa Golov. A doctor's society had protested against his imprisonment. Yakov was imprisoned, starved, degraded, chained and suffered for full three years, although he was innocent. If he had stayed in the Shtetl, it would never have happened. If he had not been a born Jew, he would never have been arrested. He waited for death during this period. Thus, we see that there is 'Distortion of Human Sensibility' throughout this novel, though it is also true that there is some humanism in several characters.

References:

[1] Bernard Malamud, 'The Fixer' (Penguin Books Ltd., 1968), p.12
[2] Ibid., p.10
[3] Ibid., p.10
[4] Ibid., p.73
[5] Ibid., p.151
[6] Ibid., p.163

Chitralekha
Associate Professor (English)
Maharaja Agrasen P.G. College for Women, Jhajjar
Chitralekha1969@gmail.com
Contact No. 9416322834

An Analysis Of Impact Of Capital Budgeting On Financial Performance Of Banksinharyana

Reena Devi

Abstract

The present study aims to unveil the status of capital budgeting in India, after the advent of full-fledged globalisation and in the era of cutthroat competition, where companies are being exposed to various degrees of risk. For the above objective a comprehensive primary survey was conducted of 30 CFOs/CEOs of manufacturing companies in India, so as to find out which capital budgeting techniques is more preferred, discounted or non-discounted. The study also aims at examining the capital budgeting methods used for incorporating risk in investment proposals. It further evaluates the impact of different factors or variables on the selection of a particular capital budgeting technique. For example, it was investigated that whether there exists any relationship between a size of Haryana's capital budget and the method of capital budgeting adopted by it.

Key Words: Capital Budgeting, Discounted Cash Flow, Non-Discounted Cash Flow, NPV, IRR, Payback Period, ARR, Discount Rate, Cost of Capital, Risk

Introduction

Budget is the annual financial statement of the estimate receipts and expenditure of the government for a given period. We can make the following explanations or analysis about a budget of the state is on estimate of all anticipated revenue and expenditure of the government for the ensuing financial year. This is known as "The annual financial statement" or the "Budget". In capital budgeting includes process planning, analyzing, selecting and managing capital investment.

An investment is process of the allocation and substantial consumption of resources, material and human in addition to financial one. It is therefore important to utilize the resources on activities that will add value to the entity's current position.

The primary aim of private sector is to maximize profits whereas the public sector operates in a different environment where projects are valued beyond profit maximization but in line with social and economic needs. According to Crawford, 9 Costello, Pollack & Bentley (2003), the complexity and many reporting layers in the public sector result in possibilities of actions being valued differently by stakeholders.

According to "Nshisso" (2008) budgeting is a common and required practice for businesses and public sectors. Capital budgeting is the decision-making process that managers use to identify projects that add value to the organization. It provides guidance to organizations in determining the advantages of investing in a project.

Therefore, sound and profitable capital budgeting decisions can have a positive influence on the financial performance of a public sector enterprise

Objectives

The objectives of capital budgeting to analysis financial performance of Haryana are as follows:

1. To examine methods and principles of capital budgeting
2. To assigned skilled resources
3. To increase transparency
4. To develop project management methodology
5. To increase use of automated tool

1.To examine methods and principles of capital budgeting:

The objectives of this study are to examine methods and principles of capital budgeting to enhance financial performance of Haryana.

2.To assigned skilled resources:

Skilled resources should be assigned to projects for costing and coordination of activities, design constructions and supervision of construction activities.

3. To increase transparency:

Transparency should be promoted on projects where gaps, challenges, are comprehensively shared and corrective, preventive actions implemented and monitored.

4. To develop project management methodology:

Project management methodology or no policy should be developed. This will promote consistent approach and management of capital projects within the public sectors and create a positive culture of project management, monitoring and control.

5.To increase use of automated tool:

Automated tools such as SAP and Primavera should be promoted as support tools for human resources assigned to projects.

According to Jacobs (2009), "good budget execution and procurement will enable timely, within budget completion of projects (assuming good program and project management)".

Literature Review

Madalgi, (1966) in the study, "The Trends and growth in State Governments Expenditure in India for Five Year plans". The study covered from 1951 to 1966, witnessed the completion of the first three five-year plan." He has analyzed only the Revenue Expenditure and has not considered Capital Expenditure.

Shanmugam, (1977) in his study, "Public Expenditure of the Government of Tamil Nadu from 1965-66 to 1974-75" has presented the facts on the trends of Tamil Nadu Governments Welfare expenditure. The study covered a period of ten years from 1965-66 to 1974-75.

The main objectives of the study were:

i. To analyses the trends in the Public Expenditure in Tamil Nadu.

ii. To analyses the overall growth in Public Expenditure.

iii. To analyses the variations in its consumption and Capital Components and,

iv. To analyses the trends in the distribution of Public Expenditure among the different sections. The study has adopted a survey method. Secondary data were collected from the Records and Annual Reports of the Tamil Nadu Government for study. By the Formulation of tables and calculation of simple averages, Percentages have been done. Bar and pie diagrams and time-series trend lines have also been drawn to show the structure and growth of the Government Expenditure.

v. The Followings are the finding of the study :1. Total State government expenditure in Tamil Nadu has increased from 8 Rs. 24, 142 lakhs in 1965-66 to Rs.58,456 lakhs in 1974-75, with a cumulative growth of 10.6 per cent. 2. A near threefold increase from Rs.15,545 lakhs in 1965-66 to Rs. 42,814 lakhs in 1975-75 have been felt in consumption expenditure of the state government. The increase in consumption expenditure has far outstripped the increase in capital outlay during this reference period with the result the consumption components in the state Budget has sharply risen from 64.4 per cent to 73.3 per cent. Administration ii. upward revisions in pay scales and dearness allowances of Government employees and iii. Increased allotment of Government outlay on social welfare activities which were mainly in the form of services. 3. The capital components of the government Budget, on the other hand, declined from 20.6 per cent in 1965-66 to 19.4 per cent in 1974-75. However, in absolute terms, the total expenditure by the state Government for capital formation purpose has increased by 128.7 per cent during this period from Rs. 4, 966 lakhs to Rs. 11, 359 lakhs. Net capital which was defined as gross capital formation – minus expenditure on renewals and replacements, has increased by 61 per cent during the reference period from Rs. 9, 167/- lakhs to Rs. 14,747/- lakhs. However, its share in total budgetary outlay has declined from 39.3 per cent to 28.2 per cent.

M. Govinda, (1981) in his study “The determinant of tax revenue and non-plan revenue expenditure of the States”, has chosen the states of Karnataka, Kerala, Orissa and West-Bengal in studying the time series determinant. In this study, both the political and economic determinants have been considered. The effects of various economic and political factors on the fiscal decisions of the four states are also quantified. While discussing the determinants of non-plan revenue expenditure the study summaries that in all the four states except Orissa, the growth of expenditure on various services is of providing them. Only in Orissa the growth in non-plan revenue expenditure is due to increased quantity of public services. The results of the study confirm Down Hypothesis that fiscal decisions are essentially guided by the desire to 10 maximize the length of their tenure by the parties in power and are not influenced by their ideological doctrines.

Madhavachari, (1982) in his study, Wagner's Law of Public Expenditure - An Empirical Test, Margin, analyses the validity of Wagner's Law. He concludes the government expenditure under the different components have grown at a faster rate than percapita GNP.

Research Gap: State owned entities should invest more time and resources on the supervision of construction work. These should be skilled resources who understand the scope of work and implementation of the plan. And to search for the level of involvement and contribution (negative or positive) by the public offices with capital investment projects that are managed by the State-Owned entities

Research Hypotheses

H0: The Haryana applies the capital budgeting process to enhance its financial performance.

H1: The Haryana does not apply capital budgeting process to enhance its financial performance.

Conclusion

· This study has adopted a survey and case study method.Based on primary and secondary data.Secondary data were collected from the Records and Annual Reports of Haryana Government for study. By the Formulation of tables and calculation of simple averages, Percentages have been done. Bar and pie diagrams and time-series trend lines have also been drawn to show the structure and growth of the Government Expenditure. Hence, by using the process or technology of capital budgeting we analysis the financial process of banks in Haryana.

Reference:

- Madalgi, (1966), “The Trends and growth in State Governments Expenditure in India for Five Year plans”.
- Shanmugam, (1977), “Public Expenditure of the Government of Tamil Nadu from 1965-66 to 1974-75”.
- M. Govinda, “The determinant of tax revenue and non-plan revenue expenditure of the States”.
- Madhavachari, (1982), “Wagner's Law of Public Expenditure - An Empirical Test, Margin, analyses the validity of Wagner's Law”.
- Balakrishnan (1990), “Union Budget for 1990-91 (April 21, 1990)”

Reena Devi

(Research Scholar, Dept- Economics)

V.P.O. Khanak Road Baganwala

Teh.Tosham,District-Bhiwani

Mobile no.-7889149355

Pin code-127021

Impact of COVID-19 on the Indian Supply Chain

Shaveta Kakkar

Abstract

The novel Corona virus (n-CoV-2) pandemic entered India from Wuhan, China. It invaded rest of the world including India in the month of March. The lockdown was set in motion by Indian and respective state governments, because of which the virus transmitted with a slow rate as compared to other countries. On the one hand, environment has been temporarily healing from these lockdown, on the other, there is a massive downfall/wreck/breakdown in the stock market. The Indian Government has taken numerous initiatives for the "Aam-Janta", to ease the impact of this Pandemic. The pandemic has disturbed every sphere of life in the country ranging from agriculture, economy, business sector, education and so forth as a result of the lockdown. . In the present paper we have discussed the effect of Covid-19 on supply chains in India. China is the major distributor of the raw materials which affect the manufacturing activities across the globe due to lockdowns. India is the developing country due to the Covid-19 spread the cases reported in the India government has lockdown affected the manufacturing activities and majorly it affects the supply chains and economy of the country. In the present paper we have discussed the effect of Covid-19 on supply chains in India.

Introduction

Supply chains can be relatively complicated to manage, their complexity varying, dependent on the business's size and the type and number of items manufactured. Efficient supply chain management is crucial, since the network of interconnected businesses must liaise smoothly, the aim being to provide products and services to consumers in a cost-effective and professional manner. The main components of supply chain management are planning, developing, manufacturing and delivering the items or services.Even if there's just one weak link that leads to delays or other issues, this means a dissatisfied customer and potential loss of business. This is why there are benefits in using an enterprise resource planning (ERP) software system to deal with any supply chain, no matter how large or small.The planning stage of supply chain management is essential, as a strategy must be developed that not only meet customers' needs, but also ensures the business venture is profitable. A major part of the planning process involves developing a set of metrics that will monitor the efficiency and quality of the supply chain.

In the manufacturing industry in particular, effective supply chain management ensures that the necessary raw materials arrive at the production sites on time. Production can grind to a halt, with assembly lines lying dormant and the workforce inactive, if the raw materials are consistently arriving late. This can leave a company unable to fulfill orders on time, or being forced to obtain materials from another source at short notice, perhaps resulting in a lower profit margin.But still due to the Covid-19 issues around 35% of manufacturers have reported the disturbances in the manufacturing practices. The first case of Covid-19 in India reported in January, 2020 and now Government of India has declared the lockdown in the country to minimize the spread of Covid-19 . Supply chain across the nation is disrupted. Indian government is now focusing on the try and establishing India as an alternative to the China for manufacturing for both the local and global market. Most of the countries have shifted their production out of China due to the disruption ofthe supply chain between major trading partners

Impact of Covid-19 on supply chains

Even before the imposition of the lockdowns and the spread of Covid-19 across the world, the severe disruptions in China were having a ripple effect on global trade flows. Most companies across the globe had been working to make their supply chains leaner. The emphasis had been on minimisation of costs and "just in time" deliveries. This has led to reduction of inventory buffers and left no room for adequate buffers or safeguards. The vulnerabilities of this system has been brutally exposed by Covid-19.

In India, certain industries have become more and more dependent on Chinese imports. These industries are under significant risk. In India import source of goods that are required for their intermediate and final goods are on pause now due to the delay in supply of goods from china. Various sectors such as pharmaceuticals, automobiles, electronics and chemical products etc. are facing a shortage of required component. The renewable energy sector relies on China for 80 per cent of the sector's requirement of solar panels. Finally, and potentially most problematically, several micro, small and medium enterprises (MSMEs) are dependent on Chinese imports. India imports about 85% of active pharmaceuticals ingredients (API) from china and due to the factor there is a possibility of shortage in availability and thus prices may go on hike.

Due to the lockdown and global pandemic the business is hampering with the production there is about 55% of electronics are imported from china that has slid down to a percentage.In early March, the Directorate General of Foreign Trade (DGFT) imposed restrictions on the export of 13 APIs and 13 formulations made from these APIs. Steps were taken to expedite customs clearances of Chinese imports. The Apparel Export Promotion Council (AEPC) has identified alternative sources of input suppliers to help diversify

sourcing of raw materials and products.

The present outbreak provides valuable lessons for companies in general and Indian companies in particular. Lean supply chain strategies, while increasing short term profits, contribute to supply chain vulnerability. Covid-19 has taught corporate decision-makers that in formulating future supply chain designs, apart from cost, quality and delivery they would also need to stress-test the chains on new performance measures including resilience, responsiveness and reconfigurability.

Companies would also seek to diversify supply chains from a geographic perspective to reduce supply-side risk from one country. Multiple sources of key commodities or strategic components would be identified and protocols will be in place to activate alternative sources of supply in short notice.

It is likely that corporate strategy would also look to build a robust inventory as buffer against supply chain disruptions. The only silver lining for the present crisis has been that because of the anticipated Chinese New Year holidays, companies had stocked up inventory. In the absence of this, the situation would likely to have been worse.

Many companies would want to move at least a part of their supply chains locally. This would lead to increased investment in India's local industries and act as a shot in the arm for an economy in crisis.

Suggestions

This is an urgent wake-up call for Indian industry to realise the need to develop its own local sourcing units and adopt alternative strategies for reducing the dependency on China and other impacted geographies

1.Magnify on Labor Planning- As enterprises start resuming work in various regions, they need to consider how to restart business operations amid ongoing epidemic prevention and control measures, and ensure they can return to a normal, healthy work rhythm as soon as possible. Restarting operations following the Lunar New Year has always presented some challenges as workers gradually return to the factories. However, quarantines and travel restrictions mean that the time to ramp back up to full capacity will be much longer than normal for many facilities. Not only will this require additional attention to labor planning, but also additional attention to product quality as plants run with less than a full complement of workers.

2.Recognize Alternate sources of supply For those companies that have multi-sourced key inputs, it is important to move quickly to activate secondary supplier relationships and secure additional critical inventory and capacity. There may be opportunities within the ecosystem including establishing shared resource pools for raw materials inventory. For those companies that have significant exposure to suppliers in the impacted region of China, it will be important to identify alternative suppliers in non-impacted regions of the world. Alternative sourcing markets will vary greatly by supply chain and manufacturing expertise.

3. Revise inventory policy and planning parameters-For the past couple of decades companies have been implementing practices to reduce inventory across the supply chain and to statistically set safety stock to buffer normal demand and supply variability. Most companies won't have inventory buffers for the magnitude of disruption that will be caused by the COVID-19 epidemic. Safety stock parameters that were tuned to historical performance are not likely to be appropriate in the near future as demand and supply variability increases significantly. Some companies have been able to quickly secure additional "strategic stock" from alternate suppliers in anticipation of key supplier disruption. All companies need to quickly consider how they will refine their inventory strategy to mitigate the risks of supply shortages—balancing a number of factors such as assessed supply base risk, cash flow, perishability, etc.

4. Increase inbound materials visibility Expect significant declines in on-time in-full delivery performance from your key suppliers. Getting visibility to the status of your inventory at the supplier location, supplier production schedules, and supplier shipment status will help you to predict supplier shortages and respond accordingly. For very critical suppliers, working to get better visibility to their supplier performance can be very beneficial to predicting potential supply disruptions and working proactively to alleviate the impact. For the majority of companies that don't have full electronic connectivity to key direct suppliers and control towers over the inbound flow of products and materials, companies should move quickly to get access to data and build management dashboards to support visibility and decision making

5. Target on production scheduling agility Prioritize what products you will produce in the event of raw and direct material inventory shortages, especially where a component part may be used in multiple finished goods. With expected supplier and demand disruption, be prepared to refine production schedules based on the inventory available, changing demand and what you are capable to build, while at the same time, ensuring that you do not use component parts that put your most important products at risk of stock-out. Traditional planning and scheduling processes, and frozen periods to allow efficient production execution, are unlikely to work well in this environment. For those companies that don't have the tools to support rapid re-planning and scheduling, a war room type of environment with the required supply chain experts focused on this process is a potential solution in the short term.

6. Evaluate alternative outbound logistics options and secure capacity With significant port congestion, a significant decrease in air freight capacity, and truck driver shortages, there is a significant backlog in logistics that will take some time to resolve as logistics operations gradually come back to

normal. Companies need to work to secure capacity with their logistics partners.

Conclusion

Supply chains have become highly sophisticated and vital to the competitiveness of many companies. But their interlinked, global nature also makes them increasingly vulnerable to a range of risks, with more potential points of failure and less margin of error for absorbing delays and disruptions. A decades-long focus on supply chain optimization to minimize costs, reduce inventories, and drive up asset utilization has removed buffers and flexibility to absorb delays and disruptions. COVID-19 illustrates how many companies may not fully appreciate their vulnerability to global shocks through their supply chain relationships. Fortunately, new supply chain technologies are emerging that can dramatically improve visibility across the end-to-end supply chain and support much more supply chain agility and resiliency, without the traditional "overhead" associated with risk management techniques. The traditional view of a linear supply chain and optimizing for your own business is transforming into digital supply networks (DSNs) where functional silos are broken down within your organization and you are connected to your full supply network to enable end-to-end visibility, collaboration, responsiveness, agility, and optimization. Increasingly, these digital supply networks are being built and designed to anticipate disruptions and reconfigure themselves appropriately to mitigate their respective impact.

Refrences

- https://www. the hindubusiness line.com/opinion / covid-19-exposes-indian-industrys-supply-chain-vulnerabilities/ article31224928.ece#· https://www2. deloitte.com /global/en/pages/ risk/ articles/covid-19-managing-supply- chain-risk-and-disruption.html
- Shruti Agrawal , AnbeshJamwal , Sumit Gupta, "Effect of COVID-19 on the Indian Economy and Supply Chain", Posted: 9 May 2020
- https://www.pwc.com/us/en/library/covid-19/supply-chain.html
- https://www.imd.org/research-knowledge/articles /supply-chains - adapting -to - covid-19/

Shaveta Kakkar

Assistant Professor in Commerce

Vaish MahilaMahavidyalya,Rohtak

Shavetakakar80@gmail.com

Protection Against Ex-post Facto Laws Under Indian Constitution

Chander Mohan

Abstract

Basic Rights are those that are necessary or fundamental for a person's welfare. The Part III of the Indian Constitution's Fundamental Rights guarantees civil rights so that all Indians may enjoy peaceful and harmonious lives as Indian citizens. The rights to constitutional remedies for the protection of civil rights through the use of writs like habeas corpus are among them. These include individual rights that are shared by the majority of liberal democracies, such as equality before the law, freedom of speech and expression, the right to peaceful assembly and association, and the freedom to practise one's religion. Punishments for violating these rights are outlined in the Indian Criminal Code and are up to the judge's discretion. Every Indian citizen is entitled to the fundamental freedoms that are necessary for a healthy and harmonious development of the self. All citizens are entitled to these rights, regardless of their race, location of origin, religion, caste, creed, colour, or gender. They are subject to limitations and are enforceable by the courts. The Bill of Rights in England, the Bill of Rights in the United States, and the Declaration of Human Rights in France are just a few of the numerous sources that the Rights have their roots in.

The right to life and personal liberty is a promise of protection against criminal conviction. No one may receive a sentence that exceeds what the applicable local legislation at the time specifies, as stated in Article 20. This legal axiom is founded on the idea that no criminal legislation can be implemented retroactively; hence, for an act to qualify as an offence, it must have been unlawful at the time it was committed.

What Is An Ex Post Facto Law

A legislation that retrospectively affects the legal ramifications of past actions or the legal standing of facts and relationships that existed before the law's passage is known as an ex post facto law (Latin for "after the fact"). In terms of criminal law, it may make illegal actions unlawful; it may make a crime more severe than it was when it was committed; it may change or increase the punishment for a crime, such as by adding new penalties or lengthening the sentence; or it may change the rules of evidence to increase the likelihood of a conviction for a crime than it would have been at the time of the action for which the conviction is sought. On the other hand, a kind of ex post facto legislation known as an amnesty bill may legalise certain actions or lessen potential penalties (for instance, by switching out the death penalty for life in prison) retrospectively.

While not literally ex post facto, a legislation may have an ex post facto impact. For instance, when a law repeals an earlier law, the earlier law no longer applies to the circumstances it formerly did, even though those circumstances existed prior to the law's repeal. In especially in European continental systems, the idea of forbidding the continuous implementation of these sorts of laws is known as Nullumcrimen, nullapoena sine praevia legepoenali.

Provisions In Other Constitutions

U.S. Constitution: Article I, section 9 of the U.S. Constitution forbids the federal government from adopting ex post facto laws, while clause 1 of section 10 forbids the states from doing the same. This is one of the few limitations on the federal and state governments' authority that the US Constitution imposed before modification. The United States Supreme Court has often used its decision in the Calder v. Bull case of 1798, in which Justice Chase outlined four kinds of illegal ex post facto statutes, while making ex post facto decisions throughout the years. Due to the fact that it involved a Connecticut state statute, the case involved Article I, section 10.

Irish Constitution: Article 15.5.1 of the Constitution of the Republic of Ireland forbids the application of retroactive criminal punishment. The Irish Supreme Court determined that a right to damages before the courts is a property right that is constitutionally protected, hence retroactive amendments to the civil law that would have eliminated that right have also been declared to be unconstitutional.

Japanese Constitution: Article 39 of the Japanese constitution forbids the implementation of legislation in the past. According to Article 6 of the Japanese Criminal Code, the lesser penalty shall be applied if a new legislation is passed after the act was done.

Ex post facto legislation are strongly discouraged in the United Kingdom, however they are allowed under the parliamentary sovereignty theory. As their date of effect was the first day of the session in which they were enacted, all acts of Parliament passed before 1793 were ex post facto laws. The Acts of Parliament (Commencement) Act 1793 made this position right.

Article 7 of the European Convention on Human Rights, to which the United Kingdom is a member, forbids ex post facto criminal statutes, although legislative authority, in principle, still has precedence over this.

Universal Declaration Of Human Rights And Related Treaties

No one may be convicted of a crime under a law that did not exist at the time of the offence or face a punishment that is greater than it was at the time of the offence, according to

Article 11 of the Universal Declaration of Human Rights. Yet, it does allow for the application of both local and foreign law.

The International Covenant on Civil and Political Rights' Article 15, paragraph 1, almost exactly replicates the text of the Universal Declaration of Human Rights, substituting the word "criminal offence" for "penal offence". Moreover, it states that a milder punishment must be applied if one is offered after the conduct of the violation. In paragraph 2, it is stated that paragraph 1 does not exclude a trial and punishment for an act that would be considered unlawful under the broad rules of law accepted by the international community. Article 6, paragraph 2, which specifically addresses the application of the death penalty, states in pertinent part that it may only be used "for the most heinous offences in line with the legislation in existence at the time of the offence."

Indian Constitution

According to Article 20(1), "no person shall be convicted of any offence except for violation of a law in force at the time the act charged as an offence was committed, nor shall such person be subject to a penalty greater than that which might have been imposed under the law in force at the time such act was committed."

According to article 245 of the Indian constitution, a sovereign legislature has the capacity to adopt both prospective and retroactive laws. Nevertheless, the present article places two restrictions on every parliamentary authority in India's ability to pass retroactive criminal laws.

It prohibits:

I. The making, of ex post facto criminal lawsie making an act a crime for the first time and then making that law retrospective

II. The infliction of a penalty greater than that which might have been inflicted under the law which was in force when the act was committed.

1.This point can be explained through a case law .The accused committed an offence in 1947, which under the act then in force was punishable by fine or imprisonment or both . The act amended in 1949 which enhanced the punishment for the same offence by an additional fine equivalent to the amount of money procured by the accused through the offence. The Supreme Court held that the enhanced punishment could not be applicable to the act committed by the accused in 1947 and hence set aside the additional fine imposed by the amended act.

2.The prohibition of the clause is not only against the passing of such retroactive law but also against the conviction under such law.

a.there is nothing in this clause which creates a vested in any course of procedure .hence, art 20(1) does not bar the trial of the accused by a procedure other than that which existed when the offence was committed, provided the change in the procedure is not of such a nature as to constitute a new offence or a penalty greater than that which could be inflicted at the time when the offence had been committed.

b.Nor has it any application to a law which merely mollifies the rigours of the criminal law.

c.On May 31, 1962, a youngster who was 16 years old was found guilty of a crime and given a harsh 6-month jail sentence as well as a fine. The session judge denied his appeal on September 22, 1962, and the high court did the same on September 27, 1962. On January 9, 1962, the Probation of Offenders Act became law. The youngster should be provided the benefit of the legislation was not argued before the high court. Afterwards, he requested special permission to appeal to the Supreme Court, where it was claimed that he should be granted the benefit of the act. According to the government, the offence was committed a long time before the legislation went into effect and the statute is not retroactive. Nevertheless, the SC noted that "the aforementioned ban does not apply to an ex post facto statute which solely ameliorates the rigours of a criminal conduct." If a specific legislation has a provision to that effect, even if it is retroactive, it will be enforceable. As a result, the court decided that even an ex post facto statute of the kind in this case had to be used to lessen the sentence of the juvenile criminal in accordance with the principle of beneficent construction.

The statute should be properly constructed before applying this code.

There was a case which discussed the validity of the law that was passed for fixing rates of minimum wages retrospectively as per the Minimum Wages Act, 1948 – The Court ruled that on a proper construction of Sections 3 and 4 of the impugned Act, the attack on the validity of the section on the ground of a contravention of Article 20(1) of the Constitution would be failed –Also, on a proper construction of Sections 3 and 4 of the impugned attack on the validity of the section on the ground of contravention of Article 20(1) of the Constitution must fail.

d.The clause has no application to a civil liability unless the statute makes the failure to discharge such liability an offence

As in this case, an act was passed in june in 1957 impose on the employers closing their undertakings a liability to pay compensation to their employees since November 28 1956,This liability could be enforced by coercive process leading to imprisonment in case of failure to discharge it. The Supreme Court held that the liability imposed by the laws was a civil liability which was not an offence under and so article 20(1) could not be apply to the liability for the period November 28, 1956 to june 1957.

"Shall Be Convicted":

1.What is prohibited under clause I is only the conviction and not the trial thereof. Hence the trial under the procedure different from what has been obtained at the time of the commission of the offence or by a court different from that which had competence at that time cannot ipso facto be held to

be unconstitutional. A person accused of the commission of the offence has no fundamental right to trial by a particular court or by a violation of any other fundamental right may be involved. In short the prohibition under this clause does not extend to merely procedural laws, and a procedural law would not contravene art, 20(1) merely because retrospective effect is given to it.

2.The prohibition is only against prescribing judicial punishment with retrospective effect. It does not prohibit the enforcement of any other sanction by a civil or revenue authority,e.g the loss or deprivation of any business or forfeiture of propertyor cancellation of naturalization certificate by reason of act committed prior to the operation of the penal law in question or the imposition of some statutory penalty, to enforce a civil liability

3.The words convicted and offence make it clear that the article has no application to preventive detention or an order of externment but deals with punishment for offences and provides two safeguard in relation thereto: namely-

a)That no one shall be punished for an act which was not an offence under the law in force, when it was committed.

b)That no one shall be subjected to a greater penalty for an offence than what was provided under the law in force when the offence was committed.

4.On the other hand the prohibition under the present clause is not confined to the passing or the validity of the law, but extends to the conviction or the sentence based on its character as an ex post facto law. The clause therefore must be taken to prohibit all the convictions or subjections to penalty which take place after the commencement of the constitution in respect of an ex post facto law whether the same was a post constitution or a pre constitutional law.

'Offence'

1.for the application of article 20(1) there should be an 'offence'

2.There being no definition of offence in the constitution. The definition in section 3 (37) of the general clauses act is to be applied. It is therefore, means an act or omission which is punishable by any law by the way of fine imprisonment or death. But unless there is a law forbidding the doing or the omission to do something, no question of 'punishment' comes.

Hence where a law of irrigation provides for the levy of a special rate of unauthorized use with retrospective effect, it cannot be held that the legislature was imposing a higher penalty in contravention of article 20(1), inasmuch as there was no law prohibiting the use of water and no 'punishment' for an 'offence'.

3.What this clause prohibits is the creation of a new offence with retrospective effect. It does not prohibit the creation of a new rule of evidence or a presumption for an existing 'offence'.

4.In absence of any evidence to show that the offence was committed, the conviction could not be sustained.

'Law in Force'

1.This expression refers to the law factually in operation at the time when the offence was committed and does not relate to law 'deemed to be in force' by the retrospective operation of a law subsequently made. Article 20(1), in fact, controls the power of the legislature to enact such retrospective legislation so far as the punishment for crimes is concerned.

2.The law for the violation of which a person is sought to be convicted must have been in force at the time when the act with which it is charged was committed. Itfollows, therefore, that a person cannot be convicted for an act, which was not an offence under the law which was in force when that act was committed.

3.but the rules and regulations made under a statue which is repealed but continued in force under s. 24 of the general clauses act are 'laws in force' within the meaning of the article 20(1). The result is the same when a repealed act is revived.

4.An employee of a bank of Cochin was served with charge sheet but subsequently the having been amalgamated with the state bank of India; penalty was imposed on him under the rules of the SBI. It was held that the penalty could be imposed under the rules of the bank of Cochin

'Penalty Greater Than That Which Might Have Been Inflicted' these words lay down the second prohibition contained in the clause. A person may be subjected to only those penalties which were prescribed by the law which was in force at the time when he committed the offence for which he is being punished. If an additional or higher penalty is prescribed by any law made subsequent to the commission of the offence that will not operate against him in respect of the offence in question. But the article does not prohibit the substitution of a penalty which is not higher or greater than the previous oneor the mollifications of the rigours of criminal law.It has been mentioned that no greater penalty has been imposed by the later law, in the following cases Where the general law prescribes an unlimited fine ,and a later special law specifies a minimum amount less than which a sentence of fine cannot be imposed in a case of conviction .“In the case the specification of minimum does not impose a “greater” penalty because the general law was silent as the extent of the penalty which could be awarded.”

'Penalty'

A.Penalty means punishment for the offence and would not include any other remedial measure provided for removing the mischief, ex. Summary eviction of a landlord who has contravened the provisions of a rent control law; or the civil liability to pay an enhanced water rate in case of an unauthorized use of water, forfeiture of property to recover embezzled money.

B.On the other hand, the following are 'penalty' for the purposes of this article- forfeiture of property under section 53, IPC, ordered by a court trying an offence compensatory fine under s. 9(1) of the west Bengal cr. Law amendment (special

courts) act, 1949 liability for compensation under s. 25FFF of industrial disputes act, 1974special rates under s. 31 of the northern India canal and drainage act ,1873

Exceptions

Tada Act

The express provisions contained in article 20(1) are not a bar for restoring to the corresponding sub sections of the TADA act, 1987.

Conclusion

In the international community, the right to protection against retroactive criminal legislation is widely acknowledged. Nonetheless, there are many instances of retroactive criminal laws being implemented in societies that assert this right to be essential. We are fortunately shielded from ex post facto legislation by the Indian constitution.

We are all wonderfully blessed by Article 20(1). The state cannot bring charges against an innocent person for a prior conduct that is now unlawful since doing so would go against the natural justice principle because the person could not have known, either logically or by some other means, that the act would become criminal in the future. As a result, retroactively applied criminal statutes are entirely illogical, unfair, and unjust. The existence of criminal laws having retroactive effect is in violation of the right to life because it makes it possible for someone to be held accountable for an act they performed inadvertently even if it subsequently turns out to be illegal. Punishing someone for an innocent act they did is thus against their right to life.

Reference

1. Nayyar , G.P. V. Delhi Admin. AIR 1979 SC 602
2. Shiv bahadur singh rao V. state of U.P. , AIR 1953 SC 394
3. Kedar nath v. state of west Bengal, AIR 1953 SC 404
4. Ibid
5. Nayyar , G.P. V. state of U.P. , AIR 1979 SC 602
6. Rattan lal V. state of Punjab , AIR 1965 SC 444
7. Cf. Narottamdas V. state of M.P. , 1964 (1) SCR 820, AIR 1964 SC 1667
8. Cf. Hathising Mfg. Co. V. union of India, AIR 1960 SC 923
9. Shiv bahadur singh rao V. state of U.P. , AIR 1953 SC 394
10.ibid
11.ibid
12.Brij bhukan kalwar V. S.D.O siwan , AIR 1955 Part 1
13.Shiv dutt rai fateh chand V. UNION OF INDIA , AIR 1984 SC 1194
14.Shiv bahadur singh rao V. state of U.P , AIR 1953 SC 394
15.ibid
16.Jwala ram V. state of pepsu, AIR 1962 SC 1246
17.Sajjan singh V. state of Punjab , AIR 1964 SC 464
18.Kalpnath rai V. state, (1997) 8 SCC 732
19.Shiv bahadur singh rao v. state of u.p
20.Pulin k dutt v. satayaranjan bhattacharjee,AIR 1953, cal 599
21.Chief inspector of mines v. thapar karan chand, AIR 1961 SC 838
22.State bank of India v. T.J Paul , AIR 1999 SC 1994
23.sawant singh v. state of Punjab, AIR 1960 SC 266
24.Ratt23.an lal v. state of Punjab, AIR 1960
25.State v. gian singh , (1999) 9 SCC 312

Chander Mohan
B.A,LL.B, LL.M
M.D. University, Rohtak
Email: cmohankalia@gmail.com

Conflict between Culture and Psychology: A Study of Bharati Mukherjee's Women Protagonists

Dr. Devina Badhwar

Abstract

The primary concern of this paper is to engage in a critical enquiry exploring the cultural and psychological conflicts in the intellect of Bharti Mukherjee's women immigrants while settling in a foreign country in a new milieu- their struggles, anxieties and miserable plight are in the light of present socio-political scenario. One of the critical subjects of current writing is the portrayal of the cross-cultural crisis, prompting psychological issues, a subject which has expected extraordinary importance in the present universe of globalization. Bharati Mukherjee's writing is undoubtedly one of the most outstanding instances of the sort. The author's aim is to observe, examine and present the existing position of women on the issues they face both in India and abroad. Mukherjee focuses on sensitive women and protagonists who lack a stable sense of personal and cultural identity. She is curious about the survival of her protagonists in the new surroundings. She is concerned about making her picture of Indian life intangible and interesting to American readers. During the study, the investigator is familiarized with new frontiers of Diaspora writing. The insightful study has given the perception that during the painful and unpleasant process of immigration, harmonious assimilation of a foreign culture can be the solution to being a successful immigrant. It is also found that the human instinct to live life with tremendous zeal excels in any adverse situation.The Feminist Literary movement was ever ignorant of cultural and psychological traumas involved in the process of immigration, especially of women immigrants. The study threw new light on the problem. All human beings adopt their mother culture so it becomes their identity. Immigration poses a new dilemma of cultural identity. There starts a cultural conflict between the mother culture and the adopted culture. Consequently, this process leads to a psychological crisis. Bharati Mukherjee's fictional world of women immigrants presents the traumatic experiences in the process of expatriation to immigration. Her women protagonists consequently suffer from a sense of alienation, identity crisis, cultural shock and a consequent psychological conflict. Dimple, Tara, Vinita, Angela, and Nafeesa become the victims of cultural and psychological conflicts caused by the process of immigration. No doubt, some of her women like Jasmine, Hannah, Panna, and MrsBhave emerged as successful immigrants. By choosing her protagonists from all walks of life, having divergent ethnic, religious and cultural preoccupations, she has attempted to explore the inner conscience of her protagonists like Dimple, Tara, Jasmine, Angela, Nafeesa, Ratna and many more. All of them suffer a lot and become the victims of cultural and psychological alienation.

Keywords: Conflict, culture, psychology, immigrants, anxieties, identity, ethnic and alienation.

Bharati Mukherjee, is one of the significant authors of the Indian Diaspora who hasaccomplished a fortunate situation inside a nearly short innovative span. As anostracized in the US, she has been caught reminiscently of the diasporic experience in her books as well as two assortments of short fiction. As she is an Indian-conceived American author, brief tale essayist, verifiable author, and writer. She takesup the existence of Indian foreigners in the U.S.A. as the topic of a large portion of herbooks. In her books, she investigates the topic of movement and change. Theworkers share one longing practically speaking that is to settle forever in America. Thus, asworkers, they go through a course of change and change in theircharacters. She travels through the various stages, for example, the periods ofexile, progress, and movement. Her works uncover her embattlements withethos, societies, and individuals of the nation where she was conceived (India) and the place that is known for hermigration (America). The nature of social clash prompting mental emergency

in her fiction in the entirety of its variety frames the core of her achievement as an imaginativecraftsman. She is at her best in the portrayal of social conflict between the East and the Westprompting mental emergency in the inward psyche of her heroes. Mukherjee centersupon delicate female heroes who need the stable feelings of individual and socialcharacter. She is interested in the endurance of her hero in the new encompassing. Sheis worried about making her image of Indian life coherent and intriguing to theAmerican readers.

The study aims at investigating the cultural and psychological struggles in the personalities of Bharati Mukherjee's protagonists while settling down in a far-off country in anew milieu — their concerns, anxieties, and hopeless situations in the radiance of the present sociopolitical situation.

One of the most significant themes of modern literature is the portrayal of the cross-cultural crisis, prompting psychological issues, a subject that has been expected to be an extraordinaryimportance in the present universe of

globalization. Bharati Mukherjee's works are without a doubt one of the most incredible instances of this sort.

The major scholarly works of Bharati Mukherjee have featured the migrant's anxiety, their concerns, and the psychological issues they experience because of social conflict. All immigrants, Asians, and Europeans turned into the survivors of these social clashes. Transplantation of individuals starting with one social world and then onto the next is generallydifficult and it is more agonizing to the female settlers. Mukherjee?s books have in general female protagonists as the focal characters. She depicts the change of women when they go through the course of migration. She attempts to vivify the picture of those women who have attempted to acclimatize to the outsider's culture and have attempted toacknowledge changed characters toppling the Indian social legacy wherein they took their most memorable breath. What is more significant in them is their soul with which theyoust their old culture and change themselves with the new encompassing. In the cycle of migration presumably that her female protagonist regards themselves as asocial difficulty and eventually they face forlornness, gloom, estrangement, and disappointment, commonly coming in psychologically uneven characters as well.By picking her protagonists from varying backgrounds, having disparate ethnic,strict, and social distractions, she has endeavored to investigate the inward cognizantof her protagonists like Dimple, Tara, Jasmine, Angela, Nafeesa, Ratna, Panna Bhatt,Maya, Mrs.Bhave, and numerous others. Every one of them endures a ton and becomes the survivor ofcultural and psychological distance.

Bharati Mukherjee's works generally mirror her own encounters she has experienced as a woman immigrant got between two cultures. Her most memorable novelTiger's Daughter is an extremely fine sign of cultural struggle, which delineates the removed state of Tara, the protagonist of the book. She is the personal portrayal of the creator herself who is additionally hitched to an American. After sevenyears she gets back to Calcutta to find her home, follow her cultural roots, and recover her acquired way of life as the daughter of the Bengal Tiger. However, to her extraordinary disappointment, she got herself a complete outsider in the acquired milieu. She understands that she is currentlyneither Indian nor genuinely American. She is completely confounded and lost. She shunts betweenCalcutta and New York, riding Indian and American cultures. In the process, she isgotten between two universes, two belief systems, two different ways of life, and two different ways ofexperiencing reality.

Bharati Mukherjee's Wife is a psychological investigation of Dimple, a young ladyfrom Calcutta and her concerns about settling down in New York with her new spouse.Raised to be aloof and reliant according to Indian principles of womanhood shemisses the mark on inward assets to adapt to fear and testing circumstances and at lastdives into unforeseen brutality. Dimple as introduced here is a psychotic andsolipsistic person who stops the conjugal clash in her life by killingher own better half. Bharati Mukherjee has investigated here the inward components of theprotagonist and has strangely portrayed the mind of Dimple.

Dimple is gotten between the phase of exile and the phase of migration:between the 'Ballygunge Ghetto' of exiles and the 'Manhattan Enclave' ofworkers. She is likewise torn between the conventional good example of a compliant self-effacing Indian spouse and the new good example of a self-assured, free wife advertisedby the West. She in the end surrenders to social/social tensions and at last notjust turns into a frustrated 'expatriate' yet additionally a survivor of despondency.

In Jasmine, Mukherjee provides us with the tale of an immigrant from the Third Worldto the U.S. pushed starting with one calamity and then onto the next. Jasmine arises not as a disastrouscharacter yet as one still up in the air to change her fate to investigate boundlessprobability. Obviously, she goes through physical, mental, and profound miseryinfluencing her so much that she is headed to brutality. Here, Bharati Mukherjeeinvestigates female personality through the account of an Indian worker lady whose way takesher from Punjab to Florida, to New York, New York to Iowa, and as the clever drawtowards a nearby, she is going to embark for California. With each new move, theprotagonist reevaluates herself with another name-Jyoti, Jasmine, Jase, Jane and with eachnew name she draws nearer to her fantasy about being an American and having a place in the newworld. Jasmine's progressing venture features her rootless position and her quest foridentity.

An immigrant's life is truth be told a progression of rebirths. She survivesa few and carries on within a solitary lifetime. This reality makes sense of the state of the writer aswell as that of Jasmine. Mukherjee, by exposing her champion to numerous codes ofsociety and geological regions appears to send the message that assuming one needs to acclimatizeoneself to the standard culture of the embraced land, one ought to forget one's past.

Hannah Easton is Mukherjee's model of a 'translated' self. Here, The Westmeets the East and the New World falls head over heels for the Old World. In Jasmine theprotagonist ventures out from the East toward the West goes through a progression of changes andgets absorbed into the American culture. However, Hannah Easton, a resident of the NewWorld

goes through the course of translation in her excursion from the West toward the East.Comparably in the storied assortment, Dimness, we have Ratna, Angela, and Nafeesa, allthese workers are displayed for truly transporting between the old and the new worlds. Allof them endured a great deal and followed through on a weighty cost for being migrants in the U.S.A. Thecharacter of Ratna is a fine investigation of the psychological contentions of an exiled woman withevery one of the worries and duality that cover a person in an outsider land. Vinita also istrapped in the horns of the exile situation of being mesmerized between two worlds,heading for a psychological meltdown; she is like Dimple in Wife, in her failure toadapt to the disarray emerging from social impact. "For endurance in America theworkers need to go through a wide range of hardships. They need to sealtheir hearts. They need to swear off all feelings of ethical quality, fairness, and dignity". This isexceptionally evident in Jasmine, Maya, Panna, Mrs.Bhave from Broker and the OtherStories. They are effective migrants, most likely, yet they needed to experience physical,psychological, and close-to-home battles during the time spent changing themselves and procuring avocation in the outsider land. Panna Bhatt is confronted with a similar predicament. She has been

in America for quite a long time, she has expanded her horizons? yet riding betweentwo societies.

Bharati Mukherjee's fictitious world presents a wretched picture of the differentencounters of immigrant women, their cultural and psychological contentions, battles,injuries, hardships, and the weighty value some of them needed to pay in theirendeavors to become effective outsiders in America.

The examination of Bharati Mukherjee's fictitious world from a cultural and psychological point of view exhibits that she has addressed herself to every one of the issuesrelated to exile insight. By picking her protagonists from all pieces of theworld, she has endeavored to investigate the assortment of this subject which is focused ontheir battle to grow out of acquired values. With her advancing inventive vision the materialof her topical concern expands and the intricacy of social osmosis procures anew aspect. The excellence of quite a bit of her fiction lies in its being educated by herindividual encounters. An unconventional feeling of recognizable proof with her personality loans her novels a flavor seldom found among ostracized scholars.

It is obviously seen that due to the segregation of culture, method ofthinking and understanding, Bharati Mukherjee's, women characters become casualties of cultural and psychological contentions. Regardless of the multitude of undesirable shadows, she isconfident about an agreeable osmosis. She has attempted to set concordance between thestandard larger part and the settler minority.Social distance is a world peculiarity today. The colossal contrastbetween two different ways of life drives an individual to a sensation of misery and disappointment. Thiscould be called 'Culture Shock' when an individual leaves his own way of life and entersanother; his old qualities come into clashes with the upgraded one he finds. The major scholarlyworks of Bharati Mukherjee have featured the foreigner nervousness. She perpetuallycenters upon delicate women protagonists who need firm feeling of social character andare normal survivors of bigotries, sexism, and various types of social persecution.

A significant topic in her original has been the existence of South Asianexile/settlers in USA and Canada and the issue of assimilation andabsorption. Her inventive world is repressed by individuals of different strict religions,various nationalities, and different social inclinations. In her books, she haseffectively attempted to manage every one of the issues, and anxiety of Asianexiles.

The theme Bharati Mukherjee manages in her novelsare one of the hugethemes of current writing that is the portrayal of social conflict causing cultural and psychological struggles. The subject has presumably expected extraordinary importance in thepresent world of globalization. Multifaceted showdown has gotten an articulatedcatalyst since the development of the pioneer development in the actual opening of the twentiethcentury. The globalization of world economy can be viewed as a characteristic branch-offof multiculturalism and intercultural collaboration. Bharati Mukherjee has been broadlyrecognized as 'Voice' of exile outsider reasonableness. Consequently, the subject hasaccepted national and global status.

The canny review has given discernment that during the difficult and terrible cycle of migration, amicable absorption of unfamiliar culture can be the arrangement in finding successful settlers. It is additionally found that human nature to carry on with an existence with gigantic energy succeeds in any unfavorable circumstance. The Feminist Literary movement was ever uninformed about cultural and psychological issues engaged with the course of migration, particularly of women migrants. The study illuminated the issue.

The targets formulated during the review are accomplished. All people take on their mother culture so it turns into their character. Migration represents another situation of culturalidentity. There begins a social clash between mother culture and embracedthe culture. Therefore, this interaction prompts a psychological emergency. Bharati Mukherjee'sfictitious world of women migrants presents the horrible encounters simultaneouslyof exile to movement. Her

women protagonists, therefore, experience the ill effects of a senseof estrangement, character emergency, cultural shock, and a resulting psychological struggle.Dimple, Tara, Vinita, Angela, and Nafeesa become the casualties of cultural and psychological clashes caused during the time spent in migration. Presumably, women protagonists likeJasmine, Hannah, Panna, MrsBhave arose as effective immigrants.

Works Cited

Alam, Fakrul. Bharati Mukherjee1995. London: Twayne, 1996.

Dimri, Jaiwanti. “From Marriage to Murder: A Comparative Study of Wife and Jasmine.” The

Fiction of Bharati Mukherjee:A Critical Symposium. Ed. .K.Dhawan. New Delhi: Prestige,

1996.

Mukherjee Bharati. The Tiger's Daughter. Houghton Mifflin 1972.

———. Wife. 1975. New Delhi: Penguin, 1990.

———. Jasmine. 1989. New Delhi: Penguin, 1990.

———."Immigrant Writing: Give Us Your Maximalists!" New York Times Book Review. 28 Aug.1988.

Myles, Anita. Feminism and the Post-Modern Indian Women Novelists in English. New Delhi: Sarup, 2006.

Mythili, M. and Phil, M. "Bharati Mukherjee's Jasmine; A Paradigm of Psychic Disintegration and Regeneration." Vol. 1 3:3, Mar. 2013.

Narayan, Uma. "Eating Cultures: Incorporation, Identity, and Indian Food." In Dislocating Cultures: Identities, Traditions, and Third World Feminism. NY: Routledge, 1997.

Dr. Devina Badhwar

Assistant Professor

Sat Priya Group of Institutions,

Rohtak, Haryana, India

Email: badhwardevina26@gmail.com

99

Artificial Intelligenceand Intellectual Property Rights

Gaurav Badhwar

Abstract

Artificial Intelligence, which appeared like a distant dream at one point, has now moved from science fiction movies to our reality, gaining traction over the last several years and resulting in a slew of new breakthroughs in practically every industry.

Artificial intelligence will affect every industry, and Intellectual Property Rights will be no exception. On the one hand, Artificial Intelligence will prove to be an asset in the areas of patent and patent search tools, accurate and timely research, providing a mechanism to sort out inventions and ideas, providing a mechanism to the innovator on the patents already existing like his idea, and many other things, but on the other hand, Artificial Intelligence may pose a threat to intellectual property rights. The research paper will be discussing the impact of artificial intelligence on intellectual property rights, the benefits, and drawbacks of AI on creativity and innovation in IPR, as well as the future scope of AI in IPR.

Keywords: - Artificial Intelligence, Intellectual Property Rights, Copyright Law,Patent Law

Introduction

In the beyond couple of years we have seen widespread growth 1 of Artificial Intelligence (alluded to as AI in this paper) and it is something which is equipped for performing basic undertakings like doing computations to truly complex errands. In impending future, AI will want to do anything a human is doing and in fact much more than that 2 . Still there is a great deal of vagueness with respect to and the advantages and disadvantages of AI are one of the most discussed points nowadays.

There is not a solitary acknowledged meaning of AI however the most fundamental comprehension is that it is about creating machines and programming projects which can complete capabilities which for the most part require human intelligence.

There is no question that the field of Intellectual Property has and will likewise not remain unimpacted by AI and the crossing point of AI and Intellectual Property 4 . May be two aspects; On one hand it can end up being a resource for the field of Intellectual Property however can likewise act like a danger.

This paper will exhaustively examine the effect of AI on Intellectual Property with explicit reference to copyright, licenses and conventional information and will likewise examine exhaustively in regards to the obligation in the event of break of Intellectual Property Rights.

Effect of Artificial Intelligence on Intellectual Property Rights Eventual fate of computerized reasoning At present Artificial Intelligence has had the option to play out the

1 Tripathi Swapnil and Ghatak Chandni, 2018. Artificial Intelligence and Intellectual Property-who- owns-ai/WIPO, Traditional Knowledge, https://www.wipo.int/tk/en/

2 Id.

3 GurkaynakGonenc, Questions of Intellectual Property in the ArtificialRealm,https://www.gurkaynak.av.tr/docs/ 8b791-rlj - september - october-2017-.pdf

4 Renard Castets Celine, 2020. The intersection between AI & IP: Conflict or Complementarity, IIC- International Review of Intellectual Property and Competition Law,51, 141-143, https://link.springer.com/article/10.1007/s40319-020-00908-z assignments including human intelligence

5 what is more, the innovative work on Artificial Intelligence is as yet continuing and the capabilities which Artificial Intelligence will actually want to act sooner rather than later is past imagination

6 . Be that as it may, when we are examining the advantages, we should not fail to remember that at last it is a machine and for a machine and there have been cases where the machine oversaw the software engineer and began performing assignments on its own. Presently these errands can be either productive or damaging however it gains hard to influence the computer-based intelligence machine or program on the off chance that it begins performing activities all alone and goes past the software engineer's hands. However, a ton has been finished in the field of Artificial Intelligence yet there are yet a large number of ambiguities which actually wins and trust that the equivalent is being settled in the close future and we will have a reasonable guide as to how much AI can work in living souls and in developments also. Artificial Intelligence and Copyright Overall terms Copyright is a right that vests with somebody who has made their unique work and the work can be abstract work, tune, any software and so forth

7 . However the convergence of AI and Copyright isn't new and has been happening from numerous years however prior there was no question relating to the way that who will have the copyright over the work on the grounds that the program or machine just functioned as a device for making that work very much like pen and paper and the thought or the work had a place with the software engineer however with the progression in AI and when we are making machines with human knowledge which is able of making unique work on its own then the inquiry concerning who will have the Maheshwari Anmol, 2019. Dawn of Artificial Intelligence

Changing the Face of PatentRegime, Amity International Journal of Juridical Sciences, 5, 126-135https://amity.edu/UserFiles/aibs/0dba2019%20AIJJS_123-end.pdf 6 Shabbir Jahanzaib and Anwer Tarique, 2015., Artificial Intelligence and its Role in Near Future, Journal of Latex Class Files, 14

8. https://arxiv.org/ pdf/1804.01396.pdf 7 Guadamuz, 2017. Artificial Intelligence and Copyright, https://www.wipo.int/wipo_magazine/en/2017/05/article_0003.html copyright is being raised with respect to whether copyright will go to the software engineer or the AI machine or program. Machine learning 8 is something which falls inside the ambit of AI and in which information is being taken care of to the machine or program and the AI machine becomes equipped for making unique work which is autonomous of any human.

9. Subsequently the development of AI has likewise prompted numerous ambiguities, taking everything into account furthermore, there is need of clear principles and strategies in any case there is high likelihood of question in this respect. Artificial Intelligence and Patent The convergence of Artificial Intelligence and Patent Laws is picking up speed in the present day. However, on one hand AI will end up being a resource for patent protection 10 , patent search, patent pursuit devices and for innovators likewise by giving them an understanding at the exceptionally starting stage with respect to regardless of

whether there exists a comparable thought. Patent is about creation and development.

What is more, AI which is getting fit for having human knowledge can do creations

without input or mediation of a human 11 . With regards to patent and AI, we want to look explicitly into certain regions like:Weapon: There is a worldwide development in fighting utilizing AI machines and projects. The question with respect to how AI will be controlled under International Humanitarian Law however cannot be disregard in any case, is 8 Margoni, 2018. Artificial Intelligence, Machine Learning and EU copyright law: Who owns AI?, https://www.create.ac.uk/artificial-intelligence-machine-learning-and-eu-copyright-law_and_artificial_intelligence_jrc_template_final.pdf

9 Iglesias Maria, Shamulia Sharon and Anderberg Amanda, 2019, Intellectual Property and Artificial IntellIgence: A literature review, https://publications.jrc.ec.europa.eu/repository/bitstream/JRC119102/intellectual_prop erty_a

10 Abbott Ryan, 2019. Artificial Intelligence, Big Data and Intellectual Property: Protecting 11 (Anonymous, Artificial Intelligence Collides with Patent Law, 2018) outside the domain of this paper yet the issue that assuming any weapon is being made by an AI machine or program, there is uncertainty with regards to who will get the patent for something similar.

Medication/pharma area: When we discuss licenses, pharma area or creation of new drugs of most extreme need. Presently when there is what is going on where AI effectively makes a medication, then there will rise an issue of patent. For instance, in the current circumstance where everybody is searching for an immunization for the worldwide pandemic Covid and if in such a circumstance an AI machine concocts an immunization for the equivalent, then there will be a great deal of vagueness regarding who will have the patent of the antibody, whether it will go to the AI machine or program or to the developer who made that machine or to the buyer of the antibody. In the event that this issue isn't settled then it can likewise still up in the air regarding how and at what value the antibody is to be given to different countries. Subsequently there is a need of stopping such issues from the beginning. Road and Highway Safety: So many projects are being created to guarantee road security however at that point as well the quantity of passings in view of road mishaps

cannot be disregarded. The fact that AI can makes it conceivable. 12 New advancements: Every day we are thinking of numerous innovations and patent regulation is about advancement and innovation. As examined above, there needs an unmistakable picture with respect to who will have the patent in the event of a creation by an AI machine or developer, whether the patent will be with that machine or will it go to the developer. Artificial intelligence and Traditional Knowledge Customary Knowledge is something (perhaps an expertise or any skill or 12 Anonymous, 2019.Artificial Intelligence and road safety: A new eye on the highway https://news.microsoft.com/ apac/features/artificial-intelligence-and-road-safety-a-new-eye-on-the- highway/ practice) which has been obtained or followed every once in a while. The information is passed on from one age to other age by that community. 13 There can be occurrences wherein AI may encroach customary information wherein it takes abstracts from the conventional information which is currently accessible.

Subsequently considering the previously mentioned conversation there may be plausible that the Man-made reasoning machine or program could encroach the customary information which structures piece of rich legacy of numerous networks.

Infringement Liability

This is one of the most discussed subjects regarding who is obligated when there is infringement of Licensed innovation Rights by an AI machine. Whether the software engineer will be mindful or whether the machine will be mindful or whether any other person will be dependable. There is still uncertainty with respect to this perspective. If the developer has information that the machine will often encroach the Licensed innovation Rights, then in such a case the obligation will fall upon the software engineer as there was information on the encroachment behind making that program or machine.

Anyway, in situation when there was neither information or expectation of encroaching the Intellectual Property Right by the software engineer despite
everything the AI machine or program encroaches the Intellectual Property Rights then it will be hard to decide as to on whom the risk will fall upon.

Thus, this is another perspective which is vague and there is lacuna which should be taken care of in request to decide the obligation of the Artificial Intelligence machine or program. On the off chance that the encroachment is of such a sort where criminal risk is being caused then how might the AI have individual criminal obligation. As we have seen over the issue of responsibility is of serious concern and should be
addressed any other way it would prompt a ton of debates and disarrays.

13 WIPO, Traditional Knowledge, https://www.wipo.int/tk/en/

Conclusion

There is no bit of uncertainty that Artificial Intelligence can without a doubt end up being a resource in the field of Intellectual Property Rights to specific degree like it can do numerous developments which could take any human ages to do and can help in progression of the countries however at that point there are such countless lacunas and uncertainty with respect to involving Artificial Intelligence in Intellectual Property.

Privileges however at that point AI can likewise end up being a danger as there are issues of deciding the responsibility in instance of encroachment. There is a need of
strategies and rules relating to Artificial Intelligence also, how might the not entirely settled. Likewise, a clarity is needed on who will hold the copyright, patent or some other licensed innovation directly over the work or development of Artificial Intelligence.

Subsequently Artificial Intelligence is currently at an exceptionally starting stage and a great deal of development is going on also, there will be no limit to the discussion on Impact of Artificial Intelligence be it on any area or explicitly on Intellectual Property Rights till the time there are spread out rules on the utilization of Artificial Intelligence, it's risk and how much AI can be permitted to meddle.

A guide for Artificial Intelligence, its working, control, and obligation is the need of great importance remembering the speed with which AI is developing as of now. More or less, AI is extremely advantageous on the off chance that it is inside the control of the developer however the second it begins working all alone with no outer control, it could act like a danger to the field of Intellectual Property Rights as well as to each one overall.

References

Abbott, Ryan. (2019). Artificial Intelligence, Big Data and Intellectual Property: Protecting Computer-Generated Works in the United Kingdom.

Calvin Nathan & Leung Jade, 2020. Who owns artificial intelligence? A preliminary analysis of corporate intellectual property strategies and why they matter,https://www.fhi.ox.ac.uk/wp-content/uploads/Patents_-FHI-Working- Paper-Final-.pdf Computer-Generated Works in the United Kingdom,https://papers.ssrn.com/sol3/papers.cfm?abstract_id=3064213(Anonymous, Artificial Intelligence Collides with Patent Law 2018)https://news.microsoft.com/ apac/features/ artificial-intelligence-and- road-safety-a-new-eye-on-the-highway/ Guadamuz, 2017. Artificial Intelligence and Copyright, https://www.wipo.int/wipo_magazine/en/2017/05/article_0003.htm 1 GurkaynakGonenc, Questions of Intellectual Property in theArtificial Realm, https://www.gurkaynak.av.tr/docs/8b791-rlj- september-october-2017- .pdf Id. Iglesias Maria, Shamulia Sharon and Anderberg Amanda, 2019, Intellectual Property andArtificial IntellIgence: A literature review, https://publications.jrc.ec.europa.eu/repository/bitstream/JRC119102/intellectual_property_a law, Christ University Law Journal, 7(1)83-97,https://core.ac.uk/download/pdf/236436865.pdf Maheshwari Anmol, 2019. Dawn of Artificial Intelligence Changing the Face of Patent Regime, Amity International Journal of Juridical Sciences, 5,
126- 135https://amity.edu/UserFiles/aibs/0dba2019%20AIJJS_123-
end.pdf Margoni, 2018. Artificial Intelligence, Machine Learning and EU copyright law: Who ownsAI?, https://www.create.ac.uk/artificial-intelligence- machine-learning-and-eu-copyright- law_and_artificial_intelligence_jrc_template_final.pdf Renard Castets Celine, 2020. The intersection between AI & IP: Conflict orComplementarity, IIC- International Review of Intellectual Property and Competition Law,51, 141-143, https://link.springer.com/article/10.1007/s40319-020-00908-z Shabbir Jahanzaib and AnwerTarique, 2015., Artificial Intelligence and its Role in NearFuture, Journal of Latex Class Files, 14(8), https://arxiv.org/ pdf/1804.01396.pdf Tripathi Swapnil and Ghatak handni, 2018. Artificial Intelligence and Intellectual Property-who-
owns-ai/WIPO,

GAURAV BADHWAR
B.A, LL.B, LL.M
Faculty of Law
M.D University, Rohtak

Victim Compensation Scheme in India: An approach towards Rehabilitation and Restitution of Victims

Ms. Jagriti

Abstract

The Indian judiciary developed the novel idea of victim compensation to achieve justice. The contemporary idea of justice has demonstrated great concern by offering victims' compensation mechanisms. As a result, since the Indian Constitution was created, regulations and laws pertaining to victim compensation have been changing. In the decades that followed the UN Declaration of Basic Principles of Crime and Abuse of Power, 1985, the emergence of victim rights began to grow. Since that time, it has become clear that the victim is at the center of the criminal justice system, and consistent efforts have been made to better their circumstances.In order to comfort and support the victim, paying for the harm done is a crucial first step.In order to reassure and support the victim, one important step would be to make up for the harm done; this was viewed as a crucial supporter of the right to life under Article 21 of the Indian Constitution. Later, the state was required by Section 357A of the Code of Criminal Procedure, 1973 to compensate the victims and their dependents, who had been hurt as a result of the damage done. Nearly all of the states in the nation created victim compensation schemes to offer fair recompense.

According to the plan, a "victim" is someone who has "suffered loss or injury" as a result of the crime and wants to be "rehabilitated." All schemes, with the exception of Himachal Pradesh, have essentially identical definitions. According to section 2 subclause (h) of the Himachal Pradesh Victim of Crime Compensation Scheme, 2012, which refers to loss or injury brought on by the accused person's actions or inactions for which they have "been charged."In the case of **Suresh v. State of Haryana (2015) 2 SCC 227,** The Supreme Court highlighted the following inherent restrictions of Section 357 CrPC: “Despite the fact that Section 357 CrPC provides for victim compensation, there are some inherent limits. The abovementioned provision can only be applied after a conviction, and only at the Judge's discretion, and only if the accused has the financial means to pay.The Delhi High Court declared in **Chattar Singh v. Subhash** that the term "legal heir" refers to the people who would inherit property under a person's personal laws. However, a larger bench of the Delhi High Court overruled the above-mentioned case, holding that it is not necessary for all legal heirs to 'experience emotional harm or injury' as a result of the crime, or even to have a motivation to participate in all legal wrangling's of the justice system in **Ram Phal v. State.** Also the court decided in **M/s Tata Steel Ltd. v. M/s Atma Tube Products,** that only those dependents that have experienced loss or harm as a result of the crime and require rehabilitation are eligible for VCS, and that the “legal heir” has nothing to do with sec 357A of the code.

Implementationof the Scheme: All the states have given the jurisdiction to decide on compensation and to offer other temporary relief to the district legal service authority (DLSA) and state legal service authority (SLSA). The Legal Services Authority was established at the state and district levels under Sections 6 and 9 of the Legal Assistance Authorities Act of 1987 to provide free legal services to the less fortunate sections of society. The committee at the state level is made up of the Chief Justice of the High Court serving as Patron in Chief, a judge now serving on or just retired from the pertinent High Court, and other members chosen by the government after consulting the Chief Justice of the High Court.

Functions of Authorities: To determine how much compensation should be given to the victims, the authorities are required to look into the situation and conduct an inquiry. The DLSA and SLSA must also include provisions for quick assistance for victims, especially those who require medical attention.

Procedure of awarding compensation: The method has been kept simple in every state to help the victims. With the exception of Arunachal Pradesh, which allows for 30 days to decide the claim under clause 6(iv) Arunachal Pradesh VCS, 2011, it is a time-bound procedure with most states stating two months as the statutory period, the DLSA and SLSA must study and confirm the facts mentioned in the claim before making a decision on compensation. In accordance with clause 5 of the Delhi VCS of 2011, the Delhi VCS stipulates the documentation and resources that must be provided to support the application.The copy of the First Information Report (FIR), or a complaint to the magistrate, a medical report, a death certificate, and, in some cases, a copy of the ruling are examples of these papers. Other states have not explicitly addressed it, which could make it difficult for victims to establish their case.

Factors Responsible for Awarding Compensation to the Victims

While under clause 8 of the Delhi VCS, 2011, some elements must be considered while providing the compensation to the victims. These are some of them:

- The seriousness of the crime;
- The severity of the victim's mental/physical suffering or injury;
- Expenses for medical treatment, mental health, funerals, travel, and so on;
- Education opportunities are being lost;
- Loss of employment;
- Offender-victim relationship;

- The victim's financial situation;
- In the event of death, such as the deceased's age, income, number of dependents, etc.;
- Any additional element determined just or sufficient by DLSA and SLSA.

Rejection of the Application: The majority of governments don't specify why a compensation application should be denied. However, the authority is likely to reject the application if the materials provided for the investigation of the application do not support the claim. However, under clause 7 of the Himachal Pradesh Victim of Crime Compensation Scheme, 2012, Himachal Pradesh lists the circumstances that are likely to result in the claim being rejected or, in some cases, a refund of the compensation with interest. These are some of them:

- Failure to disclose the offense
- Lack of cooperation with the police or the court
- Failure to provide DLSA/SLSA with appropriate help in deciding the application
- Rejection of a preceding application for the same crime
- Providing false information/evidence
- Filing a false or vexatious complaint
- Becoming hostile in court and refusing to help the prosecution case
- Alleged offense being collusive in nature and
- Victim eligibility does not warrant an award

Limitation Period: The scheme specifies the time frame in which the authority must consider a claim. Except for Delhi, which is defined under clause 16 of the Delhi VCS, 2015, where the duration is set at three years, and Gujarat, where no period has been indicated in the VCS, this period normally spans from six months to one year following the date of conduct of the offense in most states.

In response to the substantial disparity in the amount of compensation paid by states, the **Central Victim Compensation FundGuidelines also known as central victim compensation scheme fund (CVCF)**were established in **August 2015**, with the goal of reducing discrepancies and encouraging states to successfully implement the VCS. The objectives were:

- To supplement current victim compensation schemes that has been notified by state governments and union territories.
- To narrow the gap between the amounts of compensation paid to victims of similar acts.
- To promote states and union territories to implement the Victim Compensation Fund effectively, as well as to continue to support victims of rape, acid assaults, crimes against children, human trafficking, and other crimes against minors.

Amount of Compensation

Finally, the amount of compensation established by the states reveals a wide range of disparities, with compensation varying widely.

Table-1 Amount of Compensation Recognized by States under VCSs:

S. No.	Particulars of Loss or Injury	Max. Limit in Arunachal Pradesh	Max. Limit in Delhi	Mini. Limit in Himachal Pradesh	Max. Limit in Gujarat	Max. Limit in Tamil Nadu
1.	Loss of Life	2,00,000	3,00,000-10,00,000	2,00,000	5,00,000-10,00,000	3,00,000
2.	Loss of any limb or any part of body resulting in 80% or above Handicap	50,000	2,00,000-5,00,000	2,00,000	2,00,000-5,00,000	2,00,000
3.	Loss of any limb or any part of body resulting 40% or below 80% Handicap	20,000	1,00,000-3,00,000	1,00,000	2,00,000-4,00,000	1,00,000
4.	Loss of any limb or any part of body resulting below 40% Handicap	10,000	20,000 – 1,00,000	_	1,00,000-3,00,000	_
5.	Rape/Gang Rape	50,000	3,00,000-7,00,000	3,00,000	4,00,000-10,00,000	3,00,000
6.	Unnatural Sexual Assault	_	2,00,000-5,00,000	_	4,00,000-7,00,000	_
7.	Acid Attack	1,00,000	3,00,000-7,00,000	3,00,000	3,00,000-8,00,000	3,50,000
8.	Rehabilitation of Victim of Human Trafficking/Kidnapping	10,000	1,00,000-3,00,000	2,00,000	50,000-1,00,000	1,00,000
9.	In case of Pregnancy on account of Rape	_	_	_	3,00,000-4,00,000	_
10.	Physical Abuse of Minor	10,000	2,00,000-5,00,000	2,00,000		1,00,000
11.	Victims of Burning	_	1,00,000-7,00,000	2,00,000	2,00,000-8,00,000	_
12.	Grievous Injury	_	50,000-2,00,000	25,000	1,00,000-2,00,000	_

The Supreme Court noted in **Tekan v. State of Madhya Pradesh (Now Chhattisgarh)** that "It is clear that no uniform practice is being followed in providing compensation to the rape victim for the offence and her rehabilitation. The practice of awarding varying amounts ranging from Rs. 20,000 to Rs. 10 lakhs for rape under Section 357A should be investigated by all States and Union territories.

A lady was gang-raped in a West Bengal village on the orders of the panchayat as punishment for having a relationship with a man from another group in another horrifying case titled **In Re v. Indian WomanSays Gang-Raped on Orders of Village Court,** the court emphasized that instead of the agreed-upon amount of Rs. 50000, the state is required to pay the victim an additional amount of Rs. 5 lakhs under the VCS in addition to the sanctioned money. The court expressed concern for her safety and security, highlighting the possibility that temporary relief may not be sufficient and the need for "long-term rehabilitation" for her.

Compensation Schemes for Women Victims or Survivors of Sexual Assault and Other Crimes 2018

This compensation scheme for victims of sexual assault has been adopted in reaction to the Supreme Court's directions given under **NipunSaxena v. Union of India** where the court directed that "it would be appropriate if NALSA sets up a Committee of about 4 or 5 persons who can prepare Model Rules for Victim Compensation for Sexual Offenses and Acid Attacks taking into account the submissions made by the

learned Amicus. The learned Amicus and the learned Solicitor General have both pledged to help the Committee as needed. The Chairperson of the National Commission for Women, or a nominee for the Chairperson, should be a member of the Committee."

Furthermore, on April 24, 2018, the committee completed the "Compensation Scheme for Women Victims/Survivors of Sexual Assault/Other Crimes" and submitted it to the Supreme Court. According to NALSA's scheme, a gang-rape survivor in any area of the country will henceforth receive a minimum of Rs 5 lakhs and a maximum of Rs 10 lakhs in compensation. In cases of rape and unnatural sexual assault, the victim will be compensated with a minimum of Rs 4 lakhs and a maximum of Rs 7 lakhs. According to the policy, victims of acid attacks would receive a minimum of Rs 7 lakhs in compensation for facial disfigurement, with a maximum of Rs 8 lakhs. If the injury is more than 50%, a minimum compensation of Rs 5 lakhs will be paid, with a maximum of Rs 8 lakhs.

Conclusion

So it is clear that there has been a significant change in the criminal justice system's attitude toward crime victims in India. However, the fines levied have only sometimes been used to compensate victims, and the amounts awarded have been modest. The states' daring initiative, known as VCS, aims to compensate victims for their losses or injuries while also taking care of their rehabilitation requirements. However, it has been demonstrated that the plans in the various states vary in a number of ways. Even the compensation awarded differs from state to state. All feasible steps should be taken to ensure that the process goes as smoothly as possible because it is imperative that the scheme works in the victim's favors.

Reference

1.Dipa Dube, Victim Compensation Scheme in India: An Analysis, Available at, https://www.proquest.com/ openview/ bce2693 ae 242e 73824d05c439d748e03/1?pq-origsite = gscholar & cbl =55115, last visited on, December 14, 2022.

2.Available at https://www.legalserviceindia. com/legal/article-6103-a-critical-study-on-victim-compensation-under-various-laws-of-india.html (last accessed on 25/01/2023)

3.Suresh v. State of Haryana (2015) 2 SCC 227

4. 176 (2011) DLT 356

5. (2012) Crl. A. 1415

6. (2013) 1 ILR 719 (P&H)

7.Available at, http://dslsa.org/wp content/ uploads/2015/ 12 / 337686203 -Delhi-Victim- Compensation -Scheme-2015.pdf

8.Available at https://himachal.nic. in/index1.php? lang=1&dpt_id=240&level=0&linkid=4576&lid=15851

9.Considered as an outcome from the case of **Laxmi v. Union of India, 2014 SCC 4 427**, where the court directed to arrange a scheme for providing funds to all those who have suffered loss or injury due to such an acid attack and need rehabilitation

10.Criminal Appeal no. 884 of 2015

11.SuoMotu Writ Petition (Criminal) No. 24 of 2014

12. Civil Writ Petition No. 565, 2012

Jagriti

Email-id: mann.jagriti@gmail.com

Phone no.: 9312636784

Address: 111 Iradat Nagar,

Naya Bans Delhi-110082.

The Origin Of Terror In Salman Rushdie's Shalimar The Clown

Dr. Raj Pal Yadav

Abstract

Literature has a lot to say on this issue and a significant number of works have been published that attempt to address the roots and causes of terror. Salman Rushdie's recent novel, Shalimar the Clown, is part of this effort. In his text, the author tries to counter certain preconceptions that portray the terrorist as an irrational creature emptied of any level of self-will. To Rushdie, a terrorist's psyche and his/her history is not less valid than that of a common citizen, and insisting on an uninformed, ideology-laden view of political and religious militants will prove extremely counterproductive to both political and artistic attempts to come to terms with the motivations for terror.

The phrase “war on terror” has inhabited our everyday speech since the attacks on New York City and the blotched attempt on the Pentagon on September 11, 2001. In their wake, we are confronted by the recurring identification of various individuals, in diverse situations, as “terrorists”, a definition of which term is still pending. The sheer frequency with which such terms are employed by the media, official sources and the common citizen has meant that an equally confounding quantity of metaphors and language associations within the field of “terror” have been smuggled into the discourse that characterizes the early twenty-first century. Among this plethora of terms and neologisms, the word “monster” and all things “monstrous” have attracted special attention. As a consequence, it appears important to reflect on the possible meanings of “monster”.

If one of the functions of the monster is to point to the fractures or asymmetries of a system, it is important to ask the question concerning the monster's origin or source. Interestingly, the same debate prompted by the attempts to understand the nature of a system - be it religious, economic, epistemological - is re-enacted when one tries to identify the origin of that which destabilizes the system. In other words, does the monster possess a historical origin or is the emergence of the monster similar to that of the “event” or the “phenomenon” in the canons of philosophy? Because monsters are automatically associated with evil, it is believed that the search for the origin of the former may lead to that of the latter. Briefly speaking, the philosophical and theological problem of evil resides in the inquiry over whether it has a divine source or whether it came into being as a human, post-lapsarian intervention. In this essay, I will steer clear of the theological diatribes and focus on the earthly implications of evil and its association with the monster. The question, then, will be in what way the historical and cultural body of the monster can be approached and to what extent it can play its role as “harbinger” of displacement without necessarily representing the power of wanton and gratuitous destruction.

Tragedies like those that took place in New York are understandably the object of countless versions through art. As the large number of ramifications of it is uncovered by official investigations and members of the press, the network gradually becomes ever more complex. The American art world has already coined the phrase "post-9/11 art" for productions that revolve around the specific events in New York or other situations related to terror. It was within this context that Salman Rushdie published one of his latest novels, Shalimar the Clown, to which we turn our attention now.

In a recent BBC interview in which, among other things, Salman Rushdie discussed Shalimar the Clown and the motivations for it, the author stated that “it's always difficult to create characters who don't think the way you think”. He was referring to the daunting task, for an urban writer, of writing about Indian villagers and also to the hardships of imagining someone's path to becoming a terrorist. The word path is here used intentionally to point to the fact that, in the book, Rushdie suggests that a terrorist does not have to be the irrational, brainwashed fanatic portrayed by the western media. In reality, he explains in the interview that “many people who join jihadi groups are not necessarily doing it for high ideological reasons. I think in Kashmir, for example, quite a lot of people join these groups because they're broke and they need a bit of money". And this seems to be Rushdie's thesis in Shalimar the Clown: terror has a history and can be analysed in terms of a causality. Besides, the terrorist is not consciousness - deprived and may be understood in terms of his or her psychological structure. Let us now attempt to demonstrate how this is done in Rushdie's text.

It has been said that Shalimar becomes a killer and ends in a terrorist training camp as a consequence of his wife's elopement with Max Ophuls, the American ambassador. It is important to stress that nowhere in the novel does the narrative pass judgment on the implausibility of such a decision. The object of the book is not to curtail the character's radicalism but to show it is the result of a chain of events that impose themselves on an individual with dramatic consequences. On Boonyi's return in disgrace to her native Kashmir, she is struck by what she could (barely) read on her former husband's face:

what was that look on his face? She had never seen such a look before. Humbly she told herself that it was the look she deserved, in which hatred and contempt mingled with grief and hurt and a terrible, broken love. And something else, something she didn't understand (Rushdie, 2005, p.277)

One can say that Shalimar had become a conundrum, or, at least, a half-invisible creature. The ravages of a broken heart are his discernible side, but there is something about him that one can only sense but not name. He is the only person who can recognize what it is: his self-inflicted curse of becoming the killer of those who had destroyed his previous self.

The second half of Rushdie's thesis on the origin of terrorism is to be found in what can be named "the betrayal of history, that is, the political interests that go counter to and overshadow the interests of the common citizen. Shalimar brings his vision of these forces unto the foreground of the novel when he runs into his mother, after being missing for some time, and tells her, through metaphor, how he had been "sleeping" all those years as a tightrope walker :\

I've been looking at bad things for so long that I'd stopped seeing them, but I'm not sleeping now and I see how it is the real bad dream starts when you wake up, the men in tanks who hide their faces so that we don't know their names and the women torturers who are worse than the men... and the people made of bullets and the people made of lies and they are all here to do something important, namely to fuck us until we are dead. And now that I've woken up there is something important I need to do... (Rushdie, 2005, p.309)

This passage makes it clear that Shalimar has a sense of self that clashes with the accepted wisdom on the motivations of modern jihadis and terrorists, according to which they are stripped of volition by means of indoctrination and promises of rewards in heaven. Shalimar is working on a really earthly, clear-cut, personal mission and he is never made to sound clownish or brainless anywhere in the novel. It must be repeated, however, that the book does not justify his venom but merely acknowledges it and tries to locate and name it.

Before we move on to some of the current theoretical thinking on the issues addressed by Rushdie in his book, it may be interesting to look at how the Islamic training grounds are depicted in the narrative. On the one hand, it does not differ significantly from most of what the western citizen is made to believe about it. Like in movies and news reports, these camps are run by religious and ideological fanatics who resort to the most twisted versions of both Islam and western beliefs in order to inculcate in their followers, especially the young, hatred for those people they call the “infidels": “Everything they thought they knew about the nature of reality, about how things worked and what things were, was wrong, the iron mullah said. That was the first thing for the true warrior to understand" (Rushdie 332). This is followed by a long lecture that ends with the ominous words “no man could face the naked truth, defy it and survive" (Rushdie 333) and culminates with Shalimar, in a rapture of zeal, stripping naked in front of his fellows and their spiritual leader and proclaiming his loyalty to the jihad. But this is no more than a ruse, a spectacle through which he intends to convince them of his allegiance to the mullah's ultimate goals, which had nothing to do with his own intentions. The narrator leaves no room for uncertainty and tells the reader.

When he was fully clothed again Shalimar the clown prostrated himself at the feet of Bulbul Fakh [the mullah], and almost believed his own performance, almost believed that he was no longer what he was and could indeed leave the past behind (Rushdie 335, emphasis mine).

Salman Rushdie's portrayal of the terrorist can be read as a reminder that the militant is, before anything, an individual, a subject, a subjectivity, concepts that sound too sophisticated for many in the western media, and in the political and intellectual fields, to ascribe to those who fall under the all-encompassing, all-condemning category of the terrorist. From this point on, it seems appropriate that we turn our attention to some of the theoretical thinking on the problematic of terror and evil within the framework of monstrosity. The issue remains largely shaped by the reflections on the origins of evil that were alluded to at the beginning of this paper. That means to say the overarching question is whether terror as a weapon of pressure has a historical, cultural, psychic source or whether it "occurs" as an event in the philosophical sense of an “abstract particular", particular "in the sense that they are non-repeatable and spatially locatable”, abstract “in the sense that more than one event can occur simultaneously in the same place” (Audi 292)

Nevertheless, in his article. Rai works with other explanations and models that seek to come to terms with terrorism. Apart from the psychological approach, he mentions the political one, exemplified by militant groups and/or disaffected, charismatic individuals who organize themselves in order to advance collective causes in favor of justice for populations who are viewed as oppressed, or in opposition to the military presence of foreign contingents in their territories.

One may be left wondering whether the psycho-historical models presented previously might be brought into a dialogue with the event model above. Amit Rai seems to think so.

I believe the ethical possibility of linking terrorism to monstrosity at this particular historical moment lies in the transformation of the cultural and historical experience of the unacceptable, which calls forth all the technologies of normalization, discipline and biopower. If part of what is at stake today is the creation of normalized subjects of a global community arrayed against evil, a meditation on monstrosity enables us to imagine another kind of future by bringing back the trauma of history Monstrosity. then, is an event that transforms both the idea and experience of culture and history. (Rai 554, emphasis mine)

Bibliography

- AUDI, Robert (Ed.) The Cambridge Dictionary of Philosophy. Cambbridge : Cambridge UP, 1999
- BBC Hardtalk Extra. “Interview with Salman Rushdie”.

BBC World. Accessed on 13 Jan 2007.

- http://news.bbc.co.uk/2/hi/programmes/hardtalk /4222496. stm
- Rai, Amit S. of Monsters. Biopower, Terrorism and excess in Genealogies of Monstrosity. Cultural Studies 18.4 (July 2004) : 538-570.
- Rushdie, Slaman . Shalimar the Clown. New Yor : Random House, 2005.
- Sardar, Ziauddin. Welcome to Planet Blitcon. The New Statesman Published 11 Dec 2006. Accessed on 17 Dec 2006. <www.newstatesman.com/200612110045>

Dr. Raj Pal Yadav
Associate Professor of English
H. No. 1871-P, HUDA Sector 1, Part – 1,
(Near Radha Krishan Marriage Place)
NARNAUL – 123001,
Distt. Mahendergarh (Haryana)
Mob. 9416427466

102

Political Issues In Kongi's Harvest OR Wole Soyinka's kongi's Harvest As A Political Satire

Ms. Sangeeta Das

Abstract

The world of English literature is ever growing Apart from the English speaking countries these are countries like India, West Indies, Nigeria that are liberated from Colonial rule after WW II and started contributing to the growing volume of drama, Poetry and Ficton to make up the world of English. Among these Literatures, African literature occupies a special place for its vitality and freshness. Its writing is at once a social protest and a medium of Political re-assertion.

Wole Soyinka as A Writer

Wole Soyinka is the most prolific and Africa's best Known Dramatist. He is the first Black African writer who won the Nobel Prize for Literature in 1986 Commenting on his achievement.

Henry Louis Gates states

"I think he did precisely because of his mastery of a tragic idiom that is at once African and European and Greek, of the tribe and of the metropole, indelibly black yet ultimately accessible to any sensitive reduce".

("Introduction" 423-4)

Kongi's Harvest As A Political Satire

Drama however is the form that is closest to his heart and his creative genius found its best expression in the Dramatic mode. Soyinka is reported to have said "

There is no question at all that I think the Nobel Prize, is for my drama".

Soyinka Kongi's Harvest out of Soyinka's concern with human right and political liberties.

Kongi, the modern Dictator of Ismaland in the play is repressive and ambitious autocrat. In the 1st section of the play known as "Hemlock". The Traditional Ruler Danlola is deprived of his National Trouser and was kept in Detention with the igbo Aweris, who are the source and Leader to Danlola. Thus Danlola state about them.

"...But they were silenced on the day when Kongi cast aside.

My props of wisdom, the day he drove the old Aweri from their seats"

The Jingling Anthem at the beginning of the play portray the prevailing political situation.

The New regime built on new political theories – The Isms of Ismaland – has contemptuously displaced the old.

Ism to Ism for Ism is Ism
Of Isms and Isms on Absolute
Ism.
To Demonstrate the tree of life
Is sprung from broken Peat
And we the rotted bark,
Spurned.

When the tree swells its pot
The Mucus that is snorted
Out

When Kongi's new race blows. (61)

The Anthem is satirical portrays itself in the, words 'New Race'

Wole Soyinka also presents series of sordid scenes of Torture and inhuman treatment meted out to human of Politices. In the play.

The Reformed Aweri Fronternity

The ears and philosopher to Kongi are in his Custody. It is an irony that the Aweris are being made to fast by Kongi under Duress and when they complain, the complaints fall on deaf ears of Kongi. Even when the Secretary suggests that the Aweris are dead Kongi Mocks them.

'Dead? How Dead? I don't remember condemning any of them to death or maybe I should.

The Aweris suggestion to oba Danlola, also reveals another lever of Political Oppression. The Fifth Aweri suggests that the secretary should persuade Komgi to grant Amnesty to the Detainees in exchange for The New Yam. He Suggest Callously:

'But tell him he can kill them in Detention
Have them shot trying to escape
Or something But first demonstrate his power
Over life and Death by granting them a last minute reprieves (P=30)

The Political Detainees are maltreated Kongi asks the secretary to go and bring one political Detainee that escaped whether Dead or alive. He then says

No Amnesty! No Reprieve!
Hang Every one of them! Hang them! (P. 47)

Under Kongi regime no one is really safe. This insecurity is Confirmed by the Secretary. He says

"And I wish to retire to my village and not to a Detention Camp. (P.67)

'Hemlock' also portrays Kongi as a monster which should have been scotched before it achieved its full proportions. One parable makes the point Ogbo Aweri observes:

When the mnster child
was born opele taught us to
Abandon him beneath the
buttress tree.
But the mother said, oh no,
A child is still a child
The Mother in us said, a child
Is still the handiwork for Olukori.

Sarumi
Soon the head swelled
Too big for Pillow
And it swelled too big for mother's back
And soon the mother's head
Was nowhere to be seen
And the child's shight belly
Was strangely distened (68-69)

The monster child Kongi to whom this parable is applicable has become by slow degree and
ironically through the merciful indulgence the destroyer of his Country.

Thus in the Conclusion we can say that Soyinka through the character Kongi represents the present Paranoid Dictator. Who, instead of being a procreative force engenders and spread destruction and shows no genuine interest in the soil and of the flesh.

Work Cited

1. www.google.com/wikipedia
2. Oceanofpdf/Wole Soyinka/pdf-a play-Kongi's Harvest –download.

Ms. Sangeeta Das
Guest Lecturer
Dept. Of English
ANCOL, Port Blair

103

Challenges of Indian Higher Education System in Present Times

Madhusudan

Abstract

Indian higher education system is one of the world's oldest education systems which has proved itself by establishing various mathematical and scientific landmarks. In present times also India's higher education is expanding and evolving according to the local and universal needs of the society as well as scientific world. In recent years many new colleges and universities have started working leading to significant increase in spread of diversified higher education among the youth because of which it comes on third place after China and united States in the list of top education systems in the world (Sharma and Sharma, 2017). After independence the number of universities has increased by 30 times, colleges by 80 times. In the developed countries the number of colleges is kept less but these colleges are provided with all basic facilities for research and academics so that students can carry their research up to a significant level leading to innovations and patents (Singh, 2017). On the other hand in Indian scenario the case is opposite, where in last few years many private and government colleges, universities are opened in addition to the existing ones and most of them don't fulfill international standards for research and academics. These colleges and universities are opened for benefiting the private influential players and sometimes for political benefits. While starting these colleges and universities the focus of politicians remains on two things, adjusting their near and dear ones in these institutions through unfair recruitments and on winning the contracts of construction and various other services. Though the number of colleges has increased in recent years but quality of education and basic infrastructure has gone down, neither the quality is improving nor the syllabus is changing as per requirements of changing industry needs. Private universities are opened but they work only in documents, in reality very few teachers are appointed than needed and education is sold for monetary benefits. The outcome of such institutes is that after paying high fees of various courses the youth is compelled either to remain unemployed or to do less paid jobs. Many graduates of such institutes don't have proper knowledge and skills which every year adds up in the number of unemployed youth of the country. It is very shameful for Indian higher education system that not a single institute of India has made it possible to come in top 200 institutes of the world, only six institutes from such a big country come in top 500 institutes of the world. It is the need of the hour that India has to focus on its higher education system including technical and management education.

Introduction

Education has become the means for achieving the targets of global economy, business and prosperity. The countries which focus more on education have progressed more in all the spheres than the countries which have weak education facilities. On the one side educations adds to the national character of its citizens on the other side it also promotes the human values and responsible behavior. Any educational institution has three fundamental constituents, i.e. teachers, Students and the curriculum. The success of all educational institutes is based on these constituents. Our educational policy focuses on providing equal and inclusive opportunities of higher education to all the human resource of the country. It is clearly visible that all the developed countries have reached to their present positions, of economic and technical advancement, only because of strong research background and scientific studies. In India also milestones have been covered after independence in all the areas of higher studies. The Indian Institutes of Technology, Indian Institute of Management, All India Institutes of Medical Sciences, etc. have proved their metal and produced many scientists who have registered many patents. In last three decades Indian scholars are in high demand throughout the world. Though this aspect looks lucrative and glorious but it also shows that these scholars are not provided with proper opportunities because of which they have to shift in developed countries for further research. Before independence there were only thirty universities in India whereas at present we have more than 1100 universities, not only this online education including various courses have opened the doors for every willing candidate who want to pursue higher studies. With universities the number of colleges has also increased, the number of colleges in pre independence era has increased from five hundred to more than forty thousand colleges in post independence era (Sirswal, 2016). Similarly the total number of enrolled students in higher institutes in India have increased from approximately four lakh in pre independence times to four crore in the year 2021. The present education system is producing lakhs of graduates and post graduates every year but most of them are not absorbed in any industry and hence lot of educated youth is added in list of unemployed citizens which raises a serious question on quality and expediency of Indian higher education system. The National Education Policy 2020 tries to do the structural changes in education system to connect the education with practical issues of the society and to provide the skills required for job creation.

Challenges in Higher Education

Considering the large population size of country we are in a situation where doors of higher education are open to all but the high fees, lack of basic infrastructure, out of date

curriculum, ineffective laboratories, poor placement, etc. are the issues which pull the Indian education system backward and also deprive its citizens from effective education and training (Sharma and Sharma, 2017). The situation is worsened by the political interference in admissions, appointments, transfers, promotions, deputations, tenders, games, etc. This interference negates the thought process and working of all the teaching community resulting in degradation of quality education. Political leaders give their best for selection of their near and dear ones so that they can get votes and prove their influence. In many cases it is noticed that appointments are delayed just because of political interests and appointment matters are intentionally brought in courts so to delay them for selfish interests. For political benefits the universities and colleges are started in the names of politicians and that too without proper planning and infrastructure. In a small state like Haryana many new universities and colleges have started, in last one decade, which neither have proper staff nor these have basic infrastructure such as classrooms, labs, libraries, etc. and these colleges are run in some rented or government schools, offices, etc. even after this the political leaders don't forget to declare that they have done so much for the people and the area by opening these colleges which stand nowhere as per standards of University Grants Commissions (Chakrabarti, 2007).

Extra tasks which have no relationship with teaching are assigned to teaching community by their respective institutes also adds up to the misery of education system. This issue does not ends up here, the state and central government also have their assignments for the teachers, such as involvement of teachers from higher institutes in making of driving license and passport for students, income survey, etc. In government and private colleges also the teachers are made incharges of various committees meant for building repair, paint work, beautification, outsourcing, court cases, etc. these activities not only consume the time of teachers but also change their mindset and thought process. This influences the teaching aptitude and such type of non teaching activities in routine changes the approach of teacher in a way that he starts treating himself as a human resource serving the institute for which he is paid and with the passage of time the primary duty of the teacher to impart the knowledge to the students becomes secondary. The institutes as well as the government compels the teaching staff to prepare so many documents for various purposes that the teachers have to give their extra time to such activities instead of preparing the lecture. All this shows the intention and the shallow behaviour of the government towards the higher education.

Reservation is also one of the factors which influence the quality of faculty as well as of students in the higher institutes. Though the government has to think of inclusive development in reserving the seats for various needy people but the thing is that this reservation is provided at the cost of merit and quality of students and also the faculty members (Benerjee and Reddy 2022). Indian social system has its own draw backs in ancient times but the effect is still felt and there seems no way around. In Haryana such candidates are recommended for selection in some reserved categories who didn't even score twenty percent marks in written test. This situation raises a question on the whole system i.e. the selection process as well as the education system. There needs to be some minimum percentage of marks criterion for the selections especially in academic field. This will solve the purpose of government regarding inclusive development and by this the quality of education will also be maintained.

Gender, caste, religion are some other social challenges which influence the enrollment of students in institutes of higher education. Many intelligent girl students are deprived of higher education due social and economic factors. They are married at an early age after graduation and are supposed to take care of their families. Only few girls are promoted to pursue their academic carrier and that too mainly when their parents are educated. Similarly in many lower caste the focus remains on earning where the youngsters are promoted to do some job or start any occupation. Education is not given much weight due to hopelessness in the system and also because of social experiences. Similarly in muslims girl education is not considered a necessary assignment and in many places boys are also remain biased towards religious education in *Madrasas* instead of developing the scientific temperament. This social phenomenon affects the enrollment of students in higher institutes.

As discussed earlier many new universities and colleges specially the private institutes have started in last few decades but the government has failed to check and regulate the functioning of these institutes. Lack of serious research, unfair means of evaluation, unqualified staff, improper documentation, red tapism are the common issues of these colleges. These colleges and universities have become the degree shops from which anyone can obtain a degree without gaining knowledge and proper evaluation. In local areas cheating, copying, impersonation, evaluation setting, is very common issues. With all these hindrances it seems a mockery of higher education system. Many universities remain in news for selling Ph.D. degrees, when all this has happened it appears that the regulatory bodies as well as the institutes have formed a nexus through which all are benefitting except the system and the nation.

Conclusion

The Indian Higher education system needs overhauling of the system, institutes, management and also the regulatory bodies. It seems that in the present times neither the institution are working properly nor the regulating bodies such as University Grants Commissions, etc. are able to manage

these institutions. Further the governments have to take a serious approach for developing scientific temperament in the faculty by avoiding the non teaching assignments. Political interference should also be stopped in academic institutes other wise the global reports will not change where only three institutes come in top five hundred institutes of the world. In the last it can be said that a lot of distance have to be travelled to improve the quality of higher studies in India.

References

Sirswal, Desh Raj. (2016). Higher Education and Research in India: an Overview, ***Intellectual Quest (A Peer Reviewed Research Journal of Humanities and Social Sciences)***. 05. 26-38.

Chakrabarti, Alok (2007), Higher Education and Research in India: an Overview, ***Sitra Reports***, Helsinki.

Singh, J.D. (2017), Bharat Me Uchh Shiksha ki Vartman Sthiti V Chunotiyan, ***Chetna International Educational Journal***, May-August, 2017, Volume 4/1.

Sharma, S. and P. Sharma (2015), Indian Higher Education System: Challenges and Suggestions, ***Electronic Journal of Inclusive Education***, Volume-3, No.4.

Benerjee and Reddy (2022), Status of Higher education in India: Challenges, Issues and opportunities, ***The International Journal of Indian Psychology***, Volume-10, Issue-1, PP.430-439.

http://pib.nic.in/newsite/efeatures.aspx?relid=122741

http://thenamopatrika.com/smriti-irani-launches-new-schemes/

Madhusudan
Assistant Professor
Government College Baund Kalan
E-mail: madhusudan8787@gmail.com

Tagore as Poet of Man : Spiritual Humanism

Dr. Raj Pal Yadav

Abstract

Tagore is one of the greatest lyrics poets of the world, both from the point of view of quality and quantity. His genius was essentially lyrical, and the lyric essence penetrates even his longer works. Even his prose is lyrical. He has left behind him over four thousand lyrics, a number reached by few poets of the world. His lyrics are things of beauty and so sources of joy forever. He exhales a lyric as a flower exhales fragrance. But his reputation as a mystic and philosopher has tended to obscure his greatness as lyric poet. Even when his lyrics are admired, they are admired for their 'spiritual ecstasy' and not for their greatness as works of art.

This is so because his Gitanjali is mainly a collection of devotional lyrics, and his world-reputation is based largely on this work. In it, poetry approximates to the condition of prayer and prophecy. It is a collection of mystical lyrics in which the poet is concerned with the relationship of man, God and Nature. It owes its inspiration mainly to the Upanishadic doctrine according to which the entire creation has sprung out of joy, resides in joy and will go back to joy. The all-pervading presence of God is everywhere throughout this universe. And yet God is not an abstraction; He is also a living person who appears to us as our friend and comrade, as our father and sometimes even as our lover. Tagore maintains that the Infinite expresses Himself through the myriad forms and shapes of the creation which is His Lila, and relation between man and God is one of love.

However, even the lyrics of the Gitanjali show that Tagore is a great poet of man. Many of the lyrics are an expression of what has been called 'spiritual humanism', of his sense of oneness with the poor and the downtrodden. In one of the better known lyrics of The Gitanjali he advises the devotee of God:

Come out of thy meditations and leave aside thy flowers and incense ! What harm is there if thy clothes become tattered and stained? Meet Him and stand by Him in toil and in sweat of thy brow.

Tagore thus calls upon us "to give up our singing and chanting, our meditations, flowers and incense." He says that the path of God-realisation lies through the performance of the ordinary duties of life. "We must come down from our high secluded place and meet God in the company of the tiller and the pathmaker." There is stern realism. "There is no trace of asceticism in it. And yet it is not that realism which regards material enjoyment as the be-all and end-all of life."

In another lyric the poet scoffs at the idea of renunciation. Deliverance is a mere empty word. The poet says that he is not going to shut the doors of his senses. Does it imply that he wants to indulge in sensuous enjoyment to the full ? Certainly not. He will feel and enjoy the delightful presence of God in the material objects of life which can be seen and heard and touched. "Matter is not rejected but it is brought into harmony with spirit. Desire is not to be given up but it should be sublimated into love. This synthesis of matter and spirit of the claims of worldly life and spiritual life-is what I call spiritual realism (Chakravarty). Humanism is the basis of his mysticism, his mysticism must not be over stressed.

Tagore has also left behind him a number of patriotic lyrics in which patriotism finds its truest and noblest expression. Poem-72 of The Gitanjali is one of his better known lyrics and it brings out his humanism, his spiritual realism, as well as his cosmopolitanism. The emphasis throughout is on the spiritual reality of life. The poet does not pray for the 'heaven' of material prosperity in India. On the other hand, he prays for fearlessness, truthfulness and unity; he prays for the dominance of reason over superstitions. And last of all, he prays for 'ever-widening thought and action. These are the things of the spirit and these constitute his heaven of freedom. "Ever-widening thought and action," shows a desire to shed the shackles of narrow nationalism, to breathe in the wider and free atmosphere of world - brotherhood.

Tagore's reputation as a mystic, has also obscured his greatness as a writer of love-lyrics. In truth, his love-lyrics rank with the greatest love-lyrics of the world. His love-poetry shows the influence of Vaishnava love-poetry, which centres round the loves of Radha and Krishna. But Tagore's treatment of it is entirely his own. Says Srinivasa Iyengar in this connection, "The Gardener is the richest of the collections that have appeared in English. It is in the main a feast of love poetry - with a human rather than a divine slant, though with a poet like Tagore the border line between the two is apt to be tantalizingly indistinct. These are paradisal in their purity and intensity and even sensuality, yet, paradoxically enough, recognizably this worldly. When Tagore strikes his lyre, vivid imagery breaks out into sudden life like sparks from the anvil. All the make-believe and love-play that lovers feed on, all the agony and hopelessness, all the ecstasy and fulfilment of lovers' lives, all is woven here into a garland of memorable song. The lover, who is restless because her beloved calls with his flute, though he is far away, is left to cherish the mere breath that comes to her 'whispering an impossible hope'.

In this connection, mention may also be made of his lyrics which celebrate the beauty of womanhood. Urvasi is one of his greatest lyrics, a lyric which has exercised eternal fascination on the mind and heart of the readers of Tagore. It is included in The Fugitive in a curtailed form. According to

Hindu mythology, Urvasi is the heavenly dancer of Lord Indira's court, the type of Eternal Beauty, who in the beginning rose from the sea when it was churned by the gods. Tagore views Urvasi as the perfect woman-not child, nor mother, nor wife-but the beautiful woman who is goddess and seductress at once –

Woman you are, to ravish the soul of Paradise.
Like the dawn you are without veil, Urvasi, and
without shame.

She carries nectar in one hand, and a cup of poison in the other; she slumbered till day came, and then appeared in her "awfulness of bloom"; she is of all men adored, the ageless wonder.

Here in Urvasi, says Thompson, there is "a meeting of East and West indeed, a glorious tangle of Indian mythology, modern science, and legends of European romance". "Had Tagore written this wonderful lyric alone, Urvasi and no other, he should still be counted among the world's great magicians of song" (lyangar). Beyond praise is the melody of the splendid, swaying lines, knit into their superb stanzas, or the flashing felicity of diction in such a line as this one : In the crests of the corn the skirts of Earth tremble. In Urvasi Tagore, "produced a world masterpiece and not merely the most accomplished lyric of India and won for himself the right to be included among the world's lyric poets".

Tagore's nature-lyrics also rank with the greatest nature-poetry of the world. He is a great river-poet and a great poet of the Bengali seasons. The forms, the colours, the sounds, the scents of nature fascinate him, and he communicates his own joy in the manifold beauties of nature to his readers. Flowers bloom at every step in his poetry, and rivers flow with their sweet music. He observes accurately and describes minutely and precisely. Vivid and colourful word-pictures of nature's beauty are scattered all up and down his lyrics. His love of nature is all-comprehensive and realistic; like Wordsworth he is not unaware of Nature red in "tooth and claw". He is a poet of the pleasanter and softer in nature, as well as of Nature in its more harsh, unpleasant and ugly moods. Two of the most graphic pictures of Nature's terrible mood-one of a sea storm and another of a land storm-come from his pen. He is also a great myth-maker, and in this respect Shelley alone is his equal. In his poetry, the objects and phenomena of nature are constantly spoken of as human beings and given human attributes.

Nature for Tagore is a vast store house of images, of similes and metaphors. His nature-imagery is abundant and profuse. Indeed, it is the abundance of this imagery which accounts for the open-air atmosphere of his lyrics, the very atmosphere of a folk song. This is one of the reasons for the perennial charm of The Gitanjali. However, his uniqueness as a nature-poet lies in his sense of absolute identity with the life of nature. He regards Nature as the primal store-house of life, out of which humanity has evolved through the ages. Man's human birth has cut him off from this vast source of life, and hence his constant wistful yearning to merge once again with this universal life. Because of this essential oneness of man and nature, Tagore believes in the moral influence of Nature. But, unlike Wordsworth, he tried to give a practical shape to his belief, and Vishwa-Bharti is the living incarnation of that dream.

Tagore's lyrics are a rare combination of simplicity with sublimity, and with intensity and spontaneity. The diction of Gitanjali, for example, is simple, as simple as that of a folk-song, but the thought is sublime. The intensity of the poet's feelings is conveyed in a variety of ways. For example, the repetition of "Thus it is in one of the lyrics, and of 'Thee, only thee' in another, conveys the sense of the poet's intense yearning for re-union with the divine. The wealth and abundance of his imagery serves to vivify his mystical thought, and images come out of his pen as frequently and spontaneously as sparks from the anvil of a blacksmith. He exhales a lyric as spontaneously and naturally as a flower exhales fragrance.

Another important characteristic of the lyric is music and melody, and Tagore's lyrics are second to none in this respect also. Tagore was a ceaseless experimenter with verse-forms, and as a result achieved perfection in the evoking of the music and melody that lies in words. The Gitanjali is written in verse libre, and there is an underflow of rhythm in close harmony with the requirement of thought and emotion. The lyrics have the lilit of a folk – song; they have an incantatory or mantric quality which is unique. They sing, as it were, by a natural magic of their own. All these qualities together make Tagore one of the greatest lyric poets of the world

Suggested Readings

1. Edward Thompson : Rabindra Nath Tagore, Poet and Dramatist
2. Edward Thompson : Rabindra Nath Tagore : His Life and Works
3. A.K. Chakarvarti : Rabindra Nath
4. Rabindra Nath Tagore : Reminiscences
5. Rabindra Nath Tagore : Gitanjali (Introduction by W.B. Yeats)
6. B.C. Chakarvarty : Tagore, His Mind and Art
7. Srinivasa lyengar : Indian Writing in English
8. Srinivasa lyengar : Rabindra Nath Tagore

Dr. Raj Pal Yadav
Associate Professor of English
H. No. 1871-P, HUDA Sector 1, Part – 1,
(Near Radha Krishan Marriage Place)
NARNAUL – 123001,
Distt. Mahendergarh (Haryana)
Mob. 9416427466

105

Cyber Security Threats: Tools and Suggestions

Ms. Sanju Chaudhary

Abstract

In the field of information technology, we have definitely developed very fast in the last few years and technology has contributed an important contract in the development of the country, but like two aspects of the coin, this information technology has generated many types of dangers. Whose face is nation and preparing the nation for future threats. Cyber threats are mainly involved in the threats generated by information technology, which can destroy the security of any nation to any extent. Cyber threats have taken the form of a warmth in the past few years, which are defined by defining the following types,

James Green, 1981 has written about the cyber warfare in its book Cyber Warfare - A Muldishiplinary analysis"that is used in comprehensive context in which the computer network is used in the international level, as well as the technical military force in the international level, it is only called stored, shared and transmitted.

Paulo Shakirian, 213 is written by the acquisition of war in the bookcathy, the book, the state of the cyber button is the first nature of the nature of the state of the cyber-war state. A few times ago Attracted an extremely deadly virus on the Internet, which people know about the name of 'I Love U'. This virus had damaged the crossed by the million people-dollars by destroying important information stored in the computer. Later the crimin who send this virus was caught in Manila. Similarly, the officer who was examined on the Indian Parliament on December 13, 2001, was stunned at the time when he came to know that those criminals had made the car parking by downloading the 'LOG' of the Home Ministry and nowhere, but from the website. Not only this, these criminals were maintained in the Internet's 'chat' facility.

According to the computer expert, at this time, cyber space has more than 80,000 viruses, malware and work halls. Due to the destruction of notifications, there is a loss of billions of dollars, while the impact of efforts to get control of these, also falls on the economy, because it is to invest in billions. In order to get rid of this problem, the Government of India has passed information technology to the information technology by passing the Information Technology Act in August, 2000. In addition, a cyber attack of the 'Cyber Crime Investigation Cell' and 'Cyber Crime Research and Development Unit' can be caught. Any such attack whose purpose is to obstruct the work of the cyber space network, cyber is the cycker or cyber attack. Any event related to cyber space technology, which is to lose damage from the destination of the information and the cyber attacker may benefit or be, but no unlective, unattirable, unauthorized work related to the resources and transmission of the permission of the permission of the permission of the permission of the civil attacks / cyber is made in the category of cycles.

One question arises also.on which the liability of these attacks is - the company or collection of information that is the company. which provides the information stored by the company or other institutes which are connected to this system. If seen in the perspective of the present law. we can not clearly attach anyone, but still the person or nation of the number of these companies or resources can be held responsible. Today the most cases related to cyber crimes or attacks are running in the US courts and all countries are in the law to save their statistics stored in Cyber Space.

Cyber Threats

It has been so that these so-called cyber threats - Cyber threats type (loss of financial loss), the area (of the industrial institution or defense institution) or the danger of the industrial or the defense institution) or then these dangers are against the nation or individual, can be divided into three parts.

1. Cyber Crime
2. Cyber Terrorism
3. Cyber Warfare

1. Cyber Crime - When the abuse of cyber space is done for a person or industrial institution, such cyber attack of such condition is kept in the category of cyber crime. The goal of this type of attacks is not to loss, but it is to get financial damage or financial benefits. Headler and Jaishankar, while defining cyber crime, writing a criminal act that directly or indirect telecommunications network such as the Internet and mobile phones (such as the Internet and mobile phones (such as the Internet-based telecommunications network to the right or indirectly transmitted against the group of persons or individuals.

2. Cyber Terrorism:- When the goal of abuse of cyber space is to be destroyed by any institution or person specially, then those work come in the field of cyber terrorism. According to NATO Document 2008, using a computer and communication network to become a defect in the underlying defendant under a conceptual goal is cyber terrorism. According to the National Informative Protection Center of America's Department of Homlands Security, "Criminal Acts, the US Defense Into an Idoological Goal.") The criminal work that is the process of network, through the computer network, violence, death and destruction and the government is to camp a terrorism to create their punishes, but the carting is the same. The first one of the following is the cyber terrorism. "Their goal is to organize such a functions. The main goal of these parties is to spread the panic through cyber space in the general public and spread their

compressed, non-social ideology so that their non-democratic and criminal demands can be completed. There are many such terrorist organizations in the present time, which is full or partially used for cyber space for their terrorist proceedings. These include Al-Qaeda, Boko Haram, Jash-A-Muhammad etc. Terrorist Organization.

3. Cyber warfare - When the above mentioned using a nation cyber space for both types of financial loss and uses the cyber space for its enemy, then the condition is called cyber warfare. In this type of work, the nation uses cyber space to ensure its safety. In these works, the participation of the organization of the nation is full and partially. However, it is very difficult to know in the cyber space world that the nation work which has done in the managed person or the citizen or present terrorist team of that nation. Based on the target of the vast and loss of cyber warm, the work can be understood whether this work is done by the Armed Organization.

In addition, there is no cyber attack on the security of a nation in peace, then this task can be kept in the range of cyber terrorism, but this is the work in the battle period, then it will be a profitable in the category of cyber-warm. Hundreds of time are present in the present time, which can go to the financial benefit, the loss of people to be harmed or generating fear in the public.

Cyber war will be used as a psychological battleform, because in the time of today, cyber space can be easily used to spread the rumor in a nation, because the rumor is easily spread through the cyber space instead of other medium and it is a difficult task to stop the current law.

By simply clicking one by the nation to the second nation's cyber space network, steal the intelligence and sensitive data, or to spoil data or interrupt the network communication, called Cyber Butter Warfare. For this, a nation resorts to different types of equipment, such as computer cellphone, satellite phone, internet, radio network system etc. The growing importance of the Internet has made a significant part of the war strategy of cyber warm. That is why it has given the main weapon of the fifth area of the war after the land, sea, air and space. This warm is providing electronic warmth new day to the day. In this one country, the cognizance of the country has entered into the cyber space network to cyber attack or to make the war strategy. We can say that in a cyber warfare, a country warns through the country's cyber space network, but any type of weapon is not used in this war. In this war, the network equipment is considered to be the country's weapon.

Tools of Cyber Attack

The most types of tools are most popular in cyber space, which are most popular prevailing in the cyber space, infected with cyber space, the influence of important information and statistics, destroying them, in the danger of ethics and violating the ethics, and the promotion of ethics etc

- **Virus**

virus (virus says we are a homo called which attacks cyber space from different equipment and types) In fact, there are computer programs. These start creating errors by joining the program or software source code on our computer. In the Personal Computer, they enter through floppy or CD, but there is also a method of transition on the computer connected to the Internet. Any attractive messages left on any web site It attracts the message and it clicks it without immediately understanding it. Because of which viruses go into your computer network and infected the computer etc. Many times your password also becomes virus infection. Sometimes the virus also comes in the form of e-mail messages. These programs of the virus starts to get disturbances by computer program, such as destroying important information, sending messages to sending messages and jamage software etc.

I Love U, Meelissa, Chenobil, Disk Color, Rain Drop Surrey, Patidator, Zero Bugs are some of those digestion viruses who have been deadly in the computer world. In all these viruses, I 'Love U' (2000) has been the most dangerous virus, which did the loss of one thousand crore dollars. Apart from viruses, there are some such programs that are put in the computer system, then it can be very harmful.

- Worms

Worms do not require any other file or program to copy themselves. This is a self-reliant program. Worms work according to their name by missing computer statistics from the computer. Last week, Worms called heads were headaches of the computers around the world. If they are uncontrolled, then can be a fierce destructive form. Most of the cyber crime statistics, the sum of automatic cache distributors, rigging in statistics, the detectives of the statistics and the computations of the computers are unauthorized access. In the crimes related to computer, filling statistics in the computer, the disturbances and other interventions are also seen in the computer. Most of them are the hunting banks, finance and insurance companies.

- **Trojan Horse**

Trojan Horse is a small program that is put in such a major program that does not have any impression. When the big program is run, it is executed and can collect intelligence information from the computer. Which can be used unauthorized.

Types Cyber Attacks

The new technology is being organized in this era of cyber space from the type of cyber attacks . Among them are found in the capacity and finding the techniques, negatively used to capture the attacker control system. In the Schikkal or war, the organizations can use to destroy the security system of the organization / institution associated with the security. In such a way, the nation is required to take care of them, they need to seriously take it, because they can lead to massive accidents, which become a haloral catastrophe and become a halose

catastrophe. Cyber attacks are the following types:

· Spam- A message in spam (spam) is attached to multiple recipients in this type of attack, which has not specifically requested. Spam is often less annoying, but also with some (especially attachments), the work spreading viruses in the network area. This can work to obstruct the enrolled mail box to eliminate the e-mail entry into the account. There may be necessary religion or not available on the timeline, and the delay of the delay of the delay can be replaced through its security defaults.

· Phising is a try of knowing your details by fishing fiscaling The phishing effort is usually through an e mail which it seems as if it is come from the authentic source. This e-mail usually encourages to click on a link that goes on to a graceples log on - on page and gains the same as Hackers, if you want to grab the details. Whose attacker can use its desire. This type of defamement damages on many occasions.

Spoofing Attack -

Spoofing attack is a type of cyber attacks from the intentions of fraud. The website is spreading in the spatial website that is valid, that is used to grab the fraud from the fraud. By using the e-mail address of another department, the e-mail spoofing is called call-proofing prohibiting respectively for the departments and organizations by sending e-mails to the other departments and organizations and using the mobile number of another department. Mail spoofing and call spoofing can be misled by an institution or organization from an institution or organization from the organization, which are related to national security, by misunderstanding. The reason that the right decision can not be taken. It is very necessary to decide on a nation at the right time, because there is a number of examples of not getting the right decision on the right time, due to which the nation has to face defeat in the war.

Web site Radation Malware - Website suffered the facts of the attacker web site in the disaster, which is published and the image of the publishing agency poor. The websites of indigenous websites have largely visited the light of the work of the death. The victory of many times, the people, and the people have a negative image in the country of security, which is a very concern.

Denial of service Attack

Denial of Service means denying any type of service, for the attacker, it comprises with a system and using it, it requests more service than its capacity to the service from which it is busy, and the right user can not get the service. Distributed Diner of Service, all over the same goal are attacked, which he stops and the right person is deprived of the service. This type of attack usually occur at the field of traffic area, business area and health, which serve toxicity, such as railway, state civil transport, air lines, bank sector, hospital and other essential institutions.

Monticious Computer Code -

Virus is a program that is capable of its own and is transporting infections in the program or files without host information. Virus downloads from unbelieving sites and removable medium, such as-pen panels, CDs, DVD and files to a uniform computer from one infected computer. Virus may also come by enclosure (eND with e-mail. Programs are used to damage the computer, while others are only made to show their own basis. This type of program is called Boynet. Which starts sending e-mail messages and messages from another computer from a computer to any computer.

Identity Theft

The institution of identity has been used to face different effects when it is attributed to the task of the criminal. This can cause economicly losses. - Logar Spyware (Key - Logger Spyware) - The logger is a funny spyware that collects secret information through the board-board of a computer. During the keyboard of the army or other defense institute, the emergency and the use of the computer embarrassment is used by the keyword and the use of the user. The attacker can give the enemy to any kind of information, which can be in danger of the nation's security.

Social Engineering Attack -

There is an approach to access information on social engineering false presentation. A social engineer can reach the social website or by e-mail by the television or the institution can ask for other details such as II, password and system and network information.

Time Bomb Virous -

Time Bomb is a coded program that is activated at a certain time and then hinders not only in the main program of the computer, but also mislead it. The above mentioned cyber attacks get to listen to the reading and reading. Other than these cyber attacks are made from many other types, such as Blueging, session abduction, ransomware and scarware etc.

National Cyber Security: The Suggestions and Technology

The most powerful medium of breaking the most weak link security system of security is cyber attack. To avoid cyber attacks, there is a very important need to be aware of different ways of being composed by hackers and knowledge of available techniques to avoid them. It is possible to secure the latest security techniques and to be safe from the danger of cyber attacks by compliance with security instructions. To maintain cyber security system and consumable (the person who is connected to the security system of the nation, whether it is a military officer, there is a soldier, an officer or employee connected to the intelligence organization or the political person or the officer of the war plan planning and the process) To ensure self-protected from the cyber attack, the following types and techniques are from the following types:

· Most officers or employees do not know the importance of password and keep it empty or keep the default

password or easy password, which can be easily lacking and attacked easily. Therefore, officials and employees should choose complex and difficult password so that it can not be estimated. A good password should be used for 8 or 8 characters and should have some characters that are commonly used.

· If any employee Internet uses any unsecured place such as a cyber café etc., then special precautions should use the properly, there may be logar and spyware programs that can be used incorrectly. It would be better that the virtual-board of use will be used for logging in such places.

· If there is an e-mail that is asking about personal security details such as pin, password or account number, then it should not be answered. Delete the suspicious e-mails without opening it. If you are also open, do not click any links or attachments included in it.

· Ever using the link to go to the website, check the URL of the website and mix it from the real URL.

· To avoid attacks of viruses, vorts and trank horses, it is necessary to scan from a good anti-virus scanner before using the transferable media before using the code and the code downloaded by unbelievers.

· The rights limit of network users should be limited so that they could act in their own jurisdiction and have not been able to see the information in their confidential information or the information that has been given to them in any other machine, they can not be seen. Limiting the right limit also decreases in viruses attacks.

· Applied services should be closed by the operating system and the operating system and installed application software should be updated from time to time so update that can be avoided due to exploitable.

· The latest and up to date updated Anti virus scanner and anti spyware should be used to avoid the attacks of the calculation of the calculation of the code Security equipment should also be renewed

· If a communication is done with a remote machine and the packet exchange, then using messages and the use of software with the recovered software and the files should be sent safely.

The steps taken for the cyber security by the Government of India

The Government of India has taken several stringent steps to regulate the activities on the cyber space, . The IT Act is an important effort towards defining ways to change the old laws and dealing with cyber crimes. This Act was revised in 2008 years. This Act provides electronic documents to work related legal recognition and support of e-filing and e-commercial business. The legal scheme has also been made available for the reduction of cyber crimes and its investigation. On July 12, 2013, the government released the National Cyber Security Policy, which asence is to form safe and flexible cyber space for citizens, traders and government.

Mission and suggestions for National Cyber Security

1. Secure the information and structures in cyber space.
2. Prevent cyber threats and manufacture response.
3. Reduce damage and effects due to cyber accidents from coordination of institutional structures, people, processes, techniques and cooperation.
4. The establishment of a National Critical Information Protection Center NCEI CC working, which will be working as a nodal agency for the security of important infrastructure infrastructure in the country.
5. In the next five years in Cyber Security Policy, the target of preparing the workforce of five million professionals in cyber security through capacity building, skill development and training, 6. Developing cyber techniques through indigenous research.
7. Promote international cooperation and coordination to increase cyber security and prevent cyber crimes.
8. To review the security of the information system, the timely security will be audit.
9. Program organized the program at the national level to make civic protection per conscious.
10. Plans and promotions measures will be brought to strengthen cyber security.
11. Indian Computer Emotion Recession Team at National Attribute; Establishment of Certery

Conclusion

Today everything is being retired to the general e-mail from the general e-mail. The same has exceeded such an extraordinary and unexpected cybercraft, so that the mainness of the information has been made to make the privacy and security of a concern. To maintain cyber security system and to avoid individual cyber attack, this article has been discussed on the process of cyber attack, the type of attack, the providing available to avoid them and the Cyber Security Policy- 2013 issued by the Government of India. To rescue the civic attributes for the civil attacks, compliance with the laws made for cyber security, through the indigenous research, to prepare to fight with cyber attacks and oppress with cyber security, as well as the changes in the field of continuous cyber security Areas.

References

1. Borderless Battle: Defending against Cyber Threats; Hearing before the Committee on Homeland Security, House of Representatives. 115th Cong., 1st Sess. March 22, 2017. https://www.hsdl.org/?view&did=800990

2. Understanding Cyberwarfare : Lessons from the Russia-Georgia WarSarah P. WhiteMarch 20, 2018

3..https://www.sfu.ca/computing/current-students/graduate-students/ academicprograms/ professional- master-of-science- in- computer- science/ about the program/ cyber security. html?gclid= Cj0KCQiAbjy BRCcARIsAFboWgIJXa07v7q9e37 yiJBny0y

OiYfNJaawkaHCqfX2ClxdPO3DwqpKlaAm3eEALw_wcB
4. https://en.m.wikipedia. org/wiki/Computer_security
5..https://www.cisco.com/c/en/us/products/security/what-is-cybersecurity.html
6. https://www.kaspersky.co.in/resource-center/definitions/what-is-cyber-security
7. https://cybercrime.gov.in/
8. https://en.m.wikipedia.org/wiki/Cybercrime
9. https://www.pandasecurity.com/mediacenter/panda-security/types-of-cybercrime/
10. https://www.medianama.com/2019/10/223-cybercrime-ncrb-2017/
11. http://www.helplinelaw.com/employment-criminal-and-labour/CCII/cyber-crimes-inindia-what-is-types-web-hijacking-cyber-stalking.html
12. https://en.m.wikipedia.org/wiki/Cyberwarfare
13. https://www.rand.org/topics/cyber-warfare.html
14. https://searchsecurity.techtarget. com/ definition/ cyber war fare
15. http://www.legalserviceindia.com/legal/article-1019-importance-of-cyber-law-inindia.html
16.http://vikaspedia.in/education/Digital%20Litercy/information-security/cyber-laws
17. https://www.tripwire.com/state-of-security/featured/cyber-law-war

Ms. Sanju Chaudhary
Assistant Professor
Dept. of Computer Science
FGM Govt. College, Adampur, Hisar

106

Role of Information Technology in National Security

Dr. Kuldeep Singh Jaglan

Abstract

Science and Technical has reached the space by raising the war from the ground and "JFC. Fuller had said," The concept of national security has become very complicated today and the science-technical effect is on the mass. The especially the importance of science and technical in the science and the war of America's war in the Bay War. There is no possible possible in the era of today's era. The same as no other nation without the idea of science and technical. With this kind of relevant not only the nation can be retained its freedom. In today's era, science and technique of most of the above are made the main factors of the change in the power of the technologic. The public of the country is high in the area of technology and their army is equipped with excellent technical weapons. Technical development is also a broader nouns and the promotion of the nation is also from the technical development. Technology development is the emergency and the invadency power of the nation also improves the technicity. The technological development is the emergency nomina and the emotion of the nation. It has also tried to develop indigenous techniques in the national security. The nation of self-reliant or self-confidence in this area can understand the safe and powerful of the nation, it is not necessarily a hundred national-fisheries or 'Fulproof Secure', but more than progressive development and self-reliant than other countries, it is important to make the cultivation of the needs of their citizens and the arms of their soldiers, it is important in making itself by their own people in their own country.

Key words: Information, Technology, Computer, cyber security , ECCM

Research Method

The Descriptive Research method in this research paper has been used in this research paper. Secondary data has been used. The purpose is to the purpose of writing this research paper to analyse the role of science and technology in national security and to make new generation aware of this context.

Introduction

Due to advancement of information and communications revolutions have made the world a global village. Advanced societies continue to support a technological revolution in order to sustain their rates of growth, but deny technology to the developing countries to maintain the income differential. Information technology is the major technological development to grab imagination of the world today. There are pluges and minuses to the development of information technology.

India is developing from railway to the bullet train, from the rocket to settelite, and from computer to the super computer, but in many areas we also depend on developed countries like America, European nation or Japan. Many times these countries give us off-date or second grade techniques. After the agreement of our SU-30MKI Fighter aircraft with Russia, France has made the production of Miraj-2000. If they take such a step before ten years ago, we live in advantages. However, computer space research and missile program (IGMDP) and information technical, it has been our important achievements. For some decades we are coming to hear that India has developed fighter aircraft L0C and Arjun tank indigenous technology. But the world will be very finally ready to reach the hands of soldiers very fast. By making weapons outside SU-30 and T-90, we had to complete our safety needs. If the LCA and the Army, we could not become powerful, then what did the indigenous technical mean? Why do our project surveys why we are stuck and after developing massively massively, we armed assembly look so long in reaching our soldiers. The lack of money 'is the main reason why it is called. "The main dimensions of the National Security Policy are the death of the country and the destruction of the country. None of the nation can be advanced without security and development only provides security." All governments have failed to find the answer to this problem. Apart from this, due to the lack of high tech sector, our indigenous weapons are resorted to foreign technical. If we resort to the technological technologies, then we have to stay with their own. In this, the USA stood in the obstacles. Example Cryogenic Engine and Sukii -30 deal. When India, the super computer for example from the marriage, he appeared hesitant to give us. The fire test was stood after 1994, it was the same nation behind it. The Indian detained power of India and China's champion of India is equipped with Pakistan. Preventing India from becoming super power is the leading agenda of some European countries with these countries.

Our problems have increased from the last three decades. India's most nearest friend has been different from the Soviet Union (Russia). Although he is a member of the Security Council, but we can not expect him more support now. On the other hand, most cheat India from China's missile program are therefore, after that Jacub had demanded to make the missile of 5000 kilometer range capacity, we think that today we have found this capability. - To achieve more and more self-sufficiency in the security sector, our goal should be. This work can not do the same governmental agencies. It should make a far-reaching policy. The government industry working in the field of defense production is not able to use full

of its capacity. Therefore, decentralization is very important in the private sector for these modernization and self-reliability. To consider the at least non-sensitive defense material, it is important to consult to private sector. With moting for private work and universities, with the R & D and its sub-day, the project can be completed in short time by taking assistance of private industries for mass production.

Information Technology **and National security**

Information technology is the foundation of the nation's economic success of its development. Production powers in the entire age are dependent on more communication technology. After the new technological research related to the product, the same reaching a company after the market is more than the company. The relevance of the old ideology of the industrial era of mass production, distribution and marketing is now minimal. The 'Small and Attractive' is presented as a slogan in the entire age. Large companies having labor in thousands of thousands of dollars can now be broken in relatively small companies who have a number of product and workers with many samples. This is increasing the promotion of the multinational companies in the backward and developing states. This can be concluded in this time that the technological changes such as the Information Revolution have limited the change in the size of the 'Mahasua. "

Information technology has made a huge contribution to culturally enriched. This has helped people in different cultures near each other. In fact, the societies lagged back in the time of the society have helped in the efforts, but it has also had side effects. These wonderful acts of the Internet have given birth to such a plant of 'Cyber Children', for which love or sex is like a menu made available for recipes in any restaurant. On the basis of presented to sex, many of the fighting areas are being fattered by the freedom of the nature. The freedom of freedom says that the show is not being harmful on the net, while the population of our culture is booming in the unity of the sex. It is said that this will be the most affected by the fact that the use of the Alpariyaks can be easily accessible by these. Hundred companies of business, which are the business of their websites and products are given in the details of their websites and products in the Ministry of Internet and Media. The language-style only used by their KP Rights is so exciting and inflammation that these barbals fill the sight of philosophy in the heart of people.

Information Technical has also comprehensively imposed on commendation and control. Warring nations can share their command sanclays to the use of computer information and consumption of cultured communication etc. There is no dispute on this matter that the speed of campaigns has increased manifold in the entire age. Now the technical instrument is available for integrated functional unit and according to the compatibility of the campaigns, the decision can get less time for decision-making. Due to intense changes and prompt entry qualifying in strategic situations, large scale resources (processcess) have been necessary at all levels of data related to war. Therefore, it is also necessary to provide the right notices at the right time to accelerate the decision-making process, the decision - the increase in the speed of construction makes the benefits of getting the important benefits related to the conflict on the enemy forces. In the war, the vertical flow of information in the vertical command series, and the nominal flow of orders and plans. Its impact is directly related to the amount of truths of information from the war zone. The prevailing soldier structures are mostly part of the centralized control, because all the information is given to the central headquarters by the verterial flow before reaching any other. But the modifications recommended by mid-order officials should also be accepted. Since the nature of modern campaigns are quite variable, the army should develop arrangements in the current time of such a system in which the full possibility of changing flexibility and plans quickly. It has been very simple to do so by increasing the increasingly acclaimed of increasing accessibility of information technology. Control is not just a person or just a few people of the person, the whole efforts of the hierarchy have become a collective effort. Sometimes the system of infection of the enemy is derived in the deductable, in such a situation, it is very difficult to disintegrate the commemoration and control of the enemy by traditional methods, because information in the dissolved system is reported directly to the consumer (USER). But in the information age, it can be reported by the consumer's only equipment equipment. In this way, information technology has provided intensity and acute intensity and control. But where it has empowered commitment and control, there are also the potential of some errors to the place. The future capacities of information technology will provide relatively high flexibility in understanding the protection by a new thinking and change. But due to the increasing intensity of campaigns, the hero can get less time for analysis and evaluation of the circumstances to implement a proceedings and on or on the action. Conclusion Only this is the only organ of national security, achieving high technical. Part of Key Industries Infrastructure is the most important in it and the future information system is also necessary with good socio-economic organs for its development. With it, it is a lot of effort to mold the imported from abroad and it should be made to shield according to the circumstances of India. More money for research and development work should be more power. But the government and private "the region" somehow do not disregard this. Because of this, many defense projects are still uncertainly. "There is no lack of talent in India and we can develop more high tech than

compared to the developed nations." Such Pro U R Rao is confidently and we believe our country can not stop any request from science and technical sector. The weapons of soldiers are the basis that the construction is possible only from technical knowledge. With this, the production capacity of the nation and the power of the nation increases. "The fate of the nation's citizens and civilization and the basis of the warmth determines high technical knowledge." This statement should not forget the statement of morganag. Science and technology are being increasing in fast speed. The history of this has been done, that it has been abused by the spread of panic in the results of each scientific research. Our neighbors get readymade then we have to try to try it. Therefore, more efforts for self-reliance are also important to give more attention to the research.

Conclusion

Therefore, in view of the risk of denies and the risk of information about the 'Information War' in the current age, the information has become the necessary work. Information security is often implemented by Syber Security. Under Information security, all types of hardware and software include any activities of specializations, characteristics and symptoms, compassionate practical, organizational mechanisms, central computers and remote controls etc. In fact, the information system also includes authority on computer and remote control. In fact, the information and other types of additional assets are also included in the computer system. The person, the use of the tools, the rules, the rules, the rules, which provide the information, the acquisitions, the strategy, creates the entire information security system. Protection and security of this detailed settlement is called 'Information Security'.

Information systems are operated as many sub-systems, cyber space, electromagnetic spectrum, sound waves etc. The cyber space is completed by the security of security security network (Network). For this, we have to create a national information-sleek and for the defensive cyber war, we must always be in strong position. In electromagnetic spectardment, this security can be completed by the enemy's communication and reverication systems based on the communication and reverication systems, or to prevent their use. All measures related to this is called Electronic Counter Counter Measures - ECCM).

In fact, we have to combine information security and compassionate security. Where is the physical and personal protection under compassionate security, under the security information, the measures of hardware and software are taken measurements. Today, the result of an innovative power has become an innovation of the development of information and communication techniques. This happened because the fierce destruction of abundance and conventional weapons has made the use of their use in general for the use of the very common. The dermatitis of war, are seen as a weapon of the overall weapon (non-lethal weapons-nlw), information war, new-colonialism, information-apartheys, cyber politics etc. Therefore, it is a realistic that the changing nature of power in the entire age should understand the foreign policy makers. In which the changing times of various security dimensions of national security, can be understood and analyzed accordingly. Open Information - Route Manufacturers have made possible impact by the notifications for powerful nations and large trans-National Enterprises, which have made the agreement of the back and economical and political interests of the backward and developed states. This is a kind of invasion to attack. The growing practice of information technology has put some cultures in the crisis. In fact, there should be an effort at both international and national levels to get rid of these problems in which government and non-governmental organizations should also play their effective role. In addition to the culinary crimes, the strives of the should be made to deal with cyber crime at international and national levels.

References

1. Gudi, A.N. , Information Superhiways in Indian Armed Forces, USI Journal, Jan- March, 1992
2. Hindustan, March 2, 1999
3. Manmohan Bala, Raksha Vigyan, Parbhat Parkashan, New Delhi.
4. Vinod Anand, Information Technology and Defence Forces, Strategic Analysis, Aug. 1999
5. Shailza Raj, Cyber Security in the Defence Services, USI Journal,April-June 2000.
6. Anil Kumar, Science and Technology in Warfare, Readers Paradise, Ansari Road, Dariya Ganz, New Delhi

Dr. Kuldeep Singh Jaglan
Associate Professor
Dept. of Defence Studies
Govt. PG College, Hisar

Study Of Relationship Between Spouse Health And Marriage Problem

Dr. Manju Chaudhary

Abstract

The study was conducted to find out the influence of various responsible factors on familial disorganisation .These factors have been divided into 3 category I .e personal , family and social .The study was conducted in Haryana state .Mewat pocket was purposively selected for the present study as it is dominated by Muslim population .Two districts namely Gurgaon and Faridabad were selected purposively out of which **30 males and 30 females who had filed their cases for divorce were purposively selected representing both the districts. Self structured pretested questionnaire ,marriage attitude scale and socio_economic status schedule was used .personal interview was undertaken to have the ojective information without any biasness in a friendly manner.The analysis revealed that poor health status of partener responsible for disturbance and disfunction in marital relation due to variety of physical and emotional disorder.**

Introduction

"A good marriage require and it needs to be worked at beyond this, one need only practical situation ."**Betty Kuriyan (1997)** A successful marriage is the starting point for founding the institution the family. Marriage in which both husband and wife feel alive, content, functional and lucky to have each other, when an individual marry he or she has many expectations and dreams about marital life. There is an earnest desire to make sacrifices and adjustment to make one's life partner feel happy and make marriage comfortable. If two personalities are not merged into one in idea, purpose, attitude, possibilities, habits and property leading to unsuccessful marriage is known as marital conflict. Conflict is a breakdown in the standard machanismregarding decision making. So that an individual or a group experience difficulty in selecting an action alternative. The troubles may be because of the fault of the wife or the husband or other family members residing with them. A further consideration is that now a dayscouple have the highest expectations from married life. They expect the misery of loneliness, children, to set up pattern of life with their partner which is economically rewarding, finally they expect peaceful life .

In this final expectations they hope for more than marriage can give. Since many people expect marriage to give them final happiness here and now they'd find it hard to be content with only having the idea of happiness. Another consideration that is especially relevant today is the great confusion that now surrounds marriage and family life..

Marriage adjustment is only the adjustment of husband and wife but also of inlaws and other relations. This quite natural since a member of the family has to play different role in different situations. In other words an individual has to adjust himself to different situations. Sometimes it is quite natural that people expect too much from an individual who may not be able kiss to their expectations in different circumstances. Conflict may also occur in the family due to different role situation of each membersthe father of family may be a son and a brother. Similarly the house wife may be a daughter and a sister too. How do they balance the different roles. Where a particular role has been overplayed or underplayed there is always the likelihood of conflict.

Marriage has emerged as an important topic in psychology over the last decade for several reasons. Divorce rate rose sharply from 1960 to the 1980s, the anticipated divorce rate is now approximately 50 percent while divorce rate is levelled out in 1980. The dissolution of marriage between husband and wife take place if the former suffers from leprosy (pienta ,2000) chronic illness and psychological disorder in one partner fountance may constitute a major threats to the marital relationship and may lead to a disruption in family functioning disturbance and dysfunction in marital relation have been observed in relation to a variety of physical and emotional disorder including depression (curr 2014) Therefore one must be prepared to sacrifice something in the interests of one's life partner o, the children and the institution of family.The high incidence of divorce can be reduced if marriage is postponed till both partners are mentally and emotionally mature enough to face the vicissitude of life.Couple must be prepared to face the problems associated with married life.It would be hallucination to assume that marriage brings permanent happiness .Couples with such illusions cannot withstand and tolerate even small conflicts in married life.To ensure success marriage was accompanied by regulation of Divine wisdom intended to protect imperfect human beings from vagaries of their own deprived nature.So to help the families with marital it was thought to be useful to collect information regarding the factors associated with marital conflict.

Materials and Methods

The study was conducted in Mewat cultural pocket of Haryana state as it is dominated by Muslim population .Two district namely Gurgaon and Faridabad were selected purposively .Out of which 30 females were selected who had filed their cases for divorce to find out the influence of personal factors i.e health problem on family disorganisation .The data were collected using self structured pretested questionnaire with the help of local

people .Analysis on personal factor i.e Health problem given by females revealed that their inlaws always held them responsible for their husband's healt (80%) whereas the Males (100%) observed behavioural changes in their wives due to health problem and 50% complaint of wives for being short tempered and jealous due to health problem the behavioural change irritative had also been observed these condition lead to familial disorganisation .

Results and Discussions

Results in Table 1 depict that the association of Health problem with type of marital conflict among female. Statically no factor was found to be significantly associated with type of marital conflict. Further data in Table 1 show that the health problem is found to associated with marital conflict .Health problem was faced by females who had health problem and whose husbands had health problems.

Table 1: Association of health problem with type of marital conflicts among females. (N=30)

Sex of respondent	Extent of health problem		
	Mild	moderate	Chronic
female	20(66.66)	9(30)	1(3.33)
male	22(73)	-	8(26.66)

Figures in parenthesis indicate the percentages.

A close persual of data in Table 2 reveal that most of females respondents (66.66)% reported that they had mild health problem against 30 percent of females respondents reported health problem followed by only 3.33 percent who were suffered from severe diseases .As compare to males , it shows that majority of(73.33%) them were suffered from mild health problem followed by 26.66 percent of males respondents who had chronic health problem .

Table 2: extent of level of health problem among conflicted couples. (N=30)

Factors Health Problems	Type of marital conflict			
	Personal conflict	Family conflict	Social conflict	Chi-square value
Mild	18(60)	2(6.67)	-	-
Moderate	-	5(16.67)	4(13.33)	4.94
chronic	1(3.33)	-	-	-

Figures in parenthesis indicate the percentages.

Hence ,it can be concluded that when he/she is incapable of performing the household responsibility properly it leads to tensions between husband and wives .It was found that chronic illness and psychological disorder in one partenerfounstance may constitute a major thread to the marital relationship and may lead to disruption in family functioning . Disturbance and disfunction in marital relation have been observed in relation to a variety of physical and emotional disorder including depression .Same findings were reported by (Reynold 2015 and liu 2012).

Table 3: frequency distribution of health problem among conflicted couples relationship (N=60)

Sr.No	Factors	Sex	
		Females (n=30)	Males (n=30)
1.	Spouse has health problem		
	Yes	10(33.33)	8(26.66)
	No	20(66.66)	22(73.33)
2.	Health status of partner		
	Satisfactory	20(66.66)	22(73.33) 1(3.33)
	Undecided	9(30)	8(26.66)
	Highly not Satisfactory	0	
3.	Length of sickness		
	Year	4(50)	
	1-2 Year	4(50)	
	Above 2 years	10(100)0	
4.	Medical treatment sought		
	Yes	10(100)	5(62.5)
	No	0	3(37.5)
5.	Causes of sickness		
	Heredity	2(20)	3(37.5)
	Accident	-	-
	Ignorance	8(80)	5(62.5)
	transmission	--	-
6.	Dependency on others		
	Yes	0	2(25)
	No	10(100)	6(75)
7.	Expenditure on spouse health		
	monthly	2(20)	2(25)
	Less than Rs. 500		
	500-1000	7(70)	6(75)
	Above Rs 1000	1(10)	0
8.	Changes in spouse due to illness	10(100)	8(100)
	Yes	-	-
	No		
	Behavioural changes	8(80)	4(50)
	Short tempered	-	-
	Stubborn	2(20)	4(50)
	Jealous irritative		
	Effect on social life	2(20)	4(50)
	Avoid journey		
	Avoidsocial gathering	8(80)	4(50)
	Avoid going to friends		
9.	Attitude of family members towards spouse health		
	Sympathetic	0	5(62.5)
	Accomodating	7(70)	3(37.5)
	Cruel	3(30)	0
10.	Inlaws held you responsible for spouse health problem		
	Always	8(80)	3(37.5)
	Sometimes	2(20)	5(62.5)
	Never	0	0

Figures in parenthesis indicate the percentages

Results in Table 3 show health problem among conflicted couples It is an another major factor that become the basis of marital dissatisfaction .Regarding females the data in Table 3 depicts that in 33.33% females respondents reported that they were unsatisfied with the health status of their husband as they were suffering for more than 2 years and none of them suffering from chronic diseases. In majority(80%) of cases the causes of sickness in male was ignorance or hereditary diseases like diabetes , T.B etc . None of the spouse was dependent on others. In most of 70 percent the cases the money spent on spouse health was Rs 500/- to Rs 1000/- per month followed by in 20 percent cases money was spent on spouse health was less than Rs 500 per month .The data indicate that as the time passed and the problem became prominent on body cares about it and so money spent on health goes on reducing . There were the changes that the female respondents observed in their counterpart.In cent percent (100 %), cases be behavioural changes were observed in spouse .further majority (80%) females complaint their spouses became short tempered and in 20 percent cases were of jealous nature. Regarding social changes in spouses , 80 percent cases female reported that their husband avoid social gathering followed by 20 percent who avoid journey and all the females complaint that their husband avoid them due to bad health status .In most(70 %) of cases reported that the attitude of

family members including brother-in - lawand sister -in - law were sympathetic .Majority (89%) of females pointed out that their in- laws always held them responsible for their husband's health followed by 20 percent cases where in-law sometime held them responsible for their husband's health.

Conclusively , it is stated that health problem of husband and wife influence the relationship and effect emotionally , physically , financially .These factors i.e emotionally ,physically and financialy directly or indirectly responsible for conflict in the family which lead to divorces .Same results were supported by Finkel (2014).

References

* Curr dir psychol sci _ 2014 Dex; 23(6) ; 427_ 432 . doi: 10.1177/0963721414549043
* Finkel ek ,hui cm ,Cardwell kl ,Larson gm .The suffocation of marriage : climbing Mount Maslow without enough oxygen .psychological inequiry : 2014 ;25: 1_41.
* Kuriyan ,b (1997) "divorce " the family in social context gernald r .distic and sheelak ,pp.505
* Liu h.marital dissolution and selfrated health ; age trajectories and birth cohort variation .social science and medicine . 2012 ;74 (7) : 1107 -1116
* Pienta a. m .,Hayward m.d ,rahrig Jenkins k .health consequences of marriage for the retirement years .journal of the retirement years .journal of family issues .2000;21(5) ;559-586.
* Reynolds ,Gretchen (18 March 2015) ," how to get your spouse to exercise well retrieved 2017 _04 _28.

Dr. Manju Chaudhary -
Associate Professor,
Department of Home science,
FGM Govt. College Adampur (Hisar)

Issues And Challenges Faced During Crime Investigation In India: A Critical Study

Yogender Dhillon, Dr. Rakesh Kumari Malik

Abstract

The state and federal police forces have a variety of responsibilities. State police departments typically handle local issues such as maintaining the peace, investigating crimes, and preventing them from occurring in the first place. The central forces are particularly skilled at resolving conflicts of this type because they are the first line of defense against more serious threats to the country's internal security. The current investigation process in India has several flaws. Inadequate infrastructure, outdated environmental conditions, a lack of personnel, outdated weapons, ineffective intelligence gathering techniques, and other factors all contribute to the nation's police force's poor performance. Debasement is a distinct issue. Control and direction of the police force is a contentious issue. In accordance with the law, political leaders supervise and command the Central and State police forces. As a result, both democratic operation and proper leadership have failed. Police priorities are frequently shifted to meet the whims of political leaders. It appears that the police's political leaders have been successful in manipulating them. It is not possible to file a complaint against an officer who has made an error. Both the Supreme Court and the Second Administrative Reform Commission have recognized the importance of establishing a separate complaint authority with the authority to investigate claims of improper behavior by law enforcement personnel. Following that, the author of this paper will make recommendations for improving India's testing procedure and administration.

Keywords: Crime, Investigation, Police, Executive

Introduction

There are numerous crimes committed in India on a daily and yearly basis. The police have a bad reputation and are sometimes blamed for the rise in crime. The general public criticizes them of accepting bribes, being obstructionist, being unavailable when important, being bad, and being political slaves, among other things. Despite this, the general public is unaware of the terrible working circumstances endured by police officers. Sections 157-173 of the Criminal Procedure Code outline the steps and authorities required of an investigating officer in order to investigate a criminal offense. According to Section 157, which also describes the investigative process, an officer in command of the police station may conduct the investigation. Depending on the level of the investigation, this could be the senior police officer (SHO), sub-inspector, or chief constable. This authority is held by only three officers: the chief constable, the sub-inspector, and the senior police officer. This authority cannot be transferred to another official. Section 168 requires any subordinate official conducting an investigation, such as a head constable or sub-inspector, to report their findings to the SHO. Whether or not subordinates perform this duty, the SHO is responsible for ensuring that the investigation is completed correctly. The investigating officer is required to perform duties under the Criminal Procedure Code, which may result in fewer convictions because the officer is more likely to be overworked, understaffed, undertrained, underpaid, and assigned a variety of tasks, run out of resources, and conduct an impossible investigation.

The Role Of The Police In The Investigation

During a criminal investigation, the police are in charge of a wide range of responsibilities. It is not always clear in the police department who is in charge of a certain investigation, which might result in different tactics and obligations for different cases. When the charge sheet is filed, the investigation's attempts to gather, preserve, and present evidence in court are abandoned and gradually diminished, affecting the case handlers' output. All attempts to collect, preserve, and present evidence in court are abandoned once the charge sheet is submitted. Any of these procedures, such as the issuance of summonses and warrants, the presentation of witnesses to testify to actual events, and the jogging of witnesses' memory, may have an effect on the administration of justice.

Challenges Faced By The Police In The Investigation

i) At nearly every turn, the credibility of the country's law enforcement and investigation authorities are called into question. However, I believe it is absurd to claim that all police officers are dishonest.

ii)One of the most common issues that police encounter throughout an investigation is the inability to frequently question an accused person to check the reality of their charges. This is one of the challenges that the police must face. The only method for police to obtain vital information for a criminal investigation is to interview the suspect extensively and for an extended period of time. A person can only be detained and questioned by the police for 14 days at a time. The police are better able to acquire leads for corroboration from them, in addition to confronting witnesses and the accused more easily during interrogation while in jail. As a result, police interrogation and detention should be legalized. The entire 14-day period does not have to be spent in police detention. In fact, law enforcement would prefer that it be intermittent since providing the suspect with the information acquired is an important component of closing an

investigation.

iii When the police are unable to get a criminal conviction, they frequently blame a lack of appropriate investigative tools, combative witness behavior, general indifference, and a lack of public trust in the police. The most difficult aspect of conducting a criminal investigation is acquiring and preserving all evidence that indicates a link between the alleged crime and the perpetrators in a lawful and tamper-proof fashion.

Political Pressure And Corruption

Politics is essential in Indian society because of its power to shape and influence the overall course of the country. Similarly, these political parties would use their clout to promote or transfer police officers who were not acting in their best interests. If the suspect is a member of a political party, politicians will try to prevent the suspect from being detained, as well as interfere with the inquiry. These politicians help persons accused of wrongdoing by interfering with the officer's capacity to fulfill his job. The officer is no longer able to administer justice to the community, which raises overall crime rates. In the case of *Prakash Singh v. Union of India*, it was decided that political engagement should be limited in order to prevent political parties from employing the police for political goals and political patronage, including corrupt police employees. The court's order was not followed, and no explanation was provided. Because cases are not investigated and perpetrators are not punished, the accused are essentially given permission to commit further crimes and become repeat offenders. This inhibits not just the police's ability to preserve the rule of law and defend society from such criminals, but also their ability to do so. As a direct result of the aforementioned issue, the Indian police force has suffered. Some senior officers in the police are corrupt because they have control over lower officers and tend to behave similarly to them. They prevent their subordinates from following out their leaders' directions to strive toward improving society. Corruption in the police force is caused by a multitude of factors, including pay scale, long hours, a wide range of responsibilities, the difficulty in finding adequate housing, administrative and organizational challenges, and others. As previously stated, this contributes to the stigma associated with mental illness. As a result, corruption has spread across the police agency.

The Role Of The Judiciary By Guiding Investigation

Due to irregularities in the investigation, including the recording of 161 statements, a delay in filing the first report (FIR), and uncertainty about when the investigation began, the accused was exonerated. Indian citizens have a fundamental right to an immediate investigation, according to Article 21 of the 1950 Constitution. The Malimath Committee recommended in 2003 that the adversarial system be strengthened by incorporating some of the beneficial elements of the inquisitorial system, with necessary adjustments. The goal of these recommendations was to strengthen the adversarial system. The recommendations include requiring the court to assign judges a proactive role in matters of investigation, directing investigators and the prosecution in matters of investigation, and presenting evidence with the goal of uncovering the truth and providing victims with justice. The court may subpoena any relevant witnesses or call any person in the room for examination under Section 311 of the Criminal Procedure Code. Furthermore, under Section 165 of the Indian Evidence Act of 1882, the judge has the authority to inquire about any matter and demand the production of any record or object in order to learn or acquire relevant facts-supporting evidence. In any case, these arrangements do not necessitate the court using its authority to appoint observers "to seek reality." The court may take such action only to "prove relevant facts" or reach a "just decision" in the case. Given these provisions, it is critical to recognize the significance of the Malimath Committee's recommendations.

In "***Prakash Singh vs Union of India***"the Supreme Court of India issued guidelines as below:

i Every state must establish a State Security Commission. This commission will be in charge of developing policies for police operations, assessing how effectively they carry out their duties, and ensuring that state governments do not have undue influence over the police.

ii Each state must establish a Police Establishment Board. This board will make posting, promotion, and transfer decisions for police officers with ranks lower than deputy superintendent. This board will also make recommendations to the state government on police officers with ranks higher than deputy superintendent.

iii Establish state and district-level authorities to investigate reports of serious misconduct and abuse of power by police officers.

iv To prevent arbitrary transfers and postings, establish a minimum tenure of two years for the Director General of Police (DGP) and other important police officers within the state forces, such as officers in charge of a police station and district.

v Assure that the position of State Police Director General of Police is filled by one of the three senior officers recommended for promotion by the Union Public Service Commission based on their extensive service, accomplishments, and experience.

vi To ensure a more thorough investigation, higher levels of expertise, and more developed relationships with the general population, the investigating police should be separated from the rule of peace and law police.

vii Establish a National Security Commission to reduce the number of applicants for senior positions in the central armed forces.

Except for Telangana, all 35 states and union

territories in the country had State Security Commissions and Police Establishment Boards, according to a 2016 NITI Aayog report. Jammu and Kashmir and Odisha were the only two states without state security commissions as of August 2016. Despite the High Court's orders, the Police Foundation Sheets and State Security Commissions had separate organizational structures and levels of authority. The majority of the State Security Commission's members were police and government officials from states such as Punjab, Gujarat, and Bihar. In addition, many of these commissions lacked the authority to make legally binding recommendations.

Conclusion

Making each investigation a collaborative effort will improve the criminal investigation process's effectiveness. Even though everyone on the team should have access to all case-related information, no one on the team can be held accountable for deviating from the investigation's course. The defendant has no idea where the next missile will strike. The only issue is that, unlike an investigative journalist, the Investigation Officer is in charge of ensuring that relevant facts are presented to the trial court as admissible evidence. This is a difficult test, and Sections 161 and 164 of the Criminal Code should be amended to include the preservation of all relevant evidence as needed. Experts should be able to conduct factual analysis and contribute to the evaluation of evidence regardless of their location.

As a result, all relevant information can be gathered and saved digitally in a format that can be used in court. The criminal justice system in India requires immediate reform. Every case is built around the investigation's findings, which can have a significant impact on how things turn out. The Criminal Procedure Code outlines the process, authority, and scope of an investigation, but it does not address the challenges that an investigating officer faces. Due to a lack of personnel to carry out a variety of duties, including patrolling and maintaining law and order, investigating officials have little time to plan their examinations, let alone complete them within the allotted time. Because there aren't enough staff, the investigating officer has to work extra hard to complete their duties. As a result, they are forced to work 14 hours a day for little to no pay. Because they lack access to any resources, technological or human, they are forced to rely on the meager, outdated resources and training they have been given. The investigating officers are unable to handle the new types of internet-based crimes due to a lack of training. Each of these impediments not only slows the investigation but also reduces the number of convictions. In Prakash Singh v. Union of India, the court determined that separating the investigating unit of the police force from the rest of the force is one way to address problems of this nature. Investigating officers must be selected through a special recruitment procedure, and there must be enough placement to avoid 14-hour workdays.

It would be easier for the investigators to focus solely on the investigation if the investigative section was separated from the rest of the department. This separation should be accompanied by advanced investigative and technological training for the investigation officer. It should also be accompanied by the provision of resources ranging from the most basic to the most cutting-edge, allowing the investigating officer to specialize in this area. As the number of crimes continues to rise at an alarming rate, so do the abilities and efforts required of investigating officers. As a result, these officers should be paid in accordance with their job requirements, with additional compensation for working overtime. If a person is satisfied with their pay, the environment in which they work, and other aspects of their job, they will become more committed and focused. The separation of the department's investigative unit from the rest of the department will aid in the arrest of a suspect with political ties. The corruption rate in the police department will decrease due to the stress of working without pay or benefits and a lack of political pressure. Overall, this will be beneficial. This would also result in a more efficient investigation, a highly specialized team of experts, fewer wrongdoings, and a quicker conviction. In general, these outcomes would be favorable.

Suggestions

i To improve efficiency, the police department's administrative and investigative functions should be separated from its enforcement functions.

ii To reduce the likelihood of witnesses becoming hostile, it is necessary to provide witnesses with protection and assurance that the police will allow them to freely discuss the incident.

iii If the complainant and witnesses are pressured to settle because they spent so much time at the trial and had to appear and wait in court so many times, their initial zeal to fight the case will be diminished.

iv Make a note of the reasons for the delay on the day the FIR is actually filed.

v Send the FIR using a variety of information technology. The delay in filing complaints will be eliminated if the First Information Report (FIR) is sent to the Superintendent of Police via email and fax and the Superintendent of Police is recognized as the complaint-responsible officer.

vi Precautions must be taken to ensure that the police are held accountable.

vii If the severity of the offense has been understated, institutional checks should be included in the law and the police manual.

viii Access to police stations is a related issue that presents a very real logistical challenge that must be addressed when addressing substantive legal gaps. Everyone was made aware that the validity of the complaint should not be investigated or verified when filing a FIR. Nonetheless, it occurs frequently.

When officers check to see if the FIR is in good shape, they frequently believe they are being diligent. As a result, not only is the filing of the FIR delayed, but the situation is further complicated by the time spent traveling and conducting investigations. People will probably begin to suspect that law enforcement coerced the complainant and witnesses into providing them with useful information. This suspicion will be raised during cross examination, which will be detrimental to the case. Even if the witness's statement is correct, the witness may not be taken seriously in court in the future due to the delay in filing the complaint. As a result of this development, the defendant is found not guilty. If the number of convictions is to rise, FIRs must be filed as soon as possible. If the criminal is known to the entire community in such a case, they will lose even more faith in the legal system if they are found not guilty. Senior members should not instruct newer members to wait until a superior authorizes or directs them to do so. Only when people bring a recommendation from a "contact" does this process go smoothly. Senior officers frequently issue orders prohibiting the filing of complaints without their permission. xi It's also worth noting that the law does not require FIRs to be filed in English. Lower-ranking officers should not be discouraged from complaining; they should not feel let down.

ix Victim-witness support programs are required in all police stations.

x It was proposed to amend the current criminal procedure code to require the person making section 161 statements to sign them. This was done to ensure that the claims were correct. This was recognized as one of the most important recommendations of the Malimath Committee. Videography is an excellent way to demonstrate that these statements were not coerced. However, whether or not this safety measure is successful is hotly debated.

xi Section 172 of the general diary requires genuine and timely entries, which must be made.

xii An increase in the number of scientific experts and personnel available to all of the state's clue teams is required.

xiii Offering witnesses and the investigation team travel or living expenses can aid the investigation. As a result, witnesses may be forced to testify, and the investigation team may feel obligated to tell the truth.

Bureau of Police Research and Development Ministry of Home Affairs, Govt. of India, Data on Police Organizations (as on January 01, 2019) (2019).

Vishnu Padmanabhan &SriharshaDevulapalli, India's police force among the world's weakest Livemint (2019), https://www.livemint.com/news/india/india-s-police-force-among-the-world-s-weakest1560925355383.html.

Prakash Singh vs Union of India, 2006 (8) SCC 1.

Government of India, Ministry of Home Affairs, Committee on Reforms of Criminal Justice System, Volume I (2003).

Prakash Singh vs Union of India, 2006 (8) SCC 1.

Status of Policing in India report 2019, (2019).

Broken System Dysfunction, Abuse, and Impunity in the Indian Police, Human Rights Watch (2006), http://www.hrw.org.

Dr. Rakesh Kumari Malik
Assistant Professor of Law
Faculty of Law
SGT, University, Gurugram
Yogender Dhillon
Assistant Professor of Law
Research Scholar,
, Faculty of Law
SGT, University, Gurugram

An over view on Narco Analysis, Polygraph and Brain Mapping in Criminal Investigation and Trials

Anju

Abstract

A police investigation is the backbone of the criminal justice system in India. When a crime is reported to the police, it is their duty to look into the situation to determine who committed the offence, to determine the facts and circumstances, to gather and submit the whole set of these to the court to determine whether the accused is guilty or not. Yet in the current environment, this seldom occurs. The reason for this is because criminals have evolved into intelligent, high-tech, and simply cutting-edge individuals as they embrace new and improved methods of committing crimes. They not leave any kind of evidence at the crime scene or elsewhere, and instead, police and investigative agencies continue to use the tried-and-true methods for pursuing criminals. Third-degree torture is often used by police to get information. As a result, there are more atrocities and fatalities committed while in custody. Also, when criminals commit crimes but leave no traces of them, they are exempt from punishment since there is not enough evidence to prove their crime. Since it incorporates both science and the law, here is where we may turn to scientific evidence to aid in the efficient administration of justice. We use a variety of scientific methods, including brain mapping, polygraphs, and macro-analysis. The benefits of narcotics analysis, polygraph testing, and brain mapping include preventing the conviction of innocent people and doing away with the third degree torture in criminal investigations. Also, it has been used as a time-saving strategy in criminal proceedings with the assistance of qualified and experienced forensic experts.

Keywords: Forensic Science, Criminal Investigations, Forensic Dimensions, Forensic Evidence, Medical Jurisprudence, Third-degree Treatment, Torture, Indian Evidence Act, Relevant provisions of Indian Constitution, Criminal Procedure Code, Indian Penal Code, Narco Analysis, Polygraph and Brain Mapping, Criminal Investigation and Trials.

Introduction

Providing justice is the primary goal of law. It provides a collection of laws for maintainsocial order in a society where change is continual, particularly with regard to criminal law. The issues about justice are present in all of these processes, whether one looks at the judicial process, the criminal justice process, or the legal socialisation process.

Criminal law is one of the specialised areas of law that has contact with a person in his daily activities out of all the branches of law that control every aspect of a man in a civilised society. Therefore, the current state of Indian criminal law is not satisfactory. Police investigations serve as the important part of the criminal justice system in India. When an offence is reported to the police, it is their duty to look into the situation to determine who committed the offence, to gather the relevant facts and circumstances, and to submit the whole set of these to the court to determine whether the accused is guilty or not. To fulfil the goals of justice, it is the responsibility of the police to arrest the offender and present the case in court. Yet in the current environment, this seldom occurs. The reason for this is because criminals have evolved into intelligent, high-tech, and simply cutting-edge individuals as they embrace new and improved methods of committing crimes. They virtually ever leave any kind of evidence at the crime scene or elsewhere, and instead, police and investigative agencies continue to use the tried-and-true methods for pursuing criminals. Third-degree torture is often used by police to get information. Many times, attempts are made to conceal the truth and falsify cases for a variety of reasons, including political influence or corruption, to mention a few. As a result, there are more and more custodial atrocities and fatalities, which is nothing but a major setback for the "Rule of Law." Also, when criminals commit crimes but leave no traces of them, they are exempt from punishment since there is not sufficient evidence to prove their guilt. In cases when the victims become hostile, the judge is left with little choice but to grant the accused the benefit of the doubt and release him, which causes criminals to take on human form and causes victim, victim's family, and society at large to lose trust in the criminal justice system.

Since it incorporates both science and the law, here we may turn to scientific evidence to aid in the efficient administration of justice. We use several scientific methods, including DNA analysis, asphyxia, epiphysis, nacro-analysis, polygraph testing, and brain mapping, among others. In gathering, evaluating, and using this scientific data by both investigators and forensic experts, the fundamental principles of fair play, objectivity, and open-mindedness should always be followed.

Criminal investigation heavily relies on forensic science. A forensic operation is nothing more than the application of methods and equipment from fundamental science to different analyses of evidence related to crimes. The forensic expert's analysis completes a gap and fortifies the tenuous chain of inquiry. Now, we need to consider forensic science when criminals are cunning enough that they scarcely leave any evidence. The Honourable Supreme Court acknowledged the need for scientific investigation in Som Prakash v. State of Delhi. The Law Commission also stressed the need of teaching police personnel how to conduct

investigations using scientific methods. Innovative forensic science technologies like narcotics analysis, polygraph testing, and brain mapping may be highly helpful in criminal investigations and court cases.

Narco-analysis: Modus Operandi And Its Use In Criminal Investigation

A test known as a narco-analysis is performed on a patient or suspect when, after the administration of barbiturates, they enter a sleep-like condition and their suppressed emotions rise to the surface. It also goes by the name Narco-synthesis. It is in a condition that is akin to sleep, which implies that using medicines to induce psychoanalysis puts the person in a state that is similar to sleep. These medications are known as "truth drugs" or "truth serum."

One of the most often used methods of criminal detection in India is narco-analysis. It is a kind of psychotherapy that is carried out on a patient while using medically approved medicines to induce semi-sleep. Throughout the beginning of time, people have had a tendency for telling lies. By interfering with the neurological system, this test allows the subject's self-consciousness to descend. Although the subject finds it very difficult to lie when under the effect of drugs, attempts are made to elicit information in the form of hints regarding the crime.

According to popular belief, a person;s ability to think may be controlled without affecting his memory. Under the effect of drugs, he may talk openly and without any manipulation. Investigative agencies utilise certain medications that have been shown to induce this "twilight state" in certain people in an effort to learn the truth.

Psychotherapy in the form of narco-analysis is a useful tool for scientific interrogation. A patient is placed to sleep, brought into a condition of semi-consciousness, and then questioned while in reverie using a dose of scientific drugs. There are two drugs that are most often used to activate narco-analysis are, psychiatrists utilise sodium amytal, also known as amobarbital or amylobarbition, and sodium pentothal, also known as thiopental or thiopentone. Its result is that the person becomes more open to susceptible suggestions and relaxed. The subject develops communication skills and can speak truth very easily. It is said that after using it, the patient loses inhibitions but retains self-control and does not wish to reveal anything, even if they may do so, this assertion is not correct. In fact, the person becomes uncontrollable and loses his self-control.

Hashish or chloroform was both used to induce people and intensify the hypnotic effect in the late 19th century. Barbiturates were used for psychological therapies in the early 20th century. These studies revealed that the majority of the patients spoke freely and disclosed suppressed thoughts and emotions. Under its impact, private and intimate ideas were made known. In narcoanalysis, a state of excitement generated by barbiturates is produced, and the patient remembers forgotten and suppressed conflicts, events, and experiences.

The method used is to keep the patient lying on the bed for virtually a whole day while a trained nurse attends to them, conversing with them and injecting medicine doses. The patient is reminded that he or she is under the doctor's observation and should unconditionally submit to the vision and pictures that occur in front of them. His or her comments made during these procedures are either taped or written down and then given to the patient so they may create a retrospective record. An interview or session without drugs follows that. Drug-affected experience plays a supportive role in this process. These sessions goes for many months or years. Those who were hesitant to employ treatment are thought to respond better to psycholysis rotation when under the effect of drug.

Depending on the suspect's sex, age, health, and physical and mental state, the drug dose varies. Normally 3 grams of any truth serum are dissolved in 3000 ml of distilled water before being administered intravenously to the subject. The subject's creativity is neutralised by this, making it impossible for him to manipulated things; instead, he can only respond to limited, straightforward questions.

According to recognised statistics, 20% of all people who undergo drug testing are innocent. Hence, this method not only aids in locating the true criminals,But also to quickly identify the innocents. There are medicinal applications for narcotics analysis. For the purpose of assessing disability, narcotic analysis has been employed in mental health problems. In the medical area, narcotic analysis is used to help mute people speak again, to revive memories in amnesia cases, and to express suppressed or repressed thinking or conflict.

Nowadays, narcotics analysis is applied in the forensic area of criminal investigation. Narcoanalysis is helpful in India for suspect interrogation, crime prevention, and investigation. It is used in the criminal justice system for investigative reasons. This test use in the case of large social interest involves. Narco analysis is often utilised in terrorism, organised crime, serial murders, instances where there is no physical proof, etc. Suspects who submit to a Narco analysis test fall into one of two categories: those who voluntarily volunteer and co-operate with the interrogator, and those who are compelled to comply by court orders.

Polygraph: Origin And Modus Operandi

Another significant scientific investigative technique is the polygraph. Popular names for the polygraph include "lying detector" and "psycho-physiological detection." It is a device that monitors and logs bodily functions such as the subject's blood pressure, heart rate, breathing system, and skin conductivity while the person is questioned about the crime and provides a response. The autonomic nervous system's inherent alterations during interrogation are all measured by polygraphs. The autonomic nervous system can't be

reasonably controlled by a person, thus when the subject attempts to deceive, the autonomic nervous system responds differently.

A polygraph is a device that concurrently records the tracing of several separate pulsations, as well as arterial and venous pulse waves and the heart's apex beat. “Lie Detector” is a gadget designed to detect an automatic physiological reaction that all people display when lying but never when speaking the truth, according to Science and Technology Encyclopaedia.

The polygraph is a device that tracks specific physiological changes in a person's body as they respond to questions designed to find out the truth. There is no definition of the polygraph in any Indian legislation. Under the United States Employee Polygraph Protection Act of 1988, a definition of a polygraph was provided. According to this Act, a polygraph is a device that continually records visually, permanently, and simultaneously as a minimum instrumentation standard and that is used, or whose findings are utilised, to provide a diagnostic opinion about a person's honesty or dishonesty. The “Lie Detector” is a gadget designed to identify an unconscious physiological reaction that all people have while lying but never when speaking the truth, according to Science and Technology encyclopaedia.
Ramchandra Reddy vs. State of Maharashtra, Cr. W.P. (c) No. 1924 of 2003, the court stated that “in this test, the polygraph is taken, which gives this reaction, and an expert would then explain these reactions in court, which would be his reading of the polygraph form, which would blow his conclusion, which are to be admitted or not admitted by the judge on appreciation of the statement and the objections raised thereto.” The main premise of a polygraph test is that a person speaking a lie often gets tense and unsteadies the person's body activity physiological changes as a result of this situation.

During a polygraph test, the person is questioned repeatedly. These are controlled-choice questions. Even if the answers to certain questions are previously known, that general questions asked for instance, the subject's name and address. Nothing changes as a result of your responses to these questions. After that, pertinent questions are posed, and if the patient attempts to lie, physiological changes occur. Physiological alterations might manifest as high or low blood pressure, irregular heartbeats or pulse rate, sweating, parched mouth, etc. As the subject cannot reasonably or practically control these changes, the polygraph machine detects lies anytime the subject attempts to tell them.

More than 3000 polygraph tests have been performed in India since 1974. The majority of lawyers are unaware of this test. A television series called “Sachka Samana” brought polygraph testing to the public's attention. Prior to the Hon'ble Supreme Court's objection in the case of Smt. Selvi vs. State of Karnataka in May 2010, polygraph tests had never been challenged in Indian courts. Prior to this ruling, a few higher courts and lower courts issued rulings in favour of scientific instruments. So, a polygraph test is a procedure in which the subject's regular physical changes are recorded and monitored when the subject responds to the question. Only when the individual attempts to conceal the truth these bodily changes take place.

The pre-test interview is the first step, during which the examiner introduces him, informs the subject of the test's method, legal implications, and other pertinent information. The subject is then asked detailed questions regarding the situation that led to the test after the examiners have explained the polygraph procedure to them. To identify “behavioural symptoms,” which point to signs of deceit, questions are asked to know.

The second state is the test itself, or the actual examination. Several devices are affixed to the subject's body to track changes in physiological circumstances. For detecting breathing changes, a rubber tube is festered around the chest. For measuring changes in blood pressure and pulse rate, an inflated cut is wrapped around the upper arm. And for recording electrodumal reactions, electrodes are connected to the finger prints. The test is administered in a quiet, empty room with only the examiner present, and the participant is provided with a comfortable chair to sit in. The subject is asked questions that have been prepared in advance, and he is required to respond with “yes” or “no.” In order to allow for reactions to the previous question to be removed and for physiological response to return to baseline, there is a ten to fifteen second gap between each question. Some of the questions are pointless, while others are pertinent. One of the questions is thought-provoking. The main questions are asked three or four times, and to avoid subjects from feeling uncomfortable, pressure cults are only inflated for 10 to 12 minutes. During the whole question and response series, measurements of blood pressure, sweat, pulse, and breathing rate were taken. The examiner then contrasts replies to other questions and questions that have been asked under pressure to determine if a lie has been stated. The gadget uses a needle and graph paper to track changes.

In the third step, the test results are examined with the individual in order to examine any attempted non-responsiveness to questions that may have been misrepresented. The test's outcome is shown on a polygram chart. The changes, such as suppression of breathing and a rise in blood pressure after a response, a drop in blood pressure, a change in breathing pattern, a lowering of the pulse rate, and the course of blood pressure, among others, are carefully observed. While a polygraph cannot tell if someone is lying or telling the truth, the examiner may deduce someone's sincerity by carefully examining their pattern of arousal responses. This conclusion or evaluation is known as a “diagnosis” of honesty or deceit.

Rules regulating the use of force and permission for polygraph tests were issued by the Supreme Court on May 5, 2010, as part of the Smt. Selvi v. State of Karnataka case. 'No person would be exposed to any of the tactics in issue, whether in context of inquiry in criminal matter or elsewhere," the court ruled in this instance. It would be an unjustified violation of someone's freedom. But, assuming appropriate protections are in place, we allow opportunity for the voluntary use of the contested procedures in the framework of criminal justice. The subject does not exert conscious control over the replies while the test is being administered, thus even if the subject has provided permission to undertake any of these tests, the results by themselves cannot be usedas evidence. Section 27 of the Indian Evidence Act of 1872, any information or material that is later found may be use of willingly provided test results may be entered.

Brain Mapping: Origin And Modus Operandi

Another useful scientific method for investigation of crimes is brain mapping. Other names for brain mapping include Late Positive Complex, P3, P300, etc. The averaged brain potentials include it. The accused is not questioned during this examination. He is forced to sit in an evoked potential recording device while being shown things from the crime scene or subjected to noises from the scene. Only if the individual has visited the crime scene would the sensors in his head pick up event-related potentials in the form of brain mapping, which has an accuracy of about 100%. Brain mapping is the brain's reaction to a stimulus that is shown to the subject.

Sutton and his colleagues made the discovery of Event Related Potentials in 1965 when scientists were researching this field. The Event Related Potential is quite strong. Within 300 milliseconds of perceiving the stimulus, as soon as it identifies it, it transmits the response. The quickest reactions would occur if the individual was paying attention to the stimulus. The longer it takes to make a choice, the longer it takes for P300 to respond. Its latency reveals how long it took to make a choice.

The brain generates the exact electrical wave known as P300 when it detects a person or a sound. In this test, the patient is sitting in front of a computer display with sensors connected to their heads. The P300 wave, which is only created if the patient has some correspondence between the images given to him and the sounds he is forced to hear, is captured by the sensors as the brain's electrical activity and is recorded.

A person's brain will react by emitting responses in the form of p-300 waves whenever any information is presented to him that relates to past knowledge or information about the activity or event in his brain. Further stimulus responses lasting up to 100 milliseconds have been seen. P-300 has a peak literacy of between 300 and 800 milliseconds in the midline partial region of the skull and is an electrically positive component. Using MERMER (Memory and Encoding Related Multifaceted Electroencephalograic Response),Dr. Farewell was able to evaluate the p-300 as well as a negative electrical component that is located at the midline of the forehead and has an asset latency of 800 to 1200 miles per second. The midline portion of the head is where the brain reacts when something is known to it. The MERMER apparatus records the response to the activity or occurrences. The test involves presenting a series of pertinent words, images, signs, boundaries, etc., and measuring the responses of the two different types of stimuli to determine whether the relevant material is known to the brain or not in order to obtain an electroencephalogram (EEG) from several locations on the scalp. The brain will release p-300 at a rate of 300 mile seconds if it is exposed to inputs that it has previously stored. The test does not need to provide an answer since their answers are captured as EEG signals. The device uses reactions from the Cognitive Brain rather than feelings to function. There is a significant distinction between brain fingerprinting and a polygraph.

Dr. Lawrence Farewell, a U.S. scientist, created the first brain fingerprinting instrument in the early 1970s. He asserts that the brain serves as the hub of all activity and directs both the planning of actions and their execution. The "Truth Detector" is built on how the brain works. Every experience is stored in the brain, and when a person is presented the same or a similar event, their brain responds, and their reaction is recorded using a computer.

Just the presence or absence of the individual at the scene of the incident may be determined by brain fingerprinting. Inferences cannot be made that he has committed the claimed crime; only his presence must be shown. For a justifiable motive, such as to save the victim, the individual may have arrived to the scene of the incident as a stranger. He may learn about the crime via reading the newspaper or watching television, among other sources of information. "Information present" does not necessarily imply guilt, according to Mr. A. A. Samdani, a former judge, and Mr. Sharique Rizvi, an associate professor at the Indian Institute of Information and Technology. It's conceivable that the individual saw the crime first-hand, read about it in a newspaper, or saw something on television that left an impression on him or her.

The test has restrictions of its own. As the test is administered by a person, it is probable that they may not accurately and completely evaluate the brain waves. Even an innocent person who has not committed the crime and has merely seen the victim's injuries would respond to stimuli. Similar to this, a person's knowledge of the crime may be stored in the brain owing to information disseminated in the media. In such situation, it is equally possible for the innocent to be deemed guilty. As a result, it is obvious that the patient is

innocent since this test utility simply serves to imprint the subject's brain. On the grounds that it violates people's right to their own mind, this method is also challenged. This results in the loss of theright to privacy of the person. This is also not helpful in cases of memory loss, such as when it affects an old person since they often memory loss. Similar to this, a person with memory loss might stop producing typical p-300 brain waves. The six-person committee, led by Dr. Nagraj, director of the National Institute of Mental Health and Neuro Sciences (NIMHANS), reached the conclusion that brain mapping is not scientific and should not be used as a tool of investigation. It also recommended that court systems ban the admission of evidence based on brain mapping. He said that the technique has to be thoroughly, methodically, and meticulously examined since it lacks established rules.

Admissibility Of Scientific Evidences Under Indian Constitution

The Indian Constitution is the result of extensive study and deliberation by a group of eminent representatives of the people who sought to improve the current administrative structure. The Indian Constitution's framers took into account our nations cultural and socioeconomic diversity as well as geographical requirements, historical antecedents, and other factors. So, it would be appropriate to examine and interpret each article of the Constitution in light of India's requirements. Articles 20 (3) and 21 of the Indian Constitution are relevant to this discussion. Article 20(3) of the Constitution lists the right against self-incrimination and stipulates that no one accused of a crime shall be forced to witness against himself. A right against cruel, inhuman, or degrading treatment has been added to Article 21, the Right to Life and Personal Liberty, by way of judicial expansion.

Article 20(3) Self-incrimination

Article 20(3) of the Indian Constitution discusses provisions pertaining to self-incrimination. It states that “No person accused of any crime should be required to testify against himself.” Nemo teneturprodereaccussareseipsum, which literally translates to “no one is obligated to accuse himself,” is the foundation for this phrase. According to the Indian Constitution, it is prohibited to make any statements that might subject the accused to criminal prosecution in the present or the future. The 5th Amendment of the United States Constitution, which forbids the government from compelling someone to submit any evidence that might be used against them, served as the model for this clause. Anybody with a formal charge lodged against them has access to this immunity.

Our Supreme Court interpreted the term “witness” to include both oral and documentary evidence that is likely to support a prosecution against him, expanding the reach of this protection, at least on the surface. Yet, such proof must take the form of communication. Also, same protection is offered in the case of coerced testimonials a person who made the remark while not being accused is not eligible to seek this protection. Therefore, it makes no difference if he is later charged. In situations when any kind of recovery is accomplished from a person's possession, whether it be an item or evidence, Article 20(3) is not applicable. Even if a general remark made by anybody during a routine inquiry or investigation is subsequently found to be incriminating, Article 20(3) would not apply since no formal charges have been brought against the accused.

“Narco-analysis evidence was not by coercion since the accused may be transported to the laboratory for such tests against his will, but the disclosure during such tests is totally voluntary,” the Bombay High Court decided in Dinesh Dalmia v. State of Maharashtra. On the basis of the “Minimal Bodily Damage Doctrine,” the Indian Courts seem to be attemptingto keep the application of Article 20(3) restricted. The Bombay High Court's ruling in Ramchandra Reddy and Others v. State of Maharashtra, which maintained the validity of the use of P300 or brain fingerprinting, lie detector tests, and the use of truth serum or narcotic analyses, is an example of this strategy. Another judgement that provokes consideration is Rojo Gorge v. State of Kerala, where the petitioner agreed to submit to polygraph and brain mapping tests but refused to submit to narco-analysis because he believed it was an unscientific procedure. J. Padmanabhan Nair, citing Kathi Kallu's legal arguments, rejected the petition.

Additionally, the right to a fair investigation is a fundamental right that should not be taken away from any victim, especially in a criminal case, so the medical examination of the accused is not prohibited by Article 20(3) even in the case of rape, where the prosecution must prove the accused's guilt beyond a reasonable doubt. In such a case, scientific evidence would be very helpful to the investigators in obtaining the truth from the accused and proving their guilt beyond a reasonable doubt.

Even though there is no specific statutory provision, J. Ranjana Prakash Desai noted in the case of Ritesh Sinha v. State of Uttar Pradesh that “Taking of voice sample of accused is not violative of Article 20(3), but interpretation of provisions of Prisoner's Act and Section 53 of Code of Criminal Procedure, showed that Magistrate has an ancillary or implied power to pass an order permitting taking of voice sample to aid the police in investigation.”

The Punjab and Haryana High Court similarly ruled that administering a DNA test to an accused person did not infringe Article 20(3). It is without doubt that any violation of the prohibition against testimonial coercion takes place if a court orders a person, male or female, to submit to a DNA test. The question is whether there should be any hesitation in subject an accused to narco-analysis, polygraph, and brain mapping tests given that these procedures would aid in effective investigations and inquiries by authorities. Courts can order an

accused to submit to DNA testing, to provide specimen signatures, hand, palm, and foot impressions.

The aim of Article 20(3) is to require the accused to make a statement. This should not be interpreted as requiring an accused person to take a test. The results or conclusion of a test cannot be foreseen in advance, therefore even if someone accused is made to take one, it would not fall within the definition of self-incrimination. As a consequence, these tests shouldn't be viewed as a violation of Article 20(3) but rather as effective investigative tools.

Article 21: Right To Life And Personal Liberty

The Constitution's core is seen as Article 21. 'No individual should be deprived of his life or personal liberty unless in accordance with the method prescribed by law," it states under Article 21 of the Indian Constitution. The definition of "person" under Article 21 is broad enough to include both Indian nationals and visitors from other countries. The aim of Article 21 is to safeguard and defend some fundamental human rights against governmental intervention. The Constitution's framers adopted and included basic rights in accordance with the American model.

Article 21 protects two rights: the right to life and the right to personal liberty. Both are a person's most valued belongings. In SiddharamSatlingappaMhetre v. State of Maharashtra, the Honourable Supreme Court noted correctly that the inner desire for freedom is a natural occurrence of every human. Each civilised state must uphold respect for life and liberty as a fundamental precondition. In the case of A.K. Gopalan v. State of Madras, which was decided shortly after India's Constitution went into effect, the Apex Court defined "personal liberty" as "an antithesis of bodily restriction or compulsion." Subsequently, in 1963, the Supreme Court defined personal liberty as the right of an individual to be free from limitations or intrusions on his person, whether they are directly imposed or indirectly brought about by calculated methods, by Justice Subba Rao. So, protection against the arbitrary deprivation of "life" would cover all of these components of existence that would contribute to making a man's life valuable and worthwhile, and would go beyond simple safety from death or bodily harm. All fundamental human rights are enumerated in Article 21 of Indian Constitution. The right to food, clothes, housing, and a suitable environment are all part of the concept of life, as are other rights such as the right to privacy and the right to live in a clean city.

This brilliant enlargement of the right to life and the right to personal liberty has confused the right to privacy. People often abuse this. It is a common defence for accusers to claim that their right to privacy has been violated. In Malak Singh v. State of Punjab, the petitioner claimed that the police had violated Article 21 by included his name in the surveillance registry. In Selvi v. State of Karnataka, the Supreme Court said that it was against Article 21 to subject an accused person to a lie detector test, brain mapping, or any other kind of examination without their consent. It is applicable under article 21 whether accused or victim has the same access to basic rights. Any of the approaches that are being contested are unlawful when used against a person in violation of Article 21's need for substantive due process.

The Supreme Court said in D.K. Basu v. State of West Bengal in 1997 that there was a need to create scientific methodologies and methods for investigating and interrogation suspects since torture and deaths in custody are nothing more than attacks on the rule of law. All three of these investigative techniques- nacroanalysis, brain mapping, and polygraph testing—are effective and scientific. The tragic reality of incarceration crimes is also evident in India, where the right to life is a basic freedom. The right to life, which includes the ability to live with dignity, is violated through incarceration rapes, executions, and torture. Many injuries were inflicted on suspects while they were being held captive in order to extract information about theft in hundreds of incidents of custody torture. The result of this the suspects would die. These tragic events are often reported in newspapers. Fundamental rights are violated by custodial crimes. It is more preferable to put an accused person through a scientific examination than to subject him to third-degree torture. These criteria are seen to be against Articles 20(3) and 21, even if they ought to be considered as supporting basic rights. Both the accused and the victim have a basic right to an expedited and fair trial. In fact, a slow trial cannot be considered reasonable, just, or fair and would violate Article 21. These scientific methods aid in a rapid and impartial trial. The notion of a fair trial and an impartial inquiry should not just be taken into account from the freedom or right of the accused; the victim and society are also affected when an investigation is compromised.

Conclusion

Many arguments have been made against narcotics analysis. The test's accuracy is not perfect. Narco analysis yields a 96% to 97% total screening rate, according to statistics. It has been called a third-degree approach of enquiry and unscientific. Narco analysis using deceptive tricks caused some individuals to make outright fraudulent claims in certain instances. If the person has a history of substance abuse or alcoholism, he or she will have a high tolerance level, a feigned state of semi-consciousness, and the ability to speak lie. It is quite challenging to provide a precise medicine dose for a specific person since it varies from person to person based on the mental attitude and physical make-up of the subject. It is stated that giving the individual the incorrect dose might result in death.

The results of a polygraph examination cannot determine whether a person is lying or not. Just the

physiological alterations that must be understood by an expert are shown by the results. The question is entirely based on deception and the examiner's knowledge and does not include any science. A person who has a strong grasp over their emotions may nevertheless be able to lie. For instance, if a person practises yoga or has other self-control techniques, they will undoubtedly fail this test. Many honest and innocent people may show signs of nervousness when being questioned by the police. This unease may result from a variety of factors, such as the dread of being charged with the crime or the worry that the authorities may learn about his or her prior behaviour that is unrelated to the current infraction. It might also be because the interrogator and examiner are prejudiced or because they are not sure how the polygraph works and are afraid the examiner will read the chart incorrectly. If the examiner believes the subject is guilty, he may read the chart in that way, and if he believes the subject is innocent, he may interpret the chart more liberally.

For many years, the brain has been the focus of attention for neuroscientists. The brain plays a crucial role in every human movement and keeps a record of everything we do, including criminal activity. This is why the brain has been the focal centre in the development of all lie-detection tools, including the polygraph, lie detection test, P300, brain fingerprinting, and narcotics analysis. The most recent method of monitoring cerebral activity after an item is displayed to a test subject or after the subject is exposed to external stimuli is known as brain fingerprinting.

The right against self-incrimination is violated even when the contested procedures are administered under duress. This is so that the dependability and voluntariness of claims that are allowed as evidence are guaranteed by the aforementioned right, which is its fundamental justification. Nonetheless, with the implementation of certain safeguards, there is room for the voluntary administration of the contested methods in the framework of criminal justice. According to section 27 of the Evidence Act of 1872, information or a significant fact that is retrieved with the aid of test results may be entered as evidence even when the test findings themselves cannot.

Sections 330 and 331 of the Indian Penal Code make it a crime to torture someone while they are in custody. Nevertheless, the reality on the ground is different; the number of fatalities committed in custody, including torture, is rising daily. Although there are various scientific procedures created in this century, the law's rules against custodial torture are not followed, and the age-old tactic of torture for getting confessions is still employed. The National Human Rights Commission (NHRC) recently released statistics showing that, in instances documented in the ten years leading up to September 2022, at least 19,514 deaths in police and court custody were reported, or roughly five per day on average. The NHRC documented 914 fatalities in detention in the first seven months of this year alone, 53 of which occurred while the person was in police custody. In India, the use of narcoanalysis, polygraph, and brain mapping tests may be employed to combat custodial deaths. These tests are being conducted by the investigative authorities in a number of high profile incidents. These scientific investigative methods have the potential to quickly replace third-degree physical torture in detention facilities. Development of scientific techniques of investigation and interrogation of suspects is necessary, as the Supreme Court correctly said in D.K. Basu v. State of West Bengal, since torture and deaths in custody are nothing more than attacks on the rule of law.

Notwithstanding the objections, the benefits of narcotic analysis, polygraph testing, and brain mapping include preventing the prosecution of innocent people and doing away with the third degree process in criminal investigations. Also, it has been used as a time-saving strategy in criminal proceedings with the assistance of qualified and experienced forensic professionals.

References

1. Sharma's BR. Forensic Science in Criminal Investigations and Trials, 5th Edition, Universal Law Publication, New Delhi, 2014.
2. Bakshi PM. The Constitution of India, 12th Edition, Universal Law Publication, New Delhi, 2013.
3. Forensic Guide for Crime Investigation, NICFS
4. https://www.indiaspend.com/5-deaths-in-police-judicial-custody-every-day-over-10-years-but-few-convictions/ dated 28/08/2020
5. National Human Rights Commission (NHRC) Reports Code of Criminal Procedure, Bare Act, Capital Law House, New Delhi, 1973.
6. Som Prakash vs. State of Delhi
7. Smt. Selvi vs. State of Karnataka
8. Ramchandra Reddy Vs. State of Maharashtra, Cr.W.P. (c) No. 1924 of 2003.
9. Dinesh Dalmia v. State of Maharashtra
10. SiddharamSatlingappaMhetre v. State of Maharashtra
11. Rojo Gorge v. State of Kerala
12. Malak Singh v. State of Punjab

Anju
B.A, LL.B, LL.M (M.D. University, Rohtak
Research Scholar, Faculty of Law, Sunrise University, Alwar (Raj.)
Email: panchalanju400@gmail.com,

110

Issue And Challengesregarding Environmental Problums In India

Sunita

Abstract

Environmental degradation in India has beencaused by a variety of social, economic, institutional and technologicalfactors. Rapidly growing population, urbanization and industrial activities haveall resulted in considerable deterioration in the quality and sustainability ofthe environment. Environmental ethics have also formed an inherent part ofIndian religious precepts and philosophy. Worship of nature - Sun, Moon, Earth,Air and Water - was not merely a primitive man's response to the fear of theunknown, but it arose from the deep reverence shown to the forces of naturewhich sustained and preserved human life on earth. The basic tenet thatunderlies this deep reverence for nature is the belief that life is a singular,continuous and uniform phenomenon and even a small change in one part of theeco-system is likely to reverberate throughout. Guru Nanak (Founder of the SikhReligion, 1469-1539), said 'Pawan Guru, Pani Pita Mata DhartMahat, DivisRaatDoiDaia, KheleSagal Jagat' (Air is like God, Water is father and Earth is themother. It is through the harmonious interaction of all these three vitalingredients that the whole universe is being sustained). The ancient Greeks, on the same reasoning, rvered the Earth as Gaia, the Earth Goddess.

In considering the role of the judiciary inenvironmental governance, there are two issues that need to be considered. Thefirst is the role the judiciary in the interpretation of environmental law andin law making and the second is the capability of jurists to effectivelyinterpret the increasingly cross-linked issues brought to their attention. Forthe judiciary, probably the burden of implementation is greater, as they mustnot only interpret laws that incorporate the Rio Principles of sustainabledevelopment, including the polluter pays principle, the precautionary principle,and the principle of continuous mandamus in the corpus of international andnational law; inter- and intra-generational equity; importance of traditionalvalues and ideas; interpretation of constitutional rights including the right tolife and the right to a healthy environment, etc., but also have to weigh theseagainst economic and political principles.

Keywords: environment, law, judicial, Supreme Court.

INTRODUCTION

For the development of society, environment is the most important key factor which is also a part of human living. We see around us that due to technological and industrialization the most negatively affected area is the environment in which we live. Many surveys reported that the purity has been lost in past 15 years and we are heading towards the black zone of climate. To make sustainable survival of not only human beings on this planet but also sustainable wild life we need to protect and save this environment. It is the social duty of each individual to protect and save this earth but we all in our own greed are forgetting the surroundings and remain engaged in wealth creation and accumulation.

So in this article we are highlighting the various laws which were framed in order to save and protect the environment. Indian judicial system has been continuously engaged in searching flaws and creating new laws for the protection of our environment. Government since past many years is making efforts to fulfill the demands of society. In the period of 1970s there were lot of changes introduced in policies and attitudes of the Indian Government and many steps were taken to improve environmental conditions.

INDIA & ENVIRONMENT

In India protection of environment is not a modern concept but has been prevalence from times immemorial. During ancient times man and environment were said to be inseparable. Environment includes everything on the earth in natural state. It majorly includes soil, stone, water, air, living creatures also. The concept of environment cannot be defined precisely. Environment means sum total of all conditions and influences that affects the development of life of all organisms. According to McLaughtin environmental pollution means introduction by man into any part of the environment, of wastes, water energy or energy or surplus energy which so changes the environment directly or indirectly adversely to affect the opportunity of men to use or enjoy it. Environmental pollution means the presence in the environment of any environmental pollutants. As per section 2 (b) of Environment (Protection) Act, 1986, environment pollution means any solid, liquid or gaseous substance present in such concentration as may be or tend to be injurious toenvironment. In other words it can be also stated as the unfavorable alteration of our surroundings. Environmental pollution is categorized as air pollution, water pollution, soil pollution etc. The environmental pollution caused due to industrialization, urbanization and due to natural calamities also. It is very derogatory for human life and all living beings.

Legislations Regarding Environment In India

The Department of Environment was established in India in 1980 to ensure a healthy environment for the country. In 1976, the central Government inserted a separate

fundamental duties chapter. In the year 1980, the Forest (Conservation) Act was passed for the conservation of forests and to check on further deforestation.

The Air (Prevention and Control of Pollution) Act of 1981 was enacted by invoking the Central Government's power under Art 253. Rules have been framed for the Hazardous Wastes (Management and Handling) Rules in 1989, the Biomedical Wastes (Management and Handling) Rules in 1998, Recycled Plastics (Manufacture and Usage) Rules 1999, Environment (Silting for Industrial Projects) Rules 1999 and the Municipal Solid Wastes (Management and Handling) Rules in 2000.

The water (prevention and control of pollution) act 1974 prohibits discharge of pollutants into water bodies beyond a given standard. The Air (Prevention And Control Of Pollution Act, 1981).

1986 The Environment (Protection) Act authorizes the central government to protect and improve environmental quality, control and reduce pollution from all sources, and prohibit or restrict the setting and /or operation of any industrial facility on environmental grounds.

1989 The objective of Hazardous Waste (Management and Handling) Rules is to control the generation, collection, treatment, import, storage, and handling of hazardous waste.

1991 The Public Liability Insurance Act and Rules and Amendment, 1992 was drawn up to provide for public liability insurance for the purpose of providing immediate relief to the persons affected by accident while handling any hazardous substance.

2000 The Municipal Solid Wastes (Management and Handling) Rules, apply to every municipal authority responsible for the collection, segregation, storage, transportation, processing, and disposal of municipal solid wastes.

2002 The Noise Pollution (Regulation and Control) (Amendment) Rules lay down such terms and conditions as are necessary to reduce noise pollution, permit use of loud speakers or public address systems during night hours (between 10:00 p.m. to 12:00 midnight) on or during any cultural or religious festive occasion.

The Indian Forest Act and Amendment, 1984, was enacted to 'consolidate the law related to forest, the transit of forest produce, and the duty livable on timber and other forest produce'. The Factories Act and Amendment in 1987 was the first to express concern for the working environment of the workers. The State's responsibility with regard to environmental protection has been laid down under Article 48-A of our Constitution, which states that "The State shall Endeavour toprotect and improve the environment and to safeguard the forests and wildlife of the country". Environmental protection is a fundamental duty of every citizen of this country under Article 51-A(g) of our Constitution which says that it shall be the duty of every citizen of India to protect and improve the natural environment including forests, lakes, rivers and wildlife and to have compassion for living creatures." Article 21 of the Constitution is a fundamental right which states that "No person shall be deprived of his life or personal liberty except according to procedure established by law." Living life in a clean, pure and safe environment is a fundamental right and this has been recognised by the Indian legal system and the judiciary. Everyone has the right to good life and a right standard of living adequate for health and wellbeing of himself and of his family members. Thus the right to life should be protected by law. The man has the fundamental right to freedom, equality and adequate conditions of life in a clean and pure environment which ensures the well-being of each individual.

Judicial Activism

Theterm judicial activism is used to refer to the 'extended arm of judiciary' orthe increasing active interest that the judiciary is taking in our everydaylife. This 'activism' on the part of the judiciary derives its constitutionallegitimacy from Art. 141 of the Constitution which lays down that the SupremeCourt's declaration of law is final and Art. 13 which empowers the judges todeclare any law null and void if it was found to be against the provisions ofPart III of the Constitution. Its areas of activity are widening such as PublicInterest Litigation, writ petitions under Art. 32, interpretation of Arts. 12,14, 19, 21 etc.

Different interpretations are being given to the termjudicial activism. Justice Kuldip Singh has said that the term judicial activismwas a misnomer as the judiciary was only doing what the Constitution hadenjoined upon it. P.P. Rao, a Supreme Court lawyer and a jurist felt that thebasic cause of judicial activism is the non-existence of effective government,whereas Rajeev Dhawan felt that activist judiciary was one which was dedicatedto mould the law and its interpretations to achieve social justice and rule oflaw aims of the Constitution. Meera Sapatnekar, on the other hand feels that theobject of the judiciary is to clear out all social, political and nationalmaladies of the country as the executive has failed to perform its duties andmade it necessary for the judiciary to intervene to give justice to the peopleand the nation. The Vice-President, Mohammad Hamid Ansari has attributed theover-activism of the judiciary mainly to the 'downward spiral' of the rule oflaw and malfunctioning of the institutions of the State, particularly theexecutive.

Governance, as we all know, is a decision making process,which has always existed since the dawn of human civilization. The role ofjudiciary lies in protecting the interest of individuals and others against themisuse of power by public authorities. Despite judicial review and PublicInterest Litigation, there is an erosion of public confidence in the systemitself due to lack of effective access to justice, huge

backlog of cases andlong delay in decisions.

"The keys to good governance, as articulated bythe United Nations Development Programmed, are rule of law, participation, andaccountability and transparency." The role of the judicial branch of governmentis critical in ensuring the implementation of the principles of both the rulesof law and accountability. Firstly, the functioning of a society according tothe rule of law is based on the judiciary. Secondly, the judiciary ensures theaccountability of other institutions of government and individuals.

In the case of environmental governance, the judiciary also has the difficult roleof considering not only environmental instruments, but also economic, developmental and political as well as social instruments. The compliance and enforcement of sustainable development instruments also serves in the promotion of synergies or inter-linkages among multiple issues, also known as theinter-linkages approach. This is because compliance and enforcement require scooperation and coherence in policies across multiple departments and branches of government.

On environmental law interpretation and law making, although most people would argue that judges are there merely to interpret legislation and not to make laws, several distinguished jurists have pointed out that the judiciary also contributes to defacto "law making" through precedents. On the capability of jurists, severalissues need attention, but one possible solution is the enhancement of theirawareness and knowledge of global and regional environmental issues viewed froma wider context of sustainable development. In the Johannesburg Principles, theglobal judiciary expressly recognized this fact and called on UNEP and otherorganizations within and outside the United Nations to actively support a majorcapacity building programmed for judges, prosecutors, enforcement officers andrepresentatives of civil society organizations that are engaged in safeguardingthe environmental rights of citizens.

References

1. Environmental Law in India by Gurdip Singh
2. Law and Environment by Ashok K. Jain
3. Global Environment Change and International Law by G. Singh
4. Environment Protection, Problems, Policies, Administration & Law by P. Diwan.
5. http://www.legalserviceindia.com/articles/evn.htm
6. http://www.legalservicesindia.com/article/article/environmental-laws-and-constitutional-provisions-in-india-19261.html
7. http://www.environmentallawsofindia.com/the constitution - of - india. html
8. http://edugreen.teri.res.in/explore/laws.htm

Sunita

B.A, LL.B (M.D. University, Rohtak)

Email: sunitaisharwal74@gmail.com,

A Study Of National Human Right Commission And Safeguard Under The Constitution Of India

Karamdeep

Abstract

Indian national human right commission (NHRC) was produce in 1993, as a response to increasing international awareness of human rights, once Indian entered the world arena. The international organisation Human Rights Commission adopted the "Paris Principles", a famous person of breakdown international human offer. For India it had been essential to secure international trade partnership and show compliance with world labour normal as well as a refusal to support unethical practices like child labour. Whereas right were enshrined within the Indian Constitution, it had been the dearth of a system to shield and safeguard against exploitation that created it necessary to support charities fighting for children's rights in India.

Keywords: human rights, NHRC, article, economic rights, social rights, cultural rights.

Introduction

On 10th Dec. 1948, UN adopted the Universal Declaration of Human Rights and subsequently adopted two more covenants (one on Economic, Social and Cultural Rights and Other on Civil and Political Rights) on 16th Dec 1966 and they came into force on 3rd Jan 1976 and 23rd march 1976 respectively. Both the covenants were binding on the rectifying states. Another major development occurred in Sep.1978 when Commission on Human Rights organized a seminar in Geneva where a set of guidelines were evolved regarding the functions of National Human Rights Institutions (NHRIs) these guidelines were endorsed by the UN General Assembly. It created a lot of pressure on the member state to constitute NHRIs.

The Human Rights Commissions Bill was introduced in the Lok Sabha on May 14, 1992. The Bill was referred to the Standing Committee of the Parliament on Home Affairs. However, urgency of the Commission arose in view of the pressure from the foreign countries and from the domestic front, the President of India on September 27, 1993, promulgated an Ordinance for the creation of a National Commission on Human Rights (NCHR) and Commissions at State level. After having made certain amendments, the protection of Human Rights Bill was passed by both the Houses of the Parliament to replace the Ordinance. The Bill became an Act after it received the assent of the President on January 8, 1994, which is known as the Protection of Human Rights Act. The purpose of the enactment is laid in the Preamble of the Act i.e., to provide for the constitution of a National Human Rights Commission, State Human Rights Commissions in States and Human Rights Court for better protection of Human Rights and for matters connected therewith or incidental thereto.

Constitution Of India And Human Rights

The important developments along with the adoption of Universal Declaration of Human Rights (1948), and prior establishment of Human Rights Commission in February 1946, which had been assigned the function of preparing, Inter-alia, an International Bill of Human Rights had started a movement for the promotion, and protection of Human Rights all over the world. India being an original member of the U.N. and member State which voted for the adoption of Universal Declaration of Human Rights on 10 December, 1948 could not be oblivious of all these developments yet the Constitution of India is conspicuous by its absence of the words 'Human Rights'. It is difficult to say whether this Commission was deliberate or just incidental.

The Indian Constitution bears the impact of the Universal Declaration of Human Rights and this has been recognized by the Supreme Court of India. While referring to the Fundamental Rights contained in Part III of the Constitution, Sikri, C.J., of unable to hold these provisions show that rights are not natural or inalienable rights. As a matter of fact, India was a party to the Universal Declaration of Right In addition, that Declaration describes some fundamental rights as inalienable.

In order to appreciate the concept of human rights under Indian Constitution, it is also pertinent to look to the aims and objects of the preamble, which are indeed the aims and objects of Indian Constitution. The preamble reflects the high purposes and noble objectives of the framers of the Constitution. The words of the preamble embody the hopes and aspirations of the people and capture and seek to reproduce the social, economic and political philosophy underlying the Constitution and running through the Warf and woof of the entire fabric. Through the preamble the people of India has resolved to secure to all citizens the following four objectives:-

1. Justice, Social, economic and political;
2. Liberty of thought, expression, belief, faith and worship;
3. Equality of status and opportunity, and to promote among them all;
4. Fraternity assuring the dignity of the individual and the unity and integrity of the Nation.

Specifically Enumerated Rights

Universal Declaration of Human Rights Indian Constitution

a) Right to Life, liberty and security of person (Art. 3) Article 21
b) Prohibition of Slavery, slavery trade etc. (Art. 4) Article 23

c) Equality before law and non-discrimination (Art. 7) Article14 and 15 (1)
d) Right to effective remedies (Art. 8) Article 32
e) Right against arbitrary arrest, detention etc. (Art. 9) Article 22
f) Right against ex-post factor Laws Art. 11(2) Article 20 (1)
g) Right to freedom of movement Art. 13(1) Article 10(1)-(d)
h) Right to own property and not to be deprived of property (Art. 17) (But it was omitted by the constitution (42 Amendment) Act, 1978) Article19 (1) (f)
i) Right to freedom of thought, conscience and Religion (Art. 18) Article 25 (1)
j) Right to freedom of opinion and expression (Art. 19) Article 19 (1) (a)
k) Right to freedom of peaceful assembly and Association Art. 20 (1) Article 19(1) (b)
l) Right to equal access to public service Art. 21(2) Article 16 (1)
m) Right to social security (Art. 22)
n) Article 29 (1)
o) Right to form and to join trade unions Art. 23 (4) Article (19(1) (c)

Rights Not Specifically Enumerated Or Other Rights

It would not be correct to contend that the above rights are the only rights incorporated in Indian Constitution. However, some rights, which do not find express mention in the Constitution, do exist. These are either subdued under the existing fundamental rights or have been held to emanate from the existing rights under the theory of emanation. Supreme court of India elaborating the meaning of expression; religion, dharma, religious education religious instruction and religious pluralism has highlighted the need of religion in Aruna Roy For example, it has been held that right to life and personal liberty enshrined in Article 21 of Constitution is of widest amplitude and several un-enumerated rights fall within Art. 21. These right are:

a) Right to go abroad;
b) Right to Privacy;
c) Right Again Solitary Confinement;
d) Right Against Bar Fetters1;
e) Right to free legal Aid in criminal trial
f) Right to Speedy Trial;
g) Right against Handcuffing;
h) Right Against delayed execution;
i) Right Against custodial violence;
j) Right against Public Hanging
k) Right to Health care or Doctor's assistance;
l) Right to shelter;

Other Rights which have been held to emanate from Article 21 are following

ü Right to know;
ü Right to compensation;
ü Right to Release and Rehabilitation of Bonded Labour;
ü Right Against Cruel and Unusual Punishment;
ü Right of Inmates of Protective Homes.

Economic, Social and Cultural Rights:

Universal Declaration of Human Rights Indian Constitution

a) Right to work, to free choice of employment, to just and favourable conditions of work etc. Art. 23 (1) Article 41
b) Right to equal pay for equal work Art. 23(2) Article 39(d)
c) Right to just and favorable remuneration Art. 23 (3) Article 43
d) Right to rest and leisure Art. 24 Article 43
e) Right of everyone to a standard of living adequate For his and his family Art.25(1) Article 47& 39(a)
f) Right of education and free education in the elementary and fundamental stages Art. 26(1) Article 41&45
g) Right to a proper social order (Art.28) Article 38

Functions Of Nhrc

The National Human Rights Commission in its 15 annual reports has shown deep concern over the increasing incidents of custodial deaths and torture in the criminal administration. The commission has continued to act with determination to end the terrible occurrences of custodial death, rape and torture that has hampered the order apparatus of our country. The commission has suggested several measures. The commission supported the insertion of section 114 B in Evidence Acts, as recommended by the Law Commission in its 113th report. Also, in section 197 of Code of Criminal Procedure, 1973, to relate the necessity of governmental sanction for the prosecution of a police officer where prima facie case has been established in an enquiry conducted by a Sessions Judge.

Role Of Nhrc

The National Human Rights Commission of India has played a very vital and important role in up keeping the faith of a common person in the criminal justice system of India.

DEATH IN POLICE CUSTODY

The commission observed that death in police custody is one of the worst kinds of crimes in a civilized society governed by the rule of law and poses a serious threat to an orderly civilized society. Torture in custody flouts the basic rights of the citizens and is an affront to human dignity. The National Police Commission in its 4th Report of June, 1980, noticed the prevalence of custodial torture and observed that nothing is "so dehumanizing" as the conduct of the police in practicing torture of any kind on the person in their custody, based on the following cases:

Ø Death of Sher Mohammad in police custody by torture: Uttar Pradesh
Ø Custodial death of Haji Mohammad Tent wala in police custody: Ahmadabad, Gujarat
Ø Illegal detention, torture and death of Shah Mohammad

in police custody and negligence on the part of doctors for not conducting a thorough post mortem: Madhya Pradesh

The National Human Rights Commission having been constituted under the 1993 Act for better protection of Human Rights and civil liberties of the citizen has not only the jurisdiction but also an obligation to grant relief in appropriate cases to the victims or the heirs, whose Right to Life under Article 21 of the Constitution has been flagrantly infringed by the State functionaries by calling upon the State to repair the damage done by its officers to the Human Rights of the citizens. The Hon'ble Supreme Court in the case of NeelbatiBehra v. State of Orissa, 1993, SCC 746, observed and ordered.

Death In Judicial Custody

When the death of the deceased takes place in the police custody, Commission issues a show-cause notice to the State government as to why an immediate interim relief under section 18 (3) of The Protection of Human Rights Act, 1993 be not granted to the next of the kin of the deceased. The Commission held that the State is vicariously liable for the death of the under trial prisoner and if the death of the deceased was due to the negligence on the part of the jail authorities, State had to pay a sum reasonable to the next of the kin of the deceased under section 18(3) of the Act. The following cases have been reported:

- Death of an under trial prisoner, Tachi Kaki: Arunachal Pradesh
- Custodial death of under trial prisoner, Harjinder, due to negligence: Uttar Pradesh
- Death of Sanjay Sharma in District jail, Mathura: Uttar Pradesh
- Death of Jasveer Singh in judicial custody due to negligence in providing timely medical aid: Uttar Pradesh

Juvenile Justice

The Juvenile Justice towards the prevention and treatment of juvenile delinquency and provides a framework for the protection, treatment and rehabilitation of children in the purview of the juvenile justice system.

Rights Of Juveniles

Condition of Child inmates in Juvenile Home, Meerut: Uttar Pradesh- The commission on 26th Sep. 2005 took suo-motu cognizance of a news item published in "Amar Ujala" on 21st September 2005, captioned "Massoomo k e Liye Kale se Kam Nahi Hai Jail". According to the news item, 59 child accused were taken to the Meerut court for appearances before the magistrate on 20 September 2005. The van carrying 59 children was parked in an open area outside the court premises under direct sun for five hours and the inmates were not givenfood and water. It is a serious issue about violation of Child Rights the Commission directed its investigation team to visit Govind Ashram located at Juvenile court Saket. The team inquired about the factual allegations contained in newspaper within two weeks.The Commission chairman has proposed a four-track strategy to deal with the situation. Beside special courts to be held inside jails, and wants the courts to release under trail on the personal surety bonds, in case of self-confessed first timers and petty offenders.

Conclusion

After going through the whole study in this segment, we find that the structure of the commission shows, it is a fully independent body and based on two conceptual pillars, i.e., autonomy and transparency. From the establishment of the NHRC, it played very important role to protect the Human Rights in the functions of Criminal Administration of Justice. After going through the cases decided by the NHRC mentioned in this segment we find that the commission many times took action on the various complaints by the affected person, on the information received from the state mechanism, took action on the demand of NGO's, conduct investigation on the direction of the Supreme Court and many a times took suo moto action on the News published in the various Newspapers. Therefore being a recommendatory and investigatory body, the recommendation of the commission are of great importance to the Government in order to make up its mind as to what legislative or administrative measures should be adopted to eradicate the evil found or to implement the beneficial object it has in view. The creation of NHRC in India can be an important mechanism to strengthen Human Rights protection but can never replace nor should it in any way diminish the safeguards inherent in comprehensive and effective legal structure enforced by an independent, impartial and accessible judiciary.

References

1. Saksena KP. Human rights and The Constitution-Vision and the Reality, 2003, 100-105.
2. Menka Gandhi V. Union of India, AIR SC, 1978, 597.
3. UNNI Krishnan v. State of A.P. SCC. 1993; (1):645.
4. Sunil Batra V. Delhi Adm. (1 1978 SC. 1675), Sher Singh v. State of Punjab, AIR SC, 1983.
5. From art. 21 Charles Shobraj v. Supp. Central Jail, 1979.
6. Hoskot v. State of Maharashtra AIR SC 1978 p. 1548. Hussain Arra v. Home secretary AIR SC 1979 p. 1369, Sukhdas v. arunachalPradesh, AIR SC 1986 p. 991.
7. State of HP. v. Raja Mahindra Pal, AIR SC, 1999,
8. Jved Ahmed V. State of Maharashtra, AIR SC. 1985
9. Sheela V. Union of India, AIR SC 1986, p1773.
10. AG of India V. LachmaDevi, AIR SC, 1985, p.467.
11. ParmanaandKatr V. Union of India SCC. 1989; (4):286.

Karamdeep
B.ALL.B, LL.M (M.D. University, Rohtak)
Email: karamdeepsinmar@gmail.com,

An Overall Study Of Unfair Trade Practices In India

Ishant Sharma

Abstract

Consumer means a person who buys goods for a consideration which has been paid or promised or partly paid or partly promised. Unfair trade practice means a trade practice, which for the purpose of promoting any sale, use or supply of any goods or services, adopts unfair method or deceptive practice. In India there are some authorities who deal in case of unfair trade practices; these are District forum established under section 10 of Consumer Protection Act, state commission under section 16 of Consumer Protection Act. Supreme Court of India also has appellate jurisdiction in cases of decision given by National Commission. Competition Commission of India is also doing a perfect job for the promoting of competition in India.

Keywords: consumer, consideration unfair trade practices, sale and buy, services, price, goods, deficiency etc.

Introduction

The contemporary world under the aegis of liberalization, freemarket and open trade has led to limitless industrial development turning the whole world into a global village-market. This has contributed to manifold linkages in the political, ideological, economic, social, health and industrial spheres whereby no nation, no community and no individual can remain an island by himself. The goals of Development for All, Wealth for All, Health for All, Clean Environment for All and Consumer Justice for All which were rather an Eldorado seem to become a near possibility in the twenty-first century.

The consumers are continually subjected to manipulate and non-manipulated unfair trade practices such as monopoly situation, cut-throat competition, sub-standard quality, misrepresentation etc. to garner benefits by extortious, illegal and immoral means detrimental to public interest in general and the consumer interest in particular. Consequently the notion of Consumer Sovereignty is merely a populist slogan having no or little bearing in the market place and the business world which is propelled by laissez fair overtones like demand-supply, profits, sub-standard quality, high price wherein the buyer is generally at the receiving end. Generally consumer means a person who buys any goods for a consideration which has been paid or promised or partly paid and partly promised. So buying of goods for consideration makes a person consumer. A wonderful significance of consumer is that age, competency, soundness of mind is not necessary. For example a minor cannot contract and contract by minor shall be void-ab-initio, but it does not mean a minor cannot be a consumer. An insane under treatment in mental hospital is a consumer.

For consumer it is not necessary that there must be buying of goods only, there may be services. Any person who hires or avails of any services for a consideration which has been paid or promised or partly paid and partly promised is also called consumer. The word consumer also includes association. But the consumer association can seek relief for the benefit of a consumer only on whose behalf it files a complaint and not for itself.

Consumer

The consumer is a person who pays for goods and services. A consumer plays very important role in economic system of a nation. Consumer uses economic services or commodities in an economic system. Without consumers demand producer would lack motivation key to produce. The consumer also forms part of the chain of distribution. If we will discuss the consumer in sense of law, the law interprets consumer in relation to consumer protection laws and definition of consumer is often restricted to living persons not to corporations and businesses and exclude commercial users. Consumer in respect of any particular goods or services, means: (a) A person to whom particular goods or services are marketed (b) A person who has entered into a transaction with a supplier in the ordinary course of the supplier's business (c) if the context so requires or permits, a user of those particular goods or a recipient or beneficiary of those particular services, irrespective of whether that user, recipient or beneficiary was a party to a transaction concerning the supply of those particular goods or services. According to section 2(d) of consumer protection act, consumer means a person who buys any goods for a consideration which has been paid or promised or partly paid and partly promised or under any system of deferred payment and includes any user of such goods other than the person who buys such goods.

Unfair Trade Practice

An unfair trade practice means a trade practice, which for the purpose of promoting any sale, use or supply of any goods or services, adopts unfair method or deceptive practice. Unfair trade practice can be categorized as under:

- Ø False representation
- Ø False offer of bargain price
- Ø Free gifts offers and prize schemes
- Ø Noncompliance of prescribed standards
- Ø Hoarding, destruction etc.

Legal Remedy

Remedy generally means a successful way of curing an illness or dealing with a problem or difficulty. Whereas legal remedy means a way of solving a problem or ordering someone to make a payment for harm or damage which has been caused by such person by court of law or to do something to correct or improve something that is wrong.

The absence of fair price, weak bargaining, lack of business ethic etc. the consumers for whom goods are produced become a usual casualty in the hub-bub of the market place. The lure of profits and incomes induces enterprises in collusive practices and behave in a way which is contrary to overall interests of the

consumers. Consequently a spate of consumer laws have been passed especially in the latter half of the twentieth century for consumer protection against adulteration of foods, drugs, cosmetics in regard to quality of consumer products, product safety, price warranty of goods and so forth fixing accountability and strict liability on the seller-cum-manufacturer rather than the consumer which has paved the way in the emergence of a new jurisprudence concerning consumer interests, claims and needs.The first ever international conference of leaders took place in The Hague on March, 1960. Five of the 17 organizations present signed papers to create the International Organizations of Consumer Unions (IOCU). The global consumer movement was born.

Meanwhile at the biennial conferences that IOCU organized, leaders spoke of a wider consumer agenda and particularly the need to address poverty, access to basic goods and services and the challenges faced by consumers in developing countries.

The early 1970s, a regional office was created in Asia, its advisory committee came from India, Singapore, Malaysia, Fiji and the Philippines, a very different stakeholder group from the founders of IOCU itself. Anwar fazal, head of the Asia Pacific Office, took IOCU into new ways of campaigning and advocacy. He targeted transnational corporations with specific campaigns and played a leading role in setting up issue based networks with partners from outside the consumer movement, including the international Baby Food Action Networks (IBFAN).

Un Guidelines On Consumer Protection

These methods and activities brought result. Among them, the seminal international document of the consumer Movement – the United Nations Guidelines on Consumer Protection was adopted by the UN in 1985 after 10 years of campaigning. This gave important legitimacy to the principles of consumer rights and practical support for developing national consumer protection legislation.

World Trade Organization

Advocacy began to focus on international trade negotiations, particularly those of the newly formed World Trade Organization (WTO). IOCU also increased its work at the International Organization for Standardization (ISO) and the codex Alimentatrius Commission (Food standards) as international standards became the reference point for disputes about artificial barriers to trade.

These developments in global governance made it increasingly difficult for individual countries to adopt national standards that were different from those agreed internationally.

Present Scenario

Today the founding principles of the movement still energies and inspire people and organizations. The focus has broadened to address poverty reduction, corporate responsibility, services and sustainable consumption as well as providing advice on consumer products. As the movement enters its second 50 years, its commitment to campaigning advocacy and engagement continues to grow.

The following are the General and special Laws and Practices for unfair trade practices

ü Removal of Defects – if after proper testing the product founds to be defective, then the 'remove its defects' order can be passed by the authority concern.

ü Replacement of goods – order can be passed to replace the defective product by a new one product of the same type.

ü Refund of price – order can be passed to refund the price paid by the complainant for the product.

ü Award of compensation – if because of the negligence of the deliverer goods suffer physical or any other loss, then compensation for that loss can also be demanded.

ü Removal of deficiency in service – if there is any deficiency in delivery of service, then orders can be passed to remove that deficiency. For instance, if an insurance company makes unnecessary delay in giving the claim then orders can be passed to immediately finalize the claim.

ü Discontinuance of unfair trade practice– if a complaint is filed against unfair trade practice then practice can be banned with immediate effect. For instance, if a gas company makes it compulsory for a consumer to buy gas stove with the gas connection, then this type of restrictive trade practice can be checked with immediate effect.

ü Stopping of Sale and withdrawal of Hazardous goods– The sale of products which can be hazardous for health and life, their sale can be stopped and such goods can be withdrawn from the market.

ü Payment of adequate cost–There is also a provision that the trader should pay adequate cost to the victim concerned.

ü Criminal laws– it is necessary to know that along with above remedies a consumer has also criminal remedies, and in case of forgery, cheating, mischief, misappropriation of goods, consumer aggrieved may approach to the proper authority for violation of his rights.

ü Civil laws– Sales of goods act, consumer protection act, and specific relief act also contain provisions regarding aggrieved consumer.

ü MRTP Act, 1969- The monopolistic and restrictive trade practices Act, 1969 was enacted to ensure that the operations of the economic system does not result in the concentration of economic power in hands of fews, to provide for the control of monopolies, to prohibit monopolistic and restrictive trade practices and regulation of unfair trade practices. MTP(monopolistic trade practice)- A monopolistic trade practice is that which represents abuse of market power in production and marketing of goods and services by eliminating potential competitors, charging unreasonably high prices, preventing or reducing competition, limiting technical development deteriorating product quality etc.

ü The Competition Act, 2002- This act was enacted by the Parliament of India and governs Indian competition law. It replaced the archaic the Monopolies and Restrictive Trade Practices Act, 1969. Under this legislation, the Competition Commission of India was established to prevent activities that have an adverse effect on competition in India. This act extends to whole of India except the State of Jammu and Kashmir. It is a tool to implement and enforce competition

policy and to prevent and punish anti-competitive business practices by firms in the market. A competition law is equally applicable on written as well as oral agreement, arrangements between the enterprises or persons. The Competition Act, 2002 was amended by the Competition (Amendment) Act, 2007 and again by the Competition (Amendment) Act, 2009.

Penalty

If any person fails to comply with the orders or directions of the Commission shall be punishable with fine which may extend to Rs.1 lakh for each day during which such noncompliance occurs, subject to a maximum of Rs.10 crore. If any person does not comply with the orders or directions issued, or fails to pay the fine imposed under this section, he shall be punishable with imprisonment for a term which will extend to three years, or with fine which may extend to Rs. 25 crores or with both.

Pla (permanent Lok Adalat)

The word Lok Adalat means people's court. It is strictly not a court in the conventional sense because Lok adalat at cannot adjudicate on facts by application of law. It is a forum where dispute between the parties are resolved by conciliation and participation. Lok Adalat is one of the most important components of the ADR System operating in India. Criminal courts and civil courts have also jurisdiction in the matter of unfair trade practices to some extent.

Conclusion

From the above discussion it is clear that consumers are continually subjected to manipulate and non-manipulate unfair trade such as monopoly situations cut throat competition, substandard quality, misrepresentation etc. Wonderful significance of consumer is that age, competency, soundness of mind is not necessary. The word consumer also includes associations. On the other hand unfair trade practices means adopting unfair method or deceptive practice for the promotion of sale or use or supply of any goods or services. It includes false representation false offer of bargain price, free gifts offers and prize schemes noncompliance of prescribed standards etc. There are some legal remedies are available in India for unfair trade practices. These are removal of defects, replacement of goods, refund of price, award of compensation, removal of deficiency in service, discontinuation of unfair trade practice, stopping of sale and withdrawal of hazardous goods, payment of adequate cost etc. Beside these remedies The Competition Commission of Act, 2002 and Consumer protection Act, 1986 play a vital role in protection of consumer rights in case of unfair trade practices in India.

References

1. Agarwal VK. Consumer Protection Law and Practice. 5th Ed., New Delhi: B.L.H. Publisher Distributors Pvt. Ltd., 2009.
2. Bhangia RK. A Handbook of Consumer Protection (Laws and Procedures). New Delhi: Pioneer Publications, 2002.
3. Das BK. Consumer protection act, 1986. (Second Revised) 1999.
4. Dewan VK. Consumer Protection Digest. 1992.
5. Tewari OP, Company. Consumer Protection Act, 1986. Allahabad, 1996.
6. 1 Sec. 2(d) Consumer Protection Act, 1986
7. MahoriBibee v. Dharmodasghosh. 1903; 30:539.
8. Tamil Nadu housing board colony associations v. Tamil Nadu housing board and anr. 2006(3):278
9. Consumer education & research society v. Canara bank. 1992 (a), 174.
10. http://www.advocatekhoj.com/library/lawareas/tradepractices

Ishant Sharma
B.A.,LL.B (Kurukshetra University)
Email: sharmaishant1995@gmail.com,

AN OVERVIEW OF LAW RELATING TO BAIL IN INDIA: JUDICIAL AND LEGISLATIVE TRENDS

Dimpal

Abstract

As with every other area of law, the institution of bail has its own philosophy, which must be understood in all of its developmental phases. Although the bail system is now the norm in civilised culture, it was almost unimaginable in ancient times and even in uncivilised societies. Bail is unquestionably a crucial component of the criminal justice system's administration and a crucial area of procedural law. Criminal trials were completed in a day or two during the ancient era since criminal justice was so swift and the crime rate was so low. That is why society was unaware of the availability of bail. As time went on, criminal trials dragged on and on, and a fundamental rule of law emerged: A person cannot be found guilty until their guilt has not been established. According to the guiding principle, it is unfair to detain someone behind bars on the grounds that his guilt will probably be established after the end of a trial. The idea of bail came into existence in order to protect a person from police detention, which may last for a longer amount of time due to the fact that delayed justice has become a common occurrence in our criminal justice system.

"Bail is a security given for due appearance of prisoner in order to obtain this release from imprisonment; a temporary release of a prisoner upon security; one who provides bail". Wharton's Law Lexicon defines bail in the following manner: "To set at liberty a person arrested or imprisoned, on security being taken for his appearance on a day and at a place certain, which security is called bail, because the person arrested or imprisoned is delivered into the hands of those who bind themselves or become bail for his due appearance when required in order that he may be safely protected from prison to which if they have, if they fear his escape, etc, the legal power to deliver him". Stroud's Judicial Dictionary defined "bail" as follows"

"Bail is when a man is taken or arrested for felony, suspicion of felony, indicated of felony or any such case, so that he is restrained of his liberty. And being by law bailable offereth surety to those which have authority to bail him, which sureties are bound for him to the king's use in a certain sum of money, or body for body, that he shall appear before the justice of Gaole delivery at the next sessions, etc." In Concise Oxford Dictionary and Chamber's 20th Century Dictionary, the meaning of the world "bail" has been explained as a sum of money paid by or for a person who is accused of wrong doing, as security that he will appear at his trial, until which time he is allowed to be free.

Etymologically the world "bail" has been derived from the French old verb "bail" or having meaning of "to deliver" or "togive". Another view is that the world is derived from the Latin term "Bajalure" which means, to bear burden". Hon'ble Mr. Justice M.R. Malick, in this book "Bail" has deducted the meaning of Bail as a technique evolved for effecting a synthesis of two basic concepts of human values, namely, the right of an accused to enjoy his personal freedom and the public interest on which a person's release in conditioned on the surety to produce the accused person in court to stand the trial. The concept of bail denotes a form of pre-trial release or removal of restrictive and punitive consequences of pre-trial detention of an accused. Corpus Juris Secundum defines bail as a means to deliver an arrested person to his sureties, on their giving security for his appearance at the time and place designated, to submit to the jurisdiction and judgment of the court.

Halsbury's Laws of England defined it - "Bail in criminal proceedings means bail granted in or in connection with proceedings for an offence to a person accused or convicted of the of The word "bail" has, nowhere, been defined in Code of Criminal Procedure. The old and the new Code have defined the expression "bailable" and "non-bailable offences" in section 4(1)(b) and section 2(a) respectively Bailable offence has been defined to mean an offence which is made bailable by any law for the time being in force; and the expression "non bailable" to mean any offence other than bailable.

The main object of bail is to remove the restrictive and punitive consequences of pretrial detention of the accused which is made by delivering the accused to the custody of a third party(s) i.e. surety by way of furnishing of surety bonds or to one's own self by ray of execution of personal bond only. Bail may be ordered to be allowed with appropriate conditions covering three different type of situations:

a) Where the custody is deemed to be safe with the accused himself,
b) Where it is delivered to the surety, and
c) Where it may be given to the state for safe custody.

The institution of bail has been made to keep the accused available to answer the charge and in order to perform this function, the institution of bail has been made to deliver the accused to safe custody in aforesaid manner, but in all cases accused is assured of beneficial enjoyment of freedom in regulated manner. Bail, a vital aspect of every criminal justice system, is a mechanism, which should seek to strike a balance between these competing demands. While presence of an accused person for trail must be ensured and any threat to the administration of justice and just social order warded off, he

should not be disabled to continue with his life activities. Custodial remands are also financially burdensome for theState, both in terms of the detention places, which have to be provided, and because the constant escorting of the accused to and fro from court eats into the resources of the prison staff. Further, detention in jail may have a deleterious effect on pretrial detainees because of the possibility of their developing delinquent tendencies.

Law of bail is one of the important braches of the legal regime, which governs the criminal justice system of any country. 'Bail or jail' constitutes an enigmatic question in the judicial decision-making process, of everyday occurrence and importance, The question of bail-jail alternatives needs to be answered at the stages of arrest, investigation inquiry and trail and also at the stage of appeal after conviction of the accused. The jurisprudence of bail should equilibrate the 'freedom of person' and the 'interests of social order'. The 'golden principle' of presumption of innocence is of central importance, governing all stages of the criminal process until a verdict of guilty is reached. The law of bail has to be compatible with the principle of presumption of innocence. Any person held in custody pending trial suffers the same restrictions on his liberty as one serving a sentence of imprisonment after conviction. By keeping accused persons out of custody until tried convicted and sentenced, bail should protect against the negation or dilution of the presumption of innocence. The quality of bail hearing by courts must improve in that full information about the accused's background should be taken into consideration, besides what the police submit. Schemes should be developed to has certain and verify the relevant information Courts must think more deeply and give reasons while refusing an application for grant of bail for the cost of pretrial detention is very high. Greater care must be taken in dealing with matters concerning bail.

Bail should be treated a basic human and not refused mechanically. If need be, conditions of hail may be stringent, but its refusal must rare. Pretrial detainees may not be punished, but pretrial detention itself, unless justified by overwhelming necessity cannot realistically be viewed as other than a form of punishment. Precious human rights of under trail prisoners should not he held hostage to inadequacies of our legal system and various kinds of delays in our criminal justice administration system. Fleeing justice has to he forbidden and escape can he considered a separate crime, but denial of bail should neither be punitive nor 'preventive detention incomplete through, it becomes difficult to rationalize the exercise of discretion one way or the other in a particular case. Personal liberty is deprived when bail is refused, is too precious a value of our Constitutional system recognized under Article 21 that the crucial power to negate it is a great trust exercisable, not casually but judicially, with lively concern for the cost to the individual and the community. To glamorize impressionistic orders as discretionary may, on occasions, make a litigative gamble decisive of a fundamental right.

After all, personal liberty of an accused or convict is fundamental one, suffering lawful eclipse which is possible only, in terms of procedure established by law." So deprivation of personal freedom, ephemeral or enduring, must be founded on the most serious considerations, relevant to welfare objectives of society, specified in the Constitution. Reasonable ness postulates intelligent care and predicates that deprivation of freedom by refusal of bail is not for punitive purpose but for bifocal interests of justice to the individual involved and society affected. Like any other Constitution of a civilized country, Article 21 of our Constitution provides:

No person shall be deprived of his life or personal liberty except according to procedure established by law." So what if in millions of cases, people are routinely being deprived of their personal liberty with “no bail but jail” in the absence of expedited triails and years after KRISHNA IYER, J., having raised the the questions of "Bail or Jail?" in his oft-quoted words.

Article of 22 of Constitution of India provides:

1. No person who is arrested shall be detained in custody without being informed, as soon as do not may he, of the grounds for such arrest nor shall be denied the right to consult, and to be defended by, a legal practitioner of his choice.
2. Every person who is arrested and detained in custody shall he produced before the nearest magistrate within a period of twenty-four hours of such arrest excluding the time necessary for the journey from the place of arrest to the court of the magistrate and no such person shall be detained in custody beyond the said period without the authority of a magistrate.
3. Nothing in clauses (1) and (2) shall apply
   a. To any person who for the time being is an enemy alien or
   b. To any person who is arrested or detained under any law providing for preventive detention.

It is also recognized in the English Law and American Constitutions. VIth Article of American Constitution provided that in all criminal prosecutions the accused shall enjoy the right to a speedy and public trial by an impartial jury of the State and District wherein the crime shall have been committed which district shall have been previously ascertained by law and to be informed of the nature and cause of accusation. To concept of bail in England may be traced back to the system of frank pledges adopted in England following Norman Conquest where the community as a whole was required to pledge its property as a security for the appearance of the accused at the trial. The concept of community's liability was later on replaced by the system of third person responsibility and there still remained the capacity

of the accused to remain free till the conclusion of trial by furnishing security.

Thus, under the Common Law of England, the system of interim release pending trial was prevalent, and the sureties had to be bound to produce the accused to face the trial on his failure to appear or to face the trial in his place. It was subsequently replaced by the issue of forfeiture of bond and surety and imposition of penalty upon the surety for failure to bring the accused to trial on the appointed date. With the advent of British Rule in India, the common Law rule of bail was introduced in India as well and got statute recognition in Codes of Criminal Procedure, 1861 1872 and 1898. The system of bail was also in use to some extent in the ancient period in India and to avoid pre-trial detention, Kautilva'sArthasastra also advocated speedy criminal trial. The bail system was also prevalent in the form of Muchalaka i.e. personal bond and zamanat i.e. personal bond and Zamanat i.e. bail in Mugal period. After independence, the Law Commission of India in its 41st Report on Code of. Criminal Procedure also recommended the system of bail in the light of personal liberty guaranteed in theConstitution and recognized the bail as a matter of right if the offence is bailable and matter of discretion if the offence is non-bailable, denial of power to Magistrate to grant bail if the offence is punishable with life imprisonment, death and conferring wide discretionary power on High Court and Sessions Judge to grant in such cases.

Reference

1. Webster's 7th New Judicial Dictionary.
2. Stroud's Judicial Dictionary, 5th edition.
3. Kamalapati v. State of West Bengal, AIR 1979 SC 777.
4. Babu Singh v. State of U.P., AIR 1978 sc 527 (529).
5. Indian Constitution.

Dimpal
BCA, MCA, LL.B(M.D.University Rohtak)
Email: 47dimpikapil@gmail.com,

114

Redefining Self through Autobiography

Dr Shalini Sharma

Abstract

1960s was an important decade. It was the time when Civil Rights Movement was at its peak and the Feminist Movement blossomed but both these movements could not reach the black women. Their opinions were overshadowed by male leaders of Civil Rights Movement. The sexism of the Civil Rights Movement and the racism of Feminist Movement led to their separation and promoted a desire to develop organizations which would address issues pertaining to black women. Black women have experienced this intersection of racial and gender oppression throughout the plight of African Americans, from post slavery oppression until modern day inequality disputes. Women began questioning dominance and began to articulate their own concerns. For this they chose the medium of writing. How they redefine themselves by articulating their concerns through writing autobiographies is the main theme of this paper.

Keywords: Civil Rights Movement, Feminist Movement, Autobiography, Images.

1960s was an important decade. It was the time when Civil Rights Movement was at its peak and the Feminist Movement blossomed but both these movements could not reach the black women. Their issues in political organizations were not paid due attention. They found that many civil rights and Black Power organizations were unwilling to take up issues that were central to the lived experiences of black women (curb forced sterilization, access to contraception, legal abortion, domestic violence, safe and well-paid job opportunities for black domestics, etc.). Many women found that sexism was rampant throughout many of the more traditional civil rights organizations, as well as the Black Power organizations. At this stage they turned to Women's organizations. During 1960s the Feminist movement also blossomed which defied issues based on gender. However black women remained marginalized within the feminist movement also. Their issues remained unheeded, unheard and unaddressed here as well and they remained invisible. They realized that in a racist and sexist society to be 'black' was to be a black man and to be a 'woman' was to be a white woman. It appeared that to be 'black' and 'female' were mutually exclusive. This invisibility led them to separate themselves from this movement and they established organizations meant for the welfare of black women, black women literary traditions and developed black feminist aesthetic tradition/consciousness. Black feminism became popular in response to the sexism of the Civil Right Movement and racism of the Feminist Movement leading them to write books like All the Women Are White, All the Blacks Are Men, But Some of Us Are Brave (1982). At this moment some women began questioning male dominance. They began to articulate their own concerns. This was one of the main reasons as to why women turned to writing to unveil their new image which emerged in the wake of Civil Rights Movement through their creative expression. So, women's writing in America evolved out of the socio-cultural context prevailing in the 1960s and 1970s. Their works took up issues of inequality and double oppression of race and gender. Many African-American women writers expressed themselves in the novel, short stories and autobiographies. The decade began with the work of Maya Angelou's I Know Why the Caged Bird Sings (1969), Tony Morrison's The Bluest Eye (1970), Alice Walker's The Third Life of Grange Copeland (1970) and it ended with Wallace's Black Macho and the Myth of Superwoman (1979) and Mary Helen Washington's Midnight Birds (1980). In the early literature, Black women particularly have been presented in a negative image as fat mammies, submissive, always cooking and cleaning, corpulent and seductive temptresses. Black feminist critics Barbara Christian and Elizabeth Fox-Genovese have brought out this fact in their works that how difficult it was to handle challenges of being black in a society which devalues one on the basis of the color of one's skin and which binds a person in stereotypical images on the basis of race and gender. Even very renowned black male writers like Ralph Ellison, Richard Wright and James Baldwin and others have portrayed the women characters in such a manner as if their lives are not worthy of emulation. They seem to live for others, for black men or white, for parents, for family or for their children bereft of an autonomous self. Throughout this decade there can be noted a subtle distancing of the African-American women writers from their male counterparts particularly in defining their beings in their own way. Mary Helen Washington, in her introduction to The Midnight Birds (1980) celebrates the fact that the works of these writers represent “an open revolt against the ideologies and attitudes that impress Black women into servitude” (xv). At this stage Black women writers took it as their responsibility to correct those images imprinted in everybody's mind. The pertinent concern of the black women writers has been to voice their experiences and defy the negative stereotypes of African American women. In spite of considerable change in the political, social and economic conditions that generated these images, these stereotypical images play a key role in the victimization of the African American women maintaining the seamless web of race, class and gender oppression. These negative and perpetuated

images not only deprive the black women of basic humanity but also block the victims psychologically by propagating easy generalizations about them. It is generally considered that African American women's identities have been limited by four major stereotypes in their representations. One prominent image that emerged during the slavery and reconstruction period was that of the 'mammy', a fat, nurturing, religious kind, always ready to serve and demanding very little. In fact this mammy image acts as a foil to the fragile white woman incapable of lighting her own fire and even rearing her own children. Mammy Jane in Charles W. Chestnutt's The Marrow of Tradition (1901), Dilsey in Faulkner's The Sound and the Fury (1929), Granny Huggs in Kristen Hunter's God Bless the Child (1964) and Pauline Breedlove in Morrison's The Bluest Eye (1970) are some such mammies.

The second major stereotype is that of the powerful 'matriarch' within the African American family. By the nineteenth century, the African American woman enjoyed a unique position of dominance within her own family, partially due to the existing welfare system and the difficulty of the men in finding necessary employment to support their families. When the men shirked familial responsibility, the African American women were forced to exhibit strength under the most hostile conditions, but even this image of resilience was potentially derogatory. It is this image that condemned black woman as the emasculator of black man. This image turned the victim to criminal and her strength became her shame. The African-American woman's financial contribution to the well-being of the family has been responsible for a role reversal. These women were the sole support of their families and hence were labeled matriarchs. The third stereotypical image is that of the 'welfare queen'. This derogatory term refers to the black women who are lazy, content to sit around and collect welfare by fair means or foul. The fourth stigmatizing label is that of 'Jezebel' or a sexually aggressive woman. By labeling her so, the southern white patriarchy presented a model that was antithetical to the ideals of white femininity. Winthrop Jordan, a professor of history and renowned writer on the history of slavery and the origins of racism in the United States in his work White Over Black: American Attitudes toward the Negro, 1550-1812 (1968) notices, “For calling the Negro woman passionate, they (white planters) were offering the best possible justification for their own passion” (102). In the racist society of the United States black people are not recognized for what they really are. Their bones, fiber and minds are invisible to many whites. Whites do not see them as full human beings with talents, distinctive accomplishments and virtues. They are denied a place in the social-order. Even African- American men who made their mark as scholars and thinkers did not bother to alter the traditional images of these women in the national psyche.

To dispose of these exaggerated, negative and false images of them and to create their own self-image, black women writers preferred Autobiography as a genre. They took it upon themselves to correct those negative images by writing the stories of their lives. They recognized the value of autobiography in the sense that it gives first hand invaluable information throwing light on the culture and community which they belong to. They started penning down their own stories in such a way as to create their own identities rather than those created by white writers or even black male writers. Actually writing of autobiography places the power into the hands of the writer to define who he/she is and share his/her self-identity with the readers. This is the initiation of the changing societal view of black women. Autobiography permits the writer to think deeply about his/her life and to develop a positive self-identity.

If seen historically, autobiography has been a longstanding practice in the history of mankind and in the narrative tradition of Black America it holds a position of preeminence. Black writers have always made efforts to examine themselves and to give voice to those experiences which are uniquely their own. By using the literary genre of 'autobiography' Blacks celebrate those unique experiences. These autobiographies were written with an objective to bring to the forefront the compelling realities of the plantation workers, the wretched condition in which they lived so that everybody could feel the whips and in a way could become witness to the brutality and violence of the slave system and were consciously designed to inform and educate black men and women of their miserable condition and to raise their voices for a more just system. In spite of being ignored by critics and scholars until recently, autobiography has always been one of the forums blacks have utilized to present and share their views.

Critics spot certain common characteristics as the initial instance of resistance to the existing system, struggle for education and a physical movement between various geographical regions. Stephen Butterfield asserts that Black autobiography is both a bid for freedom and a medium of communication to the world what the Blacks have suffered at the hands of the Whites. By using words, these Black narrators endeavored to regain banished humanity, their culture, integrity and character and ultimately their identity. These authors or narrators were quite aware of their responsibility and through their works they helped the reader to look into what the white writers and critics have consciously left out of the picture (of America's national life) and how their critical judgment towards Afro-American people, their language and culture has remained limited. Hence this African-American autobiographical tradition is a reactionary stance, the result of racial, social and economic exclusion.

Autobiography, therefore, is not simply jotting down on paper the pleasures of reminiscences or an interesting set of

experiences, it has a function and scope far beyond. A good autobiography presents a new stage in self-knowledge and formulates a new responsibility towards the self. It presents a change of attitude through mental exploration. Self-knowledge thus becomes a primary motive of writing autobiography. During this process of writing autobiography writers relate the sordid details of their past not for the sake of titillating their audience, but only in relating these events can the writer and his readers arrive at a meaningful assessment of who he/she is in the present. Thus the main task of autobiography is to present the individual facing the obstacles created by the society in one's way and the journey of an individual in overcoming these obstacles. These writings not only offer a fresh perspective but also enrich and update the cultural stories for the generations to come. It is only through the autobiographical statement that we come to understand how and in what manner the Afro-American person evolved.

Works cited

Butterfield, Stephen. Black Autobiography in America. Amherst: The University of Massachusetts Press, 1974. Print.

Collins, Patricia Hill. Black Feminist Thought: Knowledge, Consciousness and the Politics of Empowerment. New York: Routledge, 1990. Print.

Evans, Mari, ed. Black Women Writers (1950-1980): A Critical Evaluation. Jackson, MS: University Press of Mississippi, 1984. Print.

Fox–Genovese, Elizabeth. "To Write Myself: The Autobiographical Writings of African-American Women." Feminist Issues in Literary Scholarship. Ed. Shari Benstock. Bloomington: Indiana University Press, 1987. 161-80. Print.

Hine, Darlene Clark. Hine Sight: Black Women and the Reconstruction of American History. Brooklyn, New York: Carlson Publishing, 1994. Print.

Jordan, Winthrop. White Over Black: American Attitudes Towards the Negro. Chapel Hill: University of North Carolina Press, 1987. Print.

Washington, Mary Helen. Introduction. The Midnight Birds: Stories of Contemporary Black Women Writers. By Alice Walker and Ntozake Shange. Ed. Mary Helen Washington. Garden City, New York: Anchor, 1980. i- xxx. Print.

Dr Shalini Sharma
Associate Professor of English
SJK College Kalanaur
Shalinisjk07@gmail.com

Technological Approach Towards Physical Education And Sports Sciences: Advancement And Trends

Dr. Surjit Kaur Neema

Abstract

Advanced generation has grow to be smaller, greater resilient, and much less burdensome over latest years, paving the manner for brand spanking new opportunities, in particular in athletics. Now athletes put on sensors that carry actual-time facts to a teacher's tablet, GPS appropriately pinpoints motion, smartphones preserve all and sundry cutting-edge and wearable tech can save you accidents. Wearable gadgets in sports measuring a few bodily or physiological amount of an character have already come to be part of every day existence for plenty humans. While such easy gadgets output specially the statistical values of measured portions or matter activities, needs in game are greater stringent. Quantities of hobby should be measured in wider variety, with extra precision, and with better sampling frequency. We present a brief creation to motor gaining knowledge of in game and its desires for era back-up. We gift homes and obstacles of diverse sensors used for game pastime sign acquisition, way of verbal exchange, and homes and obstacles of verbal exchange channels. We shed a few mild at the evaluation of diverse components of game pastime sign and facts processing. We present timing, spatial, and computational electricity constraints of processing. Attention is given additionally to the kingdom of the artwork facts processing strategies together with gadget gaining knowledge of and facts mining. In end we present a few technological tendencies and demanding situations in sports, together with Internet of Things, clever game system, and actual-time biofeedback structures and packages.

Keywords: Wearable gadgets, Sports, physiological, sensors, technological tendencies.

Introduction

The technology used in the game is growing very quickly; the modern era has homes and capabilities that were most easily imagined a few years ago. Internally, for example, the movement of a gymnast should be analyzed in a positive element most easily with video recordings, while talented gymnasts can wear their uniforms with motion sensors that authenticate their movements. Such structures can provide a comprehensive assessment of their movement in three-dimensional space based on a kinematic version of the athlete. Similar examples can be found in various sports. Today, cheaper toys and fun tracking devices have been launched. Devices with armbands provide statistical parameters and selected body time substance functions. For example, they count the steps taken during the day, can detect falls, sleep quality, etc. Typically, such devices collect the movements or physiological techniques of the consumer at a low frequency and with a random accuracy quite suitable. for his purpose from the date of transfer. The gaming era, on the other hand, is given away by complex and expensive structures that collect and process huge amounts of facts at the same time. For example, a machine for real-time football fitness monitoring and school attendance assessment. Most of the era packs in the game are somewhere in the aforementioned groups. According to sports experts, next to the exercise itself, the biggest determining variable in relation to the acquisition of knowledge is the comments. During training, natural (natural) notes are transmitted internally through the human sense organs. Extended notes are provided with the help of an external source, historically teachers and coaches. A modern technical system can help each speaker and teacher by providing additional parallel notes on facts that are not available through traditional reporting methods. Acquisition of movement information is critical to any technique for studying body function; from walking to ballet. This statement is suitable for all athletes or sports institutions: recreational, novice or experienced. Technology is already a gift, or available in a sense, in all areas of the game. In this article, we identify the main technologically important structures that help to obtain multiple motor information. Many sports activities are done with a special system. Sports Science is an interdisciplinary field (ie exercise physiology, biomechanics, movement control and movement development, sports psychology, sports nutrition, etc.) that focuses on understanding and improving sports performance. Sports science can be thought of as the use of a scientific process to guide the practice of sports with the ultimate goal of improving athletic performance. It's about using the best available evidence at the right time, in the right environment and for the right person to improve performance. To achieve at least some of these goals, the results of well-designed studies must be used and transferred into everyday practice.

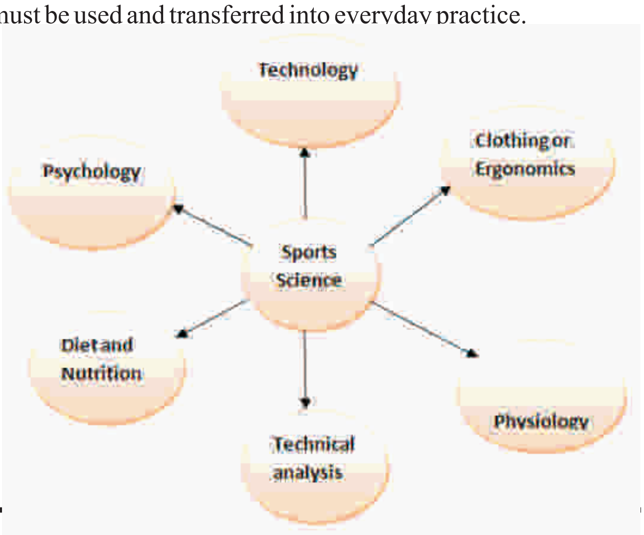

Fig-1 Factors of Sports science

Signals and facts processing in recreation comments structures degrees from tremendously simple to extraordinarily stressful and time consuming. The processing wishes on one hand and the processing abilities however depend upon quite a number of things and situations: time of processing, region of processing, processing complexity, to be had processing electricity, to be had battery capacity, etc. Time of processing relies upon at the kind of comments. If the comments is concurrent, given for the duration of the motion, the processing ought to be done in actual time. If the comments is terminal, given after the motion is completed, then the device can manage to pay for to do the whole lot in post-processing.

Review of literature

The National Science Foundation (NSF) identifies the developments of HCC studies as "a 3 dimensional area comprising human, laptop, and environment." The NSF describes the human measurement as studies that helps person needs, via groups as goal-orientated groups, to society as an unstructured series of related human beings (NSF, 2016). HCC is centered on know-how how computational technology have an effect on society and the way to cause them to extra usable (University of Florida, 2016). This description of the human measurement is akin to the athlete improvement literacies described via way of means of Laboratory for Athletes and Athletic Development and Research (LAADR) withinside the regions of recreation overall performance, lifestyles for the duration of sports activities, and lifestyles after sports activities. Placing the athletes on the middle of layout lets in for technological answers to be evolved especially for the athlete.

Aim of the study:

The specific aim of this scholarly qualitative study was to explore the impact of modern technology on sports performance.

Methodology:

A thorough on-line and offline search procedure was applied for the acquisition of evidence in this systematic qualitative study. A critical analysis of the literature was systematically searched through online databases: PubMed, Google Scholar, and Google Advance Search.

Drone technology utilized in sports:

The unmanned drone era with an embedded digital digicam facilitates to take super snap shots and motion pictures from height. A Drone is simply, in easy phrases, a flying robot. This plane is normally managed from a specialisedfar flung control, and with the assist of shrewd software program can tune all matters withinside the air. Many athletes (runners, basketball gamers, skiers, climbers, etc.) are the usage of drones to reveal their practise to peer whether or not any adjustments may be created. A moderate development in non-public fine time for the competitor will take off seconds or smash a 2nd. Nowadays a sports activities occasion has been greater real and realistic to air. The predominant benefit of the usage of drones or unmanned plane in critical global sports activities is their being capable of get in the direction of global athletes. Drone will seize and compare a sincerely visible exercise consultation in diverse athletic sports after the consultation is finished.While drones have had a protracted records in navy deployment, their anincreasing number of sizable use in non-navy roles calls for consideration (e.g., Hodgkinson and Johnston, 2018). Though modern-day utilization is restrained even as the era is withinside the improvement phase, as they own massive ability versatility drones may also rework the manner that logistics offerings are provided. Their use no question will cause the fulfillment of recent business, social, environmental and different goals (Atwater, 2015).

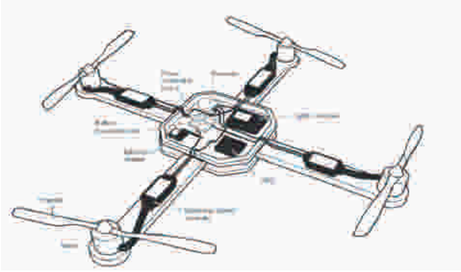

Fig-2 Drone Technology

Snick-o-Meter:

The Snick-o meter detects whether or not a snort has occurred. The click when the cricket ball hits the bat is a beautiful sound. This is expressed in the sound waves of the captured sound. There is often confusion as to whether or not the ball touched the bat or the batsman's equipment. Among the dominant techniques are Rock et al. investigated the use of wavelets for edge detection in cricket signals. Wavelet-based features were extracted and trained using an artificial neural network (ANN) system. An ANN classifier is trained to distinguish different classes from each other. The system was 97.5 percent accurate on raw test data. Rock et al. Improved the efficiency of the class system by focusing on their interest in finding descriptions of waveforms for a quick laugh. In addition, they mainly used time domain-based completely superior order statistical properties, such as skewness and kurtosis, and were able to obtain a hundred percent class reward based on the raw checkout statistics.

Modern track and field events using technology:

Track and discipline varies from maximum different disciplines, as it's miles measured in meters and seconds simplest. Within tune, a fragment of a 2nd could make all of the difference. Which is why the system which tracks tune and discipline race information must be as dependable as particular as practicable. An digital beginning pistol is any

other innovation used to enhance tune occasion startups. In addition, whilst the runner begins, they'll observe their development the usage of Radio-Frequency Identification (RFID) chips. These chips are so precious that during trendy they have got come to be popular. RFID chips can be bandaged to shoes to reveal the pace, distance and sample of a runner.

Aerodynamics:

While without a doubt any game will be used to demonstrate this new function of high-tech tennis, fencing, swimming, golf, and cycling – is a superb example. In the twenty first century, global-elegance tennis gamers (and their coaches and trainers) could have a clean understanding of the legal guidelines of aerodynamics in an effort to absolutely draw close the game and obtain a bonus over opponents . Therefore whilst engineer broaden technological gadgets for sports activities they have got to research the real aerodynamics of the respective video games and sports activities.

Integrated technology (IT):

Integrated era (IT), is consists of accelerometers, international positioning structures (GPSs), and coronary heart price monitoring, has been often used withinside the public fitness sector. More recently, IT records has been used to evaluate education and overall performance needs in sports activities settings. Integrated technology will result in important adjustments withinside the regions of fieldbased aggressive sports activities planning, conditioning and rehabilitation. Technologies like CAD (Computer-aided design) can play an critical function in enhancing sports activities system. Other technology consisting of "smart" system may be used for overall performance assessments. Examples of "smart" era improvements consist of structures used for exercising depth evaluation and cardio size, human reaction time and interest meter size, and structures with leaping and going for walks characteristics. On the opposite hand in cricket sport warm Spot era could be very correct and is the appropriate device for studying a raider's touches in Kabaddi action. Hot Spot era, even though reportedly extraordinarily correct, isn't used withinside the Kabaddi game to date. Previous researchers argued that a aggregate of GPS-accelerometer size technology and accompanying video facts that offer extra perception into the dedication and categorization of sustained effect forces and accelerations in the course of the normal and sundry Super 15 Rugby Union match-play touch elements.

The concept that athletes have the capability to compete in opposition to every different on an identical foundation is an critical a part of all game. We see withinside the information all-maximum weekly approximately wearing scandals in which pinnacle athletes are accused of cheating. Because remedy and era are advancing so rapid sports activities governing our bodies aren't capable of preserve up with the brand new strategies of education and rehabilitation to create standards. Because there are such a lot of approaches that athletes can benefit a bonus it creates a massive hassle withinside the wearing global.

Conclusion:

Advanced generation has grow to be smaller, greater resilient, and much less burdensome over latest years, paving the manner for brand spanking new opportunities, in particular in athletics. Now athletes put on sensors that carry actual-time facts to a teacher's tablet, GPS appropriately pinpoints motion, smartphones preserve all and sundry cutting-edge and wearable tech can save you accidents. Compared to whiteboards and post-exercise reviews, generation has significantly improved athletic potential. Technology is revolutionizing sports activities schooling through stay-monitoring performances, perfecting athletic actions, improving conversation and genuinely casting off accidents. Using sensors positioned at the frame or in "clever clothing" (energetic put on with sensing fibers woven in), sports activities running shoes can degree and music overall performance in actual time.

Reference

1. Balmer N, Pleasence P, Nevill A. Evolution and revolution: gauging the impact of technological and technical innovation on Olympic performance. *J Sports Sci.* 2011;30:1075–1083.
2. Haake S. The impact of technology on sporting performance in Olympic sports. *J Sports Sci.* 2009;27:1421–1431.
3. Foster L, James D, Haake S. Influence of full body swimsuits on competitive performance. *Procedia Eng.* 2012;34:712–717.
4. Omoregie P. The effect of era on game overall performance, accra, Ghana. 2016, 896-905. 2. Roy T, Roy D, De A. Modern Technology and Health Risk Factors: A Pedagogical Emergent for Social Wellbeing. Int J Curr Trends Sci Technol. 2017; 7:20192-6.
5. Fuss FK, Subic A, Mehta R. The effect of era on game — new frontiers. Sports Technol. 2008; 1:1-2. https://doi.org/10.1080/19346182.2008.9648443.
6. Murison M. What Happens When Drones Get Involved in Professional Sports? – DRONELIFE, 2017. https://dronelife.com/2017/02/08/drones-sports activities/ (accessed February 1, 2020).
7. Kingsley D. How Have New Technologies Improved Athletic Performances? | Articles | Analytics 2020. https://channels.theinnovationenterprise. com/articles/2 2 9 -how-have-new-technology-improved-athletic performances

Dr. Surjit Kaur Neema

Associate Professor Physical Education & Sports

Vaish Mahavidyalay Jhajjar Road

Rohtak

Haryana

Issuesand challenges in Inclusive Education

Dr. Manoj Rani

Abstract

: Inclusive education plays a significant role in achieving the aim of education for all as it seeks to address the learning needs of all children specially focussing on those persons who are vulnerable to marginalization and exclusion. No doubt the ideology of inclusive education issupported by a large number of policies and programmes from time to time. But still there are various challenges that come in the way of making inclusive education successful. The present paper throws light on various issues and challenges in inclusive education. It also gives various suggestionsto deal with those issues and challenges that come in the way of making inclusive education successful.

Keywords: Inclusive education, issuesand challenges, suggestions

Introduction: Education of children with disabilities has come a long way, i.e., from special education to integrated education, and from integrated education to inclusive education that focusses on imparting education to children with disabilities irrespective of their physical, intellectual, emotionalormentalconditioninregularclassroomdesignedforc hildrenwithoutdisabilities(Kugelmass,2004) by providing least restrictive environment to children with special needs. Article 21-A in sertedin the constitution by the Eighty-sixth Amendment Act, 2002 makes provision for free and compulsory education of all children in the age group of six to fourteen years as a Fundamental Right in such a manner as the State may, by law, determine. So as per this article, it is the responsibility of the state to provide information, knowledge and skills to all the children belonging to the age group six to fourteen years so that they can be prepared to contribute to the society.

Inclusive education is helpful in achieving the aim of Education for All (Dakar Framework for Action,2000) as it seeks to address the learning needs of all children specially focussing on those persons who are vulnerable to marginalization and exclusion. The ideology of inclusion is supported by anumber of policies and programmes from time to time. Kothari Commission (1964-66) stressed the need of the education f children with special needs. In inclusive classrooms, children of all abilitylevels are treated and taught as equals; curriculum is modified; teachers adapt and modify theirteaching methods as per the abilities and needs of all types of students so that they can bebenefittedandthereby preventingthewastageofresources.

Policies and Programmes: Kothari commission emphasised on the education of children with specialneeds. The National Policy on Education (1968) also followed the recommendations of KothariCommission and gave suggestions regarding integrated education to integrate children withdisabilities in regular schools. In 1974, the scheme of Integrated Education for Disabled children waslaunchedwhichlaidstressontheenrolmentof children with specialneeds inregularschools.

Keeping in view the objective of Education for All, and the purpose of integration of persons with disabilities in the community as equal members, the Government of India introduced a scheme known as integrated Education for Disabled Children in 1974. This programme was initiated by the Ministry of Welfare, Central Government. Under this programme, financial support regarding books, uniform, special aids is to be provided to children with disabilities. For the state wise effective implementation of this programme in regular schools, fifty percent of the financial assistance was provided to the State Governments. But the programme could not be implemented successfully because of various limitations like lack of trained teachers, non-availability of special equipment sandaids, lack of coordination among various departments.

In 1992, the IEDC Programme was revised and for its implementation, hundred percent assistance is given to those schools who integrate the children with disabilities in the regular educational system.

Various NGOs are also working in this field and they are fully funded for its effective implementation. Now IEDCis implemented in almost all the states and Union Territories."

National Policy on Education, 1986 states,"wherever possible, mildly and modestly hand icapped children should beeducated along with non-handicapped children ingeneral schools."

According to World Declaration Education for All and Framework for Action to Meet Basic Learning Needs(Jometian, Thailand 5-9 March, 1990), "Every person- child, youth and adult- shall be able tobenefit from educational opportunities designed to meet their basic learning needs." The Declaration sets the process of Education for All and encourages the whole world to make education accessible to all automatically including children with disabilities.

New Education Policy, 2020 has introduced the concept of "Special Educators" especially for children with Disabilities.Such teacher sare expected to possess not only subject-teaching knowledge but also the relevant skills for understanding the special requirements of children. Assistive devices andappropriate technologies should be provided to schools to teach children with disabilities. SocialJustice and Empowerment Minister Thawarchand Gehlot said, "Barrier-free access for all childrenwith disabilities will be enabled as per the RPWD Act." In the series of tweets, he said, " Knowledge of how to teach children with specific disabilities will be an integral part of all teacher education programmes."

Issues and Challenges

In spite of all these programmes and policies, there still exists a

big gap between the ideal situation and the present reality regarding the implementation of inclusive education. Moreover, the regular schools with inclusive set up also face various challenges regarding inclusive education.

UNESCO (2009) pointed out that funding is a major constraint to the implementation of inclusion. Funds are required for the practice of inclusion. In regular schools, huge in frastructural changes are required to accommodate children with disabilities. There is need for assistive devices and learn in gaids to teach them effectively. But these requirements can not be fulfilled without adequate funding. Another challenge that we face inour Indian conditions is the large size of the class.

Generally the normal size of the class includes 50 to 60 students that makes it difficult for a teacher to pay individual attention to the students. Moreover, teachers in regular schools are not adequately trained to teach children with disabilities. In India, there is lack of adequate teacher training programmes.

According to UNESCO,"The greatest barriers to inclusion are caused by society not by medical impairments." The general attitude of society, local community, school authorities and even parents is not positive regarding inclusive education. They think that the children with special needs cannot cope with normal children in regular schools. According to the 2019 "State of the Education Report for India: Children with Disabilities" released by the UNESCO, a large number of children with disabilities do not go to regular schools but are enrolled at the National Institute of Open Schooling(NIOS). It further states that three-fourths of the children with disabilities at the age of five years and one - fourth between 5-19 years do not go to any educational institution. As per this report, there are fewer girls with disabilities in schools than boys with disabilities in schools.

Suggestions

- In order to make inclusive education, there is need to generate more funds so that infrastructural changes can be made.
- In educational institutions, there should be provisions for assistive devices and learning aids to teach children with disabilities.
- There is need to clear the backlog. More teachers should be appointed to improve pupil teacher ratio so that it become possible to pay individual attention to the students
- Provisions should be made for the pre-service and in-service training of the teachers.

Conclusion

To sum up, we can say that the implementation of inclusive education is essential to achieve the goal of education for all. But there are various challenges in the successful implementation of inclusive education. For this purpose, there is need to generate more funds to bring modification in the infrastructure and to make arrangement for assistive devices. Provisions should be made for the in-service and pre-service training for teachers. In order to improve pupil-teacher ratio, there is need to clear the backlog.

References

1. Ainscow, M. (1999). Understanding the development of inclusive schools. Falmer.
2. Banga, C. L. (2015). Inclusive Education in the Indian Context, International Multidisciplinary e-Journal, 4(3), p. 67-74.
3. Miles, S. &Singal, N. (in press). The Education for All and Inclusive Education debate: Conflict, Contradiction or Opportunity? International Journal of Inclusive Education.
4. Oppertti, R. (2004). Education for All (EFA) & Inclusive Education: A Renewed Discussion
5. Peters,S. J. (2007). "Education forall"A Historical analysis of international inclusive education policy and individuals with disabilities, Journal of disability policy studies, 18 (2), 98-108.
6. Singh, J. D. (2016). INCLUSIVE EDUCATION IN INDIA – CONCEPT, NEED AND CHALLENGES, Scholarly Research Journal of Social Science and Humanities, 3(13), p. 3222-3232
7. UNESCO. (1990) World Declaration on Education for All. Paris: UNESCO.

Dr. Manoj Rani
Assistant Professor
M.L.R.S. College of
Education, Ch. Dadri
E-mail: ranimanoj4@gmail.com
Contact no.: 9992091269

Rights and Protection of Women under family laws

Aayush

Abstract

Marriage is the social instrument in India, which requires a woman to leave their parental home and shift to her matrimonial home with their husband. In India, marriage doesn't happen only between two people but also between their families. Marriage is an affirmance of civilized social order where two people are capable of entering into wedlock.

Once a woman is married, she is supposed to leave her in-laws' house when it's her final rites." This line is usually used in daily soaps, advertisements, dramas, and movies to represent the unwavering loyalty and love of an Indian woman towards her husband and in-laws. This marriage creates an obligation upon the husband and his family to provide shelter, care and protection to the wife and also to incur expenses towards her well-being which is her right within the legal framework. Not only this, there are various legal rights available to women under different legal provisions.The only motive of all these rights is that they provide dignity and safety to the women.

Introduction

Women rights are basic human rights claimed for women and girls all over the world. It was enshrined by the United Nations around 70 years ago for every human on the earth. It includes many things which range from equal pay to right to education. The essay on women rights will take us through this in detail for a better understanding. Indian culture gives women the utmost respect. Many of our gods are female and they have been worshipped as a deity by many faithful people.

The goddess of wealth is Laxmi, the goddess of power and strength is Durga and the goddess of wisdom is Saraswati. Women are the epitome of wealth and power. Women play an important role in society and Women rights are very important for everyone all over the world. It does not just benefit her but every member of society. When women get equal rights, the world can progress together with everyone playing an essential role.

If there weren't any women rights, women wouldn't have been allowed to do something . Further, it is a game-changer for those women who suffer from gender discrimination.

Women rights are important as it gives women the opportunity to get an education and earn in life. It makes them independent which is essential for every woman on earth. Thus, we must all make sure that women rights are implemented everywhere. Few examples are:

Gender Inequality

According to the provisions listed under the Equal Remuneration Act, one cannot be discriminated on the basis of sex when it comes to salary, pay or wages.Working women have the right to draw an equal salary, as compared to men.

Domestic Violence

As divorce is still a taboo in Indian society many women are suffering from abusive marriages. As they are not empowered, they fear to stand up for their right. If we want to empower women then domestic violence has to be stopped at any cost. *Section 498* of the Indian Constitution looks to protect a wife, female live-in partner or a woman living in a household like a mother or a sister from domestic violence (including verbal, economic, emotional and sexual) by the hands of a husband, male live-in partner or relatives.The accused shall be punished with a non-bailable imprisonment for a term which may extend to three years and shall also be liable to fine.

Economic Independence

As females were given poor education or no education they are not able to get good jobs. Thus either they have to stay at home or do lesser paid jobs. Hence, the male always remains the bread earner of the family. So the women hardly get economic independence..

Women have right not to be arrested at night

Unless there is an exceptional case on the orders of a first class magistrate, a woman cannot be arrested after sunset and before sunrise.

Women have the right against being stalked

Section 354D of the IPC makes way for legal action to be taken against an offender if he/she follows a woman, tries to contact her to foster personal interaction repeatedly despite a clear indication of disinterest; or monitor the use by a woman of the internet, email or any other form of electronic communication.

Rights as provided to the married women under Indian Laws:

Right to Live in a Matrimonial Home: Matrimonial home is where women have the right to live with their husband after marriage. Even if the home is not owned by the husband, she still has the right to shelter in that home. Even a widow has a right to shelter. Under *Section 17 and 19* of the Domestic Violence Act, a wife/widow has the right in a "shared household" and the court can order for her reinstatement in the house, if she is thrown out.

Right to Maintenance: It is a legal obligation of the husband to provide maintenance to his wife. In case, the husband fails to provide maintenance to his wife, the wife can approach the court for maintenance. Even a working wife is entitled to maintenance, in cases where the husband is earning more than the wife and the wife is not able to maintain herself and the children from her income. It is provided *under section 24,25* of Hindu Marriage Act and under *section 18* of Hindu Adoption

and Maintenance Act of 1956. A special provision under *section 125* of Indian Penal Code has been provided exclusively for all women irrespective of their religion. In**PurusottamMahakud v. Smt. Annapurna Mahakud**, Supreme Court held that the right to claim interim maintenance in a suit is a substantive right under section 18 of the Act. Since no form is prescribed to enforce the said right civil court in exercise of its inherent power can grant interim maintenance. In **Raj Kishore Mishra v. Smt. Meena Mishra**, Court held that the obligation of father-in-law shall not be enforceable if he has no means to maintain his daughter-in-law from any coparcenary property in his possession out of which the daughter-in-law has not obtained any share. The object of this Section is to make it clear that the widowed daughter-in-law can claim maintenance from her father-in-law only where she is unable to maintain herself out of her own property or from the estate of her husband, father, mother, son or daughter. It is also provided that the father-in-law shall be under no obligation to maintain his daughter-in-law except in cases where there is some ancestral property in his possession from which the daughter-in-law has not obtained any share..

Women right to custody and guardianship over her children: In case the dispute arises between the spouses and both of them decide to live separately, in such a case, both of them can claim right to custody of the child. Women as the primary caretaker, are entitled to have custody and guardianship of their children. While deciding the issue of custody, the Courts apply the best interest of the child which is the paramount principle.

The issue of constitutional validity of provision of law (Section 6 (a) of HMGA, 1956 and a parallel provision Section 19(b) in GWA, 1986) giving a secondary position to mother came before the Supreme court as violation of Articles 14 and 15 of the Constitution in **Githa Hariharan v. Reserve Bank of India** and in **Vandana Shiva v. Bandhopadhyaya** [(1992) 2 SCC 228] wherein the court delivered a common judgment. The court observed that " the word 'after' father, on a cursory reading does give an impression that the mother can be considered as a natural guardian only after the life time of the father… It is a well settled principle of interpretation that if on one construction a given statute will become unconstitutional and on another construction, it is constitutional, the court will prefer the latter on the ground that the parliament would not have intended to ignore the fundamental right which prohibits gender discrimination…The word 'after' need not necessarily mean 'after the lifetime' but it means 'in the absence of'. Where father is absent from the care of the minor or wholly indifferent to the minor's interests or the father is physically unable to take care because of his living away or due to his mental incapacity or the father consents for mother to act as guardian may be the various situations when mother will be considered as guardian even during the lifetime of father." The court said that the decision is only an expansion of the principle set out by the Bench in **Jijabai's** case. The apex court also gave direction to the RBI to formulate suitable methodology to the effect that mother to be recognized as equal guardian to father.

Right of a woman as a Non-custodial Parent: In case the custody of the child is given to the other spouse i.e., the husband, the woman can avail the benefit of visitation rights and stay during school vacations.

Right to order of Protection from Domestic Violence: In case, the women face threat of violence from either husband or other family members, the women can ask for protection and restraining them from committing domestic violence on her. In case, she still fears that the husband can commit assault or mischief with her in a public place, she can approach court for issuing "stop order"(injunction) under Section 18 of the Act. Further she can claim following also:

Right to live in Same House ,Right to claim Maintenance, Right to Custody and Right to claim Compensation

Right over Stridhan: The word "Stridhan' has been derived from the words 'Stri' meaning a woman and the word 'dhana' means property. Therefore on combining these two words we get 'property of woman' her 'Stridhan'. Any kind of movable and immovable property such as cash, ornaments, deposits, investments, receivables and immovable property in any form may constitute Stridhan. In the case of **Pratibha Rani V. Suraj Kumar** the Hon'ble Supreme Court enlisted the following to constitute Stridhan Gifts made before the nuptial fire, Gifts made at the bridal procession, i.e. while the bride is being led from her residence of her parents to that of her husband., Gifts made in token of love, that is, those made by her father-in-law and mother-in-law and those made at the time of the bride making obeisance at the feet of elders, Gifts made by the father of the bride, Gifts made by the mother of the bride, Gifts made by the brother of the bride.

Protection against Dowry Harassment: The woman has a right to protection in the case of dowry harassment. Section 2 of the Dowry Prohibition Act (DPA), 1961 defines 'dowry' as any cash, jewelry, valuables, or property which the husband or his family members demand from the bride's parents at the time of marriage, as a consideration of marriage. Asking for dowry is a punishable offence under the Act and the person can be fined for Rs.15, 000/- or equal to the value of the dowry demanded or paid. Either the woman or her parents can file a complaint against the person and even a case under Section 304B of Indian Penal Code, 1860 can be registered for "Dowry Death".

Protection against Cruelty by Husband or Family Members: Cruelty is a serious offence and has been defined under section 498A of the Indian Penal Code, 1860 as any kind of harassment for dowry or causing physical or mental harassment either by the husband or his relatives, which causes harm to life, limb or sanity of women. The offence is cognizable in nature, as it demands arrest without warrant and

the person can be punished for causing cruelty upto a term which may extend to three years.

Hindu Women's Right to Property

The view adopted by the judicial committee of the Privy Council led to the concept of Stridhan evolving into the Hindu women's limited estate, this limited estate lead to the foundation of rule that there are two types of property, which a woman can own

Stridhan: Stridhan was also recognized as a woman's estate; the woman has the complete right over it, and has the right of alienation over it.

Woman's Limited Estate: She didn't have the right to alienate this share of the property, usually, this property was obtained in the partition of the deceased husband's share in coparcenary property or property inherited by a woman from the father's estate, there was no unanimity as to the character of the women's property inherited from the father, there was a conflict among different schools, some considered it as Stridhan and some considered it as women's estate. However, all the schools unanimously agreed that property obtained by the widow from the deceased husband's share is a woman's estate.

Hindu Women's Right to Property Act, 1937

The reforms introduced by legislature in the concept of coparcenary, under Hindu Women's Right to Property Act, 1937 for the betterment of women did more damage to the property rights of the women than improving it

Though the women were not allowed to become a coparcener, they were allowed to inherit the position of the deceased husband, thus the operation of the coparcenary was postponed till her death. The Act gave those powers to the women which previously were only available to the males, such as the right to demand partition.

Hindu Succession Act, 1956

After the independence of India, the personal laws of Hindus went under a radical change, one of those laws was the Hindu Succession Act, 1956. It was the first uniform law in the matters of inheritance under Hindus as it applied to both the schools Mitakshara and Dayabhaga, and also to the parts of southern India that were previously governed by a matriarchal system of Hindu law.

The Act of 1956 did not only gave the women the right to inherit the property from a male heir, and ended the restriction placed by ancient Hindu law, but also cleared the position by ending the concept of women's estate, and helped in enlarging the concept of stridhan, which now included both moveable and immoveable property. The legislation introduced the right of Hindu women to inherit property as in the same lines of male heirs; Section 6 of the Act laid that by the death of a member of coparcenary, the property devolves upon the mother, widow, and daughter, along with the son in the same share by testamentary or intestate succession and not by the rule of survivorship. Inheritance by the rule of survivorship was not allowed if there were female heirs.

Daughters as Coparcener: The Hindu Succession (Amendment) Act, 2005

By the effect of the 2005 amendment women was given the power to become Karta of the joint family property, prior to the amendment which was only limited to the male heirs, due to this women become able to enjoy the property fully, whether she inherited it from her parents or her in-laws. Further, because of the amendment devolution of the property by the rule of survivorship has been stopped, it would only operate if she died intestate leaving behind no children. If she died intestate then her share was given to her child, which was decided by the concept of notional partition.

After the enactment of the amendment the question arose before the court whether the amendment is retrospective or prospective, after more than a decade long discussion and many case laws the question was answered for the final time by the Supreme Court in the **year 2020** after detailed reasoning in the case of **Veeneta Sharma vs. Rakesh Sharma**the court said that amended Section 6 of the Act confers the status of a coparcener to the daughter born before or after the commencement of the amendment in the same manners as the son, and the rights can also be claimed by a daughter born before 9.9.2005, to the partition, alienation, or disposition which has taken place before 20th December 2004.

Conclusion

This research paper discusses about the women's legal rights in India which blossom after marriage, the contention that laws are slightly tilted towards women can not be denied. It is so because rules for married women in Indian society often include leaving behind a woman's own identity when she becomes a wife. However, if not anyone else then a woman should take her own stand and empower herself for all the right reasons.

Aayush
(LL.B. Panjab University Chandigarh)
E-mail: aayushsingh581@gmail.com

A STUDY OF TERRORISM AND HUMAN RIGHTS

118

Sandeep

Abstract

Terrorism and human rights cannot co-exist they are mutually destruct each other. Where there is terrorism there is not human rights, where there are no human rights, there can be no respect for human dignity, life and democratic values. Terrorism not only affects the human rights of many but also hinders the resolution and settlement of disputes and conflicts by civil methods. The problem of terrorism transcends all frontiers whether national, international, political or economic. Its solution calls for a global efforts, international co-operation and trans-national actions. Terrorism is a serious world problem not because of sheer amount of violence involved but because it constitute a threat to innocent life and right. Terrorism is a voluntary action to terrorize innocent people. It is a according to dictionary meaning a use of violence and threat of violence, especially for political purpose.

Terrorism has no caste, creed region or religion. It has global dimensions, the international terror is aided protected and financed by a no. of gouts who safe havens for terrorists and false passports, With technological advancement a whole range of small portable and easy to operate weapons are coming into the possession of the terrorist groups, The refinement of personal weapons is also taking place.

The 20th century witnessed great changes in the use and practice of terrorism, Terrorism became the hall mark of a number of political movements stretching from the extreme right to the extreme left of the political spectrum.

The September 11 incidents have altered everything. America with its more than 6000 people in the world trade centre and Pentagon blasts is distributed as it is a big blow on its face.

Meaning And Definition Of Terrorism

The term terrorism has derived from Latin word 'terrere' which means great fear.The term terrorism is very difficult to define; one man's terrorism can be another man's freedom struggle. It is estimated that between 1936 and 1985 at least 115 different definitions have been given to the world. "Terrorism" According to Webster's dictionary 1990 defines terrorism as " the act or practice or terrorizing especially by violence for political purposes as by a Government seeking to intimidate a population or by revolutionary seeking to overthrow government compel the release of prisoners etc".

Yonas Alexander defines terrorism as "The use of violence against random civilian's targets in order to intimate or create generalized pervasive fear for the purpose of achieving political goals.

League Of Nation Convention (1937)

Pauli Wilkinson defines "terrorism, as coercive intimidation" which is in practice "a systematic use of a murder and destruction in order terrorise individual groups. Communities or governments into conceding to the terrorists Alii criminal acts directed against a state and intended or calculated to create a state of terror in the minds of particular persons or a group of persons or the general public.

In the backdrop broadly speaking terrorism is recognized as an assault on a civilized society and law required is to entrust the law enforcing agencies with extraordinary powers to meet what is genuinely perceived as an extra ordinary situation of crime (terrorism) and further, at the same time law is to ensure Human Rights at three distinguished stages to take measures to combat terrorism by;

- Protection of Human rights of the victim s innocent people who are brutally killed or victimized in a terrorist act;
- Preservation of Human rights of terrorists in legal and judicial proceeding beginning from cordon/ search operation, encounters, firing in crowded areas, registration of case, detention, interrogation investigation, charge-sheet, trial, punishment etc.
- Promotion of Human Rights to eliminate the root cause of terrorism by ensuring basic human rights including liberty, dignity, education, health, employment, i.e., "inclusive growth" i.e. participation of every and each citizen of the country in the progress and development of country.

Instances of terrorist attack

In the recent past the terrorist acts including the last month Boston Marathon Bomb Blast (15th April, 2013), attacks on ·world Trade Centre, New York (11th September , 2001), attacks on the Indian Parliament (13Lb December, 2001), Mumbai attack (26th November , 2008), the Malegaon blasts or the Serial Blasts in Delhi, Ahmadabad , Surat, Mumbai Local Trains, Guwahati and many more has come to threaten the very foundation of modern civilization society and these acts assumed new dimensions. India has been a long time sufferer of terrorism be it in the North east, Punjab or Jammu and Kashmir but now terrorism has dangerously spread to other parts of the country with help of International agencies and groups actively participating in terrorism m increasing proportion.

Human Rights And Terrorism Can Be Study By Following Case Laws

The Supreme Court of India in Kartar Singh v State of Punjab where it was observed that the country has been in the firm grip of spiralling terrorist violence and is caught between deadly pangs of disruptive activities.

Supreme Court of India as far back as in 1994 dwelt at length on it and drew a distinction between a merely criminal act and terrorist act in its judgment Hitendra Vishnu Thakur v State of Maharashtra "It may be possible to describe it (Terrorism) as use of violence with a view to disturb even tempo, peace and tranquillity of the society and create a sense of fear and insecurity."

Apart from Universal Declaration of Hum an Rights, 1948, there are other some important international normative framework relating to human rights, best practices are international covenant on civil and political rights, Convention against Torture and Other Cruel, inhuman or Degrading Treatment or Punishment, 1984; Convention on the Rights of the Child, 1989; United Nations Code of Conduct for Law Enforcement Officials.

Whether Solution Of Terrorism Lies With In International Law

The problem of international terrorism increased recently thus the thoughts were given many times to control it. The problem was first time taken up by the 27th Session of the general assembly. International terrorism has in recent times manifested itself in various forms including:

1. Air craft hijacking
2. Kidnapping of diplomatic personnel and other persons and attack on Diplomatic missions.
3. Taking of hostages
4. Terrorism in war of National liberalization
5. Terrorism in Armed conflicts.
6. Nuclear terrorism.

The Impact Of Terrorism On Human Rights

Terrorism aims at the very destruction of human rights, democracy and the rule of law. It attacks the values that lie at the heart of the Charter of the United Nations and other international instruments: respect for human rights; the rule of law; rules governing armed conflict and the protection of civilians; tolerance among peoples and nations; and the peaceful resolution of conflict. Terrorism has a direct impact on the enjoyment of a number of human rights, in particular the rights to life, liberty and physical integrity. Terrorist acts can destabilize Governments, undermine civil society, jeopardize peace and security, threaten social and economic development, and may especially negatively affect certain groups. All of these have a direct impact on the enjoyment of fundamental human rights.

The destructive impact of terrorism on human rights and security has been recognized at the highest level of the United Nations, notably by the Security Council, the General Assembly, the former Commission on Human Rights and the new Human Rights Council.

Member States have set out that terrorism

- Threatens the dignity and security of human beings everywhere, endangers or takes innocent lives, creates an environment that destroys the freedom from fear of the people, jeopardizes fundamental freedoms, and aims at the destruction of human rights;
- Has an adverse effect on the establishment of the rule of law, undermines pluralistic civil society, aims at the destruction of the democratic bases of society, and destabilizes legitimately constituted Governments;
- Has links with transnational organized crime, drug trafficking, money-laundering and trafficking in arms, as well as illegal transfers of nuclear, chemical and biological materials, and is linked to the consequent commission of serious crimes such as murder, extortion, kidnapping, assault, hostage-taking and robbery;
- Has adverse consequences for the economic and social development of States, jeopardizes friendly relations among States, and has a pernicious impact on relations of cooperation among States, including cooperation for development; and
- Threatens the territorial integrity and security of States, constitutes a grave violation of the purpose and principles of the United Nations, is a threat to international peace and security, and must be suppressed as an essential element for the maintenance of international peace and security.

Conclusion

The guarantee of human rights and protection from terrorism cannot be over-emphasized. Combating and ultimately overcoming terrorism will not succeed if the means to secure that society are not consistent with human rights standards. The fundamental human rights principles that are most commonly engaged in the fight against terrorism. It explains states' obligations in respect of those rights when dealing with terrorism. Counter-terrorism strategies that are compliant with human rights not only avoid certain legal pitfalls, but may also prove more effective in the long term at winning the ideological battle against terrorism than strategies that themselves violate human rights. One of the side effects of terrorist activity and the international response to it has been the tendency to pit the ideas of liberty and security against each other. The notion of human rights protection has often been presented as being in conflict with protection from terrorism.

Nothing could be further from the truth. Human rights instruments are structured to respond to conflict and to provide the mechanisms to ensure peace and stability. The international human rights framework is therefore applicable in dealing with the terrorist threat, from addressing its causes; to dealing with its perpetrators, to protecting its victims, to limiting its consequences .States have an obligation to provide

protection against terrorism. Human rights standards impose positive obligations on states to ensure the right to life, protection from torture, and other human rights and freedoms. Acts of terrorism are likely to infringe on all of the rights that are part of a state's positive duty to protect. This does not necessarily mean that an act of terrorism amounts to a failure to protect by the state. However, if the state fails to take adequate and appropriate measures to protect those rights, the state itself bears some responsibility for the violation. An effective counter-terrorism strategy can therefore be a part of a state's human rights obligations.

1. Khushwant Singh, lasting Solution published in Terrorism in Punjab: Cause and cure, (1987)
2. ibid
3. Employment News, New Delhi Vol XXVI No, 35, 1-7 December, 2001 p.7.
4. M.G. Chitkara, Girdhari Sharma, International Terrorism (2002) at p.6.
5. Hindustan Times. May 3, 20070 "Take Stock of terror funds".
6. Prakash tatia chief justice ,high court of jhrkhand on calcuttahighcourt.nic.in/sesqui/lect2a.pdf
7. Dr. Bharat B. Das, Terrorism and POTA, National Seminar on Human Eights Education, Raw and society NALSR University of Raw Hyderabad Dec. 9-10, 2002 at p87.
8. H.O. Aggarwal, International law and human rights, 19th ed., Central Law Publication, p. 678
9. (1994) 3 SCC 569
10. (1994) 4 SCC 602
11. RC Aggarwala, International law and Human Rights (2001) at p359
12. M.K. Nawaz and Gurdip Singh, Legal control of Unterhational Terrorism, IJIL Vol. 17 (1979) at p66
13. HumanRights,Terrorism and Counterterrorism on www.ohchr.org/documents/publications/factsheet32en.pdf

Sandeep
Research Scholar, Faculty of Law
Sunrise University,
Alwar (Rajasthan)

Ruskin Bond's Philosophical Perspective Towards Life

Mamta Gupta

Abstract

As we all know that Covid-19 pandemic has changed our lives to a great extent. We were enforced to live in our homes for a long period. Education, social life, business, profession, entertainment everything came to a stand-still. People lost their dear ones. Many people faced psychological disorder during lockdown. At some point, we all realized that it is the nature's warning to mankind. Amidst this chaos, the maverick writer, Ruskin Bond writes:

"May be people will get a chance to discover themselves in this enforced solitude, to become more thoughtful because we can't rush around as we used to be."

This paper is an attempt to highlight Bond's philosophy towards life which is quite helpful in the present times. Though Bond is mainly known as a children author but in some of his works, his philosophical aspect can be seen. One such work is *A Book of Simple Living*which has been discussed in this paper.

Keywords: maverick, solitude, philosophy, enforced, chaos.

Introduction

In *A Book of Simple Living*, Bond has penned down some words of wisdom from his own experiences. He wants his readers to enjoy the very little things of life and find happiness in it.

It's the simple things in life that keep us from going crazy. They contribute more to our general happiness and health than acts of passion and high excitement. (17)

Bond loves solitude. Solitude doesn't mean loneliness, it means detachment. A person can reflect upon his/her life in solitude and can attain insight. He goes for long walks. He owns very few things. He lives a very simple life which is reflected in his writings also. For Bond, life is beautiful in spite of all hardships. One should turn slow and look at the beautiful things around him. A powerful nap, a good meal and a free mind is the source of happiness for our Rusty.

It seems to me that most people are scared of solitude, for almost everything is carried out on a crowded scale . . . For most people loneliness is wrongly linked to unhappiness. Their minds are not deep enough to appreciate the sweetness and balm of solitude; they are afraid of life itself, of coming face to face with themselves. (80)

Contentment is the most precious attribute one can attain in his life. one can find happiness only if he or she is contented. One should follow his dream; it doesn't matter if the dream is big or small. Put all your efforts and be contented with the results. Bond says, "… I have never attempted a blockbuster of a novel, or a biography of a celebrity, or a soap opera. But in the end things have worked out well. I am a writer without regrets, and that is no small achievement." (75)

Bond believes in the ups and downs of the life. Nothing is permanent in this universe. The Sun rises and then it sets in the evening. Likewise, fame is temporary. We should accept the fall with the same dignity. This is what Bond says:

Fame is like the wind, it blows in all directions, then vanishes without warning. . . Time passes and brings us all down to the level of ordinary humans (which is where all of us belong) . . . I think we should welcome it. We have had our hour in the Sun, and now we should come in from the glare and enjoy the shade. (109)

Bond refers to a West Indian Proverb:

"Every day no Christmas, an 'every day no rainy day". (56)

Success and failures are the part and parcel of life. We should stay cool and calm in each circumstance. It is not possible to find happiness if we continue to run after the possessions or endless working hours. We will have to stop somewhere. And whenever we feel tired, we should stop, not quit. We should rejuvenate ourselves. It can be a small nap, or watching a good movie, or a long walk. It can be eating our favourite food. It can be anything which gives us pleasure. It prepares us to fight against the hardships of life. This is what Mr. Bond does:

"There was something I had to do, but I think I will sit here a little longer." (57)

And whenever we feel disheartened, Bond suggests to go to nature. Nature has the power to console human beings. The mountains of Himalaya, the hills and valleys of Dehra, the beauty of Mussoorie, birds, animals, rain all have been his companions in his literary as well as real life. Bond believes that man is essentially a product of nature and therefore he cannot survive without interaction with nature.

As we journey through the world, . . . we fight for our survival, the higher visions and ideals fade. It is then that we need ladybirds! Contemplating that tiny creature.

. . . that there is more to life than interest rates, dividends, market forces and infinite technology. There is space for the big and the small, for you and me and the ladybird. (35)

We should move towards nature to find solitude and bliss. Little miracles happen in nature daily. But 'these little miracles don't happen especially for us. . . All that is in our power is to be there. To be there, wherever we are.' (143)

There are some more quotations from the pens of the very famous writers which advocates the same thing.

In the name of God, stop a moment, cease your work, look around you.

Leo Tolstoy

After all, it is a good thing to laugh. . . and if a straw can tickle a man, it is an instrument of happiness. John Dryden

Bond compares happiness with the butterfly which is very

short-lived but it is up to us to cherish it forever.

Happiness is a mysterious thing. . . But it is as elusive as a butterfly, and we must never pursue it. If we stay very still, it may come and settle on our hand. But only briefly. We must savour those moments for they will not come our way very often. (6)

Human beings can attain happiness only by slowing down. It doesn't mean that there is no need to grow. Growth is must. These days, life is moving so fast that no one has time for love, laughter and happiness. People pretend to be happy but actually they aren't. Everyone is trying to live a life to impress others. People have become machines. Today, a person's bank account and properties decide his or her social status. According to Bond, "One of life's greatest pleasure is free. It lies in watching a plant grow-from seed to seed to seedling, to green branch to bough. To flower to fruit". (49)

Money is necessary, no doubt. One cannot pay the bills without money. But as Bond says:

Money costs too much.

Ralph Waldo Emerson

If you owe nothing, you are rich. Money doesn't make people happy.

But neither does poverty.

The secret, then is to have as much as you need or may be a little more, and then share what you have. (48)

Bond believes in the power of truth, forgiveness, and simplicity. When a person holds grudges against someone, it only disturbs his peace of mind. We should forgive others not because they deserve it but we deserve peace.

'With quite mind go take thy rest,' said a wise man, and there is much truth in that statement. Forget and forgive at sunset, and then the day's deeds are truly done. Then sleep. (18)

The trick I suppose is to make the effort to be truthful, for nothing liberates us like the truth… We clutter up our life with grievances, hurts and regrets when we cannot forgive. (54)

Now, the time has come when we should realize the need to stop for a while, to enjoy the beauty around us. We should try to forgive and let things go which are not good for our mental peace. We should try to share our possessions with the others. We should try to gaze at the sky and count the stars. We should plant a tree and see it growing. We should sit near our elders and listen to their life long experiences. These activities may sound little eccentric in this age of social media but one can find pure bliss in it.

William Wordsworth, writing in an earlier time and in verse complained of the same loss.

The world is too much with us; late and soon,
Getting and spending, we lay waste our powers;
Little we see in Nature that is ours;
We have given our hearts away, a sordid boon!

Wordsworth had written this sonnet in the romantic era of literature. But it is relevant in the present times. The author laments over the expansion of the materialistic world which has broken the connection between man and nature. Man has forgotten to look at the sky, the sea, and the winds. Nature's activities do not excite him anymore because he is always busy in earning monetary pleasures.

One more poem written by Wordsworth is The Tables Turned also encourages the readers to step away from the distractions of the modern life and look at the beauty of the natural world. Nature has a therapeutic quality which is essential for man's well-being and growth.

And hark! how blithe the throstle sings!
He, too, is no mean preacher:
Come forth into the light of things,
Let nature be your teacher.

After facing Covid-19 pandemic, now it is the need of the hour to turn towards the nature and make the most of its precious treasures.

Bond's philosophy towards life is reflected in his writing style also. He doesn't believe in writing a block-buster novel or some hi-flown speeches. He narrates a simple event happening around him in a very lucid manner. He can create poetry when he sees a firefly in the room.

Softly a firefly flew in
And circled round the room
Twinkling at me from floor or wall
Or ceiling, never long in one place (38)

This is how Ruskin Bond gives importance to the every minute detail of his surroundings. He says:

… It is no use trying to write a masterpiece every year if you are so made as to write only one in ten or twenty. In between, there are other good things that can be written- smaller things, but satisfying in their own way. (73)

Conclusion

This paper provides Bond's perception towards happiness and a satisfactory life. His stories are a source of relief from the hustle and bustle of life. He doesn't preach anything. His tone is never instructive. Rather he puts together the feelings into the words and this is the beauty of his works. The readers get mesmerized while reading his books. They find themselves in the serene foothills of Himalayas and get inspired to live close to nature.

References

Bond, Ruskin. A Book of Simple Living speaking Tiger Books LLP 2015,

Mamta Gupta
Research scholar,
Department of English,
Baba Mastnath University, Rohtak,
Haryana, India,
Email: mamtagupta1980@gmail.com
Supervisor: Pro. Dr. Barun Kumar Jha

120

Impact of Environmental Problem on Tribal Communities of India

Swetaswini Nayak

Abstract

Natural resources play an important role in the livelihood of tribal people. Tribal communities are facing so many challenges to the maintenance of ecosystems across the world. For centuries, Indian tribes are helping to secure our habitats and promoting conservation through sustainable practices in fishing, farming, forest produces, uses of natural resources, etc. It is important to focus on environmental protection by enhancing tribal communities because they play an important role in indigenous knowledge. Their custom and beliefs donate to our environmental protection. Tribal communities are now facing challenges with forced eviction and other threats which affect their livelihood. Overpopulation, poor farming practices, logging, pollution, over consumption, and industrial and technological developments are some major factors that directly or indirectly contribute to the exhaustion of natural resources surrounded by tribal habitats. Now the educational development of tribal people is growing slowly and they are getting knowledge about how to protect their culture and awareness about the protection of natural resources and save their livelihood.

Keywords: *Natural Resources, Environment, Tribal Community, Natural Balance, Ecosystem, Conservation*

Introduction:

A tribe is a social group composed chiefly of the number of families, houses, or generations having shared by forefathers and languages that lives in a primitive condition. They lead their life on the lap of nature, geographically isolated, socially ignorant, economically weak, and culturally rich.

The Indian tribes are very energetic and culturally rich. They have their unique traditions, cultures, lifestyles, religious beliefs, languages, rituals, and different approaches. Each community has a uniqueness that separates it from the other tribes and adds beauty to our culture. They live happily together but are unaware of the outside world related to technology and development, which is their right to know. According to Census-2011, of the total population, the percentage of scheduled tribes in India is 8.6%, Spread across 705 communities with unique cultural diversity. 89.97% of them live in rural areas and 10.03% in urban areas. There are Total62 Tribal communities are living different places in Odisha. The following figure shows the tribal population distribution in Odisha.

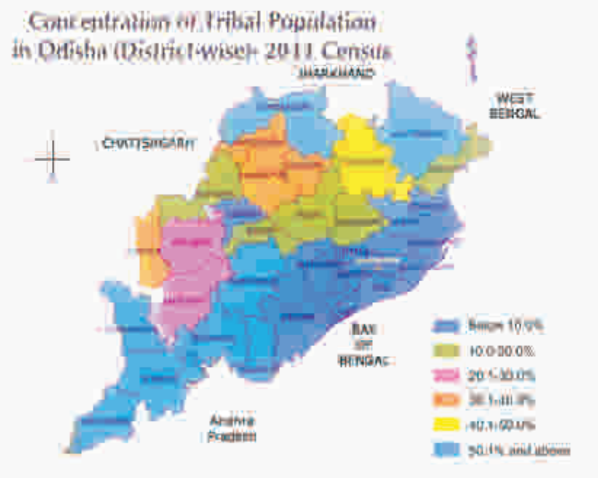

Sc

... al,
ed ... ges
to ... e a
th ... ery
in ... as
well as material aspects of tribal life without disturbing their cultural, habitual, and environmental aspects. There is the symbiosis relationship between the tribes and the nature. They prefer the tribal livelihood strategy should be developed in such a way so that they can preserve and protect the natural environment.

Objectives:

The main objectives of this paper is to study the awareness of natural resources among the tribal people and utilization of natural resources employing traditional means of approach, conducive for societal and educational growth and development of tribal people attempted to study the complex environmental problems that affects the tribal people.

Methodology:

This is a review article and data has been collected for this article from the secondary sources through a literature review of some authentic websites and journals.

Discussions: The indigenous people live in forests and hilly areas. The tribal society is undergoing through transformation but most of the tribes live in the areas where the richest natural resources are found. Their culture and religious belief are centered on natural habitats. Their culture is more defined by the nature. Whatever they get from their surroundings they try to use that for their livelihood. Education play an important role for social transformation.The educational level is very low among them. Some major tribal economic activities are food gathering, agriculture, farming, shifting cultivation, etc. They use some objects for their daily life such as daggers, axe, digging sticks, bows and arrows, pots, etc. Their house is normally made of a thatched hut. They are characterized by independence and personal freedom. Both men and women have equal freedom to select their life partner. They are dwelling in the areas where the richest natural resources are found.

The Problem Faced by Tribals due to the Loss of Their

Natural Environment

Environmental degradation is the main cause faced by tribals as well as the entire human civilization today. Proper management of the environment and natural resources is a great concern for tribals, because their livelihood, food security, and health mostly depend on nature. The tribal's aesthetic cultural practices are affected badly due to various developmental projects and degeneration of association with nature and the loss of their cultural values, ceremonies, social celebrations, and common property management practices. Unlike the non-tribes the indigenous people are facing lots of problems and being cut off from their tradition, and symbolic relationship with the forest. The natural surrounding is losing their cultural and occupational links with the life-ways of the tribal, because of the development of technology and new developmental projects under taken in this recent trend of Economic development. But unexpectedly, most of the development models have failed to address the need of the tribes. Degradation and occupational changes occur in tribal societies due to the enhancement of modernization and economic liberalization. Some major areas which adversely affect the environment of tribes have been discussed below.

Deforestation:

The large scale deforestation caused mostly by human activities, rather than the natural phenomena, rapid industrialization, urbanization, and exploitation are the result of deforestation. In the name of development urban people are snatching away the homes of the Tribe. They are not only losing their physical entity of land but losing their heritage, culture, legacy, and inheritance. Uncontrolled growth of the human population leads to an increase in the demand for wood and forest products to fulfill their needs. It affects the forest ecosystem and suffers forest-dependent tribal people.

Land Alienation:

Land alienation means the transfer of title and ownership from one person to another. Nowadays the tribal community losing ownership and control of their land because of economic poverty, simplicity, honesty of the tribal, unawareness about the forest, Act. Illiteracy, drinking alcohol habit, urbanization, industrialization, and lack of land records. Hence the number of landless is increasing day by day and is reduced to the status of agricultural laborers. The state government obtains tribal land for industrial, irrigation, mining, and other projects, and tribal have been deprived of their rights over land. Their financial incapability is a major hindrance for getting healthcare facilities and education, etc. Borrow inn money from others as debts the main source to get rid of these problems.

Land alienation can be classified into two types- internal transfers of land, here land is transferred from a tribal landowner to another tribe. Land alienation happens to external forces also. The external land alienation can also be classified into two types:

1. Alienation of land by non-tribal-settler and outsiders' rights on tribal lands. As a result, tribal people lose control over their lands.
2. Alienation of land by development projects in tribal areas.

Impact of Mining on Tribal Environment:

The exploitation of the natural resources of tribal areas in the name of the development of mines harms their socio-economic life. Land degradation, air, water, and noise pollution are some major environmental problems affected by mining in tribal areas, which have acted as encouragement for urbanization and industrialization. Large-scale mining and production company activities are the main cause of damage to the land resources of tribal areas, as a result, forests and agricultural lands have been laid waste. Underground mining operations like coal have created unsafe surface conditions in many areas. Large-scale mining has adversely affected the groundwater in many areas because of sewage discharged from mine sites. Thermal power plants, fertilizer plants coal washeries, cement factories, fertilizer plants, cement factories, etc., contributes to air pollution. The environmental pollution caused due to mining affects the health condition of tribal people.

Health Condition of Tribal due to Environmental Pollution

Since long the forest produce was fulfilling the needs of tribal food. New developmental projects take over the forest and village commons. As a result natural resources and the tribal environment is getting harmed, such as air, and water pollution. Hence the local people and the tribes lose control over their food resources. When these common properties are destroyed by losing their lands, trees, and forests, the Tribals face challenges of food insecurity and its effects on their different kinds of health issues. morbidity and mortality from many diseases like organ disturbances, cancers, respiratory disorders, allergies, and various harmful diseases increase due to waste products from consumption, heating, agriculture, mining, manufacturing, transportation, and other human activities.

Developmental Facilities for Tribal Communities:

Government has given special attention to the tribal developmental program. Different developmental approaches and policies enhance their participation interest in national life. It gives equal opportunities to the disadvantaged section of society and gives them a way to develop themselves. Some important measures regarding tribal development are:

1. Constitutional Provisions

The constitution of India has made some special provisions for the tribe. Article 342 defines the schedule tribe in India. Article 164 layout for a Ministry of Tribal Welfare in tribal states like Bihar, Madhya Pradesh, and Odisha. These

Ministries check out the welfare of the scheduled tribes in their states. The tribal majority North-east Stats of India has separate provisions of autonomous council.

2. Educational Facilities

It is an unquestionable fact that education is the main source of socioeconomic progress and prosperity. Therefore, special importance has been given to improving the educational standard of the tribal people. Vocational and technical training is being provided to them on a priority basis. Apart from that stipends, uniforms, scholarships, books, and much other necessary equipment are furnished for better learning outcomes.

3. Job Reservation

The government has provided service facilities like reservation in jobs, relaxation in age limits, relaxation in eligibility criteria, etc. article 342 of the constitution which define as to who would be Scheduled Caste and Scheduled Tribes with respect to any state or Union Territory.

4. Representation in Legislatures and Panchayats

For the promotion of educational and economic interests of scheduled tribes the Indian constitution made provisions like, seats have been reserved for the scheduled tribe in Loksabha and State Assemblies, Gram Panchayats, Block Panchayats, District Panchayats, etc under Panchayati Raj.

5. Administration of Scheduled Tribe Areas

The government of India has drawn up some guidelines concerning the administration of scheduled areas. It admits necessary funds to improve administrative planning to ensure a better quality of life for the tribal communities. The states like Andra Pradesh, Bihar, Odisha, Gujrat, Madhya Pradesh, Maharastra, Himachal Pradesh, and Rajasthan have been declared as Scheduled Areas.

6. Tribal Research Institute:

There are several tribal research institutes in India are engage in research, documentation and development activities of the tribal communities. Some of the Tribal and Harijan Research Institutes have been set up in states like Odisha, Madhya Pradesh, Bihar, Rajasthan, and West Bengal to achieve specific objectives and also for the upliftment of tribal people. These institutes are managing studies of tribal art, culture, customs, and tradition. It aims to maintain the standard and quality of tribal communities in India. Some of the voluntary organizations are working for the preservation of tribal culture in the place like Tribal Museums.

Suggestions

Government should focus on the major areas of concern for maintenance of natural balance like pollution control, proper implementation of policies related to water, land, and forest and greening the degraded lands with community participation for further downturn of environmental balance. We should encourage tribal tradition, art and culture respectively. There has a strong relationship between the tribal people and forest. Government should be associate the tribal people closely in the protection of environment, regeneration.

Conclusion

Tribals in India are still facing environmental issues of poverty, food insecurity because of deforestation and limited of food resources. Environmental laws and policies also not implemented properly to maintain natural balance in tribal habitats. It is a good sign that some tribes are getting value about education and leading them on involvement of developmental process. Now it is slowly increasing literacy rate, awareness levels and political consciousness among them. Most of the Tribals are not getting benefits from the facilities provided by government because of improper implementation of tribal developmental schemes.

There are some seats reserved for SC/ST in parliament and legislative Assembly. As per the order issued by the delimitation commission in 2008, 412 seeds are for general, 84 seats are for Scheduled Castes and 47 seats are reserved for the scheduled Tribes.

References

1. St distribution of Odisha. jpg retrieved from https://commons.wikimedia.org/wiki/File: St_distribution _of_ Odisha.jpg
2. List of Scheduled Tribes in Odisha retrived fromhttps://en.wikipedia.org/wiki/List _of_Scheduled_Tribes_in_Odisha
3. Ministry of Tribal Affairs Government of India retrieved from
4. File:2011 Census Scheduled Tribes distribution map India by state and union territory de.svg retrieved from https://commons. wikimedia. org/ wiki/File:2011_Census_Scheduled_Tribes _distribution_map_India_by_state_and_union_territor y_de.svg
5. Odisha State Tribal Museum retrieved from https:// www.ostm. in/ tribes- of- odisha/

Miss. Swetaswini Nayak

MA Passed out Student,

Department of Education,

Berhampur University

At/P.O – Semiliguda

E-Mail: swetashine93@gmail.com

Mobile: 07978747313